Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ed by Arya Samaj Foundation Chennai and eGa

DEF

1940

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Har

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

RT-162
COMPILED

Diamond Book Binding Hou
Moh. Karachh B.H.E.L Road Jawa

Stock Verification-2024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, बिहार, बम्बई, उड़ीसा, कोटा व राजगढ़ राज्य शिक्षाविभाग द्वारा स्कूलों व पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत।

COMPILED

दीपक

पौष १९९६] साहित्य सदन, अबोहर [जनवरी १९४०

सम्पादक—तेगराम

RT-162

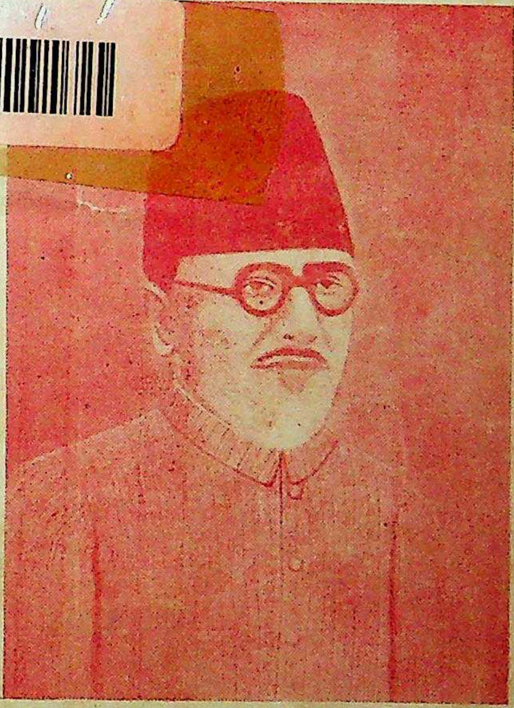

मौलाना अबुलकलाम आजाद

जिनके आगामी कांग्रेस-अधिवेशन के सभापति होने की सम्भावना है।

वार्षिक मूल्य २॥)
एक अँक का ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यू० पी० के ग्राम सुधार विभाग द्वारा

ग्रामीण पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत❀

सर्व साधारण के लिये उपयोगी, सरल पुस्तकें

❀विश्वधाय—इस में गौत्रों के पालन-पोषण सम्बन्धी ३२ आवश्यक विषयों का बिशद वर्णन किया गया है। पुस्तक प्रत्येक गोपालक तथा ग्रामीण भाई के लिए अत्यन्त काम की है। लगभग ८० पृष्ठों की इस सचित्र पुस्तक का मूल्य केवल ।) है। डाक खर्च अलग।

❀ग्राम-सुधार नाटक—ग्रामीणों पर होने वाले घोर अत्याचार, उन में फैल अनेकों कुरीतियों व अंध-विश्वासों का नग्न चित्र तथा ग्रामोद्धार के सरल उपायों कायदि आप दिग्दर्शन करना चाहते हैं तो राष्ट्रीय भावों से ओत प्रोत इस नाटक को पढ़िये। सवा सौ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य ।।=) है। डाक खर्च अलग।

❀बाल गोपाल—बालकों के रोजमर्रा काम में आने वाली बातों को इस छोटी सी पुस्तक में सुन्दर और सरल गीतों में वर्णित किया गया है। भाषा चटकीली और इतनी सरल है कि पुस्तक में एक भी संयुक्त अक्षर नहीं आया है। पृष्ठ सख्या ४२ मू० =)।।, डाक खर्च अलग।

❀ईसप-नीति-निकुंज(प्रथम भाग)—इस पुस्तक में महाष ईसप की ६१ शिक्षाप्रद, दिल चस्प कहानियों का पद्यानुवाद है। कविता बड़ी सरल है। एक बार शुरू करके खतम करने को ही जी चाहता है। मू० ।।) डाक खर्च अलग।

बालोपदेश (प्रथम भाग)—इस पुस्तक की सर्व प्रियता इसी बात से सिद्ध हो जाती है कि गाँधी आश्रम हटुण्डी जैसी राष्ट्रीय संस्था ने अपनी सभी ग्रामीण पाठशालाओं के लिये इस की इकट्ठी ही सैंकड़ों प्रतियां ली हैं। पृष्ठ ३०, मू०—) मात्र, डाक खर्च अलग।

मिलने का पता:—साहित्य सदन, अबोहर (पंजाब)

नोट:—'दीपक' के ग्राहकों को ये सब पुस्तकें पोने मूल्य में मिलेंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपक—वर्ष ५, संख्या ३, जनवरी १९४० ई०

	विषय लेखक	पृष्ठ सं०
१	सच्चा परिश्रम – रसकिन	१
२	पिता और पुत्र—श्री ब्रजमोहन मिहिर	२
३	जो चाहोगे सो पावोगे—श्री 'रहबर' बी० ए०	४
४	इङ्गलैंड की राज्य-व्यवस्था – श्री गिरिराज जी बी० ए०	६
५	यूरोप के देशों की आबादी व फौज—(सङ्कलित)	१२
६	गूँगी (कहानी)—श्री महादेवलाल बरगाह	१३
७	पाँच सुनहरी बातें—(सङ्कलित)	१५
८	ज्ञान की महिमा (कविता)—श्री रामकुमार स्नातक	१६
९	रोग का इलाज—श्री एडमेण्ड होम्स	१७
१०	उपन्यासकारों व कहानी लेखकों से:—श्री गिरिराज जी बी०ए०	२१
११	भोजन में टमाटर का महत्व—डा० बनारसीदास जैन	२३
१२	अहिंसा के द्वारा ग्रामों का पुनर्निर्माण—श्री हरिभाऊ उपाध्याय	२६
१३	सोवियट रूस की विदेशी नीति—श्री दयाशङ्कर मिश्र	२८
१४	काम की बातें—(सङ्कलित)	३०
१५	नाज़ी स्त्रियाँ "	३१
१६	दोष किसका और दण्ड किसको (सङ्कलित)	३२
१७	न्यायमूर्ति—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी	३३
१८	चालक-विहीन हवाई जहाज—कु० कमला ब्रह्म	३७
१९	भारतीय बालक की अभिलाषा (कविता)—आशुकवि रामाधार शुक्ल	३८
२०	फुलवाड़ी—[सरदी और जुकाम : क्या हम घटना चक्र को बदल सकते हैं ? दुनिया का सबसे बड़ा होटल : ईमान]	३९
२१	सम्पादकीय नोट—[गांवों में चिकित्सा का अभाव : १८ मन का हलवा : खेल में प्रतिस्पर्धा : अँगरेजी का साम्राज्य: आचार्य रामदेव]	४१
२२	दीपक के प्रकाश में—(समालोचना)	४५
२३	सँसार चक्र—(देश-विदेश की खबरें)	४७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मूल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २॥) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४)।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जिनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा। ३ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेसे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख डाक खर्च भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं।

८—जिन सज्जनों को किसी मास का 'दीपक' न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछ ताछ करके बाद में हमारे पास लिखना चाहिये।

९—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें और बदले के पत्र, सम्पादक, 'दीपक' साहित्य सदन, अबोहर के पते से और मूल्य तथा प्रबन्ध विषयक पत्र मैनेजर, 'दीपक' के पते से भेजने चाहिएं।

स्तंभ-सूची

१ जीवनन-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्योग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं। सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools in U.P.,C.P.,Bihar,Bombay,Orissa,Kotah and Rajgarh Sta

दीपक

हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की सम्पत्ति तथा पञ्जाब में राष्ट्रभाषा का प्रचार करने वाली प्रमुख सँस्था—साहित्य सदन, अबोहर का मुख पत्र

सत्यम् :: शिवम् :: सुन्दरम्

सम्पादक—तेगराम

पौष १९९६ | वर्ष ५, संख्या ३ पूर्ण संख्या ५१ | जनवरी १९४०

सच्चा परिश्रम ?

वास्तव में सच्चा श्रम वही है जिससे कोई उपयोगी वस्तु उत्पन्न हो। उपयोगी वह है जिससे मानव जाति का भरण-पोषण हो। भरण-पोषण वह है जिससे मनुष्य को यथेष्ट भोजन वस्त्र मिल सके, या जिससे वह नीति के मार्ग पर स्थिर रह आजीवन सत्कर्म करता रहे। इस दृष्टि से विचार करने से बड़े-बड़े आयोजन बेकार माने जायँगे। सम्भव है कि कल कारखाने खोलकर धनवान होने का मार्ग ग्रहण करना पापकर्म मालूम हो। पैसा पैदा करने वाले बहुतेरे मिलते हैं, पर उसका यथाविधि उपयोग करने वाले कम मिलते हैं। जिस धन को पैदा करने में जनता तबाह होती हो वह धन निकम्मा है। आज जो लोग करोड़पति हैं वे बड़े-बड़े और अनीतिमय संग्रामों के कारण करोड़पति हुए हैं। वर्त्तमान युग के अधिकांश युद्धों का मूल कारण धन का लोभ ही दिखाई देता है।

—रस्किन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिता और पुत्र

ले०—श्री ब्रजमोहन मिहिर

जन्म से ही बालक में स्वभावतः वे सब गुण होते हैं जिनको प्राप्त कर मनुष्य महान् बन जाता है। किन्तु बाल-मनोविज्ञान से रहित माता-पिता अपने को बालक के जीवन का ठेकेदार समझ अपनी हर प्रकार की आज्ञाएं उस पर लाद कर उसके हृदय में भय व आतङ्क पैदा कर देते हैं। इससे बालक की स्वाभाविक प्रगति रुक जाती है, उसके जन्म-जात गुण नष्ट हो जाते हैं। उसमें अपनी बुद्धि व विचार-शक्ति नहीं रहती। वह यन्त्रवत् बड़ों की आज्ञानुसार कार्य करता है। पिता बनने वाले प्रत्येक व्यक्ति को बाल-मनोविज्ञान के इन गूढ़ तत्वों का ज्ञान प्राप्त करना ज़रूरी है —सँ०

सारी जिन्दगी में से आरम्भ के कुछ वर्ष ऐसे होते हैं जिनमें प्राणी अपने सब कार्यों के लिये निर्दोष है। इस समय उसकी जिन्दगी में जो कष्ट दिखाई पड़ता है उसका जिम्मेदार वह नहीं है। स्वाभाविक स्वस्थ बालक में बाल-सुलभ इतनी स्फूर्ति होती है कि जिसके आगे दुनिया की सब बातें, बड़ी से बड़ी खुशी झक मारती हैं। दुःख या चिन्ता क्या चीज है, इसे बालक समझता ही नहीं। वह वही बात करता है जिसमें उसे किसी प्रकार का प्रयास नहीं करना पड़ता। उसका कार्य बिलकुल स्वाभाविक होता है जिसमें न किसी प्रकार का भय है, न लज्जा है, न बनावट है, न किसी को खुश या नाराज़ करने का भाव है और न किसी प्रकार की आशा है। वह इतना स्वतन्त्र या सरल होता है कि उसके मन में जो आता है उसे वह करने लगता है।

कुछ बड़ा होने पर जब उसकी क्रीड़ा में कोई रुकावट पहुँचती है तब उस बेचारे बालक के मन पर बाहरी चीजों का असर पड़ने लगता है। यही समय है जब कि उसके मनमें बनावटी जीवन, कृत्रिम व्यवहार और चालाकियां आना शुरू होती हैं। उसका जीवन अब एक नये ही ढंग से व्यतीत होना शुरू होता है। इन कृत्रिम बातों का जिम्मेदार वह बालक नहीं है बल्कि वे लोग हैं जो उसकी स्वाभाविक प्रगति में रुकावट डालते हैं। माता-पिता को मनोविज्ञान का कुछ ज्ञान अवश्य होना चाहिये। इस विज्ञान को न जानने से वे बालक के सरल जीवन में सदा विघ्न-बाधा पहुँचाया करते हैं। वे यह चाहते हैं कि बालक उनकी रुचि का अक्षरशः पालन करे। जो बालक ऐसा करते हैं उनसे वे बहुत खुश रहते हैं और यह ख्याल करते हैं कि उसका जीवन सब प्रकार से अच्छा और निर्दोष बीत रहा है।

ऊपर से यह बातें चाहे भले ही ठीक मालूम होती हों लेकिन इस व्यवहार से बालक के जीवन में घुन लग जाता है। जो बालक हूबहू उनकी आज्ञा का पालन करता है उसमें प्रेम की कमी हो जाता है। वह अपने भावों को माता-पिता तथा दूसरों के सामने रखने में लजाता है। उसके स्वभाव में एक ऐसी आदत पड़ जाती है जिससे अगर वह किसी प्रभावशाली मनुष्य को देखता है तो उसके बड़प्पन की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतनी गहरी छाप उसके मन पर पड़ती है कि उसमें उसका व्यक्तित्व बिलकुल ही लुप्त और नष्ट हो जाता है। कुछ समय तक इस व्यवहार के चालू रहने पर उसका मन झूठी लज्जा और सत्कार के भाव से इतना घिर जाता है कि वह अपनी स्वाभाविक बातों को उनके सामने रख ही नहीं सकता। इससे पिता और पुत्र के जीवन में बहुत अन्तर होने लगता है। पिता और पुत्र के बीच में मित्रता और प्रेम का भाव बिलकुल ही खतम हो जाता है। दोनों का जीवन कृत्रिम होकर यन्त्रवत चला करता है। किसी घटना के समय पिता, पुत्र के प्रति झूठी परेशानी और प्रेम दिखलाते हैं और पुत्र पिता की सब आज्ञाओं को प्रगट रूप में शिरोधार्य्य करता है। पिता का प्रेम परेशानी में बदल जाता है और उसकी आज्ञा पुत्र के लिये केवल एक प्रथा हो जाती है। पिता की तो इस से कुछ अधिक हानि नहीं होती लेकिन इस ढङ्ग से, पुत्र अपने जीवन में भोंदू बसन्त होकर बिलकुल लकीर के फकीर बन जाते हैं।

यह तो साधारण पिता-पुत्र की बातें हैं। अगर पुत्र पर पिता की आज्ञा का कोई असर नहीं होता, तो दोनों का जीवन अशान्त और नीरस हो जाता है। पुत्र की इसमें भी अधिक हानि है। उसके हृदय से माता-पिता का प्रेम जाता रहता है, और निरन्तर रुकावट होते रहने से उसका स्वाभाविक विकास नष्ट हो जाता है।

पिता सब प्रकार से पुत्र के जिम्मेदार बन जाते हैं। इस जिम्मेदारी के समय में न वह अपने मनोविज्ञान को समझते हैं और न बालक के ही मनोविज्ञान को। सचमुच जिम्मेदार तो वह जरूर हैं लेकिन इस जिम्मेदारी को उन्होंने गलत तरीके से इस्तैमाल किया है। अगर वे ठीक तौर से जिम्मेदार होते तो उनके घर में ऐसी सन्तान कभी न उत्पन्न होती कि जिसके लिये उन्हें क्रूर चौकीदार बनने की जरूरत पड़ती है।

पिता और पुत्र में जब प्रेम होता है और पुत्र साधारणतः समझदार बालक है, तो पिता को उसके लिये विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ता। पुत्र के मन में यह बात कभी नहीं आनी चाहिये कि पिता की आंखें बचाकर हम अपने विचार की पूर्ति किया करें। यह उसी समय हो सकता है जब पुत्र के ऊपर पिता का आतङ्क नहीं रहता। स्वाभाविक दशा यह है जब पुत्र बिना किसी रोक टोक के अपनी सब बातों को पिता से प्रगट कर देता है। यह तो मुमकिन है कि ऐसी स्वाभाविक दशा में भी पुत्र से बराबर गलती होती रहें। लेकिन ऐसी दशा में पिता को पुत्र की गलतियों को समझने का और बातों ही बातों में उसे सुधार देने का अच्छा मौका रहता है। पिता और पुत्र का व्यवहार शुरू ही से मित्रता और प्रेम का होना चाहिये। इससे यह गलतफहमी कभी नहीं होनी चाहिये कि पुत्र पिता की किसी तरह से बेअदबी करेगा। छिपाकर किसी बात को करना या बेअदबी दिखलाना उसी समय होता है जब पुत्र पिता से भयभीत रहता है या उसके कार्य में रुकावट पड़ती है। पुत्र में बहुत से जो दोष दिखलाई पड़ते हैं उसके जिम्मेदार अधिकाँश में पिता ही हैं। पिता और पुत्र में यन्त्रवत रिश्ता कायम हो जाने से अलबत्ता पुत्र में बहुत से दोष आ जाते हैं क्यों कि अबोध दशा में बालक का स्वभाव किसी जटिल बात के गाम्भीर्य्य को अच्छी तरह नहीं समझता। इस प्रकार से कुछ वर्षों के बीतने पर पिता को स्वयं उसे बहुत जरूरी-जरूरी बातों को बतलाने में लज्जा मालूम होने लगती है। यह पुत्र के विनाश का एक बहुत ही बड़ा कारण है। अतः समझदार माता-पिता और होनहार बालक में आरम्भ ही से प्रेम और मैत्रीभाव की कमी नहीं होनी चाहिये। पुत्र की देखरेख करना, उसकी रक्षा करना पिता की स्वाभाविक प्रवृति है, लेकिन इसका आधार प्रेम होना चाहिये, न कि भय। इस प्रकार के सुन्दर सम्बन्ध से परिवार सौम्य और सरल बन जाता है।

—०—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो चाहोगे सो पाओगे

ले०— श्री 'रहबर' बी० ए०

पृथ्वी में बहुत ही कड़वा और अति मधुर रस मौजूद है। यह तो आक और आम की शक्ति पर निर्भर है कि दोनों एक ही जगह उगे हुए भी एक तो ज़मीन से कड़ुवापन ही कड़ुवापन खींचता है जब कि दूसरा वहीं से कड़ुवापन को छोड़ मीठा रस प्राप्त कर लेता है। यही दशा संसार की है। यहाँ बुराई व भलाई मौजूद हैं। जिसने अपने अन्दर मिठास गुण ग्रहण करने की शक्ति पैदा कर ली वह सब जगह से गुण ही गुण प्राप्त करेगा और जिसमें कड़ुवापन लेने की शक्ति है वह कड़ुवापन लेगा। सं०

ऊख का सरसब्ज़ खेत हवा में लहरा रहा था। बूढा किसान और उसका नन्हा सा बच्चा खेत को देख-देख कर खुश हो रहे थे। लड़के ने पिता से लिपट कर कहा:—

लड़का—पिताजी! मुझे एक गन्ना तोड़दो।

बाप—नहीं बेटा, अभी ये फीके हैं।

लड़का—क्यों पिताजी! यह फीके क्यों हैं?

बाप—क्योंकि अभी ये पके नहीं।

लड़का—पककर ये कैसे हो जावेंगे?

बाप—यह मीठे हो जायेंगे।

लड़का—यह मीठे कैसे हो जायेंगे?

बाप—मीठे इसलिये हो जायेंगे कि इनमें रस भर जायेगा।

लड़का—इन में रस कहांसे आजाएगा?

बाप—इनमें रस ज़मीन में से आयेगा।

लड़का—ज़मीन में रस कहां से आता है?

बाप—उसमें वह पहले ही होता है।

लड़का—ज़मीन में रस पहले ही होता है! अच्छा तो इस आक में, जो नाले पर खड़ा है, रस क्यों नहीं आता?

बाप—नहीं, वह कड़वा ही रहता है।

लड़का—पर वह कड़वा क्यों रहता है? पक कर वह भी मीठा होना चाहिये।

बाप—वह कड़वा इसलिये रहता है क्योंकि ज़मीन में कड़वापन भी है।

लड़का—तो क्या ज़मीन में मिठास भी और कड़ुवापन भी है?

बाप—हाँ, दोनों हैं।

लड़का—तो अगर आक मिठास लेले और ऊख कड़वापन?

बाप—नहीं, ऐसा कभी नहीं होता।

लड़का—क्यों नहीं होता? अगर आक कहदे कि मैं कड़वापन क्यों लूँ?

शायद और किसी समय पर किसान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़के के इन सवालों से तङ्ग आकर उसे झिड़क देता, मगर अब वह खुश था। लड़के को झिड़कना नहीं चाहता था इसलिये पुचकार कर बोला—

"बेटा ! हम क्या जानें, यह सब कुदरत का काम है। उसने जिसे जैसा बना दिया, वह वैसा ही रहता है। आक कड़वा बना है तो कड़वा ही रहेगा और ऊख मीठा बना है तो वह मीठा ही रहेगा। वास्तव में कुदरत ही आक में कड़वापन और ऊख में मिठास भरती है"।

लड़का—फिर यह क्यों कहते थे कि ज़मीन में से लेते हैं ?

किसान कुछ कहने ही वाला था कि हवा चली, और खेत के खेत में सरसराहट सी पैदा हुई और पौदे एक जबान होकर बोल उठे—

"हाँ, ज़मीन से ही लेते हैं। यह मिठास और कड़वापन ज़मीन में ही होता है। जिसमें जिस चीज़ को खींचने की शक्ति होती है वह वही प्राप्त करता है। आक उत्पन्न होते ही कड़वापन खींचने लगता है और खींचता रहता है। उसे रस लेने की इच्छा ही नहीं होती तो रस मिले कहां से ? हम उत्पन्न होते ही मिठास लेने की धुन में लग जाते हैं। पहले केवल फीकापन मिलता है, फिर उसके स्थान पर कड़वापन पैदा हो जाता है। लेकिन जब हमारी कोशिशों में तनिक भी कमी नहीं आती, तब हमें वह मिठास मिल जाती है जिसे तुम मज़े से लेकर चूसते हो और खुश होते हो ! इसी प्रकार दुनिया में—उस दुनिया में जिस में कि तुम रहते हो—ग़म भी है और खुशी भी, नेकी भी और बुराई भी। तुम चाहो तो आक की तरह बुराई ही बुराई प्राप्त करो। अपनी जिन्दगी भी कड़वी बनाओ और दूसरों को भी दुखी करो। और तुम चाहो तो आम की तरह रस अर्थात नेकी प्राप्त करने की कोशिश करो। पहले पहल तुम्हें बहुत कठिनाइयां सहन करनी पड़ेंगी। फीकापन के इलावा कुछ भी नहीं मिलेगा। लेकिन आखिर में जो चाहोगे सो ही मिल जायेगा और मधुर, मीठे बनकर खुद प्रसन्न रहोगे और दूसरों को प्रसन्न करोगे।

सुख एक अनुभूति है। कोई प्रश्न हल कर लो, कोई मुश्किल गांठ खोल लो, कोई खाई पार करलो, किसी शिखर पर चढ़ने में सफल हो जाओ—मन प्रसन्न हो जावेगा।

यदि आप सुख तथा प्रसन्नता के इच्छुक हैं तो कठिनाइयों से न घबराएं ! यदि प्रशंसा चाहते हैं तो निन्दा से मुँह न मोड़ें ! यदि शान्ति चाहते हैं तो कई बार शान्ति भङ्ग हो जाने पर निराश न हो जाएं !

—गुरबख्शसिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इंगलैण्ड की राज्य-व्यवस्था

कामन्स-सभा (House of Commons)

ले० —श्री गिरिराजजी बी० ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

[२]

इस लेखमाला के पहले भाग में इँगलैण्ड की पार्लियामेण्टरी शासन प्रणाली की प्रारम्भिक बातें तथा बादशाह के अधिकारों आदि की चर्चा की गई थी। इस लेख में कामन्स-सभा की बनावट, उसके चुनाव के लिये मतदाताओं की योग्यता, चुनाव का तरीका व कायदे कानून, प्रधान मन्त्री, केबिनेट व मन्त्री-मण्डल का चुनाव, उनके अधिकार व कार्यों आदि का वर्णन किया गया है। भारतवर्ष में प्रान्तीय व केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाओं का निर्माण इसी ढङ्ग से किया जाने का प्रयत्न हो रहा है। अतः इस जानकारी से रूर्व साधारण काफी लाभ उठायेंगे, हमें ऐसी आशा है। सँ०

पिछले लेख में यह बताया गया है कि हर एक काम बादशाह के ही हस्ताक्षर से होता है, मगर उसकी सारी जवाबदारी पार्लियामेंट की ही होती है। पार्लियामेंट लार्ड सभा और कामन्स सभा से मिलकर बनी हुई है। क्योंकि राजतंत्र में कामन्स सभा का काम वही है जो कि साइकिल में ब्रेक का, इसलिए जब तक साइकिल की रचना और उसके उपयोग के विषय में सब बातें समझ में न आजायें, तब तक ब्रेक की बनावट और उसके कार्यों का जिक्र करना व्यर्थ है। इसलिए पहले मैं कामन्स सभा को लेता हूँ।

कामन्स सभा—कामन्स का अर्थ है वे लोग जिनके कोई खास अधिकार न हों यानी साधारण जनता। इस सभा में जनता के चुने हुये प्रतिनिधि ही होते हैं। कुल मेम्बरों की सँख्या ६१५ है। इनमें से १२ को छोड़ कर, जो कि आक्सफोर्ड, केम्ब्रिज, लन्दन आदि विश्वविद्यालयों की तरफ़ से आते हैं और जिनको वहाँ के स्नातक चुनकर भेजते हैं, बाक़ी सब इँगलैंड, वेल्ज, स्काटलैंड और उत्तरी आयर्लैंड की सँख्या के अनुपात से बनाए हुए चुनावक्षेत्रों से चुन कर आते हैं। १९२८ के कायदे से कुल मतदाताओं की सँख्या २७०००००० है यानी कुल आबादी का ६० प्रतिशत है। १८३० में यह तादाद सिर्फ ४ प्रतिशत थी।

मत देने का अधिकार—१९१८ से पहिले एक नागरिक की हैसियत से प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति को मत देने का अधिकार न था। इसके लिए जरूरी था कि आदमी के पास अपनी जायदाद और मिलकियत हो या किसी की जमीन लेकर बोता हो या निश्चित रकम—मकान किराया के रूप में देता हो। उस समय स्त्रियों को राय देने का हक़ नहीं था। १९१४ से पहले कई बार इस बात की कोशिश हुई कि मत देने सम्बन्धी कानून में फेर फार किया जावे। मगर कुछ सफलता नहीं मिली और आखिर १९१४ में लड़ाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुरू होने के कारण यह मामला खटाई में पड़ गया और १९१० के आखिर में चुनी हुई कामन्स सभा की आयु लड़ाई के दिनों में चुनाव न करने के कारण बढ़ा दी गई जैसा कि वायसराय ने कई बार मौजूदा केन्द्रीय धारा सभा (central legislative assembly) की आयु बढ़ा दी है। मगर लड़ाई के कारण पुरानी व्यवस्था में बहुत फेरफार पड़ गया और जरूरी समझा गया कि पार्लियामेंटरी क़ायदे क़ानूनों में फेरफार किया जावे। इस लिए १९१६ में ३६ सभ्यों की एक कमेटी बनाई गई कि वह इस प्रश्न पर अच्छी तरह से विचार करके रिपोर्ट पेश करे। इस कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर १९१८ के शुरू ही में जबकि लड़ाई जारी थी, नया कायदा पास हुआ जिसकी रू से हरएक पुरुष को जिसकी २१ वर्ष की उमर हो और जो राय देने वाले हल्के में चुनाव होने से पहिले ३ मास से रहता हो, राय देने का हक मिल गया। इसके अलावा अगर कोई आदमी व्यापार करता हो और उसके पास इतनी जमीन हो या मकान हो कि जिसका किराया साल में १० पौं० हो, वह भी राय दे सकता है। विश्वविद्यालय के स्नातकों को, जहाँ के वे स्नातक हो वहाँ राय देने का पहिले के अनुसार हक कायम रहा। इस कायदे के अनुसार उन स्त्रियों को भी जिनकी उमर ३० वर्ष की हों और इतनी मिलकियत की मालिक हों कि जिनके लिए ५ पौं० सालाना कर दिया जाता हो या ऐसे मकान में रहती हों जिनका भाड़ा ५ पौं० हो या ऐसे आदमियों की पत्नि हों जो कि स्थानीय सँस्थाओं (Local Boards or Municipalties) के मत दाता हों राय देने का हक मिल गया। विश्वविद्यालयों के चुनाव में भी यदि कोई स्त्री ३० वर्ष की उमर होने पर स्नातिका हो तो उसे राय देने का अधिकार मिल गया है। मगर किसीभी हालत में मतदाता दो से ज्यादा मत नहीं दे सकता और एक हल्के में एक ही राय दे सकता है। १९२८ में निर्वाचन नियमों में कुछ सुधार हुआ और राय देने के सम्बन्ध में १९१८ के कायदे के अनुसार स्त्री-पुरुष में जो भेद था वह मिट गया। इस प्रकार स्त्रियों को भी वही अधिकार मिल गये जो पुरुषों को १९१८ में मिल चुके थे।

Peers—उमरा, चूँकि लार्ड सभा के मेम्बर होते हैं, अतः राय नहीं दे सकते। पागल और इसी किस्म के दूसरे रोगी, राजद्रोही और ऐसे आदमी जिनको इखलाक़ी जुर्म में सजा हुई हो, राय नहीं दे सकते। जिन आदमियों को सरकार की तरफ़ से गरीब होने के कारण मदद मिलती थी वे १९१८ के कायदे से पहिले राय नहीं दे सकते थे। मगर बाद में उन्हें भी राय देने का हक मिल गया।

चुनाव—१६८८ से पहिले पार्लियामेंट का दो तरह से अन्त होता था। एक तो बादशाह के फरमान से, दूसरे बादशाह की मृत्यु के कारण। दूसरी रीति आज कल जारी नहीं है। जनवरी १९३६ में जब जार्जपञ्चम की मृत्यु हुई तब उसकी आखिरी पार्लियामेंट एडवर्ड अष्टम की पहली पार्लियामेंट हो गई। बादशाह के फ़रमान द्वारा पार्लियामेंट का अन्त करने की पद्धति आज कल जारी है, मगर बादशाह इसकी खुद जिम्मेवारी नहीं लेता। १९११ के क़ायदे के अनुसार चुनाव हर पाँच वर्ष में होता है। खास हालत में, जैसा कि १९१४ की लड़ाई के समय हुआ पार्लियामेंट चाहे चुनाव को मुलतवी कर सकती और अगर प्रधान मँत्री (Prime Minister) को किसी गम्भीर प्रश्न पर, जिसके लिए वह किसी किस्म का समझौता करने को तैयार नहीं है, पार्लियामेंट में अगर हार हो जाय तो वह अगर मुनासिब समझे तो बादशाह से कह सकता है कि गो मौजूदा मेम्बर मेरे साथ इस मामले में नहीं हैं, मगर मुझे विश्वास है कि देश मेरे साथ है, इसलिये आप पार्लियामेंट का अन्त कर दें और नये चुनाव के लिए शाही फ़रमान निकाल दें। बादशाह प्रधान-मन्त्री की बात को स्वीकार कर लेता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पार्लियामैंट भँग होकर चुनाव हो जाता है।

फ़रमान जारी होने के आठ दिन बाद तक रविवार और दूसरी छुट्टियों को छोड़ते हुए जो सभ्य चुनाव में खड़ा होना चाहते हैं, वे अपने नाम के साथ दस मत दाताओं के हस्ताक्षर कराकर, जिनमें से एक नाम पेश करे और दूसरा ताईद करे चुनाव के महकमे में अपनी दरख़्वास्त भेज दें और उसके साथ १५० पौंड भी दाखिल कर दें। यह अमानत की रकम कहलाती है। अगर चुनाव के समय जितनी राय दी गई हैं उसका आठवाँ भाग भी किसी उमीदवार के पक्ष में न आवे तब यह रक़म ज़ब्त हो जाती है। जो आदमी मत नहीं दे सकते; सरकारी मुलाज़िम, सिवाय उनके जोकि पार्लियामैंट के सभ्य होते हुए राज्य का काम करते हैं, सरकारी ठेकेदार और पेन्शनयाफ़्ता जो पहिले Civil Servants और Diplomats नहीं थे, पार्लियामैंट के मेम्बर होने के लिए खड़े नहीं हो सकते। इसके अलावा ऐसे आदमी चुनाव के लिये भी खड़े नहीं हो सकते जिन्होंने चुनाव के समय नाजाइज़ तरीके इस्तेमाल किये हों और उनको इस सम्बन्ध में सज़ा हो गई हो। साधारणतः यह सज़ा ७ वर्ष तक चुनाव में न खड़ा होने की है। मगर बाज़ हालतों में किसी व्यक्ति को हमेशा के लिये भी चुनाव से खारिज कर दिया जाता है।

साधारणतः राजनीतिक दल ही अपने-अपने उमीदवारों को खड़ा करते हैं। हर एक पक्ष चुनाव के समय अपनी नीति प्रकट करता है कि अगर उसकी बहुमति हुई तो वह किस तरह से शासन-सञ्चालन का कार्य करेगा। इसके लिए अखबारों और भाषणों द्वारा और जिस तरह से भी मुमकिन हो, हर एक पक्ष अपना प्रचार करता है। जैसा कि कांग्रेस ने १९३५ के विधान के बाद प्रांतीय असेम्बलियों के चुनाव के समय अपने पक्ष के उम्मीदवारों के लिए प्रचार किया था, बस उसी तरह से वहां भी समझना चाहिए। चुनाव लड़ने के लिए हर आदमी को अपना-अपना खर्च करना होता है। खर्च की हद मुकर्रर की हुई है। बड़े-बड़े शहरों के उमीदवार एक मतदाता पर पांच पैंस और देहात के छः पैंस से ज्यादा खर्च नहीं कर सकते। चुनाव होने के ३५ दिन के अँदर २ हर उमीदवार को अपना हिसाब चुनाव-दफ़्तर को भेजना पड़ता है। अगर खर्च की ज्यादती दिखाई दे और ऐसा मालूम हो कि उमीदवार ने रिश्वत दी है या किसी तरह से मतदाताओं पर दबाव डालकर राय हासिल की हैं, तब वह अगर चुनाव में सफल हो गया है तो मेम्बर नहीं रह सकता और उसको कायदे के अनुसार सज़ा दी जाती है यानी उसके चुनाव में खड़े होने के रास्ते में रुकावट डाल दी जाती है।

सारे देश में एक ही दिन चुनाव होता है। जिस तरह हिन्दुस्तान में धारासभाओं का चुनाव होता है उसी तरह होता है। मतदाता मत देने के स्थान पर जाते हैं और वहां जो राय लेने के लिए अफ़सर बैठा हुआ होता है उसके सामने जिसके लिये मत देना हो दे देते हैं और वह कागज़ सन्दूकची में डाल दिया जाता है। हर एक उमीदवार के नाम की सन्दूकची अलग-अलग होती है। मतों की गिनती करके परिणाम ज़ाहिर कर दिया जाता है। इससे पता चल जाता है कि हर एक पक्ष के कितने सभ्य पार्लियामैंट में आये हैं। १९१४ के क़ायदे से मतदाताओं को डाक द्वारा अपनी राय भेजने का अधिकार मिल गया है बशर्तेकि वे इँगलैंड में रहते हों। एक मतदाता दूसरे मतदाता की तरफ़ से राय दे सकता है अगर उसकी इजाज़त पहले से लेली हो। १९१८ में यह अधिकार केवल फौजी सिपाहियों और दूसरे ऐसे आदमियों को कि जिनको जहाज में काम करना पड़ता था दिया गया था। मगर १९२८ से यह अधिकार सबको दे दिया गया है।

चुनाव खत्म होने के बाद जलदी से जलदी सभा अपना काम शुरू कर देती है। यह वकफा ज्यादा से ज्यादा दो या ढाई सप्ताह का होता है। कामन्स

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा और लार्ड सभा एक साथ एक ही दिन होती है। कामन्स सभा के मेम्बरों को लार्ड सभा में बुलाया जाता है और तब लार्ड चान्सलर (Lord-Chancellor) जोकि लार्ड सभा का अध्यक्ष होता है यह सूचना देता है—"बादशाह की यह सूचना है कि आप अपना अध्यक्ष (जो कि Speaker-कहलाता है) चुन लें।" इसके बाद कामन्स सभा के मेम्बर चले जाते हैं और अगले दिन फिर जो आदमी अध्यक्ष चुना गया है वह सब सभ्यों को लेकर लार्ड सभा में जाता है और वहां अपने चुनाव की सूचना देता है। लार्ड चाँसलर बादशाह की तरफ से रज़ामन्दी दे देता है। फिर स्पीकर (Speaker) और सभ्य वापिस जाकर इस प्रकार वफ़ादारी की शपथ लेते है और अपने दस्तख़त करते हैं—"I... .., swear by Almighty God that I will be faithful and bear true allegiance to His Majesty King . his heirs and sucessors according to Law." फिर एक दो दिन बाद बादशाह शानो-शौकत के साथ लार्ड सभा में जाता है और वहां तख़्त पर बैठता है। इसकी सूचना कामन्स सभा के मेम्बरों को देदी जाती है और वहाँ के सब मेम्बर लार्डसभा में आ जाते हैं। फिर बादशाह अपना भाषण, जो कि प्रधान मण्डल तैयार करता है, पढ़ता है। इस में मुख्य-मुख्य प्रश्नों पर मन्त्री-मण्डल जो नीति इख़्तयार करेगा, उसी पर प्रकाश डाला जाता है। आज कल अकसर इस अवसर पर बादशाह खुद नहीं आता और उसकी जगह लार्ड चांसलर ही बादशाह का भाषण पढता है। इसके बाद कामन्स सभा के सभ्य वापिस कामन्स सभा में आजाते हैं और दोनों सभाओं में इस भाषण का जवाब दिया जाता है जिसके दौरान में विरोधी पक्ष सब समस्याओं के सम्बन्ध में अपनी नीति प्रकट करते हैं। कभी-कभी इस कार्य में दो-तीन दिन लग जाते हैं। इसके बाद पार्लियामैंट की दोनों सभाओं का व्यवस्थित रीति से काम-काज शुरू हो जाता है। अगर पार्लियामैण्ट नये चुनाव के बाद शुरू नहीं होती, तब Speaker यानी कामन्स सभा के प्रमुख का चुनाव और वफ़ादारी की क़सम खाने की जरूरत नहीं रहती। अगर बादशाह खुद नहीं आवे तब शुरू २ में जो रसम अदा की जाती है लार्ड चाँसलर के साथ चार और सभ्य बैठते हैं जोकि लार्ड कमिश्नर कहलाते हैं और यह पाँच आदमी सब काम पूरा करते हैं। जब पार्लियामैंट का Session (साल की आखिरी-बैठक) ख़तम होता है तब भी इसी किस्म की कारवाही होती है। उस समय जो बादशाह भाषण पढ़ता है या उसकी तरफ़ से पढ़ा जाता है उसमें सभ्यों को राजकार्य में सहायता देने के लिए धन्यवाद दिया जाता है।

१९११ से हरएक सभ्य को ४०० पौं० सालाना भत्ता मिलने लगा जोकि १९३७ से ६०० पौं० कर दिया गया है। विरोधी पक्षों की जिस पार्टी के मेम्बर की सबसे ज्यादा सँख्या हो उसके नेता (Leader) को २००० पौंड सालाना मिलता है।

जो पार्लियामैंट के सभ्य हैं सीधे तौर पर मेम्बरी से इस्तीफा नहीं दे सकते। मगर जो ऐसा करना चाहे उसके लिये टेढ़ा रास्ता निकाला हुआ है। कई ऐसे ओहदे हैं कि जो पार्लियामैंट के सदस्य ग्रहण नहीं कर सकते, उनमें से किसी एक के मिलने के लिये मेम्बर दरख्वास्त करता है और उसको उस पर मुकर्रर कर दिया जाता है। इस तरह से वह कामन्स सभा से अलग हो जाता है। जब आदमी अलग हो गया तब वह उस पद परसे भी त्याग पत्र दे देता है। इन पदों पर रहने वालों को कुछ भी काम नहीं करना पड़ता।

प्रधान मन्त्री और मन्त्री मण्डलः— जब तक नया चुनाव न होले और कामन्स सभा में हर एक पक्ष की शक्ति का पता न चल जाय और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बादशाह उस पक्ष के नेता (Leader) को जिस का बहुमत हो, बुलाकर उसको मन्त्रीमण्डल बनाकर बादशाह की मँजूरी न ले ले तब तक पुराना मन्त्री मँडल ही कार्य करता रहता है। चुनाव के बाद अगर पुराने मन्त्री मँडल के पक्ष का बहुमत न हो तो प्रधान मन्त्री बादशाह को अपना तथा सारे मन्त्री मँडल का इस्तीफा देता है और बादशाह को उस आदमी को प्रधान पद के लिए आमन्त्रित करने की सलाह देता है कि जिस नेता के पक्ष की बहुमति हो और उस सलाह के अनुसार ही काम करता है। इस तरह से बहुमति पक्ष का मन्त्री मँडल हो जाता है, और जो उस पक्ष का नेता होता है वह प्रधान मन्त्री बन जाता है। राज-काज की सारी जिम्मेदारी मन्त्री मँडल की होती है और बादशाह इसकी ही सलाह के अनुसार कार्य करता है या कहिये कि इसी के कार्यों पर अपनी मोहर लगा देता है। चूँकि मन्त्रीमँडल बहुमति के पक्ष का है, इसलिए वह प्रजा का प्रतिनिधि है।

मन्त्री मँडल को प्रधान मन्त्री नियुक्त करता है और इसमें ५०, ६० के करीब आदमी होते हैं। पूरी सँख्या कितनी हो इसका बहुत कुछ निर्णय प्रधान मन्त्री ही करता है। मन्त्री मण्डल की नियुक्ति करते समय प्रधान मन्त्री कई बातों का ख्याल रखता है। पहली बात तो यह है कि जिनको वह नियुक्त करे वे उससे मिलकर काम करने को तैयार हों। अच्छी तरह से कारोबार चलाने के लिए यह भी जरूरी है कि मन्त्री मण्डल में ऐसे आदमी हों कि जिनके बोलने की योग्यता अच्छी हो और वे सारी सभा पर अच्छा प्रभाव डाल सकें और चिड़चिड़े स्वभाव के न हों। सरकारी महकमों की देख रेख के लिए यह भी जरूरी है कि विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों को उन महकमों की जिम्मेवारी दी जाय ताकि प्रतिदिन का कार्य ठीक तरह से होता रहे। बाज दफा अपने पक्ष के ऐसे आदमी को भी मन्त्री मण्डल में रखना पड़ता है जोकि झगड़ालू स्वभाव का हो और कुछ प्रभाव दूसरे आदमियों पर डाल सकता हो ताकि वह मन्त्री मण्डल के कार्यों में रोड़ा न अटकाते रहें। इस तरह से राज-काज को ठीक तरह से चलाने और अपने पक्ष को भी ठीक तरह से सँगठित रखने के ख्याल को मद्देनजर रखते हुए प्रधान मत्री मन्त्री मण्डल को नियुक्त करता है। यह काम काफी अटपटा है। गवर्नमेंट के सब महकमे मन्त्री मँडल के मेम्बरों में बांट दिये जाते हैं। यह काम भी मुशकिल है और इसको भी प्रधान मन्त्री पूरा करता है। यह जरूरी नहीं कि जो आदमी किसी महकमे का मन्त्री बने उसको उसकी पूरी-पूरी वाकफियत ही हो। दृष्टांत रूप यह आवश्यक नहीं कि जिसको फौज का महकमा सौंपा जावे वह एक बड़ा भारी जनरल ही हो। अगर अपनी पार्टी में कोई ऐसा आदमी है कि जो इस कार्य में खास विशेषता रखता है और उसमें दूसरे गुण भी हैं जो कि राज कार्य को चलाने के लिए आवश्यक हैं, तो उसको वह महकमा सौंप दिया जाता है। नहीं तो किसी को भी दिया जा सकता है। हाँ, इतना जरूर होता है जो मन्त्री-मण्डल के मेम्बर होते हैं वे अच्छी योग्यता रखते हैं और उनको सामान्य जानकारी भी खूब होती है। कुछ महकमे ज्यादा प्रतिष्ठित भी हैं। हरएक मेम्बर यही चाहता है कि उसको ऐसा ही कोई महकमा मिले। प्रधान मन्त्री की योग्यता और प्रियता की जांच इसी में है कि वह काम को इसी तरह से बांटे कि जिससे न तो कार्य को हो हानि पहुँचे और न उसके साथी नाराज हों। प्रधानमन्त्री भी अपने पास एक महकमा रखता है वह जो भी महकमा चाहे पसँद कर ले। मन्त्री मँडल के हर एक सभ्य को तनख्वाह मिलती है, और वह ५००० पौंड सालाना से ज्यादा नहीं हो सकती। महकमों के मन्त्रियों के नीचे उप-मन्त्री होते हैं जिनको मन्त्रियों की निस्बत कम तनख्वाह मिलती है। उप-मन्त्री दो प्रकार के होते हैं, एक तो (Parliamentary) पार्लिया-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैक्रेटरी जोकि मन्त्रीमँडल में शामिल होते हैं और दूसरे Permanent (मुस्तकिल) जो कि मन्त्री मँडल के बदलने पर भी कायम रहते हैं और पार्लियामैंट के सभ्य नहीं होते। यह सरकारी मुलाजिम होते हैं और राजनीति क्षेत्र में कार्य नहीं कर सकते। वे अपने-अपने महकमे के मन्त्रियों को जवाबदार होते हैं। सब मन्त्री रोज मर्रोह दफ्तर में जाते हैं और अवसर पड़ने पर बाकायदा छुट्टी लेकर ही गैरहाजिर रह सकते हैं।

इंगलैंड में इस तरह की प्रथा पड़ गई है कि लार्डसभा में लार्डसभा का मेम्बर और कामन्स सभा में कामन्ससभा का मेम्बर ही सरकारी कामकाज करने के लिए हाजिर हो सकता है। इसलिए मन्त्री मण्डल बनाते समय यह ख्याल रखना पड़ता है कि इसके सभ्य इस तरह से छाँटे जायँ कि दोनों सभाओं में ठीक तरह से काम चलता रहे। यद्यपि इस किस्म का कायदा नहीं है कि मन्त्री कामन्स सभा के सभ्यों में से ही हों और उप मन्त्री ही लार्ड सभा में से लिए जायं, मगर यह प्रथा जरूर पड़ गई है और जब तक कोई खास ही कारण न हो तब तक इस प्रथा का ही अनुसरण होता जाता है। मगर जरूरत पड़ने पर मन्त्री लार्ड सभा में से बना लेते हैं जैसा कि विदेशी मन्त्री Foreign Secretary के पद पर मि० ईडन के इस्तीफा के बाद लार्ड हैलीफैक्स को मुकर्रर कर दिया गया। हां, प्रधान मन्त्री हमेशा कामन्स सभा में से ही होता है। यह भी प्रथा ही है।

प्रधान मण्डल और मन्त्री मण्डलः— इन दोनों में भेद है। मन्त्री मण्डल के सभ्य ५० से ६० के करीब होते हैं। प्रधान मँडल के सभ्यों की तादाद का निर्णय प्रधान मन्त्री ही करता है। इस मन्त्री मण्डल की एक छोटी कमेटी समझिए। इसमें सब महकमों के मन्त्री तो होते ही हैं। मन्त्री मँडल के सभ्यों में से किसी को प्रधान मन्त्री शामिल करना चाहे तो कर सकता है। प्रधान मण्डल को केबिनेट (Cabinet) कहते हैं और मन्त्रीमँडल को मिनिस्टरी (Ministry)। छोटी कमेटी यानी केबिनेट राजकाज की नीति को निश्चित करती है और इसकी बैठक सप्ताह में एक बार तो जरूर होती है, मगर जरूरत पड़ने पर रोज भी। साधारणतः इसके सभ्य २० से ३० तक होते हैं। मुख्य २ प्रश्नों की चर्चा इस कमेटी की बैठकों में ही पहिले होती है और जब फैसला हो जाता है तब वह हर एक सभ्य को माननीय होता है। यद्यपि हर एक मन्त्री अपने-अपने काम का जवाबदार है मगर सारी केबिनेट और मन्त्रिमँडल राजकार्यों का जिम्मेवार है। अगर किसी मन्त्री के काम में कुछ खराबी हो तो उसकी जवाबदारी सारे मन्त्री मण्डल की होती है इसलिए हर एक मँत्री ऐसे प्रश्नों को जिनमें नीति का सवाल हो प्रधान मंडल के समक्ष ले आता है और अच्छी तरह से चर्चा होने के बाद जो निश्चित हो जाय उस पर अमल करता है। अगर कोई मन्त्री इस फैसले से सहमत न हो और उसके अनुसार काम करने को तैयार न होवे तब वह अपना इस्तीफा प्रधान मंत्री को दे देता है और मंत्री मंडल से अलग हो जाता है। मन्त्री मंडल के वे सभ्य जो कि प्रधान मंडल में नहीं होते, अगर वे भी प्रधान मंडल की नीति से सहमत न हों तो उनको भी इस्तीफा देकर अलग होना पड़ता है यद्यपि उनका नीति के निश्चित करने में कोई हाथ नहीं होता।

प्रधान मंत्री अपने पक्ष की सभा समय-समय पर करता रहता है और जिससे कि उसके दल के मेम्बर मंत्री मण्डल की नीति से वाकिफ रहें और उसके बारे में जो कुछ उनको कहना हो वे कह सकें, और उस पर अच्छी तरह से बहस मुबाहिसा कर सकें। इस प्रकार वह पक्ष जिसका मन्त्रीमण्डल है खुली सभा में उसकी नीति का विरोध नहीं करता। प्रधान मंडल इस बात का खूब ख्याल रखता है कि वह राज्य-कार्यों में अपने पक्ष को साथ रखे। अगर पक्ष का साथ न मिले तो मंत्रीमंडल काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं कर सकता। अगर पक्ष का कोई आदमी पक्ष की नीति से सहमत न हो और खुली सभा में विरोध करे, तब वह उस पक्ष से अलग हो जाता है और उसका इखलाक़ी फर्ज है कि वह पार्लियामेंट से भी अलग हो जाय क्योंकि उसका चुनाव उस नीति को ख़याल में रखते हुए हुआ था जिसका कि वह अब अनुगामी नहीं रहा। साधारणतः मतभेद हो जाने पर, जैसा कि ऊपर बताया गया है, वैसा ही किया जाता है।

प्रधान मंडल का मुख्य कार्य यह है कि वह उस नीति के अनुसार कि जिसके आधार पर उसे चुनाव में बहुमति मिली है, राज्य व्यवस्था करे और उसके लिए जितने नये कायदे बनाने की ज़रूरत पड़े, बनाये और उन पर अमल कराये। चाहां नीति को व्यवहार में लाने के लिए स्पष्ट रीति से उसे निश्चित करना, उसके अनुसार कायदे बनाना और उनको अमल में लाना, यह जवाबदारी प्रधान मंडल और मन्त्री मंडल दोनों की है।

अगले लेख में बताया जावेगा कि कायदे किस तरह बनाए जाते हैं और कामन्स सभा किस तरह से मन्त्रीमंडल के कार्यों की देख रेख करती है।

(क्रमशः)

युरोप के देशों की आबादी व फौज

देश	आबादी	सेना	जहाजी बेड़ा	हवाई जहाज
रूस	१७॥ करोड़	१२३०००००	२९०५८९ टन	५००० से ८५०० तक
जर्मनी	८८००००००	४० लाख	५४१०२३ टन	५००० से ८००० तक
ग्रेट ब्रिटेन	४७००००००	६४५०००	२०७९८६३ टन	४००० से ५७०० तक
इटली	४५००००००	५६०००००	७१५९२० टन	४२०० से ५८०० तक
फ्रांस	४२००००००	५७०००००	८१५५३१ टन	३००० से ३८०० तक
पोलैंड	३५००००००	१७५००००	+	९००
स्पेन	२४६०००००	८०००००	+	?
टर्की	१६००००००	७६६०००	+	?
युगोस्लोवेकिया	१५००००००	१६९००००	+	७००
हँगरी	९००००००	७०००००	+	१५०
बेलजियम	८१०००००	९६००००	+	३००
ग्रीस	६००००००	५७८०००	+	?
स्वीटजरलैंड	४१०००००	७६८०००		?
रूमानिया	१९००००००	१०८००००	२५०	+
नीदरलैंड	८१०००००	३६००००		?
बलगेरिया	६००००००	७०००००		१००
लिथुआनिया	२५०००००	३९२०००		?

(जनता)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

गूंगी !

ले०—श्री महादेवलाल बरगाह

परछी में बैठे अपने रोते हुए मुनुवा को दुलार पुचकार कर सूखी रोटियाँ खिलाती हुई सेवती मुग्ध होकर गा रहीथी —

ताती ताती खीर बनाई उसी में डाला घी,
दो कौर तुम जें लो भइया ठंडो पड़ जा जी।

खिन्न शिशु के न मानने पर वह गूंगी गैया का नाम लेकर कहने लगी "आ गूंगी आ, मेरा मुनुवा रोटी खावेगा"। और सच-मुच गूंगी, जो अभी आँगन में भूसा खा रही थी, समीप आकर खड़ी हो गयी। तब मुनुवा कुछ चुप-सा हो गया और उसने अपने दोनों छोटे-छोटे हाथ गूंगी की ओर बढ़ा दिये। मां बेटे दोनों गूंगी के ऊपर स्नेह से अपने हाथ फेरने लगे। इसी दिन से मां ने मुनुवा के रोने की औषधि पा ली और मुनुवा और गूंगी ने अपने-अपने मित्र पाये।

* * *

गजब की ठंड पड़ रही थी। रामअधार अनाज से भरे खलिहानों में रात्रि को उपले की आग जलाये एक फूँस की झोंपड़ी में किसानी वैभव की रखवाली करते बैठा मज़े से गा रहा है—

हरे हरे केसवा हरन कलेसवा आवहि तोहि महेसवा रे।
या दुनिया के पालन खातिर जल बरसावे मेघवा रे।।
रघुवा हुय के नगुवा नाथे फून पर किये तमसवा रे।
प्रागराज पेहलदवा खातिर रघुवा हुयगा बघुवारे।।

गाते गाते उसका गला भर आया। करुणाकर भगवान को स्मरण कर विचारों में कुछ तन्मय सा वह चुप हो गया। उसके मस्तिष्क में कर्जे की बात चक्कर काटने लगी।

गरीब का धन ही कितना! इस फसल से जो कुछ उसे मिलने वाला था वह शायद ही साल भर चले। हां उसने एक बार गूंगी का दूध बेच कर कुछ पैसे इकट्ठे करने की तरकीब सोची थी, परन्तु सेवती ने "मुन्ना क्या खायेगा" कहते हुए प्रस्ताव नामंजूर कर दिया था; तब दोनों मुनुवा को चूम कर पैसे इकट्ठे करने की बात भूल गये थे। परन्तु कर्ज वह भयङ्कर दुःख है जो याद भुला देने से कम होने के बदले बढ़ता है। इसीलिये आज रामअधार फिर उसी सोच में निमग्न हो गया।

गरीब का सौन्दर्य भी एक अभिशाप है। सेवती सुन्दर थी। फिर गांव-खेड़ों में मालगुजार का एक छत्र अधिकार सा होता है। सेवती भी जवान मालगुजार की आँखों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में खटकी। कितने ही गरीबों का चरित्र निर्मल होता है और पैसे का लोभ उन्हें मार्ग से नहीं डिगा सकता। सेवती की आत्मा ऐसी ही उच्च थी। बस इसी बात पर मालगुजार ने रामअधार को तङ्ग करना चाहा। उसने रामअधार के घर कुड़की भेज दी।

रामअधार के घर में रुपये-पैसे तो थे ही नहीं,कुड़की वालों की नज़र में वही गूंगी पड़ गयी जिसे अब पांच साल का मुनुवा खूंटे से बांध रहा था। आखिर उसी को उसके हाथ से जबरदस्ती एक चपरासी ने छीन लिया।

लाड़-प्यार में पला लड़का कुछ मुँहजोर हो गया था। वह चपरासी को गालियां देने लगा जिससे उसने गुस्से में आकर मुनुवा को एक चपत जमा दी। बालक ने चिल्ला कर रोते हुए, पिता की ओर देखा। पिताने अपराधी की तरह सिर नीचा कर लिया। गूंगी वहां से हका ले जाने लगी। वह मार पड़ने पर भी अड़-अड़ जाती थी और लौट-लौटकर उस कुटिया को देखती थी जहां उसके बचपन से अब तक के दिन गुजरे थे, वहां उसके प्यार करने वाले थे, वहां उसका प्यारा साथी मुनुवा था।

गूंगी की आँखों से आँसू गिर रहे थे। वह अपनी मनोवेदना इसी प्रकार प्रकट कर रही थी, क्योंकि वह गूंगी थी। वह अस्पष्ट भाषामें कभी जोर से रंभाती थी। परन्तु उसकी भाषा कौन समझे—वह तो गूंगी थी। अपनी आँखों से अश्रु बरसाते बरबस जाते हुए मानो गूंगी कह रही थी कि अभी तक तो वह गूंगी ही थी, परन्तु अब से उसके आंसू उसे अन्धी भी कर देंगे।

इधर ज़मीन पर लोट-लोटकर अपना क्रोध प्रकट करता हुआ मुनुवा जोर-जोर से रो रहा था जिसे सेवती आज मना सकने में असमर्थ थी, क्योंकि मुनुवा के रोने की औषधि तो आज उसके हाथ से निकल गयी थी।

मुनुवा आज कुछ खा ही नहीं रहा है, और सेवती भी सूखी रोटियां लिए हुए कैसे गाये—

तातो तातो खीर बनाई उसमें डाला घी,
दो कौर तुम जेंलो भइया ठंढा पड़ जा जी।

अभी तक सूखी रोटियां खिला कर वह यह गीत गाती थी इस आशा पर कि गूंगी के व्याने पर घी और दूध उसके लाल की खीर के लिये मिल जायेंगे और वह अपने जी को कभी न कभी ठंढा कर ही लेगी। परन्तु आज तो गूंगी भी नहीं रही। वह किसके बल पर यह कल्पना करने के लिये साहस करे। उसके मुँह से आज यह गीत मुनुवा के इतने रोने पर भी निकल ही नहीं रहे थे मानों,आज वह गूंगी हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनुवा के न खाने पर तीनों प्राणी भूखे लेटने लगे। उस दिन गूंगी सेवती कुछ नहीं बोली। हाँ, केवल रामअधार धीरे से कभी कभी एक गहरी निश्वास लेकर गम्भीरता से गा जाता था—

'आजा मोरी निंदियाँ गूँगी
मोरे भइया को आज सुलाजा री'।

और आखिर एक लम्बी अवधि के पश्चात् लोरियां सुनकर वह गूंगी आ गयी—कौन गूंगी ?—वही निंदिया गूंगी—उनके दुःख को कुछ क्षण विस्मरण कर देने के लिए।

—००—

पाँच सुनहरी बातें

१—जीवन के दिनों को अच्छी तरह गुजारने के लिये मनुष्य को दो बातों के लिये हमेशा तैयार रहना चाहिये—To look ahead and to overlook—आगे देखना और देख के अनदेखा करना। पहिली बात से घाटे व तकलीफ से बचा रहेगा। दूसरी बात से बहसों और झगड़ों में नहीं फँसेगा।

२—कोई आदमी अपने कद से ऊँचा नहीं देख सकता, अर्थात् तुम दूसरे में उससे ज्यादा नहीं देख सकते जितना तुम्हारे अपने अन्दर है।

३—वह आदमी आदर योग्य है, और ऐसा आदमी सौ में एक होता है—जो कि जब कहीं प्रतीक्षा कर रहा होवे, या खाली बैठा होवे, तो लकड़ी, चाकू, काँटे या और कोई हाथ आई चीज़ न खट खटावे, या पैर न हिलावे।

४—तुम्हारे मित्र कहते होंगे कि वह सच्चे हैं, पर असल में सच्चे में तुम्हारे दुश्मन हैं। उनकी नुकताचीनी की कड़वी दवाई को स्व-ज्ञान प्राप्ति के लिये बरतो।

५—एक आदमी के लिये गहरे प्यार और गहरे सत्कार के सँस्कार रखने कठिन हैं। हमें यह चुनना पड़ेगा कि अपने साथियों से सत्कार चाहते हैं या प्यार।

(प्रीतसैनिक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान की महिमा !

र०—श्री रामकुमार "स्नातक" हिन्दी प्रभाकर

(१)

भ्रांत पथिक के हे पथ नेता,
हे गुण गरिमा के आधार ।
तेरे ही लावण्य पुण्य से,
उद्भासित है सब सँसार ॥

(२)

आत्म-क्षेत्र के कृषक व्रती तुम,
हो ऊसर की हरियाली ।
काले घन में विद्युत सम तुम,
तिमिर लोक की दीवाली ॥

(३)

मानवता पशुता के भेदक,
भेदमयी सँसृति की जान ।
तूने नर को अमर बनाया,
देकर दिव्य सभ्यता-ज्ञान ॥

(४)

तेरे बिना व्यर्थ हो जाता,
महायोगियों का तप-ध्यान ।
तेरे बिना न पा सकता नर,
अहो ! मनुजता का सोपान ॥

(५)

वाणी, कला, चेतना के बस,
तुम ही हो जग में प्रतिरूप ।
बिना तुम्हारे जीवन क्या है ?
केवल एक अंधेरा कूप ॥

(६)

स्वयं अलख हो, किन्तु तुम्हीं से,
पाता जग, जग का आभास ।
कविगण जान सकेंगे, इसमें—
कितना श्रेष्ठ विरोधाभास ॥

(७)

किंतु शाँति के शुभ साधन को,
हमने दुखप्रद कर डाला ।
अमृत ढुलकाकर प्याले का,
हाय ! हलाहल भर डाला ॥

(८)

इसी ज्ञान से नर संहारक,
गैस, शस्त्र, करके तैयार ।
बना रहे हैं नर दीवाने,
मिश्री को सांभर का खार ॥

(९)

कभी नहीं जग में देखी थी,
ऐसी प्रबल रक्त की प्यास ।
सभी लाश होंगे, न बचेगा—
कोई लिखने को इतिहास ॥

(१०)

ज्ञानदेव ! आओ, सिखलाओ,
फिर क्रूरों को ममता प्यार ।
तुम अनादि के श्रेय हमारे,
करदो जग का फिर उपकार ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवीन-शिक्षा

रोग का इलाज

ले०—श्री एडमण्ड होम्स

[५]

प्रत्येक नवजात बालक में ईसामसीह छिपा हुआ है। ईसाई धर्म के मुख्य सिद्धांत का कोई मतलब हो सकता है तो वह यही हो सकता है और कुछ नहीं। सच्चा मनुष्यत्व और उसका आदर्श विकास ही देवत्व—Divinity है, और यहा ईसाई धर्म का सार है। जो लोग मनुष्य की कमज़ोरियों का कारण यह बताते हैं कि मनुष्य जन्म से ही खराब है, उसके लिए यह अँतिम जवाब है। जिन-जिन वस्तुओं का जन्म होता है उन सब के स्वभाव में पूर्णता प्राप्त करने की शक्ति भी साथ ही साथ जन्म लेती है। अहँ से छुटकारा पाने और अपना स्वामी आप बनने के मनुष्य के पूर्ण विकास को ही दैवी—Divine कहते हैं। मनुष्य जन्म से ही खराब होने के बदले जन्म से ही ईश्वर बनने की शक्ति लेकर पैदा होता है।

अगर ऐसा न होता तो मनुष्य को अपनी खराबियों का पता कैसे चलता? अगर ऐसा न होता तो किस उच्च दृष्टिकोण से शर्म और दुःख के साथ वह अपने कार्यों की ओर देख सकता? अगर ऐसा न होता तो किस ऊँचे स्टेन्डर्ड से वह अपनी भूलों और गुनाहों के लिए अपने आपको कोसता? ये सब दृष्टिकोण और स्टेन्डर्ड मनुष्य के भीतर ही हैं। यह उसका अपना खरा स्वभाव ही है जो उसकी अपूर्णताओं को जाहिर करता है और नाकामयाबी के लिए उसे अपराधी ठहराता है।

अगर शिक्षा ने मनुष्य को अब तक मनुष्यत्व divine destiny से दूर रखा है तो आज शिक्षा को उस ध्येय की प्राप्ति में उसकी मदद करनी चाहिये। अगर शिक्षा ने अब तक उसके विकास को रोका है तो अब उसके विकास के लिए प्रयत्न करना चाहिये। मनुष्य की महत्ता इसी में है कि वह अपने को दुःखी समझता है। अपने अँदर छिपी हुई महत्ता को महसूस करके वह अपने दुःख को दूर क्यों नहीं कर देता? अगर दुःख से बचना है तो उसे उन चीजों को छोड़ना होगा जो दुःख पैदा करती हैं। सिवाए इसके मुक्ति का और कोई मार्ग है ही नहीं। यदि मनुष्य के वास्तविक स्वभाव का पूर्णतया विकास होने दिया जायगा तो वह अपनी नीच इच्छाओं, कामनाओं और सँकुचित अहँ पर काबू पा सकेगा जिस के फलस्वरूप दुःखों का द्वार खुद-बखुद बँद हो जायगा।

लेकिन अगर मनुष्य स्वभाव का विकास करना है तो बालक को अवश्य स्वतन्त्रता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देनी चाहिए। जैसे कि मैं पहिले ही कह चुका हूँ कि विकास का काम विकसित होने वाला बालक ही कर सकता है, माता पिता या शिक्षक नहीं। इसका मतलब यह है कि जहाँ तक मुमकिन हो बालक को मताग्रही दबाव से मुक्त किया जाए। क्या ऐसा हो सकता है ? क्या बालक को स्वतन्त्र वायुमण्डल में शिक्षित करने का ख्याल एक वाहियात स्वप्न है ? मैं जानता हूं कि यह एक स्वप्न नहीं हैं। लेकिन मेरे अनुभव अपवाद रूप हैं। वे लोग जिन के ऐसे अनुभव नहीं हैं, मेरे अनुभवों को अधूरा समझेंगे, और अपने पूर्व सँचित विचारों के आधार पर यह फैसला करेंगे कि किसी भी उम्र के बालक को स्वतन्त्रता नहीं मिलनी चाहिए। जब उदार और रोशनदिमाग प्रोफेसर एडम्स जैसे शिक्षाशास्त्री ने भी टालस्टाय के स्वतंत्र शिक्षा के प्रयोगों की हँसी उड़ाई है, तब दूसरों की बात ही क्या है ? टालस्टाय की शालाओं को पुलीस ने जबरन बन्द कर दिया। लेकिन उनके प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया कि किसान के बच्चों में भी गुप्त और अविकसित शक्ति का भंडार भरा पड़ा है। उन प्रयोगों ने यह भी साबित कर दिया कि स्वतन्त्रता बालक की शक्तियों को जागृत करता है और मताग्रह निस्सँदेह उनको दबाता है। यह कारण और टालस्टाय का जोरदार उल्लेख कि "जो शिक्षा लोगों को एक निश्चित ढाँचे में ढालती है, वह शिक्षा जड़, निषिद्ध और अशक्य है" समस्त सभ्य जगत के लिए खुला चेलेंज है। इसलिए टालस्टाय के प्रयोगों का अध्ययन प्रो० एडम्स की निस्बत अधिक सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से होना चाहिए। रूसके स्टेण्डर्ड से टालस्टाय के स्कूलों में अगर डिसिपलिन Discipline का अभाव था तो हमें इस का कारण मालूम करना चाहिए। जो बालक आठ दस वर्ष से मताग्रही दबाव के नीचे पिस रहे थे, और जिसके फलस्वरूप उनमें आत्मसँयम नहीं रहा था, ऐसे बालकों को, मनुष्य स्वभाव में विश्वास होने के कारण टालस्टाय ने पूर्णतया स्वतंत्रता देदी थी। अगर किसी बालक को लंगड़ा बना दिया गया है तो चलने के लिए उसे कोई सहारा मिलना ही चाहिए। अगर सहारा देकर हम उसे यकायक उस सहारे से वंचित करदें तो फिर उससे चलने की आशा कैसे रख सकते हैं। बालक को आठ दस वर्ष तक अँधेरे में रखने के बाद उसे एक दम प्रकाश में लाने से वह देखने लगेगा, ऐसी आशा नहीं रखना चाहिए। अनुभव ने सिद्ध कर दिया है कि उपयुक्त काम देकर बहुत छोटे बालकों को बड़ी आसानी से स्वतंत्रता दी जा सकती है। अनुभव ने यह भी बता दिया है कि एक कुशल और हमदर्द अध्यापक धीरे-धीरे और सावधानी से उपयुक्त काम देकर, बड़ी उम्रके बालकों को भी स्वतंत्रता दे सकता है। लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसे बालकों को जो वर्षों से कठोर नियंत्रण में रहे हैं, एक दम सम्पूर्ण स्वतंत्रता दे देना मुसीबत मोल लेना है। अनुशासन की दृष्टि से टालस्टाय के प्रयोग को असफलता मिलनी ही थी। लेकिन स्वतंत्रता के महान सिद्धांत को लक्ष्यमें रखकर जो प्रयोग किया गया था उस सिद्धांत को इस प्रयोग की असफलता के कारण—अगर यह असफल रहा हो, कोई धक्का नहीं पहुँच सकता।

मताग्रही शासन के समर्थक यह मान लेते हैं कि अगर बालक को स्वतंत्रता दे दी गई तो अध्यापक के करने के लिए कुछ भी न रह जाएगा। वह तो अलग खड़ा तमाशा देखता रहेगा और बालक कुदरती तौर पर अपना काम करता रहेगा। मिसाल के तौर पर प्रो० एडम्स ने यह मानलिया है कि फ्रूबेल-पद्धति —Froebelian System—में "अध्यापक बालक की प्राकृतिक रूप से होने वाली विकास-क्रिया का महज़ कृपालु निरीक्षक है"। रूसो को छोड़ कर स्वतंत्रता के समर्थक किसी भी शिक्षा-शास्त्री को यह कहते हुए मैंने कभी नहीं सुना कि शिक्षक का काम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने का है। और मुझे तो फ्रूबेल-पद्धति के भी किसी ऐसे शिक्षक को तलाश करना होगा जो विकास-क्रिया या किसी और क्रिया का महज़ निरीक्षक बनने में ही संतोष मानता हो। मेरे अनुभव के मुताबिक तो फ्रूबेल के अनुयायी अपने गुरु की तरह अपने विद्यार्थियों के लिए बहुत कम करने की निस्बत बहुत ज्यादा करते हैं। अपने गुरु की तरह वे भी ऐसा समझते हैं कि शिक्षा का ध्येय आग्रहपूर्वक विकास करना है। जबरदस्ती कोई काम नहीं हो सकता। विकास करने वाला चाहे वह माली हो, बनस्पति-शास्त्री हो या शिक्षक हो, विकास-क्रिया का निष्क्रिय द्रष्टा नहीं हो सकता।

जो शिक्षक अपने बालकों को स्वतन्त्रता देकर उनका विकास करना चाहता है, उसका काम चुप चाप बैठे रहना नहीं है। इसके विपरीत उसे बहुत कुछ करना पड़ता है। उसका काम आजकल के दकियानूसी स्कूलों के शिक्षकों की निस्बत अधिक कठिन,परिश्रम-साध्य और ऊँचे दर्जे का होता है। अलबत्ता स्वतन्त्रता के खिलाफ मुख्य आपत्ति यह है कि इससे शिक्षक की जिम्मेवारी बहुत बढ़ जाती है, और अगर शिक्षक खास तौर पर प्रतिभाशाली न हो या विशेष रूप से ट्रेनिंग पाया हुआ न हो, तो वह अपनी जिम्मेवारी को पूरा नहीं कर सकता।

बालकों को स्वतन्त्रता देने का प्रयोग टालस्टाय के अलावा अन्य शिक्षा-शास्त्रियों ने भी किया है और जहाँ अनुकूल वातावरण में यह प्रयोग किया गया है वहाँ शानदार कामयाबी हासिल हुई है। ऐसे ही एक प्रयोग का जो बदकिसमती से बंद हो गया है, किसी दूसरी जगह वर्णन किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस शिक्षिका ने यह प्रयोग किया था, उसे अधिकतर बड़ी उम्र के बालकों से बर्ताव करना पड़ता था। उस शिक्षिका ने धीरे धीरे, सावधानी और कुशलता से अपने स्कूल में स्वतन्त्रता को दाखिल किया। उसने देखा कि ज्यों ज्यों वह अपने विद्यार्थियों को अधिक स्वतन्त्रता देती थी त्यों त्यों वे अपने को इस वरदान के लिए योग्य सिद्ध करते थे। फलतः कुछ दिनों में उसका स्कूल अधिकाधिक स्वतन्त्र हो गया। धीरे धीरे सारी शिक्षा की देखभाल का बोझ बालकों के ही सुपुर्द कर दिया गया। बालकों ने प्रत्येक नयी जिम्मेवारी का स्वागत किया, और उन्हें ऐसा लगा कि उनकी शिक्षिका उनके प्रति सद्भावना और विश्वास रखती है। इसका नतीजा यह हुआ कि जब अधिक सँयम और योग्यता की मांग की जाती थी तो बालक वफादारी और प्रेम के साथ उस नई मांग को पूरा करते थे। रोम में किये गये डाक्टर मोन्टीसोरी के प्रयोगों ने, जिनकी ओर आज समस्त शिक्षण-जगत का ध्यान आकर्षित हो रहा है, साबित कर दिया है कि छोटी से छोटी उम्र के बालकों को बिना किसी भय के पूरी पूरी स्वतन्त्रता दी जा सकती है। जहां छोटी उम्र के बालकों को सहानुभूति से ठीक मात्रा में स्वतन्त्रता दी जाती है, वहां उनका स्वाभाविक रूप से विकास होता है और उचित समय में उनमें वे सब गुण आ जाते हैं जो 'यूटोपिया' के बड़ी उम्र के बालकों में पाये जाते थे। 'यूटोपिया' में स्वतन्त्र वातावरण में पढ़ने वाले बालकों में धीरज, अध्यवसाय, साधन सम्पन्नता, आत्मविश्वास, आत्मसँयम, आत्मविस्मृति, मृदुस्वभाव, भ्रातृत्व, शिष्टता, प्रसन्नता आदि गुण पाये जाते थे तथा वे अपनी शिक्षिका के प्रति भक्तिभाव रखते थे। शिक्षिका का बालकों पर इसलिए प्रभुत्व था कि उसने अपने अहं को मिटा दिया था। लेकिन मताग्रही-शिक्षक ऐसा प्रभुत्व पाने की आशा कभी नहीं कर सकता।

इससे भी अधिक साहसपूर्ण प्रयोग मिस्टर जार्ज तथा मि० लेन ने अमेरिका में किये हैं। उन प्रयोगों ने साबित कर दिया है कि परित्यक्त (Wastrel) और मुजरिम बालकों और बड़ी उम्र के लोगों को भी सही सलामती से स्वतन्त्रता दी जा सकती है। जो यह जानते हैं कि सच्ची स्वतन्त्रता कैसे दी जाए, उन लोगों ने ऐसे प्रयोग करके देखे हैं। पतितों को ऊँचा उठाने, बिगड़े हुओं lawless को संयमशील और उदासीनों को प्राणवान बनाने की आजादी में जो अद्भुत शक्ति है, उस शक्ति को, आवारा नौजवानों की वृत्ति को दबाकर उनको ठीक रास्ते पर लाने का प्रयत्न करनेवाले सुधार-गृहों—reformatories के शिक्षक अलौकिक समझते हैं। (क्रमशः)

—अनु० चं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपन्यासकारों व कहानी-लेखकों से !

ले० —श्री गिरिराजजी बी० ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

समाज में एक ऐसा वर्ग है जो कि न तो स्वयँ अपने आपको नवयुवकों की शिक्षा के लिए जिम्मेवार समझता है न दूसरे ही उसको ऐसा ख़्याल करते हैं। नवयुवक भी उसको अपने शिक्षक-गणों में शुमार नहीं करते; मगर अदृश्य रूप से इस वर्ग का ऐसा असर पड़ता है कि नवयुवकों के शिक्षक और इस वर्ग के सज्जनों की विचार धारा में मत भेद हो तो विजय इस वर्ग को मिलती है और शिक्षकों के किए कराये पर पानी फिर जाता है। वास्तव में सच्ची शिक्षा वही है कि जिसे न तो देने वाला समझे कि मैं दे रहा हूँ और न ग्रहण करने वाला समझे कि मैं ग्रहण कर रहा हूं। मनुष्य वातावरण से ही सीखता है और वातावरण हमारे विचारों और कार्यों से बनता है।

यह वर्ग पाठक के इर्द गिर्द ऐसा वायुमण्डल बना देता है कि पुस्तक पढ़ते ही वह अपने आपको इस दुनिया की रङ्गभूमि में एक पात्र समझने लगता है और तरह-तरह के विचार, भावनायें और तरङ्गें उसके मन में उठने लगती हैं। बाज़ हालतों में तो इनका असर बहुत ही जल्दी देखने में आता है और भले या बुरे के लिए पाठक में बड़ी गहरी तब्दीली हो जाती है। जिस बात का इस वर्ग की रचनाओं में ज़िक्र ही नहीं आया उसको आम लोग व्यर्थ और फ़जूल समझते हैं और ख़्याल करते हैं कि जीवन में उसका कोई स्थान नहीं।

यह वर्ग है उपन्यास और कहानी लेखकों तथा नाटककारों का। लोग ऐसे हैं कि जो तत्वज्ञान और मानस-शास्त्र के गम्भीर विषयों को नहीं समझ सकते। वे मनोरञ्जनार्थ उपन्यास और कहानियां ही पढ़ते हैं और नाटक देखते हैं। उनमें इतनी शक्ति नहीं होती कि भले बुरे की पहचान कर सकें। इसलिए जो आदर्श उपन्यासों आदि के ज़रिए उनके सामने रखा जाता है वही उनके मन में बिला उनकी जानकारी के घर करता चला जाता है और उनका जीवन उसी के अनुसार बनता रहता है।

यह ठीक है कि उपन्यास तथा कहानी लेखकों और नाटककारों को अपनी रचनाओं मे समाज की वास्तविक हालत दीखानी है। मगर इतने ही से उनका कर्त्तव्य पूरा नहीं हो जाता। उनका काम है समाज की समस्याओं का ठीक-ठीक हल बताना और यह समझाना कि मनुष्य किस तरह से मौजूदा हालत से ऊँचा उठकर सच्ची खुशी या शांति को प्राप्त कर सकता है। उनकी रचनायें तब ही अमर और समाज के लिए उपयोगी होंगी जबकि वास्तविक स्थिति से पैदा होने वाली बुराइयों और ख़राबियों को दिखाकर उनसे ऊँचा उठने का मार्ग बड़े रोचक और प्रभावोत्पादक ढङ्ग से दिखा सकें। समाज के प्रति उनकी जवाबदारी बहुत ज्यादा है क्योंकि उनके पाठक तर्क वितर्क में नहीं पड़ सकते और वे जीवन के मूल-सिद्धांतों की चर्चा में पड़ने के लिए असमर्थ हैं।

गिने चुने लेखकों को छोड़कर अधिक संख्या ऐसों की ही है कि जो पाठकों को जहाँ का तहां ही रखते हैं और उनकी पशु वृत्तियों का ही पोषण करते हैं। सामान्यतः रचनाओं का अंत या तो प्रेमी और प्रेमिका को मिलाकर उनकी आपस में शादी हो जाने में होता है या उनके मार्ग में विघ्न पड़ने के कारण एक दूसरे से न मिलने से एक या दोनों के आत्मघात में होता है।

यह बताना की प्रेम का ध्येय स्त्री पुरुष की शादी में ही है बहुत नीचे दर्जे की बात है; सच्चा प्रेमी स्वार्थ से बिलकुल बरी होता है, बदले का ख़्याल उसके मन में ज़रा भी नहीं आता और किसी पर अपना क़ब्ज़ा जमाना यह तो वह सोच भी नहीं सकता। उसको सदा दुःखी-पीड़ित और मुसीबतमें पड़े हुओं की सहायता करने में ही आनन्द आता है। यह बताना कि स्त्री-पुरुष के प्रेम का ध्येय शादी ही है पाठकों को प्रेम के सच्चे अर्थ से अँधेरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ही रखना है। क्या हम जीवन के अनुभव से नहीं कह सकते कि पति पत्नी कितने भी आपस में खुशी से दूध और पानी की तरह एक होकर रहते हों मगर ज्यों-ज्यों वे आनन्द के रहस्य को समझते जाते हैं त्यों-त्यों वे हरएक के साथ जो उनके सम्पर्क में आता है दुःख दर्द के समय उनकी सहायता करते हैं। इस प्रकार वे अपने कुटुम्ब को ज़्यादा व्यापक बनाते जाते हैं, और विवाह के कारण एक पर जो दूसरे का क़ब्ज़ा जमा हुआ था उसको मिटाकर स्वाधीन होकर रहना शुरू करते हैं। ऐसा करने से जो खुशी उनको होती है वह उस खुशी से कहीं बढ़कर है जोकि अपने ही कुटुम्ब की सँकुचित दृष्टि से काम करने में महसूस होती थी। हां, यह ठीक है कि ऐसी मिसालें कम मिलती हैं। मगर इसका यह अर्थ नहीं कि दृष्टांतों की कमी के कारण प्रेम के सच्चे स्वरूप को बिगाड़ दिया जाय। टालस्टाय ने अपने लेखों और कहानियों में यह बताने की कोशिश की है कि "God is Love and Love is God" यानी ईश्वर प्रेम है और प्रेम ही ईश्वर है। विशुद्ध प्रेम आदमी में स्वभाविक रीति से गुण पैदा कर देता है जो कि बड़े से बड़े सन्त और महापुरुष में होते हैं।

आज जबकि स्त्री पुरुष साकाजिक कार्यों में मिलकर भाग लेने लगे हैं और सह शिक्षण का प्रचार बढ़ता जा रहा है यह बताना कि स्त्री-पुरुष के आपस के व्यवहार और निकट सम्बन्ध का अँत विवाह ही है समाज के लिए अत्यँत हानिकारक है। समाज में इस तरह का वायुमण्डल होने के कारण आपस में मिलने से जो एक दूसरे को फायदा होना चाहिए वह नहीं हो सकता क्योंकि शङ्का सदा सताती रहती है और मन पर खौफ़ छाया रहता है। ऐसी हालत में साथ काम करते हुए भी स्त्री और पुरुषों के अलग-अलग दल बन गये हैं और स्त्रियां अपने अधिकारों को इसी तरह से पुरुष समाज के सामने पेश करती हैं जैसे हम स्वतँत्रता के लिए अपनी मांगें अँगरेज सरकार के सामने रखते हैं। साथ मिलकर समाज में काम करने से दोनों को एक दूसरे से बहुत कुछ सीखना है। मगर यह तब ही मुमकिन है जबकि इस तरह का भय हमारे मन से निकल जाय। इस तरह के उपन्यास, कहानियों और चित्र पटों के कारण यह ख़्याल इतना ज़ोर पकड़ गया है कि सहशिक्षण वाली सँस्थाओं में भी कोई एक दूसरे से खुले दिल से जीवन सम्बन्धी और सामाजिक समस्यों पर आपस में चर्चा नहीं कर सकता। जहां दो सहपाठियों में ज़रा आपस में बातें होने लगीं कि बस हर एक आदमी उनको शङ्का की दृष्टि से देखने लगता है। हाँ, आज अधिकतर आपस के घनिष्ट सम्बन्ध का परिणाम जैसा नाटकों में दिखाते हैं वैसा ही होता है। इसके लिये लेखक ही ज़िम्मेवार हैं क्योंकि उन्होंने उनके सामने आदर्श यही रखा है। इस लिए इस लेख द्वारा मैं उनका ध्यान इस तरफ़ खींच रहा हूँ कि वे अपनी रचनाओं में यह बतलाएँ कि आपस के प्रेम का अँत हरएक के साथ सच्ची मित्रता है। उपन्यास लेखक और नाटककार सिनेमाओं के लिए प्रेम के ऊँचे आदर्श को ध्यान में रखकर कहानियाँ लिखें तो ज़रूर रङ्गभूमि समाज सुधार का इतना बड़ा भारी काम कर सकती है जोकि बड़े-बड़े सुधारकों और सँतों की शक्ति के बाहर है।

इस लेख से पाठक यह न समझें कि मैं एक दूसरे से अधिक छूट लेने की बात कर रहा हूँ। अब जो हालत है इसमें तो बहुत ही सावधानी की ज़रूरत है। मैं तो लेखकों को महज़ यह बतला रहा हूँ कि उन्होंने कैसी ख़राब हालत कर दी है और किस तरह से वायुमँडल बदल कर वे समाज में अच्छी स्थिति पैदा कर सकते हैं।

बालक और बालिकाओं की तरफ़ से, सच्चे आनन्द के इच्छुक युवक और युवतियों की तरफ से, माता-पिता की तरफ से जोकि अपनी सन्तान को सद्गुणी और पवित्र बनाना चाहते हैं, सच्चे शिक्षक गणों की तरफ से जोकि अपने विद्यार्थियों और विद्यार्थिनियों की उलझनों को सुलझाने का प्रयत्न कर रहे हैं, और अँत में मनुष्य मात्र की तरफ से जो कि जीवन ध्येय की प्राप्ति के लिए कशमकश कर रहा है, उपन्यास, लेखकों और नाटककारों से मेरा अनुरोध है कि वे अपनी जिम्मेवारी को समझ कर समाज के सच्चे पथ-प्रदर्शक बनें।

—००—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा आहार

भोजन में टमाटर का महत्व

ले०—डा० बनारसीदास जैन, L. S. M. F.

टमाटर के नाम से आज-कल के पढ़े लिखे प्रायः सभी परिचित हैं। यह एक बहुत पुष्टि कारक साग है। परन्तु खेद है कि उपयोगिता के अनुसार इसका प्रचार अभी तक नहीं हुआ। इसके गुणों को दृष्टि में रखते हुए हमारा यह अनुरोध है कि इसे प्रत्येक मनुष्य को अपने भोजन का एक आवश्यक अँग बना लेना चाहिए। इसमें विटैमिन तथा खनिज नमक आदि की मात्रा अधिक पाई जाती है। इसको कच्चा और अग्नि पर पका कर अनेक प्रकार से खा सकते हैं। इससे थकावट दूर होती है, भूख बढ़ती है और शरीर स्वस्थ रहता है।

यह भिन्न भिन्न नामों से पुकारा जाता है। इसे अँग्रेजी में tomato-टोमैटो, हिन्दी में टमाटर, गुजराती में टंपटो, मराठी में भद्रा या लालवाँगे कहते हैं। कोई कोई इसको अँगरेजी बेंगन भी कहते हैं।

ऐतिहासिक वर्णन

अमेरिका में रोलको नामक एक द्वीप है। उस जगह सन् १८२८ में सर वाल्टररेले ने सर्व प्रथम इस फल की खोज की थी। वहाँके मनुष्य इससे डरते और दूर भागते थे। इसको घृणित एवं जहरीला पदार्थ समझते थे। वहां से यह यूरोप में लाया गया। वहां पर भी किसी ने इसे पसन्द नहीं किया। हाँ, केवल इतना जरूर हुवा कि बागों की शोभा बढ़ाने के लिये यह वहां बोया जाने लगा। खाद्य पदार्थों में उस समय तक इसको कोई विशेष स्थान प्राप्त नहीं हुवा। इस प्रकार यह फुलवारियों की शोभा बढ़ाता रहा और इसका नाम Love apple लव-एपल पड़ा। कोई ९० वर्ष पहिले इकका समावेश खाद्य द्रव्यों में किया गया और इसका नाम टमाटो पड़ा।

भारतवर्ष में प्रवेश

भारत वर्ष में यह फल आज लग भग ९० वर्ष से विदेशियों द्वारा प्रचलित हुआ है। परन्तु अभी तक इसके असली महत्व को समझा नहीं गया है। अभी तक बहुत से मनुष्य इसको अशुद्ध द्रव्य मानते हैं और इसके खाने से परहेज़ करते हैं। स्त्री समाज तो इससे बहुत घृणा करती है और इसे शास्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरुद्ध मानता है। इसमें किसी का कोई दोष नहीं, क्योंकि किसी ने भी इसके विषय में पूर्णतया अपने अनुभवों को प्रगट या प्रकाशित नहीं किया। यही कारण है कि इसके गुणों पर परदा पड़ा है और समाज इससे फायदा नहीं उठा सका है।

आज भी पुरातन पन्थी इससे सख्त नफरत करते हैं और इसको त्याज्य ही बतलाते हैं। और तो और पुराने ढर्रे के वैद्य भी इससे नफरत करते हैं और रोगी को इसे खाने की सलाह नहीं देते। इसे हम उनका अज्ञान या पक्षपात ही कह सकते हैं। यदि पक्षपात रहित होकर इसके गुणों की परीक्षा की जाय तो उन को इसके गुणों की मुक्त कंठ से प्रशन्सा करनी पड़ेगी।

इसके प्रचलित न होने के कारण

इतना उपयोगी होते हुए भी लोगों को भ्रम होगया है कि यह बड़ी भयङ्कर बीमारियों को जैसे कैन्सर (नासूर से भी भयंकरफोड़ा) और उपदंश (syphilis) आदि को उत्पन्न करता है। इसलिए अब भी बहुत से लोग इससे परहेज करते हैं। अभीतक भी केवल अनपढ़ों को नहीं बल्कि पढ़े लिखों को भी कहते हुए सुना जाता है कि इसके अधिक सेवन करने से गुर्दों में पत्थरी हो जाती है। परन्तु मेरे ख्याल में उस में कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो पथरी उत्पन्न करे।

विभिन्न पदार्थों में विटामिन

नाम पदार्थ	वि० A	वि० B	वि० C	वि० D	वि० E
१ बदाम	❀	❀	...	...	...
२ सेव	✻	✻	†	...	...
३ केला	†	†	❀	...	...
४ फूलगोभी कच्ची	❀	❀	†	...	...
५ गाजर	†	‡	❀	...	...
६. प्याज़	✻	†	†	...	...
७. संतरेका रस	✻	❀	‡	...	...
८ आलू (Cooked)	?	...	†	...	...
९ टमाटर (कच्चे या सुरक्षित)	†	‡	‡	...	...
१०. रोटी पानी मे बनाई हुई	✻	†	❈	...	...

विटामिन हमारे शरीर की वृद्धि, पुष्टि और निरोगता के लिए अति आवश्यक हैं क्यों कि इनके अभाव से सैंकड़ों व्याधियां खड़ी हो जाती हैं। ऊपर की तालिका से आप को मालूम हो जायेगा कि टमाटर के अन्दर कितने विटामिन हैं।

सागों व फलों में इसकी विशेषता

विटामिन के अलावा क्षार द्रव्य भी इस में बहुत अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें

❀ विटामिन हैं।

† काफी विटामिन हैं।

‡ सबसे अधिक विटामिन हैं।

❈ विटामिन नहीं हैं।

? ठीक पता नहीं कि विटामिन हैं या नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोहे का प्रमाण दूध की अपेक्षा दुगुना, तथा अँडे के अन्दर के श्वेत भाग की अपेक्षा पांच गुणा अधिक पाया जाता है। टमाटर में नीचे लिखे साग और फलों से लोहा आधे से अधिक रहता है:—

(१) केला, (२) मूली, (३) प्याज़, (४) बैंगन, (५) गाजर, (६) गोभी (७) शलगम, (८) सेब, (९) संतरा, (१०) तरबूज,

कैलशियम यानी चूना यह भी शरीर पुष्टी के लिए अति उत्तम है। यह क्षार द्रव्य जिसको कि विशिष्ट क्षार द्रव्य कहना चाहिए अन्य दूसरे फलों की अपेक्षा टमाटर में ज्यादह होता है। गोमास, मटन और मछली का अपेक्षा इस में यह क्षार तिगुने से भी ज्यादह है। बैंगन में यह सम भाग होता है। अब आप स्वयं देख सकते हैं कि इसकी खाद्य पदार्थों में कितनी इज्ज़त होनी चाहिए। मांसाहारी मनुष्यों को मांस छोड़कर इसका सेवन प्रारम्भ कर देना चाहिए क्योंकि जिस कारण मांस खाया जाता है, उसकी सारी कमी को हमारा टमाटर' पूरा कर सकता है। इन सब के अतिरिक्त इसमें पोटासियम कोरीन सल्फ़र और प्रोटीन भी दूसरे फल, शाक और भाजी की अपेक्षा अधिक मिलते हैं। बहुत से मनुष्यों का यह भ्रमपूर्ण ख्याल है कि इसमें Oxalic-acid है। लेकिन यह बात नहीं है। इसमें Citric acid—नीबू का सत है ना कि Oxalic-acid

बीमारियों के लिए उपयोगिता

नीचे लिखी हुई बीमारियों पर टमाटर जादू का सा असर दिखाता है। स्करवी (Scurvy) यह बिमारी Vitamin 'सी' की कमी और ताजे फल व शाक आदि न खाने से होती है। यह बहुत ही भयङ्कर रोग है। इस से मसूढ़े सूज जाते हैं और रक्त निकलने लगता है; यहां तक कि ये सूजे हुए मसूढे इतना भयंकर रूप धारण कर लेते हैं कि वे तमाम दांतों को ढक लेते हैं और उनकी जड़ों को खोखला बनाकर तमाम दांतों को गिरा देते हैं। दुर्गंध इतनी आती है कि कोई मनुष्य रोगी के पास खड़ा नहीं रह सकता। चमड़ी पर लाल २ दाग हो जाते हैं। अगर रोगी को नियमपूर्वक टमाटर का सेवन सवेरे दोपहर शाम और रात्रि को कराया जाय तो यह बिमारी समूल नष्ट हो जाती है। १ से २ तोले तक टमाटर का रस पीने से और पथ्य रखने से अवश्य लाभ होता है।

निर्बलता, अशक्ति, पाण्डुरोग, कृशता, अजीर्ण और पेट का अफारा आदि को उक्त प्रकार से टमाटर का रस २ माशे से एक तोला तक नित्य पिलाने से जरूर फायदा होता है।

ज्वर में भी यह अद्भुत चमत्कार दिखाता है। प्यास और बुखार को कम करता है। मुंह का स्वाद बिगड़ जाने और कब्ज हो जाने पर अमृत का काम करता है। इसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खूब धोकर साफ चाकू से काट कर नमक और काली मिर्च लगाकर खाने से ये रोग दूर हो जाते हैं।

डा० पी० जे० केम्ब्रीज ने लन्दन रिपोर्ट में लिखा है कि "मधुमेह के लिए टमाटर से बढ़कर विशेष लाभदायक अन्य कोई खाद्य द्रव्य नहीं हो सकता। इससे खून की कमी दूर होती है, मूत्र में शक्कर का प्रमाण भी धीरे धीरे कम होकर मधुमेह रोग अनायास दूर हो जाता है।

विटामिन के न होने से जो रोग हो जाते हैं, वे भी टमाटर के रस से दूर हो जाते हैं। इस लिए आँखों की बिमारी के लिये भी टमाटर का रस बहुत ही गुण दायक है।

कहने का मतलब यह है कि टमाटर एक बहुत ही अच्छा साग है और यह आसानी से पैदा हो सकता है। इसलिये लोगों में इसका प्रचार दिनों दिन बढ़ रहा है।

टमाटर खरीदते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वे बड़े और लाल हों, काले, सड़े, छोटे छोटे, खूब पके या बिलकुल कच्चे न हों।

अहिंसा के द्वारा ग्रामों का पुनर्निर्माण

ले०—श्री हरिभाऊ उपाध्याय, अजमेर

इस बात को सभी मानते हैं कि अहिंसा का मार्ग और अहिंसा का बल हिंसा से कहीं उत्कृष्ट और उदात्त है। अगर कोई यह कहे कि यह व्यवहार में कठिन है तो यह उसकी कमज़ोरी की दलील है! लेकिन अहिंसा का अर्थ इतना ही नहीं है कि शरीर से किसी को चोट या नुक़सान न पहुँचावें, बल्कि मन से भी किसी का बुरा सोचना या बदला निकालने की भावना रखना हिंसा है क्योंकि शरीर से नुक़सान पहुँचाए बिना भी हम दूसरों के दिलों पर घातक चोट पहुँचा सकते हैं। इसलिये सच्ची 'अहिंसा' उसके शारीरिक क्रियाओं द्वारा प्रकट होने में ही नहीं, बल्कि कर्त्ता के हृदय के वास्तविक उच्च सँस्कारों में होती है। अगर हम इस दुनिया को स्वर्ग बनाना चाहते हैं और, हैवान नहीं, इन्सान की तरह रहना चाहते हैं तो हमें इस गुण का विकास करना ही होगा। अहिंसा के मानी हैं क्रियात्मक, निष्क्रिय ही नहीं, प्रेम, दयालुता, क्षमा, सहिष्णुता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नम्रता और ऐसे ही कोमल और मधुर गुणों का समन्वय होना। इन गुणों के बिना समाज में पूर्ण शाँति और सुख के साथ रहना और सुख तथा मुक्ति के पवित्र ध्येय की ओर अबाध गति से चलना असम्भव है। इसलिए हरेक व्यक्ति का यह कर्तव्य होना चाहिये कि वह इस उच्च ध्येय की प्राप्ति के लिए अपने तन-प्राण लगा दे। अगर हमें न्यायके आधार पर सँसार में जिन्दगी बितानी है तो हमें समाज में से मन, वचन और कर्मगत शोषण की भावना का उन्मुलन करना चाहिए।

शोषण का अर्थ है—जो चीज़ न्यायतः हमारी नहीं है, उसका अनुचित उपयोग करना। इसलिए अगर हम न्याय और सचाई के साथ जीना चाहते हैं तो हमें अपने अन्दर हिंसा का लेश भी नहीं रहने देना चाहिए; क्योंकि आखिर हम दूसरों का शोषण बिना हिंसा का सहारा लिए कर ही कब सकते हैं? जहां कहीं समाज में शोषण विद्यमान है, वहां अवश्य किसी न किसी रूप में हिंसा विद्यमान होगी।

हिन्दुस्तान के देहातों का आज सबसे ज्यादा शोषण हो रहा है। क़स्बों और शहरों के निवासी, चाहे वे राजा-महाराजा हों, चाहे वे रईस-जागीरदार हों, चाहे वे शोषक हों, चाहे वे व्यापारी हों, चाहे वे ज़मीदार हों, और चाहे वे धर्माधिकारी हों, गाँवों के शोषण में लगे हुए हैं। जब तक क्या शारीरिक और क्या मानसिक—अहिंसा हमारे समाज से निर्मूल नहीं हो जाती, तब तक ग्रामों की पुनर्रचना की कोई भी योजना कामयाब नहीं हो सकती। इसलिए एक ओर हमें देहातियों को कस्बों तथा नगरों के निवासियों के द्वारा होने वाले शोषण का अहिंसात्मक रूप से प्रतिरोध करने की शिक्षा देनी होगी और दूसरी ओर हमें कस्बों और नगरों के निवासियों को अहिंसा का विकास करना यानी दूसरे शब्दों में केवल समानता, न्याय और सचाई के उसूलों पर कायम रहकर ज़िन्दा रहना और फ़ूलना-फलना—सिखाना होगा। उसी दशा में कस्बों और नगरों के निवासी देख लेंगे कि उनका किसी भी प्रकार का हिंसा का आश्रय लेने की ज़रूरत नहीं है और यह अच्छी तरह महसूस करेंगे कि शोषण और हिंसा दोनों एक दूसरे के साथ ही रह सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोवियट रूस की विदेशी नीति

ले० — श्री दयाशंकर मिश्र

[जब से युद्ध शुरु हुआ है तभी से लोगों के दिलों में रूस के सम्बन्ध में बहुत सी शङ्काएं पैदा होगई हैं। प्रस्तुत लेख में इन शङ्काओं को दूर करने का प्रयत्न किया गया है। लेकिन यह तस्वीर का एक रुख है । तस्वीर के दूसरे रुख पर प्रकाश डालने वाले लेखों का भी हम स्वागत करेंगे। सं०]

पिछले दिनों जब सोवियट रूस ने प्रजातँत्र ब्रिटेन से पैक्ट न करके एक फैसिस्ट राष्ट्र जर्मनी से सँधि की तो सारे विश्व में एक तहलका मच गया। पोलैंड और फिनलैंड पर रूस द्वारा किये जाने वाले आक्रमण को लेकर उसकी काफ़ी कड़ी आलोचनायें की गई हैं और की जा रही हैं। इस लेख में हमें देखना यही है कि इन आलोचनाओं में तथ्य कितना है? रूस जैसे देश को यह सब क्यों करना पड़ा है?

किसी भी व्यक्ति अथवा देश की निर्धारित नीति को आलोचना का विषय बनाने से पहिले हमें यह देखना चाहिए कि उसके द्वारा किए गये कार्य का उद्देश्य अथवा मन्शा क्या था? उसने वह कार्य किन परिस्थितियों में किया? वह आलोच्य कार्य करने अथवा न करने की दशा में क्या-क्या परिणाम निकल सकते थे? उन परिणामों में श्रेष्ठतम परिणाम क्या हो सकता था? इन सारी चीजों को ध्यान में रख कर ही किसी के लिये हमें पक्ष अथवा विपक्ष में राय कायम करनी चाहिए, न कि साम्राज्यवादी राष्ट्रों के झूठे प्रॉपेगेण्डों के आधार पर। इन सारी कसौटियों पर जब हम रूस और उसकी विदेशी नीति को कसते हैं तो अन्त में हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि उसने जो कुछ किया उसके न करने पर वही ज्यादा घाटे में रहता।

हमें सबसे पहले यह देखना है कि रूस ने ब्रिटेन से सँधि न करके जर्मनी से क्यों की? इस चीज को समझने के लिए हमें ब्रिटेन और उसके साथी साम्राज्यवादी राष्ट्रों की विदेशी पोलिसी और दुनिया में रूस की स्थिति को समझना होगा। रूस अपने देश में एक सामाजिक प्रयोग सिद्ध करने जा रहा है और इसके लिये उसे अपनी सीमा पर शाँति चाहिये ताकि देश बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित रहसके। किंतु उसका यह प्रयोग ब्रिटेन, फ्रांस और अमेरिका आदि साम्राज्यवादी राष्ट्र सफल होते हुये फूटी आंखों देखना भी पसन्द नहीं करते। वे नहीं चाहते कि सोवियट इस प्रकार शाँतिपूर्वक अपने प्रयोग में सफल होकर एक शक्तिशाली राष्ट्र बने जो कि साम्राज्यवाद के लिए राहु सिद्ध हो। यही कारण है कि एक तरफ जापान, अमेरिका और दूसरी तरफ फ्रांस, ब्रिटेन, इटली और जर्मनी आदि साम्राज्यवादी एवं फैसिस्ट राष्ट्र उसे हमेशा गिराने का प्रयत्न करते रहे हैं। उसे हमेशा उपेक्षा की दृष्टि से देखा है। इसका ज्वलन्त उदाहरण है 'म्युनिक पैक्ट'। इस पैक्ट के समय रूस की उपेक्षा करके उसका जो अपमान किया गया तथा रूस को अकेला छोड़ उसके मुक़ाबिले में जर्मनी को अपने पक्ष में करने के लिए निरपराध प्रजातन्त्र जेकोस्लोवाकिया को उसके हाथों सौंप कर जिस प्रकार दुनिया के नक़शे से मिटा दिया गया वह साम्राज्यवादी देशों की पॉलिसी का एक स्पष्ट चित्र था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोलैन्ड के मामले से पहिले ब्रिटेन समझता था कि किसी प्रकार 'ज़हर से ज़हर को ख़त्म कर दिया जाय' यानी जर्मनी से रूस को भिड़ाकर खुद तमाशा देखे और चाहे इसके लिए जेकोस्लोवेकिया जैसे एक-दो देशों की कुर्बानी भी कर देनी पड़े। दूसरी तरफ सोवियट इस अपमान के बाद निराश नहीं हुआ। जेकोस्लोवेकिया के बाद जब हिटलर ने अपना खूनी पञ्जा पोलैन्ड की गर्दन पर जमाना चाहा तो रूस ने पोलैंड की रक्षा के लिये ब्रिटेन और फ्रांस के साथ हाथ मिलाने की कोशिश की क्योंकि पोलैंड की रक्षा उसकी अपनी रक्षा थी। किंतु फिर भी ब्रिटेन अपनी दुरंगी नीति के साथ सोवियट रूस के साथ पेश आया। एक तरफ तो ब्रिटेन की तरफ से पारस्परिक समझौता चाहा जाता है और दूसरी तरफ in-direct और direct आक्रमण के भिन्न-भिन्न अर्थ लगाकर रूस को आक्रमण के समय अकेला छोड़ देने की बात सोचा जाती है। इन परिस्थितियों में ब्रिटेन और फ्रांस की चालों को समझ कर रूस ने पिछली २३ अगस्त को जर्मनी-सोवियट पैक्ट पर हस्ताक्षर कर दिये।

सन्धि के बाद की घटनायें बताती हैं कि सोवियट इस सन्धि द्वारा अपनी सीमा पर शाँति क़ायम रखने में किसी हद तक सफल हो हुआ है और सन्धि करने की अवस्था में जर्मनी दूसरे ही दिन पोलैन्ड को जीतकर रूस की छाती पर बम बर्साता नजर आता और तब इसके लिये रूसको कम कीमत न चुकानी पड़ती। इसके विपरीत यह सन्धि करके जर्मनी का 'पूर्व में बढ़ना' बिलकुल रोक दिया है। इस प्रकार रूस ने इस सन्धि द्वारा वह कर दिखाया है जो ब्रिटेन और फ्राँस से सन्धि करने के बाद खून की नदियां बहाकर भी न कर सकता था।

दूसरा सवाल यह उठाया जाता है कि रूस को पोलैन्ड पर हमला नहीं करना चाहिए था। इसके जवाब में हम यह कह सकते हैं कि रूस ने हमला उस समय किया था जबकि पोलिश सरकार वहां से भाग गई थी। ऐसी दशा में क्या यह रूसकी बुद्धिमत्ता होती कि वह अपने एक करोड़ साथियों को व्हाइट रूस और यूक्रेन प्रांत में तथा गेलेशिया के तैल के कुएँ जो कि १९१९ से पूर्व उसी के थे, हिटलर के हाथों सौंप देता ? सदा के लिये अपनी छाती पर एक जबरदस्त दुश्मन को बिठा लेता ! इसके साथ ही रूस की इस सन्धि का उद्देश्य समझने के लिए हमें यह भी ध्यान रखना

रूस के डिक्टेटर स्टॉलिन

होगा कि रूस ने जर्मनी से पारस्परिक सहायता की शर्त पर समझौता नहीं किया है जैसाकि वह ब्रिटेन तथा फ्रांस से करने जा रहा था। इस प्रकार का पैक्ट जैसाकि उसने जर्मनी से किया है कोई नया पैक्ट नहीं है। सन् १९३३ में रूस ने इटली से नान-एग्रेशन पैक्ट किया और इसी प्रकार उसने पोलैंड जैसे अर्ध-फैसिस्ट देशों से भी पैक्ट किए हैं। इस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम कह सकते हैं कि इस जर्मन-सोवियट पैक्ट से रूस का उद्देश्य ब्रिटेन और फ्रांस की तरह अपना शोषण जारी रखने के लिए अपने उपनिवेशों को, जो कि क्रमशः अपने-अपने देश से १४० व २१ गुना हैं, सुरक्षित रखना न होकर अपने देश की सीमा पर शांति कायम रखना है।

इसी प्रकार फिनलैण्ड का मामला है। गत महा-युद्ध से पूर्व बाल्टिक सागर के सारे तटस्थ राज्यों की भूमि पर सोवियट रूस का आधिपत्य था। किंतु इस युद्ध में उसने उस अपनी भूमि को न मांगकर सिर्फ इतना चाहा था कि जिससे अन्य राष्ट्र वहां आकर अपना आधिपत्य जमाकर भविष्य में रूस की दिक्कतों का कारण न बन जावें। दूसरी तरफ फिनलैण्ड ने दूसरे राष्ट्रों के इशारे पर पोलैन्ड की नीति का अनुसरण किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रूस के डिक्टेटर स्टालिन ने जिन परिस्थितियों में यह निर्णय किए हैं वह किसी प्रकार भी अनुचित एवँ बर्बर नहीं कहे जासकते। बल्कि यूँ कहना चाहिए कि उसने देश को एक भयानक खतरे से निकालते हुये रूस का नाश चाहने वाले साम्राज्यवादी राष्ट्रों से फैसिस्ट जर्मनी को भिड़ाकर तथा पीछे से उसकी पूर्व में बढ़ने की सारी योजनाओं को विफल करके विश्व-राजनीतिज्ञों के दिल पर अपनी बुद्धिमता एवं कूट नीतिज्ञता की अमिट छाप छोड़ दी है।

—००—

काम की बातें

पुराने घी को अच्छा करना—अधिक पुराना हो जाने पर घी में किटाइन आ जाती है जिससे वह खाया नहीं जाता। ऐसे घी में थोड़ीसी नीबू का पत्तियां छोड़कर उसे खौला लेने से घी शुद्ध व स्वादिष्ट हो जाता है। यदि नीबू की पत्तियां न मिल सकें तो घी को कुछ पानी के साथ औटाकर ठण्डा करलें। इस प्रकार घी की बहुत सी खराबियां नीचे पैंदी में बैठ जायँगी और अच्छा घी पानी के ऊपर उतराने लगेगा।

असली शहद की पहचान—पानी के एक प्याले में शहद की बूंद डालो। यदि शहद ज्यों का त्यों पानी में बैठ जावे तो असली, घुल जावे तो नकली।

पत्थर की स्याही—पिच ११ सेर, लैम्पकी कालिख १५ सेर, तारपीन का तेल ३० सेर। इन सब चीजों को आग पर धीरे-धीरे गरम करो और एकदिल हो जाने पर उतार लो, बस स्याही तैयार हो गई। इस रोशनाई से पत्थरों और दिवाल पर लिखे अक्षर वर्षों तक नहीं मिटते।

—१५ मिनट सूरज के निकलने पर और १५ मिनट सूरज के छिपने के वक्त उसकी किरणें खुले शरीर पर डालने से अनेकों रोग दूर हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

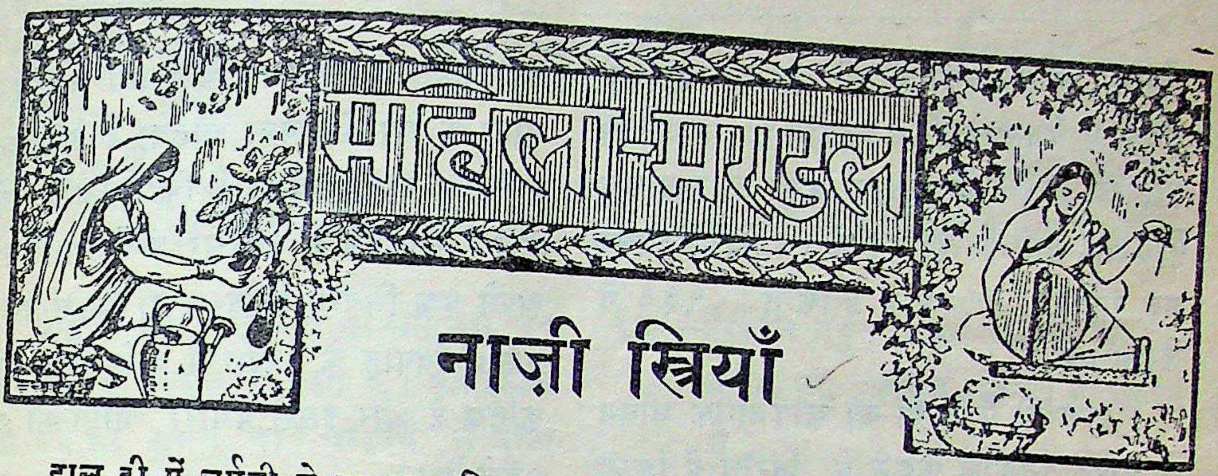

नाज़ी स्त्रियाँ

हाल ही में जर्मनी के परराष्ट्र-सचिव हरवान रिवनट्राप को बर्लिन में, स्त्रियों की एक सभा में बहुत ही बुरी तरह धिक्कारा गया। हरवान रिवनट्राप इन स्त्रियों को उनके कर्त्तव्य के सम्बन्ध में अपना भाषण सुना रहे थे। सभा में इतना अधिक उपद्रव मचा कि पुलिस को बुलाना पड़ा और वक्ता को बड़ी कठिनाई से बचाकर सभास्थल से बाहर भेजा जा सका। एक और ऐसी ही सभा में हरवान रिवनट्राप का उत्तेजित स्त्रियों से सामना पड़ा था। ये स्त्रियां चिल्ला चिल्ला कर कह रहीं थीं—"तुमने हमसे हमारे पतियों को छीन लिया"!

नाज़ी शासनों में चतुर स्त्रियोंकी स्थिति अच्छी नहीं है। उक्त दोनों घटनाओंसे साबित होता है कि वे धीरे धीरे अपनी स्थिति को समझ रही हैं।

नाजी नेता अपने इस मत का खुल्लमखुल्ला प्रचार कर रहे हैं कि स्त्रीका प्रधान कर्तव्य गृहस्थी चलाना है।

यह प्रश्न किये जाने पर, कि हिटलर ने जर्मनी की स्त्रियों के लिए क्या किया है, हिटलर ने उत्तर दिया था—अपनी नई सेना में मैंने तुम्हें सँसार भर में सबसे अच्छे बच्चों के बाप दिये हैं। जर्मनी की स्त्रियों के लिए मैंने जो कुछ किया है वह यही है!"

न्यूरेम्बर्ग कांग्रेस में भाषण करते हुए हिटलर ने स्त्रियों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार देने से इन्कार किया था। उस समय उसने अपने को उनका हितैषी मानते हुए यह सलाह दी थी कि वे अधिक से अधिक बच्चे पैदा करें जो अपने पिता की भांति अच्छे सिपाही बन सकें।

जर्मनी की शिक्षार्थिनी स्त्रियोंका भविष्य कितना अन्धकारमय है यह विश्वविद्यालय के आँकड़ों से अच्छी तरह जाना जा सकता है। इन आँकड़ों को देखने से पता चलता है कि जब कि हिटलर-युग से पहले जर्मनी के विश्वविद्यालयों से १९४०० स्त्रियों ने मैट्रिकु-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेशन परीक्षा पास की थी, १९३५-३९ के जाड़ों में केवल ९७०० स्त्रियोंने ही यह परीक्षा पास की। ५० प्रतिशत को कमी तो स्पष्ट रूप में दिखाई देती है। १९२३ में १४ स्त्रियां कानून पढ़ रही थीं, १९३४ में ४ किन्तु १९३६ में केवल एक ही।

हाल ही में स्त्रियों को सार्वजनिक जीवन से बाहर निकाल फेंकने के विरोध में किसी तरह की आवाज नहीं उठाई गयी। केवल स्कैंडीनेबिया के एक अन्वेषक ने ही यह आलोचना की थी कि "जो देश यहाँ के आधे व्यक्तियों (समस्त स्त्रियों) की शक्ति की उपेक्षा करता है वह पागल नहीं तो क्या है" ?

नाजी शासन में स्त्री केवल विवाह करके गृहस्थ चलाने के काम की रह गयी है। रुडोल्फहेस ने कहा था कि जर्मनी स्त्रियों को माता के रूप में देखना चाहता है और नाजी पार्टी इस बातके विरुद्ध है कि वे किसी पेशे में जायँ। लिपजिग के प्रोफेसर अर्नेस्ट बर्गिमन ने अपने एक निबन्ध में लिखा था कि जीवन भर एक ही विवाह के बन्धन में बन्धे रहना अप्राकृतिक है और इससे हमारी जाति को हानि पहुँचेगी।

कई साल से जर्मनी की स्त्रियों को इसी तरह गुमराह किया जा रहा है किन्तु, जैसा कि उक्त दोनों घटनाओं से प्रकट है, अब वे और अधिक दिनों तक वर्तमान स्थिति में फँसी रहना नहीं चाहतीं और कोई आश्चर्य नहीं कि वर्षों का दबा हुआ असन्तोष किसी समय बारूद की तरह फट पड़े।

('हिन्दी मिलाप')

दोष किसका और दण्ड किसको ?

एक अच्छे शिक्षित व्यक्ति के घर, विवाह के कई वर्ष बाद भी सन्तान न हुई। बेचारी लड़की के पीहर वाले जगह २ इलाज कराते रहे, किंतु सफलता न मिली। आखिर लड़के ने पत्नी को त्याग दिया और दूसरी शादी करवाली। परित्यक्ता पत्नी के सम्बन्धियों ने बड़ी दिलेरी का सबूत दिया, कि लड़के से लिखवाकर लड़की का विवाह किसी दूसरे वर से कर दिया। वर्ष के अन्दर ही उसके घर पुत्र भी उत्पन्न हो गया।

इसी बीच में उसके पहले पति ने दूसरी पत्नि को भी निकाल दिया। अब तीसरी की खोज हो रही है।

(प्रीतलड़ी)

CC-0. In Public Domain, Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यायमूर्ति !

ले०—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी

चन्द्रदेव और चन्द्रशेखर दो सगे भाई थे। दोनों एक ही स्कूल में पढ़ते थे। प्रातःकाल आठ बजे का समय था। चन्द्रदेव से छोटा भाई शेखर पूछने लगा—"हे भाई ! तुमने न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानाडे की जीवनी तो पढ़ी है न ? मैं उनके विषय की कुछ बचपन की बातें जानना चाहता हूँ, कृपया मुझे बता दीजियेगा।"

चन्द्रदेव ने कहा—"पहले यह बताओ कि तुमने रानाडे की किस की लिखी जीवनी पढ़ी है।"

देव ने कहा कि एक राष्ट्रीय विद्वान् की लिखी हुई थी। शेखर ने कहा—"तब तो ठीक ही होगा। अच्छा अब बताओ कि तुम क्या पूछना चाहते हो।" शेखर ने कहा—"उनका जन्म कब और कहाँ हुआ था ?"

देव—नासिक जिले के निफाड़ नामक स्थान में १८ जनवरी १८४२ ई. मङ्गलवार को महादेव गोविंद रानाडे का जन्म हुआ था।

शेखर—क्या रानाडे के माता-पिता धनिक आदमी थे ?

देव—नहीं, न बहुत धनिक थे और न बहुत गरीब ही, मध्यम श्रेणी के आदमी थे।

शेखर—क्या रानाडे के बचपन में कोई विशेष घटना घटी थी ?

देव—हां, जब वे बहुत छोटे थे यानी दो-ढाई साल के, तब अपनी मां के साथ बैलगाड़ी में बैठ कर कोल्हापुर नामक गांव को जा रहे थे, कृष्ण पक्ष की रात थी। माँ रानाडे को गोद में लिए हुये सो रही थी। दुर्भाग्यवश गाड़ी को धक्का लगा और बालक रानाडे नीचे जा गिरे। मां तो गाढ़ी नींद में सो रही थी और गाड़ीवान भी सो गया था। बच्चे के गिरने का किसी को पता नहीं चल सका। लेकिन सौभाग्य वश जब गाड़ी एक मील आगे चली गई थी, तब उसी रास्ते से एक घुड़सवार आया। जब बच्चे ने घोड़े के टाप की आवाज़ सुनी तो तुतली बोली में आवाज़ दी। बालक की आवाज़ सुनकर घुड़सवार ने बालक को उठा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया। वह आगे बढ़ा तो गाड़ी दिखाई दी। घुड़सवार समझा कि इसी गाड़ीका बच्चा होगा, अतः आवाज़ देकर बालक को मां के हवाले कर दिया। यदि वह आदमी न आता तो कोई जङ्गली जानवर खा जाता न? और इस होनहार बच्चे का नाम भी न रह जाता।

शेखर—रानाडे का बचपन कैसे बीता?

देव—रानाडे ने तेरह साल तक की उम्र तो कोल्हापुर में ही बिताई। बचपन में ये बहुत आलसी मालूम पड़ते थे। चञ्चलता तो इनमें कुछ दिखाई ही नहीं पड़ती थी। उस समय उनकी मामी ने कहा था कि रानाडे बहुत सुस्त और अज्ञानी बालक है, मुँहपर मक्खियाँ बैठ जाया करती थीं तो वह उन्हें भी उड़ा नहीं सकता था। इसलिये रानाडे की माँ को बहुत चिंता रहती थी कि यह बालक अपना जीवन कैसे व्यतीत करेगा। रानाडे बालकपन में तुतलाकर भी बोलते थे, साफ नहीं बोल पाते थे। घँटा, खाट और कागज़ का उच्चारण वे धँटा, टाट और टाडज करते थे। उनकी माता ने बहुत परिश्रम करके यह खराबी दूर की और ठीक बोलना सिखाया था। रानाडे के जीवन की यह बड़ी विशेषता थी कि वह असत्य नहीं बोलते थे। उन्हें जो समझा दिया जाता था, वही किया करते थे।

शेखर—रानाडे जी कितनी साल की उम्र में पढ़ने के लिए भेजे गये थे?

देव—लगभग साढे छ साल की उम्र में वे कोल्हापुर की ही एक मराठी पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजे गये थे। उसी स्कूल में इन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त की। फिर वहीं के अँग्रेजी स्कूल में पढ़ने लगे।

शेखर—क्या वे पढ़ने लिखने में भी वैसे ही सुस्त और मन्द-बुद्धि थे?

देव—रानाडे तो विद्यार्थी जीवन में बहुत तेज़ हो गये थे। लेकिन उन्हें घमँड नहीं था। हमेशा अपनी कक्षा में अच्छे नम्बरों से पास होते थे। किंतु अच्छे नम्बरों से पास होने की खबर किसी को नहीं देते थे। पूछने पर कह दिया करते थे कि इस योग्यता से पास होने में कौनसी आश्चर्य की बात है जब कि सालभर मेहनत से पढ़ता हूँ। इसमें मुझे कोई विशेषता मालूम नहीं पड़ता है। जब मैं पाठशाला में प्रतिदिन जाकर पढ़ता हूं तो यदि साल भर के बाद परीक्षा में अच्छे नम्बर आ गये तो क्या बड़ी बात है। अरे भाई देव, रानाडे तो बहुत सीधा-सादा उत्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देते थे। हम लोगों को भी कभी किसी चीज के लिए घमँड और अभिमान नहीं करना चाहिए, यही सबसे बड़ी विशेषता है।

शेखर—यह तो बताओ कि रानाडे की मां ने बचपन में उनकी शिक्षा-दीक्षा के लिए क्या विशेष प्रयत्न किया था कि जिससे वे बड़े होकर इतने विद्वान् बने ?

देव—अरे, जब वे बारह साल के थे तभी उनकी माता तो मर गई थी। अतः उसके बाद उनकी पढ़ाई लिखाई का प्रबन्ध उनके घर वालों ने ही किया।

शेखर—आगे कहां तक और कैसे इन्होंने शिक्षा पाई?

देव—रानाडे चौदह वर्ष की उम्र में पढ़ने के लिये बम्बई एलफिन्सटन इन्स्टीच्यूट नामक विद्यालय में भेज दिये गये। उस समय तक उनकी योग्यता असाधारण हो गई थी अतः उनकी प्रतिभा ने सबको अपनी तरफ खींच लिया था। मेट्रिकुलेशन परीक्षा देने के पहिले ही इनको १०, १५ और २० रुपये तक छात्रवृत्ति स्कूल की तरफ से मिलती रही। १८५९ ई० में इन्होंने सर्वप्रथम रहकर मेट्रिकुलेशन परीक्षा पास की और दो वर्ष बाद एफ०ए० की परीक्षा दी। फिर बी०ए० की परीक्षा सम्मान के सहित पास की और १८६५ में एम० ए० की परीक्षा पास हो गए। इन सभी परीक्षाओं में वे सर्वप्रथम रहे। १८६६ में इन्होंने एल० एल० बी०, की परीक्षा भी सम्मान के सहित पास करली और विश्वविद्यालय की ओर से इन्हें ४०० रुपए की पुस्तकें इनाम में दी गईं।

शेखर—भैया, तब तो रानाडे बहुत मेहनती मालूम पड़ते हैं।

देव—हाँ, वे तीक्ष्ण बुद्धि और साथ ही साथ बहुत परिश्रमी भी थे। अधिक पढ़ते-पढ़ते उनकी आंखें भी खराब हो गई थीं। युवावस्था में स्वास्थ्य की ओर ध्यान न रखने से कठिन परिश्रम ने उनकी आँखों को और भी अधिक खराब कर दिया था। बीच ही में शेखर ने कहा—"भैया, हमको ऐसी मेहनत तो नहीं करनी है जो कि आँख और स्वास्थ्य को ही खराब कर दे। हां, मेहनती तो बनूँगा, परँतु अपने स्वास्थ्य की खबरदारी रखूँगा।"

देवने आगे कहा—यह तो ठीक है। अब आगे की बात सुनो। छात्रावस्था में रानाडे महाशय को तीन वर्ष तक जुनियर फेलोशिप का ६० रुपया और तीन वर्ष तक १२५ रुपया मासिक सीनियर फेलोशिप का वजीफ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलता रहा। इनको इतिहास से बहुत प्रेम था। कभी-कभी गर्मियों में घर न जाकर कालेज में ही रह कर इतिहास का अध्ययन किया करते थे। एक मौलिक निबन्ध लिखने के लिये इन्होंने ३८ हजार सफों की किताबें पढ़ डाली थीं। छात्रावस्था में ही इनका नाम चारों ओर फैलने लगा और कालेज से निकलते ही इनको बड़ी २ जगहें मिलने लगीं। और आगे चल कर एक बहुत बड़े जज बने और न्यायमूर्ति के नाम से विख्यात हो गये। अपने देश के लिये आपने सरकारी आदमियों की कभी चापलूसी नहीं की और मातृभूमि के लिये बहुत कुछ कार्य किया। शेखर, अब तुमको न्याय-मूर्ति रानाडे की पूरी जीवनी पढ़ लेनी चाहिये। तभी तुमको उसके जीवन की सारी बातों की जानकारी होगी। मैंने तो थोड़े में ही इनके बचपन और विद्यार्थी-जीवन की बातें कह दी हैं।

शेषर—अरे भाई, एक बात तो और बता दो, फिर मैं जल्दी ही उनकी जीवनी पढ़ डालूँगा। रानाडे बचपन में अपने नौकरों के साथ कैसा बर्ताव करते थे ?

देव—भाई, तुमने तो अच्छा सवाल पूछा है। रानाडे को जब घर से खाने के लिए मिठाई वगैरह मिलती थी तब वे खुद कम खाते थे, अधिकतर अपने साथियों-को दे दिया करते थे। यह आदत जानकर इनकी मां इनको ज्यादा मिठाइयां दिया करती थीं। कभी किसी को इन्होंने कष्ट नहीं पहुँचाया।

शेषर—क्या इनमें प्रान्तीयता थी ?

देव—जब वे बहुत ऊँचे पद पर काम कर रहे थे तब एक बार वे कलकत्ता गये थे। इनके साथ इनकी धर्मपत्नी भी थीं। एक दिन एक बङ्गाली अखबार बेचने वाला इनके पास आया और कहा 'क्या बाबू जी आपको बङ्गला अखबार चाहिए ?' इनकी पत्नी ने कहा कि हम लोगों को बङ्गला भाषा नहीं आती है। ले जाओ। अखबार बेचने वाला चला गया। उसके बाद रानाडे महाशय ने कहा—"ऐसा कहना ठीक नहीं हुआ। हम लोगों को बङ्गला भाषा जल्दी सीख कर बङ्गला अखबार पढ़ना चाहिए। जहां रहें वहां की भाषा तो आनी ही चाहिये। नहीं तो वहां के लोग हमको अच्छा नहीं कह सकते।" इसके बाद ही रानाडे महाशय ने खूब मेहनत करके बङ्गला सीख ली और सप्ताह के बाद बङ्गला पत्र अच्छी तरह पढ़ने लगे। वे किसी भाषा और प्रांत से घृणा नहीं करते थे। सब को प्यार करते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेखर—भैया, तब तो हम सबको भी सब प्रांतों और सब भाषाओं से प्रेम करना चाहिये न ?

देव—ठीक है तभी हम भारत माता की अच्छी तरह सेवा कर सकते हैं। इसी लिए रानाडे महाशय भारतवर्ष के बहुत बड़े महापुरुष बन सके थे और भारत की बहुत सेवा की, जैसा कि तुमने इनकी बचपन की कहानी से सुना है न ?

चालक-विहीन हवाई जहाज

लेखिका—कु० कमला ब्रह्म

इस लेख के शीर्षक को देखकर बहुतों को आश्चर्य होता होगा। सच मुच यह क्या बात है ! चालक-विहीन हवाई-जहाज चलेगा किस तरह से ? हवाई-जहाज ही क्यों किसी भी जान-विहीन को चलाने के लिए सबसे पहले एक चालक या चलाने वाले की जरूरत पड़ती है। तो भी यह बात सत्य है ! विज्ञान की कृपा से कितनी ही विश्वास न करने योग्य बातें सचाई में परिणत हो रही हैं। यह बात भी एक असाध्य साधन का नमूना है।

हाल ही में "कैलीफोर्निया" के अन्तर्गत "लस एंजेलस" के निकटवर्ती "मडेल एयर पोर्ट" के खुले मैदान में सबसे पहिले चालक-विहीन हवाई जहाज नीचे उतरा। किस तरह से यह असम्भव काम सम्भव हुआ ? सुनिये, बेतार के तार की सहायता से यह काम सँभव हुआ। हवाई जहाज में दो छोटे छोटे रेडिओ-ग्राहक यन्त्र रहते हैं। एक इँजन की चाल (गतिवेग) जानने के लिए, दूसरा हवाई जहाज किस तरह किस ओर जा रहा है—यह बताने के लिए। भूपृष्ठ में भी दो भेजने वाले यँत्र (Transmitter) रहेंगे। उसी भेजने वाले यन्त्र से हवाई-जहाज में 'सिगनल' भेजना पड़ता है। इसी तरह से चालक-विहीन हवाई जहाज की गति और दिशा नियन्त्रित की जाती है। इस नये उपाय के आविष्कारक "न्यायान आर स्मिथ और ग्रीगरी टोवेन" हैं। दोनों ही दक्षिण कैलीफोर्निया के गैस मडेल एयरोप्लेन ऐसोसिएशन के विशिष्ट नेता हैं। न्यूयार्क के जोसेफ रासप्यान्ड नामक एक रेडिओ विशेषज्ञ भी इसी तरह से विमान चलाने की परीक्षा कर रहे हैं। दो मील की दूरी तक यह परीक्षा सफल हुई है। आशा है कि कुछ दिन बाद यह चालक-विहीन विमान पोत देश-देशांतरों को चला जाने में सफल हो जावेगा। आजकल खूब छोटा और हलका हवाई जहाज लेकर परीक्षा की जा रही है। पहिला उद्योग जब सफल हो जावेगा तब इसी उपाय से बड़े बड़े हवाई जहाज भी चलाये जावेंगे।

—००—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय बालक की अभिलाषा

रचयिता आशुकवि श्री रामाधार शुक्ल

सेवा में मुझे लगा ले माँ !
तेरे दूध से पला हुआ हूँ,
तेरी गोद में बड़ा हुआ हूं।
निज आन पर अड़ा हुआ हूँ,
सेवा के सन्देश मुझे अब
आकर शीघ्र सुनादे माँ ॥१॥

तेरे पर मैं खून बहाऊँ,
बलि वेदी पर मर मिट जाऊँ,
रग-रग से तेरे गुण गाऊँ,
तेरा सच्चा भक्त कहाऊँ।
दे कर अहिंसा शस्त्र हाथ में
मुझको वीर बनादे माँ ॥२॥

भ्रातृभाव के स्रोत बहाऊँ,
ऊँच नीच के भाव भगाऊँ।
छुआ छूत के पास न जाऊँ,
अपङ्ग अनाश्रित को अपनाऊँ।
भरके भव्य विचार हृदय में
सदाचार सिखलादे माँ ॥३॥

हिन्दू मुसलिम गले लगाऊँ,
जैन क्रिश्चियन एक कराऊँ।
बन्धु पारसियों का कहलाऊँ,
सदा हृदय से हृदय मिलाऊँ।
हम सब तेरे पुत्र, सभी को
आकर शीघ्र मिलादे माँ ॥४॥

तेरे रङ्ग में जब रङ्ग जाऊँ,
देशप्रेम की लगन लगाऊँ।
तेरे ऋण से मुक्त हो जाऊँ,
सच्चा भारत पूत कहाऊँ।
मरना जीना सदा देश पर,
बस, यह पाठ पढ़ादे माँ ॥५॥

निडर और निर्भय हो जाऊँ,
अपना जीवन सुखद बनाऊँ।
विजय पताका नित फहराऊँ,
रण से कभी न पीठ दिखाऊँ।
देकर यह बरदान "शुक्ल" अब
जीवन सफल बनादे माँ ॥६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुलवाड़ी

सरदी और जुकाम

क्या आपने कभी सोचा है कि जुकाम क्यों होता है ? आप कहेंगे कि ठण्डी हवा में घूमने से जुकाम पैदा होता है। कुछ अँश में यह ठीक है लेकिन पूरे अँश में यह बात ठीक नहीं है। मैं अपने अनुभव से आपको बता सकता हूँ कि मैं कड़े से कड़े जाड़े में खुली हवा में सोता हूं और खुली हवा में घूमने जाता हूँ किन्तु मुझे जुकाम कभी नहीं होता।

सब बीमारियों की जड़ पेट की खराबी है। जब पेट अपना काम बन्द कर देता है और भोजन हजम नहीं होता तभी सब बीमारियाँ पैदा होती हैं। जुकाम भी पेट की खराबी से पैदा होता है। इसलिए पेट का इलाज करना भी बड़ा जरूरी है।

(१) जुकाम से शरीर की भीतरी खराबी बलराम के रूप में बाहर निकलती है, इसलिए उसे निकल जाने दीजिए। कोई दवा खाकर उसे बन्द न कीजिए।

(२) जुकाम का कुछ कारण मौसिम की सर्दी भी है, इसलिए शरीर को गरम रखिए। गरम रखने का मतलब यह नहीं है कि बन्द कमरे में रहिए। गर्म रखने का अर्थ यह है कि गरम कपड़े पहनिए लेकिन खुली हवा में टहलने जरूर जाइए।

(३) जुकाम के दिनों में शरीर को आराम दीजिए।

(४) जुकाम पेट की खराबी से पैदा होता है, इस लिए तीन-चार रोज तक उसको आराम दीजिए। आराम देने का मतलब यह है कि आप उपवास कीजिए।

(५) उपवास के दिनों में हर रोज दिन में ३-४ बार शहद और नीबू का पानी पीजिए। यदि इस प्रकार के उपवास से आपको तकलीफ हो तो तीन-चार रोज तक केवल उबला हुआ दूध पीजिए और फल खाइए। पांचवें रोज हलका अन्न खाइए और छठे रोज अपने मामूली भोजन पर आ जाइए।

यदि अच्छी हालत में आप पन्द्रह रोज में एक उपवास कर लिया करें तो जुकाम क्या, कोई भी बीमारी आपके पास न आ सकेगी और आप हमेशा तन्दुरुस्त रहेंगे। (हल)

क्या हम घटनाचक्र को बदल सकते हैं ?

यदि उक्त विचार (क्या हम घटना चक्र को बदल सकते हैं) ने हमारे मन में जगह करली है तो समझना चाहिए कि हम दुनिया को प्रभावित नहीं कर सकते। ऐसा ख्याल करना तो निराशा का सूचक है। हम दुनिया में काम करने के लिये पैदा हुए हैं। हमें यह यकीन रखना चाहिए कि दुनिया के सञ्चालन के लिये हमारा काम अत्यँत महत्वपूर्ण है। लेकिन हम इस बात से भी इन्कार नहीं कर सकते कि जिस प्रकार हमारी काम करने की शक्ति प्राकृतिक नियमों पर निर्भर है, उसी प्रकार हमारी विचार-धारा भी प्राकृतिक नियमों पर अवलम्बित है। जैसे भरसक प्रयत्न करने पर भी हम कठिन परिश्रम करने के बाद थक जाते हैं, उसी प्रकार मन के थक जाने पर हमारे विचार भी कभी कभी थक जाते हैं। इसीलिये तो मनुष्य का प्रत्येक विचार खुशगवार नहीं होता। हमें मानवता के शत्रुओं के दिमाग से निकले हुए विचारों से सतर्क रहना चाहिए। हो सकता है कि कुछ लोग दूषित प्रभाव के कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानवता की सेवा करना छोड़ दें। यह भी मुमकिन है कि वह हमें भी यह कह कर निराश करने की कोशिश करें कि 'जब हम घटना चक्र को बदल ही नहीं सकते तो फिर यह करो वह करो की रट लगाने से क्या फायदा है।' लेकिन हम जानते हैं कि हम इतने बेकार समझे जाते तो पैदा ही क्यों किये जाते। वह शक्ति जो हमें जिन्दा रखती है खूब जानती है कि हमसे कौनसा अच्छे से अच्छा काम लिया जा सकता है। (वर्ल्ड फैडरेशन)

दुनिया का सबसे बड़ा होटल

न्यूयार्क में एक ४३ मँजिल ऊँचा होटल बना है। यह दुनिया का सबसे बड़ा होटल है। इन ४३ मँजिलों के अलावा ४ मँजिलें जमीन के नीचे भी हैं जिनमें होटल का सारा इन्तजामिया कारोबार रहता है। यहाँ भाप के इञ्जिन काम करते हैं, जिनके द्वारा बिजली तैयार की जाती है। यहीं पर कपड़े धोने की मशीनें, खाना पकाने का सामान और बरतन साफ़ करने वाली कलें हैं।

भाप के इञ्जिनों से बची हुई भाप और गरम हवा छान कर ऊपर भेजी जाती है, जिससे कमरे गरम किये जाते हैं। इस होटल के इञ्जिन इतनी बिजली तैयार करते हैं कि जिसके द्वारा ३५ हजार आदमियों का काम आसानी से चल सकता है। इञ्जिनों से निकली हुई राख को मशीन बाहर खड़ी हुई गाड़ियों में डाल देती है, न कहीं आदमी की जरूरत होती है न कहीं फावड़े आदि की।

धोने के कमरे में भी ४० हजार कपड़े रोजाना धोने का इन्तजाम है। यह कपड़े बिजली द्वारा उस जगह पहुँचते, साफ होते, सुखाये जाते और चले जाते हैं। इसी तरह मशीन ऊँचो से ऊँचा मँजिल के कमरे से खाने की झूठी प्लेटें उठा लाती हैं। सब काम सिर्फ बटन दबाने से ही हो जाते हैं।

होटल हर तरह से मुकम्मिल है। उसे बाहर से किसी मदद की जरूरत नहीं। उसमें ५ हजार आदमी एक साथ आराम से ठहर सकते हैं। उन्हें किसी काम के लिए बाहर जाने की जरूरत नहीं। होटल में ही सिनेमा, बैंक, डाकघर, छापाखाना, हस्पताल और दूसरी सैंकड़ों बातें हैं। बिजली से बहुत काम लिया गया है। बिजली कमरे साफ करती है, खाना लाती है, किवाड़ खोलती है, रोशनी फैलाती और आपकी दूसरी आवश्यकताओं को पूरा करती है। (क्राँति—उर्दू)

ईमान

एक हिन्दुस्तानी भले आदमी जापान गए हुए थे। वह गाड़ी पर एक जगह से दूसरी जगह जा रहे थे। एक स्टेशन पर उन्हें खाने के लिये कुछ लेना पड़ा। एक फेरी वाले को आवाज दी। एक लड़का तत्परता से उनके सामने आया—क्या चाहिये बाबू साहब! बाबू साहब को जो लेना था, उस से ले लिया। क़ीमत देदी। कुछ पैसे उनके लौटाने थे और दुर्भाग्य से लड़के के पास बिक्री के पैसों से उतने पूरे न पड़े। वह लपका गया पैसे लाने को, कि गाड़ी धुंआ उगलती हुई चलदी। बाबू साहब ने एक ठण्डी साँस ली—लेने के देने पड़ गए मगर। अब हो ही क्या सकता था।

गाड़ी अगले स्टेशन पर आ लगी। बाबू साहब ने देखा, गाड़ी के किनारे-किनारे एक लड़का जोर-जोर से पूछता आ रहा है—फेरीवाले के पास पिछले स्टेशन में किन के पैसे रह गए थे? किन के पैसे रह गए थे? वह जब पास आया, तो बाबू साहब ने उस से कह कर पैसे ले लिए और ताज्जुब में आकर पूछा—क्यों भैया तुम्हें कैसे खबर लगी कि किसी के पैसे पिछले स्टेशन पर बाकी रह गए थे? लड़के ने कहा जी उस फेरी वाले ने वहाँ से तार दिया था न।

बाबू साहब को उस बालक की ईमानदारी पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने फिर पूछा—अच्छा, अगर ये पैसे मेरे बदले कोई और ही ले लेता तो।

उसने हँस कर कहा—जी, यहां के लोग ईमान पैसों पर नहीं बेचते।

बाबूसाहब चुप बने रहे। (प्रीत लड़ी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

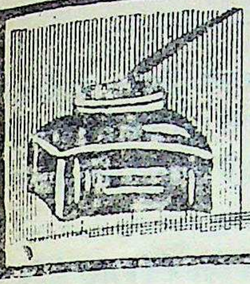

सम्पादकीय नोट

गांवों में चिकित्सा का अभाव—

हिंदुस्तान एक तो यों ही सबसे ग़रीब देश है, किंतु उसके ग्रामीण तो साक्षात् कङ्काली की मूर्ति बने हैं। पूरा व पौष्टिक भोजन न मिलने के कारण उनके शरीर नर कङ्काल बने हैं जिनमें सर्दी-गर्मी आदि ऋतुओं के प्रहार सहने की शक्ति नहीं है। अत: ज्योंही सर्दी या गर्मी ज़ोरों से शुरू हुई कि ग़रीब देहाती धड़ाधड़ बीमार होने लगे। गर्मी में तो नङ्गे रहकर भी ज्यों-त्यों वे दिन गुज़ार लेते हैं किंतु सर्दी में वस्त्रों की कमी के कारण ज़ोर की सर्दी से कमज़ोर शरीर की रक्षा न कर सकने से नमोनिया आदि भयङ्कर बीमारियों के शिकार होते हैं। जिन्हें भोजन वस्त्र की ही तँगी हो उनके पास बीमारी में इलाज करने के लिए पैसे कहां रक्खे हैं? और सरकार तो आरम्भ से ही देहातियों के कार्यों—शिक्षा, स्वास्थ्य-रक्षा, आर्थिक दशा सुधारने, जानमाल की रक्षा आदि, के प्रति उदासीन है ही, किंतु चिकित्सा सम्बन्धी प्रबन्ध के लिए तो नाम मात्र का भी ध्यान नहीं दिया जाता। ५०-५० ग्रामों पीछे १-१ हस्पताल भी नहीं। जहां कहीं है भी वहां दवा, डाक्टर आदि बहुत अधूरे साधन हैं जिन के द्वारा भयङ्कर रोगों का इलाज होना बहुत कठिन है। फिर हमारे सरकारी कर्मचारियों में अपना कर्त्तव्य-पालन करने की भावना नहीं है। उनसे सर्वसाधारण को नाम मात्र भी लाभ नहीं पहुंचता है। गाँवों में प्राइवेट चिकित्सक-वैद्य हकीम भी नहीं हैं। गरीब देहातियों में रहकर उनको अपना गुजारा करना कठिन होता है। इस प्रकार गाँवों में चिकित्सा का कोई प्रबन्ध न होने से देहाती बीमार होने पर उनकी भाषा में कहें तो भाग्य से या राम आसरे ही अच्छे होते हैं। पिछले दिनों गाँवों में भ्रमण करते हुए हमें इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण मिला। बच्चे, बूढ़े, स्त्री-पुरुष अनेकों बीमार देहाती देखे जिनकी बीमारी का क़तई कोई इलाज नहीं हो रहा है। एक मित्र ने कहा कि हमारी मौसी बीमार है। हम ४-५ आदमी उसके पास रात को बैठे थे और विचार कर रहे थे कि रोग का पता तो लगावें। किंतु नब्ज़ देखना कोई भी न जानता था। सब लाचार और मायूस थे। यदि कोई बीमार मामूली काढ़ा-उकाली आदि देने पर भी नहीं बचता है तो ग्रामीण यह कह कर सन्तोष कर लेते हैं कि इसके इतने ही सांस थे। परमात्मा की जब यही मर्जी थी तो आदमी का क्या चारा चलता……आदि। कोई सम्पन्न हुआ तो आख़री दम पर नजदीक के शहर से डाक्टर आदि को लाता है किंतु इस प्रकार ३०-४० रुपये खर्च करने पर भी अक्सर बीमार बचता नहीं। इस प्रकरर गाँवों में लोग बे मौत मरते हैं अर्थात् यदि दवा-दारू का पूरा प्रबन्ध हो तो उनमें अधिकाँश की जानें बचाई जा सकती हैं। जब कभी हमें किसी गांव में जाने का मौका मिलता है तो वहाँ कोई न कोई रोगी मिलता ही है जो बड़ी ही अजिजी से, तृषित आंखों से अपने रोग का इलाज, दवाई आदि पूछता है। इन सब बातों को देखते हुये, गांवों में चिकित्सा के प्रबन्ध की आवश्यकता का अंदाजा लगाया जा सकता है। किसानों के हित की दम भरनेवाली सरकार का सर्वप्रथम कर्त्तव्य है कि वह देहातियों के लिए चिकित्सा का प्रबन्ध करे। अगर सरकार इस ओर ध्यान नहीं देती तो देहात प्रेमी व्यक्तियों को ही इस दिशामें कुछ करना चाहिए ताकि देहातियों को समय पर मैडिकल सहायता मिल सके और वे समय से पहले मौत का शिकार न हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८ मन का हलवा—

हिन्दुस्तान कुरीतियों में इस बुरी तरह जकड़ा हुआ है कि आज बहुत से मनुष्य उनकी हानियों को भली भाँति समझते हुए भी नहीं छोड़ सकते हैं। रूढ़ी चुस्त समाज या जाति-बिरादरी का इतना ज़बरदस्त प्रभाव लोगों पर है कि हृदय से बुरा समझते हुए भी वे इन कुरीतियों को उखाड़ फेंकने की हिम्मत नहीं रखते हैं। आज बिरला ही कोई व्यक्ति नज़र आता है जो कि किसी प्रथा की हानियाँ समझकर बिना जाति बिरादरी के विरोध की परवाह किये अपने दृढ़ निश्चय व आत्मबल से उसे उखाड़ फेंके। पिछले दिनों एक देहाती मित्र के पिता का स्वर्गवास हो गया। मृत्यु के तीसरे दिन २ हज़ार रुपए खर्च करके औसर (मृतक-भोज) किया गया तथा कई हज़ार आदमियों को खांड का हलुवा खिलाया गया। ये मित्र तथा इनके सब भाई नम्र, सरल, सीधे-सादे और मित-व्ययी तथा परिश्रमी हैं। सुधारवादी व्यक्तियों व संस्थाओं से सम्पर्क भी रखते हैं तथा औसर आदि कुप्रथाओं के विरोधी भी हैं किन्तु धर्म-भीरु व जातीय-प्रभाव से जकड़े रहने के कारण उनमें इतना साहस नहीं कि न्यात-बिरादरी के विरोध की परवाह न करते हुए औसर आदि में रुपया बरबाद न करें। बात-चीत के सिलसिले में उस मित्र ने बतलाया कि हम इस काम में पैसा लगाना बुरा तो बहुत समझते हैं किंतु इतनी हिम्मत नहीं होती कि अकेले इस कुप्रथा को तोड़ दें। क्या बतलावें, बिरादरी का ढङ्ग ही ऐसा चला आता है कि इन कुरीतियों में तो चाहे जितना पैसा लग जावे लेकिन जातीय उन्नति के शिक्षा, स्वास्थ्य-रक्षा आदि, अच्छे कामों के लिए कौड़ी नहीं दी जाती। यह पूछने पर कि क्या औसर आदि में आप लोग पुन्यादि के लिए खर्च करते हैं, दूसरे भाई ने बतलाया कि इसमें पुन्य की कौनसी बात है। यह तो बदला है। कोई भूखे-नङ्गे औसर में जीमने थोड़े ही आते हैं। हमारे बराबर वाले भाई ही जीमते हैं जिनके यहां हमने पहले जीमा था तथा आगे भी जीमेंगे। उन्होंने आगे कहा कि हमने अपने गाँव तथा रिश्तेदारों को ही निमन्त्रण दिया था जिनके लिए ७ मन का हलुआ काफी होता। लेकिन दूसरे गांव के बहुत से लोग बिना बुलाए ही खाने आ गये और १८ मन का हलुवा लगा।

इस प्रकार, लोगों का इतना पतन हो गया है कि वे ऐसे मौकों की ताक में रहते हैं और अगर कोई औसर करने में चूँ-चरा करे तो उससे ज़बरदस्ती औसर कराते हैं और बड़ी जली-कटी सुनाते हैं. बिना बुलाए ज़बरदस्ती खाते हैं। इतना ही नहीं. किसी आदमी के मरने पर जब ग़मी मनाने जाते हैं तो बड़े आनन्द से खूब घी खांड खाते हैं। यहाँ तक देखा गया है कि किसी व्यक्ति की मृत्यु होने से एक ओर तो उसके दाह-संस्कार की तैयारी हो रही है तथा दूसरी ओर चावलों के कढ़ाव चढ़ाये जा रहे हैं और ज्योंही लोग दाह-संस्कार करके लौटे कि चावल पक कर तैयार हो गये और सबने खूब डटकर घी-खांड से उन्हें खाया। मनुष्य-हृदय रखने वाला कोई आदमी ऐसे भोजन में शामिल नहीं हो सकता। देशवासी ग़रीबी में पिसे जा रहे हों और दूसरी ओर इस प्रकार हज़ारों रुपये कुछ घँटों में स्वाह कर डालना बरदाश्त नहीं किया जा सकता। अब समय आ गया है कि हम जाति-बिरादरी के विरोध की परवाह न कर इन कुरीतियों को जड़ से उखाड़ फेंके।

खेल में प्रतिस्पर्धा—

बालकों के जीवन में खेल का विशेष महत्त्व है। जिस प्रकार शरीर-रक्षा के लिए भोजन और वस्त्र की ज़रूरत है, उसी प्रकार बालकों के विकास के लिए खेल की ज़रूरत है। खेल में बालकों को बड़ा आनन्द आता है। खेल के समय वह अपनी सब चिंताओं और थकान को भूल जाते हैं। लेकिन खेल में प्रतिस्पर्धा को दाखिल करके हमने खेल को दूषित कर दिया है। शिक्षण-संस्थाओं में होने वाले टूर्नामेंट हमारे इस कथन की पुष्टि करते हैं। टूर्नामेंट के समय जो सिर/फुटव्वल और मनो-मालिन्य होता है वह किसीसे छिपा हुआ नहीं है। एक टीम के खिलाड़ी दूसरी टीम के खिलाड़ियों को किसी न किसी तरह हराना चाहते हैं। खिलाड़ी इसलिए नहीं खेलते कि खेलने से मनुष्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का विकास होता है या शक्ति पैदा होती है या आनन्द की प्राप्ति होती है। वे तो अपनी सारी शक्ति इस बात पर खर्च कर देते हैं कि उनके स्कूल को शील्ड मिल जाय, फिर चाहे खेल का असली मुद्दा पूरा हो या न हो। यह मनोवृत्ति बड़ी ही घातक है। इससे आपस में मेल-मिलाप बढ़ने के बजाय फूट पैदा होती है और असली मकसद हासिल नहीं होता। आधुनिक मनोविज्ञान-वेत्ताओं ने सिद्ध कर दिया है कि प्रतिस्पर्धा, इनाम या सज़ा को शिक्षण-संस्थाओं में कोई स्थान नहीं मिलना चाहिए। मनुष्य काम करने वाला प्राणी है। वह बिना काम के जिंदा ही नहीं नहीं रह सकता। अगर बालक को शुरू से ही ठीक ट्रेनिंग दी गई है तो वह सब काम बिना किसी बाहरी उत्तेजना के खुशी-खुशी करता है। मोंटीसोरी पद्धति पर चलने वाले बाल मन्दिरों में बालक बिना किसी अँकुश या प्रतिस्पर्धा के सब काम चाव-चाव से करते हैं। हमें हाल ही में एक टूर्नामेंट देखने का मौका मिला। कई दिनों तक खेल होते रहे। अँतिम खेल के दिन दो टीमों को लगभग तीन चार घँटे तक लगातार खेलना पड़ा। दोनों टीमें थककर चूर २ हो गईं। हाथों में छाले पड़ गए। लेकिन सामने रखे हुए चांदी के प्याले ने उन्हें मोहित कर रखा था। खिलाड़ी नहीं जानते थे कि ऐसे खेल से किसी प्रकार का लाभ न होकर हानि ही होता है। दोनों टीमों के खिलाड़ी एक दूसरे को भाई या मित्र नहीं बल्कि कट्टर विरोधी समझ रहे थे। जब विश्राम के लिए कुछ समय मिलता था तो दोनों टीमों के खिलाड़ी साथ-साथ नहीं बल्कि अलग-अलग टोलियाँ बना कर बैठते थे। प्रतिस्पर्धा के बल पर काम करने वाला व्यक्ति जीवन में कभी कामयाब नहीं हो सकता। उसे कदम-कदम पर नाकामयाबी का मुँह देखना पड़ता है। अतः यह ज़रूरी है कि हम बालकों में काम के लिए काम करने की ही आदत डालें और प्रतिस्पर्धा के जाल में फँसाकर उनके जीवन को असफल न बनाएँ।

अँग्रेजी का साम्राज्य —

साम्राज्य से दुनिया बुरी तरह उकता गई है। यही कारण है कि आज चारों ओर से इसके खिलाफ जहाद हो रहा है। सदियों से गुलामी की फौलादी जञ्जीरों में जकड़ा हुआ भारत भी साम्राज्यशाही की धज्जियां उड़ाने के लिए छटपटा रहा है। वह इसके लिए भारी से भारी कुर्बानी करने के लिए तैयार दिखाई देता है। लेकिन मज़ा यह है कि जो शिक्षित भारतवासी साम्राज्यशाही का अँत करना चाहते हैं वे अँग्रेजी के साम्राज्य को खत्म बताने के लिए तैयार नहीं हैं। अँग्रेजी से उन्हें इतना मोह हो गया है कि वे इसके बिना जीवित ही नहीं रह सकते। वे बात-बात में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करते और अँग्रेजी न जानने वालों से बात-चीत करते समय भी अँग्रेजी बोलते है। उनका पत्र व्यवहार भी अँग्रेजी में ही होता है। जलसों और कांफ्रेंसों में भी बिना इस बात का ख्याल किए कि सब श्रोता अँग्रेजी समझते भी हैं या नहीं वे अँग्रेजी में ही भाषण झाड़ते हैं। प्रस्ताव आदि भी अँग्रेजी में ही बनते हैं। और तो और हमारी सबसे बड़ी संस्था-काँग्रेस के भी सभी प्रस्ताव पहले अँग्रेजी में ही बनते हैं और बाद में उनका राष्ट्र भाषा में अनुवाद होता है। हमारे बड़े बड़े नेता पुस्तकें भी अँग्रेजी में लिखते हैं। उनके वक्तव्य भी प्रायः अँग्रेजी में ही निकला करते हैं। यह अँग्रेजी के साम्राज्य का ही परिणाम है कि हमारे देश के चोटी के नेता जो अँग्रेज़ी में घण्टों धारा प्रवाह भाषण दे सकते हैं, वे राष्ट्रभाषा में कुछ मिनट ही बोलते हुए अव्वल तो शर्माते हैं, और अगर बोलने भी लगते हैं तो बुरी तरह लड़खड़ाते हैं। व्यवस्थापिका सभाओं, अदालतों और विश्व-विद्यालयों में तो अँग्रेजी का साम्राज्य है ही। इस दिनों दिन बढ़ते हुए अंग्रेजी के साम्राज्य को छिन्न भिन्न करने के लिए महात्माजी ने वर्धा योजना का आविष्कार किया। इस योजना की एक विशेषता यह है कि इसमें अंग्रेजी के लिए कोई स्थान नहीं है। अँग्रेजी के भक्तों को यह बात ज़रा खटकी। इसलिए उन्होंने एक तरकीब निकाल ही ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि प्रारम्भिक शिक्षा को पांच साल तक चलाकर, उसके बाद, इसके दो भाग कर दिए जाएँ। एक में आगे चलकर भी दो-तीन वर्ष तक प्रारम्भिक शिक्षा जारी रहे और दूसरे में अँग्रेजी की पढ़ाई पर अधिक ज़ोर दिया जाए। इससे स्पष्ट हो जाता है कि पढ़े लिखों के दिल में अँग्रेजी कहांतक घर कर गई है। हमारी गुलामी का यह भी एक जबरदस्त कारण है। कितने अफसोस की बात है कि हम अपनी मातृभाषा में सोच ही नहीं सकते। हमें ज़रा-ज़रा सी बात में अँग्रेजी का सहारा लेना पड़ता है। शुक्र है कि हमारा देश अब कुम्भकरणी नींद से जाग रहा है। वह महसूस करने लगा है कि अँग्रेजी का साम्राज्य मिटाए बिना अँग्रेजों की शाहनशाहत से छुटकारा नहीं मिलेगा। ३० अक्टूबर से पूना में हुई 'वर्धा राष्ट्रीय शिक्षा परिषद्' में पास हुआ प्रस्ताव इसी जागृत मनोवृत्ति का परिणाम है। वह प्रस्ताव इतना महत्त्व पूर्ण है कि हम उसे हुबहू पाठकों के सामने उपस्थित करना आवश्यक समझते हैं—'यह परिषद् इस बात को महसूस करता है कि हिंदुस्तान के शिक्षा क्रम में अँग्रेजी की पढ़ाई बहुत जल्दी शुरू करने से देश की सारी पढ़ाई बिगड़ गई है और देश को भारी नुकसान पहुँचा है, और सब विषय देशी भाषाओं में न पढ़ाने से देशी भाषाओं की शिक्षा-शक्ति भी क्षीण हो गई है। अँग्रेजी के जरिए सभी बातें सिखाने से विद्यार्थियों के दिमाग पर बोझ भी बढ़ता है। इसलिए इस परिषद् की सिफारिश है कि सिर्फ बुनियादी तालीम में ही नहीं, बल्कि हिंदुस्तान के तमाम स्कूलों में कहीं भी जब तक लड़के लड़कियों को सात वर्ष की बाकायदा तालीम उनकी अपनी भाषा में नहीं मिल जाती, तब तक अँग्रेजी बिलकुल न पढाई जाए। बेशक जिन थोड़े लोगों की मातृभाषा अँग्रेजी है, उनके लिए यह नियम लागु नहो।' यह प्रस्ताव है जो 'वर्धा शिक्षा परिषद्' ने हाल ही में पास किया है। अगर इस प्रस्ताव पर अमल किया गया तो अवश्य ही हम अँग्रेजी के साम्राज्य से छुटकारा पा सकेंगे और अँग्रेजी के बोझ के नीचे पिसे हुए बालक ठँडी सांस ले सकेंगे। हमारी इन आलोचनाओं से कोई यह नतीजा न निकाले कि हम अँग्रेजी भाषा के खिलाफ हैं। हम अँग्रेजी भाषा के गुणों को खूब जानते हैं। हमें इस भाषा से ज़रा भी द्वेष नहीं है। हम तो केवल अँग्रेजी के साम्राज्य के विरोधी हैं। शुरु से ही बालकों के सिर पर अँग्रेजी का बोझ लादना अत्याचार और अन्याय ही नहीं बल्कि अप्राकृतिक भी है। आज के स्कूलों में अँग्रेजी पढ़ाई के लिए दो-दो, ढाई-ढाई घण्टे दिये जाते हैं जब कि बेचारी राष्ट्रभाषा के लिए मुश्किल से एक घण्टा रो-पीट कर दिया जाता है। फिर भी अच्छी तरह न अँग्रेजी बोलना आता है, न लिखना और न शब्दों का ठीक २ उच्चारण करना ही। अब समय आ गया है कि इस अप्राकृतिक स्थिति के बदलने में कोई कसर उठा न रखी जाय।

आचार्य रामदेव

गुरुकुल कांगड़ी के भूतपूर्व मुख्याधिष्ठाता व आचार्य, इस संसार से चल बसे। आप आर्यसमाज के स्तम्भ थे। आर्यसमाज की जो ठोस सेवा आपने की वह इतिहास में सदा अमर रहेगी। वर्षों से अस्वस्थ रहते हुए भी आपने समाज की सेवा से मुंह नहीं मोड़ा। आप धुन के इतने पक्के थे कि जिस काम को हाथ लगाया उसे पूरा करके ही छोड़ा। वर्तमान शिक्षा पद्धति के आप कट्टर विरोधी थे। इस लिए आपने अपना समस्त जीवन गुरुकुल शिक्षण पद्धति को सफल बनाने में ही बिता दिया और दुनिया को दिखा दिया कि बिना सरकारी सहायता और सरकारी डिगरियों के भी किसी शिक्षण संस्था को सफलता पूर्वक चलाया जा सकता है। आपने अपने लड़कों को कभी स्कूल और कालेज में न भेजकर गुरुकुल में ही शिक्षा दिलाई। आप महज आर्य समाजी ही नहीं बल्कि एक कट्टर राष्ट्रवादी भी थे। रुग्ण होते हुए भी पिछले कांग्रेस के सत्याग्रह युद्ध में कूदकर जेल गये और अपनी अटल राष्ट्रभक्ति का परिचय दिया। आप धुरंधर विद्वान, प्रसिद्ध इतिहासज्ञ, जबरदस्त वक्ता, यशस्वी लेखक, सफल पत्रकार और कुशल शिक्षा-शास्त्री थे। आपके निधन से जो क्षति पहुँची है वह आसानी से पूरी न हो सकेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपक के प्रकाश में—

श्री राधाकृष्ण तोषनीवाल "प्रफुल्ल" द्वारा लिखित तथा श्री राजस्थान हिन्दी उपासना मन्दिर, अजमेर द्वारा प्रकाशित पांच पुस्तकें:—

१. नौकरशाही व महात्मा गांधी—मू० -) पृष्ठ संख्या १२। अँगरेजों की प्राणघातक चालों, कूटनीति और अन्यायों का, वे यहाँ किस प्रकार हकूमत करने लगे आदि बातों का जोशीली भाषा में वर्णन करते हुए, लेखक ने बतलाया है कि महात्मा गांधी ने उनसे बचने के लिये किस युक्ति और अस्त्र को ग्रहण किया है। लेखक की निर्भीकता और साहस सराहनीय है।

२. विश्व अशान्ति यूरोप शान्ति—मू० ।)।, पृष्ठ ८। इस पुस्तक में लेखक ने अगरेजों द्वारा भारतवर्ष की स्वतन्त्रता के अलावा, कलाकौशल व विज्ञान को नष्ट भ्रष्ट करके यहां अशान्ति पैदा करने का वर्णन किया है तथा आगे के लिये देश वासियों को उपयोगी मार्ग सुझाया है।

३. अङ्गरेज हकूमत भारत देश—मू० ≡) पृष्ठ ३४। भारतवर्ष में ब्रिटिश शासकों के आगमन से इसकी स्वाधीनता, व्यापार व कलाकौशल नष्ट होने तथा विदेशियों की कुटिलता से फैले अत्याचार व अनाचार आदि का मार्मिक शब्दों में वर्णन करते हुए लेखक ने देशवासियों को जननी-जन्मभूमि की रक्षार्थ कमर कस कर तैयार होने की जोरदार शब्दों में अपील की है।

४. जगदीश की झाँकी—मू० -)।। प्रस्तुत पुस्तक में ओंकार, प्राणायाम और गायत्री का सुन्दर छन्दों में अर्थ किया गया है। ओंकार भजन रोचक है। सन्ध्या व ईश विनय प्रेमियों एवं आर्य समाजियों के बड़े काम की है।

५. विश्व मंच का खिलाड़ी—मू० १) पृष्ठ १४८। राजनीति, समाजनीति, धर्मनीति सम्बन्धी प्रायः सभी विषयों की पुस्तक में चर्चा है। भाषा सरल व रोचक है, भाव गम्भीर और मार्मिक हैं। इस में नीति धर्म के प्रायः सभी विषयों से पूर्ण ऐतिहासिक वर्णन है। उपदेशकों के लिये विशेष काम की है।

—रामलग्न त्रिपाठी

पं० रघुनाथप्रसाद मिश्र, साहित्य-प्रभाकर, छिपैटी (इटावा) की ४ पुस्तकें—

१. हिन्दू उत्थान की सामग्री मू० १) पृष्ठ सँख्या १२४, २. जहाद मू० ।।) पृष्ठ सँख्या ७०, ३. हिन्दू देवियों का आत्म बलिदान मू० ।) पृष्ठ सँख्या २६, ४. विधर्मियों के हिन्दू बनाने की युक्तियां मू० -) पृष्ठ सँख्या १०।

ये पुस्तकें साम्प्रदायिक दृष्टिकोण को सामने रख के लिखी गई हैं जिनसे भारतवर्ष के दो प्रमुख धर्मों—हिन्दू व इसलाम के अनुयाइयों में मनोमालिन्य व घृणा के भाव अधिक बढ़ेंगे जबकि राष्ट्रीयता के इस युग में देश के सभी सम्प्रदायों को आजादी के लिये सङ्गठित होने की आवश्यकता है। अतः ऐसे विचारों का प्रचार देश की प्रगति में बाधक होगा।

Food-De-Medicine—लेखक व प्रकाशक—डाक्टर एल० एन० रतरा, डेरागाजीखाँ। पृष्ठ सँख्या ८२, मू० १)

आज यह बात किसी से छिपी नहीं है कि हिन्दुस्तान बीमारियों का घर बना हुआ है। इसका मुख्य कारण है हमारा अनियमित और असंतुलित भोजन। प्रस्तुत पुस्तक में अनुभवी लेखक ने यही सिद्ध किया है कि वैज्ञानिक भोजन करने से कोई बीमारी पास तक नहीं फटक सकती और कभी रोग का आक्रमण हो भी जाय तो भोजन में फेर-फार करने से उसपर विजय प्राप्त की जा सकती है। प्राकृतिक चिकित्सा में विश्वास रखने वालों के लिए यह पुस्तक बड़े काम की है और इसमें दी गई सूचनाओं के अनुसार चलने से मनुष्य स्वस्थ रह सकता है। यदि यह पुस्तक हिन्दी में होती तो और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अच्छा होता। लेखक ने ऐसी उपयोगी पुस्तक लिख कर एक भारी कमी को पूरा किया है।

भारतीय स्वाधीनता-सन्देश—लेखक श्री स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, प्रकाशक—सत्यज्ञान-निकेतन, ज्वालापुर (यू० पी०) पृष्ठ सँख्या २६२, मू० १)। श्री स्वामी सत्यदेव की लेखनी में एक चमत्कार है तथा उनकी विचारधारा भी अपने ढङ्ग की अनूठी है। अतः वे जिस विषय पर भी क़लम उठाते हैं उसे ज़ोरदार व प्रभावशाली ढङ्ग से जनता के सामने रखते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में आपने भारतीय स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपायों को अपने ही अनूठे ढङ्ग से प्रकट किया है। पुस्तक में ४२ अध्याय हैं। स्वराज्य सम्बन्धी प्रश्न, राष्ट्रीयता, छुआछूत, धार्मिक सङ्गठन, हिंसा-अहिंसा, अल्पसंख्यकों की समस्या, कांग्रेस, हिन्दू सभा व मुसलिम लीग का फर्क, तथा देश की अन्य राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, साम्प्रदायिक महत्वपूर्ण समस्याओं, सँसार की वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति आदि सभी गम्भीर व आवश्यक विषयों पर खुले दिल से, प्रांजल भाषा में प्रकाश डाला है। संभवतः आपकी विचारधारा पूर्णतः राष्ट्रीय न सिद्ध हो किन्तु पुस्तक में सुझाये गये राष्ट्र-संगठन के साधन देश वासियों में स्फूर्ति पैदा करने के लिए विशेष प्रभावोत्पादक हैं। कागज बढिया व छपाई अच्छी है।

श्री काशीनाथ उदगिर द्वारा लिखित तथा श्री गोपाल गोशाला, सनावद (इन्दौर राज्य) द्वारा प्रकाशित दो पुस्तकें—

१. गौ-वंश-रक्षा—५४ पृष्ट की इस पुस्तक में गोपालन के लाभ, गाय की पहचान, शुभ-अशुभ चिन्ह, दुधारी गाय का भोजन, चारे की उपज, गौ व बच्छें के पालन के उपाय, उसकी अवनति के कारण, दूध का विश्लेषण, गौओं के रोग आदि विभिन्न विषयों पर प्रकाश डाला गया है। गौ पालकों व गोशालाओं के लिये उपयोगी है। ≡) मूल्य व सँस्थाओं को मुफ़ मिलती है।

२. गौ-सेवा—१८ पृष्टों की इस पुस्क में गौरस के सभी रूपों का विश्लेषण तथा गौके मल-मूत्र से लेकर हड्डी-रुधिर तक सभी अँगों की उपयोगिता का वर्णन किया है। मूल्य —)

भूगोल का देशीराज्य-अङ्क—भारतवर्ष में सन् १९३५ के नये एक्ट के अनुसार आयोजित फेडरेशन के कारण देशी राज्यों की समस्या विशेष महत्वपूर्ण हो गई है। गत २ वर्षों से देशी राज्यों में विशेष आन्दोलन हो रहे हैं। ऐसे अवसर पर 'भूगोल' के सुयोग्य सम्पादक तथा व्यवस्थापक श्री प० रामनारायण मिश्र ने यह 'देशी-राज्य अङ्क' प्रस्तुत करके हिन्दी सन्सार को समय की मांग के अनुसार सामग्री भेंट की है। प्रारम्भ में ब्रिटिश-शासनकाल में मौजूदा राज्यों की उत्पत्ति के कारण, उनका क्षेत्र फल, अधिकार, नीति, फौज व्यवस्थादि पर प्रकाश डालकर फिर लगभग सभी प्रमुख राज्यों का आद्योपांत अपटूडेट विवरण दिया है। बाद में अनुक्रमणिका में छोटे राज्यों की भौगोलिक स्थिति, क्षेत्रफल, आबादी, वार्षिक आय आदि का विवरण दिया है। सभी प्रमुख राज्यों के ऐतिहासिक व दर्शनीय स्थानों व इमारतों के चित्र मौजूदा शासकों के चित्र, कवचों के चित्र, आदि भी दिये गये हैं। १९६ पृष्टों के अलावा ४२ पृष्टों की अनुक्रमणिका है। हिंदी में एक ही स्थान पर देशी राज्यों सम्बन्धी इतनी अपटूडेट व विस्तृत सामग्री इतने कम मूल्य में अन्यत्र नहीं मिलेगी। श्री पं० रामनारायण जी मिश्र अपने अथक परिश्रम व अध्यवसाय से प्रतिवर्ष 'भूगोल' के विशेषाङ्क के रूप में जो भेंट करते हैं, वह वास्तव में अलभ्य चीज होती है। यह अङ्क भूगोल के शिक्षक व विद्यार्थियों देशी राज्यों के कार्यकर्त्ताओं के लिये बड़ा ही उपयोगी है। वार्षिक मूल्य ३) तथा इस अंक का २), 'भूगोल' कार्यालय इलाहाबाद से प्राप्त।

—०—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार-चक्र

—हिसार जिले में अकाल पीड़ितों की सहायतार्थ अ० भा० चर्खा संघ की पंजाब शाखा ने खादी का काम शुरू किया और आठ महीने में ४ हजार कत्तिनों और ३०० जुलाहों व पिंजारों को २७०५८ रु० मजदूरी के रूप में दिये।

—हिसार जिले में १९३५ में पशु-सँख्या ६११००० थी। मई १९३९ में वह घटकर १९८००० रह गई, और अब अन्दाजा है कि यह सँख्या १७५००० ही रह गई। इस प्रकार भीषण अकाल के कारण भारतवर्ष में प्रसिद्ध हिसार नस्ल के बढ़िया साँड व गौएँ नष्ट हो गईं।

—नवाब साहब बहावलपुर ने अपनी रियास्त में वाइसराय महोदय के पधारने पर युद्ध के लिए ५ लाख रु० चन्दा दिया।

—हिंदुस्तान में मठों की तादाद ७ लाख २६ हजार है और उनमें होने वाली आमदनी ५१ करोड़ है।

—हिन्दुस्तान के ६० लाख भिखमंगों पर ५२ करोड़ रुपए सालाना खर्च होते हैं।

—भोज्य पदार्थों की कीमतें एक दम अत्यधिक बढ़ जाने से गरीबों में भारी परेशानी हो गई थी तथा दर्जनों स्थानों पर अनाज की दुकानें लुटने के भी समाचार आये थे। अब भावों में स्थिरता आजाने से आम जनता में कुछ शांति हो गई है।

—सेगाँव जैसे छोटे से ग्राम में महात्मा गांधी की झोंपड़ी में सँसार भर के साथ बात-चीत करने के लिए टेलीफोन लग गया है।

—यू० पी० के गवर्नर ने टैनेन्सी बिल को, जिसको लेकर वहाँ भयङ्कर स्थिति पैदा होने वाली थी, स्वीकृति दे दी है।

—रावलपिण्डी में ४ विवाह ऐसे हुए जिनमें दहेजादि कुछ न लिया गया और चारों में कुल २५) खर्च हुए।

—सिन्ध के पीर पगारों ने, अपने लाखों अनुयायियों को निरामिष होने तथा गोहत्या न करने की हिदायत दी है। इस आज्ञा को भङ्ग करने वाले को ५१।) जुर्माना होगा।

—भरतपुर में दीवान व प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ताओं में समझौता हो गया तथा सभी राजनैतिक कैदी छोड़ दिए गये।

—आल इण्डिया रेडियो से प्रति दिन १० भाषाओं में खबरें ब्राडकास्ट होती हैं।

—नागपुर युनिवर्सिटी की फैकल्टी आफ आर्टस ने फैसला किया है कि बी०ए० और बी० एससी० के प्रत्येक पुरुष छात्र के लिए यह अनिवार्य है कि वह गोली चलाना सीखे।

—पोस्टल सेविंग बैंक की १९३८-३९ की रिपोर्ट के अनुसार इस साल लोगों ने ८२ करोड़ रुपया डाकखानों में जमा किया जोकि पिछले ९ सालों के रिकार्ड को भी मात कर गया है।

—पञ्जाब असेम्बली में पंजाब पञ्चायत बिल पास हो गया है।

—शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी के प्रयत्न से लाहौर हाईकोर्ट के रजिस्ट्रार ने प्रांत की सभी आधीन अदालतों को हिदायत भेजी है कि मुकदमे सुनते हुए अफसर लोग अदालतों में तम्बाकू न पीवें।

—बम्बई की एक मिल ने रद्दी रूई से बोरे बनाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रारम्भ किये हैं जो कि जूट के बोरों से सस्ते पड़ते हैं।

—बंगाल असेम्बली में अर्थमन्त्री श्री नलिनीरञ्जन सरकार के युद्ध प्रस्ताव पर तटस्थ रहने के कारण उनपर अविश्वास का प्रस्ताव पेश हुआ तथा उन्होंने असेम्बली से त्यागपत्र दे दिया।

—बम्बई की एक सभा में भाषण करते हुए श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि यदि स्वराज्य सर्व साधारण की दरिद्रता को समाप्त नहीं करता तो वह नर्क में जावे।

—भारत में १६ करोड ९० लाख स्त्रियों की तुलना में १८ करोड़ पुरुष हैं।

—अमृसर में दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में प्रथम अखिल भारतीय हिन्दुस्तान स्काउट मेला हुआ जिस में देश भरके स्काउटस हजारों की संख्या में शामिल हुए। पं० जवाहरलाल नेहरू भी पधारे थे।

—कांग्रेस हाई कमांड ने फैसला किया है कि केन्द्रीय असेम्बली के कांग्रेसी सदस्य असेम्बली में अपनी अनुपस्थिति बराबर जारी रखेंगे।

—दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में हिन्दू महासभा का अधिवेशन वीर सावरकर की अध्यक्षता में कलकत्ता में विशेष उत्साह व सफलता से हुआ।

—बम्बई स्थित पोलैन्ड के दूत की पत्नी ने एक बयान में बतलाया है कि यदि तुरन्त सहायता न दी गई तो पोलैन्ड के १०॥ लाख स्त्रियाँ व बच्चे जो पोलैंड के जर्मन इलाकों में हैं, नष्ट हो जावेगें क्योंकि उनके मकान तबाह हो गये हैं तथा बिना आश्रय, भोजन व वस्त्र के उन्हें बाजारों में निकाल दिया गया है।

—ब्रिटिश पार्लियामैण्ट के लेबर सदस्य तथा प्रसिद्ध नेता सर स्टैफोर्ड क्रिप्स ने दिसम्बर में लगभग २० दिन भारत में भ्रमण कर सभी प्रांतों के राजनैतिक विचारों के नेताओं व वायसराय आदि से भेंट की। आप १९ दिसम्बर को सेगांव में प्रथम बार म० गांधीजी से भी मिले और ९० मिनट तक महत्वपूर्ण बातें की।

—डाक विभाग की १९३८-३९ की रिपोर्ट से पता चलता है कि औसतन प्रतिदिन १२६ चीजें बिना पते के डाली गईं। साल के अंत में हिसाब लगाने पर इन लापता चिट्ठियों और पैकटों में ५॥ लाख रुपये की चीजें निकलीं। डाकविभाग के अधिकारियों ने पता लगा कर इन चीजों को इनके मालिकों के पास भिजवाने का पूरा पूरा प्रयत्न किया।

—१ करोड़ ५० लाख अँग्रेज औरतों ने युद्धकाल में बच्चों की देख भाल का काम अपने ऊपर लेलिया है। फौजी तथा नौसेना में काम करनेवाली औरतों की संख्या ६० हजार है। महिला-शाही-नाविक सेना विभाग में २ हजार स्त्रियां काम करती हैं।

—जर्मनी युद्धकाल में कोलतार से पैराफीन निकाल कर उससे मोमबत्ती बनाएगा।

—फिनलैण्ड द्वारा रूस को मांगा इलाका न देने पर रूस ने फिनलैण्ड पर जबरदस्त हमला कर दिया। दोनों देशों में घमासन लड़ाई हो रही है। शुरु में रूस ने फिनलैण्ड का काफी इलाका जीत लिया था किन्तु अब पुनः फिनलैण्ड के जीता इलाका छीनने व रूसियों की भारी धन-जन की हानि के समाचार आ रहे हैं।

—खबर है कि एक भेंट में युद्ध की निन्दा करने पर हिटलर ने भूतपूर्व कैसरविलियम का ३॥ सौ पौण्ड वार्षिक भत्ता बन्द कर दिया गया है।

—ब्रिटेन से ३ सितम्बर से ३ दिम्बर तक २२॥ करोड़ पौंड की चीजें युद्ध के लिए खरीदी गईं अर्थात २५ लाख पौंड की रोजाना लीं।

—तुर्की में भूकम्प के कारण १५ शहर और ९० गांव धूल में मिलगए और २५ हजार आदमी काम आए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' का लेखक-मण्डल

श्री विश्वप्रेमी राजा महेन्द्रप्रताप, टोकियो (जापान)
,, काका साहेब कालेलकर, वर्धा।
,, आचार्य अभयदेव सन्यासी, गुरुकुल काँगड़ी।
,, दादा धर्माधिकारी वर्धा।
,, राणा जङ्गबहादुरसिंह लाहौर।
,, हरिभाऊ उपाध्याय अजमेर।
,, ला० सुनामराय एम० ए० फाज़िलका।
,, व्रजभूषण मिश्र एम० ए० सञ्चालक-विजयलक्ष्मी हैल्थहोम बनारस।
,, व्रजमोहन मिहिर प्रयाग।
,, गिरिराजजी बी०ए०, गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद
,, हँसराज 'रहबर' बी०ए० ब्रेडला हाल, लाहौर।
,, रामावतार विद्याभास्कर, रतनगढ़ (यू० पी)
,, ठा० देशराज जी, भरतपुर।
,, रमेश वर्मा, आगरा।
,, राम, हिन्दुस्तानी, 'सैनिक' आगरा।
,, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा, जोधपुर।
,, दयाशङ्कर मिश्र, अजमेर।
,, प्रभुदयाल विद्यार्थी, वर्धा।
,, रामनाथ गुप्त, 'प्रताप' कानपुर।
,, मनीराम 'कचन' तालबेहट, झाँसी।
,, डा० रविप्रतापसिंह 'श्रीनेत' छिंदवाड़ा।
,, भगवानदास केला, वृन्दावन।
,, अमरनाथ विद्यालङ्कार, अमृतसर।
,, हँसराज जैन एम० ए० गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद।
,, डा० सुरेन्द्रप्रसाद, जयपुर।
,, रामकुमार स्नातक. जालौर (मारवाड़)
,, भँवरलाल भट्ट 'मधुप' खरगौन (इन्दौर)
,, विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक' मेरठ।
,, रामकृष्ण 'भारती' शास्त्री, लाहौर।
,, विजयेन्द्र स्नातक शास्त्री, वृन्दावन।
,, गौरीशङ्कर 'सत्येन्द्र' एम० ए०, मथुरा।
,, हीरासिंह जी, जींद।
,, आचार्य हरभाई त्रिवेदी, भावनगर।
,, भिक्षुनागार्जुन, चम्पारन (बिहार)
,, कृष्णजसराय बी० ए० विद्याश्रम, देहली।
,, रामाधार शुक्ल, छिंदवाड़ा।
,, शिवशङ्कर पाण्डेय, इटारसी (सी० पी०)
,, कुँवर टीकारामसिंह अँशुमाली बम्हनी, मण्डला (सी० पी०)
,, गिरिजाशङ्कर त्रिपाठी, साहित्यरत्न, रीवां।
,, श्रीराम शर्मा 'प्रेम' गांधी आश्रम, सहारनपुर।
,, महेन्द्रकुमार जैन 'साहित्यरत्न बनारस।
,, सरजूप्रसाद 'प्रेम', बिहार।
,, कुमारी कमला व्रह्म, सारंगढ़।
श्रीमती कृष्णाकुमारी, भरतपुर।

'सबकी बोली'

[राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धासे संचालित मासिक पत्रिका]

सम्पादकः—काका कालेलकर : श्रीमन्नारायण अग्रवाल

हर महीने की १५ तारीख को निकलती है

इस पत्रिका का नियमित प्रकाशन गत चरखा द्वादशी (गाँधी-जयन्ती) से शुरू हो गया है। इसमें आपको राष्ट्रभाषा-प्रचार-आन्दोलन की सभी अत्यंत उपयोगी ताज़ी सामग्री, जैसे—आंदोलन की दिशा के सँकेत, हिंदी-विद्यार्थियों और परीक्षार्थियों के काम की बातें, कहानी सरल कविता, पात्र-चरित्र-चित्रण, परीक्षा प्रश्नपत्रों के सरल उत्तर, महापुरुषों की जीवनियां इत्यादि—पढ़ने को मिलेगी। सभी राष्ट्रभाषा-प्रेमी सज्जन तुरंत वार्षिक चँदा रु० १) भेजकर "सबकी बोली" के ग्राहक जरूर बनें।

व्यवस्थापक
'सबकी बोली' वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REGD. NO. L. 3700

AN OASIS IN A DESERT

The Sahitya Sadan at Abohar is like an oasis in a desert. It has a library containing 10,000 books and a reading room where more than 130 journals are always available. Here the people of the town and neighbouring villages swarm to quench their thirst for knowledge. The building is at once imposing and fine and its charm is heightened by the big beautiful garden surrounding it. Now an addition has deen made to it to accommodate the books belonging to the Travelling Library which has been in existence for several years. The function of the Travelling Library is to carry the torch of knowledge into the interior and illumine the path that will lead the villagers to the goal of progress and prosperity. Besides tne Travelling Library, the Sahitya Sadan has an organ called "Dipak" which deals specially with the multifarious problems of the countryside. It is an exceedingly useful journal. The foundation of the Sahitya Sadan is the self-abnegation and public spiritedness of Swami Keshwa Nand, who is a *Sadhu* in the true sense of the term. He renounced the *gaddi* of his temple at Fazilka and resolved to devote all his time and energy to the promotion of the intellectual and cultural welfare of the people. Gradually he has built up an institution of which not only the little town of Abohar, but the great province of the Punjab may well feel proud. Swami Keshwa Nand has collected and spent more than Rs 70000 over it, but his dream is not yet fully realised. He wants more money for he wants to create something which may be unique in the entire country. He can certainy expand the Sahitya Sadan into the grand thing that he wants it to be But he must have more funds. The Municipal Committee of Abohar gives him a meagre sum of Rs. 25, per month. Let it at least double it. Let the public also help wholeheartedly.

"THE TRIBUNE"

27th August, 1939

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक एवं प्रकाशक — श्री कुलभूषण, 'दीपक प्रेस' साहित्य सदन, अबोहर (पंजाब)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, बिहार, बम्बई, उड़ीसा, कोटा व राजगढ़ राज्य शिक्षाविभाग द्वारा स्कूलों व पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत।

दीपक

फाल्गुण १९९६] साहित्य सदन, अबोहर [मार्च १९४०

सम्पादक— तेगराम

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि देह की शिक्षा के साथ मन की शिक्षा का और देह की सचलता के साथ मन की सचलता का गहरा सम्बन्ध है। दोनों के बीच में अच्छी तरह मेल न होने पर हमारे जीवन का छन्द ही टूट जाता है।

वार्षिक मूल्य २।)
एक अंक का ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' का लेखक मण्डल

श्री विश्वप्रेमी राजा महेन्द्रप्रताप, टोकियो (जापान)
,, काका साहेब कालेलकर, वर्धा।
,, आचार्य अभयदेव सन्यासी, गुरुकुल कांगड़ी।
,, दादा धर्माधिकारी, वर्धा।
,, राणा जङ्गबहादुरसिंह, लाहौर।
,, हरिभाऊ उपाध्याय, अजमेर।
,, ला० सुनामराय एम० ए०, फाजिलका।
,, व्रजभूषण मिश्र, एम०ए०, सँचालक-विजयलक्ष्मी हैल्थहोम बनारस।
,, व्रजमोहन मिहिर, प्रयाग।
,, गिरिराजजी बी०ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद
,, हंसराज 'रहबर' बी०ए०, प्रीतनगर।
,, रामावतार विद्याभास्कर, रतनगढ़ (यू० पी०)
,, ठा० देशराज जी, भरतपुर।
,, रमेश वर्मा, आगरा।
,, राम, हिन्दुस्तानी, 'सैनिक' आगरा।
,, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा जोधपुर।
,, दयाशङ्कर मिश्र, बनस्थली।
,, प्रभुदयाल विद्यार्थी, वर्धा।
,, रामनाथ गुप्त, 'प्रताप' कानपुर।
,, मनीराम कञ्चन' तालबेहट, झांसी।
,, डा० रविप्रतापसिंह श्रीनेत, छिन्दवाड़ा।
,, भगवानदास केला, वृन्दावन।
,, अमरनाथ विद्यालङ्कार, अमृतसर।

श्री हँसराज जैन एम०ए० गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद।
,, शुकदेवनारायण, वर्धा।
,, डा० सुरेन्द्रप्रसाद, जयपुर।
,, रामकुमार स्नातक, वरकाणा (मारवाड़)
,, भँवरलाल भट्ट 'मधुप' खरगौन (इन्दौर)
,, विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक' मेरठ।
,, रामकृष्ण 'भारती' शास्त्री, लाहौर।
,, विजयेन्द्र स्नातक शास्त्री, वृन्दावन।
,, गौरीशङ्कर 'सत्येन्द्र' एम० ए०, मथुरा।
,, हीरासिंह जी, दादरी।
,, आचार्य हरभाई त्रिवेदी, भावनगर।
,, भिक्षु नागार्जुन, चम्पारन (बिहार)
,, कृष्णजसराज बी० ए० विद्याश्रम, देहली।
,, रामाधार शुक्ल छिन्दवाड़ा।
,, शिवशङ्कर पाण्डेय, इटारसी (सी० पी०)
,, कुँवर टीकारामसिंह अंशुमाली बम्हनी, मण्डला (सी० पी०)
,, गिरिजाप्रसाद त्रिपाठी, साहित्यरत्न, रीवा।
,, रामावतार शर्मा, 'बिकल' बनस्थली।
,, महेन्द्रकुमार जैन 'साहित्यरत्न' बनारस।
,, सरजूप्रसाद 'प्रेम' बिहार।
,, कुमारी कमला ब्रह्म, सारङ्गगढ़।
श्रीमती कृष्णकुमारी, भरतपुर।

'सबकी बोली'

[राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धासे संचालित मासिक पत्रिका]

सम्पादकः—काका कालेलकर : श्रीमन्नारायण अग्रवाल

हर महीने की १५ तारीख को निकलती है

इस पत्रिका का नियमित प्रकाशन गत चरखा द्वादशी (गाँधी-जयन्ती) से शुरू हो गया है। इसमें आपको राष्ट्रभाषा प्रचार-आन्दोलन की सभी अत्यंत उपयोगी ताजी सामग्री, जैसे—आंदोलन की दिशा के सँकेत, हिंदी-विद्यार्थियों और परीक्षार्थियों के काम की बातें, कहानी सरल कविता, पात्र-चरित्र-चित्रण, परीक्षा प्रश्नपत्रों के सरल उत्तर, महापुरुषों की जीवनियां इत्यादि—पढ़ने को मिलेगी। सभी राष्ट्रभाषा-प्रेमी सज्जन तुरंत वार्षिक चँदा रु० १) भेजकर "सबकी बोली" के ग्राहक जरूर बनें।

व्यवस्थापक
'सबकी बोली' वर्धा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

{ दीपक—वर्ष ५, संख्या ५, मार्च १९४० ई० }

	विषय	लेखक	पृष्ठ सं०
१	भय ही दुःखों का मूल है। (सङ्कलित)		१
२	कर्म-बन्धन	[श्री ब्रजमोहन मिहिर	२
३	जीवन उद्देश्य	[श्री 'रहबर' बी० ए०	५
४	एक पैसे का घी !	[श्री स्वामी कृष्णानन्द	६
५	बुद्ध-वचन	[श्री 'सुमन' वात्स्यायन	८
६	रोग का इलाज	[श्री [illegible] होम्स	९
७	होली हो ? ली	[श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी	१४
८	भूखा किसान (कविता)	श्री विश्वप्रकाश दीक्षित	१६
९	जाड़े में क्या खायें ?	[डा० सुरेन्द्रप्रसाद	१७
१०	सपने की बात	श्री गोविंद व्यास	१९
११	मास्को की कुछ बातें	(सङ्कलित)	२२
१२	वहां और यहाँ	"	२२
१३	इँग्लैण्ड की राज्य व्यवस्था	(श्री गिरिराज जी बी० ए०	२३
१४	अल्पमत वालों की समस्या	[श्री अमरनाथ विद्यालङ्कार	२६
१५	हमारी होली	[श्री शुकदेवनारायण	२९
१६	राष्ट्रीय महायज्ञ में महिलाओं की आहुतियाँ	[श्री मनीराम कश्चन	३१
१७	विवाह क्या है ?	] श्री 'राहत'	३४
१८	अपना उद्धार अपने हाथ	[म० गांधी	३४
१९	तुअर की दाल	[डा० रविप्रतापसिंह 'श्रीनेत'	३५
२०	लोटा (कविता)	श्री 'विकल'	३७
२१	ईमान (नाटक)	अनु० श्री महादेवलाल बरगाह	३८
२२	बालकों से (कविता)	आशुकवि, रामाधार शुक्ल	४०
२३	फुलवाड़ी—[स्वतन्त्रता प्राप्ति का एक मात्र उपाय: मजबूत और महान् बनो : क्या आपके गांव में ये सब बातें हैं ? ईश्वर कहां है ?		४२
२४	दीपक के प्रकाश में [समालोचना]		४४
२५	सम्पादकीय नोट—[शिक्षा विभाग और हिंदी: दिल्ली रास्ता काट गई : गांधीवाद : परीक्षा का हाल : एक विचित्र विवाह : नये राष्ट्रपति		४५
२६	इलाके की हलचल।		४८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मूल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २।।) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४)।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा। १ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेसे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख डाक खर्च भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं।

८—जिन सज्जनों को किसी मास का 'दीपक' न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछ ताछ करके बाद में हमारे पास लिखना चाहिये।

८—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें और बदले के पत्र, सम्पादक, 'दीपक' साहित्य सदन, अबोहर के पते से और मूल्य तथा प्रबन्ध विषयक पत्र मैनेजर, 'दीपक' के पते से भेजने चाहिएं।

स्तंभ-सूची

१ जीवनन-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्योग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं। सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools in U.P., C.P, Bihar, Bombay, Orissa, Kotah and Rajgarh States.

दीपक

{ हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की सम्पत्ति तथा पञ्जाब में राष्ट्रभाषा का प्रचार करने वाली प्रमुख संस्था—साहित्य सदन, अबोहर का मुख पत्र }

सत्यम् :: शिवम् :: सुन्दरम्

सम्पादक—तेगराम

फाल्गुण १९९६ } वर्ष ५, संख्या ५ पूर्ण संख्या ५३ { मार्च १९४०

भय ही दुःखों का मूल है।

मनुष्य के शरीर तथा मनकी शक्तियों को भय ही निर्बल बनाता है। भय कायरता और निर्बलता को जन्म देने वाला है। भय से मनुष्य काँपने लगता है भयान्वित मनुष्य कभी महान कार्य नहीं कर सकता। मनुष्य जिस वस्तु को भय से दूर रखना चाहता है वह वस्तु उसके सामने आकर खड़ी हो जाती है। इस प्रकार मनुष्य का प्रत्येक वस्तु में भय करने का स्वभाव पड़ गया है। जो मनुष्य दुःख का नाम सुनकर ही भयभीत हो जाता है वह मन के अनेक कष्टों से पीड़ित होता है। मन जैसा नाच नचाता है वैसा नाचता है। दुःखों से छिपकर एकान्त में भागना चाहता है। दुःख उसकी कमर पकड़ कर उसका पीछा करता है। और जो मनुष्य धैर्य और दृढ़ता से उसका सामना करता है दुःख उससे दूर भागता रहता है। जब तक मनुष्य के अन्तःकरण में भय-रूपी शत्रु विद्यमान है, दुःखों का अन्त नहीं हो सकता।

प्रत्येक मनुष्य के हृदय में निरन्तर घोर संग्राम मचा रहता है और मनुष्य दुःखों का अनुभव करता है। मन के पञ्जे से किस प्रकार छुटकारा मिले इसका ज्ञान न होने से रात दिन परतन्त्रता में रह कर अनेक दुःख सहता है। —कल्प वृक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म-बन्धन

ले०—श्री ब्रजमोहन मिहिर

यह एक अटल सिद्ध बात है कि जब तक हम बन्धन में बँधे हैं, इच्छाओं में फँसे हैं, तब तक आनन्द के राज्य में प्रवेश करना, आनन्द स्वरूप बन जाना बहुत ही कठिन है। हमारी वर्तमान दशा इस रहस्य को प्रकट कर रही है कि भूतकाल में हमने कुछ ऐसे कर्म किये हैं जिन्होंने वर्तमान काल में सँस्कार बनकर हमें शुभ और अशुभ बन्धनों में फँसा रक्खा है। इसलिये जब तक हम सब प्रकार के सँस्कारों से मुक्त नहीं हो जाते, हमारे लिए आनन्द में प्रवेश करना असम्भव है। आनन्द-पथ के पथिक के लिए किसी प्रकार का सँस्कार नहीं रह जाना चाहिए।

आनन्द की दशा स्थूल शरीर के पूर्ण विकास की दशा है। ऐसा मालूम होता है कि भूतकाल में हम कुछ असँगत कार्य कर चुके हैं जो कि वर्तमान काल में विपरीत सँस्कार बन कर बाधा पहुँचा रहे हैं। इन्होंने ऐसा प्रतिकूल वातावरण उपस्थित किया है कि उनके भोगे बिना छुटकारा नहीं है। यह गति तो हुई अशुभ सँस्कारों की। इसके अतिरिक्त शुभ सँस्कार भी होते हैं जो कि हमारे लिए अनुकूल बन्धन उत्पन्न करते हैं। हमें तो शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के बन्धनों से छुट्टी लेना है, क्यों कि जञ्जीर चाहे सोने की हो या लोहे की, है तो जञ्जीर ही। सोने की जञ्जीर से भी हम वैसे ही जकड़ जाते हैं जैसे कि लोहे की जञ्जीर से। स्वतन्त्र जीवन के लिए दोनों ही बन्धन हैं। भूतकाल में जो हम कर चुके हैं उसके लिये कोई चारा नहीं है, उसे तो भोगना ही है, लेकिन वर्तमान तो हमारी आखों के सामने है। उसके लिए आँखों पर पट्टी बाँध कर हम क्यों अन्धे बन जायँ। यदि हम आनन्द-पथ के सच्चे पथिक हैं तो हमें चाहिए कि हम उस पट्टी को तुरन्त उतार कर फेंकदें और प्रकाश में आ जायं। वर्तमान काल का कार्य ही भविष्य की ओर ले जाता है, इसलिए वर्तमान कार्य के लिये हमारी आँखें पूरी खुली रहनी चाहिएँ। वर्तमान में हम जो कुछ करें वह ऐसा होना चाहिए कि भविष्य के लिए हमारा सँस्कार न बन जाय। इसलिए प्रत्येक कार्य को हम एक दक्ष प्रतिभावक की भाँति करें। यह सिद्धान्त दूसरे प्रकार से और भी साफ किया जा सकता है कि हम जो कुछ करें, बहुत ही सोच समझ कर करें। किसी कार्य को करने की अपने अन्दर इच्छा ही रक्खें। अर्थात् द्रष्टा की भाँति हम सब कुछ करें और देखें। किसी कार्य का प्रभाव अपने ऊपर न पड़ने दें। कार्य का प्रभाव ही भावुक के लिए बन्धन उत्पन्न करता है। इसलिये यदि हम केवल द्रष्टा मात्र हैं तो कार्य हमारे लिए कोई बन्धन नहीं उत्पन्न कर सकते। हम प्रत्येक उचित कार्य को करें लेकिन उसका कोई सँस्कार हमारे ऊपर न पड़ने पावे। ऐसे कार्यकर्ता कालातीत हो जाते हैं। काल और स्थान उनके लिये बन्धन नहीं रह जाता। कार्य का सँस्कार उस समय बनता है जब हम उसमें अपनी रुचि देखते हैं। ऐसी दक्षता से सब काम किया जा सकता है। तुम्हारा कोई कार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा न होवे जो तुम्हारे लिए बन्धन उत्पन्न करे। आनन्द के राज्य में प्रवेश करने के लिए चौकीदार की तरह सब बातों को देखते रहो, वहाँ पहुँच जाने पर न कोई चौकीदार है और न कोई फाटक है। रुकावट तो अज्ञान द्वारा किये हुए कर्म में है। इस लिए बहुत विचारपूर्वक हमें अपने कार्यों की ओर दृष्टि रखनी चाहिए। हम रोजाना प्रत्येक छोटी-छोटी बात पर गौर करें और उसे समझें। प्रत्येक कार्य में हमारी अन्तर-दृष्टि रहनी चाहिए।

इन बातों पर विचार करते हुए ऐसी कोई बात न करनी चाहिए जिससे भेद-भाव उत्पन्न हो जाय। बल्कि तुम्हारे प्रत्येक कार्य से, विचार से, भाव से, आचरण से यही भासित होवे कि तुम सबों के साथ एक हो। तुम्हारी अन्तर-दृष्टि इसीको देखने और समझने के लिये होनी चाहिये।

आनन्द के राज्य में प्रवेश करने के लिये हमारे पास कुछ होना चाहिए जिसके द्वारा हम उसकी वेदी को अर्चित कर सकें। आनन्द के राज्य में प्रवेश करने के लिए हम प्रतिदिन के कर्मों में अपना चरित्र निर्माण करें। यदि हमारे पास और कुछ नहीं है तो कम से कम चरित्र तो होवेही, जिससे हम उसकी पूजा कर सकें। बहुत से लोग मन्दिर में जाकर देवता को फल-फूल, मिष्ठान आदि का भोग लगाते हैं, सब भाँति उन्हें प्रसन्न करने की कोशिश करते हैं। तुम्हारे पास अपने देवता के लिये सबसे उत्तम वस्तु तुम्हारा चरित्र होना चाहिए। जब तुम इसे अपने देवता की वेदी पर रक्खोगे तो वह खुश हो जायेंगे और तुम्हें आनन्द के राज्य में प्रवेश करने का अधिकारी बना देंगे। वहाँ प्रवेश करने के लिए तुम्हारे पास भी कुछ होना अवश्य चाहिए। जड़ की भांति केवल यह कहने से काम न चलेगा कि हमने सब कुछ दे दिया है। यदि कुछ भेंट के साथ जाओगे तो तुम्हें कोई रोक न सकेगा और तुम वहाँ शीघ्र पहुँच जाओगे। यह बिलकुल जरूरी नहीं है कि वहां पहुँचने के लिए तुम कोई विशेष कौशल दिखलाओ और अपनी बुद्धि की प्रखरता का प्रदर्शन करो। तुम्हारे लिये केवल मात्र आवश्यक है जीवन की सरलता और चरित्र। यह वस्तु तुम्हारी होनी चाहिए जिसे तुमने अपने कष्ट के समय में अनुभव द्वारा प्राप्त किया है। यही तुम्हारा पुष्प, फल और नैवेद्य है। यह तुम ख़याल न करो कि यह कम है या ज्यादा, क्योंकि यह है तो अपनी ही चीज। आज थोड़ा देना यह प्रकट करता है कि कल तुम अधिक दे सकोगे। थोड़ा देना भी बहुत देने का सूचक।

चरित्र का नैवेद्य चढ़ा चुकने के बाद और बाकी ही क्या रह जाता है। भक्ति, पूजा-पाठ सब इसीलिये तो है कि हम चरित्र रूपी अपूर्व निधि को सञ्चित कर सकें। जब यह तुम्हारे पास है और तुम इस अपने आराध्यदेव को समर्पित कर चुके तो समझो कि तुम्हें जो कुछ देना चाहिये था, तुमने वही दिया। इससे अधिक अच्छी वस्तु दूसरा कोई दे ही क्या सकता है। इसको देने में तुम्हारी भी प्रसन्नता है, इसलिए इस में त्याग की भी भावना नहीं आनी चाहिये। जब तुम अपने उपास्य-देव को ऐसी अलभ्य वस्तु प्रदान करोगे तो भला वह प्रसन्न क्यों न हो जायगे। उसे वे सम्मान सहित स्वीकार करेंगे और उसकी रक्षा भी करेंगे। उनके संरक्षण में उसका सौन्दर्य और भी निखर उठेगा।

चरित्र कोई अधूरी वस्तु नहीं है। अगर तुम अभी भटक रहे हो, तुम्हारे अन्दर निश्चयात्मक बुद्धि का उदय नहीं हुआ है, तो अपने प्रतिक्षण के कार्यों पर गौर करके जो उचित हो वही करो। इसमें किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा, इसका कभी ख़याल न करना। पहले अपने अन्दर चरित्र की दृढ़ता उत्पन्न करो। इसे प्राप्त कर लेने पर जो कोई अनुकूल अवसर प्राप्त होवे तो पके फल की भाँति उसका उपभोग करो।

कार्य के समक्ष सदा सजग रहो। जितना तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सजग रहोगे उतना ही जीवन की छोटी और बड़ी घटनाओं के रहस्य को भली प्रकार समझ सकोगे। पूर्ण सजग हो जाने पर कार्य बन्धन न उत्पन्न कर सकेंगे। बन्धन-रहित, पूर्ण स्वतन्त्र जीवन ही इसकी पूर्णता है। ऐसे सजग रहने पर कोई वस्तु तुम्हें दुःख-सुख के चक्कर में न फँसा सकेगी। सब प्रकार के संस्कारों से छुट्टी मिल जाने पर तुम आनन्द के राज्यमें प्रवेश करने के अधिकारी बन जाओगे। यह तुम उसी समय कर सकोगे जब तुम्हारे पास नियन्त्रित और सँयत मन होगा और शरीर के व्यवहारों पर पूर्ण आधिपत्य प्राप्त हो चुकेगा।

ऐसी अवस्था प्राप्त करने के लिए तुम कभी गाफिल मत रहो। प्रतिदिन के छोटे-छोटे कार्यों पर भी अपनी कड़ी निगाह रक्खो। इस ओर खूब ध्यान दो और विचार करो, क्यों कि यह तुम्हारे चरित्र की कमजोरियों को नष्ट कर देगी।

जैसे बाहरी कार्यों पर तुम्हारी निगाह रहती है वैसे ही अन्दर के भावों पर भी ध्यान दो। आँतरिक भावों में भी किसी प्रकार की उछृङ्खलता नहीं होनी चाहिए। भाव अच्छे और गम्भीर हों। उनमें किसी के प्रति राग-द्वेष, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध, विनाशवृत्ति आदि न हो और न किसी वस्तु के प्रति अनुराग ही हो। इनसे रहित होकर निष्पक्ष भाव से अपने भावों और कार्यों पर गौर करो। ऐसा न करने से तो तुम्हारे स्वभाव की ही उसपर छाप रहेगी। किसी बात के लिए अनुचित प्रयास भी न होना चाहिए और न अपनी किसी इच्छा को जबरदस्ती कुचल डालने की चेष्टा करनी चाहिये। यह सब क्रियायें अनिष्टकारी हैं, क्योंकि अज्ञान-युक्त दमन से इच्छा का नाश कभी नहीं होता। विचार और कार्य ज्ञानयुक्त होना चाहिये। इन सब स्वाभाविक प्रक्रियाओं द्वारा शरीर के व्यवहारों पर तुम्हारा पूर्ण अधिकार हो जायगा। ऐसी अवस्था प्राप्त कर लेने पर सुख-दुःख में सम-बुद्धि और भाव रखना आसान हो जायगा। आन्तरिक और बाह्य सौन्दर्य से मन परितृप्त हो जायगा। उसका इधर-उधर भटकना बन्द हो जायगा।

स्वर्ण में आभा उस समय आती है जब वह तप जाने से अपने अन्दर की मलीनता को खो देता है। शरीर-अभ्यास जितना कम होगा उतनी ही अधिक अन्तर-ज्योति जागृत होगी। फिर शरीर का यथोचित व्यवहार अनायास ही होता रहेगा। कार्य के समक्ष तुम केवल द्रष्टा की भांति रहोगे। शरीर से कार्य होते हुए भी अन्दर के भावों में कोई उथल-पुथल न होगी। मन को इस प्रकार नियन्त्रित कर लेने से शरीर से अलग रहने का अभ्यास हो जाता है। इसके पश्चात उसकी कोई पृथक सत्ता नहीं रह जाती।

ऐसी तीव्र लगन और भावना कम लोगों में पाई जाती है। ऐसे थोड़े ही लोग हैं जो जीवन के रहस्य को पूर्णतया समझ लेना चाहते हैं। लेकिन जो समझ लेते हैं और उसके अनुसार कार्य आरम्भ कर देते हैं उनके लिए फिर कोई रुकावट नहीं रह जाती। वे जीवन में सुख-दुःख, कष्ट आदि को देखते हुए, भोगते हुए भी उससे बिलकुल अलग हैं। उस प्राणी द्वारा फिर वही बात होती है जो कि होनी चाहिए। इंद्रिय-सुखों से सदा सचेत रहने पर दुःख का उत्तरोत्तर विनाश होने लगता है और जीवन की परिस्थिति भी अनुकूल हो जाती है।

ऐसी उग्र साधना से सत्य में निवास होता है और प्राणी अनन्त आनन्द में लीन हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-उद्देश्य

ले०—श्री 'रहबर' बी० ए०

सर्दी का जोर घट गया था, दुनिया कुहरे और बर्फ की तकलीफ से छुटकारा पा चुकी थी। जङ्गलों और घाटियों पर फिर नया सौन्दर्य आने लगा था। बाग़ के वृक्षों और पौधों पर नई-नई कोंपलें निकलीं, और कलियां खिलीं।

गुलाब की टहनी पर एक फूल खिला। वह बड़ा सुन्दर और मनोहर था और बसन्त का पहला फूल था।

खेल में मस्त एक बच्चे ने उसे देखा और हँस दिया। उसके निरपराध हृदय ने चुटकी ली, नन्हे-नन्हे होंठ खुले और वह बोला—"प्यारे फूल!"

बच्चा दूसरे दिन फिर आया, और खड़ा-खड़ा फूल को देखता रहा। आज वह कल से अधिक सुन्दर था। उसकी तमाम पँखड़ियाँ खुल गई थीं और वह मुसकरा-मुसकरा कर हवा में सौरभ बखेर रहा था।

फूल की सुन्दरता बच्चे की आंखों में खुब गई। उसकी भीनी-भीनी महक से उसका हृदय भी खिल गया और बालक ने अपनी स्वच्छ, निरमल और निष्कपट हँसी हँसते हुए कहा—"फूल! प्यारे फूल!! अब तुम बहुत ही अच्छे लगते हो। क्या तुम मुझे अपना साथी बनाओगे? मैं तुम्हें हर रोज़ देखने आया करूँगा। मैं कल भी इसी वक्त आऊँगा। क्या तुम यहीं मिलोगे?"

फूल हँसता ही रहा।

बच्चा दूसरे दिन फिर आया। किन्तु गुलाब के पास पहुँचते ही उसका दिल बैठ गया। टहनी खाली थी। फूल मुरझा चुका था, उसकी पँखड़ियां ज़मीन पर बिखरी पड़ी थीं, और इधर-उधर उड़ रही थीं।

"फूल! फूल!! यह क्या? कल खिला और आज इतनी जल्दी मुरझा भी गया। अभी कुछ दिन और बाग़ में रहता। हवा खाता। तितलियों का नाच देखता और कोयल का राग सुनता।"

उसी वक्त हवा का एक तेज झोंका आया। फूल की बिखरी हुई पँखड़ियां एक चक्र में उड़-उड़कर ऊँची उठने लगीं। उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सुन्दर परी का रूप धारण कर लिया जो फूलों से लदी हुई थी। परी बोली —"भोले बालक, तू दुनिया की असलियत से बे-खबर है। मुझे मुस्कान और खुशबू मिली थी। मैं मुस्कराता रहा और खुशबू बांटता रहा। जब मेरी तमाम खुशबू खतम होगई, फिर मेरा जीना व्यर्थ था। जीवन का कुछ-न-कुछ उद्देश्य होता है। उस उद्देश्य को लेकर काम करना ही जीवन है। नाच देखने, राग सुनने और पेट भरने का नाम जीवन नहीं। यह ठीक है कि अपने उद्देश्य में लगे रह कर नाच और राग से प्रसन्न होना और थकान दूर करना बुरी बात नहीं। प्रसन्नता-पूर्वक अपने काम में लगे रहना ही असली जीवन है। निष्क्रिय जीवन तो पृथ्वी पर भार स्वरूप है। ऐसे जीवन से किसी को प्रेम नहीं होता। मेरा खुशबू बाँटने का काम समाप्त हो चुका है। अतः अब मेरी पँखड़ियां बाग़ को खाद का काम देंगी ताकि मेरे दूसरे भाइयों को खुराक मिले और मुझे भी दूसरे बसन्त में नव-जीवन प्राप्त हो। हमारा कर्त्तव्य जीना नहीं 'करना' है। इसीलिये हम सब को अच्छे लगते हैं। ऐ बालक! तुम भी सँसार में खिलना सीखो, काम करते हुए जीना सीखो, जिससे तुम सब को प्यारे लगो।" इतना कहकर फूल की परी ग़ायब हो गई।

एक पैसे का घी !

ले०—श्री स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती, भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी

हमारे आश्रम में एक औषधालय है जहाँ से रोगियों को मुफ़्त दवाई मिलती है और इलाज भी मुफ़्त किया जाता है। एक दिन एक चमारी अपने बालक को इलाज कराने के लिए लाई। वैद्यजी वहां नहीं थे इसलिए वह मेरे पास आकर कहने लगी—"बाबाजी, इस लड़के को सूखे का रोग लगा हुआ है। इसे दवाई देदें।" मैंने उत्तर दिया—"माई, वैद्यजी कहीं बाहर गए हुए हैं, लौटने पर उन से दवा लें।" वह फिर आग्रह-पूर्वक बोली—"बाबाजी, आपही कुछ देदें, मुझे फिर आने का अवकाश कहां है?" मैंने बालक को देखा उसको कोई रोग न था, वह केवल भूख से कमज़ोर हो रहा था। मैंने कहा—"माई, इस बच्चे को कोई रोग नहीं है, इसकी माँ को खाने के लिए दूध-घी मिलना चाहिए जिससे उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्तनों में दूध अधिक उतरे और इस बच्चे को भरपेट दूध मिल सके ।" वह बहुत दुःखी होकर बोली —"बाबाजी, बच्चा तो मेरा ही है, परन्तु घी-दूध कहां से आवे ? गाय भैंस का तो जिकर ही क्या, हम तो बकरी भी नहीं रख सकते ।" मैंने पूछा—"क्यों बकरी रखने में क्या रुकावट है ?" वह बोली—"महाराज, अगर हम बकरी रखते हैं तो ज़मीन का मालिक कहता है कि तुम्हारी बकरी हमारे जङ्गल का पाला चर जाती है । इसलिए गांव में बकरी नहीं रखनी चाहिए।" मैंने फिर पूछा कि इस लड़के के पैदा होने पर तूने कितना घी खाया था ? इस पर वह अत्यन्त दुःखी होकर बोली—"महाराज, घी कैसा ? देवी की ज्योति जलाने के लिए मैंने केवल एक पैसे का घी अग्नि पर डाला था ।" गरीब चमारी की इस व्यथा को सुनकर मुझे अपार दुःख हुआ । लगभग दस वर्ष बीत गए किंतु वह एक पैसे का घी वाली बात और उस बालक की मुर्दा शकल सदैव मुझे याद रहती है, साथ ही अपने बचपन की एक घटना भी मुझे याद आ गई ।

अन्धा धोबी—

जब मैं स्कूल में पढ़ता था तो हमारे बोर्डिङ्ग के पास धोबियों का एक घर था । वहां एक अन्धा धोबी रहता था । वह शरीर से बड़ा पुष्ट था और दिन भर कपड़े धोता रहता था । एक दिन हम दो-तीन लड़के उसके पास गए और उससे पूछा कि बुड्ढे तुम्हारी उमर क्या है ? उसने उत्तर दिया कि मेरी उमर चार बीसी और पांच अर्थात् ८५ वर्ष की है । उसके हृष्टपुष्ट शरीर और पुरुषार्थ को देखकर हम भौंचक्के रह गये । हमारे चित्त में यह कौतूहल उत्पन्न हुआ कि इसके इतनी आयु में इतना शक्तिशाली होने का कारण पूछें ? हमने झट प्रश्न कर दिया "बुड्ढे, क्या तुम बता सकते हो कि इस आयु में तुम्हारे इतने हृष्ट-पुष्ट होने का क्या कारण है ?" उसने उत्तर दिया "बेटा, मैं जब उत्पन्न हुआ था, तब मेरी माँ ने ६ धड़ी घी खाया था ।" बच्चा पैदा होनेपर देशके साधारण घर की जच्चा कहाँ तो पहले तीस सेर घी खाती थीं और कहां आज एक पैसे का घी, वह भी देवी की भेंट चढ़ाने के लिए ? यह घटना तो अब से दस वर्ष पहले की है । न मालूम आज कितनी भयङ्कर स्थिति होगी ? इस दयनीय स्थिति का हम क्या कारण समझें ? क्या यह भगवान की मरजी है या जीवों के अपने कर्म हैं, अथवा गुलामी का अभिशाप ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्ध-वचन

सँग्रहकर्ता—श्री 'सुमन' वात्स्यायन

रोग के समान अग्नि नहीं, द्वेष के समान मल नहीं और शान्ति से बढ़कर दूसरा कोई सुख नहीं।

शरीर से निरोग रहना परम लाभ है; सन्तुष्ट रहना परम धन है; विश्वास सबसे बड़ा बन्धु है और निर्वाण सबसे बड़ा सुख है।

सत्पुरुषों का दर्शन अच्छा है; सत्पुरुषों की सङ्गति सदा सुखकर है और मूर्खों का दर्शन न होना ही सदा सुखकर है। मूर्खों की सङ्गति करने वाला सदा शोक करता रहता है। मूर्खों की सङ्गति शत्रु की सङ्गति की तरह सदा दुःखदायी होती है। धीर पुरुष की सङ्गति, बन्धुओं की सङ्गति की तरह सदा सुखदाई होती है। इसलिए जिस प्रकार चन्द्रमा नक्षत्रमार्ग का अनुगमन करता है उसी प्रकार धीर, प्राज्ञ, बहुश्रुत, उद्योगी, व्रती, आर्य तथा सुबुद्ध सदा सत्पुरुषों की सङ्गति करें।

अपनी काम-वासना को जीत लेना और अहङ्कार तथा आत्मभाव को नाश कर देना ही परम सुख है।

अपने सुख को चाहते हुए जो दूसरों को लाठी से पीटता है वह कभी सुख नहीं पा सकता। ऐसा न करने वाला ही यथार्थ सुख को पाता है।

जो प्रमत्त हैं वे ही बुरे को अच्छे के रूप में; अप्रिय को प्रिय के रूप में तथा दुःख को सुख के रूप में देखते हैं।

पराधीनता में दुःख ही दुःख है और स्वाधीनता में सुख ही सुख।

जिसने काम रूपी कांटे, क्रोध और हिंसावृत्ति को जीत लिया है वह पर्वत की भाँति अडिग रहता है। ऐसे पुरुषों को दुःख कभी नहीं सताते।

जिस पुरुष में छल, अभिमान, लोभ, स्वार्थ, क्रोध और तृष्णा नहीं है वही ब्राह्मण है; वही श्रमण है और वही भिक्षु है।

जिस आदमी में संयम नहीं है, जो मिथ्या सिद्धान्त को मानने वाला है और जो आलस्य से युक्त है वह अवश्य ही काम के वशीभूत हो जाता है।

जिसका चित्त दृढ़ है; जो राग पैदा करने वाले विषयों में मन नहीं लगाता और जो क्रोध करने वाली बातों में क्रोध नहीं करता, उसे दुःख कभी नहीं सताता है।

वचन और काया से किसी को तकलीफ न देना; भोजन में अधिक-कम का हिसाब रखना और चित्त को शिक्षित करना यह बुद्धों के उपदेश हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग का इलाज

ले०—श्री एडमण्ड होम्स

[६]

अगर शिक्षा को अनन्त काल तक निष्फल नहीं रहना है तो बालक को स्वतन्त्रता देने का परीक्षण करना ही होगा, क्योंकि विकास को उत्तेजन और सहायता देने का और कोई तरीका है ही नहीं । बालक को अपना भोजन खुद ही पचाना चाहिए । बालक को खुद ही अपनी इन्द्रियों, अङ्गों और शक्तियों का प्रयोग करना चाहिए। हर किसी अवस्था में बालक का प्रत्येक काम यदि मताग्रही ही करने का प्रयत्न करेगा तो वह अनिवार्य रूप से नाकामयाब होकर रहेगा। इतना होने पर भी अगर इस प्रयत्न को कल्पनातीत कामयाबी समझ लिया जाए तो ऐसी कामयाबी नाकामयाबी से भी अधिक विनाशक होगी।

पर बालक को स्वतन्त्रता देने का केवल यही एक कारण नहीं है। मैं कह चुका हूँ कि शिक्षा विकास-विज्ञान—growth craft की एक शाखा है। लेकिन शिक्षा और विज्ञान की अन्य शाखाओं में एक मौलिक भेद है। किसान, जङ्गल निवासी तथा माली आदि सभी जीवन-प्रवाह को अपनी उपयोगिता की दृष्टि से निश्चित की हुई दिशाओं में ले जाने में लगे हुए हैं। मिसाल के तौरपर जब जङ्गल निवासी साग के वृक्षों (Beech-wood) को इतना पास २ लगाता है कि वे सिवाए एक दिशा के इधर-उधर फैल ही नहीं सकते, तब उसका उद्देश्य बढ़िया से बढ़िया साग के वृक्ष नहीं, बल्कि इमारती लकड़ी के ज्यादा से ज्यादा वृक्ष, पैदा करना होता है। इसके विपरीत अध्यापक को तो विशुद्ध आदर्शवादी होना चाहिए। शिक्षक का काम तो जीवन-प्रवाह को सच्चे मनुष्यत्व की दिशा या दिशाओं में ले जाना है। इसके लिये उसे जानना चाहिए कि सच्चा मनुष्यत्व क्या है, कौनसी मुख्य वृत्तियां हैं और कौनसी गौण, कौनसी प्रधान हैं और कौनसी साधारण, कौनसी स्थायी हैं और कौनसी अस्थायी, कौनसी उच्च हैं कि जिन्हें प्रोत्साहन मिलना चाहिए और कौनसी नीच हैं कि जिनपर नियन्त्रण रखना चाहिए । इस आवश्यक ज्ञान को हासिल करने के लिये उसे बाल-स्वभाव का अवलोकन ऐसी परिस्थितियों में करना चाहिए जो उसके स्वस्थ और व्यवस्थित विकास के लिए अनुकूल हों। शिक्षा की कोई भी पद्धति, जो बाल-अवलोकन पर आधार नहीं रखती, रेत पर बनाये हुए घर के समान है। लेकिन जैसा कि हम देख चुके हैं जब तक शिक्षा मताग्रही है तथा जब तक बालकों की क्रियाएं और चर्याएं उनकी नहीं अध्यापकों की हैं, तब तक बाल-अवलोकन सम्भव नहीं है। इसका मतलब यह हुआ कि बालक की सच्ची रहनुमाई करने के लिए अध्यापक को चाहिए कि सर्व प्रथम वह बालक को स्वतन्त्र करदे। डाक्टर मोंटीसोरी का कहना है कि "उन्नीसवीं सदी के शरीर-विज्ञान-शास्त्रियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने जीवन का अभ्यास करके स्वतन्त्रता का जो विचार हमारे सामने रक्खा है उसी से शिक्षा शास्त्र को प्रेरणा मिलनी चाहिए। प्राचीन शिक्षा-शास्त्र असमर्थ और अस्पष्ट था क्योंकि बालक को शिक्षा देने से पहले उसे अवलोकन करने और स्वतः स्वतन्त्ररूप से अपना विकास करने के सिद्धान्त को उसने नहीं समझा था।" असल बात तो यह है कि बालक ही शिक्षक को अपना ध्येय बता सकता है कि जिसके प्राप्त करने में शिक्षक को उसकी मदद करनी चाहिए।

एक और भी वजह है जिसके कारण बालक को पिञ्जरे से बाहर कर देना चाहिये। यह कारण अन्य कारणों की निस्बत चाहे वज़नदार न हो लेकिन आग्रहपूर्ण तो है ही। देर से पड़ते हुए मताग्रही दबाव के खिलाफ होनेवाली प्रतिक्रिया और घातक असर की बाबत मैं पहले ही कह चुका हूँ। यह हम नहीं कह सकते कि यह प्रतिक्रिया कब शुरू हुई। इसकी उत्पत्ति की खोज के लिए हमें इतिहास की शुरुआत तक जाना होगा। मानवजाति के इतिहास में शायद ही कोई ऐसा अध्याय मिले जिसमें स्वतन्त्रता के लिए जद्दोजहद के विषय में एक या बहुत से पृष्ठ न भरे गये हों। 'स्वतन्त्रता के लिए जद्दोजहद'—इन शब्दों का क्या मतलब है? 'स्वतन्त्रता' शब्द में एक विशेष प्रकार की प्रेरणा और जादू है। कवियों ने स्वतन्त्रता की महिमा गाई है, वीर इसके लिए लड़े और मरे हैं। फिरभी बहुधा मनुष्यों के लिए, जिनमें कवि और वीर भी शामिल हैं, स्वतन्त्रता के लिए जद्दोजहद करने का मतलब जालिम के जुए को उतार फेंकने के प्रयत्न के सिवाए और कुछ नहीं रहा है। लेकिन इन शब्दों का अर्थ तो बहुत गहरा है। स्वतन्त्रता के लिए जद्दोजहद करने का निचोड़ तो मताग्रह के विरुद्ध तथा अपनी रुचि के अनुसार जीने एवं विकास करने का अधिकार हासिल करने के लिए जद्दोजहद करना है। फिर भी यह जद्दोजहद, जैसा कि इतिहास से पता चलता है, मुख्यतः अन्धी और अव्यवस्थित रही है। इस जद्दोजहद का यही नतीजा हुआ है कि लोगों ने बार-बार एक जालिम के बजाए दूसरे जालिम को अपना लिया है। कई बार तो मुक्तिदाता अधिक जालिम हो गया है और स्वतन्त्र हुए लोगों ने अपने अधीनस्थों को स्वतन्त्रता से वञ्चित रक्खा है। ऐसा क्यों हुआ? क्या मताग्रह ने मनुष्य की कोशिशों को विफल बना दिया जो उसने उसके चङ्गुल से छुटकारा पाने के लिए कीं? क्या इसका यह कारण नहीं है कि मनुष्य अपने ऐसे मित्र से मदद लेना भूल गया जो पराजय को विजय में और विजय को अखण्ड विजय में बदलने की शक्ति रखता है? मनुष्य का यह मित्र असहाय बालक है जो कमजोर होते हुए भी बलवान है। अपने लिए बड़े जोर शोर से स्वतन्त्रता की मांग करने वाले मनुष्य को बालक को स्वतन्त्र करने का कभी ख्याल ही नहीं आता। इसका नतीजा यह हुआ है कि हर जमाने में ऐसे लोग पैदा होते रहे हैं और अब भी होते हैं जो कठोर और सङ्कीर्ण हैं, झूठे आदर्श रखते हैं, अनुशासन का पालन नहीं करते तथा स्वतन्त्रता पाने और इसका आनन्द लूटने के लिए बिलकुल अयोग्य हैं। हमारे जमाने में जिस पूर्णता और एक निष्ठा से मताग्रह के खिलाफ जद्दोजहद की जा रही है उसकी मिसाल इतिहास में नहीं मिल सकती। मानव जीवन के प्रत्येक विभाग—धर्म, नीति, शिष्टाचार, घरेलू और सामाजिक आदतें, कला, साहित्य, कविता, सङ्गीत आदि में परम्परा और सत्ता की व्यवस्थित रूप से धज्जियां उड़ाई जा रही हैं। किसी विश्वास, राय, नियम या रिवाज का पुराना होना ही उसकी बदनामी के लिए काफी है। उनकी विद्रोहात्मक टीका से गृहजीवन की गहरी बुनियादें भी खोखली हो गई हैं। अहंवादियों और विषय भोगियों द्वारा एक बड़े पैमाने पर चलाए गए इस प्रकार के संग्राम से समस्त सामाजिक जीवन के खतरे में पड़जाने का भय है। व्यवस्था को कायम रखना मताग्रह की एक खूबी रही है। पर विद्रोहियों के भौतिकवाद, व्यक्तिवाद और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुशासन हीनता के कारण मताग्रह से पैदा हुई प्रतिक्रिया यहां तक बढ़ी है कि स्वतन्त्रता के झण्डे का स्थान स्वच्छन्दता के काले झण्डे ने लेलिया है। और वह जबरदस्त खतरा है कि मताग्रह की विनाशक आज्ञा का स्थान कहीं अराजकता और अव्यवस्था न ले लें। यदि ऐसा हुआ तो और भी भयङ्कर होगा। अगर इस मुसीबत को टालना है तो ऐसे मनुष्य पैदा करने होंगे जो स्वतन्त्रता के लिए अपने आपको योग्य सिद्ध करें। दूसरे शब्दों में मताग्रह के खिलाफ सँग्राम करने के बजाए शिशुगृहों और शालाओं में यह संग्राम शुरू होना चाहिए।

'यूटोपिया' की एजीरिया, रोम की डाक्टर मोंटीसोरी, 'जूनियर रिपब्लिक' के मिस्टर जार्ज और मिस्टर लेन जैसे अग्रगामी यही कह रहे हैं। इन्हें जो अभूतपूर्व सफलता मिली है उसको देखते हुए अन्य अध्यापकों को भी इस छोटे से गिरोह में शामिल होने की हिम्मत हो सकती है। लेकिन उनकी सफलता उस सफलता से भिन्न है जिसकी दुनिया मांग करती और प्रशँसा करती है। जूनियर रिपब्लिक्स में यह देखा गया है कि स्वराज्य Self-government बुरे से बुरे आदमियों को सर्वोत्तम नागरिक बना देती है। यह अनुभव बहुत ही महत्व पूर्ण है। पथभ्रष्ट युवक जब अपनी प्रचण्ड शक्ति से मताग्रही शिक्षा के घातक दबाव का मुकाबला करता है और देखता है कि सब उचित मार्ग उसके लिए बन्द हैं तब उसकी सारी शक्ति कानून भङ्ग और अपराध करने की ओर लग जाती है। स्वतन्त्रता के राज्य में वही जीवन धारा स्वतः पूरे जोर के साथ नियम, व्यवस्था और सदाचार की ओर बहने लगती है। कम सामर्थ्यवान को स्वतन्त्रता कुछ देर से आती है। लेकिन अपराधी युवक ने तो अपनी अपराध पूर्ण क्रियाओं द्वारा जीवन स्रोत के साथ अपना सम्बन्ध कायम रखा है। वर्तमान शासन में शक्ति और योग्यता के बर्बाद होने का इससे अधिक और क्या सबूत दिया जा सकता है? मताग्रह सबसे अच्छी चीज को सबसे खराब कर देता है। इन दो बातों में से शिक्षक को एक का चुनाव करना है।

शिक्षक कौन से मार्ग पर चलेगा? क्या शिक्षक मनुष्य स्वभाव के नाम पर युवक पर झूठा मनुष्यत्व थोपकर सच्चे मनुष्यत्व का उपहास करता रहेगा? अथवा वह युवक के सच्चे मनुष्यत्व के विकास के लिए उसकी मदद करेगा? प्रथम मार्ग ग्रहण करने के लिए शिक्षक पर असह्य दबाव डाला जाएगा। अगर उसने दूसरा मार्ग स्वीकार किया, जो उसके लिए त्याग और बालक के लिए मुक्ति और विकास का मार्ग है, तो उसको पता लगेगा कि उसने अति कठिन काम अपने सिर पर ले लिया है।

प्रारम्भ में ही उसको पता लगेगा कि वह विचार के नहीं बल्कि आचार के कुचक्र में फँस गया है। ऐसा एक चक्र है: "प्रौढ़ मनुष्य का अहँ उसे मताग्रही बनाता है, और बालक के साथ किया गया मताग्रही व्यवहार बालक को अहँ वादी बनाता है जिसके फल स्वरूप उसकी बारी आनेपर वह दूसरों पर अपना मत लादता है और झूठी शिक्षा देता है।" ऐसा दूसरा चक्र है: "शिक्षा का सुधार करने से पहले हमें समाज का सुधार करना चाहिए, और अगर हमें समाज का सुधार करना है तो पहले हमें शिक्षा का सुधार करना चाहिए।" तीसरा चक्र है: "अगर हम बालक को स्वतन्त्र वातावरण में शिक्षित करना चाहते हैं तो हमें यह जानना चाहिए कि उसके स्वभाव की मुख्य वृत्तियाँ क्या हैं। मुख्य वृत्तियाँ जानने के लिये बालक को स्वतन्त्र वातावरण में शिक्षा देनी चाहिए।" ऐसे और इसी प्रकार के अन्य कुचक्रों से छुटकारा पाने के लिये शिक्षक अगर निराश हो जाए तो वह क्षम्य है। लेकिन कोई भी चक्र, चाहे दिखने में कितना ही पूर्ण क्यों न हो, ऐसा नहीं है जिसे कल्पना, बुद्धि और धैर्य की मदद से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तोड़ा न जा सके। अगर ऐसी प्रतिभा पैदा नहीं की जा सकती, तो यह कहना विरोधाभास न होगा कि जिन गुणों से प्रतिभा पैदा होती है उन गुणों को पैदा किया जा सकता है। अलबत्ता शिक्षक को बहुत कुछ भूलना होगा और बहुत कुछ सीखना होगा। योग्य सहायता और पथ प्रदर्शन का मिलना भी उसके लिए आसान न होगा। उसे वे बातें करनी होंगी जिनके लिए किसी भी शिक्षा विज्ञान की पुस्तक में हिदायतें नहीं दी गई हैं। उन में से कुछ बातें नीचे दी जाती हैं। उसे यथा सम्भव अपने आपको मिटाना होगा। उसे यह महसूस करना होगा कि शालाजीवन के नाटक में उसे नहीं बल्कि बालक को मुख्य भाग अदा करना है। बालक की प्रारम्भिक निर्बलताओं और खामियों के बावजूद उसे बालक में अटूट विश्वास रखना होगा। उसे यह यकीन रखना होगा कि बालक की उच्च वृत्तियों को विकसित होने दिया जायगा तो वे नीच वृत्तियों पर धीरे धीरे काबू पाकर उन पर अपना प्रभुत्व जमा लेंगी। व्यवस्था का दिखावा करने के बदले वास्तविकता को कायम रखने के लिए बालक को जितनी स्वतन्त्रता चाहिए उतनी स्वतन्त्रता देनी होगी। ड्रिल के अनुशासन के घातक दबाव से छुटकारा दिला कर आत्म-संयम के अनुशासन को मानने में उसकी मदद करनी होगी। बालक की स्वस्थ प्रवृत्तियों के लिए साधन जुटाने होंगे और इस बात का ख्याल रखना होगा कि इन प्रवृत्तियों को किसी पहले से ही बने बनाये रास्ते की ओर न ले जा कर, जहाँ तक मुमकिन हो इन्हें खुद ही अपना रास्ता बनाने का अवसर दिया जाए। बालक के हाथ में ऐसी चीजें देनी होंगी जो मानसिक व आध्यात्मिक भोजन का काम दें और साथ ही साथ उसे अपनी मानसिक व आध्यात्मिक शक्तियों के प्रयोग के लिए मौका मिल जाए। उसकी विकसित होने वाली प्रकृति तथा स्वाभाविक वृत्तियों के सहानुभूति पूर्ण अवलोकन के परिणाम को दृष्टि में रखते हुए उसका मार्ग दर्शन करना होगा और इस बात का ध्यान रखना होगा कि यह मार्ग-दर्शन उसकी पसन्दगी में बाधक न हो। कोई ऐसा काम जो बालक खुद कर सकता है, उसे शिक्षक उसके लिए न करेगा। उसे जब तब बालक के नुक्सों को खोजने की आदत को छोड़ना होगा। ऐसा करने से बालक की स्फूरण-शक्ति Initiative—पङ्गू हो जाती है और उसके अन्दर आत्म-विश्वास नहीं रहता। थोड़े समय टिकने वाले और धोका देने वाले परिणाम पैदा करने के बजाए बालक को अपने कामों को अच्छी तरह करने और कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने के लिए सोचने में उसकी मदद करनी होगी। आत्म-वञ्चना, दम्भ, छल-कपट से दूर रख कर उसकी स्वाभाविक सरलता को पुष्ट करना होगा। उसको आगे बढाने के लिए उसके व्यक्तित्व का अवलोकन करना होगा और ऐसी व्यवस्था करनी होगी कि प्रकृति ने जो सर्वोत्तम तरीका उसके लिए निश्चित किया है उसी के अनुसार वह अपने व्यक्तित्व से ऊंचा उठ सके। उसके सर्वतोमुखी और इसलिए स्वस्थ और व्यवस्थित विकास के लिए उसकी स्वाभाविक वृत्तियों के विकास में उसकी मदद करनी होगी। उसको बाह्य इनाम और सजा के झूठे और पतनकारी उत्तेजन से बचाना होगा ताकि वह यह महसूस करे कि स्वस्थ विकास ही सच्चा इनाम है। मिथ्याभिमान और स्वार्थ को जन्म देने वाली प्रतिद्वद्वता को दबा कर बालक की सामाजिक, भ्रातृत्व, और उसके अन्दर छिपी हुई प्रेम और सहानुभूति की भावना का पोषण करना होगा।

मैं आसानी से इस सूची को और भी लम्बी बना सकता था, लेकिन मैं ख्याल करता हूँ कि मैंने इसे काफी लम्बा बना दिया है। मेरा अभिप्राय तो शिक्षक के सामने सिद्धान्त या कोई लम्बी चौड़ी पद्धति नहीं बल्कि एक विचार उपस्थित करना है। अगर उसे यह विचार किसी भी तरह पसन्द हो तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ही ढङ्ग से उसे इसका अर्थ लगाना चाहिए। अगर मैं ही शिक्षक के लिए यह काम करदूँ तो मैं अपने पहले बताए हुए सिद्धान्तों के प्रति भूठा सिद्ध हूँगा। अगर इस विचार की कीमत आंकनी हो तो शिक्षक को खुद ही ऐसा करना चाहिए।

शिक्षक शायद मुझ से यह कहे कि मैं उसके सामने एक ऐसा ध्येय रख रहा हूँ जो प्राप्त नहीं किया जा सकता। मैं जानता हूँ कि मैं ऐसा कर रहा हूं। अगर बालक के स्कूल जीवन में इस आदर्श की प्राप्ति हो सकती हो तो ऐसा आदर्श अध्यापक के लिए कुछ अर्थ न रखेगा। बालक के आदर्श विकास के लिए कितने वर्ष, युग या जीवन लगेंगे इस फेर में पड़ने की अब कोई बात नहीं है। अस्वाभाविक व्यक्तित्व बीस, तीस या चालीस वर्ष में विकसित होता है और फिर वृद्ध और शक्ति हीन हो जाता है। किन्तु वास्तविक व्यक्तित्व अगर अप्राप्य आदर्श है तो यह उस आत्मा को जो इसे प्राप्त करने का प्रयत्न करती है, सदा जवान रखेगा। शिक्षा जीवन की शुभ शुरुआत करने में मदद दे सकती है। प्लेटो के कथनानुसार शुभ शुरुआत अन्तिम पूर्णता की ओर ले जाने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण वस्तु है।

हम आज कल प्रजनन शास्त्र की बाबत बहुत कुछ सुनते हैं और मेरा यकीन है कि मनुष्यों की नसल सुधारने के लिये एक सोसायटी भी बन गई है। उस सोसायटी के सदस्य कुशलतापूर्ण पालन पोषण करने से ही अपना मकसद हासिल करना चाहते हैं, तो मैं नहीं समझता कि वे बहुत आगे जा सकेंगे। लेकिन अगर वे कुशलतापूर्ण विकास से अपने ध्येय की प्राप्ति करना चाहेंगे तो उन्हें पता चलेगा कि उनके लिये उपयोगी कार्य करने को एक असिमित क्षेत्र पड़ा हुआ है। हम गेहूँ, जौ, भेड़ और बैलों के अच्छे उत्पादक होने पर भी मनुष्यों के खराब उत्पादक हैं।

मैं समझता हूँ कि कुशलतापूर्ण विकास के द्वारा आदमियों की नसल सुधार कर हम बहुत सी महत्त्वपूर्ण समस्याओं को हल कर सकेंगे। सचमुच, मैं कभी-कभी सोचा करता हूँ कि जीवन की बड़ी-बड़ी समस्याएँ शिशुगृह और शाला में ही हल होंगी। इन समस्याओं को हल करने के लिये अगर हम तब तक प्रतीक्षा करें जब तक कि बालक बड़ा होकर परिपक्व न हो जायगा तो कहना पड़ेगा कि हमने आवश्यकता से अधिक प्रतीक्षा की है। कुछ भी हो, शिशु-गृहों और शालाओं में एक ऐसा हल निकालना होगा कि जिससे प्रौढ़ मानव जगत् के सभी सवालों का जवाब मिल जाय। जब मैं ऐसे सुझाव पेश करता हूं तब शिक्षक के कार्य की सीमा अनिश्चित रूप से पीछे चली जाती है। शिक्षक बजा तौर पर हैरान हो सकता है कि उसकी जिम्मेदारियां कब और कहां पर खत्म होंगी। लेकिन मैं अपनी तरफ से कोई ऐसी बात नहीं करूंगा कि जिससे वह अपने उच्च पेशे की कम कीमत आंकने लगे। कारण, मैं जानता हूँ कि आगे बढ़ने की अगर उसमें स्पिरिट है तो अपने कार्यक्षेत्र की विशालता से हतोत्साह होने के बजाय वह उल्टा उत्साहित ही होगा। —समाप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होली हो ? ली

ले०—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी, वर्धा

आज कल प्रातः काल घूमने निकल पड़ता हूँ तो कुछ दूर पर आम के पेड़ बौर से लदे हुये दिखाई पड़ते हैं, खुशबू से मन मस्त हो जाता है। उनकी धनराशि वही बौर है। अपनी उस धनराशि और मद से हम लोगों को कितना प्रफुल्लित कर देते हैं वे। मुर्झाया हुआ हृदय भी उनके निकट पहुँचने पर सजीव हो जाता है। हृदयहीन मनुष्य भी वहां पहुँचने पर सहृदय हो जाता है।

एक वह आम का पेड़ है, देखिये कितनी सहृदयता धारण किए हुये शांत, चुपचाप खड़ा हुआ है। अपने तने के नीचे ऊँच-नीच, चोर-शाह, साधू सन्यासी और चँडाल तक को समान शीतलता और सुगन्ध दे रहा है। जब उसकी डालों में आम पककर तैयार हो जायँगे, तब अपने मीठे फलों से सभी कौम के प्राणी पशु-पक्षियों तक को रस चखा कर कितना सुखी कर देगा। उस के दरबार में कोई भेद-भाव नहीं। पूञ्जीपतियों की तरह वह स्वार्थी नहीं। अपने धन और तन से हमारे लिए क्या नहीं कर सकता है? जरा सोचिये तो उसकी लकड़ियों से हमारा घर-बार, गाड़ियां, खेती के औजार बनते हैं। उस वृक्ष को और मनुष्यों को देखिये—कितना अन्तर है? आम का पेड़ मनुष्यों से क्यों नहीं अच्छा हो सकता है? आंधियों और पत्थरों की मार खाकर भी वह किसी से रुठता नहीं।

उसी की डाल पर बैठकर पपीहा आज कल....“पी कहाँ”, “पी कहां?” टेर रही है। उसकी बोली कितनी मिठास भरी है, उसे सुनकर हृदय पर कितना बज्रपात होता है, इसका अनुभव दो सच्चे प्रेमी जन ही कर सकते हैं। जब एक दूसरे का बिछोह रहता है हृदय में कितना घनघोर युद्ध चलता है?

खेतों में कितनी मुस्कराहट भरी हुई है, पता नहीं वे किसको शर्मिंदा कर रहे हैं। खूब हँसी हो रही है, ठहाका मारकर हँसी हो रही है। गेहूं, जौ, चने, मटर आदि के पौधे पृथ्वी के बाशिन्दों को जिन्दा रखने के लिए अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिर पर अपार और अगणित बोझ लादे हुए खड़े हैं। अरे ! उन्हीं की दौलत की छीना-झपटी के लिए आज सँसार भर में घनघोर सँग्राम मचा हुआ है। झूठ-सच का बाज़ार गर्म है। एक देश दूसरे देश को हड़पना चाहता है। पूञ्जीपतियों और गरीबों में सँघर्ष क्यों हो रहा है ? जमींदार और किसान दो फिरके क्यों हो गये हैं ? दुनिया में अनाचार क्यों फैलता जा रहा है ? मजदूर वर्ग की उत्पत्ति क्योंकर हुई ? उन हरे भरे खेतों के कारण न।

लेकिन खेत में जो अन्न से लदे पौधे खड़े हैं उनका विचार भी सुनो न। वह तो बहुत विनीत स्वभाव के हैं। वह कह रहे हैं दुनिया में जो कुछ हो रहा है, उसमें हमारा दोष नहीं है। हमारे पास जो भी आयेगा हम उसका स्वागत करेंगे। हमारे लिये सँसार के सभी जीव-जन्तु समान हैं। हमारे खेत में मनुष्यों से लेकर एक छोटे से कीट पतङ्ग के लिए जगह है हम सबकी रक्षा करते हैं। हमारे घर में जो कुछ धन दौलत है, सबके लिए उसका दरवाजा खुला है।

लड़ते हैं मूर्ख, बदनामी होती है हमारी। यदि हमारी रक्षा मनुष्य से लेकर कीट-पतङ्ग तक समान रूप से करें और केवल अपने पेट के लिए ही हमारे धन का समान बटवारा करें तो यह सँसार की विषमता और युद्ध तुरन्त, पल भर में मिट जाये।

पेड़ों के पत्ते गिर कर नया जीवन धारण कर रहे हैं; उनमें नई-नई कोपलें निकल रही हैं। वे कितने सुन्दर लगते हैं। जो पत्ते निकल गये हैं वह हँस रहे हैं और हमें कह रहे हैं— "तुम भी हमारी तरह हँसो, हमारी तरह स्वस्थ बनो। दुनिया परिवर्तनशील है, हम भी परिवर्तन कर रहे हैं। यह परिवर्तन का जमाना है। हृदय परिवर्तन करके दुनिया को बराबर कर लो। फिर देखोगे कि कहीं लड़ाई झगड़ा सुनाई नहीं देगा। हम सब बारी-बारी से गिर कर फिर एक समान हो जाते हैं। हमारे समाज में धनी-गरीब का सवाल ही नहीं है।

किसान कितनाप्रसन्न चित्त है। खेतों के पास झोंपड़ी में बैठा हुआ जगत्-नियन्ता को पुकार रहा है। अपनी लहलाती हुई खेती को देखकर फूला नहीं समाता है। अपने सारे कष्टों को भूल सा गया है। जमींदार भी खुश हो रहा है कि फसल खूब आयेगी।

ज्यों ही फसल पकने को हुई कि किसान की औरत व बच्चों का मन मलिन हो गया। किसान की औरत को चिन्ता हो गई कि फसल तैयार हो रही है अतः कल से ही जमींदार और सेठ साहब के नौकरों का तांता बँध जायगा। गालियों की बौछार होगी। ईश्वर ही उस विपत्ति का निवारण कर सकते हैं। ईश्वर तो है ही नहीं, वह कहाँ से मदद करेगा ? हमारे लिए तो जमींदार ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर के बराबर दूसरा अवतार है, उसी के हाथ में हम सब गरीबों का जीवन है।

क्या बसन्त आ गया? होली भी आई न। होली के दिन नया अन्न मुँह में आ जायगा। किसान के मुँह में नया अन्न गया नहीं कि वह विष का घूँट बना। बेचारे गरीब किसान परेशान हो रहे हैं कि साल भर परिश्रम करके पैदा किए खेत के अन्न की किस प्रकार रक्षा करें। जमींदार और सेठ ही सब का सब न हड़प लें और हमारे बाल-बच्चे अभी भूखे मरें। मर-मर कर मेहनत हम करते हैं और मज़ा करते हैं जमींदार और सेठ व उनके नौकर-चाकर।

खेत की फसल कटी नहीं कि किसान का शरीर सूखकर कांटा हुआ।

जिस बसन्त से और होली से किसान-मजदूर खुश नहीं हैं उनके लिए नये-नये कष्टों का सूत्रपात्र इसी के दूसरे दिन से होने लगता है। कारण, उनका धन दूसरे के मुँह में होली के बाद ही जाने लगता है। आगे के महीनों के लिए उन्हें तारे गिन-गिन कर दूसरी फसल की राह देखनी पड़ती है। शरीर क्षीण होकर तपेदिक के रोगियों की तरह हो जाता है।

हे बसन्त और होलिके! तुम मत आवो! हम पराधीन हैं। तुम आकर हमारे दुःखों को और न बढ़ाओ।

भूखा किसान—

र०—श्रीविश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'

प्रभु! क्यों आंखें मींच रहा है?
हा! मेरी चिर-सँगिनी प्यारी,
ओले सहती स्वर्ग सिधारी,
आज खड़ा दुर्भाग्य भयङ्कर विकट दन्त हा! मींच रहा है।
प्रभु क्यों आंखें मींच रहा है?
मेरे नन्हे मृदुल शिशु प्यारे,
भूखे मरते राजदुलारे,
मैं भूखा हूँ, मेरे मुख से, शासक टुकड़ा खींच रहा है।
प्रभु क्यों आंखें मींच रहा है?
प्यारी प्यारी कुटी जलाकर,
मेरे रूखे हाड़ गलाकर,
मेरे शोणित से पूंजीपति अपनी सत्ता सींच रहा है।
प्रभु क्यों आंखें मींच रहा है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाड़े में क्या खायें ?

ले०—डा०सुरेन्द्रप्रसाद, जयपुर

यदि उक्त प्रश्न किसी वैद्य, हकीम या डाक्टर से पूछा जावे तो वह कहेगा अजवायन, गून्द, कङ्गनी आदि के लड्डू पाक शिलाजीत, याकूती या अँग्रेजी ताकत देने वाली दवाओं जैसे मदिरा, मछली का तेल आदि का सेवन कीजिये। उत्तर कुछ भी हो, पर प्रश्न से यह तो स्पष्ट है कि सर्दी ही ऐसा मौसम है जिसमें कुछ ऐसे विशेष पदार्थ खाने चाहिएँ कि जिससे वर्ष भर शक्ति बनी रहे तथा शरीर में टूट-फूट को प्राप्त होने वाले अणु-परमाणुओं की क्षति पूरी की जा सके। हां, तो हमें देखना यह है कि ऐसे पदार्थ कौन से हैं।

हम देखते हैं कि सर्दी में हमें विभिन्न प्रकार के नए फल जैसे सन्तरे, सेव, ककड़ी, पिण्डखजूर, केले आदि बहुतायत से तथा सस्ते मिलते हैं। यह पदार्थ हमारे शरीर में शुद्ध मिठास, क्षार तथा अन्य तत्वों को लाते हैं और रक्त को शुद्ध कर शरीर को फिर से नया बना देते हैं। हमारा धर्म है कि इन प्राकृतिक-प्रदत्त फलों का नियम से यथाशक्ति खूब सेवन करें।

शाक तथा हरी पत्तियां—सर्दी में गाजर, मूली, पालक, चौलाई, टमाटर तथा अन्य शाकों का घाटा नहीं रहता। इनमें से बहुत से शाक-पात कच्चे भी खाए जा सकते हैं और उन्हें खाना भी चाहिए। कच्चे शाकों का गुण अवर्णनीय है।

शाकों से हमारे शरीर को विभिन्न खाद्योज विटामिन, लवण तथा रस मिलते हैं। इनमें कच्ची हरी पत्तियां तो सर्वोपरि हैं। लाल टमाटर अपना सानी नहीं रखते। गाजरें सुन्दरता बढ़ाने में अद्वितीय हैं। प्रति दिन सलाद के रूप में कुछ ताजे शाक-पात अवश्य कच्चे खाने चाहिये। कच्चे शाक खाने से कभी कोई रोग नहीं होता। शाकों को पकाते समय उनके छिलके तथा जल जिसमें वे पके हों भूलकर भी न फैंकना चाहिए। कुछ शाकों को महीन-महीन काटकर तथा कुछ पत्तियों जैसे पालक, बथुआ आदि को कतर कर आटे के साथ सान या गूँधकर रोटियां बनाई जावें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी रोटियां पाचक और स्वादिष्ट होती हैं।

इस समय हमें अन्न की नई फसल भी प्राप्त होती है। विभिन्न प्रकार के अन्नों जैसे जौ, ज्वार, गेहूं, बाजरा, मक्की आदि को भी ठीक प्रकार से काम में लाना चाहिये। बहुधा नाज को मशीन से पिसवाया जाता है। इससे उसके पौष्टिक तत्व मारे जाते हैं। अतः हाथ की चक्की से पिसा आटा वगैरह काम में लाना श्रेयस्कर है। आटे आदि में से चोकर नहीं निकाल देनी चाहिये क्योंकि इस में भी बड़ा गुण रहता है।

थूली-खिचड़ी आदि बनाते समय नाज के साथ दाल मिलायी जाती है। पर हमें दाल के स्थान पर शाक मिलने चाहियें। दालें गरिष्ठ तथा हानिकारक हैं। यथा सम्भव उनसे बचना उचित है। यदि काम में लें तो छिलकों सहित। इस प्रकार बड़े-पकोड़ियां भी खाने योग्य नहीं ठहरते। विशेषतः ऐसी वस्तुओं से जो घी या तेल में उतारी या भूनी जावें, जरूर बचना चाहिए, क्योंकि वे चीज़ें भारी गरिष्ठ तथा बदहज़मी पैदा करने वाली होती हैं। इनसे पेट खराब हो जाता है।

लड्डू हलवे तथा पकवान मिठाइयां—यह वस्तुएँ भी वर्जित हैं। हलवे को छोड़कर बाकी सब २-४ दिन बाद बासी हो जाती हैं, और शरीर में अशुद्ध रक्त तथा सड़न पैदा करती हैं। दूसरे हलवे में घी पक जाता है। घी खाने वालों को रोटियों तथा शाक में ही खूब घी खाना चाहिए। शक्कर अर्थात् प्रचलित चीनी तो स्वास्थ्य के लिए प्राण-घातक व अनिष्टकारी सिद्ध हुई है। चीनी के स्थान में गुड़ का सेवन वांछित है। सब मीठे पदार्थ गुड़ से बनाना ही ठीक रहता है। दूध भी गुड़ मिश्रित या फीका पिया जावे।

सवेरे का नाश्ता केवल दूध या सूखे मेवों या फलों का हो। उस समय लड्डू समोसा या चाय आदि का प्रयोग अनुचित है। हां, गुड़ व तिल के लड्डू हानिकारक नहीं हैं। तिल दस्तावर व गर्म है।

यह भ्रम रखना बुरा है कि चटपटी वस्तुएें लड्डू, बड़े, पकोड़ी, चाय आदि शरीर को गर्म रखते हैं। शरीर को सच्ची गर्मी, प्राकृतिक भोजन, व्यायाम आदि से ही मिलती है। कुछ लोग मूर्खता वश फलों तथा शाकों आदि में ठण्डे या गर्म होने का भी दोषारोपण कर उन्हें नहीं खाते, पर वे भारी भूल में हैं।

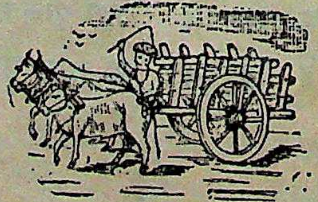

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सपने की बात

ले०—श्री गोविंद व्यास, वर्धा

प्रार्थना समाप्त हो चुकी थी। 'बोल सिया-वर रामचन्द्र की जय' की बुझती सी आवाज के साथ ही समाधिस्थ और ध्यानस्थ भक्तों में गति की—चञ्चलता की एक लहर सी दौड़ गई। मानो इस आध घण्टे के मौन और निश्चलता से वह अकुला उठी हो और यों एकाएक बन्धनमुक्त होकर अपने विविध रूपों में बिखर पड़ी हो। उसकी आजादी की यह खुशी भक्तों के अङ्ग-प्रत्यङ्ग से व्यक्त हो रही थी। उसकी मुक्ति के इस उल्लास में मुँह का अपना सक्रिय एवँ प्रधान भाग था।

सहसा आवाज आई। भक्त फिर सतर्क हुए। काका साहेब बोल रहे थे। सेवा के चुनाव की, उसके साधनों की और उसके क्षेत्र की चर्चा थी। इसी सिलसिले में झाड़ू का जिक्र चल पड़ा। बीसवीं सदी के तार्किक पहलू से उसके रूप और प्रकार पर ऊँची-नीची आलोचना हुई। उपयोगितावाद की दृष्टि से उसके आकार का विश्लेषण हुआ (मौखिक ही)। और यह भी सोचा गया कि झुककर झाड़ना ठीक है या सैनिक की तरह तन कर। चतुर श्रोताओं ने इस दूसरी हालत में झाड़ू में एक लम्बा बांस बाँधने की अक्ल भी सुझादी। इस तरह विविध पहलुओं से, नाना दृष्टिकोणों से, और विभिन्न मौलिक सूझों से झाड़ू पर सोचा गया। मैंने सोचा—"आज झाड़ू धन्य है! विभु की सर्वश्रेष्ठ कृति मानव! झाड़ू आज उसकी जिज्ञासा का विषय है! काश! उसके दिल होता!" मैंने मनही मन कहा।

बहस खतम हुई। अपने घर आ कर मैं लेटा और न जाने कब सो गया। एक अजीब सा दृश्य दिखाई दिया। मैं अपने घर के पीछे खड़ा था और पास ही भरा डस्टबिन—कचरे का ढोला पड़ा था। शायद 'डिलीव्हरेंस डे'—मुक्तिदिवस की तैयारी में खड़ा हो। केवल देवी म्युनिसिपैलिटी के दूतों की राह थी! कल्पना रूप में मुझे वह यों जँचा मानो किसी भोजनभट्ट के मुंह में ठूँस-ठूँस कर कौर भरा हो! सहसा मेरा ध्यान वहीं पड़े उस झाड़ू की ओर खिंचा जिसे जीर्ण और बेकाम समझकर मैंने आज ही सेवामुक्त कर दिया था। चारों ओर निस्तब्धता थी। रह-रह कर हवा का एकाध झोंका उस ओर होकर गुजर जाता था। उस झाड़ू में एक विचित्र कम्प सा हो रहा था। जैसे किसी कमजोर को मलेरिया का दौरा शुरू हुआ हो। उस कम्पन में भर्राई हुई सी एक आवाज आई। मैं चौंका! मुझे सम्बोधन कर झाड़ू ने कहा—"अभिमानी मानव! अपने कान खोल और सुन! और······ और यदि तुझे दिल हो तो मेरे इन शब्दों की सत्यता को महसूस कर!"

भय और विस्मय में उलझा हुआ मैं खड़ा था! उस ने कहा—"मैं सेवक हूं, और सेवक का कार्य है सेवा करना। वह करना जानता है; कहना नहीं। पर आज तो मैं कुछ कहूंगा। अत्याचारों में पिसा मेरा यह दिल आज शतशत रूपों में अभिव्यक्त होना चाहता है! हृदय की शांति के लिए यह जरूरी है कि मैं अपने गुबार को आज साफ करदूँ।'

हवा का एक गहरा झोंका आया झाड़ू में एक गहरा कम्पन हुआ, मानो भावावेश में झूम रहा हो।

आवाज आई—"खुद को परमात्मा की श्रेष्ठ कृति समझने वाले मानव! आज तुम गुमराह हो गए हो, आज तुम खो गए हो। तुम्हारी आंखों में मद की खुमारी छा गई है! तुम सावन के अन्धे हो जिसे सब हरा ही हरा दिखाई देता है। यदि सच कहदूँ तो मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सा क्रूर, मानव सा कुटिल, मानव सा कृतघ्न आज कोई नहीं ।"

"तुमने कल मुझे यों इस घूरे पर फेंकते हुए अपने मित्र से हँस कर कहा था—'आज इसे सेवा-मुक्त किया जाता है'! वाहरे कृतघ्न! सेवा का महत्व और सेवकों की कद्र खूब जानी तूने! एक व्यङ्ग भरी हँसी और एक उपेक्षा भरा झटका—मेरी जन्मभर की सेवा का प्रतिफल तुम केवल इतना ही दे सके! कला और सौंदर्य पर घण्टों बकने वाले श्रो मनुष्य! सेवा और त्याग की कठोर साधना में जीर्ण-शीर्ण हुए मेरे इस रूप में तुम कला न पा सके! तुम्हें सौंदर्य नहीं दिखाई दिया। तुमने नहीं जाना कि मुझ में भी सौंदर्य है; मुझ में भी रूप और रङ्ग है और मैं—मैं झाड़ू भी किसी के अभिमान की वस्तु हो सकता हूं।"

"जरा उस मेहतर युवती से पूछो जो अभी-अभी नववधु हो कर—मेहतर-रानी हो कर अपनी ससुराल आई हो। उमङ्गों से भरी वह नवोढा! हर्षातिरेक से फूली सी उसकी सास अपने मेहतर राजा से उस छोटी सी प्यारी-प्यारी दुलहिन के लिए एक सुन्दर से झाड़ू और सुघर सी डलिया की फरमाइश करती है। कल वह सेवा के महान् व्रत की दीक्षा लेगी। देवव्रत की भीष्म-प्रतिज्ञा से कम भीषण न होगी वह! तब उसके नन्हें २ कोमल हाथों में मैं हूंगा और बगल में होगी मेरी चिर-सङ्गिनी—मेरी प्यारी डलिया! जरा उससे जाकर पूछो तो कि हमारे बिना उसकी वह सेवा-दीक्षा सफल हो सकेगी? हमारे बिना उसका हाथ सूना और बगल खाली! जँचेगा उसे यह? वह तो चित्र ही अधूरा होगा! और जिस दिन चौराहा साफ कर, मुझे थामे और डलिया को बाँई कटि पर सम्हाले अन्यमनस्क भाव से अपनी सास की प्रतीक्षा में खड़ी होगी वह! काश, कोई आंखें इस चित्र की कला को देख पातीं, कोई हृदय उस सौंदर्य का अनुभव कर सकता। सेवा की वह प्रतिमूर्ति! उसकी वन्दना कर कोई भी प्राणी अपने को धन्य कर पाता। उसकी सास आती है और उसे देखकर धन्य हो जाती है। आज उसके जीवन की सारी साधें सफल हो चुकी हैं। आज वह कृतकृत्य है। ससुर आता है और अपनी गृहस्थी को पूर्ण देखकर एक नए बल का अनुभव करता है। हृदय में श्रद्धा, वाणी में कृतज्ञता और आंखों में आभार लादे वह आकाश की ओर देखता है। प्रभु की आज उसपर पूरी अनुकम्पा है। दोनों को बहू के भूखे होने की चिंता है। पर छोकरा जो अभी नहीं आया! इतने ही में वह आता दिखाई देता है। लाज में गढ़ी सी वह वधू एक ओर हो जाती है; और वह ··· वह गुद-गुदाया सा एक ओर कतराता हुआ चलता है। कुछ कहती सी आँखों से मा बाप एक दूसरे की ओर देखते हैं। उनके जीवन के वे सुनहले दिन मानो सजीव एवँ साकार हो उठे हों! सेवा के वे पुजारी अपने सच्चे परिश्रम के बाद जब घर की ओर बढ़ते हैं—प्रभु फूले नहीं समाते। उन्हें अपनी सफल कृति पर अभिमान हो जाता है। पर प्रमत्त मानव की पथराई आँखों में उस चित्र की कला और उसका सौंदर्य प्रतिबि-म्बित नहीं होता।" हवा की गति और झाड़ू का कम्पन बढ़ रहे थे।

आज दुनिया इतनी अशान्त क्यों है? हिन्दुस्तान गुलाम क्यों है? क्यों कि सेवा का महत्व दुनिया भूल गई है। सभी स्वामी होना चाहते हैं सेवक कोई नहीं। जब तक शबरी के आतिथ्य का सत्कार था, गुह के स्नेह की कीमत थी ग्वाल-बालों के प्रति सख्य भाव था, भारत सम्पन्न था। किसी की मजाल नहीं थी कि भारत की ओर रोष भरी दृष्टि डालदे। राम की सफलता में और रावण के पराजय में आज्ञाधारिता और सेवा ही अपना काम कर रहे थे। राजसूय-यज्ञ में झूठी पत्तलें उठा और मुझे हाथ में ले, उस पवित्र आँगन को साफ कर भगवान कृष्ण भी धन्य हो उठे। वह सेवा आज मानव की दृष्टि में हेय हो चुकी। उसके पुजारी आज अछूत और अन्त्यज कहलाने लगे। भूले मानव! भारत की गुलामी का बीज अँगरेजों ने नहीं—भारतीयों ने स्वयँ बोया। उनके पतन का गर्त गैरों ने नहीं—उन्होंने स्वयँ खोदा! उन्होंने स्वयँ अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली! और नतीजा यह है कि एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९९६

असंख्य जन-समुदाय कुछ मुट्ठी भर लोगों के इशारों पर नाच रहा है। मानो भेड़ों का एक झुण्ड, सर नीचा किये चरवाहे की आवाजों पर चल रहा है।

पर आज भी तुम इस रोग का निदान नहीं कर पाये। तुम देख कर भी नहीं देखते, सुनकर भी नहीं सुनते! आज गांधी महान है, महात्मा है; क्यों? क्योंकि वह सेवा-पथ का पथिक है। सेवा के रहस्य को वह समझ पाया है! मेरे महत्व को जानता है! उसे पाकर आज मानवता धन्य है! केवल इसीलिए कि वह सच्चा सेवक है। सेवाकी अग्नि-परीक्षाओं में तपा वह आज कुन्दन की तरह दमक रहा है। आज उसकी वाणी में आशीर्वाद और दृष्टि में जादू है! सन्तापों में झुलसी मानवता आज उसकी ओर याचक बनकर दीनता से देख रही है। तुम्हारे बीच आज फिर सेवा का मसीहा उतरा है। प्रभु की स्वाभाविक करुणा एक बार फिर मानवता पर बरस पड़ी है! उसकी शरण जाओ, उसके दामन में पनाह लो। वह तुम्हें अभय-दान देगा! वह शक्ति का स्रोत एवँ करुणा का पारावार है। वह सेवक है!

और मुझ में बांस बाँध कर सैनिक ढङ्ग से जो काम लेने की बात आप लोगों ने सोची! मुझे हँसी आती है आपकी इस मोटी अक्ल पर! आप भूलते हैं! मैं सेवा का प्रतीक हूँ। और सेवक में नम्रता होना उतना ही जरूरी है जितना आश्रम में श्रम! मेरा उपयोग झुक कर होता है सो अकारण ही नहीं। मैं नम्रता का प्रचारक हूं। हम आज पतित हैं क्यों कि हम ठीक झुकना नहीं जानते! हम आज गुलाम हैं क्योंकि हम अनुचित झुके! और हम आज कमजोर हैं क्योंकि हम उचित नहीं झुकते। हम झुकना भूल गये। तुम हँसोगे पर झुकने का भी अपना एक स्वतन्त्र वाद है। और तार्किक मानव उपयोगितावाद के पहलू से भी उसमें आज की एक महान विकट समस्या का हल पायेगा। एक ऐसे मर्ज की दवा पायेगा जो आज ला-इलाज है और जिसके आतङ्क से आज सारी मानवता व्यग्र हो उठी है। केस्टोफीन की गोलियां, केस्टराइल, त्रिफला और जमालगोटा खा-खा कर उसका कोठा बेकार हो चुका है। उसकी प्रकृति काबिज हो चुकी है। उसका सर भारी, दृष्टि मन्द और अङ्ग शिथिल हो गये हैं। क्यों? बस, झुकना नहीं जानते! मेरा महत्व भूल गये। नाहक इतना खर्च और यह परेशानी! सुबह उठकर एक गिलास ताजा पानी पीजिये और मुझे ले जरा झुके हुए घर भर में घूम जाइये। एक पन्थ दो काज। घर भी साफ और पेट भी! और घर में श्रीमती जी बलैयां लेंगी सो मुनाफे की!

"ये लाभ भला ठूँठ की तरह अकड़े रह कर मुझ से काम लेने में कहां? आप झुकिये और आप में भूतदया जागृत होगी; आप झुकिये और आप में 'शुनिचैव श्वपाके' का समत्व जगेगा। तर्क नष्ट होगा और श्रद्धा आविर्भूत होगी। तर्क न करो, हर बात के लिए रीजन और प्रूफ मत मांगो। अरे! तुम्हारे ये रीजन और तर्क मामूली सी कब्जी को तो दूर न कर सके, और तुम इन लूले आधारों के जरिये विश्व शान्ति का हल खोजने चले हो! तर्क! तर्क तो हरिजन बस्ती में म्युनिसिपैलिटी का नल है और श्रद्धा! श्रद्धा है माता जान्हवी! एक शैतान है और दूसरा सत्य! एक अभिशाप एवँ मौत है, और दूसरा वरदान एवँ जीवन। "उसने एक लम्बी सांस छोड़ी"—"श्रद्धा ही तो न रही! यदि श्रद्धा होती, तुम मुझे आज यों न फेंक देते। अपनी जन्म भर की सेवाओं का मुझे यह पुरस्कार न मिलता। उस हालत में तो मैं वामांग में अपनी सहचरी डलिया को लिये भारत की राष्ट्रपताका में फड़कता नजर आता। क्योंकि मुझ से बढ़कर सेवा का योग्य प्रतीक होने का दावा और कोई नहीं कर सकता। भूले मानव! तर्क का पल्ला छोड़ और श्रद्धा के दामन में आश्रय ले। झुकना सीख, तू ऊँचा उठेगा! झुक और प्रभु की दया तुझपर बरस पड़ेगी।"

क्षण भर को स्तब्धता सी छा गई, मानो झाड़ू चिंतन में डूबा हो! पर दूसरे ही क्षण उसमें गति होती दिखाई दी। मुझे भास हुआ जैसे उस तपस्वी के मुख पर एक रूखी सी हंसी दौड़ चली हो। उसने वेदना भरे स्वर में फिर कहा—"क्षमा करना, मैं जरा भावावेश में बह गया। पर मेरा हेतु दूषित नहीं। एक सच्चे सेवक की हैसियत से मैं मनुष्य के प्रति हमेशा वफादार रहूंगा। मानव कु-मानव भले ही हो जाय, पर झाड़ू कु-झाड़ू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कदापि न होगा । पुरुषों की उपेक्षा खलती है, पर माँ-बहनों की सहृदयता का मैं कायल हूँ । जब कोई बच्ची मुझे ले कर अस्तव्यस्त झकझोरती है, जब कोई माता अपने अभ्यस्त और मँजे हुए हाथों में मुझे घुमाती है, और जब कोई नवल वधू प्रातःकाल अलसाई आँखों और शिथिल अङ्गों से मेरी ओर बढ़ती है; तब मैं अपने में नहीं रहता । कृतकृत्य हो उठता हूं मैं ! भूल जाता हूँ मानव के अत्याचारों को ! भोला मैं, अपनी सेवा सफल मान लेता हूं ।"

"खैर, अब बहुत हुआ । मैं केवल एक बात और कहना चाहूंगा । प्रार्थना ही समझो इसे ! दया कर अपने इस मूक सेवक की इन भावनाओं को, मेरे इन उद्‌गारों को जरा अपने लोगों में जाहिर कर देना । उपेक्षा से ही सही, पर मैं चाहता हूं कि मेरा यह गुबार उन तक पहुँच जाय । आत्मश्लाघा न समझना इसे ! मैं तो सेवक हूं । सेवा और आत्म-चिंतन ही मेरे जीवन का लक्ष्य रहा है और मौन मेरी साधना !"

मैं मन्त्रमुग्ध था । यह लम्बा प्रवचन समाप्त होते ही एक लम्बा प्रणिपातन किया मैंने उसे । श्रद्धा से सराबोर था मैं ! - ...... कि सहसा घण्टी की कर्कश टनटनाहट सुनाई दी । मैं जगा तो खुद को अपनी ढीली खाट में औंधा सोया पाया ! जगा तो ! पर अजीब हालत थी मेरी ! आश्चर्य में डूबा मैं, खाट में पड़ा सोच ही रहा था कि दूर से अस्पष्ट सी 'प्रातःस्मरामी हृदि सँस्फुरदात्मतत्वँ' की ध्वनि आई । सो आज की प्रार्थना में मैं न जा पाया । मैंने सोचा - आज सेवा के महान्‌प्रतीक की आराधना ही सही । और मैंने कोने में पड़े झाडू को श्रद्धा से देखा और प्रेम से उठाया ! मगर एक ग्लास पानी पी कर ! नुस्खा अक्सीर साबित हुआ ! वदन हलका और चित्त प्रसन्न था !

—••—

मास्को की कुछ बातें

— शहर भर में २२ लाख व्यक्ति कारखानों में काम करते हैं ।
—६० लाख से अधिक व्यक्ति ट्रामों, बसों आदि की सवारी करते हैं ।
—२० हजार व्यक्ति दूर की पैसञ्जर गाड़ी से सफर करते हैं ।
—४ लाख १० हजार यात्री राजधानी के पास पड़ौस के स्थानों से पैसञ्जर गाड़ियों से आते हैं ।
—१० लाख छात्र स्थानीय शिक्षण सँस्थाओं में पढ़ते हैं ।
—५ लाख ८८ हजार विद्यार्थी औद्योगिक शालाओं तथा हाई स्कूलों में शिक्षा पाते हैं
२२ हजार विद्यार्थी कारखानों में उम्मीदवार हैं ।
—७ लाख २२ हजार चिट्ठियां रोजाना आती जाती हैं ।
—६८ हजार तार रोज आते जाते हैं ।
—९० लाख दैनिक समाचार पत्र और १५ लाख पुस्तकें ७२ भाषाओं में रोज निकलती हैं ।

वहां और यहां !

—जेम्स नामक लेखक अपने अन्तिम काल में पौने दो लाख पौंड छोड़ गये, रडयार्ड किपलिंग ने १ लाख ५५ हजार पौंड छोड़े, चार्ल्स डिकन्स ने लेख लिख-लिखकर ९३ हजार पौंड कमाये । लार्ड मोर्ले को ग्लेडस्टन की जीवनी लिखने के लिए दस हजार पौंड मिले । बारविक डीपिंग को उनकी रचनाओं पर २० हजार पौंड वार्षिक मिलता है । इसके विपरीत भारत के लेखक भूखों मरते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इंगलैण्ड की राज्य-व्यवस्था

ले०—श्री गिरिराजजी बी० ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

[४]

कामन्स सभा के क्या कार्य हैं और उन्हें किस तरह पूरा किया जाता है, यह पिछले लेख में बताया जा चुका है। अब इस सम्बन्ध में इतना ही बताना शेष रह गया है कि मन्त्रियों के अलावा और कौन कौन से बड़े व्यक्ति इसमें हैं और उनका कार्य क्या है।

स्पीकर—सबसे पहले हम Speaker—अध्यक्ष को लेते हैं। इसका तअ़ल्लुक किसी भी पक्ष से नहीं होता और यह प्रथा पड़ गई है कि जो एक बार अध्यक्ष हो गया, उसी को ही अध्यक्ष चुना जावे जब तक कि वह पार्लीमेंट में रहे। सभा के सँचालन की सारी जिम्मेवारी इसी की है, इसलिए इसे बड़े विवेक और बुद्धिमत्ता से कार्य करना होता है। सभा का काम इस तरह से चलाया जाता है कि किसी की भी स्वतन्त्रता में बाधा न पड़े और गवर्नमेंट और विरोधी पक्ष दोनों के साथ न्याय हो। सभा में इसकी सत्ता बड़ी भारी है, इसका शब्द ब्रह्मवाक्य है और इसकी आज्ञाओं का पालन करना हर एक का फर्ज है। जो सभ्य आज्ञा का उलंघन करे उसको सभा से निकाल देने तक का इसे अधिकार है, मगर वास्तव में ऐसा कभी ही होता है। हर एक सभ्य इसका बड़ा आदर और मान करता है। कहने को तो इसे Speaker (बोलने वाला) कहते हैं, मगर यह सभा में सबसे कम बोलता है।

पादरी—सभा का एक पादरी होता है। जो सभा के शुरू होने से पहले प्रार्थना कराता है। इसको chaplain to the speaker कहते हैं।

मन्त्री—सभा का एक मन्त्री होता है जो कि Clerk of the House कहलाता है। जो काम किसी सभाके मन्त्री का होता है वही इसका है। सभा का विवरण तैयार कर प्रकाशित करना इसी का काम है।

सशस्त्र सार्जेंट—सभा की चार दिवारी और उससे सम्बन्ध रखने वाली आस पास की जगहों में शांति कायम रखने के लिए पुलिस का एक बड़ा अफसर होता है जिस को Sergeant-at-Arms कहते हैं। इसकी मदद के लिए कई और अफसर और पुलिस के सिपाही होते हैं। परदेसियों को सभा की कार्यवाही सुनने की इजाजत देना इसी अफसर का काम है।

सभा की बैठकें खुली होती हैं और जो वहां जाना चाहे वह सभ्यों द्वारा इजाजत लेकर जा सकता है। मोटी-मोटी बातें जो कामन्स सभा के सम्बन्ध में जाननी जरूरी हैं वे बता दी गई हैं। अब लार्ड सभा को लेते हैं।

लार्डसभा—इसके सभ्य ७०० से कुछ अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। कामन्स सभा की तरह इसके सभ्यों का चुनाव नहीं होता। इसमें शहजादे, उमरा, २६ धर्मगुरू १६ स्काटलैंड के उमराओं के प्रतिनिधि और ५ सर न्यायाधीश शामिल होते हैं। जब पार्लिमेंट समाप्त हो जाती है तो बादशाह उमराओं और दूसरे सभ्यों को आमन्त्रण देता है। जिन उमराओं को एकबार आमँत्रण मिल गया उनको हमेशा ही बुलाया जाता है, और यह हक मौरूसी हो जाता है यानि बाप के बाद बड़े लड़के को सभा में बुलाया जाता है। जो लोग उमरा बना दिए जाते हैं, उनको सभा में शामिल होने का भी आमन्त्रण दिया जाता है। धर्मगुरू जब तक अपने पद पर कायम रहते हैं तब तक स्काटलैंड के उमराओं के प्रतिनिधियों का चुनाव कामन्स सभा के साथ ही होता है और सर न्यायाधीश जीवन भर के लिए सभ्य बनाये जाते हैं। चुनाव का असर लार्डसभा पर कुछ नहीं पड़ता। पुराने ही सभ्य बहुत ही मामूली फेरफार के बाद फिर वापस आ जाते हैं।

इसका अध्यक्ष जिसे Lord Chancellor कहते हैं मन्त्रिमण्डल और प्रधान मण्डल का सभ्य और न्याय खाते का सबसे बड़ा पदाधिकारी है। लार्डसभा के सञ्चालन की जवाबदारी इसी की है। देश में न्यायाधीशों की नियुक्ति करना इसी का काम है और गवर्नमेंट का सबसे बड़ा कानूनी सलाहकार है। जब लार्डसभा न्याय चुकाने बैठती है तब भी अध्यक्ष यही होता है। यह भी बड़ा प्रतिष्ठित पद समझा जाता है।

जो कायदे कानून कामन्स सभा में पास हो जाते हैं, वे लार्डसभा में भी पेश होते हैं। इसी तरह से हर एक कायदा दोनों सभाओं में पेश होता है। मगर यह जरूरी नहीं कि इसकी राय के बगैर कोई कायदा पास ही न हो सके। १९११ के कायदे के अनुसार बजट को यह सभा ज्यादा से ज्यादा एक मास रोक सकती है, और दूसरे अन्य कायदों को दो साल से ज्यादा नहीं। ऐसी हालत में कायदे बादशाह के पास भेज दिये जाते हैं और वह मँजूरी देता है। इस सम्बन्ध में तो इस सभा का कार्य इतना ही है कि वह कामन्स सभा को जल्दी में कोई कायदा पास न करने दे। चूँकि इस के सभ्य किसी पक्ष में शामिल नहीं होते और उनको अपने चुनावों में सफलता प्राप्त करने के लिए किसी का सहारा भी नहीं लेना पड़ता इस लिये कभी-कभी वे प्रश्नों पर बड़ी महत्वपूर्ण चर्चा करते हैं जिसका असर जनता और कामन्स सभा पर अच्छा पड़ता है। राजतन्त्र में यह सभा साइकिल के ब्रेक के समान है, मगर ब्रेक का उपयोग इस तरह से नहीं किया जा सकता कि उसको जोर से दबाया रखने के कारण सवार गिर जाय और साइकिल को भी नुकसान पहुँच जाय। राजतंत्र को तोड़ देने की सत्ता इसके पास नहीं है। जो ब्रेक का लाभप्रद उपयोग है वही स्थान इस सभा का राजतन्त्र में है।

इस कार्य के अलावा इसका एक विशेष कार्य है जो कि यह सभा परम्परा से करती आ रही है और वह है न्याय का। लार्डसभा इँगलैंड के न्याय के लिए आखरी न्यायालय है। यह कार्य भली भाँति करने के लिए इसमें ५ सर न्यायाधीश जो कानून में बड़ी भारी योग्यता रखते हैं, होते हैं। कानूनन इसका हर एक सभ्य न्याय चुकाने में भाग ले सकता है मगर अमली तौर पर यह ५ सर न्यायाधीश और सभा का अध्यक्ष ही काम करते हैं। अगर कामन्स सभा किसी मँत्री या बहुत बड़े पदाधिकारी पर मुकदमा चलाये तब उसके प्रतिनिधि इसी न्यायालय के सामने मुकदमा चलाते हैं।

रुपये सम्बन्धी जितने कायदे पास होते हैं वे पहिले कामन्स सभा ही में पेश होते हैं और वहाँ पास हो जाने के बाद ही इस सभा में भेजे जाते हैं और यहां उनमें किसी भी प्रकार का फेर-फार नहीं किया जा सकता। और दूसरे कायदे इस सभा में भी पहले पहल पेश किये जा सकते हैं, मगर अमूमन ऐसा होता नहीं है। करीब-करीब सब नये कायदे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामन्स सभा में ही पहिले पेश होते हैं, क्योंकि जिसके पास रुपये सम्बन्धी सत्ता होती है उसका ही महत्व ज्यादा होता है, और चूँकि यह अधिकार कामन्स सभा को ही है, इसलिए वास्तव में राज्य कार्य कामन्स सभा के ही मतानुसार होता है और लार्ड-सभा को तो कहने में भी Second chamber ही कहा जाता है। इतना बता देने के बाद सर्वसाधारण को जो लार्डसभा की बाबत जानना चाहिये वह काफी हो जाता है।

प्रिवीकौंसिल—अब मैं प्रिवीकौंसिल की बाबत कुछ बताऊंगा। शुरु शुरु में जो बादशाह का सलाहकार मण्डल था उसी में से इसकी उत्पत्ति हुई है। इसके सभ्य नये और पुराने प्रधान मण्डल के मन्त्री, Canterbury (कैंटरबरी) और york (यार्क) के मुख्य धर्मगुरु (ArchbiShop) लन्दन का धर्मगुरु (Bishop) कुछ उमरा जिन्होंने बड़े ऊंचे पदों पर काम किया हो तथा कुछ बड़े योग्य न्यायाधीश और नीतिज्ञ होते हैं। इनके अलावा खास योग्यता रखने वालों को इसका सभ्य उनका मान करने के लिए बना दिया जाता है। हर एक सभ्य के नाम के पहले Right Honourable लिखा जाता है।

इस कौंसिल के सभ्य लगभग ४०० हैं। शायद ही कभी सभा में सब सभ्यों को बुलाया जाता है। जिनको आमन्त्रण दिया जाता है वही सभ्य सभा में शामिल हो सकते हैं और यह आमन्त्रण Lord President of the Council जो इस सभा का प्रमुख होता है, उसके हस्ताक्षर से ही जारी होता है। प्रथा यह पड़ गई है कि उन ही सभ्यों को बुलाया जावे जो कि प्रधान मण्डल की नीति से सहमत हैं। अगर किसी महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा करनी हो तो उस मामले की चर्चा पहिले प्रधान मण्डल में हो जाती है। सभा का काम शुरू करने के लिए तीन सभ्यों की हाजरी जरूरी है।

जैसे लार्डसभा का विशेष कार्य न्याय का है इसी तरह से प्रिवीकौंसिल भी न्याय करती है और यह ब्रिटिश साम्राज्य में इङ्गलैण्ड को छोड़ कर जितने और देश हैं उनके लिये आखरी न्यायालय है। इस कार्य के लिए Lord President (इस सभा का प्रमुख), Lord Chancellor (लार्ड सभा का प्रमुख) और कुछ ऐसे सभ्यों के अलावा जो बड़े न्यायाधीश रह चुके हों, चार और बड़े योग्य न्यायाधीश जिनको वेतन मिलता है, नियुक्त किये जाते हैं। सर शादीलाल हिन्दोस्तानियों में पहिले ही आदमी थे जिनको कि इसका न्यायाधीश बनाया गया। और आज कल उनके चले आने के बाद श्री जयकर की नियुक्ति हुई है।

इङ्गलैण्ड की मौजूदा राज्यव्यवस्था की यही रूप रेखा है। मैंने इस लेखमाला के लिखने में इन पुस्तकों का उपयोग किया है:—

1. English Govt and Politics.
   F. A. ogg.
2. Parliament. Courtenay Iebert.
3. How Britain is Governed.
   Kate Rosenberg.

जो इससे ज्यादा जानना चाहें वे इनमें से किसी भी पुस्तक को पढ़ लें। पहली पुस्तक १९३७ में ही छपी है। शासनविधान जैसे नीरस और पेचीदा विषय को बड़ी सुन्दरता और सरलता से इसमें समझाया गया है।

अगले लेख में मैं बतलाऊँगा कि ब्रिटेन से कॉमन्स के चले जाने के बाद Angles or Saxons जरमनी से किस तरह वहाँ आये। उनकी जर्मनी में राज्यव्यवस्था क्या थी और ब्रिटेन में आकर उन्होंने क्या व्यवस्था की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामयिक-चर्चा

अल्पमत वालों की समस्या

लेे०—श्री अमरनाथ विद्यालंकार, लोकसेवक-मण्डल, अमृतसर

वर्तमान समय में हमारे देश में अल्पमत वालों की समस्या—(जिसे साम्प्रदायिक समस्या का नाम भी दिया जाता है), बड़े तीव्र रूप में विद्यमान है। हम लोग प्रायः सभी इस सवाल के सम्बन्ध में कुछ निश्चित धारणाएं बना बैठे हैं, और इसके वास्तविक पहलू को देखने में सर्वथा असमर्थ हो गये हैं। हिंदुओं में प्रायः यह धारणा दृढ़ हो गई है कि इस सारी समस्या के मूल में मुसलमानों की हठधर्मी, देशभक्ति की भावना की कमी और धर्मान्धता है। बहुधा यह भी कहा जाता है कि मुसलमान बड़े चालाक हैं। वे लोग हिंदुओं और अँग्रेजों दोनों से सौदा करके नफे में रहना चाहते हैं, और देश हित को तिलाञ्जली देकर अपनी सम्प्रदायिक स्वार्थ परता के वशीभूत हैं। इसलिए हिंदुओं को कहा जाता है कि वे हुशियार रहें—इनके धोके में न आवें, और अगर कभी कांग्रेस जैसी "हिंदु हित विरोधी" सँस्था इनसे कोई रियायत करे तो उसे ऐसा न करने दें। बहुत से कांग्रेसी भाइयों का भी कुछ-कुछ विचार तो है, हिंदु-काँग्रेसी इस समस्या का कारण तो यही समझते हैं मगर ऐसा कहना नीति मत्ता के विपरीत समझते हैं। मुसलमानों के सम्बन्ध में उनके भाव तो यही हैं, मगर उन भावों को हृदय में दबाकर रखना ही उचित समझते हैं। आपस की बातचीत में बहुधा वे भी उपर्युक्त बातें ही कहते हैं। हृदय में इस प्रकार के भाव रहने के कारण बिना जाने बूझे उनसे प्रायः अपने मुसलमान साथियों के साथ कठोर और रूखा व्यवहार होता रहता है, जो परस्पर सन्देह और वैमनस्य को और अधिक बढ़ाता है।

अपनी इस समस्या को समझने का वस्तुतः हम ने प्रयत्न ही नहीं किया। अपनी संकुचित भावनाओं के आधार पर हमने धारणाएँ बनाली। मेरे पाठकों में अधिकाँश सँख्या हिंदुओं की ही है, इसलिए मैं हिंदुओं को ही सम्बोधन करके कुछ बातें रखना चाहता हूँ। आखिर हम सब इस समस्या का हल ढूंढ़ना चाहते हैं, भयङ्कर बीमारी के इलाज की तलाश में हैं। बीमारी का जब तक ठीक-ठीक निदान न हो, इलाज ठीक नहीं हो सकता। यदि आप बीमारी का सही कारण जानना चाहते हैं तो कुछ समय के लिए यह भूल जाइये कि आप हिंदू हैं—सर्वथा जिज्ञासु भाव से परखने की कोशिश कीजिए। अपने आपको एक मुसलमान के स्थान पर रखकर उसके भावों का अन्दाजा लगाइये और फिर सोचिये।

अल्पमत-समस्या है क्या ?—लोकतन्त्र शासन जनता के बहुमत के शासन का नाम है। जिस राष्ट्र में सब लोग एक नसल, एक जाति, एक भाषा, धर्म और संस्कृति के उपासक हों, और इनकी शृङ्खलाओं में बंधे होने के कारण एक राष्ट्र की सीमाओं में इकट्ठे हों—दूसरे शब्दों में, जिस राष्ट्र के निवासियों में राष्ट्रीयता की भावना का स्थान लेने वाली कोई अन्य भावना न हो वहां जनता राष्ट्रीय सूत्र में पिरोई जाती है। वहां अल्पमत और बहुमत केवल राजनीतिक विचारों के आधार पर होते हैं परन्तु राजसत्ता के प्रति वफ़ादारी सबकी एक समान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है। परन्तु जिस देश में राष्ट्रीयता के अतिरिक्त लोग अपने आप को विशेष जाति, धर्म, भाषा, सँस्कृति आदि की भावनाओं के आधार पर एक ही राष्ट्र में या उस राष्ट्र से बाहर रहने वाले भिन्न-भिन्न गिरोहों से भी बँधा पाते हों जिनकी भक्ति राष्ट्र के अतिरिक्त अपनी जाति, धर्म या भाषा में समानता रखने वाले गिरोह के प्रति भी उतनी ही (या उससे भी अधिक) प्रबल हो जितनी कि राष्ट्र के प्रति है, वहां लोग स्वभावतः जातीय, धार्मिक साँस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी भेदों और स्वार्थों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते और उनके सामने प्रायः ऐसे खतरे—वास्तविक व सम्भावित या कल्पित—आया करते हैं जब वे समझते हैं कि दूसरी जाति या समुदाय के लोग जो उस देश में बहुमत में हैं उनके स्वार्थों को कुचल कर अपना प्रभुत्व न जमालें। बहुमत वाली जातियां भी प्रायः अपनी संकुचित भावनाओं के कारण अल्पमत वाले लोगों की पर्वाह नहीं करतीं और शासन कार्य में पक्षपात से काम लेती हैं। दुनियां के अधिकांश देशों में विविध जातियों, धर्मों और भाषाओं के कारण विभिन्नताएँ मौजूद हैं और इन विभिन्नताओं के आधार एक पर ही राष्ट्र के अन्दर नाना जातियां और नाना समुदाय बन गए हैं ये समुदाय और जातियां हर समय अपनी जाति स्वतन्त्रता के लिए चिंतित रहती हैं। लोकतंत्र का एक सिद्धांत यह है कि प्रत्येक जाति को अपने आंतरिक मामलों में स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। प्रत्येक जाति अपने भाग्य की स्वयं मालिक है। इस सिद्धांत को "स्वभाग्य निर्णय के अधिकार का सिद्धांत" (Doctrine of the Right of Self determination) का नाम दिया गया है। अधिकांश जातियों में इस के अधिकार के संकुचित अर्थ कर लिए हैं। पुराने जमाने में बड़ी-बड़ी जातियों ने कई छोटी-छोटी जातियों को कुचल कर उन पर अपना राजनीतिक प्रभुत्व तो स्थापित किया ही था, साथ ही अपनी भाषा और सँस्कृति उन पर जबर्दस्ती लादकर उनकी सँस्कृति और भाषा के विकास को रोक दिया था। इस आजादी के जमाने में वे सब पददलित जातियां अपनी प्राचीन भाषा और सँस्कृति के पुनर्जीवित करने और उनके आधार पर देश में अपनी पृथक सत्ता स्थापित करने के लिए उत्सुक हो उठी हैं, और देश की प्रचलित सभ्यता, भाषा या सँस्कृति के मुकाबले में जोकि कभी उन पर जबर्दस्ती लादी गई थी, अपनी भाषा और सँस्कृति को खड़ा करना चाहती हैं। इससे जातियों में परस्पर वैमनस्य उत्पन्न हो गया है। पुराने इतिहास से जातीय द्वेष और परस्पर वैमनस्य के उदाहरण ढूँढ २ कर पेश किए जाते हैं, और उनके द्वारा विजातीय द्वेष की भावना का उद्दीपित करके स्वजाति प्रेम की भावना को प्रज्वलित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। क्योंकि राजनीतिक शक्ति का दुरुपयोग हमेशा एक जाति दूसरी जाति के विरुद्ध कर सकती है—इसलिए कोई जाति दूसरी जाति के राजनीतिक प्रभुत्व को मानने के लिए तैयार नहीं। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, लोकतन्त्र का अर्थ है बहुमत शासन, इसलिए जो जाति किसी देश में अल्पमत में है, वह बहुमत जाति द्वारा कुचले जाने और पददलित होने से भयभीत है; इसलिए प्रत्येक जाति अपनी राजनीतिक अधिकार सीमाएं निश्चित करा लेना चाहती है।

यह समस्या दुनिया के अधिकांश देशों में है, इससे इसका अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व बढ़ गया है। पिछले महायुद्ध के बाद मध्य-यूरोप के राष्ट्रों का पुनर्विभाजन बहुत कुछ जातीयता और भाषा के आधार पर किया गया, ताकि एक ही जाति के या एक भाषा-भाषी व्यक्ति सब एक राष्ट्र में इकट्ठे हो जाएं। परन्तु कठिनाई यह है कि अधिकांश देशों में विभिन्न जातियां एक दूसरे के साथ इतनी घुली मिली बस रही हैं कि राष्ट्रों के ऐसे विभाग प्रायः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असम्भव हैं। राष्ट्रसङ्घ की सहायता से सजातीय व्यक्तियों का एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में आदान प्रदान भी हुआ इससे भी समस्या हल नहीं हुई। राष्ट्रसङ्घ ने अल्पसंख्यक जातियों की रक्षा के लिए कुछ सिद्धांत निश्चित करके गारन्टी भी दी—मिसाल के तौर पर सरकारी पदों और नौकरियों की तकसीम में भेद-भाव न रखा जाय, अल्पसंख्यक जातियों को अपनी सभाएं वगैरा करने और सङ्गठन बनाने के अधिकार हों, अपने स्कूल वगैरा सँस्थाऐं कायम करने का हक़ हो इत्यादि। ये नियम बहुत अच्छे हैं परन्तु अल्पमत वालों की तसल्ली इनसे नहीं हुई। बहुमत वाली जातियां इनका समय-समय पर भङ्ग भी करती रहीं। राष्ट्रसङ्घ के पास शिकायतों के ढेर लग गए, जिन्हें सुनते-सुनते वह थक गया। सन १९३१ में भारतीय कांग्रेस ने भी अपने करांची के अधिवेशन में "अल्प सँख्यक जातियों के साथ समान अधिकारों की" घोषणा की थी। उस घोषणा से भारतवर्ष की समस्या भी हल नहीं हुई। अल्प-सँख्यक जातियों की उससे तसल्ली नहीं हुई।

"अल्पमत वालों की समस्या" का सही हल तभी हो सकेगा जब हम लोकतन्त्र प्रणाली में कोई ऐसा सँशोधन कर सकें कि राजनीतिक सत्ता पर साधारण जनता का प्रभुत्व भी कायम रहे—जोकि बहुमत द्वारा ही हो सकता है। उस प्रभुत्व का प्रयोग करते हुए जातीय भावनाओं को पृथक रखा जा सके। जनता का बहुमत राजनीतिक बहुमत हो। राजनीतिक और जातीय भावनाओं में इस प्रकार की सीमा रेखा खैंचना और इस हद बँदी को अपने दैनिक व्यवहारिक जीवन में कायम रखे रहना सर्वसाधारण के लिए बहुत ही कठिन हो जाता है। आम लोग जीवन के भिन्न भिन्न पहलुओं का इस प्रकार सीमा बँधन नहीं कर सकते और उनकी भावनाएँ और उनके विचार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर आघात-प्रत्याघात करते रहते हैं। इस प्रकार की सीमा बांधने के लिए बहुत शिक्षा-दीक्षा की ज़रूरत है जो अभी तक मौजूद नहीं है। अगर ऐसा सम्भव न हो तो दूसरा उपाय है जातियों के अधिकारों को कानूनी तरीकों से सीमित और निश्चित कराया जाय। ऐसा करने के लिए हमें राज्य के अधिकारों पर भी सीमाएँ और पाबन्दियां लगानी होंगी। आधुनिक समय में राज्य जनता के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हस्तक्षेप करता है, और इस कारण अल्प-सख्यक जातियाँ हमेशा उसके हस्तक्षेप से भयभीत रहती हैं। उस भय को मिटाने के लिए राज्य के कार्य और अधिकार भी नियत करने होंगे—और सिर्फ वही अधिकार राज्य के पास रहेंगे जो उसके लिए अत्यँत आवश्यक हों। भारतवर्ष में अल्पमत जातियाँ और समुदाय इसी मत को मान रहे हैं कि उनके अधिकार और राज्य की अधिकार सीमाएँ सब निश्चित कर लिए जांय। अल्पमत समस्या को हल किये बगैर लोकतन्त्र प्रणाली का चलना असम्भव है। और भारतवर्ष में अगर लोकतन्त्र प्रणाली को लाना चाहते हैं तो हमें पहले इस समस्या का हल ढूँढना होगा। यह समझ लेना कि स्वराज्य मिलते ही आप से आप यह समस्या हल हो जायगी, अपने आपको धोके में रखना है। बहुत से देशों में जहां स्वराज्य है वहाँ भी यह समस्या भयङ्कर रूप से विद्यमान है। हिन्दुस्तान में हिन्दू बहुमत में हैं। बहुमत में होने के कारण स्वराज्य आते ही एक दम इतनी बड़ी राजनीतिक सत्ता उनके हाथों में आ जायगी जो पिछले कई सौ सालों में बावजूद कई लड़ाइयाँ लड़ने के उनके हाथ में सामूहिक रूप में कभी नहीं आई। इस इतनी बड़ी राजनीतिक सत्ता को हासिल करने के लिये इसके बदले जो कुछ भी अधिकार वे मुसलमानों को और दूसरी अल्पमत जातियों को दें कम हैं। उनके लिए अल्पमत वाली जातियों को किसी भी कीमत पर खुश कर लेना हमेशा सस्ता सौदा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी होली

ले० —श्री शुकदेवनारायण, राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा

आदमी के जीवन में कुछ ऐसे मौके आते हैं, जब वह खुश होता है, हुलसित होता है। मनुष्य का यह आनँद, यह खुशी, और यह उल्लास उसकी भौतिक अवस्था के उन्नत होने के कारण ही नहीं होता। जिन दिनों दोपहर में गर्मी गुब्बार चला करते हैं लगभग उन्हीं दिनों आदमी में अलमस्ती आती है, और बाला से बदने तक के पैर इस मस्ती से लड़खड़ाते हैं। जवानी का नशा एक दिन आता है और जो यौवन की दहलीज पर हैं उन्हें मदहोश कर देता है। यह नशा नैसर्गिक है और गरीब से अमीर तक इससे नहीं बचते। हां परिस्थितिवश, असर किसी पर कम और किसी पर अधिक होता है। जिस तरह जवानी की मादकता एक दिन आदमी में कुछ नये भाव लाती ही है, उसी प्रकार जड़ प्रकृति की, मौसम नामक सहेली में भी एक दिन कुछ नवीनता आती है। हरी, धानी ओढ़नी ओढ़, फूलों का शृँगार कर पृथ्वी इठलाने लगती है। इस समय सचराचर मस्ती से झूमने लगता है। प्रत्येक प्राणी विचित्र आनन्द का अनुभव करता है। चारों ओर के दृश्य में एक विशेष आकर्षण रहता है। इसी समय बड़े अपना बड़प्पन भूल जाते हैं और छोटे अपना लाघव।

ये ही दिन होते हैं जब जाड़े से ठिठुरे सूरज में थोड़ी गर्मी रहती है। ये ही दिन होते हैं जब हवाई द्वीप के सूखे मैदान टेसू और अमलताश के लाल और पीले फूलों से ढक जाते हैं। ये ही दिन होते हैं, जब हवाई के ऊख और पपीता के मैदान में खून और पसीना एक कर काम करने वाले मजूर-मजूरनें अपने अँदर एक उल्लास का अनुभव करते हैं। इन्हीं दिनों हवाई की व्यस्त सड़कों पर मधुर सङ्गीत सुनाई देने लगता है। हवाई के चरवाहे हर्षातिरेक हो खेतों की मेडों पर नाचते हैं और यहाँ के बूढ़े हसरत भरी निगाह से चारों तरफ देखते हैं। वे देखते हैं, चारों तरफ एक नयापन और एक खूबी, उनके मुँह से निकलती है एक आह और साथ ही वाह भी। उनके दिन बीत गए, दुनिया की दौड़ में वे आज पीछे हैं। इसका उनको पश्चाताप होता है और साथ ही खुशी होती है कि उन्होंने जीवन में एक और बसँत देखा।

इसी बसँत के एक दिन टेसु और अमलताश के फूलों से लदी, वनदेवियों के भेष में हवाई तरुणियां प्रभात-काल में अपनी-अपनी गली को अपने मधुर स्वरों से गुञ्जा देती हैं। फिर तरुण और तरुणियां साथ-साथ गाते हुए सारी गलियों में चक्कर देते हैं और नव-वर्ष का नव-सन्देश घर-घर को सुनाते हैं। वे उस प्रेममय दिन में अपने कुल विषाद, लघुता, बड़प्पन और द्वेष भूल जाते हैं। 'हलूलू' हवाई का बसँतोत्सव त्यौहार है। वह दिन उनके मिलने-मिलाने का दिन है, वलवले और अरमान का दिन है। उस दिन शत्रु भी अपने दुश्मन से मीठी बातें करता है। उस दिन हवाई का एक-एक घर हँसी और खुशी से उमगा दीख पड़ता है। उस दिन दो जानी दुश्मन भी गले मिलते हैं और एक दूसरे को दावत देते हैं। बसँतदेवी तरुणी, चेरी फूलों का उपहार हरेक को देती है और हरेक उस उपहार को बड़े आदर से लेता है। वह उसके गर्व करने की चीज है। वह धनी होने के कारण उस उपहार को नहीं ठुकराता और दरिद्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने के कारण उससे नहीं सहमता। गांव के किसान एक जगह इकट्ठे होकर प्रीति भोज करते हैं। भोज की सामग्री वे स्वयँ एक दूसरे से लेकर ही जुटाते हैं और वह होती हैं उनके खेतों में उपजने वाली चीजें। उनका पहनना, ओढ़ना, सब कुछ उस दिन उनका अपना होता है, जो प्रकृति उन्हें उनके खेतों में देती है। उनके आभूषण होते हैं टेसू और अमलतास के फूल। वे मिल जुल कर काम करते हैं। उनका खयाल है कि उस दिन दुःखी रहने से, किसी के प्रति द्वेष रखने से, बसँत की देवी रूठ जायगी, और इससे अगले साल की फसल खराब होगी।

हमारे देश में भी एक दिन तरुणाई आती है, अदना से आला तक खिल उठते हैं। साल भर की सँयम की बाँध टूट जाती है, चिथड़ों में लिपटा भी अलमस्ती के राग अलापने लगता है। कितनी ही गरीबी क्यों न हो, पर और दिनों की अपेक्षा उस दिन खुशी के थोड़े बहुत चिन्ह मिल जाते हैं। हरेक व्यक्ति फागुन में दो-एक खुशी के राग अलापता ही है, क्योंकि फागुन बसँत का यौवन हँसने हँसाने का दिन है और जिस समय होती है हमारी होली।

होली मनाई जाती है धूम-धमक्कड़ से, और उसका प्रदर्शन इतना गर्हित होता है कि क्या बताएं। जिस भूखे नङ्गे देश में यह प्रदर्शन कभी भी नहीं शोभता। साधन का प्राचुर्य उस दिन एक के आनन्द को अत्यन्त नमकीन कर देता है और उसका अभाव दूसरे के आनन्द को फीका। थोड़े में यही हमारी होली है और है हमारे आनन्दमय दिन की लज्जा भरी कहानी। यही कारण है कि आज का सभ्य समाज इस त्यौहार से उदासीन है। उसने होली का उल्लास अपनी सभ्यता और अनुशासन (Discipline) की चादर से ढक दिया। पर क्या यह ठीक हुआ?

आज के पढ़े लिखे नवयुवकों ने 'मई-दिवस' को भारत में इम्पोर्ट (Import) किया है। बहुत सी चीजें इम्पोर्ट हो सकती हैं, पर जनता का उल्लास और पृथ्वी की हरी चीर नहीं। हां, इस पर नयापन लाना दूसरी बात है।

'मई-दिवस' योरोप का बसँतोत्सव है और हमारी है होली। दोनों जगहों की भौगोलिक स्थिति में। अन्तर है। हमारी होली का हुलास 'मई दिवस' के दिन खोजने पर भारत में कहीं नहीं मिलेगा, क्योंकि 'मई-दिवस' हिन्दुस्तान में इम्पोर्ट हुआ है। योरोपीय अक्लमन्दों ने 'मई-दिवस' की स्फूर्ति को, जनता की उल्लास-शक्ति को एक नई ओर मोड़ दिया और उसको एक सँस्कृत रूप दे दिया। आज वह बसँतोत्सव का दिन योरोप में किसान और मजदूरों के ऐक्य का दिन है। उस दिन योरोप के किसान-मजदूरों में अत्यन्त ही उल्लास पाया जाता है। पर वही 'मई-दिवस' जो योरप को हलुए सा मीठा लगता है हमारे देश में लेई सा फीका। कितनी भी कोशिश क्यों न की जाय, भारत 'मई-दिवस' में पाश्चात्य देशों जैसी खूबी नहीं ला सकता। उस दिन जलूस निकल सकते हैं, सभाएं हो सकती हैं और लोग जोश में आ सकते हैं। पर आन्तरिक उल्लास! वह तो दूसरी चीज है।

क्या होली के त्यौहार को भारत से मिटा देना ठीक होगा? आदमी-आदमी है, निर्जीव मशीन नहीं। पेट भरने और काम करने के अतिरिक्त उसे कुछ और भी चाहिए। उसे चाहिए और मस्ती। और ये चीजें मिलती हैं प्रकृति से। जिस दिन प्रकृति मस्ती देगी वह गायेगा। जरूरत तो यह है कि जन-सरिता की इस प्रबल धारा को होली के उल्लास को दूसरी ओर मोड़ दिया जाय। यद्यपि यह कठिन है पर असम्भव नहीं। हम अपने यहां की चीजों से ही होली मना सकते हैं। हम आज के अनुसार उसमें परिवर्तन कर सकते हैं। इस तरह होली, जो आज घृणा की चीज हो रही है, हवाई के 'हलूलू' और योरोप के 'मई-दिवस' जैसी महत्वपूर्ण भी हो सकती है। जो होली से मुँह फुलाए रहते हैं उनसे कुछ होने-जाने का नहीं। समाज के नेताओं को इस ओर प्रयत्न करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

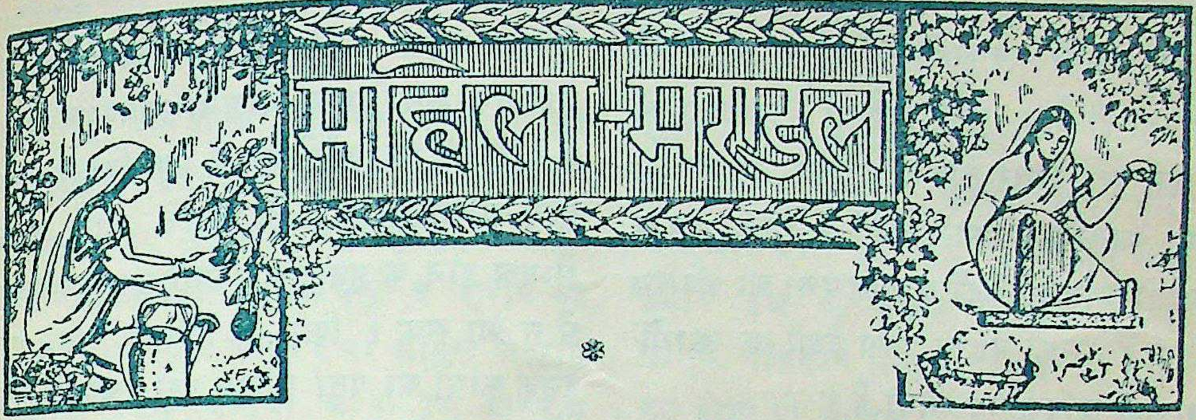

राष्ट्रीय महायज्ञ में महिलाओं की आहुतियाँ

ले०—श्री मनीराम कञ्चन, तालबेहट, झांसी

किसी जाति या राष्ट्र के निर्माण कार्य में जितनी सहायता पुरुष कर सकते हैं स्त्रियाँ उनकी अपेक्षा किसी तरह कम सहायता नहीं कर सकतीं।

—बर्नरलेण्ड

किसी भी देश के स्वतन्त्रता सँग्राम व राष्ट्र निर्माण के इतिहास को देखने से आपको पता चलेगा कि उस देश के महिला समाज ने किसी तरह भी पुरुषों से कम बलिदान व सहायता प्रदान नहीं की। इसके विपरीत यह कहना सहल है कि जब तक उस सँग्राम व निर्माण कार्य में स्त्रियों ने सहायता नहीं दी उसकी सफलता सन्दिग्ध ही रही है। हमारे देश का महिला समाज भी किसी अन्य देश के महिला समाज से किसी प्रकार इस दिशा में पिछड़ा हुआ नहीं कहा जा सकता। हमारे देश के राष्ट्रीय महायज्ञ में स्त्री समाज ने जिस प्रकार अपनी आहुतियां देकर उसे सफलता की ओर बढ़ाया है वह हमारे अभिमान की वस्तु है।

इस देश का स्त्री समाज सदियों से सामाजिक कुरीतियों का बुरी तरह शिकार रहा है। हमारे देश के नीतिज्ञों ने भी इस समाज को सदैव या तो ढोल गँवार शूद्र और पशुओं की श्रेणी में रक्खा या फिर घर की लक्ष्मी बता कर उसे केवल पूजा की वस्तु बनाकर। शास्त्रों ने कभी उसे घर की चहार दीवारी से बाहर निकल कर साँसारिक कार्यों के करने की सलाह उसे नहीं दी। फलतः नवीन विचार धारा आने के पूर्व तक उसे घर के बाहर निकल कर मनुष्य समाज को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके कार्यों में सहयोग प्रदान करने की भावना ही पैदा नहीं हुई थी। इस दृष्टि से देखने पर हमारे देश के महिला समाज ने गत् स्वतन्त्रता आन्दोलनों में जिस प्रकार अपनी आहुतियाँ दीं व बुद्धिमत्ता का परिचय दिया है उसकी महत्ता अन्य देशों के कार्यों से कहीं अधिक बढ़ जाती है।

भारत में दो तरह के आन्दोलन गत् ४० वर्षों में चले। एक हिंसात्मक और दूसरे अहिंसात्मक। एक तीसरा वैधानिक आँदोलन भी है जिसके चलाने वाले अपने को लिबरल (उदार) कहते हैं और जो सिर्फ प्रस्ताव पास करके ही भारत को स्वराज्य दिलाने की डींगें हांका करते हैं। यद्यपि इसका अस्तित्व कागजी ही है फिर भी साल में दो एक जगह प्रस्ताव पास कर लिये जाते हैं। जिस प्रकार इन उदारदलियों की सँख्या अँगुलियों पर गिने जाने योग्य है उसी प्रकार इस आन्दोलन में स्त्रियों की सँख्या भी नगण्य ही है। श्रीमती सुब्बारायन व बेगम शाह नवाज के नाम इस दल में लिये जा सकते हैं। इन दोनों महिलाओं ने प्रथम गोलमेज कांफ्रेन्स में काफी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया था।

हिंसात्मक आँदोलन के समस्त कार्य चूँकि गुप्त रक्खे जाते हैं इसलिए उसमें सम्मिलित व्यक्तियों के कार्यों का व्योरा मिलना सहज नहीं है। दूसरे आँदोलनों में जहां प्रकाशन विभाग खोलना आवश्यक होता है वहां उपरोक्त आँदोलन में एक विभाग इस लिये खोला जाता है कि उसके कार्य कार्य सम्पन्न होने के पूर्व तक किसी प्रकार प्रकाश में न आ सकें। फिर भी समय समय पर इनके कार्यों का पता पुलिस द्वारा चलाये गये षड़यन्त्र केसों से चल जाता है। इनसे विदित होता है कि भारतीय महिला समाज ने इस आँदोलन में भी बड़ी बहादुरी व लगन के साथ अपने को उत्सर्ग किया है। कलकत्ता में गवर्नर, चीफ कमिश्नर, आदि पर खुले आम गोलियां चला कर इन वीर महिलाओं ने अपने अबला नाम की धज्जियां उड़ा दी हैं। अवश्य ही इनके कार्यों से मतभेद है और वह प्रशँसनीय या अप्रशँसनीय हैं इस पर भी लोगों की दो रायें हो सकती हैं पर प्रत्येक व्यक्ति को इनकी बहादुरी की प्रशँसा करनी ही पड़ेगी। कलकत्ते के अलावा भी देहली षड़यन्त्र केस में पुलिस द्वारा कितनी ही महिलाओं का नाम लिया गया है। बनारस के एक केस में तो कितनी ही सुकुमार बालिकाओं तक के नाम लिये गए हैं। इन सब में कुमारी वीणादास, श्रीमती प्रकाशमती पाल, सुशीलादेवी आदि महिलाओं के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

इसके अलावा अहिंसात्मक सँग्राम में जिस प्रकार प्राणपण से महिला समाज ने अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शौर्य व प्रतिभा का परिचय दिया है वह इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। पिछले राष्ट्रीय सँग्राम में जहां पुरुषों ने क़ानून तोड़े वहां स्त्रियों ने विदेशी वस्त्रों व शराब की दुकानों पर सफल धरना देकर कांग्रेस के कार्य क्रम को सफल बनाया था। इस कार्यक्रम को सफल बनाने का अधिकाँश श्रेय महिलाओं को ही है। इस कठिन कार्य में पुरुष प्रायः असफल ही साबित हुए थे पर स्त्रियों ने मान अपमान सहकर भी इसे निभाया। इन वीरांगनाओं के दल के दल जब केसरिया साड़ी पहिने बाजारों से "झण्डा ऊँचा रहे हमारा" गाते हुए निकल जाते थे हृदय स्फूर्ति से उछलने लगता था। और एक बार कायर से कायर हृदय में भी गुञ्जायमान कर देता था 'झँडा ऊँचा रहे हमारा'। इन देवियों ने, जिन्होंने इसके पूर्व कभी किसी कष्ट का स्वप्न में भी ख्याल नहीं किया था, जेल की यातनायें सहीं, गोरे और काले सिपाहियों के अपमानजनक शब्द सुने, झँडे की शान कायम रखने में उनसे हाथ झकझोरी भी हुई, अपने प्रिय से प्रिय पतियों व सुकुमार बच्चों के वियोग का दुःख गवारा किया, अपने दूध पीते बच्चों को जेल के असहनीय कष्टों में झुलसते देखा, अपनी एक मात्र अभिलाषा को जेल में ही प्रसव कर अँग्रेजी साम्राज्यवाद की बलि होते देखा, किन्तु उफ तक नहीं की। एक शब्द मात्र से उपरोक्त प्रकार के सभी कष्टों से छुटकारा पाजाना सम्भव होते हुये भी उस ओर घृणा की दृष्टि से देखा। यह है हमारे देश के महिला समाज का त्याग, उत्सर्ग, बलिदान जिस पर किसी भी देश को गर्व होना ही चाहिए।

इसके अलावा बुद्धिमत्ता पूर्वक आंदोलन चलाने में भी महिला समाज पुरुष समाज से किसी प्रकार पीछे नहीं रहा। इसमें से अखिल भारतीय वर्किङ्ग कमेटी से लेकर प्रांतों की व शहरों की डिक्टेटर तक रह कर इन महिलाओं ने पुरुषों से भी अधिक योग्यता पूर्वक आंदोलन सञ्चालित किए थे। स्वर्गीय कमला नेहरू कार्य समिति की सदस्या थीं। श्रीमती उमानेहरू यू० पी० प्रांत की डिक्टेटर रहीं। श्रीमती हँसा मेहता बम्बई की जँगी कौंसिल की प्रधाना थीं! इनके पिता सर मनुभाई मेहता गोलमेज कॉन्फ्रेंस में लन्दन गये थे और आप यहाँ भारत के लन्दन की जेल में बैठकर भारत के भावी विधान का ढाञ्चा तैयार कर रही थीं। भारत कोकिला श्रीमती सरोजनी नायडू भारतीय सँग्राम की द्वितीय डिक्टेटर नियुक्त हुई थीं। वर्षों के बाद विदेश से लौटे हुये अपने पति श्रीहरींद्र चट्टोपाध्याय को उसी दिन बम्बई का डिक्टेटर बनाकर शाम को चौपाटी की सभा में गिरफ़ार कराकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१॥ वर्ष के लिए कारावास में भिजवा देने का साहस करने वाली महिला श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय का नाम स्वतन्त्रता सँग्राम के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। इसी प्रकार हज़ारों ऐसी वीर ललनायें हैं, भावी इतिहास जिन्हें अमर बनायगा।

पराधीनता-पाश को काट फेंकने के सद्‌प्रयत्न में भारत की देवियों ने बहादुराना तरीके से अपना कर्त्तव्य निभाया है उसे स्वतन्त्र भारत भूल नहीं सकता और समय आने पर इनकी अमूल्य सेवाओं का उचित आदर करेगा। स्वतन्त्र भारत में उनकी दशा सँसार की स्त्री जाति की वर्तमान स्थिति से कहीं अधिक सुन्दर होगी।

विवाह क्या है ?

विवाह क्या बुरी चीज है ? क्या वह गा बजाकर काठ में पांव देने के समान है ? बेशक वह व्यर्थ है, यदि किसी को उसकी आवश्यकता नहीं है।

विवाह दुनिया का खेल खेलने का आज्ञापत्र है सही, पर साथ ही वह सँयम का जनक है। शरीर के मन्दिर में बैठी हुई दो आत्माएँ जब एक दूसरे को आह्वान करती हैं तो विवाह दौड़कर उन्हें मिला देता है। विवाह हमें एकाई की परिधि से निकालकर विश्वप्रेम का पाठ पढ़ाता है।

विवाह गुडियों का खेल नहीं है, वह आनन्द मनाने का स्थायी प्रबन्ध भी नहीं है। वह तो दो आत्माओं का परस्पर मिलन है, कभी न टूटने वाला बन्धन है। सच्चा विवाह तो आत्माओं का होता है, शरीर का विवाह भी लोग करते हैं सही।

यह कहना बहुत बड़ी बात है कि विवाह आनन्द के लिये नहीं है, पर इसमें सन्देह नहीं, कि वह आनन्द आनन्द के लिए नहीं, कर्त्तव्य को सुस्निग्ध बनाने के लिए है। विवाह हाथ पकड़कर आत्मा को प्रेम की दीक्षा देता है। वह उसे आत्म-सर्म्पण करना, दूसरों के लिए जान देना, मरना और मिटना सिखाता है।

'राहत'

अपना उद्धार अपने हाथ

स्त्रियों का उद्धार वे ही कर सकती हैं—पुरुष नहीं। स्त्री चाहें तो अहिंसा का पाठ दे सकती हैं। चर्खा की मारफत करोड़ों गरीब औरतों की सेवा कर सकती हैं। खद्दर ही पहन कर गरीबों के घर में मदद भेज सकती हैं। हिन्दु मुस्लिम ऐक्य सिद्ध कर सकती हैं, छूआ-छूत के भूत को निकाल सकती हैं।

—महात्मा गाँधी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-विनोद

'तुअर की दाल'

डा० रविप्रतापसिंह श्रीनेत

भोपाल में लोगों को नाच-गाने का बहुत शौक है। कसरत और अखाड़े से दिलचस्पी कम है। फिर भी पहलवान मुहम्मद हुसेन सरीखे दो-चार ऐसे आदमी हैं जो लोगों में कसरत के प्रति प्रेम का भाव जाग्रत किया करते हैं। हमने पहलवान मुहम्मद हुसेन को बहुत पास से देखा है। उन्हें लोग 'पठान' के नाम से पुकारा करते हैं। हम भी उन्हें 'पठान' ही कहते हैं।

पठान बड़े मज़े के आदमी हैं। उम्र उनकी इस वक्त करीब ७० साल की होगी; लेकिन क्या मजाल जो बुढ़ापा उनमें जरा भी दीख पड़े। हमेशा उन्हें हँसते हुए और मुस्कराते हुए ही लोगों ने देखा है। बच्चों से उन्हें खास मुहब्बत है।

लड़कों और जवानों को वह हमेशा कसरत करने की सलाह दिया करते हैं। कई बड़े-बड़े आदमियों के कितने ही रोग सिर्फ कसरत और मालिश के जरिए भगा दिये हैं। आज वह खुद भी घण्टों कसरत करते हैं और दूसरों से भी कराते हैं। मालिश तो इतनी उम्दा करते हैं कि नींद भी आने लगती है।

छोटे बच्चों से बात करते वक्त उनके पोपले मुँह से निकले हुए शब्द बड़े ही अच्छे मालूम होते हैं। उन्हें घोड़े पर बैठने का बड़ा शौक है। एक मरयल टट्टू पर जिस वक्त बैठकर चौक बाज़ार में गुज़रते हैं, उस वक्त उनकी शान देखने के काबिल होती है। मरियल टट्टू का जगह-जगह अड़ना, 'पठान' के पोपले मुँह से निकली हुई डांट, शरारती लड़कों का उनके इर्द-गिर्द इकट्ठा होकर शोर-गुल मचाना, सभी एक अच्छा नज़ारा पेश करते हैं।

'पठान' कुश्ती, कसरत और अखाड़े में जितने तेज हैं, दूसरी दुनियावी बातों में उतने ही डरपोक। शेर का नाम सुनते ही उन्हें डर लगने लगता है। तुअर की दाल से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे जितना ज्यादा डरते हैं उतना और किसी चीज़ से नहीं। इसका सबब यही है कि तुअर की दाल खाते ही उन्हें दस्त लगने लगते हैं और दस्त से वे बहुत ज़्यादा घबराते हैं।

"पठान, कहो रात को कौनसी दाल पकी थी ?" मैंने पूछा । पठान—"अजी साहब, क्या पूछते हो रात को एक जगह दावत थी। हजार मना करने पर भी उसने न माना। मैं क्या जानता था कि यह कमबख्त इतनी खातिर के बाद भी वही तुअर की दाल खिलायेगा। अल्लाह की कसम, मर गया पोंक-पोंक के। खुदा की कसम, अब कभी तुअर की दाल न खाऊँगा।"

इतने में नन्हू जी साहब बोले, "भई! अपने को तुअर की दाल अच्छी मालूम होती है और वाकई होती भी तो अच्छी है ?"

पठान—खूब कहा साहब, तुअर की दाल जैसी खराब दाल दुनिया में कोई दूसरी नहीं। तोबा कीजिए। मसूर की दाल के माफिक कोई दूसरी दाल नहीं। घी से बघारने के बाद वह मज़ा आता है कि क्या कहूं ?

नन्हू जी साहब—क्या कहना है माशा अल्लाह!

पठान—वाकई, साहब मैं ठीक कह रहा हूं।

मैं—पठान, तुम इतनी कसरत करते हो, लेकिन तुअर की दाल तक हज़म नहीं कर सकते ?

पठान—अरे साहब, तुअर तो ज़हर है ज़हर। इतना बड़ा हाथी एक चींटी से मर जाता है फिर दाल तो इतनी बड़ी चीज़ होती है।

मैं—दाल का असर ज़हर होता है। यह आप ही की जबान से पहले-पहल सुना है।

इतने में नन्हू जी साहब को कसरत करने से रुका देख, पहलवान ने कहा—"भय्या साहब, दो-चार डण्ड और लगाइये। छोड़ो डाक्टर साहब आप भी दाल का पिण्ड।" उस दिन के बाद हम सभी पठान को "तुअर की दाल" कहते हैं। पठान को इस नाम से बड़ी चिढ़ है। तुअर की दाल के बहाने ही पठान को छेड़ने में मज़ा आता है। अब तो पठान तुअर की दाल छूते तक नहीं। और न दूसरों को खाने तक की सलाह देते हैं।

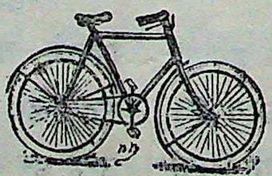

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोटा!

बड़ा न मझला गोल न लम्बा,
नाटा ठिगना कद छोटा।
लिखा हुआ है नाम हमारा,
पीतल का सुन्दर लोटा॥

लुड़का दिया जिधर को लुड़का,
है ऐसा भोला भाला।
जो आशा ले चला कभी ना,
बातों में उसने टाला॥

सर्दी गर्मी वर्षा प्रातः सन्ध्या,
काम निकाल लिया।
जब चाहा जब गला बांध-
कर उसे कुयें में डाल दिया॥

कभी पटक कर उसे जमीं से,
मैंने दे दे कर मारा।
कभी मेरे मित्रों की ठोकर,
से फिरता मारा मारा॥

कभी ठठेरे से ठुकवाया,
ले जाकर बाजारों में।
दूध गरम करने को मैंने,
रखा कभी अँगारों में॥

ताल तलैया कुइया नाली,
बम्बा नहर नदी नाला।
दिल में आया जहां कहीं भी,
बेदर्दी से मल डाला॥

पानी भरा रखा सिरहाने,
थी उस दिन अँधेरी रात।
मैंने पूछा प्यारे लोटे मुझ-
को एक बतादे बात॥

क्यों सहता है जुल्म, न तूने,
कभी भेद उर का खोला।
पैरों में गिर पड़ा प्रेम से,
हाथ जोड़ लोटा बोला॥

"करेगा जैसा भरेगा वैसा,"
मुझे न इससे कुछ सँताप।
जालिम का तो सर्वनाश,
हो जायेगा अपने ही आप॥

सहन शीलता सिखलाता हूँ,
भूल क्रोध को मत छूना।
जितना माँजो मुझे "विकल,"
भी चमकूँगा उतना दूना॥

श्री "विकल"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईमान !

अनु०—श्री महादेवलाल बरगाह

हरिदीन—एक गरीब मजदूर आदमी।
भोला—उसका लड़का (एक छोटा बालक)
बेचन—हलवाई।

[दृश्य—उस गरीब आदमी की झोंपड़ी।]

(भोला का प्रवेश)

भोला—क्या ही अच्छा होता बब्बा घर आ जाता ! बड़ी भूख लगी है। अरे वह आ रहा है।

(हरिदीन का तीन फुलके लिए हुए प्रवेश)

हरिदीन—आ गया, मुन्ना भोला।

भोला—मुझे बड़ी खुशी हुई है। जबसे मां का स्वर्गवास हुआ है। यहां बड़ा सूना-सूना लगता है। और मैं·······

हरिदीन—तुम्हें बहुत भूख लगी है ? मुझे मालूम है मेरे प्यारे बच्चे। जब काम मिलता था तब ऐसी बात नहीं थी। आशा है शीघ्र ही इन बुरे दिनों का अन्त हो जायगा।

भोला—वाह ! कैसी बढ़िया रोटियां लाये हो !

हरिदीन—(स्वतः) यही अँतिम हैं। कह नहीं सकता दूसरी कब मिलेंगी ! (प्रगट) ले, बेटा (रोटियों का हिस्सा करता है), जल्दी व्यालू करले।

भोला—वाह ! बब्बा यह तो ठीक नहीं !

हरिदीन—कौन बात ठीक नहीं बेटा !

भोला—तुमने मुझे दो रोटियां दे दी हैं।

हरिदीन—भला यह भी कोई कहने की बात है। आ, खा, मेरे लाल !

भोला—परन्तु तुम—दिन भर काम की खोज में फिरते रहे हो—तुम बहुत थक गए होगे; और मुझे मालूम है तुमने खाया भी कुछ नहीं है।

हरिदीन—आह मेरा भोला ! खुद खाने की निस्बत मुझे तुम्हें खाते देखना कहीं अधिक अच्छा लगता है।

भोला—परन्तु, यदि तुम नहीं खावोगे, तो कल काम ढूँढने कैसे जा सकोगे ! और यदि काम मिल गया, तो उसे कैसे कर सकोगे ? इसमें का एक टुकड़ा अवश्य ले लो, एक टुकड़ा जरूर तोड़ो, बब्बा !

हरिदीन—अच्छा तुम्हारी प्रसन्नता के लिए मैं एक टुकड़ा और ले लूँगा, यद्यपि भोजन से तुम्हारा प्रेम मुझे कहीं अधिक प्यारा है।

[भोले के हिस्से की एक रोटी को तोड़ता है, उसमें से रुपये गिरने लगते हैं]

भोला—यह क्या, रोटी से यह क्या गिर रहा है ! रुपये ! ओ बब्बा, रुपये !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिदीन—वास्तव में मुझे नहीं मालूम ये किसके हैं; परन्तु मैं इतना जानता हूं ये मेरे नहीं हैं। हमें इसका पता लगाना चाहिए। जा दौड़कर हलवाई से इसके विषय में पूछ आ—जल्दी कर बेटा जल्दी।

भोला—परन्तु बब्बा हम कितने गरीब हैं! और क्या रोटियां तुमने खरीदी नहीं हैं?

हरिदीन—मैंने रोटी खरीदी हैं, पर उसके पैसे तो नहीं खरीदे। हम लोग गरीब जरूर हैं परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि हम बेईमान बन जायँ।

भोला—प्यारे बब्बा, तुम ठीक कहते हो, मुझे मालूम है। जाता हूं हलवाई को अभी बताता हूँ।

[दौड़ जाता है]

हरिदीन—आह, मेरे प्यारे भोला! तुम्हें भूखे देखना दुखदाई है, परन्तु बेईमानी और असत्य से पलते देखना और भी बुरा है। मुझे विश्वास है ईश्वर हमारी रक्षा करेगा, यदि हम उसके प्रति और आपस में सच्चे बने रहे।

[बेचन हलवाई के साथ भोला का प्रवेश]

भोला—आ गए, बब्बा। मैंने पैसे के विषय में इनसे कह दिया है।

हरिदीन—भाई जी, इसमें कुछ बड़ी भूल हो गई है। क्या ये रूपये आपके हैं?

भोला—अरे हलवाई साहब, मेरा बब्बा बहुत गरीब है।

हरिदीन—चुप रहो भोला; हम न कोई चोर हैं और न भिखारी ही—ये रुपए आप ले जाइए यदि वे आपके हैं!

बेचन—[मारे आनन्द के हाथ मलते हुए] लो मैंने उनसे कहा था न—मैंने उनसे कहा था न!

हरिदीन—किससे कहा था? क्या कहा था?

बेचन—करतार काका को जो बढ़ई हैं—गाड़ी बनाते हैं। मैंने कहा न—मैंने उनसे कहा था। "पड़ौसी हरिदीन शहर में सबसे ईमानदार आदमी हैं" मैंने कहा था। और उनने कहा था—"बेचन तुम ठीक कहते हो"।

हरिदीन—आप क्या कह रहे हैं? मेरी समझ में नहीं आ रहा है।

बेचन—उस पैसे के सम्बन्ध की सब बातें मैं तुम्हें बताऊँगा। कल एक अनजान आदमी ने मुझे लाकर ये दिए थे; और शहर के सबसे ईमानदार गरीब आदमी को देने के लिए कहा था। मुझे मालूम था शाम को रोटियां लेने तुम आओगे। अस्तु मैंने एक रोटी बनाई और उसमें इन रुपयों को भर दिया। यह तुम्हारे हैं। अपनी ईमानदारी से तुमने बता दिया कि यदि इनका अधिकारी कोई है, तो तुम हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिदीन—ओह, मेरे बच्चे ! [भोला को छाती से लगा लेता है

बेचन—एक बात और । उसने यह चिट्ठी मेरे पास यह कहकर छोड़ दी थी कि जब तुम्हारा वह ईमानदार आदमी मिल जाय, तब उसे कह देना कि मुझे वह ढूँढे । मैं उसे अच्छा काम और अच्छा वेतन दूँगा। यह उसका नाम है ।

हरिदीन—[चिट्ठी ले लेता है] काम और मेहनताना !—ये रुपयों से बढ़कर हैं ! धन्यवाद आपको बेचन भाई। आ, भोला, चल इन नेक आदमी को ढूँढें । रास्ते में हम कहीं रोटी खा लेंगे। उस परमात्मा को धन्यवाद जिसने हमें ईमानदार रखा । हमें अब काफी रोटियां मिला करेंगी ।

बालकों से—

रचयिता आशुकवि, रामाधार शुक्ल

प्रातः उठो करो अस्नान,
करो बैठ फिर भगवत ध्यान ।
माता-पिता गुरु करो प्रणाम,
करो बाद सब घर के काम ॥

खेलो लड़को ऐसे खेल,
जिन से हो आपस में मेल ।
खेलो वीरों के वे खेल,
फैले देश-प्रेम की बेल ॥

पढ़ो पूर्वजों के इतिहास,
हो जिसमें वीरों का भास ।
होवे विद्या बुद्धि विकाश,
मुख पर चमके तेज प्रकाश

देखो भद्र जनों के लेख,
करो अनुकरण उनके देख ।
बनो कर्म योगी रणधीर,
सच्चे सेनानी बलवीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कसरत करो बनो बलवान,
करे तुम्हारा जग सन्मान ।
करो किसी का न अपमान
रखना सदा हृदय से ध्यान ॥

गावो भारत के गुणगान,
रखकर निज गौरव अभिमान ।
स्वर हो एक एक हो तान,
मुख से प्यारा हिन्दुस्थान ॥

करो देश-सेवा सुखमान,
मानव धर्म इसे सब जान ।
सङ्कट सहो करो उत्थान,
चाहे जावें प्यारे प्रान ॥

रखो स्वदेशी भाषा भेष,
आर्य सँस्कृति पूज्य हमेश ।
सत्पुरुषों के सुन उपदेश,
चलो मान ईश्वर आदेश ॥

परहित करो सदा उपकार,
स्वार्थ त्याग हो हृदय उदार ।
करो गुरु शिक्षक सत्कार,
सीखो सदाचार व्यवहार ॥

मुस्लिम हो ईसाई जैन,
सबसे बोलो मीठे बैन ।
सिक्ख पारसी हरिजन भ्रात,
करो सभी से हिल मिल बात ॥

रक्खो सदा हृदय से ध्यान,
सब मानव हैं एक समान ।
बनो नागरिक सभ्य सुजान,
रखकर दीन हीन पहिचान ।

आगे चलो तुम चाल सुचाल,
ऊपर की शिक्षा सब भाल ।
होगे सच्चे भारत लाल,
जैसे जगत जवाहरलाल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुलवाड़ी

स्वतन्त्रता प्राप्ति का एक मात्र उपाय

आप दौलत के पीछे क्यों दौड़ रहे हैं ? कभी आप कमाते हैं, कभी खोते हैं। इस अनिश्चित और खेल तमाशे की तरह जीवन बिताने में आपको क्या मजा आता है ? हो सकता है कि आप एक पक्के जुआरी बन जाएँ। लेकिन जरा देखो तो, क्या सब लोग नहीं खाते ? धरती माता उन सबके लिए जिन्हें वह जन्म देती है, भरपूर पैदा करती है। लेकिन हमारा कुप्रबन्ध किसी को तो आवश्यकता से अधिक खिलाकर मार डालता है और किसी को काफी भोजन तक नहीं मिलता। हमारा कहना है कि समाज इस ढङ्ग से सुसङ्गठित किया जावे कि हममें से प्रत्येक की जरूरतें पूरी हो सकें, तथा हमारे बच्चे कभी दीन न रह सकें। यह न तो कोई स्वप्न है और न कोरा आदर्शवाद। हमारा तो यह दृढ़ विश्वास है कि सबके हित में ही प्रत्येक की सर्वोत्तम भलाई है। हमें इस विश्वास पर अपने जीवन का पुनर्निर्माण करना है। इसके लिए न तो स्वर्ग प्राप्ति तक की इन्तजार करने की जरूरत है और न समस्त संसार के एक सँयुक्तराज्य में परिवर्तित होने तक की प्रतीक्षा करनी है। इसके लिए तो आपको अपनी मौजूदा स्थिति और स्थान से ही कार्य आरम्भ कर देना है। यथा सम्भव उन सँस्थाओं की मदद करने से इन्कार कर दीजिए जो सट्टा-पद्धति पर अवलम्बित हैं। दौलत को किसी व्यक्ति विशेष के पास इकट्ठा करने में सहायक मत बनिए। बल्कि उत्पादन और विभाजन का अपना नया तरीका निकालिए। क्या आप इस उद्देश्य पूर्ति के लिए मिलकर काम नहीं कर सकेंगे ? क्या आप लड़ते ही रहेंगे ? अच्छा ! यदि यही बात है तो आप अभी स्वराज्य के योग्य नहीं हैं। सतत प्रयत्न करते जाइए। स्वतन्त्रता प्राप्ति का यही एक मात्र उपाय है। पहले खेत, फैक्टरी और फर्म को लेकर कार्य शुरू कीजिए और इन्हें सहायक पद्धति पर चलाइए। न तो पूञ्जीवादियों को कोसिए और न साम्राज्यवाद के खिलाफ चिल्लाइए; बल्कि काम करके अपने नये तरीकों की उपयुक्तता सिद्ध कर दिखाइए।

(वलड फैडरेशन)

मजबूत और महान् बनो

यदि तुम्हें अपने अन्दर जवानी की ताकत महसूस होती है, यदि तुम जिन्दा रहना चाहते हो, यदि तुम निर्दोष, पूर्ण, उभरती हुई जवानी का आनन्द लेना चाहते हो, जिसकी प्रत्येक मनुष्य आशा रखता है—तो मजबूत बनो, महान बनो, और जो कुछ भी तुम करना चाहो, दृढ़ता पूर्वक करो।

अपने चारों तरफ जीवन के बीज बोओ। खबरदार ! यदि तुम झूठ बोलोगे, धोखा दोगे, जाल रचोगे, चकमा दोगे, तो तुम अपने आपको पतित करोगे, छोटा बनाओगे। पहिले ही तुम अपनी कमजोरियों को मान लोगे तो तुम्हारी हालत जनान खाने के उस गुलाम के मानिन्द होगी, जो हमेशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने को छोटा समझता है। यदि तुम्हें ये बातें पसन्द हैं तो यही करो, परन्तु इस दशा में लोग तुम्हें नाचीज, घृणित और कमजोर समझेंगे और तुम्हारे साथ ऐसा ही बर्ताव करेंगे। तुम्हारी ताकत का कोई सबूत न होने का यह अर्थ होगा कि दुनिया तुम्हें दयापात्र समझेगी—केवल दया का पात्र।

जब तुम स्वयं अपने आप, अपनी शक्ति को पँगु बनाते हो, फिर दुनिया को दोष क्यों देते हो? इसके खिलाफ अपने आपको ताकतवर बनाओ। और यदि कहीं तुम्हें बेइन्साफी मालूम हो, और तुम उसे अन्याय अथवा अधर्म समझते हो—चाहे वह जिन्दगी की कोई भी बेइन्साफी होवे, विज्ञान का कोई झूठ होवे, और किसी पर किसी का किया जुल्म होवे, तो तुम उस बेइन्साफी, उस झूठ अथवा जुल्म के खिलाफ बगावत कर दो।

(प्रीत सैनिक)

क्या आपके गाँव में ये सब बातें हैं?

१—गाँव की हद के तमाम रास्तों में कीचड़ नहीं होनी चाहिए।

२—समस्त गाँव में पूर्णतया स्वच्छता होनी चाहिए।

३—गाँव में कोई भी निरक्षर नहीं होना चाहिए।

४—गाँव में कोई नशेबाज नहीं होना चाहिए।

५—हरेक गाँव में हाथ कते सूत की खादी का कपड़ा इस्तेमाल होना चाहिए।

६—सार्वजनिक सभा तथा बालकों के खेलने का मैदान हमवार और ऐसा होना चाहिए जहाँ वृक्षों की छाया हो।

७—गाँव के आपसी झगड़ों का निपटारा करने के लिए पञ्चायत होनी चाहिए।

८—विवाह के मौके पर गाँव में फिजूलखर्ची नहीं होनी चाहिए और किसी की मृत्यु पर तो बिलकुल ही खर्च नहीं होना चाहिए।

९—गाँव के हरेक घरके लिए गढ़ों वाली टट्टियों की व्यवस्था होनी चाहिए।

१०—गाँव में अस्पृश्यता का नाम निशान तक नहीं होना चाहिए।

११—गाँव के हरेक घर में हाथ कुटे चावल और हाथ की चक्की के आटे का उपयोग होना चाहिए।

१२—गांव के कुओं की वर्ष में दो बार सफाई होनी चाहिए।

१३—हरेक घर में कमसे कम एक गाय होनी चाहिए।

१४—गाँव में एक व्यायाम सङ्घ होना चाहिए।

यह सब कुछ होगा तभी आपका गाँव आदर्श समझा जाएगा। (पुस्तकालय)

ईश्वर कहां है?

जीवित प्रभु न तो मन्दिरों में है, न पत्थरों में और न है भूत की दस्तावेजों और हस्तलिखित पुस्तकों में। ईश्वर तो तुम्हारे कर्त्तव्य क्षेत्र में निवास करता है। ईश्वर के दर्शन करने के लिए तुम्हें न तो आवश्यकता है सुदूर जङ्गल में भटकने की और न किसी पर्वत-शिखर पर धूनी रमाने की। अपने दफ़्तर में, अपने हस्पताल में, अपनी दुकान में, अपने स्कूल में और अपने अभ्यास के कमरे में तुम ईश्वर का स्वागत कर सकते हो। एक महात्मा की बाबत यह कहा जाता है कि टीन के बर्तन की चमक में उसने ईश्वर के दर्शन किए थे।

वे लोग प्रभु को कहीं नहीं देख सकते जो उसे देखने के लिए अपना काम छोड देते हैं। किंतु वह उस स्त्री की छोटी सी कुटिया में दाखिल होता है जो अपने पति की सेवा करते हुए हृदय में प्रभु को देखने की इच्छा रखती है। अपने दैनिक कर्त्तव्य की खिड़की में से तुम प्रति दिन प्रभु के दर्शन कर सकते हो।

—साधु टी० एल० वास्वानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपक के प्रकाश में—

अर्थशास्त्र के प्रारम्भिक नियम—लेखक—श्री प्रेमचन्द बी० ए० (कैन्टब) अर्थशास्त्र अध्यापक बी० बी० कालेज, डेराइस्माइलखां, प्रकाशक—आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस बम्बई। मूल्य १॥)

हिन्दी भाषा में अर्थशास्त्र विषयक पुस्तकें बहुत ही कम लिखी गई हैं, विद्वान लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक लिख कर हिंदी भाषा भाषियों की जो सेवा की है वह सराहनीय है। अर्थशास्त्र जानने की इच्छा रखने वालों के लिये यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है। इसमें सभी प्रारम्भिक बातें बहुत अच्छी तरह और संक्षेप में समझाई गई हैं। पाठकों की कठनाइयों को ध्यान में रखते हुए पुस्तक को यथा सम्भव सरल बनाने का प्रयत्न किया गया है और प्रत्येक बात को उदाहरणों और चित्रों से समझाने की कोशिश की गई है। अन्त में अंग्रेजी के उन पारिभाषिक शब्दों का जो पुस्तक में आए हैं हिंदी-उर्दू कोष भी दिया गया है। इसके अलावा प्रत्येक अध्याय पर प्रश्न भी दिए गये हैं। कागज, लिखाई और छपाई बहुत सुन्दर है।

—राधाकृष्ण, बी० ए०

नवीन अमोल जीवन (दूसरा हिस्सा) गुरुमुखी—लेखक स० स० अमोल, प्रकाशक—लिखारी बुकडिपो, अमृतसर, पृष्ठ संख्या २०२, सजिल्द मूल्य १)। इस पुस्तक में हिन्दुस्तान के सामाजिक व राजनैतिक नेताओं, लेखक और कवियों की जीवनियां दी गई हैं। पुस्तक की भाषा सरल और शैली रोचक है। नवयुवकों के लिये विशेष रूप से उपयोगी है।

ऐतिहासिक स्त्रियां—लेखिका, श्रीमती प्रेमलतादेवी; प्रकाशक; मूलचन्द किसनदास कापड़िया, सूरत; मूल्य ॥)

इस पुस्तक में ८ चरित्र अंकित किये गये हैं। पुस्तक का विषय ऐतिहासिक तथा धार्मिक है। पुस्तक जैन महिलाओं के लिए लिखी गई है। एक विशेष सम्प्रदाय को लक्ष्य में रख कर लिखे जाने पर भी पुस्तक शिक्षाप्रद तथा उपादेय है। मूल्य में कुछ अधिक है।

अनुभूत योग माला (त्रिधातु सर्वस्वांक)—सम्पादक व प्रकाशक चि० चू० पं० विश्वेश्वरदयालु वैद्यराज, बरालोकपुर—इटावा। इस विशेषाङ्क का मूल्य २)

अनुभूत योग माला गत १७ वर्ष से आयुर्वेद संसार की प्रशंसनीय सेवा कर रही है। यह शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के रोगों पर प्रकाश डालती है। अन्य विशेषाङ्कों की तरह माला का प्रस्तुत विशेषाँक भी बड़े परिश्रम से तैयार किया गया है जिसमें बड़े-बड़े विद्वानों के लेखों का संग्रह है। वैद्यबंधुओं को इससे लाभ उठाना चाहिए।

—वैद्य अनन्तराम आयुर्वेद विशारद

नवीं दुनिया (गीत नम्बर)—श्रीमती अमरकौर जी द्वारा सम्पादित इस विशेषाङ्क में हमारे घरों में गाये जाने वाले पञ्जाबी गीतों का बड़ा सुन्दर संग्रह है। विशेषाङ्क का मू० ॥) तथा वार्षिक मूल्य ४)

कौमल संसार (सालाना नम्बर)—सम्पादक गुरुबख्शसिंह 'बख्श' अमृतसर। यह विशेषाङ्क विद्वान लेखकों द्वारा लिखे गये ड्रामों, कहानियों और कविताओं से भरपूर है। सचित्र १५६ पृष्ठ के सालाना नम्बर का मूल्य १); वार्षिक मूल्य ५)

अखण्ड-ज्योति—इस मासिक पत्रिका का पहले वर्ष का पहला अङ्क हमारे सामने है। इसके लेख और कविताएं पठनीय हैं और चित्र भी सुन्दर हैं। आध्यात्मिक जागृति पैदा करना इस पत्रिका का उद्देश्य है। पं० श्रीराम शर्मा द्वारा सम्पादित तथा फ्रीगञ्ज, आगरा से प्रकाशित इस सचित्र पत्रिका का मूल्य १॥) वार्षिक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय नोट

शिक्षा विभाग और हिन्दी—

हिन्दुस्तान में लगभग २२ करोड़ मनुष्य किसी न किसी रूप में हिंदी का प्रयोग करते हैं। राष्ट्रीय जागृति के इस युग में हिंदी का प्रचार दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। मद्रास जैसे अहिंदी प्राँत में भी हिंदी का काफी प्रचार हो रहा है। अन्य प्राँतों में भी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से इस दिशा में भरसक प्रयत्न किया जा रहा है। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि आज नहीं तो कल हिंदी ही आज़ाद भारत की राष्ट्रभाषा होकर रहेगी। किंतु खेद और दुःख के साथ कहना पड़ता है कि हमारे प्राँत में हिंदी की उपेक्षा ही की जा रही है। राष्ट्र-भाषा प्रचारक सङ्घ लाहौर ने 'शिक्षा विभाग और हिंदी' नामक एक छोटा सा ट्रैक्ट प्रकाशित कर जनता का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। इस ट्रैक्ट में बताया गया है कि किस तरह हिंदी के साथ सौत का सा व्यवहार किया जा रहा है। प्रारम्भिक सरकारी स्कूलों में हिंदी का न पढ़ाया जाना, वयस्कों की शिक्षा के लिये हिंदी पुस्तकों का सर्वथा अभाव, ७ सितम्बर १९३८ को वरनाक्यूलर फाइनल परीक्षा के सम्बन्ध में शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर द्वारा जारी किया गया सरक्यूलर, (पहले विद्यार्थी हिंदी प्रथम भाषा के रूप में लेकर माध्यम उर्दू ले लिया करते थे, लेकिन इस सरक्यूलर ने यह सुविधा छीन ली है) डायरेक्टर की आज्ञा के बिना डिस्ट्रिक्टबोर्ड के स्कूलों में उर्दू छोड़कर हिंदी न ले सकना, पञ्जाब एसेम्बली में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए माननीय शिक्षा मन्त्री का यह कहना कि पञ्जाब में उर्दू ही शिक्षा का माध्यम है. (तथ्यों से यह बात कतई साबित नहीं होती) आदि बातों से स्पष्ट हो जाता है कि हवा किस ओर बह रही है। उक्त ट्रैक्ट में दिये गये आंकड़ों से पता चलता है कि वरनाक्यूलर फाइनल और मैट्रिक परीक्षा में हिंदी लेने वाले विद्यार्थियों की सँख्या क्रमशः बढ़ती जा रही है। ऐसी हालत में शिक्षा-विभाग का यह परम कर्त्तव्य था कि वह हिंदी लेने वालों को भी उतनी ही सुविधाएँ देता जो उर्दू पढ़ने वालों को दी जाती हैं। किन्तु सुविधाओं का देना तो दूर किनार उल्टी रुकावटें डाली जाती हैं। ऐसी दशा में हिन्दी प्रेमियों का विह्वल हो उठना स्वाभाविक है।

राष्ट्रभाषा-प्रचारक सङ्घ, पञ्जाब ने अपने ट्रैक्ट में जो मांगें पेश की हैं वे इतनी न्याय सङ्गत हैं कि कोई भी समझदार आदमी उनके खिलाफ एक शब्द भी नहीं कह सकता। अतः हम उनका हृदय से समर्थन करते हैं और शिक्षा विभाग के अधिकारियों से सानुरोध निवेदन करना चाहते हैं कि वे सङ्घ की मांगों को अविलम्ब स्वीकार कर अपनी उदारता और न्याय प्रियता का परिचय दें ताकि लोगों के दिलों में जो शङ्काएँ पैदा हो गई हैं वे दूर हो जाएँ। शिक्षा विभाग को समस्त शिक्षा विषयक प्रश्नों पर शुद्ध शिक्षा-दृष्टि से विचार करना चाहिए। किसी सम्प्रदाय या जाति विशेष से प्रभावित होकर काम करना उसे शोभा नहीं देता। शिक्षा विभाग को राज-नीति या साम्प्रदायिकता का अखाड़ा बनाना किसी भी हालत में वाँछनीय या हितकर नहीं हो सकता। अतः शिक्षा विभाग की ओर से हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थियों को भी वे सब सुविधाएँ मिलनी चाहिएँ जो उर्दू पढ़ने वाले विद्यार्थियों को मिलती हैं। किसी पर किसी की इच्छा के विरुद्ध कोई विषय लादना भयङ्कर अपराध है—यह बात मनोविज्ञान पुकार-पुकार कर कह रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्त में हम राष्ट्रभाषा प्रचारक सङ्घ के सदस्यों और समस्त हिंदी प्रेमियों से भी एक बात कहना चाहते हैं और वह यह है कि महज ट्रैक्ट प्रकाशित करने से ही उन्हें अपने कर्त्तव्य की इतिश्री नहीं समझ लेनी चाहिए। केवल एकाध ट्रैक्ट के छापने और वितरण करने से कुछ न बनेगा। आवश्यकता है पञ्जाब के कोने-कोने में आँदोलन करने की, माता-पिताओं को हिंदी का महत्व बताकर उन्हें इस ओर आकर्षित करने की और इस प्रकार लोकमत जागृत करने की। आज चारों ओर जनमत का बोल बाला है। जनमत के आगे दुनिया की बड़ी से बड़ी शक्ति भी टिक नहीं सकती। अतः हिंदी प्रेमियों को चाहिए कि वे अपने आंदोलन को तीव्र गति से तब तक जारी रखें जबतक कि वे अपने उद्देश्य में पूर्णतया सफल न हो जाएँ। अपनी उचित मांगों को मनवाने का आज की दुनिया में यही एक मात्र उपाय है।

बिल्ली रास्ता काट गई—

उस दिन जब महात्मा गाँधी बिरला भवन से वायसराय से मिलने जा रहे थे तब एक काली बिल्ली उनका रास्ता काट गई। लोगों ने इसे अपशकुन समझा। प्रसिद्ध २ पत्रों के कालमों में इस बात का उल्लेख पढ़कर और बिल्ली का चित्र देखकर हमारे आश्चर्य की कोई सीमा न रही। हमें यह महसूस हुआ कि आज बीसवीं सदी में भी हम भारतवासी शकुन और अपशकुन के पचड़े में पड़े हैं! एक तरफ तो हम दुनिया की सबसे ताकतवर शाहनशाहत से टक्कर लेने का दम भरते हैं और दूसरी तरफ एक बिल्ली के रास्ता काट जाने को अपशकुन मानते हैं। सदियों की गुलामी ने हमें रूढ़ियों, वहमों और भ्रमों के जाल में बुरी तरह फँसा दिया है। इतिहास से भी हम कोई शिक्षा लेना नहीं चाहते। क्या इतिहास पुकार-पुकार कर नहीं कह रहा कि इस मूढ़ वृत्ति ने ही हमारा घोर पतन किया है, हमें विदेशियों का दास बनाया है? मुहम्मदबिन कासिम आदि कई विदेशी हमलावरों की विजय का मुख्य कारण हमारी यही मूढ़ वृत्ति ही तो थी। ज्योतिषियों के कहने पर राजाओं ने हिम्मत हार दी, मैदान छोड़कर विजेताओं के सामने हथियार डाल दिए और खुशी २ उनकी आधीनता स्वीकार करली। दुःख तो यह है कि इस कदर अपमानित होने पर भी हमारी आंखें अभी नहीं खुलीं हैं, हमारे जीवन में क्रान्ति नहीं आई है। सदियों से पददलित होने पर भी हमने अपनी मूर्खताओं को नहीं छोड़ा, अपशकुनों के चँगुल से छुटकारा नहीं पाया। चोट पर चोट लगने पर भी हमने स्वतन्त्र रूप से सोचना नहीं सीखा, निर्भीकता से अमल करना नहीं सीखा और नहीं सीखा खम ठोक कर अपने ध्येय की ओर बढ़ते जाना। अभी तक यह बात हमारे गले नहीं उतरी कि मनुष्य परिस्थितियों का गुलाम नहीं बल्कि स्वामी है, वह स्वयँ अपना भाग्यनिर्माता है। लेकिन हमतो वही लकीर के फकीर और अन्धभक्त बने हुए हैं—कुसँस्कारों के चक्कर में गोते खा रहे हैं। जिसने जो कुछ कह दिया या लिख दिया उसी पर विश्वास कर लेते हैं अक्ल खर्च करने की मानो हमने कसम खा रखी है। समय आ गया है कि हम ऐसी निरर्थक बातों से अपना पल्ला छुड़ाएँ, अपनी रूढ़ी चुस्तता को छोड़ें। आत्मबल और आत्मविश्वास पैदा करें। मार्ग में आने वाली बाधाओं को चीरते हुए अपने अभीष्ट स्थान पर पहुंच कर ही दम लें। अगर हमने इस रहस्य को नहीं समझा, लकीर की फकीरी नहीं छोड़ी, तो स्वराज्य मिल जाने पर भी हमारे बन्धन ढीले नहीं होंगे। उस वक्त भी हम किसी न किसी के गुलाम बने रहकर सदा ठोकरें खाते रहेंगे। क्या अब भी हम अपनी मानसिक गुलामी को छोड़ने का साहस न करेंगे?

गाँधीवाद!

गाँधी सेवासङ्घ के मालिकँद: अधिवेशन में भाषण देते हुए "गांधीवाद" के सम्बन्ध में महात्माजी ने अपनी स्थिति का स्पष्टीकरण करते हुए ठीक ही कहा है कि "मैं नहीं चाहता कि गाँधीवाद बतौर एक मत के बना रहे। वस्तुतः गांधीवाद को नष्ट कर देना चाहिए। सत्य और अहिंसा ही अनश्वर हैं। यदि मेरी मृत्यु के बाद गाँधीसङ्घ या कोई और सँस्था मेरे नाम से एक मत के रूप में परिवर्तित हो जाती है और देश के अनेक मत मतान्तरों में उसकी भी गिनती बढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती हो तो इससे मेरी आत्मा को अत्यंत क्लेश होगा। अब भी मेरा कोई अनुयायी नहीं है। जिन्हें अनुयायी कहा जाता है वे सहयोगी और साथी हैं।" क्या अपने आपको गांधीवादी घोषित करने वाले उक्त सुनहरी विचारों को हृदयङ्गम करेंगे? क्या वे किसी व्यक्ति विशेष के अनुयायी न बनकर सत्य के अनुयायी बनने का साहस करेंगे?

परीक्षा का हाउ——

वैसे तो परीक्षा का हाऊ वर्ष भर ही किसी न किसी रूप में विद्यार्थियों को तङ्ग व परेशान करता रहता है, लेकिन परीक्षा-ऋतु में अर्थात जनवरी से लेकर मई तक तो इसका आतङ्क इतना बढ़ जाता है कि उसकी कल्पना करना भी कठिन है। परीक्षा के भूत का हमला इतना जबरदस्त और भयङ्कर होता है कि सारी उम्र इसका असर रहता है। प्रौढ़ावस्था हो जाने पर भी जब कभी इस भूत का ख्याल आजाता है तो हृदय काँप उठता है और आँखों के सामने अँधेरा छा जाती है। आजकल सायँकाल घूमते समय जब हम विद्यार्थियों की टोली को आँखें मींचकर पुस्तकें रटते हुए देखते हैं तो हमें उन पर तरस आता है और असह्य दुःख भी होता है। इस भूत का मुकाबला करने के लिए आज कल विद्यार्थियों को रटते-रटते होश नहीं आता। उन्हें दीन-दुनिया की कुछ भी शुध-बुध नहीं रहती। रात को भी परीक्षा के ही स्वप्न उन्हें सताते हैं। रात-दिन पुस्तकों से मगजपच्ची करते-करते उनका चेहरा पीला पड़ जाता है, गाल पिचक जाते हैं, मानों वर्षों के रोगी हों। परीक्षा के इस हाऊ ने विद्यार्थियों का जो शारीरिक, मानसिक और नैतिक ह्रास किया है, उसके विचार मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यह उन्हें कायर, बुजदिल और नामर्द बनाता है। वे इतने साहसहीन एवं विचारशून्य हो जाते हैं कि पढ़ने के बाद दफ़्तरों का दरवाजा खटखटाने के सिवाय और कोई काम कर ही नहीं सकते। परीक्षा का भूत उनकी उमङ्गों और भावनाओं को बुरी तरह कुचल देता है, और बुद्धि को कुण्ठित कर देता है और गुप्त शक्तियों को विकसित नहीं होने देता। फेल होजाने पर वे जीवन से निराश होकर आत्मघात जैसा निंदनीय कार्य तककर बैठते हैं। वर्तमान समाज में प्रमाण-पत्र के बिना किसी की पूछ नहीं होती। इसलिए सबको परीक्षा की निर्दय चक्की में पिसना पड़ता है। यह साबित हो जाने पर भी कि परीक्षा योग्यता की सच्ची कसौटी नहीं है, हम इस पद्धति से चिपट रहे हैं और इसे तिलाञ्जलि देकर कोई दूसरा तरीका निकालने का साहस नहीं करते। परीक्षा के हाऊ से अगर बालकों को बचाना है और उनका चरित्र निर्माण करना है तो इस प्राणघातक पद्धति को अविलम्ब सिर से पैर तक बदलना होगा।

एक विचित्र विवाह——

पुरुष और स्त्री में तो शादी सभी जगह हुआ करती है, लेकिन हमारे देश में तो देवों और पौधों में भी शादी हो सकती है। गत मास डेराइसमाइलखां की एक विधवा ने अपने ठाकुरजी की शादी तुलसी के पौधे के साथ की। बाकायदा बारात आई और सब रस्मो-रिवाज अदा किए गए। विधवा ने एक हजार घरों में मिठाई भेजी और ब्राह्मणों को खूब भोजन खिलाया। इस प्रकार इस विचित्र शादी पर हजारों का स्वाहा कर दिया गया। एक तरफ तो करोड़ों नङ्गे-भूखे दम तोड़ रहे हैं और दूसरी तरफ इस बेदर्दी से पानी की तरह रुपया बहाया जाता है। राम ही जाने इन भारतवासियों को कब समझ आयेगी?

नये राष्ट्रपति——

मार्च के तीसरे सप्ताह में होने वाले रामगढ़ काँग्रेस-अधिवेशन के सभापति मौलाना अबुलकलाम आजाद चुने गये हैं। आप १९२० से कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटी के सदस्य चले आ रहे हैं। कई बार जेल जा चुके हैं। आपकी देश-भक्ति सन्देह से परे है। आपका दृष्टिकोण बहुत विशाल है। पाठक यह पढ़कर हैरान होंगे कि आपने किसी स्कूल या कालेज में शिक्षा नहीं पाई है। आप बचपन से ही प्रतिभाशाली थे। अतः १७ वर्ष की उमर में ही आप 'वकील' अखबार के सम्पादक बन गए थे। आप हिंदू-मुसलिम एकता के कट्टर समर्थक हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इलाके की हलचल

—चूड़ीवाला ग्राम में पँ० मनीराम जी काफी समय से हिंदी-सँस्कृत पाठशाला चला रहे हैं। उनके उद्योग से कई युवकों को अच्छी योग्यता हो गई है। १५ फरवरी को सम्पादक 'दीपक' गाँवों में घूमते हुए वहां पहुँचे तो उनकी उपस्थिति से लाभ उठाकर चूडीवाला के पढ़े-लिखे युवकों ने अपने यहां एक 'युवक समिति' स्थापित की जिस का उद्देश्य युवकों में जागृति पैदा करना है। इसका मेम्बर बनने वाले युवक को शराब, मांस, अफीम, तम्बाकू आदि दुर्व्यसनों से बचना, गांवों में फैली कुरीतियों को बन्द कराने की कोशिश करना, घर का काम अपने हाथ से करना तथा नित्य जीवन-निर्माणकारी उत्तमोत्तम ग्रन्थों का स्वाध्याय करना आवश्यक है। पहिले ही दिन गाँव के कई युवक समिति के मेम्बर बन गए। (राजाराम वैद्य भूषण मन्त्री-श्री युवक समिति चूडीवाला द्वारा प्राप्त)

—गांव साबूवाना में कांग्रेस कमेटी साबूवाना की तरफ से २२ फरवरी की रात को एक सभा हुई। सबसे पहिले चलता पुस्तकालय साहित्य सदन के श्री सुखरामजी ने कौमी झण्डे का गीत गाया। फिर म० रूपराम ने अपनी भजन-मण्डली सहित कई भजन सुनाए। बाद में 'दीपक' सम्पादक श्री तेगराम ने देश व संसार की मौजूदा हालत, कांग्रेस का उद्देश्य देहातियों व गरीबों के लिए किये गये उसके उपयोगी कार्य, आजादी हासिल करने के उपाय आदि बातें लोगों को समझाई और उन्हें भारी तादाद में कांग्रेस में शामिल होने की अपील की। रात के ११ बजे तक सब देहाती ध्यान से सब बातें सुनते रहे। कांग्रेस कमेटी के प्रेज़ डैंट और कांग्रेस के उत्साही सेवक श्री काशीराम ने आगे से शुद्ध खद्दर पहनना, सब प्रकार के दुर्व्यसनों को न छूना व गरीबों पर अत्याचार होते देख उनकी मदद करना—आदि बातों की प्रतिज्ञा ली।

—गांव चूड़ी-वाला धन्ना के श्रीकेशवराम आर्य लिखते हैं कि इस इलाके के जमींदारों को ओडों से बहुत नुकसान पहुँच रहा है। वे टोली में लट्ठबन्द रहते हैं और एक दो खेत-रक्षक की परवाह न कर जबरदस्ती खेतों में भेड़ें चराते हैं। लोग परेशान हैं कि किस तरह इनसे खेतों का बचाव हो। देहातियों में इतना सँगठन नहीं कि ओडों से अपने खेतों की रक्षा कर सकें। वे एक जमींदार की फसल उजाड़ते हैं तो दूसरे देहाती उसकी मदद नहीं करते. वह अकेला ओडों से अपनी फसलका बचाव करने में असमर्थ है। न ही देहाती एका करके सरकार तक अपनी आवाज पहुँचा सकते हैं। इस प्रकार गरीब देहातियों का भारी नुकसान हो रहा है और अकाल पीड़ित जमींदारों के लिये ओड काल के समान भयङ्कर सिद्ध हो रहेहैं।

आवश्यकता !

—साहित्य सदन, अबोहर के चलता पुस्तकालय के लिए एक कार्यकर्ता चाहिये जो गांवों में घूमकर देहातियों को पुस्तकें पढ़ने को दे। उसकी योग्यता कम से कम हिन्दी मिडिल तक हो, उसमें किसी प्रकार का दुर्व्यसन न हो, सुधारवादी, ग्राम्य-जीवन में रुचि रखने वाला तथा पैदल सफर करने से घबराने वाला न हो। मन्त्री-चलता पुस्तकालय कमेटी, साहित्य सदन अबोहर (पञ्जाब) के पते से वेतनादि विषयक आवश्यक जानकारी प्राप्त करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-सदन समाचार

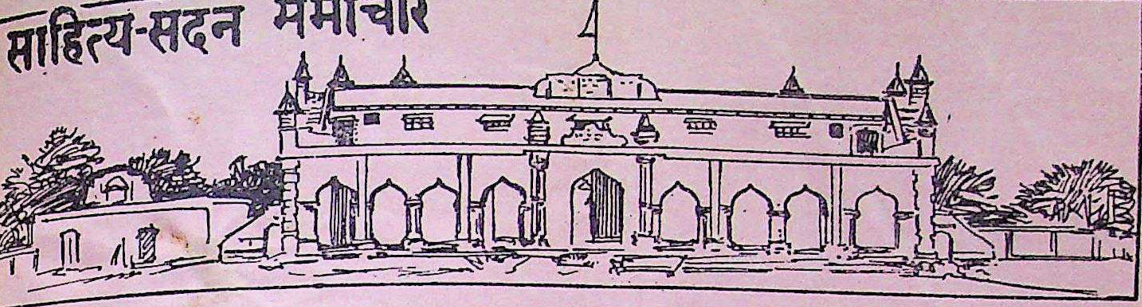

इस मास साहित्य-सदन के पुस्तकालय में नीचे लिखी पुस्तकों की वृद्धि हुई

प्रधान मन्त्री, महाबोधि पुस्तकालय बनारस द्वारा अमूल्य प्राप्त:—

१—मज्झिम निकाय	६)
२—विनयपिटक	६)
३—दीघनिकाय	५)
४—उदान	१)
५—धम्मपद	≡)

प्रधान मन्त्री, नागरी-प्रचारणी सभा काशी द्वारा अमूल्य प्राप्त:—

१—भाषा का प्रश्न	।।।)
२—बिहार में हिन्दुस्तानी	।)
३—हिन्दी बनाम उर्दू २ प्रतियां	
४—कचहरी की भाषा और लिपि	।।≡)
५—हिन्दुस्तानी का उद्गम	—)

श्रीबाबूराम जैन एम०ए०एल०एल०बी० जीरा निवासी द्वारा अमूल्य प्राप्य:—

१—क्रान्तिकारी जैनाचार्य	।।)

श्री मेलाराम वैश्य भिवानी जिला हिसार ने १० प्रतियाँ 'दान रहस्य' की प्रदान की।

बा०जगदीशराय धूड़िया अबोहर ने उर्दू 'प्रीतलड़ी' छः मास के लिये वाचनालय में जारी करवाई।

श्री स्वामी केशवानन्दजी ने नीचे लिखी पुस्तकें कलकत्ता, बम्बई आदि स्थानों से पुस्तकालय के लिये खरीदीं:—

गुजराती ग्रन्थ—

१—जमशेद, होम अने आतश—लेखक ऐरवदजीवन जी जमशेद जी मोदी

२—गाय बलदनी शीरीते चढ़ती करवी ?

३—जेल डायरी (राजगोपालाचार्य)

४—थिओसोफी (आत्मज्ञान ने लगती मुख्य बाबतोनो खुलासो)

५—आजना पारसीओ (तेमनो धर्म अने सँसार)

६—ज्ञान मन्दिर कृत श्री नारायण हेमचन्द्र

मराठी ग्रन्थ—

१—शिशु सँगोपनव चार शब्द

हिन्दी पुस्तकें—

१—महात्मा गांधी अभिनन्दन ग्रन्थ	२)
२—सचित्र वैज्ञानिक कहानियां	।≡)
३—आधुनिक कामशास्त्र	२।।)
४—मिस्र की राष्ट्रीय प्रगति	२)

ENGLISH BOOKS.

1—A System of Synthetic Philosophy (First Principles)

2—The Indian Year Book. 1937-38

3—The Life of Napoleon Bonaparte J. S. C. Abbott.

4—The Poetical Works of Longfellow.

5—Critical and Historical Essays. By Lord Macaulay.

6—Shakespeare's King Henry V.

7—Celtic-Myth-And Legend

8—Which Way to Liberation ?

9—Mytnology of the British Islands.

10—How to Cmpete With Foreign cloth.

11—Nutrition and Health.

12—Health and Longevity.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REGD. NO. L. 3700

LAHORE,
January 12th, 1940

The "Deepak" a Hindi monthly, has been brought to my notice and I have glanced through two of its issues for December 1939 and January 1940. It has been a welcome surprise to me to find that such an interesting and instructive journal has been published in the Punjab for the last five years. The journal strikes me as eminently suited to the requirements of schools where Hindi is taught as the first or second language. The language is simple and well within the comprehension of school students. It deals with a variety of topics, moral, social, educational, economic, hygienic and informative. The stories are another interesting feature. Short poems and articles on modern tendencies and inventions of Science make stimulating reading. The get-up is quite satisfactory and the annual subscription is very low (Rs. 2/8/—a year for 12 issues). I would strongly recommend the inclusion of the monthly in the list of approved magazines for use of schools in the Punjab.

G. L. Sethi,
Head-master, Dyal Singh High School,

* * * * *

LAHORE
January 17th, 1940

I have gone through the past issues of "Deepak" a monthly magazine and have been very well impressed with the snbject matter and get-up of the magazine. There is a variety of subjects dealt with, and a good many of the articles are specially suited for our school children. Keeping in view the fact that there is hardly any other monthly magazine for boys published in our province, I strongly recommend that the Deepak may be approved for the libraries of recognised schools.

Brij Lal,
Inspector, Arya Schools, (Punjab)

मुद्रक एवँ प्रकाशक—श्री [illegible] दीपक प्रेस, साहित्य सदन, अबोहर (पञ्जाब)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय 20. 8. 80

संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, बिहार, बम्बई, उड़ीसा व कोटा राज्य के शिक्षाविभागों द्वारा स्कूलों व पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत।

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

दीपक

चैत्र १९९६] साहित्य सदन, अबोहर [अप्रैल १९४०

सम्पादक—तेगराम

वार्षिक मूल्य २॥)
एक अंक का ।)

नई और पुरानी तालीम

पुरानी तालीम सिर्फ चन्द ऊँची श्रेणियों तक महदूद थी, नई तालीम सारे हिंदुस्तानियों को चाहे वे मजदूर हों या काश्तकार, सरकारी नौकरी करने वाले हों या रईस, अपने अञ्चल में लेना चाहती है। पुरानी तालीम लिखे-पढ़े और बाकी लोगों में फर्क पैदा कर देती थी; नई तालीम सबको एक-दूसरे के काम की कद्र करना सिखाएगी और खासकरके मजदूरों, काश्तकारों और मिहनत करके रोजी कमाने वालों की इज्जत बच्चों के दिलों में पैदा करेगी। पुरानी तालीम बच्चों को चुपचाप बैठने और अपनी कुदरती चुस्ती, चालाकी और हरकत करने की इच्छा को रोकने पर मजबूर करती थी। नई तालीम मदरसों में जिंदगी, रौनक और हरकत पैदा करेगी और इस तरह मदरसों को बच्चों के लिए दिलचस्प और खुशगवार बनाएगी।

—ख्वाजा गुलाम सैयदैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामगढ़-कांग्रेस की झांकी

रामगढ़—पहाड़ और जङ्गलों के बीच दामोदर नदी के किनारे छोटा सा गाँव है। कभी क्षत्रिय राजाओं की राजधानी भी रह चुका है। संसार भर में अधिकांश अबरख रामगढ़ के ही आस पास से जाता है। कोयले की खानें भी यहां बड़ी-बड़ी हैं। हिंदुस्तान भर में प्रायः यहां से कोयला जाता है।

मजहरपुरी—कांग्रेस के दिनों में रामगढ़ का नाम मजहरपुरी रखा गया था। सम्पूर्ण मजहरपुरी २४२००० वर्ग गज में बसा था। प्रतिनिधियों और दर्शकों के बैठने के लिए एक विशाल पण्डाल बनाया गया था जिसमें काफी आदमी बैठ सकते थे। झँडा चौक देखने लायक था। लग-भग दो लाख आदमी कांग्रेस सप्ताह में आए।

जलूस—राष्ट्रपति का जलूस इसबार मोर के सिङ्घासन पर निकाला गया।

सफाई—नगर की सफाई का सब प्रबन्ध गुजरात विद्यापीठ के आचार्य श्री रामदेव भाई के हाथ में था। आप इस विषय के विशेषज्ञ माने जाते हैं। ५ हजार पाखानों, ५०० पेशाब खानों, २०० कूड़ा खानों और अनेक नालियों आदि की सफाई का सब काम उन्हीं की देख-भाल में होता था।

पानी व बिजली—नगर वासियों को पानी देने के लिए दामोदर नदी के किनारे चार कुएँ खोदे गये थे। हरिहर नाले को बांध कर एक बहुत ही बढ़िया झील बना दी गई थी जहां कपड़े आदि धोये जा सकते थे। इस झील पर एक हजार रुपया लगा, किन्तु अब यह एक स्थायी चीज बन गई है। रोशनी के लिए दस मील लम्बे बिजली के तार लगाये गये थे। नगर के सब बाजारों में बिजली की रोशनी थी।

डाक व तारघर—एक कैम्प डाकखाना तथा तारघर मार्च से ही खोल दिया गया था। टिकट घर भी खुल गए थे। तार विभाग के दफ़्र से रोजाना ४ लाख शब्दों के तार भेजे गये। हर रोज १०० ट्रँक काल और ६०० स्थानीय काल भेजे जाते थे।

भोजनालय—भोजन के लिए एक आम भँडारा खोल दिया गया था जहां से अपनी २ रुचि के अनुसार भोजन खरीदा जा सकता था। एक वक्त के ।≈) लगते थे। एक सस्ता भोजनालय भी था जहाँ एक वक्त के ≡) ही लगते थे। प्रदर्शिनी विभाग के ग्राम्य उद्योग भोजनालय में एक वक्त के ।-) लगते थे। दूध २०० मील की दूरी से आता था और ।≈) सेर बिकता था। भोजनालय में एक समय में बैठ कर ५ हजार आदमी भोजन कर सकते थे।

(शेष पृष्ठ ४९ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

{ दीपक—वर्ष ५, संख्या ६, अप्रेल १९४० ई० }

	विषय	लेखक	पृष्ठ
१	विजयपथ पर (कविता)	—साहित्य भूषण श्रीराम शर्मा, 'प्रेम'	१
२	बुद्ध-वचन	—'सुमन' वात्सायन	२
३	संसार के कुछ मिथ्या विश्वासों का शोध	—श्री रामावतार विद्याभास्कर	३
४	डाल्टन योजना	—आचार्य हरभाई त्रिवेदी	५
५	काम की बातें	— सङ्कलित	८
६	युवकों का प्रश्न	—श्री सत्येन्द्र	९
७	युवक	—श्री बलवन्तसिंह	१२
८	मेरी जापान यात्रा	—'एक यात्री'	१३
९	क्रांति का आगमन (कविता)	—राम, हिन्दुस्तानी	१३
१०	भावना (कहानी)	—श्री दयाशङ्कर मिश्र	१८
११	जीवन-साथी का चुनाव	—श्री गिरिराज बी० ए०	२१
१२	निमन्त्रण (कविता)	—श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'	२४
१३	विद्यार्थियों से दो-दो बातें	—डा० रविप्रतापसिंह श्रीनेत	२५
१४	विधान-परिषद्	—श्री ठा० देशराज	२७
१५	निर्जीव-वाणी	—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी	३०
१६	नवयुग निर्माण में स्त्रियों का स्थान	—श्रीमती ताराबहन मोड़क	३२
१७	स्त्री गुलाम कैसे बनी ?	—सङ्कलित	३६
१८	बोडों की कहानी	—श्री शुकदेवनारायण	३७
१९	खादी गौरव (कविता)	—श्री 'विकल'	४१
२०	फिनलैंड की कुछ बातें	—'एक बाल बन्धु'	४२
२१	फुलवाड़ी	—सँकलित	४३
	१ मजहब रोटी है		
	२ बीसवीं सदी का अनपढ़ जमींदार		
	३ आज की सभ्यता ?		
	४ एक निकम्मा स्वप्न !		
	५ ग्रन्थालय		
२२	दीपक के प्रकाशक में	—(समालोचना)	४५
२३	सम्पादकीय नोट —		४८
	१ विश्व माता डा० मोन्टीसोरी		
	२ जनहित इसे कहते हैं !		
	३ हरिजनों को सुविधायें		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

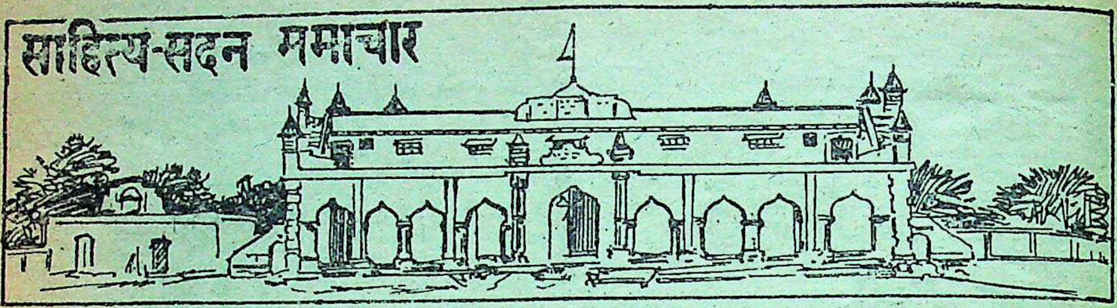

[कार्य विवरण मास फरवरी १९४०]

श्री मदनगोपाल धावन सब-इन्सपेक्टर इन्कमटैक्स, बहावलनगर द्वारा प्राप्त पुस्तकें:—

१. इन्कमटैक्स और मुश्किलात हिसाब उर्दू मूल्य २।)

२. सद्विचार वाटिका हिंदी की २० प्रतियां।

संग्रहालय

बाबू जगदीशराय, इम्पीरियल बैंक अबोहर, ने "William iv 1835" का सिक्का प्रदान किया।

बा० जगदीशराय धूड़िया ने भारतवर्ष का नक़शा शीशे में जड़वा कर दिया जिस में अलग २ प्रान्तों की पैदावार, जन्तु, पशु-पक्षी, दस्तकारी तथा मुख्य २ ऐतिहासिक स्थान दिखाये गये हैं।

श्रीमती शुभभद्रा सुपुत्री डा० ताराचन्द द्वारा निर्मित व प्रदत्त शीशे के चौखटेमें जड़े हुए 'खरगोश'।

श्री स्वामी केशवानन्दजी २५) के लगभग कीमत का नीचे लिखा सामान कलकत्ता बम्बई आदि स्थानों से लाए:—

बुद्ध भगवान की तस्वीर १, गुड़ियाँ एक दर्जन, चिड़िया २, मछलियां ४, मिट्टी के फल ६, मिट्टी के फल व मिठाई की दो तश्ततरियां, कटहल, केलों का गुच्छा, बकरी, गाय, बैठी गाय, भैंस, हरा नारियल, भैंसा गाड़ी, बकरे का सिर, जङ्गल में शेर और बाघ, केकड़ा, दर्जनों रङ्ग-बिरङ्गी तस्वीरें, पीतल की धूप दानी, लट्टू और चकरी, पैनस्टैंड, लकड़ी तथा लोहे के देशी क्लिप।

देहली के ऐतिहासिक दृश्यों के ३२ चित्र मूल्य ५)

दयानन्द इन्डस्ट्रियल स्कूल लाहौर की बनी एक फाइल। मू० २।)

मनीराम विद्यार्थी अबोहर द्वारा एक "हाफपैनी" प्राप्त।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मूल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २॥) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४) ।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जिनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढ़ाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा। ३ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेसे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख डाक खर्च भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं।

८—जिन सज्जनों को किसी मास का 'दीपक' न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछ ताछ करके बाद में हमारे पास लिखना चाहिये।

८—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें और बदले के पत्र. सम्पादक, 'दीपक' साहित्य सदन, अबोहर के पते से और मूल्य तथा प्रबन्ध विषयक पत्र मैनेजर 'दीपक' के पते से भेजने चाहिएं।

स्तंभ-सूची

१ जीवनन-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्योग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं। सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म बचे अरु धन बचे, रोग समूल नसाये।
यह मौका न चूकिये, असली धूप जलाये॥

मोतीराम सेठी दी

मशहूर धूप नं० १ (रजिस्टर्ड)

प्यारे मित्रो! आप लोगों के सुभीते के लिए शुद्ध और सस्ती धूप तैयार की गई है इसमें आयुर्वेदोक्त कपूरादि वर्ग की कई औषधियों का मिलण किया गया है इस वास्ते यह हमारी धूप अन्य धूपों से सुगन्धित व सस्ती भी है, जो वायु में रोगोत्पादक कीटाणु (कृमि) होते हैं उनको मारने व वायु को शुद्ध करने वास्ते अपनी शान की यह धूप एक है। यह धूप जङ्गली जड़ी बूटियों व शुद्ध पवित्र चीजों से तैयार की गई है हर एक भाई को इसका प्रयोग करना चाहिए। हमारे यहाँ पर अगरबत्ती बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है।

मोतीराम सेठी अबोहर

तैयार है! तैयार है!! तैयार है!!!

क्या?

कृष्ण छाप चूर्ण नं० १ (रजिस्टर्ड)

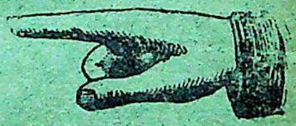

खरीदिये और खाइये

यह चूर्ण यथा नाम, तथा गुणों से परिपूर्ण है। इस चूर्ण की ३ माशा से ६ माशा मात्रा भोजन के बाद खाने से खाई हुई खुराक का समय पर ठीक रस बनता है। इसके अलावा अजीर्ण, सँगरहणी, जी मिचलाना, वमन आदि रोगों का नाश करता है। इसको हर मौसम में खाने से किसी नुकसान की सम्भावना न होगी। इसे वृद्ध, बालक, जवान और स्त्री पुरुष सेवन कर सकते हैं। यह जङ्गली जड़ी बूँटियों द्वारा आयुर्वेद के ज्ञाताओं की देख रेख में बनाया गया है।

नोटः—हमारे इस कारखाने में अगरबत्ती, धूपबत्ती हवन सामग्री बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है।

त्यार करदा मोतीराम अबोहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools in U. P., C. P., Bihar, Bombay, Orissa and Kotah State.

दीपक

{ हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की सम्पत्ति तथा पञ्जाब में राष्ट्रभाषा का प्रचार करने वाली प्रमुख सँस्था—साहित्य सदन, अबोहर का मुख पत्र }

सत्यम् :: शिवम् :: सुन्दरम्

सम्पादक—तेगराम

चैत्र १९९६ | वर्ष ५, संख्या ६ पूर्ण संख्या ५४ | अप्रेल १९४०

विजय पथ पर—

र०—साहित्यभूषण श्रीराम शर्मा, 'प्रेम'

शांत, शुद्ध ! अविचल, अरुद्ध !!
विजयी, अक्रुद्ध ! यह वरदानी !

शुभ सत्य-अहिंसा शस्त्र धार,
सँस्कृति से करने अमर प्यार ।
इस सर्वनाश की ज्वाला से,
मानवता को लेने उबार ।
चल पड़ा, आज—ले सावधान !—
यह सत्य-अहिंसा-विज्ञानी ॥१॥

जन-जन का शुभ वरदान लिए,
पावन-संस्कृति का दान लिए ।
मानवता का अभिमान लिए,
शुचि खादी का परिधान किए
चल पड़ा विजय-पथ पर गतिमय—
पैंतिस करोड़ का सेनानी ॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्ध-वचन

सभी प्रकार के पापों को न करना; शुभ कर्मों को करना; चित्त को परिशुद्ध रखना यही बुद्धों के उपदेश हैं।

किसी की निन्दा न करना; किसी का घात न करना और ठीक परिमाण में भोजन करना यही बुद्धों के उपदेश हैं।

इस श्रेष्ठ जीवन का उद्देश्य न तो लाभ-सत्कार की प्राप्ति; न प्रशंसा की प्राप्ति; न सदाचार के नियमों का पालन करना; न समाधि लाभ और न ज्ञानी बनना ही है। यह जो चित्त की अचल विमुक्ति है वही इस श्रेष्ठ जीवन का असली उद्देश्य है; वही सार है। उसी पर खात्मा है।

वैर से वैर कभी नहीं मिटता; प्रेम से ही वैर मिटता है। यही सनातन नियम है।

जिस प्रकार हवा कमजोर पेड़ को नाश कर देती है उसी प्रकार जो आदमी काम-भोग में रत है; जिसके हाथ, पैर, मन आदि उसके वश में नहीं हैं; जो भोजन का ठीक अन्दाज नहीं जानता और जो आलसी तथा उद्योगहीन है उसको मार (काम) नाश कर देता है।

जो असार चीज को सार करके और सार चीज को असार करके जानता है वह झूठे सङ्कल्प में लगा आदमी सार चीज को नहीं पा सकता।

जैसे अच्छी तरह न छाये घर में पानी चूने लगता है उसी प्रकार असयमित मन में राग घुस आता है।

मजहबी किताबों को कितने ही बार पढ़े; किंतु यदि आलसवश उसके मुताबिक काम न करे तो केवल दूसरे की गाएं गिनने वाले ग्वाले की तरह वह आदमी श्रमणपन (सन्यास) का भागी नहीं होता। किंतु यदि उन किताबों को पढ़े चाहे कम पर करे उसके अनुसार काम, तो वह अवश्य ही श्रमणपन का भागी होता है।

जो प्रिय है उसका साथ न करो और जो अप्रिय है उसका साथ तो कभी मत करो—क्योंकि जो प्रिय है उसका न देखना और जो अप्रिय है उसका देखना—ये दोनों ही दुखद होते हैं। इसलिए किसी को प्रिय न बनाना चाहिए। जिनके प्रिय और अप्रिय दोनों ही नहीं होते उनके दिल में किसी प्रकार की गाँठ नहीं होती।

जो अविनीत पुरुष हैं वे ही दूसरों की कोई बात सुनकर भड़क उठते हैं। मनुष्य को चाहिए कि अपने मन में कहने वालों के प्रति बिना किसी प्रकार का द्वेषभाव लाए कड़े वचन को सुन ले।

जो आदमी अपनी भलाई चाहता है उसको चाहिए कि दूसरों को न सतावे।

जो पाप छिपा रहता है वह सदा सटा रहता है। इसलिए अपने पाप को खोलदो—ताकि वह लगा न रहे। (सँग्रहकर्ता—'सुमन' वात्सायन)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार के कुछ मिथ्या विश्वासों का शोध

ले०—श्री रामावतार विद्याभास्कर, रतनगढ़, बिजनौर

बालक हमारे नहीं हैं—जिसका सारा जगत है, जिसके हम हैं, उसी के ये बालक हैं। मनुष्यता के नाते हम और हमारे समझे हुए बालक दोनों एक ही पिता के दो पुत्र हैं। मनुष्यता ही प्रत्येक मनुष्य की माता-पिता है। मनुष्यता मनुष्य समाज को कर्त्तव्य के बन्धन में बांधकर पालनीय का पालन करा लेती है।

मनुष्य समाज ही मनुष्य का सच्चा स्वामी है। वही मनुष्य की सुख सुविधा की चिन्ता रखता है। जब कोई माता-पिता किसी दुधमुहे बालक को छोड़ कर मर जाते हैं तब शेष समाज ही इन बच्चों को किसी न किसी रूप में अपनाकर इनका पालन करता है। अर्थात् प्रत्येक मनुष्य का अन्तिम उत्तर-दायित्व अपने अपने समाज के ऊपर रहता है। जो समाज हमारे मरजाने के पश्चात् भी हमारे समझे हुए बालकों को छाती से लगायेगा वही हमारे जीवनकाल में भी इनका यथार्थ स्वामी है। ऐसे समाज का यह उचित अधिकार है कि समाज के प्रत्येक मनुष्य को इसी समाज का सेवक बनाया जाय। हमारा समग्र जीवन तथा हमारे बालकों का लालन-पालन शिक्षण आदि सब कुछ सर्वपालक समाज को पुष्ट बनाने वाला होना चाहिये ना कि समाज के स्वार्थ की उपेक्षा कराने वाला। बालकों का लालन-पालन, शिक्षण आदि सब कुछ अपनी स्वार्थभरी दृष्टि से नहीं किन्तु समाज कल्याण की दृष्टि से ही होना चाहिये।

सामाजिक हितों की सुरक्षा किये जाने पर ही व्यक्तिगत सुविधायें उत्पन्न होती हैं। जिस जनसमाज में व्यक्तिगत सुख सुविधाओं के लिये मोह होता है उसका वह मोह सार्वजनिक हितों को देशी या विदेशी लुटेरों से लुटवाता है। सार्वजनिक हितों को तो लुटेरे चाट जाते हैं और व्यक्तिगत जीवन को महत्व देने वाले लोग लुटेरों के झूठे बरतनों की खुरचन से पेट का सहारा करके अपनी जून पूरी करते हैं।

इसलिये समाज के प्रत्येक विवेकी मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह बालकों को अपना न माने किन्तु उन्हें समाज की धरोहर मानकर उनकी ऐसी मानसिक सेवा करे कि वे देश के योग्य सेवक बनें अर्थात् वे बड़े होने पर देश में दैवी सम्पत्ति को बढ़ायें।

हम अमर हैं—हम मरेंगे यह भी एक विश्वव्यापी भ्रम है। बात यह है कि शरीर को उत्पन्न करने वाले नियम को जानने वाला मनुष्य इस शरीर के यथार्थ प्रयोजन तक न पहुँच कर इसको भोग करने का तुच्छ यन्त्र समझ कर इससे भोगों को सदा भोगते रहना चाहता है। परन्तु साथ ही सृष्टि की नियमावली ने उसे यह भी समझा दिया होता है कि यह शरीर अवश्य मर जाने वाला है। वह मृत्यु के इस अटल नियम को अपने भोग मार्ग का विघ्न समझता है। यही अज्ञानी के मृत्यु भय का स्वरूप है। अज्ञानी ने समझा है कि मैंने शरीर धारण किया है। परन्तु यह बात सबको माननी पड़ती है कि शरीर धारण मनुष्य की इच्छा से नहीं हुआ। शरीर धारण करने वाली वस्तु के स्वभाव ने मनुष्य को शरीर धारण कराया है। वही स्वभाव मनुष्य से इस शरीर को छुड़ाकर ले जाता है। न तो मनुष्य शरीर धारण करने में स्वतन्त्र है और न वह शरीर त्यागने में स्वतन्त्र है। इतना प्रत्यक्ष होने पर भी अज्ञानाधीन मनुष्य ने मरण को वृथा ही अपनी चिन्ता का विषय बना लिया है। जिस प्रकार जन्म स्वभाव है जीवित रहना स्वभाव है इस प्रकार जीवित का अन्त हो जाना भी स्वभाव है। शरीर से भौतिक आनन्द लूटने की दुराशा बाँधने वाले लोग स्वाभाविक मरण को स्वाभाविक न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे देकर उसे वृथा ही अपनी चिन्ता का कारण मान लेते हैं।

यदि मनुष्य शरीर रचना के इस उदात्त अभिप्राय को पहचान जाय कि मनुष्यदेह मनुष्यता का सम्भोग करने के लिये रचा गया है और पशुदेह पशुता का अनुभव लेने के लिये, तो फिर कोई चिंता ही न रहे। मनुष्य शरीर से पशुता का आनन्द चखने की इच्छा भी पूरी नहीं हो पाती, क्योंकि मनुष्य का मनुष्यता भोगकाल में भी उसे टोक-टोक कर उस भोग को निरानन्द अवस्था बनाती रहती है। मनुष्य की मनुष्यता के कारण भोग और अतृप्ति का नित्य साथ हो गया है। भोग से मनुष्य को तृप्ति नहीं होती। अर्थात् भोग से मनुष्य की मनुष्यता का तर्पण नहीं हो पाता। वह भोग के समय भी मनमें अतृप्तिरूपी काँटे चुभाती रहती है। मनुष्यदेह से पशुताका आनन्द लेने की इच्छा करना अपनी मनुष्यता का तिरस्कार करना है। इसीलिए मनुष्य को चाहिये कि वह मनुष्यता को लजाने वाले भावों पर विजय प्राप्त करके अपनी मनुष्यता को चरितार्थ करे।

यदि मनुष्य इस मनोदशा को अपनालेगा अर्थात् मनुष्य को शरीर से भौतिक सुख भोगने की दुष्ट अभिलाषा न रहेगी तो वह देखेगा कि संसार में मृत्यु भय नाम की कोई वस्तु कहीं नहीं है। मौत आयेगी पर तब वह भय का कारण बनकर नहीं आयेगी। तब वह मौत आने पर भी गर्व के साथ कहेगा कि मैं नहीं मरूंगा, मैं तो अमर हूँ, मैं अपनी अमरता का दिव्य आनन्द भोगने के लिए अनादि काल से अनन्तबार मरने जीने का कौतुक कर रहा हूँ और मैं मर कर भी अमर हूँ।

सत्य से हानि नहीं होती—सत्यानुकूल व्यवहार करने से कुछ न कुछ भौतिक हानि अवश्य होती है। जहां अपने अधिकार की रक्षा करना सचाई है, वहां दूसरे के उचित अधिकार को स्वीकार करना भी सचाई है। दूसरे का उचित अधिकार स्वीकार करने के समय कुछ न कुछ भौतिक हानि होती हुई दीखती है। वह हानि हानि नहीं है। वह तो जीवन का औचित्य है। वह तो मनुष्य की मनुष्यता है। वह तो मनुष्य के मन में पिया जाने वाला अमृतमय आध्यात्मिक आहार है। उसे हानि का नाम देना अपने जीवन का सर्वनाश करना और अपने जीवनरथ को कुपथ में हाँक देना है।

यदि मनुष्य भौतिक वस्तु के लोभ में फँसकर दूसरों के जीवनाधिकार को स्वीकार नहीं करेगा और सँसार की सब सम्पत्ति को अपने ही उपयोग में लाना चाहेगा तो वह सचाई से पतित हो जायगा। सँसार में जितने शरीर उत्पन्न होते हैं सबको जीवन का अधिकार प्राप्त होता है। किसी का जीवनाधिकार दूसरे के जीवनाधिकार का विरोधी न होना चाहिए। सबको सबके उचित जीवनाधिकार का विरोध अपनी ओर से छोड़ कर शान्ति प्राप्त करनी चाहिए। जहाँ भोग में आनन्द माना जाता है वहां भोग को स्वेच्छा से अर्थात् कर्त्तव्य बुद्धि की प्रेरणा से दूसरों के उचित अधिकार के रूप में त्याग देने से भी मनुष्य को अपूर्व आनन्द प्राप्त होता है। यों आपात दृष्टि से देखने में त्याग से भौतिक हानि दीखती है परन्तु वास्तविक दृष्टि से देखने में उस त्याग से मनुष्य को बड़ा भारी लाभ होता है अर्थात् त्याग से मनुष्य को लोकोत्तर असीम आनन्द प्राप्त होता है। उससे उसकी मनुष्यता का विकास होता है।

सच्चे मनुष्य तो मानसिक उत्थान को लाभ और मानसिक पतन को हानि समझते हैं। परन्तु संसारी मनुष्य के पास मानसिक पवित्रता नाम की वस्तु का सत्कार न होने से वह प्रत्येक बात को भौतिक प्राप्ति अप्राप्ति की कसौटी पर कसकर उसे हानि या लाभ कहता है। हानि लाभ की इस कसौटी से मनुष्य की मनुष्यता का या उसके उदात्ततम गुणों का कोई सम्बन्ध नहीं है। वस्तुतः भौतिक लाभ से हीन होनेपर भी सत्य से कभी कोई हानि नहीं होती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाल्टन योजना

ले०—आचार्य हरभाई त्रिवेदी, भावनगर

[१]

आचार्य हरभाई त्रिवेदी एक प्रसिद्ध अनुभवी शिक्षाशास्त्री व मनोविज्ञानवेत्ता हैं। शिक्षा में स्वातन्त्र्य के आप कट्टर समर्थक हैं। गत कई वर्षों से आप अपने विद्यालय में 'डाल्टन-योजना' का सफल प्रयोग कर रहे हैं। इसी योजना पर आपने एक अत्यन्त उपयोगी व विचारोत्पादक लेखमाला लिखी है जिसमें आपके अनुभवों का निचोड़ है। यह लेखमाला क्रमशः 'दीपक' में प्रकाशित होगी। प्रस्तुत लेख उसी माला का भूमिकारूप है।

—सम्पादक

वर्तमान युग परिवर्तन का युग है। मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आचार और विचार में परिवर्तन हो रहा है। ऐसी हालत में शिक्षा जैसा व्यापक क्षेत्र इस परिवर्तन से अछूता नहीं रह सकता था। शिक्षा किस प्रकार की होनी चाहिये और उसकी सिद्धि के लिए वर्तमान शिक्षण में किस प्रकार के परिवर्तन करने चाहिएँ आदि विचार आज चारों ओर सुनाई दे रहे हैं। इस विचारधारा ने हमारी शालाओं के स्थूल तथा सूक्ष्म अंगों को प्रभावित किया है। शाला में बालक अपना विकास अधिकाधिक किस रीति से कर सकता है, इस बात का विचार आज के शिक्षक गम्भीरता से कर रहे हैं। पढ़ने वाले बालक के विकास में शाला के मकान, आस पास के वातावरण तथा सामान के महत्व को अब समझा जाने लगा है। पढ़ने वाले के बौद्धिक और मानसिक विकास का विचार करने वाले शिक्षक नवीन शिक्षा पद्धतियों का अभ्यास करते हैं, उनपर अमल करते हैं और यथाशक्य खुद भी नवीन पद्धतियों की शोध करते हैं। यह सब विचार परिवर्तन का ही परिणाम है।

आज की शालाओं की स्थिति में जबरदस्त फेर-फार करने की जरूरत समस्त-शिक्षा जगत में महसूस की जा रही है। जहां देखो वहीं शिक्षा सम्बन्धी पुराने विचारों के खिलाफ विद्रोह की आवाज सुनाई देती है। जहां देखो वहीं पुरातन शिक्षा पद्धतियों को सड़ियल और हानिकारक समझा जाने लगा है। आज तक व्यवस्था और अनुशासन स्थापित करने के लिये भय, दण्ड या प्रतिस्पर्द्धा का उपयोग किया जाता था। आज तक विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिये केवल व्याख्यान पद्धति का उपयोग किया जाता था। आज तक शिक्षक अपने को अपने वर्ग में सर्वसत्ताधीश मानता था। आज तक शिक्षक और विद्यार्थी के बीच में प्रेम और सहानुभूति का अभाव था। किन्तु अब यह परिस्थिति बदलने लगी है। ऐसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारणा होने लगी है कि शाला में अनुशासन और व्यवस्था कायम रखने के लिये सज़ा, भय या प्रतिस्पर्द्धा बिलकुल पङ्गु साधन हैं। इतना ही नहीं अनुशासन और व्यवस्था के मूलभूत विचार ही बदल गए हैं। पढ़ाने के लिए व्याख्यान पद्धति अत्यँत साधारण और त्याज्य है, ऐसा अब शिक्षकों को मालूम होने लगा है। शाला की दिनचर्या में शिक्षक के बजाए विद्यार्थी को केन्द्रस्थान समझा जाने लगा है। शिक्षक अब समझने लगा है कि इसका काम विद्यार्थी पर सत्ता जमाना नहीं बल्कि उसके सर्वतोमुखी विकास में सहायता देना है।

इस विचार परिवर्तन के कारण शिक्षक और विद्यार्थी के सम्बन्ध में भी फेर फार हो गया है। शिक्षक विद्यार्थी को सहानुभूति से देखता है और उसके साथ प्रेम पूर्वक व्यवहार करता है। शिक्षक के दिल में प्रेम और सहानुभूति के जागृत होने से वह विद्यार्थी को पहचानने का खुद-ब-खुद प्रयत्न करता है। इस प्रयत्न को अधिकाधिक शास्त्रीय बनाने के लिए जान में या अनजान में शिक्षक को मनोविज्ञानवेत्ता बनना ही पड़ता है। इस प्रकार शिक्षा जगत के विचार और आचार में धीरे २ किन्तु दृढ़ता पूर्वक जबरदस्त परिवर्तन हो रहा है। इस परिवर्तन से आज शिक्षक का गौरव बढ़ेगा और विद्यार्थियों को लाभ होगा। शिक्षक और विद्यार्थी के संयुक्त बल से भावी समाज बदल जाएगा। इस समाज परिवर्तन में शिक्षक का भाग कितना होगा इसका अंदाजा तो कोई भावी समाज शास्त्री ही लगा सकेगा।

मानव समाज में होने वाले परिवर्तनों में सब से अधिक बल स्वातन्त्र्यवाद का है। परिवर्तन करने के लिये आज का मनुष्य स्वातन्त्र्य को ही एक प्रखर साधन के रूप में इस्तेमाल करता है। समाज में रहते हुए भी मनुष्य को अपने लिये स्वतन्त्रता की आवश्यकता है। इस स्वतन्त्रता को प्राप्त करने के लिए मनुष्य जमीन आसमान एक करने में भी नहीं हिचकिचाता। आज तो अपनी कुर्बानी करके स्वातन्त्र्य के तत्व को समाज में चिरस्थायी बनाने के प्रयोग किये जा रहे हैं। इन प्रयोगों से हमारी शालाएँ भी अछूत नहीं रह सकी हैं। शाला में पढ़ना स्वीकार करने पर भी, शाला के सामुहिक जीवन में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिये विद्यार्थी खूब जागृत हो गया है। नौकरी करने के लिये शिक्षण का धन्धा स्वीकार करने पर भी शिक्षक इस बात का ध्यान रखता है कि उसकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता कायम रहे। शाला के सामुहिक जीवन में दोनों का हिस्सा होने पर भी, दोनों मनुष्य के नाते स्वतन्त्र जीवन बिताने के लिये प्रयत्नशील हैं। आज के समाज के लिए स्वातन्त्र्यवाद एक नई चीज़ है। इसलिये कहीं कहीं सामुहिक जीवन में विषमता पैदा हो सकती है। व्यक्ति समूह की उपेक्षा नहीं करता किंतु वह तो समूह में अपना योग्य स्थान रखते हुए अपनी स्वतन्त्रता कायम रखना चाहता है। आज के समस्त समाज में समूह के साथ सङ्घर्ष में आए बिना व्यक्तिगत स्वतन्त्रता किस प्रकार कायम रह सकती है, इस समस्या का अभी तक ठीक-ठीक हल नहीं हो सका है। व्यक्ति को स्वातन्त्र्यवाद से दूर नहीं हटाया जा सकता। समूह को समूह के ढङ्ग से रहना है और इसलिये व्यक्ति से वह बहुत ज्यादा त्याग की आशा रखता है। इस प्रकार के समाज का निर्माण किस तरह किया जाए, इसका स्पष्ट ख्याल न तो आज व्यक्ति के पास है और न समूह के। किन्तु यह बात सही है कि व्यक्ति और समूह दोनों को स्वातन्त्र्य चाहिये। स्वातन्त्र्य की कल्पना में भी बहुत फेर-फार हो गया है। व्यक्ति स्वातन्त्र्य का जो अर्थ कल था वह आज नहीं रहा और इसी तरह सामुहिक स्वातन्त्र्य का अर्थ भी बिलकुल बदल गया है। स्वातन्त्र्य की बदली हुई व्याख्या के प्रति व्यक्ति तथा समूह दोनों वफादार रहें ऐसे सामुहिक तन्त्र की जबतक व्यवस्था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं की जाती तब तक व्यक्ति और समूह के बीच सङ्घर्ष जारी ही रहेगा। दोनों का मेल कराने के लिए एक ऐसी योजना बनानी पड़ेगी कि जिससे न तो व्यक्ति को कुछ जबरदस्ती करना पड़े और न समूह को ही किसी प्रकार की दमन नीति का सहारा लेना पड़े। स्वतन्त्र रीति से जीवन बिताने वाला व्यक्ति समस्त समाज का एक अनिवार्य अङ्ग है, इसलिये समाज के लिए उसे जरूरी त्याग करना ही होगा। इस सत्य को मनुष्य कभी भूल नहीं सकता। इसी प्रकार समूह भी इस सचाई को अस्वीकार नहीं कर सकता कि सामुहिक जीवन बीताते हुए व्यक्ति अपने ही तरीके से अपना विकास करने के लिए बिलकुल स्वतन्त्र है। इतना होने पर भी स्वातन्त्र्य व्यक्तिवाद और समष्टिवाद में अपना स्थान प्राप्त नहीं कर सका है।

इस परिस्थिति के कारण हमारी आज की शालाओं में चौंका देने वाले हालात देखने में आते हैं। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता कायम रखने के लिये, विद्यार्थी अनुशासन और व्यवस्था के नियमों को लात मारता दिखाई देता है और शिक्षक विद्यार्थियों तथा अधिकारियों के साथ सङ्घर्ष करता हुआ नजर आता है। जो नियम व्यक्ति के जीवन प्रवाह को सुनियंत्रित करने के लिये बनाये गये थे, जो नियम सामुहिक जीवन को अधिक सरल बनाने के लिए घढ़े गये थे, वही नियम आज व्यक्ति को बेड़ियों के समान लगते हैं और समूह के लिये व्यक्ति को दमन करने के अनिवार्य साधन जैसे बन गये हैं। शालाओं में शिक्षक और विद्यार्थी के बीच बार बार गलत फहमी होती रहती है। शिक्षक विद्यार्थी के प्रति प्रेम और सहानुभूति दिखाने के प्रयत्न में असफल होता हुआ दिखाई देता है। विद्यार्थी शिक्षक के प्रति सम्मान और प्रीति दिखाने में असफल होता हुआ प्रतीत होता है।

समग्र जीवन को सँस्कारी बनाने के लिए जिस स्थान से विद्यार्थी को ज्ञान पान करना है वही स्थान आज उसके लिये असह्य हो गया है। शाला का नाम सुनते ही अनेक प्रकार के पूर्वग्रह—पूर्वसँचित विचार इसके मनमें आ खड़े होते हैं। शिक्षक के विचारमात्र से उस के मन की भयङ्कर भावनाएँ जागृत हो जाती हैं। विद्यार्थी की अगर चले तो वह शाला और शिक्षक दोनों को भूतल से उखाड़ फैंक कर ही दम ले! विद्यार्थी को इन सब बातों के सच्चे कारणों की खबर नहीं है। उससे पूछा जाय तो वह केवल इतना ही कहेगा कि शाला और शिक्षक दोनों उसके व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य में बाधा डालते हैं।

शिक्षक की भी यही दशा है। शाला शिक्षक के लिये सरस्वती मन्दिर नहीं, किन्तु पेट का गढ़ा भरने के लिए मजदूरी करने का स्थान मात्र है। छुट्टियों के दिनों में प्रेम और भक्तिभाव से शाला—सरस्वती मन्दिर की ओर जाते हुए शिक्षक को किसी ने देखा है? किसी भी तरह पेट भरने के लिये मजदूर जिस जगह मजदूरी करने जाता है, वह जगह उसके लिए आराम या आश्वासन की जगह नहीं रह जाती। मजदूर उस जगह को तिरस्कार और घृणा की दृष्टि से देखता है। अधिकाँश में शिक्षक की भी यही दशा है। शाला शिक्षक के लिए विश्राम-गृह तथा ज्ञान-मन्दिर नहीं बनी है। नियत समय तक काम करने के बाद शाला में से भागने के लिए शिक्षक हमेशा तैयार रहता है। शिक्षक और विद्यार्थी का पारस्परिक सम्बन्ध का भी आज यही हाल है। शिक्षक इस भावसे उसके साथ बर्ताव नहीं कर सकता कि वह उसका गुरु है उसके भावी जीवन का निर्माता है। शिक्षक की राय में विद्यार्थी जड, अज्ञानी, तूफानी और बिलकुल ही कुसँस्कारी मनुष्य है। शिक्षक यह भी मानने से इन्कार करता है कि विद्यार्थी में कोई स्वाभाविक शक्तियाँ हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनेक प्रकार की जबरदस्त अप्रकट शक्ति रखने वाले विद्यार्थियों को शिक्षक दुर्गुणों का भण्डार समझता है। जहां ऐसी धारणा हो वहां शिक्षक विद्यार्थी में छिपी हुई शक्तियों का विकास करने में कैसे सहायता कर सकता है। ऐसी स्थिति में शिक्षक और विद्यार्थी अपने २ स्वातन्त्र्य के लिए लड़ें और एक दूसरे को परतन्त्र रखने और दबाने में ही अपने स्वातन्त्र्य की रक्षा और विकास मान बैठें तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। शिक्षक समझता है कि विद्यार्थी को दबा करही वह स्वतन्त्र रह सकता है। और विद्यार्थी मानता है कि शिक्षक का सामना करके ही वह अपनी स्वतन्त्रता कायम रख सकता है। इस बुरी समझ के कारण व्यक्तिगत तथा सामुहिक स्वातन्त्र्य का उदय नहीं हो सकता। इससे तो उल्टा स्वातन्त्र्य की समस्त भावना नष्ट होती है।

(क्रमशः)

काम की बातें

१—बालू को पानी में भिगोकर शरीर पर थोड़ी देर मलने और फिर नहा डालने से शरीर बिलकुल साफ हो जाता है और साबुन आदि की कतई जरूरत नहीं पड़ती।

२—बालू के दस-बारह छोटे ढूहे बना कर उन्हें पानी से तर करलें। फिर तीन-चार घण्टे के बाद उनपर तीन-तीन मिनट बैठिए। ऐसा करने से बवासीर के रोगी को बहुत लाभ होगा।

३—सादे भोजन के साथ दिन भर में सेर, डेढ़ सेर गाजर का रस पीने से एक्जिमा (चर्मरोग) ठीक हो जाता है।

४—कब्ज़ को दूर भगाने के लिए बेल बड़े काम की चीज है। बेल का गुदा पानी में मिला कर छान लेना चाहिए। पानी इतना ही मिलाना चाहिए जितने से गुदा छन जाए। आधपाव से पावभर की मात्रा काफी है। अमरूद और पालक भी कब्ज़ दूर करने के लिए बड़े उपयोगी हैं।

५—बालों को सोडे और साबुन के बजाए आँवले, दही, बेसन, काग़ज़ी नीबू, सरसों की खली आदि से साफ करना चाहिए। सँतरे के सूखे छिलके मलने से बाल साफ और लम्बे हो जाते हैं। पान का रस सिर में डालने से जूं साफ हो जाती हैं। सेन्ट मिला हुआ तेल काम में नहीं लाना चाहिए। बालों को सुन्दर बनाने के लिए मशीन से उन्हें घुंघराले बनवाना हानिकारक है।

६—दूध के अभाव में पिसे हुए बादाम और शहद मिलाकर पीना चाहिए। आधी छटांक बादाम, सवा छटांक शहद और छः छटांक पानी से एक गिलास बढ़िया शर्बत बन जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवकों का प्रश्न

ले०—श्री सत्येन्द्र, मथुरा

बालक काम चाहता है—वह उसके विकास के लिए उसकी अपनी अभिव्यक्ति के लिए बहुत आवश्यक है। युवक बालक से भी कहीं अधिक काम को उत्सुक है। उसे काम मिलना ही चाहिए नहीं तो वह अपना नाश कर लेगा। बालक को तो केवल अवरोध अनुभव होता है, उसकी तो सांस घुटकर रह जाती है, युवक तो अपने आलस्य-क्षणों को विष बना लेता है। वह अपनी कल्पनाओं का गढ़ बनाता है और चकनाचूर होते देखकर उसका भविष्य काला हो जाता है।

एक युवक नया उत्साह और नया जीवन लिए नए सङ्कल्पों के साथ संसार में प्रवेश करता है। उसके वे साथी जो पुराने पड़ गये हैं उसे आश्चर्य की दृष्टि से देखते हैं और उसके उत्साह को ठण्डा करने के लिए कुछ बाकी नहीं छोड़ते। वह युवक जैसे यह अनुभव करता है कि उसके सब ऐसे साथी उसका उपहास कर रहे हैं और कह रहे हैं—"भाई! चार दिन की चांदनी है। थोड़े दिन ही यह होनी है, फिर हम से बनोगे!" वह युवक अपनी गति मन्द कर देता है। वह समय से पूर्व ही वृद्ध हो जाता है। राष्ट्र में उससे जो गति पैदा होती वह नहीं हो पाती। समाज के पुराने पहलवान उसके ऐसा अण्टर लगा देते हैं कि वह औंधा पड़ा रह जाता है। राष्ट्र की कितनी शक्ति का अपव्यय होता है, राष्ट्र का कितना धन उस और उस जैसे अनेकों काहिलों को भोजन-वस्त्र देने में नष्ट हो जाता है। इतनी आर्थिक और शक्ति सम्बन्धी क्षति तो वर्तमान में ही हो जाती है—भावी उन्नति में वाधा पड़ने से, उसके अवरुद्ध हो जाने से जो हानि होती है उसका तो अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। वह युवक हृदय मसोस कर बैठ जाता है और बारबार यह पूछता है—'तो आखिर क्या करूँ? इस यौवन का अपमान क... संसार में कायरता का बीज बो दूँ।'

एक युवक घर में और समाज में पन... कर कुछ नवीन आयोजन उपस्थित कर... चाहता है। जर्जर रूढ़ियों के शिकार पुर... पापी उसके कुटुम्बी और रिश्तेदार उस...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने २ अहसान दिखाकर ऐसे दबाव डालते हैं कि वह बेचारा इस खुले जगत को एक कैदखाने से भी बदतर स्थान समझने लगता है। उसकी शांति सदा के लिए नष्ट हो जाती है। उसमें विद्रोह का भाव उत्पन्न होता है और वह विद्रोह उसके हृदय में ही तड़पकर उसीका खून सुखा डालता है। जो कल चमकने वाला था वह आज राख की ढेरी बन जाता है। वह ऐसी अवस्था में कभी २ आत्मघात को ही श्रेष्ठ समझने लगता है।

एक और युवक है। वह पुस्तकों के ढेर में कीड़े की भांति पड़ा हुआ है। एक चीज को बारबार पढ़ता है, बारबार दुहराता है, पर भूल जाता है। क्यों भूल जाता है? यह तो प्रश्न ही ऐसा है जो यहां न लिया जाय तभी अच्छाई है। भूल गया है पर फिर पढ़ रहा है। याद करना आवश्यक है। परीक्षा देनी है। अध्यापकों का भय भी साथ है—न जाने कितना उपयोगी समय वह उसमें लगाता है। पहले तो वह उसमें सफल नहीं होगा। वह याद नहीं कर सकेगा। फिर याद करके ही वह कौनसी उपयोगिता प्राप्त कर लेगा। उलटे यह आशङ्का किसी हद तक ठीक हो सकती है कि वह उसे यादकर जीवन से दूर हो जाएगा। पर युवक क्या करे? क्या करे आखिर वह?

इधर यह युवक यौवनावस्था का अर्थ प्रेम की अठखेलियां ही समझ रहा है। वह प्रेम के स्वर्ण स्वप्नों को निर्माण करने में ही दिन व्यतीत करता है और उन्हें देखने में रात व्यतीत करता है। यह जीवन की उपयोगिता से दूर पड़ा २ संसार में आलस्य के बीज बो रहा है। प्रेम ढलुआ समय का विलास मात्र है—वह प्रेम जिसने इस युवक को जकड़ रखा है और जो इसको जड़शून्य कर देगा। वह युवक यह सब कुछ नहीं समझता और उपन्यास पढ़ने का पाप करता हुआ उसी में से कुछ काल्पनिक पात्रों में अपनापन लुटाए प्रेम रट रहा है। वह दाल में नमक के परिमाण को न देखकर दाल को भूला जा रहा है।

यह युवक जो अभी मेरे पास आया है वह बहुत खर्च करके थोड़ा पढ़ चुका है पर बेकार है। वह इधर-उधर न जाने किन २ और कैसे २ झञ्झटों में फंसता चला जाता है। इसके पास कितनी अतिरिक्त शक्ति है—कितना तेज है पर वह किस काम आ रहा है? और यह एक और युवक, चश्मा लगाए, मुर्झाए मुँह, अव्यवस्थित गति से चला जा रहा है। इससे कभी आपने बातें अवश्य की हैं। यह कहता है—"जब से होश सम्भाला है मुझे शाँति नहीं मिली। मैं शांति चाहता हूं! पर मुझे कोई उचित मार्ग बताने वाला नहीं मिला। मैंने पहले एक भले मनुष्य पर विश्वास करके उसीके हाथों अपने को समर्पित कर दिया। आशा थी कि वह मेरे भविष्य का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यान रखेगा, पर उसने अपने वर्तमान स्वार्थ के लिए अपना आज्ञाकारी कुली, मजदूर या चेला बना लिया। मेरा भविष्य नष्ट हो गया। मैं आज भटक रहा हूं।" वह अब भी भटक रहा है। वह धन नहीं चाहता पर जीवन-निर्वाह चाहता है और फिर राष्ट्र को उठाने के लिए कार्य चाहता है। पर उसे ये दोनों ही चीजें नहीं मिल रहीं। देने वालों की कञ्जूसी, प्रजातन्त्र में 'अपने हों, अपने दल के हों चाहे आवारा हों, काहिल हों, अयोग्य हों' के सिद्धान्त पर काम करने वालों ने इस युवक की युवा उमङ्गों का खून किया है। इसे आगे नहीं बढ़ने दिया। यह शक्ति अब क्या देश—राष्ट्र के काम आ सकती है।

यह मजदूर युवक है। पैरों पर लड़खड़ा कर चलने के समय से ही इसे अपने पिता की सहायता करनी पड़ी है। होश आने पर कुटुम्ब के लिए भोजन जुटाने के लिए लग जाना पड़ा है। दरिद्रता ने इसे और इसके कुटुम्ब वालों को दिनरात परिश्रम करने के लिए बाध्य किया है। उसके पास साक्षरता का सन्देश लेकर कुछ सेवक जाते हैं। वह युवक कितना चाहता है कि वह कुछ पढ़ा हो और फिर अपने दिमाग को कुछ ऊँचा कर सके। पर, क्या उसके पास समय है? क्या वह रात्रि का भी थोड़ा समय ऐसे काम के लिए निकाल सकता है? वह एक प्रश्न की भांति उन सेवकों के सामने सिर झुकाये खड़ा रह जाता है।

यह भी तो एक युवक ही है। इसने अपने आसपास आंख फैलाकर यही देखा है कि जो दूसरों को छल-कपट, अत्याचार-अनाचार से शोषण कर अपना वैभव बढ़ा सकता है उसके एक लाख से भी अधिक अपराध क्षम्य हैं। वह भी उसी मार्ग पर चलने को उद्यत हो जाता है। जो शक्ति सीधे मार्ग से चलकर शांति, सुख और उन्नति का कारण बनती वही अपनी 'फसल' को सींचने में हजारों होनहारों के रक्त को चूसकर अपने चारों ओर गलितशक्ति मानवों के स्तूप खड़े कर लेती है, जिनकी दुर्गन्ध सारे राष्ट्र और नागरिक जीवन के स्वास्थ्य को सदा दूषित करती रहेगी। वह युवक कहता है—"तो मैं क्या करूँ? क्या मुझे वैभव के साथ रहने का अधिकार नहीं?" यह तो भाग्य की बात है। पर हाय रे युवकों के भाग्य!

रुकिए! आगे अब आप स्वयँ अपनी आंखों से आज के भारतीय युवकों को देखिये। उसकी हीनमुख श्री, पिचके गाल और धँसी आंखें अस्त-व्यस्त और टेढ़ी ललाट की मलिन रेखायें; देखिये, फिर ज्योति हीन नेत्रों से उसके हृदय में घुसकर उसकी अपनी महानता के सड़ते हुए शव को देखिए—और सोचिये आज भारत के इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवोत्थान के समय क्या 'युवकों का प्रश्न' साधारण प्रश्न है। और, क्या इनके साथ ऐसा ही मजाक होता रहना चाहिए जैसा अभी तक होता आ रहा है। और क्या उससे कुछ कल्याण हो सकता है?

सँसार में वैज्ञानिकों ने और विचारशीलों ने अनेकों शक्तियों को पालतू कर लिया है और उनसे मनमाना काम लिया है। इस युवक शक्ति को अभी कोई उचित मार्गदृष्टा नहीं मिला। इनकी यह शक्ति राष्ट्रीय सम्पत्ति है। इस शक्ति का बढ़ाना भी राष्ट्र का कर्त्तव्य है और इसका ऐसा उपयोग करना भी राष्ट्र का कर्त्तव्य है कि वह व्यर्थ व्यय न हो, वह सड़ न जाय, निष्प्रभ न हो जाय। भारत को--उसके युवकों को यह बात सबसे अधिक ध्यान रखने की है! उन्हें जहाँतक सम्भव हो अपनी शक्ति को अपव्यय से बचाना चाहिए। यदि उन्हें मार्गदृष्टा नहीं मिलता न सही। उन्हें सब कुछ सहन करते हुए भी अपने हृदय में 'रस' को बनाये रखने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। और किसी कवि की यह पंक्तियां याद रखनी चाहिएँ:—

Courage brother, do not stumble,
Though thy path be dark as night,
There is a star to guide the humble,
Trust in God and do the right!

युवक!

सँसार के इतिहासों के पन्ने खोलकर देखलो, युवक के रक्त से लिखे हुए अमर-सन्देश भरे पड़े हैं। सँसार की क्रांतियों और परिवर्तनों के वर्णन छांट डालो, उनमें केवल ऐसे युवक ही मिलेंगे, जिन्हें बुद्धिमानों ने 'पागल छोकड़े' अथवा पथ-भ्रष्ट' कहा है, पर जो सिद्धी हैं वे क्या खाक समझेंगे कि स्वदेशाभिमान से उन्मत्त हो कर अपनी लोथों से किले की खाइयों को पाट देनेवाले जापानी युवक किस फौलाद के टुकड़े थे? सच्चा युवक तो बिना झिझक के मृत्यु का आलिंगन करता है, तेज सङ्गीनों के सामने छाती खोलकर डट जाता है, तोप के मुँह पर बैठकर भी मुस्कराता ही रहता है, बेड़ियों की झनकार पर राष्ट्रीय गान गाता है और फांसी के तख्ते पर अट्टहासपूर्वक आरूढ़ हो जाता है। फांसी के दिन युवक का ही वजन बढ़ता है, जेल की चक्की पर युवक ही उद्बोधन मन्त्र गाता है, काल कोठरी के अन्धकार में धँसकर ही वह स्वदेश को अन्धकार के बीच से उबारता है। अमेरिका के युवक-दल के नेता पैट्रिक हेनरी ने अपनी ओजस्विनि वक्तृता में एक बार कहा था कि जेल की दीवारों से बाहर की जिंदगी बड़ी मँहगी है, पर जेल की काल-कोठरियों की जिंदगी और भी मँहगी है; क्योंकि वहां यह स्वतन्त्रता-सँग्राम के मूल्य-रूप में चुकाई जाती है।

ऐ भारतीय युवक! तू क्यों पड़ा गफलत की नींद में बेखबर सो रहा है? उठ, आंखें खोल, देख, प्राची-दिशा का ललाट सिंदूर-रञ्जित हो उठा। अब अधिक मत सो। सोना हो तो अनन्त-निद्रा की गोद में जाकर सो रह। कापुरुषता के क्रोड़ में क्यों सोता है? माया, मोह-ममता त्यागकर गरज उठ!

—बलवन्तसिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी जापान यात्रा

ले०—'एक यात्री'

जापान भ्रमण का विवरण देने से पूर्व उसके विषय में साधारण बातों का परिचय कराना आवश्यक प्रतीत होता है। इसलिये इस देश की कतिपय बातों का वर्णन पाठकों की भेंट किया जाता है।

देशविस्तार—इस देश का क्षेत्रफल २६०४९३ वर्गमील है जिसमें अनेक छोटे-बड़े द्वीप सम्मिलित हैं। सम्पूर्ण देश पहाड़ी होने के कारण भूमि का बहुत कम भाग कृषि प्रयोग में आता है। अतः सम्पूर्ण देश अपने शिल्पकार्य के लिये अन्य बड़े विदेशों के कच्चे माल पर आश्रित है। अनेक पहाड़ियों, खाड़ियों और नदियों के अतिरिक्त चारों ओर २७९४७ मील समुद्र की लम्बाई से घिरे होने के कारण प्राकृतिक दृश्य अति रमणीय प्रतीत होते हैं और देश वासियों को परिश्रमी बनने के लिये बाधित करते हैं। यह देश ४७ Prefective (सूबों) में विभाजित है। क्योटो यहां की प्राचीन राजधानी थी जो कि सन् १८६६ तक रही। यहां पर अब भी चहारदीवारी से घिरे हुए विशाल राजप्रासाद उपस्थित हैं और कभी २ महाराजा यहां पर आकर ठहरा करते हैं। कतिपय कारणों से विवश होकर सन् १८६८ में टोक्यो को राजधानी बनाया गया। अमरीका से आनेवाले यात्रियों के लिये यह प्रथम बन्दरगाह है। ओसाका जापान का सबसे बड़ा व्यापारिक और शिल्पीय केन्द्र है। कोबे, यूरोप अथवा भारतवर्ष आदि पश्चिमीय देशों से आने वाले जहाजों का द्वार है।

जल-वायु—यह देश ९.३ और १६.७ अक्षांश रेखाओं के मध्य उपस्थित है, अतः पहाड़ों और समुद्र से घिरा हुआ है। इसलिए वायुमण्डल सदैव वाष्प-पूरित रहता है। वर्षा भी साधारणतया अन्य देशों की अपेक्षा अधिक होती है। वर्षा ऋतु जून के मध्यभाग से प्रारम्भ होकर तीन या चार सप्ताह रहती है जिसकी प्रतीक्षा जापानी कृषक बड़े उत्साह से करते हैं। ग्रीष्म ऋतु में उत्तर-पूर्वीय भाग में प्रशान्त-महासागर के निकट वाले स्थानों की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है। परन्तु शीत ऋतु में इसके विपरीत जौलाई और अगस्त मास में गर्मी का प्रकोप होता है।

मन बहलाव—प्रत्येक विदेशी यात्री के लिए और मुख्यतः भारतवासियों के लिये यह देश अति रमणीय प्रतीत होगा। वैसे तो प्रति समय कहीं न कहीं और कोई न कोई मन बहलाव की सामग्रियाँ और प्राकृतिक दृश्य मनुष्य को आकर्षित करते रहते हैं परन्तु सबसे अच्छा समय बसन्त ऋतु है जब कि चारों ओर पुष्प खिले होते हैं जिसके कारण पर्वतीय दृश्य मनोहर प्रतीत होते हैं। जापानी बाग वाटिकाएँ सँसार भर के नवीन पुष्पों का भण्डार मानी जाती हैं। बसन्त ऋतु में भूमि अनेक रङ्गों के चेरी के पुष्पों से आच्छादित रहती है जोकि भिन्न २ समय पर खिलते हैं। चेरी के अतिरिक्त अनेक प्रकार के अन्य पुष्प होते हैं जिनमें से अधिक प्रसिद्ध Plumb blossom, Rapeseed, Globe flower, Peach blossom, Wisterias, Azlias, Grises, Crysenthemum और कमल आदि होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Crysenthemum के पुष्पों को अनेक रङ्ग देने और उनके लगाने की कला के लिये जापानी प्रसिद्ध हैं। यद्यपि ग्रीष्म ऋतु कष्टदायक अवश्य होती है परन्तु मनुष्य अपना समय पर्वतों, झरनों और नदियों के किनारे जाकर भली प्रकार व्यतीत कर सकता है। साधारणतया अनेक पहाड़ियां घास और वृक्षादि से आच्छादित रहती हैं और अनेक प्रकार के झरने बहते रहते हैं जिनमें से कोई शीत कोई उष्ण, कोई सोडावाटर अथवा अन्य प्रकार के रासायनिक द्रव्यों से मिश्रित होते हैं जिनमें स्नान करने का विशेष प्रबन्ध होता है। कभी पर्वतीय दृश्य देखना कभी प्राकृतिक स्रोतों में स्नान करना कभी झीलों में नाव पर बैठ कर सैर करना आदि ऐसे कार्य हैं जिनसे मनुष्य अपना मन बहला सकता है। समुद्र तट के निकट छोटी २ नवकाओं का चलाना अथवा समुद्र जल में स्नान करना भी आमोद प्रमोद की सामग्री है।

कृषि—देश पर्वत और नदियों से विभाजित होनेपर भी भूमि का जो भाग कृषि-योग्य प्रतीत होता है इस कार्य में लाया जाता है। यहाँ का मुख्य फसल चावल बताई जाती है। इसके अतिरिक्त अन्य अनाज, फल, तरकारियाँ और पुष्प आदि भी अधिक मात्रा में उत्पन्न किये जाते हैं। घर छोटे होते हुए भी प्रत्येक के साथ छोटी छोटी वाटिकायें लगाई जाती हैं। योग्य भूमि का प्रत्येक भाग किसी न किसी प्रकार की कृषि-उपयोग में लाया जाता है। यहां के कुछ फल अधिक बड़े और रसदार होते हैं। प्रत्येक ग्राम में फल, तरकारियां आदि अच्छी मात्रा में बोई जाती है। जिन ग्रामों में बांस की वस्तुएं बनाई जाती हैं वहां बांस भी उगाये जाते हैं। कहीं रेशम के कीड़ों को पालने के लिये शहतूत की छोटी २ झाड़ियां होती हैं। छोटी बड़ी नदियां लग-भग देश के अधिक भाग में पाई जाती हैं जिनसे पानी लेने के लिये प्रबन्ध किया हुआ है। अनेकों स्थानों में नदी के झीलों पर पहिये लगाकर खेतों को सींचने की प्रथा है। इन्हीं नदियों से आबादी के निकट Hydro electric plant लगा कर वहीं के लोगों को अथवा अन्य जगहों में बिजली देने का प्रबन्ध किया गया है। इससे घरों को प्रकाश पहुँचाया जाता, छोटी २ मशीनें चलाई जातीं और कहीं २ ट्रामवे आदि भी इसी बिजली के द्वारा दौड़ाई जाती हैं। कृषि नियम के अनुसार प्रत्येक वस्तु सीधी नालियां में अथवा मेंडों पर लगाई जाती हैं। रेल यात्री खेतों पर दृष्टि डाले तो अनेक प्रकार की लाइनें खेतों की सजावट और भूमि का सदुपयोग प्रतीत होता है। यद्यपि भूमि थोड़ी और खेत छोटे २ होते हैं फिर भी उनके चारों ओर अथवा बीच में होकर साइकिल अथवा लारियों की सड़कें बनी होती हैं। कृषि की उपज को लाने अथवा ले जाने के लिये मोटर लारियों का प्रबन्ध है। आमोद प्रमोद, दैनिक आवश्यक वस्तुओं की दुकानें प्रायः प्रत्येक ग्राम में मिलती है। यह सब कुछ होते हुए भी वहां का कृषकवर्ग भारतीय कृषकवर्ग से किसी भी प्रकार अधिक सन्तुष्ट दशा में प्रतीत नहीं होता। जिसका कारण भूमि कर और लगान का अधिक होना ही कहा जा सकता है। अपने खेतों की उपज कुटुम्ब निर्वाह के लिये पर्याप्त नहीं होती। जब तक सभ्य शासकगण और पूंजीपति दरिद्रों की ओर ध्यान नहीं देते अथवा उनके दुःखों से पीड़ित होने की श्रद्धा जब तक उनके हृदयों में उत्पन्न नहीं होती उस समय तक ऐसा होना स्वाभाविक ही है। अबतक तो सँसार के सम्पूर्ण देशों में यही प्रथा कार्य कर रही है और जब तक दरिद्रों की आह में तीव्रगति प्राप्त न होगी और उनका सँगठन समुचित रूप से इतना बलवान न होगा कि शासकवर्ग और पूँजीपतियों की अतृप्त इच्छाओं का मर्दन कर सके उस समय तक इस प्रकार के अन्याय होते ही रहेंगे।

गृह निर्माण—जापान जैसे सभ्य और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्नत देश के विषय में कदाचित विचार किया जाता होगा कि यहाँ के निवासी विशाल भवनों में निवास करते होंगे, उनकी बनावट भी महलों की सी होती होगी, परन्तु यहां की गृहनिर्माण कला अद्भुत है। बहुधा गृह लकड़ी के बने होते हैं जो कि छोटे होते हुए भी कई मञ्जिलों के बनाये जा सकते हैं। इनमें अधिक भाग शीशे लगे हुए तख्तों का होता है। यद्यपि बड़े २ शहरों में पत्थर, ईंटों और Reinforced concrete के विशाल भवन भी हैं जिनकी बनावट विदेशी ढङ्ग की होती है।

कदाचित लकड़ी के बने हुए गृहों का नाम सुनते ही यह प्रश्न किया जाय कि यह तो सामयिक होते होंगे परन्तु यह बात नहीं। निक्को क्योटो और नारा आदि स्थानों में लकड़ी के बने हुए बौद्ध मन्दिर जो कि लगभग एक सहस्र वर्ष के होने पर भी अब तक अच्छी दशा में हैं। जापान देश के चारों ओर समुद्र बीच में पहाड़ियां और ज्वालामुखी पर्वत हैं। इसलिए इस देश में प्रायः भूकम्प, समुद्र जल प्रकोप (Typhoon) आदि आते रहते हैं। बड़े २ मकान इनका प्रकोप सहन नहीं कर सकते और अधिक हानि होने की सम्भावना होती है। इसीलिये लकड़ी के भवन निर्माण की प्रथा प्रचलित है। आधुनिक प्रथा के अनुसार Reinforced concrete के भवन भी अब प्रायः निर्माण किये जा रहे हैं जो कि लकड़ी की अपेक्षा अधिक मूल्यवान होते हैं। लकड़ी के मकान बनाने का ढङ्ग पढ़कर आश्चर्य होगा कि ऐसे मकानों में बड़े २ कार्यालय किस प्रकार चल सकते हैं। बात यह है कि जिस कार्य के लिये जैसे मकान की आवश्यकता होती है उसका चित्र बनाकर लकड़ी के चौखटे बना लिये जाते हैं। इनको समुचित गहराई की नींव बनाकर जो कँक्रीट अथवा रोड़ी की होती है खड़ा कर दिया जाता है। जहां दीवार की आवश्यकता होती है वहाँ इन चौखटों के बीच की खाली जगह में पतली २ लकड़ियां भर कर टट्टी सी बनादी जाती है जिसको Sound Proof समझा जाता है। इसके दोनों ओर मिट्टी से लेस कर सीमेंट का पलस्तर कर दिया जाता है। रङ्गादि इच्छानुसार सीमेंट में मिला दिया जाता है, इस प्रकार अच्छी भली दीवार बन जाती है। जहां दीवारों की आवश्यकता नहीं होती वहाँ चौखटों में कहीं लकड़ी के तख्ते कहीं शीशे कहीं कपड़ा अथवा कागज लगा दिये जाते हैं। छतें लकड़ी के तख्तों की होती हैं। देश की परिस्थिति और जलवायु के अनुसार इस प्रकार के मकान ही सस्ते और अच्छे होते हुऐ प्रतीत होते हैं। वर्षा अधिक होने के कारण मकान की सबसे ऊपरी छत्त प्रायः खपरैल की बनी हुई होती है। उनमें आग लगने की अधिक सम्भावना इसलिये नहीं कि प्रायः कार्य यहां पर गैस अथवा बिजली द्वारा होते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हम जैसे मनुष्यों को इस प्रकार के मकानों में रहने से भय लगता है परन्तु थोड़े समय में स्वभाव बन जाता है और किसी प्रकार की असुविधा नहीं रहती। इन्हीं मकानों में बड़े बड़े कार्यालय चल रहे हैं और सरकार की ओर से कोई ऐसे कठोर नियम बने हुए प्रतीत नहीं होते कि कार्यालयों के लिये जब तक मकान मुख्य बनावट के न हों स्वीकृति नहीं दी जा सकती। मकान के छोटे से द्वार में प्रवेश करने से कभी इसका स्वप्न भी नहीं हो सकता कि इसके अन्दर कोई विशाल कार्यालय होगा। ये इस प्रकार के हैं जिनमें एक ओर भोजनालय, दूसरी ओर पाखाना और पेशाब आदि की जगह, एक छोटा सा दफ़्तर, आगे बड़ी फैक्टरी, रात को सोने के लिये उसी जगह चटाइयां बिछाकर उनके ऊपर गद्दे बिछाकर शयनागृह बना लीजिये। इस देश में दरिद्र और धनी सब भूमि पर ही सोया करते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि ये घर दिन में फैक्टरी और रात में बिश्राम शाला का काम देते हैं। यह है उनकी सादगी और यह है उनका जीवन। इन्हीं कारणों से आज उन लोगों ने सस्ती से सस्ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुएँ बनाकर संसार को चकित कर दिया है। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं कि वहां बड़े बड़े कार्यालय हैं ही नहीं। ऐसे अनेक विशाल कार्यालय हैं जहाँ पर सहस्रों प्राणी कार्य करते हैं और उनकी बनावट नियम पूर्वक होती है।

होटल, इन, रैस्टौरां आदि—सब बड़े २ शहरों में विदेशी ढङ्ग के होटल जहां विदेशी ढङ्ग के भोजन और रहने की सुविधाएँ प्राप्त हैं बने हुए हैं। साधारणतया अन्य देशों के समान होटल ही शहर में सबसे बड़ा ऊँचा विशाल भवन कहा जा सकता है। लगभग प्रत्येक होटल में खटोले ऊपर ले जाने और नीचे लाने के लिये लगे हुए हैं। यात्रियों को प्रत्येक प्रकार का आराम देनेका प्रयत्न किया जाता है। प्रत्येक अच्छे होटल में कलेऊ और चाय का व्यय मिलाकर आठ येन से दस येन प्रतिदिन तक होता है, कहीं कहीं पन्द्रह येन भी होता है। बहुत से होटल ऐसे भी हैं जहां २॥ अथवा तीन येन से भी काम चल जाता है। भोजन के लिये या तो होटल में अथवा अन्य स्थान पर प्रबन्ध करना पड़ता है। भोजन प्रायः मांसाहारियों के लिये ही होता है, इसलिये शाकाहारियों को असुविधा रहती है और कहीं २ भूखा भी रहना पड़ता है। होटलों में पांच येन से दस येन तक प्रायः भोजन का मूल्य होता है। मितव्ययी यात्री कम में भी निर्वाह कर सकते हैं। बीअर और शराब पीने का स्वभाव लगभग सब जापानियों का है। बीअर की बोतल ।=) आने में और चावल आदि से बनी जापानी शराब, जिसको साके कहते हैं, की बोतल ।≡) में मिलती है। विदेशी शराब भी हर स्थान पर मिल जाती है। फल प्रायः सब भोजनों के साथ होते हैं। शाकाहारी यात्री कुछ फल, डबलरोटी, चावल, मक्खन, दलिया, दूध, चाय, किशमिश और सेब आदि से भरी हुई रोटियों से अपना निर्वाह भले प्रकार कर सकता है। पर यह सब वस्तुएँ प्रत्येक स्थान पर प्राप्त नहीं होतीं।

मांस मछली आदि पकाने का ढङ्ग जापानियों का भिन्न होता है। परन्तु अँग्रेजी ढङ्ग से पकाहुआ मांस आदि भी मिल जाता है। प्रत्येक होटल और रैस्टौरां में जापानी भोजन सुगमता से मिल जाता है जिसमें कुछ चावल, मछली, तरकारी आदि होती है। इसका मूल्य छः आने के लगभग होता है। हरी चाय अथवा कॉफी प्रत्येक जापानी पुरुष स्त्रियां प्रयोग करती हैं। इनमें से किसी में दूध और मीठा आदि नहीं डाला जाता, परन्तु कुछ लोग अब थोड़ा सा दूध और मीठा प्रयोग करने लगे हैं। लिप्टन आदि चाय का भी कुछ प्रचार है जो कि माँगने पर मिल जाया करती है। दूध का प्रयोग कम होता है। होटल का व्यय बहुत अधिक होता है। ठहरे हुए किराये के अतिरिक्त छदाई अर्थात् टीमनी देने की प्रथा भी प्रत्येक होटल में है जो कि बिल का दशांश होती है। यह रकम होटल वाले को बिल के साथ देनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त कहीं २ होटल के सेवकों को और भी देना पड़ता है। बहुधा होटलों में काम करने वाली लड़कियां और स्त्रियां ही होती हैं। वे ही भोजन, चाय आदि लातीं, कमरों को साफ करतीं और बिस्तरा आदि बिछाती हैं। किसी २ होटल में अँगरेजी समझने वाले कुछ कर्मचारी होते हैं। वे भी अच्छी तरह नहीं समझ सकते, टूटेफूटे गोरशाही शब्दों में ही समझाना पड़ता है इसीलिए विदेशी यात्रियों को किसी २ होटल में कुछ असुविधा रहती है। एक बात अवश्य है कि अधिकतर धोखा देकर लूटने की प्रथा नहीं है और न चोरी का भय। मूल्यवान वस्तु भी किसी को उठाने का साहस नहीं होता! सम्भव है कहीं छोटे २ होटलों में ऐसा होने की आशङ्का हो।※

※ लेखक की शीघ्र ही साहित्य सदन, अबोहर से प्रकाशित होने वाली पुस्तक से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रान्ति का आगमन !

र०—राम, हिन्दुस्तानी

जागृत हो हे भारत मां के लाल ! निशा बीती जाती ।
भारत के आंगन में प्राची से अरुणिम आभा आती ।
फटे वस्त्र टूटी कुटिया थी रूखे सूखे कण खाए ।
कभी स्वप्न में भी क्या तूने मनुजोचित भोजन पाए ?

स्वान समान हुआ अपमानित
और कलङ्कित निज भू में ।
उठ रे ! अब नवयुग आया है
चल इसमें सुख से घूमें ।

शोषण किया निरन्तर तेरा तेरे श्रम का फल छीना ।
उनका जीवन सुख से बीता कठिन हुआ तेरा जीना ।
उनके बङ्गले बने नवाबी लगे हुए जिन पर पहरे ।
कह दे उन्हें—क्रान्ति आती है अब जग जाएँ वे बहरे ।

धनी गरीब न रह पाएंगे
गिर जाएंगी दीवारें ।
निज श्रमका सब फल खाएँगे
अब न रहेंगी बेगारें ।

धनी-गरीब अनय के सूचक आ अब इनको सम करदें ।
दुःख से पूर्ण देश यह तेरा इसमें सच्चा सुख भरदें ।
धनी नहीं सोने के निर्मित निर्धन बने न मिट्टी के ।
धनिकों के फिर क्यों रहने दें भूमि आदि सब पर ठीके ?

इन ठीकों के बल पर सारे
धनी व्यर्थ बैठे खाते ।
कह दें उन्हें करें वे भी श्रम
व्यर्थ पड़े जीवन जाते ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

भावना

ले०—श्री दयाशंकर मिश्र

सावन का महीना, आधी रात से पानी बरस रहा था। वह जहाँ अपनी खाट खींच कर ले जाती, वहीं पानी की बूँदें 'टपटप' कर पुराने टूटे फूस के छप्पर से निकल-निकल कर उसके ऊपर गिर पड़तीं। वह आखिर उठकर खाट के एक सिरे पर बैठ गई। बैठे हुए मुश्किल से एक मिनट भी नहीं हुआ होगा किसी ने दर्वाजे पर साँकल खटखटाई। उसी 'खटखट' में 'आई पिताजी'! कहती हुई वह उठी और दर्वाजे की तरफ चल दी। 'शीला'! आवाज आई। लेकिन यह तो पिताजी की आवाज नहीं है, आज आने को भी तो वे नहीं कह गये थे। पानी बरस रहा था, पानी के साथ हवा ने भी जोर पकड़ लिया। हवा के झोंके में बहती हुई आवाज आई—'शीला! दरवाजा खोलो' मानो कोई परेशान होकर पुकारता हो। सिर पर धोती ठीक करके, कच्ची दीवाल के सहारे २ पानी की बूँदों से बचती बचती छज्जे के नीचे से वह दर्वाजे तक जा पहुँची। थोड़ी देर रुकी फिर होले से साँकल को कुंडे पर से हटा दिया और किवाड़ को थोड़ा सा खोल कर एक तरफ सिमटती हुई सी खड़ी हो गई। जाने कौन हैं ये किवाड़ खुलते ही आगन्तुक पानी-कीचड़ से भरे जूतों को चौखट से पटकता हुआ, अन्दर दहलीज में आ खड़ा हुआ। दोनों आमने सामने थे - अपरिचित, अनजान।

दोनों खड़े थे चुप चाप, कौन पहिले बोले? क्या बोले? तब थोड़ी देर बाद—'क्या इस मकान में एक शीला और उसका भाई मनोहर नहीं रहते?" आने वाले ने साहस करके कहा। "नहीं उनकी यहां से बदली हो गई।" आप इस घर में कब से रहती हैं? "आठ महीने हो गये" फिर दोनों चुप। सामने आँगन में पानी के बड़े-बड़े बुलबुलों को जो बार २ बनकर पानी पर तैरने लगते और तब एक क्षण में ही फूट जाते, वह देख रहा था और बेचैनी से कुछ निर्णय करने की कोशिश कर रहा था। तब, "भले आदमी ने यहां से जाने की खबर भी न दी" कहता हुआ छाता तान कर चलने का उपक्रम करने लगा। लेकिन जाये किधर से, दरवाजा तो बन्द है और किवाड़ों से सटी हुई—जाने कौन? खड़ी हैं, हट न जायँ एक तरफ को। तब तक "उनसे आपको कोई जरूरी काम था, रिश्ते में वे मेरे चाचा लगते हैं, मैं उनको लिख दूंगी' सामनेवाली ने कहा। 'नहीं' 'यूंही आगया था गाड़ी यहाँ चार घण्टे ठहरती है, सोचा था मिलता जाऊँगा। बनारस में उनकी छोटी बहिन शीला को मैंने पढ़ाया था"। आपही ने शीला को पढ़ाया था। आपके बारे में वह अक्सर बातें किया करतीं थीं, अभी तो गाड़ी में देर है अन्दर चलिये। शरमाती-शरमाती बोली। 'आइये' - 'अच्छा'- आनेवाला घर वाली के पीछे पीछे चल दिया। आकर खाट पर एक किनारे बैठ गया। "आपका नाम क्या है?" झिझकते हुये उसने पूछा 'शीला"। "शीला ही" दुहराते हुए उसने देखा छोटी सी गिरस्ती, इनी गिनी चीजें बड़े सलीके से सजाई गई हैं, सामने दीवाल के ताक में 'महात्मा' जी की तस्वीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्खी है, कायदे से बहुत ढँग से। फिर उनकी तरफ देखा जो छप्पर वाले खम्भे के सहारे खड़ी दोनों हाथों से खादी की धोती सारी ताकत से निचोड़ रही थीं। 'जाने कौन हैं ये, जाने किस तरह से यह घड़ियां इनके साथ आ मिलीं। कभी स्वप्न में भी न सोचा था, उस बच्ची शीला की जगह इन दूसरी अपरिचित शीला से साक्षात्कार होगा, उनका अतिथि बनूंगा और उन्होंने मेरे बारे में कुछ सुन भी रक्खा होगा।"

❀ ❀ *

मनुष्य अपने अन्दर बन्द होकर नहीं रह सकता, विशेष कर जब उसे किसी कारण वश 'किसी' से मोह हो जाता है तब उस किसी' से अपने मन की बात कहने, उसको सुनने और उसके बारे में कुछ जानने के लिये वह 'बेचैन' हो उठता है और शायद यही भावना उस बेचैन' को एक दिन लेखक, कवि, चित्रकार बना देती है।

एक दिन जब अनजान में सतीश उस अपरिचित शीला से जा मिला था, वह धोती निचोड़ कर जब एक कटोरी में भुने हुए चने और एक गुड़ की डली लेकर आ खड़ी हुई थी, तब शीला के चेहरे पर छाई हुई उदासी—इतनी गहरी जिसे देख कर सतीश का मुँह सूख गया था—ने 'अतिथि' को 'आत्मीय' बना दिया था। उस दिन जैसे-तैसे वह मुट्ठी भर चने कण्ठ से उतार चला आया था। फिर अपने मित्र मनोहर से उसने पत्र द्वारा जाना था कि शीला के पिता रामनगर स्टेट के राजा द्वारा निकाले जाकर उसके मकान में रह रहे हैं; और आज-कल यू० पी० में काँगरेस का कार्य कर रहे हैं। वे लोग किसी दिन अच्छे पैसे वाले थे उसी जमाने में जब राजनैतिक हत्याओं और षड्यन्त्रों द्वारा मातृभूमि को आजाद करने की कसमें खाकर युवक-समाज सिर से कफन बांध निकल पड़ा था, उसके भैया को भी आजन्म कारावास की सजा हुई थी, सारी जमींदारी जब्त करली गई थी और फिर कालेपानी में ही उनकी तपेदिक से मौत हुई थी। यह शीला बाल विधवा है।

शीला के बारे में उसने जितना ही अधिक जाना, उसके प्रति सतीश की हमदर्दी बढ़ती गई। एक दिन उसने शीला को पत्र लिखा था. बहुत दिनों तक उत्तर का इन्तजार किया था। फिर निराश होकर उसे भूलने की कोशिश की थी. लेकिन वह उसे कभी न भूल सका था। दिनों-दिन वह उदास, पीला चेहरा उसके सामने अधिक स्पष्ट और निकट होता गया। उसने 'एक मुरझाया फूल' चित्र बनाया 'मनोव्यथा' 'आंसू' 'अपरिचिता' आदि शीर्षकों से अखबारों में कवितायें लिखीं। लेकिन 'शान्ति' न मिली।

* ❀ *

उस बर्सात के दिन जब सतीश 'नमस्ते' कह कर जाने लगा था, तब वह दर्वाजे पर खड़ी डब-डबाई आंखों से उसे एक टक देखती रही थी। उसी दिन उसे खूब रोना आया था दो चार दिन उदास रही थी। फिर सतीश का पत्र आया था— पिता जी से छिपाकर उसे पढ़ा था। जब आकाश में बादल घिर आते तब पत्र पढ़ २ कर आंसू बहाये थे। फिर 'पर पुरुष का पत्र' को पाप' माना था. 'पुनर्जन्म' का ध्यान आया था, उसे फाड़ फैंकने के लिये उङ्गलियाँ उठी थीं। किन्तु उसे फाड़ फैंकने की शक्ति उसकी उङ्गलियों में कभी न आई थी। एक दिन भगवान के सामने उस पत्र को कभी न पढ़ने की कसम खाई थी, सिर धुना था, प्रायश्चित्त किया था क्योंकि वह बाल विधवा थी।

* ❀ ❀

आज की दुनिया में, जहाँ प्रेम का मतलब वासना और उपकार का अर्थ स्वार्थ हो वहाँ, सतीश के अन्दर इस प्रेम और उपकार से भिन्न एक दूसरी भावना काम कर रही थी वह शीला जैसी सरल और एक शहीद की बहिन के लिये 'कुछ' करना चाहता था। उसके बारे में 'कुछ' जानना चाहता था, ऐसा कुछ' जो उदास शीला के निम्नतर स्तर में छिपा हो, जिस कुछ' को एक बेटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी मां के सिवाय किसी के सामने प्रगट नहीं करती। उस 'कुछ' को पुरुष सतीश जानना चाहता है।

एक दिन इसी भावना से, जब वह गर्मी की छुट्टियों में घर लौट रहा था, उसे शीला के दर्वाजे पर दूसरी बार खड़ा कर दिया। जेठ की गर्म दुपहरिया शीला सामने वाले उसी छप्पर में पँखे से मुंह ढाँपे लेटी थी, हवाके लिए दर्वाजा खोल रक्खा था रोते २ उसकी आंखें सूज गईं और पीला चेहरा सुर्ख हो उठा था। महायुद्ध में कांग्रेस राज्य समाप्त हुआ और उसके पिताजी पिछले ही रोज गिरफ़्तार कर लिये गये थे। जब किसी के पैरों की आवाज सुनी तो शीला लेटी-लेटी पँखा हटाकर एक हाथ से रूखे बालों को एक तरफ करती हुई देखने लगी—'अरे! यह तो उसी दिन वाले हैं' दिल में 'धक' से हो गया। धोती सँभालती हुई उठी और जमीन पर सिर झुका खड़ी हो गई। दोनों खड़े रहे। एक ने कहा, बैठ जाइये? दूसरा बैठ गया। पँखा लाकर पास रख दिया।

*   *   *

कठिनाइयों में मनुष्य चिल्लाता अधिक और रोता कम है, किन्तु नारी रोती अधिक और चिल्लाती कम है। वह सदा से रहस्यमयी रही है। भारतीय नारी ने देना अधिक सीखा है और लेना कम। जिस दिन मन्दिर की देवी उस पर चढ़ाये गये पकवानों व फल फूलों को खाना शुरू कर देगी शायद उसी दिन उसकी पूजा, प्रतिष्ठा और भक्तों के हृदय में रहने वाली श्रद्धा का अन्त हो जायगा।

सतीश उदासी में छिपे हुए जिस 'कुछ' के रहस्य को जानने के लिये गया था, उसे न जान सका। पुजारी ने देवी पर कुछ फल-फूल चढ़ाने चाहे थे किन्तु अस्वीकार करके छुआ तक नहीं उस स्वाभिमानिनी देवी ने! सतीश उस 'कुछ' से अनजान और लौटाये गये फल-फूलों के साथ एक ऐसी मनोव्यथा लेकर लौटा था जो उसे खाये जा रही थी। चुपचाप, खोया हुआ सा वह स्टेशन की तरफ भारी पैरों से चला जा रहा था।

आधी मील दूर जब गाड़ी ने 'सीटी' दी तो शीला 'चिहुंक' सी पड़ी, जाने उसे कैसा होने लगा। उसका गला भर आया, तब ऊपर के दांतों से नीचे का होंठ दाब-दाब कर हौले-हौले रोने लगी, हिचकी बँद गई और तब रुक-रुक कर सांस आने लगा।

आदिम काल से उस जगत के सूत्रधार को समझने, देखने के लिये मानव ने योग किये, भक्त बनकर नाचा, गाया, किन्तु आज तक निश्चय पूर्वक कौन कह सका है कि वह कैसा है? क्या है? फिर भी मनुष्य दुख में उस अज्ञेय और अदृष्टा की मदद के लिये रोता है, 'पाप' करते समय डरता है। उसे खुश करने के लिये 'पुन्य' करता है और फिर इस 'पाप' 'पुन्य' को भी किसने जाना और समझा है? जब एक देश का, एक जमाने का 'पुन्य' दूसरे देश और दूसरे जमाने में 'पाप' माना जाता हो।

शीला ने सतीश के उस 'आत्मीयता और सहानुभूति' से भरे हुये पत्र को पढ़ना अपने सँस्कारों से 'पाप' माना था, और आज भी 'पाप' मान रही थी। किन्तु आज वह पत्र पढ़ेगी, पापनी बनेगी, दूसरा लोक भी बिगाड़ेगी, उसका हृदय विद्रोही हो उठा था। वह उठी और पत्र बक्स से निकाला—पढ़ते-पढ़ते जब—" ...बन्धु, सखा, हिन्दू, आत्मीय कुछ भी मानकर इतना तो बताओ शीला! आप इतनी उदास क्यों थी ....?" पत्र में पढ़ा तो उसका वह मूक रुदन फूट पड़ा। सारा पत्र आंसुओं से भीग गया, तब पत्र उसकी पतली उङ्गलियों से छूट कर जमीन पर गिर पड़ा। उसकी आँखें ताक में रक्खे हुए 'महात्माजी' के चित्र पर अटक गईं। "बापू! तुम भी तो देवता हो! किसी के लिये रोना 'पाप' है? मैंने कौन सा 'पाप' किया था जो भगवान ने मुझे बाल-विधवा बनाया? फिर जीवित रखकर किसी के लिये रोने का यह भाव भी हृदय से क्यों नहीं मिटा दिया जो भाव आज मुझे तिल-तिल कर जला रहा है। कौन है मेरा सहारा! बापू! हरिजनों के लिये तुमने आश्रम बनाये, सत्य और अहिंसा के पुजारियों के लिये सँस्थाएँ बनाईं, रुपया इकट्ठा किया। किन्तु महात्मा! उनके लिये भी कभी सोचा जिनके खेवटिया तुम्हारे भरोसे पर! राष्ट्र के सहारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर !! अपने उन आश्रितों को मझधार में छोड़कर आजादी के दरिया में डूब मरे थे, जो मेरी तरह असहाय, रोती, कलपती इसी तरह, इसी पल जाने कितने घरों में भूखी-प्यासी आँसुओं के घूँट पी रही होंगी। रोते-रोते वहीं जहां सतीश पैर रक्खे खाट पर बैठा रहा था, औंधे मुँह गिर पड़ी। देवता ! तुम मेरा दुःख पूछना चाहते हो, मेरी मदद करना चाहते हो ? भोले देवता ! विधवा का 'आत्मीय' बनने पर समाज तुम्हारे माथे पर 'झूठे कलङ्क' का टीका न लगा देगा ? फिर प्रार्थना, फरियाद, विनती, रोष किसी के लिये जगह नहीं रही, आज उसे खूब रोना है, आज वह अपने आंसुओं में ही डूब कर मर जाना चाहती है।

थोडी देर बाद वह निश्चिन्त थी, उसका रुदन निःशब्द। टिमटिमाते दीपक के धुंधले प्रकाश में ऊपर 'सत्य की खोज में' वाले महात्माजी का चित्र था और नीचे 'शान्ति की खोज में' वह बाल-विधवा !

जीवन-साथी का चुनाव

ले०—श्री गिरिराजजी बी०ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

["जीवन साथी की पसन्दगी एक ऐसी गम्भीर समस्या है कि जिसके हल हो जाने से मनुष्य सदा सुखी रहता है और अपने ध्येय की ओर तेजी से बढ़ता जाता है"। इस समस्या का हल इस लेख में पढ़िए।

—सम्पादक]

वैज्ञानिक अन्वेषणों के कारण आए दिन नई २ समस्याएँ खड़ी होती जा रही हैं। पुराने रीति-रिवाज उनको हल करने में कोई मदद नहीं देते बल्कि उल्टा रुकावट डालते हैं। आजके बढ़ते हुए शिक्षा-प्रचार के ज़माने में जबकि शिक्षणालयों के दरवाजे लड़के और लड़कियों—दोनों के लिए खुले हुए हैं, यह बात विचारणीय है कि जीवन के साथी की पसन्दगी किस तरह से की जाय जिससे कि वह जीवन के विकास और उसके उद्देश्य की पूर्ति का साधन हो। पुरातन पन्थी इस विषय की चर्चा करना शिष्टाचार के खिलाफ समझते हैं। इसलिए इस मामले में अकसर चुप्पी ही साधी जाती है। मगर वास्तव में यह प्रश्न इतना महत्वपूर्ण है कि जितना भी बारीकी के साथ इसपर गौर किया जाय उतना ही नौजवानों के लिए लाभकारी होगा। नहीं तो जैसा कि 'दुशमन'* में गीता का जीवन टूट गया वैसे ही पढ़े-लिखे युवक और युवतियां जीवन से हताश हो कर गीता की तरह 'मरता क्या न करता' के अनुसार धोखा-फरेब, छल-कपट से काम लेकर अपना उल्लू सीधा करने की कोशिश करेंगे और जीवन के आनन्द से वञ्चित रह जाएँगे। इससे न तो माता-पिता का और न सन्तान का जीवन सुखमय बन सकेगा। पुरानी विवाह-पद्धति पुरानी हालतों में कितनी भी उपयोगी साबित हुई हो, मगर आजकी परिस्थिति में किसी ऐसी पद्धति को स्थान नहीं हो सकता जिसमें कि लड़के-लड़की को अपना जीवन साथी चुनने की सुविधा न हो।

माता-पिता सन्तान को शिक्षा देना अपना गौरव समझते हैं, मगर जब शादी का सवाल आता है

* फरवरी १९४० का 'दीपक' देखिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब मनमानी करते हैं और चाहते हैं कि उनके बच्चे गुड्डे गुड़ियों की तरह चुप रहें और वे (माता-पिता) मनमानी किया करें। एक ऐण्ट्रेंस पास लड़की की शादी एक धनी लड़के से, कि जिसने कभी स्कूल की शक्ल तक नहीं देखी, करदी गई और लड़की को ससुराल में ऐसे ढङ्ग से रहना पड़ा जिस तरह से कि वे बेचारी आजतक न रही थी। एक एम० ए० ने अपनी शादी के बारे में माता-पिता से कहा—'जिस से आप मेरी शादी करना चाहते हैं वह मेरे उस जीवन में जैसाकि मैं व्यतीत करना चाहता हूँ किसी प्रकार की सहायक न बनकर उल्टा रुकावट डालेगी।" इसका उसे यह जवाब मिला कि "क्या हमने तुम्हें पढ़ा-लिखाकर इसलिए बड़ा किया है कि तुम इतने मुंहफट हो जाओ और हमारी राय की कुछ भी इज्जत न करो।" इसी तरह एक पढ़ी-लिखी लड़की ने अपने माता-पिता से कहा—"आप मेरी शादी अभी न करें और जिसको आपने मेरे लिए तजवीज किया है कम से कम उससे तो कतई न करें।" पिता ने जवाब दिया—"अगर तुम ऐसा नहीं करोगी तो मैं गला घोट कर मर जाऊंगा।" यह बनावटी बातें नहीं हैं, सब सच्ची घटनाएं हैं। मैं लेख के लम्बा हो जाने के भय से और उदाहरण नहीं देना चाहता अन्यथा ऐसी घटनाओं की आज कुछ कमी नहीं है।

जिनकी यह दशा है उनको मेरी सलाह है कि वे धैर्य से काम लें और जो कठिनाइयाँ उनके अनुभव में आई हैं उन सबसे अपनी सन्तान को बचायें और उनके लिए जीवन का मार्ग सुगम और सरल करें। बुजुर्गों के इसप्रकार के बर्ताव का परिणाम यह हुआ है कि पुरानी सँस्कृति से उल्टा चलना ही आजादी है, यह खयाल युवकों के दिमाग में घुस गया है। आंख मींचकर हरएक पुराने रीति-रिवाज के खिलाफ हो जाना बन्धनमुक्त नहीं करता बल्कि एक कैदखाने से निकालकर दूसरे कैदखाने में डाल देता है और 'चूल्हे से निकल कर भाड़ में' वाली कहावत को चरितार्थ करता है। अगर नौजवानों पर तेजरफ़्तारी का दोष लगाया जावे तब बुजुर्गों को अदब से बताना होगा कि तेजरफ़्तारी के जमाने में कीड़ी की चाल चलकर आप अपनी सन्तान को जीवन का सही और ठीक मार्ग दिखाने में कामयाब नहीं हो सकते। इसलिए बुजुर्गों का यह फर्ज बन जाता है कि आजकी परिस्थिति में वे अपने अजीजों को गुमराह होने से बचायें। उन्हें अपने बच्चों को बताना चाहिए कि शादी का असली मकसद क्या है और किस तरह से उसे वे हासिल कर सकते हैं।

जहाँ लड़के-लड़की की सुनाई नहीं होती वहाँ क्या होता है, यह बात तो हमने देखली। अब जरा उस स्थिति पर भी विचार करलें जहां कि लड़के-लड़की को पसन्दगी की आजादी होती है। चूँकि दोनों पढ़े-लिखे होते हैं इसलिए शिक्षा का सवाल तो उठता नहीं; केवल सौंदर्य, शारीरिक-गठन और बनाव सिंगार पर ही पसन्दगी का दारोमदार रहता है। वे समझते हैं कि सौंदर्य ही जीवन को आनन्दित और सुखमय बनाता है। किसी चीज का आकर्षण हमारे लिए उसी समय तक रहता है, जबतक कि हमने उसे प्राप्त नहीं कर लिया है। उस चीज के हमारे पास आते ही उसकी विशेषता जाती रहती है। जबतक किसीने एम० ए० की परीक्षा पास नहीं की है उस समय तक उसे वह बड़े ऊँचे दर्जे की पदवी लगती है। मगर पास करते ही वह मामूली चीज हो जाती है और दूसरी उपाधियों की इच्छा होने लगती है। बिलकुल ऐसा ही हाल मनुष्य के सौंदर्य का है। शुरू २ में एक-दूसरे के प्रति खूब प्रेम प्रदर्शित किया जाता है, मगर कुछ समय के बाद यह हालत नहीं रहती। अगर आपस में जीवन सम्बन्धी विचारों में समता नहीं है तो जीवन नीरस सा होने लगता है। अगर आर्थिक स्थिति अच्छी है तो जीवन को रसिक बनाने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए वे क्लब आदि का आश्रय लेते हैं और अलग २ अपना मित्रमण्डल बनाने लगते हैं और उनका घर होटल के समान बन जाता है। अगर सम्भव हो तो एक-दूसरे से अलग भी हो जाते हैं।

पाठक समझेंगे कि यह सब काल्पनिक बातें हैं। ऐसी बातें सुनने और देखने में तो आती नहीं। हां, यह ठीक है कि ऐसी घटनाएं आजकल बहुत ही कम सुनने में आती हैं क्योंकि जो इस तरह से शादी करते हैं उनकी संख्या नहीं के ही बराबर है। इसलिए पांच-दस घटनाएं जो इसतरह की होती हैं वे साधारण आदमियों तक पहुँचती ही नहीं। मगर ज्यों २ समय बीतता जायगा, शिक्षा का प्रचार बढ़ता जायगा और यहां की स्त्रियों को अन्य देशों की स्त्रियों की तरह अधिकार मिल जायेंगे, त्यों २ ऐसी घटनाओं की कमी न रहेगी। यूरोप और अमेरिका में तो आज भी उनकी कमी नहीं है। टेलीफोन पर ही शादी और टेलीफोन पर ही तलाक! इससे कोई यह अर्थ न निकाले कि मैं स्त्रियों के अधिकारों और उनमें शिक्षा प्रचार का विरोधी हूँ। ऐसा नहीं है; यह सब तो होना ही चाहिए। मैं तो समाज का ध्यान इस तरफ खींचना चाहता हूँ और बताना चाहता हूँ कि जीवन भरके साथी की पसन्दगी किस तरह की जाय ताकि भयानक परिणामों से हम बच सकें।

पति और पत्नी गाड़ी के दो पहियों के समान हैं। वे कुटुम्ब रूपी गाड़ी को तब ही अच्छी तरह से खींच सकते हैं जबकि दोनों पहिए मजबूत और एकसे हों और साथ २ चलने के लिए तैयार हों। अगर एक भी ठीक तरह से काम नहीं करेगा तो गाड़ी जहाँ की वहां पड़ी रहेगी। इसलिए जरूरी है कि जबतक हम यह न जानलें कि जीवन में अपनी कार्यशक्ति को किस तरह से उपयोग में लाना है और जीवन सम्बन्धी मुख्य २ प्रश्नों पर हमारे क्या विचार हैं तबतक शादी का ख्याल न किया जावे। जब यह निश्चित हो जाय तब ऐसे साथी की तलाश की जाय जो हमारे उद्देश्यों से सहमत हो और उन की पूर्ति में सहायक हो। इसके लिए यह जरूरी नहीं कि दोनों का कार्य एकसा ही हो—जैसे पति डाक्टर है तो पत्नी भी डाक्टर ही हो। अगर ऐसा हो सके तो सोने पर सुहागा है। मगर यह जानना निहायत जरूरी है कि दोनों के धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक विचार क्या हैं। संसार में कोई दो आदमी ऐसे नहीं हो सकते कि जिनके विचार हर एक प्रश्न पर बिलकुल एकसे हों, मगर ऐसे बहुत से निकल सकते हैं कि जिनके विचार जीवन सम्बन्धी मूल प्रश्नों पर एकसे हों और छोटी मोटी बातों में जो कुछ फेरफार हो वह ऐसा नहीं कि एक को दूसरे के साथ सङ्घर्ष हो। मान लीजिए कि पत्नी रूढ़िप्रिय नहीं है और पतिदेव कट्टर सनातनी हैं, तो यह जोड़ा जरूर बेमेल होगा और जीवन दुखमय हो जायगा। फर्ज कीजिए कि दोनों राजनीतिक-क्षेत्र में काम करते हैं, मगर एक अहिंसावादी है और दूसरा समाजवादी। इससे समय २ पर सङ्घर्ष होगा और इन दोनों का कभी ठीक मेल न होगा।

अब यह देखना है कि किस तरह से एक-दूसरे के विचार अच्छी तरह से जानें। सबसे जरूरी बात तो यह है कि कभी भी माता-पिता से छुपकर एक-दूसरे के सम्पर्क में आने की कोशिश न करें। दूसरी बात यह कि जल्दबाजी से परहेज करें। जल्दबाजी और माता-पिता से पोशीदगी भोग-विलास की तरफ ले जाने वाली वृत्तियों का चिन्ह हैं। तीसरे माता-पिता को अपना सच्चा मित्र समझ कर उनके अनुभवों से फायदा उठाकर इस समस्या को ठीक तरह से समझने की कोशिश करें और जबतक एक दूसरे के स्वभाव, जीवन ध्येय और आचार-विचार को अच्छी तरह न जान लें तबतक अन्तिम निर्णय न करें।

माता-पिता का कर्त्तव्य है कि वे समय-समय पर बातचीत द्वारा शादी के असली मकसद को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताने की कोशिश करें और अपनी सन्तान के स्वभाव और विचारों को समझकर जीवन साथी की पसन्दगी में उनकी मदद करें। इस गम्भीर समस्या के निर्णय में अपनी हार्दिक सहानुभूति दिखाकर उनका विश्वास प्राप्त करें ताकि वे भी उनके सामने अपना दिल खोलकर रख सकें। जैसे कि वकील न्यायाधीश के सामने केस के सम्बन्ध में जो कुछ उसे कहना होता है कह देता है, मगर अपनी इच्छा के अनुसार फैसला देने के लिए न्यायाधीश को मजबूर नहीं कर सकता, इसी तरह से माता-पिता को वकील की तरह इस मामले में व्यवहार करना चाहिए। अन्त में जो कुछ निर्णय हो उसे खुशी से स्वीकार कर अपना आशीर्वाद देना चाहिए।

जबतक कौटुम्बिक जीवन सुखी नहीं, तबतक हम कितने ही बड़े विद्वान हों, कितने ही बड़े कार्य-कर्त्ता हों, कितना भी हमारा मान और आदर होता हो, हमारे मन पर एक प्रकार का बोझ रहता है जो लकड़ी में घुन की तरह काम करता है। इसका नतीजा यह होता है कि जीवन शुष्क और नीरस बन जाता है, तथा शारीरिक और मानसिक शक्तियों का पूरा २ उपयोग और विकास नहीं होने पाता। जीवन के साथी की पसन्दगी पर ही सुखी और दुखी जीवन का आधार है। शादी का अर्थ दो ऐसी शक्तियों को आपस में मिला देना है जो जीवन सँग्राम में एक दूसरे का हाथ बटा सकें। बाह्य-सौंदर्य्य की अपेक्षा हार्दिक एकरसता से पैदा हुआ आकर्षण ही सच्चा और स्थायी आकर्षण है जो घटने की बजाए दिनों-दिन बढ़ता ही जाता है। जीवन साथी की पसन्दगी एक ऐसी गम्भीर समस्या है कि जिसके हल हो जाने से, हजार आपत्तियां और कठिनाइयां आने पर भी, मनुष्य सदा सुखी रहता है और अपने ध्येय की ओर तेजी से बढ़ता जाता है।

निमन्त्रण !

[रचयिता
श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'

आज मेरा है निमन्त्रण, है निमन्त्रण आज मेरा !

सब सुखों को धूल में दे।
निज पताका हाथ में ले॥
चल पड़ूं 'भारत-विजय' कह—
कण्टकों में डाल डेरा।
है निमन्त्रण आज मेरा॥१॥

देख भूखों का विलखना।
छोड कर धन-धाम-सपना॥
मार कर ठोकर सुखों में—
मैं चलूं बन, दीन-चेरा।
है निमन्त्रण आज मेरा॥२॥

मान को अपमान को तज।
प्रेम को अभिमान को तज॥
भय भगाकर भाग कर मैं—
जा सम्भालूं काज मेरा।
है निमन्त्रण आज मेरा॥३॥

आज पौरुष से अकेला।
हाँ, अभी, औ' इसी बेला॥
दीन की कुटिया अन्धेरी—
का मिटाऊँगा अन्धेरा।
है निमन्त्रण आज मेरा॥४॥

दासता का काट बन्धन।
हर्ष से कर मातृ-वन्दन॥
देश को अपने दिखाऊँ—
मुक्ति का स्वर्णिम सवेरा।
है निमन्त्रण आज मेरा॥५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यार्थियों से दो-दो बातें

ले०—डाक्टर रविप्रतापसिंह श्रीनेत

आज सारी दुनिया ही बेचैनी और असन्तोष के माध्यम में से गुजर रही है; हिंदोस्तान की परिस्थितियां तो और भी भयानक हैं। इन परिस्थितियों का असर हिन्दोस्तानी विद्यार्थी समाज पर काफी पड़ रहा है। यदि इन परिस्थितियों के नाम पर चुप बैठा रहा जाय तो भी गनीमत नहीं; क्योंकि चुप बैठ रहना भी तो मौत को निमन्त्रण देना है। इसलिए जो कुछ भी बेहतरी के लिए किया जा सके, जरूरी करना चाहिए।

विद्यार्थी-समाज के सामने राजनैतिक परिस्थितियों ने ऐसी कई समस्याएं पेश कर रखी हैं, जिनके कारण उनकी शिक्षण-व्यवस्था तथा उनके उद्देश्यों में पूर्णता या तो प्राप्त ही नहीं हो पाती या किन्हीं कारणवश हो ही नहीं सकती। इन्हीं समस्याओं पर बहुत बड़े अरसे से देश के विद्वानों ने अच्छी तरह गौर किया है। दी राइट आनरेबिल सर श्रीनिवास शास्त्री, डाक्टर सर तेजबहादुर सप्रू, डाक्टर सर सर्वपल्ली राधाकृष्णन, डाक्टर सर रासमसूद, पण्डित मदनमोहन मालवीय और डाक्टर सच्चिदानन्द सिन्हा के समान शिक्षाशास्त्रियों ने विद्यार्थी-समाज की समस्याओं पर बहुत कुछ पते की बात कही है; लेकिन विद्यार्थियों के भावना प्रधान दिमागों पर महापुरुषों की नेक सलाहों का असर नहीं के बराबर हुआ। राजनीति और प्रोपेगेंडा की आंधी उन्हें अपनी आयु सुलभ प्रेरणाओं से विचिलित करके सामयिक राजनैतिक क्षेत्र के सङ्घर्ष की ओर ले जा रही है। इसका प्रभाव उनके अपरिपक्व मस्तिष्क और उनकी शिक्षा पर बुरा ही पड़ रहा है। शायद इसका ख्याल राजनैतिक नेताओं को बिलकुल भी नहीं होता। अगर होता भी हो, तोभी वे इस बात का ख्याल जान बूझकर न करते होंगे, क्योंकि हिंदोस्तान के किसी भी सियासी जलसे में से अगर विद्यार्थियों की संख्या निकाल दी जाय, तो बहुत कम उपस्थिति शेष रह जाती है।

राजनीति के प्रभाव तथा उस क्षेत्र के नेताओं के नाजायज प्रोत्साहन ने विद्यार्थी-समाज के दैनिक जीवन में राजनीति को धीरे-धीरे वह स्थान और महत्व दे दिया है जिससे पिण्ड छुड़ाना शायद कायरता का द्योतक हो। यही कारण है जो वकीलों की तरह विद्यार्थी भी हिन्दोस्तान में राजनीति के नाम लेवा हैं। विद्यार्थियों का आज-कल की राजनीति से क्या सम्बन्ध होना चाहिए, इस पर कई शिक्षा विशारदों ने अपनी स्वतन्त्र रायें जाहिर की हैं। अभी हाल ही में अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी के दीक्षान्त-भाषण (Convocation Address) में भोपाल के विद्वान् नवाब साहब ने कहा कि "हिन्दोस्तान में प्रजातन्त्र राज्य प्रणाली के आरम्भ हो जाने के बाद से हमारे विद्यार्थियों की राजनैतिक मामलों से सम्बन्धित रहने के मौके पहले की बनिस्बत कहीं ज्यादह मिल रहे हैं। मेरा ख्याल है कि उन्हें राजनैतिक समस्याओं पर विचार-विनिमय अवश्य ही करना चाहिए; ताकि जब वे अपना शिक्षण छोड़ें, तब तक उन्हें राजनीति की बारीकियों से पूरी तरह वाकिफ हो जाना चाहिए। यह बात जरूर है कि इस विचार-विनिमय का प्रभाव विभिन्न मस्तिष्कों पर विभिन्न रूप से होगा यानी किसी पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम, किसी पर ज्यादा, किसी पर बहुत कम, और किसी पर बिलकुल भी नहीं; लेकिन यहीं पर मेरी सख्ती के साथ राय है कि राजनैतिक विरोधाभास के कारण ऐसी परिस्थिति न आ जाए जिससे शिक्षण-सँस्थाओं के अनुशासन पर बुरा असर पड़े और न वह तालीमी जिंदगी के कर्त्तव्यों में किसी प्रकार की गड़-बड़ी ही पहुँचाये। इस बात का हमेशा ध्यान रहे कि शिक्षण-सँस्थाएँ कोई राजनैतिक इजारे नहीं हैं और न उनको सियासी अखाड़ा ही बनाना चाहिए।"

नवाब साहब भोपाल ने जो भी कहा है, वह उनकी विद्वत्ता और अनुभव का ज्वलन्त प्रमाण है। एक सफल शासक की हैसियत से उन्हें राजनैतिक मामलों पर विचार करने का काफी मौका मिला है।

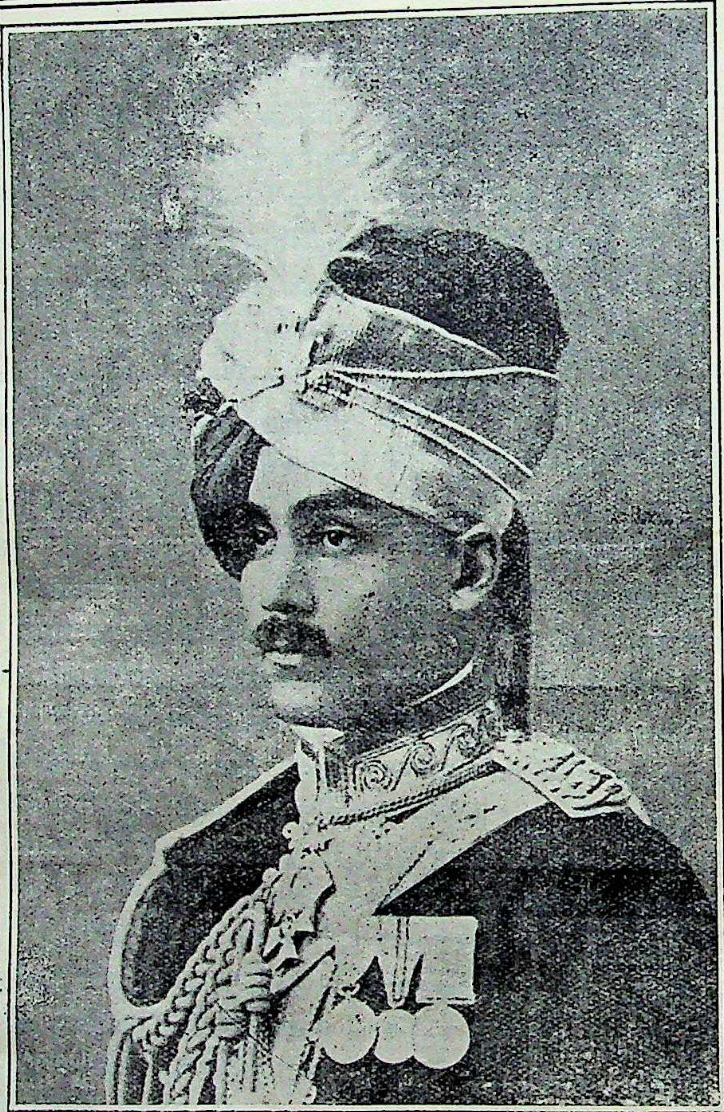

नवाब साहब, फ़रमारवाए भोपाल

हिन्दोस्तान ही नहीं, बल्कि विदेशों की शिक्षण-सँस्थाओं का आपको खूब अनुभव है। हमारा भी यही मत है कि विद्यार्थियों को अपना फायदा देखते हुए, राजनीति में सक्रिय भाग न लेना चाहिए; बल्कि उस पर सामयिक ज्ञान की सहायता से एक स्वतन्त्र दृष्टिकोण का निर्माण करके, उसका परिणाम देखना चाहिए। सक्रिय भाग लेने से शिक्षण-सँस्थाओं के अनुशासन पर बड़ा असर पड़ता है जो स्वयँ विद्यार्थियों के लिये हानिकारक है। क्या ही अच्छा हो जो स्वयँ विद्यार्थी, उनके अभिभावक और उनके शुभचिंतन में ऐड़ी चोटी का पसीना एक करने वाले इन समस्याओं पर विचार करें और कोशिश करें कि विद्यार्थी अपने पथ से विचलित न होने पायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधान-परिषद्—Constituent Assembly

ले०—श्री० ठा० देशराज

[१]

> विधान-परिषद्—कौमी-पञ्चायत ही आज हिन्दुस्तान की आजादी का सबसे बड़ा सवाल हो गया है । यही कहा जा रहा है कि विधान-परिषद् के अलावा हिन्दुस्तान की उलझन को सुलझाने का और कोई रास्ता ही नहीं है । प्रस्तुत लेख में इसी महत्वपूर्ण सवाल पर प्रकाश डाला गया है ।
>
> —सम्पादक

भारतीय आवाज का आज जो मुख्य विषय बना हुआ है वह है विधान निर्मात्री परिषद् । जिस किसी भी नेता का भाषण सुनिए वह अपने भाषण में प्रसङ्ग होते न होते भी विधान सभा का जिक्र अवश्य करेगा। कोई अखबार पढ़िये—चाहे वह दैनिक हो अथवा साप्ताहिक—उसमें भी कहीं न कहीं इसका उल्लेख आपको अवश्य मिलेगा ।

इस प्रकार के लोकप्रिय विषय पर यदि मैं "दीपक" के पाठकों को कुछ ज्ञातव्य सामग्री भेंट करूँ तो मुझे उम्मीद है कि वे मेरे इस प्रयत्न से प्रसन्न ही होंगे ।

श्री गणेश—विधान निर्मात्री परिषद् की आवाज भारतवर्ष में पिछले दो वर्षों से—जब से कि नया शासन विधान अमल में लाया गया है और काँग्रेस मिनिस्ट्री बनी हैं—अधिक जोर से सुनाई देने लगी है। वैसे तो इसका आरम्भ सन् १९३३ ई० में केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव पर हुआ था । गोलमेज कान्फ्रेन्स के बाद में शुरू किया गया सत्याग्रह आन्दोलन समाप्त हो चुका था और देश में एक निर्जीवता छाई हुई थी। इसी निस्तब्धता के समय में केन्द्रीय असेम्बली का चुनाव आ गया। काँग्रेस ने अबतक कौंसिलों का बहिष्कार कर रक्खा था क्योंकि वह उन्हें व्यर्थ अथवा अनुपयोगी समझती थी। किंतु काँग्रेस में एक ऐसा भी दल था जो कौंसिलों से कुछ लाभ उठाना चाहता था अथवा उनका—जहाँतक मुमकिन हो सकता है—उपयोग करना चाहता था। अपने विचारों को प्रकट करने का इस दल ने उस समय को अपने लिये उपयुक्त अवसर समझा और यह आन्दोलन किया कि हमें बृटिश सरकार तक स्वात्म-निर्णय की आवाज़—वैधानिक तरीके से—पहुंचाने के लिये कौंसिलों का उपयोग करना चाहिये। यह स्वात्म-निर्णय अथवा भारत कैसा शासन चाहता है—की आवाज विधान परिषद् के द्वारा ही सर्वोत्तम रूप से प्रकट की जा सकती है। अतः इस दल के नेताओं ने विधान परिषद् की माँग को महत्व देने और वैधानिक तरीके से उसका आन्दोलन करने के लिए काँग्रेस के सामने कौंसिल प्रवेश की माँग की जिसे महात्मागांधी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने भी प्रयोग के तौर पर स्वीकार कर लिया। तब से हम बार-बार—कभी ज्यादा कभी कम – इस आवाज को सुन रहे हैं। वैसे भारतवर्ष में सर्व प्रथम इस आवाज़ को पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने उठाया था। किंतु वे जन आन्दोलन के द्वारा इसे आगे बढाना चाहते थे और यह आवाज ह्वाइट पेपर– बाद में इंडिया एक्ट का – समुचित जवाब थी। कारण, गोलमेज कांफ्रेंस में कुछ मुसलिम, अछूत और रियासती प्रतिनिधियों ने जो अराष्ट्रीय हरकतें दिखाई थीं उनके आधार पर बृटिश लोग यह कहने लग गये थे कि भारतीय प्रतिनिधि कोई भी ऐसा विधान हमारे सामने पेश नहीं कर सके जिसे हम सर्व सम्मत मांग कह सकते। बृटिश लोगों की इस धारणा को गलत साबित करने के लिए विधान परिषद् की माँग से बढ़कर कोई दूसरा उत्तर शायद ही होता।

ऐतिहासिकता—विधान-परिषद की माँग न तो कोई आविष्कार है जैसा कि सत्याग्रह और अहिंसा युद्ध है और न कोई नई बात है। ऐसा अन्य देशों में भी हुआ है। कहने का अभिप्राय यह है कि विधान परिषद् का अपना एक इतिहास है और उस इतिहास के पीछे सम्बद्ध हैं सुन्दर नतीजे।

पाठकों की जानकारी के लिये अन्य देशों में बुलाई विधान परिषदों और उसके नतीजों पर यहाँ प्रकाश डालना हम जरूरी समझते हैं।

सबसे पहले फ्राँस देश में सन् १७८७ ई० में विधान परिषद् बैठी थी। उसी ने 'देश में शासन कैसा हो' इस समस्या को हल किया था। सन् १८६४ ई० में कनाडा निवासियों ने क्यूबेक में इकट्ठे होकर अपने देश के लिये शासन विधान बनाया। याद रहे कनाडा बृटिश साम्राज्य का एक अङ्ग है। क्यूबेक की विधान परिषद द्वारा स्वीकृत विधान को बृटिश पार्लीमेंट ने कुछ सँशोधनों के साथ स्वीकार भी कर लिया था। आस्ट्रेलिया में इस प्रकार की विधान पञ्चायत दो बार बैठ चुकी है—पहली सन् १८९१ ई० में दूसरी सन् १८९७ ई० में। पहली बार की विधान सभा के सदस्यों का चुनाव प्राँतीय ऐसम्बलियों द्वारा हुआ था और दूसरी बार जनपद प्राप्त आस्ट्रेलिया की शासन सभा द्वारा। इस परिषद् का बनाया हुआ विधान बृटिश पार्लीमेंट में बिल के रूप में पेश हुआ और वह "कामनवेल्थ एक्ट सन् १९०० ई०' के नाम से कानून को प्राप्त हुआ। सन् १९०९ ई० में बृटिश पार्लीमेंट ने अफ्रीका के शासन के लिये जो एक्ट पास किया था और जिसके अनुसार चार हिस्सों में बँटा हुआ (बृटिश-अफ्रीका) एक हो गया है, वह एक्ट भी बिल के रूप में अफ्रीका की प्राँतीय शासन सभाओं द्वारा बुलाई गई विधान परिषद् ने ही तैयार किया था।

विधान परिषद् का महत्व—पिछले वर्षों के आन्दोलन से भारत में इतना तो हुआ है कि कोई भी राजनैतिक पार्टी या वर्ग ऐसा नहीं है जो विधान परिषद् की उपयोगिता और आवश्यकता से इनकार करता हो। किंतु इसके निर्माण अथवा स्वरूप के सम्बन्ध में अवश्य अनेकों मत हैं। कांग्रेस अथवा महात्मा गांधी जी इसके निर्माण का अधिकार प्रत्येक बालिग व्यक्ति के लिये चाहते हैं। उनका कहना है कि भारत के प्रत्येक स्त्री-पुरुष को जो कि सही दिमाग और बालिग हो, वोटर (मतदाता) करार दे दिया जाय। और वह वोटरों का विराट समुदाय जिन्हें "अपने देश का शासन विधान बनाने के लिए" प्रतिनिधि चुने उन्हीं लोगों की परिषद् से शासन विधान बनाया जाय और उसे समस्त भारत की आकांक्षा मानकर बृटिश सरकार उसे कानून का रूप दे दे।

इस कथन के अनुसार इस मांग के दो हिस्से हो जाते हैं। एक तो यह कि बृटिश सरकार भारतियों को अपने देश के शासन विधान बनाने के अधिकार को स्वीकार करले और दूसरा यह कि शासन विधान समस्त बालिगों की राय से बनाये गये पञ्चों द्वारा ही बनाया जाय।

इस माँग के दोनों ही हिस्से काँग्रेस के लिए लाभप्रद हैं, बिना दूसरे की स्वीकृति के कोई सन्तोषजनक लाभ नहीं होगा क्योंकि यदि चन्द राजा रईसों और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूंजीपतियों को ही विधान परिषद् का निर्माण करने का अधिकार दे दिया गया तो उनके वोटों से ऐसे लोगों की परिषद् बनेगी जो कोई भी प्रगतिशील विधान नहीं बनायेगी। हाथ कङ्गन के लिये आरसी की जरूरत नहीं। हम आज भी यू० पी० और बिहार आदि की स्टेट कौंसिलों और अपरहाउसों की करतूत देख रहे हैं। अतः माँग का यह हिस्सा भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि शासन विधान बनाने का अधिकार वाला हिस्सा।

मुस्लिम लीग विधान परिषद् की मांग के पक्ष में उसी हालत में है जबकि पहले मुसलमानों के अधिकारों का स्पष्टी करण हो जाय। मिस्टर जिन्नाह का कहना है कि चूँकि भारत में मुसलमान अल्पसँख्यक हैं अतः बहुसँख्यक हिंदू प्रतिनिधि उनके साथ अन्याय भी कर सकते हैं। इस अन्याय से बचने के लिए जहां वे कुछ सीटें — अनुपात से-अधिक चाहते हैं वहाँ कुछ ऐसे प्रतिबन्ध भी रखना चाहते हैं जिनके रहते हुए न तो विधान परिषद् ही ऐसे विषयों को छू सकेगी जिनसे कहीं भी और कभी मुस्लिम अहित (?) होता हो और न भावी व्यवस्थापिका सभायें ही उन विषयों के ऊपर बोलने का अधिकार प्राप्त कर सकेंगी। उनके इन प्रतिबन्धों का असर सामाजिक और धार्मिक प्रश्नों तक ही महदूद रहता हो, ऐसी बात नहीं है। वे प्रतिबन्ध तो आर्थिक और राजनैतिक प्रश्नों के हल में भी बाधक होते हैं। कांग्रेस मुस्लिम जाति के साथ अन्याय न होने देने का वायदा करती है और कुछ सँरक्षणों का भी विश्वास दिलाती है। किंतु मि० जिन्नाह के प्रतिबन्धों को मानने में कांग्रेस असमर्थ है।

मुस्लिमलीग बालिग मताधिकार वाली बात पर राजी हो सकेगी इसमें भारी सन्देह है क्योंकि वह अभी तो पहले ही हिस्से पर अड़ियल बैल बनी हुई है।

हिंदूमहासभा अथवा श्री सावरकर विधान परिषद् की उपयोगिता को तो मानते हैं किंतु चुनाव के तरीके में वे भी कांग्रेस से मतभेद रखते हैं। उनका कहना है कि "परिषद् का चुनाव कौमी तरीके पर हो।" इसका स्पष्ट अर्थ है कि परिषद में हिंदुओं का बहुमत हो। हिन्दू महासभा और श्री सावरकर का यह कथन मुस्लिमलीग और मि० जिन्नाह के इरादों की खुली प्रतिक्रिया है। श्री सावरकर यदि विधान परिषद् के मेम्बर चुने गये—जैसा की अवश्यम्भावी है—तो वे अल्प सँख्यकों को सरकारी सहायता से अलग सांस्कृतिक स्कूल और सँस्थायें खोलने की गारन्टी देने की बात को स्वीकार कर लेंगे किंतु इन प्रतिबन्धों के साथ कि उनकी सँस्थाओं को आर्थिक सहायता उनके द्वारा दिए जाने वाले टैक्सों के अनुपात से दी जाय। भाषण, लेखन और धार्मिक स्वाधीनता को वे उसी समय तक चालू रहने देना चाहते हैं जब तक कि वह बहुसँख्यकों के दिल को दुखाने वाली न हो। सारांश यह है कि मि० जिन्नाह के प्रतिबन्ध जहां मस्जिदों के सामने बाजे की स्वाधीनता को अल्पसँख्यक मुस्लमानों के साथ अन्याय बताते हैं वहां श्री सावरकर के प्रतिबन्ध गौ बध को बहुसँख्यक हिंदुओं के दिल को दुखी करने वाली स्वाधीनता मानते हैं। इन्हीं प्रतिबन्धों के आधार पर जहाँ सावरकर जी विधान परिषद् के लिए एक आदमी का एक वोट की बात कहते हैं वहां जिन्नाह साहब एक आदमी-खास तौर से मुस्लमान के एक वोट की बात के विपरीत मत रखते हैं।

पञ्जाब के प्रधान मन्त्री सर सिकन्दर हयात खां और भारत की सर्वोच्च अदालत—फेडरल कोर्ट के चीफ जज ग्वायर साहब केवलचन्द आदमियों की विधान परिषद् के पक्ष में अपना मत देते हैं। सरसिकन्दर हयातखां का कहना है कि "भारत में पैंतीस करोड़ आदमी हैं। दस हजार पीछे एक आदमी भी विधान परिषद् के लिए चुना जाय तो पैंतीस हजार प्रतिनिधि होते हैं।" खैर, ऐसा भी मान लिया जाय कि केवल पैंतीस ही प्रतिनिधि बालिग मताधिकार से प्रति दस हजार वोटों पीछे एक के हिसाब से आवें तब भी सर सिकन्दर साहेब के शब्दों के अनुसार बहुसँख्या ही हो जाती है। और जब जिस बात को भारत के सुलझे हुए दस बीस आदमी तय नहीं कर सकते हैं तो यह इतना बड़ा झुन्ड जिसमें की कुछ काफी सँकुचित मनोवृत्ति के आदमी भी होंगे, कैसे किसी एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्णय पर पहुंच जाएगी। भारत के—राजनीति में अधिक बुद्धिमान किंतु क्रिया शीलता में शून्य —लिबरल लोगों ने भी बालिग मताधिकार से अपनी अस्वीकृति जाहिर की है।

मौलिक मतभेद—ऊपर जितने भी मतभेद दिये हैं वे आँशिक हैं और ज्यादातर चुनाव के सम्बन्ध में हैं। विधान परिषद् के बुलाने के विपक्ष में खुले तौर से अगर कोई है तो वे हैं श्री सुभाषचन्द्र बसु। उनका कहना है कि गुलाम देश में विधान परिषद् बुलाने से कोई खास लाभ नहीं है। उनकी दलील है कि जब उस विधान को पास करने की अँतिम सत्ता हमारे हाथ में नहीं है, तब उसके लिए समय बर्बाद करना व्यर्थ की चीज है।

गोलमेज और परिषद्—सरकारी क्षेत्रों से कभी २ ऐसी भी ध्वनि—किन्तु अस्पष्ट—निकलती है कि किसी उत्तम नतीजे पर पहुंचने के लिए भारत के सर्वदलों और सरकार के प्रतिनिधियों की गोलमेज कांफ्रेंस करली जाय। मन्शा दोनों का एक ही बताया जाता है तो फिर कांग्रेसी नेता विधान परिषद् पर ही क्यों जोर देते हैं। इस अन्तर और रहस्य को समझना भी जरूरी है। बात यह है कि पिछली गोलमेज भारत को एक सबक दे गई है। सरकार ने किस प्रकार अपने पिट्ठुओं को नामजद किया और उसका फिर किस प्रकार भारत के अहित में उपयोग किया तथा ब्रिटिश प्रतिनिधियों ने किस प्रकार सब कुछ अपनी मर्जी के अनुसार किया यह बात अब किसी से छिपी नहीं है। उन लोगों द्वारा बनाया "इण्डिया एक्ट सन १९३५" किसी भी भारतीय दल का समर्थन प्राप्त न कर सका। गोलमेज जितनी ब्रिटिश अधिकारों से प्रभावित थी परिषद् उतनी ही भारतीय जनता के प्रति जिम्मेवार होगी।

(क्रमशः)

निर्जीव-वाणी !

ले०—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

[छोटी-छोटी घटनाओं से भी मनुष्य चाहे तो बहुत कुछ सीख सकता है—यही इस लेख में बताया गया है। सं०]

मैं अक्सर स्टेशन आया जाया करता हूँ। स्टेशन पर देश विदेश के यात्री दिखाई पड़ते हैं। उनके रहन-सहन में एक विशेषता होती है। स्टेशन पहुँचने पर वहाँ का हाव-भाव देख कर थोड़ी देर के लिये अपना सुख-दुख भूल कर मनुष्य एक नई ही दुनिया में पहुँच जाता है। रेल के डब्बे में ना ना प्रकार के यात्री होते हैं। कोई व्यापार के सिलसिले में तो कोई धर्म-शिक्षा का प्रचार करने के लिए, कोई आजादी का सन्देश लिये हुए तो कोई शिक्षा प्राप्त करने के लिए, अपने घर से हजारों मील की दूरी पर रेल में सवार होकर एक जगह से दूसरी जगह पहुँच जाता है।

इसी रेलगाड़ी ने हमारे मुल्क की अमूल्य सम्पत्ति ढो-ढो कर विदेशों में भेज दी है। इसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमको कङ्गाल बना दिया है, नङ्गा कर दिया है, इतना सुस्त और आलसी बना दिया है कि दो चार मील चलने के लिये भी हमें रेल सवारी की जरूरत होती है। सरकार का हमारे ऊपर जो रोब-दाब है उसके लिये भी रेल बहुत हद तक जिम्मेवार है। रेल के द्वारा लाखों सिपाही आन की आन में एक जगह से दूसरी जगह पहुँच जाते हैं और आजादी की लड़ाई को दबा देते हैं। रेल द्वारा सेठ साहूकार लाखों, करोड़ों रुपया कमाते हैं और गरीब मजदूरों पर मनमानी करते हैं। हाँ, रेलगाड़ी से कुछ लाभ भी अवश्य हुए हैं। हमें एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त के साथ सम्बन्ध जोड़ने में सुविधा हुई है। यह हमें २४ घण्टे के अन्दर कलकत्ते से बम्बई पहुँचा देती है।

खैर आज तो मैं कुछ और ही कहना चाहता हूँ। रेलगाड़ी कितने पाषाण हृदय की है। हमारे प्यारे से प्यारे दोस्त को मिनटों में न जाने कहां से कहां पहुँचा देती है। सीटी हुई नहीं कि वह तेजी से दौड़ती हुई न जाने कितने पहाड़ों, जङ्गलों, नदियों को पार करती हुई कहां से कहाँ पहुँच जाती है। हमारे कुछ ऐसे साथी थे जो सदा हमारे ही साथ खाते-पीते, चलते-फिरते, उठते-बैठते और काम करते थे। एक दिन ऐसा भी आया कि उन में से एक को अलग होना पड़ा। जल्दी ही सामान बाँध स्टेशन पर पहुँच हम रेल के डब्बे में बैठ गये। बातें होने लगीं। हमारी बात-चीत चल ही रही थी कि गार्ड ने हरी झण्डी दीखाई और रेलगाड़ी फक-फक करती हुई हमारे साथी को लेकर नौ-दो-ग्यारह हो गई। मैं ताकता ही रह गया। लेकिन अब क्या हो सकता था।

दुखी होकर आखिरकार स्टेशन से अकेला ही आना पड़ा। मित्र की वह मधुर स्मृतियाँ रह-रह कर याद आती थीं। जितना दूर वे पहुँचते थे उतनी ही अधिक उनकी याद आती थी। और सच भी तो है अलग होने पर ही तो मित्रता की परख होती है।

रेलगाड़ी हमें यही सिखाती है—प्रेम करो, खूब प्रेम करो, लेकिन ऐसा प्रेम न करो कि जिससे अलग होने पर हृदय में बेचैनी हो और आँखें डब-डबा आवें। रेलगाड़ी कहती है, "मैं सबको कर्त्तव्य पथपर पहुँचाती रहती हूँ। किसी को एक दूसरे से वास्तव में अलग नहीं करती हूँ। तुम्हारे दोस्त या और किसी को लेकर मैं जो दौड़ रही हूँ उसी में उनकी भलाई है। तुम्हारे पास से अलग होकर वे अपना काम ही तो करने जा रहे हैं। हर एक आदमी यहां काम करने के लिए आया है। मेरे ऊपर सवार होकर वह काम करने या काम की तलाश में जाता है। काम अच्छा होने पर मैं प्रेम को और भी सुदृढ़ बनाती हूँ। वास्तव में मैं किसी को जुदा नहीं करती। हां, उनको जरूर अलग कर देती हूं जिनका प्रेम बनावटी और झूठा होता है। ऐसे हृदय-हीन दोस्त को तुमसे अलग करके मैं तुम्हारे लिये अच्छा ही तो करती हूँ। मैं पाषाण हृदय नहीं हूं। कल तुम्हारे एक मित्र की चिट्ठी मैं ही तो लाई थी जिसमें यह खुशखबरी थी कि वे बड़े ग्रामसुधारक हो गये हैं और अपने लाखों भाइयों को देश की आजादी पर हँसते-हँसते बलिदान हो जाने का पाठ पढ़ा रहे हैं। क्या अब भी मुझे हृदयहीन ही कहा जायेगा?"

—०—

चोरों का मेला

५०० साल से प्रचलित एक पुरानी प्रथा के अनुसार फ्रान्स के सैलस डी० ओलोन नामक स्थान पर प्रति साल दिसम्बर के महीने में चोरों का एक मेला लगता है। उस मेले की दुकानों में हर तरह की चीजें बिक्री के लिए मौजूद रहती हैं। लेकिन वहाँ पर यदि किसी ने कोई वस्तु चुराली तो उसे दण्ड नहीं दिया जाता। हाँ, चोरी करने वाले में इतनी कुशलता होनी चाहिए जिससे व सदैव सतर्क बने रहने वाले विक्रेताओं की आँखों से बच कर अपना काम साध ले। उस मेले के अन्दर लोगों का आदर्श वाक्य (मोटो) यह होता है—"यदि चोरी कर सको तो करो, नहीं तो माल खरीदो।"

(अभ्युदय)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

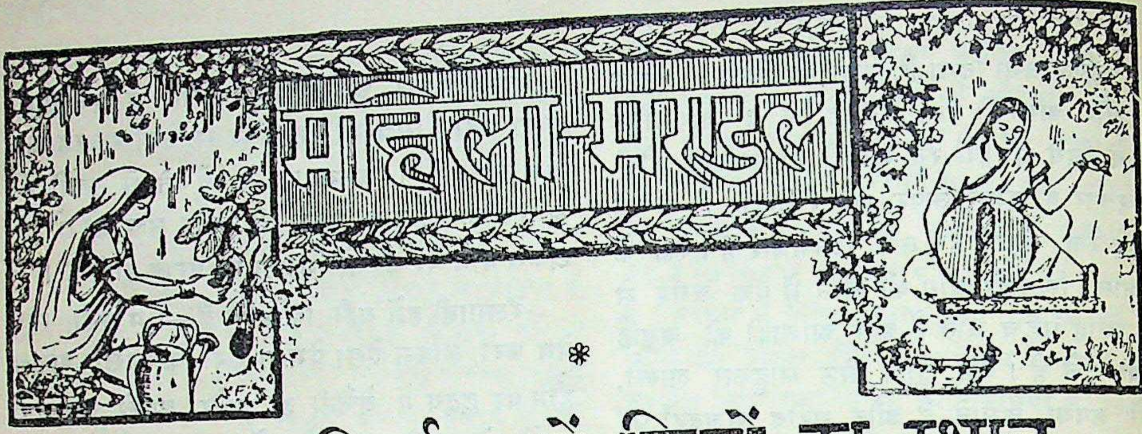

नवयुग निर्माण में स्त्रियों का स्थान

ले०—श्रीमती ताराबहन मोड़क

जिस सङ्कुचित वातावरण में रह कर स्त्रियां स्वयं सङ्कुचित विचारों वाली बन गयी थीं और जिस वातावरण के कारण पुरुषों के अन्दर भी स्त्रियों के बारे में सङ्कुचित विचार पैदा हो गये थे, उन सबको मिटाकर आज सुधरे हुए सँसार में यह बात सिद्ध की जा चुकी है कि स्त्री और पुरुष दोनों मानव समाज के दो अङ्ग हैं, जिन पर समाज की समान जिम्मेवारी है। इस प्रकार सँसार में स्त्रियों के जो आन्दोलन चले, उन्होंने समाज में स्त्रियों के अधिकारों को स्थापित करने का बहुत बड़ा काम किया है।

अब हमें इससे भी आगे बढ़ कर काम करना है। मनुष्य-जीवन में स्त्री की जो जिम्मेवारियां हैं उनको अङ्गीकार करके हमें स्त्रियों की ओर से अपना विशिष्ट भाग प्रदान करना है। अब तक गृह-जीवन स्त्रियों के हाथ में था और बाहर का सारा व्यवहार पुरुषों के हाथ में था। इसके दो परिणाम स्पष्ट रूप से आज हमारे सामने हैं। एक तो यह कि आज समाज में पुरुषों के सभी व्यवहारों को एक प्रकार की श्रेष्ठता और प्रतिष्ठा प्राप्त है; और स्त्रियों के काम को जनाना समझ कर उसे हीन दृष्टि से देखा जाता है। आज भी कहीं बाहर जाकर काम करने में स्त्रियां विशेष गौरव का अनुभव करती हैं; जब कि घर में रहने वाली और घर सम्हालने वाली बहनें अपने मनमें यही समझती हैं कि हम कुछ नहीं करतीं, और हमारा जीवन व्यर्थ ही बीत रहा है।

दूसरा परिणाम यह हुआ है कि बाहर के सब व्यवहारों पर पुरुषों की छाप पड़ी हुई है। आज हम जिस जगत् में रह रहे हैं, वह आदि से अन्त तक पुरुषों की सृष्टि है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापार, व्यवहार, कानून-कायदा, राजनीति, धर्मनीति, उद्योग धन्धे, सभी कुछ पुरुषों के बनाये हुए हैं। स्त्रियां आज इन कामों में कितना ही भाग क्यों न लें तब भी वे पुरुष बन कर यानी पुरुषों द्वारा ठहराये हुए तरीके से, उनके द्वारा विकसित की गयी पद्धति से ही उन सब कामों को करती हैं। स्त्रियां आज कितनी ही आगे क्यों न बढ़ जाएँ, कितने ही विभिन्न क्षेत्रों को क्यों न पदाक्रांत करलें और पुरुषों की बराबरी करने का कितना ही आत्मसँतोष क्यों न अनुभव करें — तथापि आखिरकार उनको रहना तो उसी दुनिया में है, जिसका विधाता पुरुष है। आज स्त्रियां पुरुषों जैसी, यानी उनकी समता करने वाली भले बन गई हों, परन्तु पुरुषों की बराबरी करने का जो प्रयत्न उनकी तरफ से हो रहा है, वह उनकी हीन वृत्ति का ही सूचक है। जो लोग यह समझते हैं कि हम यूरोपियनों के समान नहीं हैं, वे हमेशा इसके दुःख को अपने साथ लिए फिरते हैं और रहन-सहन, खान-पान आदि हर एक बात में उन्हीं का अनुकरण करने की चेष्टा करते हैं। जो लघुता-ग्रंथी इन लोगों में पाई जाती है, उसी की शिकार हमारी बहुत सी बहनें भी हैं। तात्पर्य यह है कि स्त्री को स्त्री के रूप में मानव समाज के अन्दर अपना विशिष्ट स्थान बना लेना है। यह काम वह किस प्रकार से कर सकती है?

जो काम स्त्रियों को कुदरत की ओर से सौंपा गया है और जिसे वे भली भाँति कर सकती हैं उसी बाल-सङ्गोपन और बाल-शिक्षा के काम को यदि वे पूरी तरह सम्हाल लें, तो वे एक बहुत बड़ी जिम्मेवारी को सम्हाल लेंगी।

स्त्रियां कह सकती हैं कि इसमें आपने नई बात क्या कही? आज न जाने कितने युगों से हम घर की और बच्चों की ही गुलामी करती आई हैं और रात-दिन उन्हीं का पाखाना-पेशाब उठाती रहती हैं; फिर उसीको करने में विशेषता क्या है? पहली विशेषता तो भावना की है। बहनों को समझना चाहिये कि यह काम सिर पर आकर पड़ा हुआ कोई बोझ नहीं है, और पुरुष जितने भी काम करते हैं उनमें से किसी से किसी प्रकार हलका नहीं है। इस भावना से यदि हम इन कामों को करें तो इनमें हम रस की घूँटें पी सकते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि भावना के रङ्ग से रङ्ग कर हमारे सब काम अधिक सजीव और प्रकाशित हो उठेंगे।

दूसरी विशेषता है उन्हीं कामों को करने के तरीकों की। परम्परागत तरीकों से बच्चों की परवरिश करना एक बात है, और इस सम्बन्ध के शास्त्रों का अध्ययन करके स्वयँ प्रयोगों द्वारा उन तरीकों में उन्नति करना दूसरी बात है। अगर स्त्रियां बाल-सङ्गोपन सम्बन्धी शास्त्रों का अध्ययन करें, गहराई के साथ इन विषयों का चिंतन और मनन करें,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इस प्रकार अपने अनुभवों और विचारों की भेंट समाज के चरणों में चढ़ाती रहें तो यह काम आज जितना हीन और गौण माना जाता है, उतना न स्वयँ स्त्रियों को ही हीन और गौण मालूम होगा, और न पुरुषों को ही गौण लगेगा। अभी कुछ ही दिन पहले की बात है एक आई० सी० ऐस० सज्जन मुझसे आकर मिले और मेरे साथ बच्चों के सम्बन्ध में थोड़ी बात-चीत करने लगे। उनकी शिक्षित धर्मपत्नी भी इस बात-चीत में हमारे साथ बराबरी से भाग ले रही थी। दोनों बड़ी गम्भीरता के साथ बाल-मनोविकास की चर्चा कर रहे थे। इसी बीच मेरे मन में यह विचार आया कि इन आई० सी० ऐस० महोदय को अपने आफिस का काम अपनी पत्नी के बाल-सँगोपन की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ और अधिक महत्व का मालूम होता है। जो मनःस्थित इन आई० सी० ऐस० सज्जन की थी, वही प्रायः सब पुरुषों की इस सम्बन्ध में हो सकती है; परन्तु यदि प्रत्येक स्त्री इस विषय का शास्त्रीय अध्ययन करे और शास्त्रीय दृष्टि से सब बातों का विचार करके उनको अपने आचरण में उतारने लगे, तो पुरुषों की यह दृष्टि बदल सकती है।

तात्पर्य यह कि यदि हमारी बहनें बाल-मनो-विज्ञान, बाल-शिक्षाशास्त्र, बाल-शरीर और बाल-मानस के विकास का और ऐसे अन्य विषयों का गम्भीर अध्ययन करके तदनुसार इस दिशा में भलीभांति काम करने लगें तो पुरुषों के दिल में कभी यह खयाल उठेगा ही नहीं कि चूँकि स्त्रियां उनकी तरह बाहर जाकर नौकरी नहीं करतीं, इसलिए वे कोई कम महत्व का काम करती हैं। मराठी में एक कहावत है कि—"जिच्या हातांत पालण्याची दोरी ती जगास उद्धारी," यानी जिसके हाथ में पालने की डोरी है वही सँसार की उद्धारकर्त्री भी है। यह कहावत आज या तो केवल लेखकों और निबन्धों में प्रयुक्त होती है अथवा मातृदिन के उत्सव पर दोहरा दी जाती है। पर यदि बहन मन में धार लें तो कल यही चीज पूरे अर्थों में सत्य और सार्थक हो सकती है।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहती हूं कि सँसार के मानवी व्यवहारों में स्त्री को स्त्री के नाते ऐसा परिवर्तन करना चाहिए जो उसके विचारों और वृत्ति के अनुकूल हो। आज कल इस तरह का व्यवहार देश २ और जाति २ के बीच में हो रहा है उसमें कई प्रकार का जङ्गलीपन भरा हुआ है; पशुता भी है; हृदय-शून्यता और अमानुषता भी है। पुरुषों की जिस दुनिया में यह एक सामान्य धारणा बनी हुई है कि जहां-जहाँ व्यवहार का सम्बन्ध आता है, वहां-वहाँ उसकी नींव असत्य पर ही बनी होनी चाहिए। मनुष्य को दुनिया में यही सोचकर चलना चाहिए कि यहां जो कुछ है सो बुरा ही बुरा है। जितने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हक या अधिकार पाने हैं, वे सब लड़झगड़ कर ही पाने हैं ये और ऐसे अन्य अनेक अलिखित नियम आज मनुष्यों के आपसी व्यवहार में प्रचलित हैं।

मैं मानती हूँ कि यदि स्त्रियां पुरुषों का अनुकरण करना छोड़ दें और जो कुछ उनके मन को अच्छा जँचे वैसा ही करने लगें, तो मनुष्यों के व्यवहार में वे बहुत कुछ परिवर्तन कर सकती हैं और उनको अभीष्ट रूप भी दे सकती हैं। इसमें शक नहीं कि जो सँस्कार पीढ़ियों और सदियों पुराने हैं, उनके दूर होने या बदलने में भी काफी समय लगेगा। फिर भी, दुनिया में ऐसी कोई चीज नहीं, ज असम्भव हो। आज कल की स्त्री दो रोगों से ग्रस्त है। एक रोग तो यह है कि वह चाहे या न चाहे तोभी उसका मन यह मानना चाहता है कि पुरुष जो कहता है वही ठीक है। पुरुषों के ठहराये हुये नीति-नियम, उनके बनाए हुए विधि-विधान, उनके तैयार किये हुए कानून-कायदे और उनके द्वारा प्रचारित रीति-रिवाज, जो कुछ भी हैं सो सब उसको सोलहों आने ठीक मालूम होते हैं। किसी स्त्री का भाषण सुनकर स्त्रियां यदि उसके विचार ठीक हुये तो उसे ठीक कहती हैं, अन्यथा साफ-साफ कह देती हैं कि भाषण में धरा क्या था? योंही कुछ अण्डबण्ड बक गई! अपनी समझ में न तो कोई बात आई और न जँची। परन्तु जब वे ही बातें किसी पुरुष के व्याख्यान में सुनती हैं, तो उनका झुकाव उन बातों को सच मानने की तरफ ही ज्यादा होता है। इसी को मैं लघुता-ग्रँथि (Inferiority-complex) कहती हूँ। इसी कारण आज स्त्रियाँ स्वयँ स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करने की हिम्मत नहीं कर पातीं। वे पुरुषों की बराबरी का दावा तो करना चाहती हैं, परन्तु आचार, व्यवहार और विचार में वे प्रायः पुरुषों की ही जूठन से काम लेती हैं। दूसरे शब्दों में यद्यपि बाह्यतः वे पुरुषों के स्वामीत्त्व को मानने से इन्कार करती हैं, तथापि उनकी बौद्धिक गुलामी से अपने को छुड़ा नहीं पातीं।

स्त्री का दूसरा रोग है तङ्गदिली अर्थात् हृदय की सँकुचितता। आज स्त्री महान् बातों का उतनी ही महानता के साथ विचार नहीं कर पाती। उसके लिए यह बहुत जरूरी है कि वह अपने हृदय को विशाल बनावे और दुनिया को विशाल दृष्टि से देखे।

आज स्त्रियों में पारस्परिक निन्दा का, असहिष्णुता का, असहानुभूति का और इसी तरह के अन्य 'स्त्री सुलभ' दूषणों का जो बाहुल्य पाया जाता है उसकी जड़ में ये दो रोग रहे हुए हैं और ये सब दोष उसके इसी रोगी मन के परिणाम अथवा चिन्ह हैं।

हमें यह ध्यान में रखना चाहिये कि स्त्री को यह रोग घर की चहारदीवारी के अन्दर बन्द रहने के कारण ही लगा है। गृहिणी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और माता के रूप में अपने कर्त्तव्यों का भली भांति पालन करना मानव हित की दृष्टि से स्त्री का सबसे बड़ा काम है। इस तथ्य को समझकर जिस दिन स्त्रियां पुनः इस ओर झुकेंगी उस दिन उन्हें खास तौर पर यह बात ध्यान में रखनी होगी कि वे भविष्य में कभी अपने को सँकुचित वातावरण में रखकर तङ्ग और सँकुचित बनने से यत्नपूर्वक बचायेंगी। अर्थात् उनको यह बात सदा ध्यान में रखनी होगी कि वे स्वयँ भी देश की नागरिक हैं, समाज का अङ्ग हैं और मातृभूमि की सन्तान हैं। अतएव इन सब बातों से भी उनके अपने कुछ कर्त्तव्य हैं ही, जिनको भूल जाना कभी हितकारक नहीं हो सकता। इस दिशा में वे प्रत्यक्ष कुछ काम कर सकें तब भी ऐसे प्रश्नों पर सोचते रहना और उनके सम्बन्ध की आवश्यक जानकारी प्राप्त करते रहना बहुत जरूरी है।

इसी तरह जब-जब अवसर मिले लोक-हित का कुछ न कुछ काम घर से बाहर निकल कर करने की जिम्मेवारी अपने सिर लेते रहना भी उनके लिए अच्छा है।

स्त्री गुलाम कैसे बनी ?

इतिहास की खोज करने वालों का कहना है कि जब मनुष्य समाज के आरम्भ में जङ्गली हालत में रहते थे, उस समय मर्द और औरत का सम्बन्ध स्वतन्त्रता का सम्बन्ध था। न औरत किसी की पत्नी होकर रहती न मर्द किसी की रखवाली करता था। लेकिन आहिस्ता-आहिस्ता जब मनुष्य ने एक स्थान पर रहना और बसना शुरू किया और बिरादरियों ने गाँव बसाए तो मर्द और औरत के काम बँट गये। मर्द दिन भर शिकार की खोज में घूमता और औरत घर में रहकर शिकार का काम-काज के लायक बनाती। इस जमाने में घर-गृहस्थी पर उसका कब्जा था और मर्द पर भी उसका हुक्म चलता था। फिर समय बदला। मर्द ने जानवरों को पालना सीखा। जानवरों के चारे के लिए उसने खेती भी शुरू की। उस जमाने में सम्पत्ति का रिवाज चला। क्योंकि मर्द का काम था जानवरों को फाँस कर लाना और उन्हें चराने ले जाना, उनकी रखवाली करना, इसलिए जानवर भी उसकी मिल्कियत हुए और जमीन भी उसकी मिल्कियत हुई। औरत अब कातती और बुनती, घर-गृहस्थी का काम करती लेकिन अब उसका अपना कुछ न रहा।

मिल्कियत के होने से समाज बिलकुल बदल गया। अब मर्द के पास जानवर थे, जमीन थी, हथियार और औजार थे। मर्द का हाथ बँटाने के बावजूद भी औरत इन चीजों की मालिक न थी। इसलिए उसके हक कम हो गये, और जानवरों के साथ वह भी मिल्कियत में दाखिल हो गई। जहाँ जमीन और जानवरों के बँटवारे के लिए कानून बनने लगे वहाँ औरत भी हिस्से में आने लगी, छीनी जाने लगी, बिकने लगी और बन्द करके रक्खी जाने लगी।

(सँकलित)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोर्डों की कहानी

ले०—श्री शुकदेवनारायण

भैया, यह क्या है ? इतनी ऊँची दीवालों से घिरा यह घर किसका है ? घूमते समय विमल ने अपने भाई निर्मल से पूछा।

"विमल. यह जेल है। इसमें चोर, लुटेरे और अपराधी लोग कैद करके रखे जाते हैं। जेलों के अन्दर लोगों को कष्ट दिया जाता है जिससे डरकर वे अपराध छोड़ दें! वे भाग न जाएँ इस कारण जेल का अहाता ऊँची दीवालों से घिरा है। देखो, सामने जो मकान है, वह अस्पताल है। वहां रोगियों को मुफ़्त दवा मिलती है।"

"अस्पताल तो मैंने पहले भी देखा है। लेकिन वह तो छोटासा था। पिछले साल जब महेश का हाथ टूट गया था तो उसे लेकर पिताजी, रामा और मैं अस्पताल आये थे। वह तो इससे कहीं छोटा था ?"

"यह बड़ा शहर है, इस कारण यहां का अस्पताल बड़ा होना ही चाहिए। यहाँ उस अस्पताल से अधिक योग्य और अनेक डाक्टर रहते हैं। इस कारण यहां दूर-दूर से लोग दवा कराने आते हैं। अस्पताल ही नहीं इस शहर की हर चीजें तुम्हें बड़ी दीखेंगी, क्योंकि इस शहर में जिलाधीश का दफ़्तर है। यह सामने का मकान डाकघर है। तुम्हें याद होगा कि पिछले दिनों छुट्टियों में जब मैं घर जा रहा था तो उस समय गांव के पास रास्ते में हमने एक छोटे से घर से कुछ चिट्ठियां मोल ली थीं। मैंने तुम्हें बताया था कि यह पोस्ट-आफिस है और यह भी बताया था कि डाक घर का काम किस तरह होता है। उस छोटे डाकघर से यह कितना बड़ा है!"

"हाँ, भैया डाकघर के बारे में मैं अच्छी तरह जानता हूँ। अच्छा यह तो बताओ कि यह बड़ा सा मकान क्या है? इस पर लिखा है—जिला-बोर्ड आफिस। और उस ओर देखो उस पर लिखा है—म्युनिसिपल-आफिस।"

"ये सब काम की चीजें हैं। हमारे जिले का, शहर का, और गांवों का बहुत सा काम इनसे होता है। देखो यह पार्क आ गया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहीं बैठकर तुम्हें बतलाऊँगा कि ये बोर्ड हमारा कौन २ सा काम करते हैं।

"यह पार्क किसका है ?"

"यह पार्क इसी म्युनिसिपल बोर्ड का है। म्युनिसिपैलिटियों का कार्यक्षेत्र शहर में है। इनके मुख्यत: दो काम हैं—एक तो नगर का सुधार करना और दूसरा शहर में रहने वाली जनता को नागरिक शिक्षा देना।"

"नागरिक शिक्षा क्या है भैया ? क्या इसके लिए भी मदर्से में पढ़ना पड़ता है ?"

"नागरिक शिक्षा के लिए मदर्से तो नहीं हैं, पर म्युनिसिपैलिटियां नागरिक शिक्षा के लिए पुस्तकालय और वाचनालय खुलवाती हैं, लोगों को योग्य नागरिक बनाने के लिए सभा-भवन बनवाती हैं। नगर के सब आदमी मिल जुल कर रहें और बराबर एक-दूसरे की उन्नति में सहायक होते रहें; इस तरह की शिक्षा नागरिक शिक्षा कहलाती है।"

"इतने आदमियों को म्युनिसिपैलिटी किस तरह शिक्षा देती है ?"

तुम्हें मैंने शुरु में ही कहा था कि म्युनिसिपैलिटी की सीमा बन्धी हुई होती है। इनमें जनता द्वारा चुनकर प्रतिनिधि आते हैं और कुछ प्रतिनिधि नामजद रहते हैं। इन सदस्यों में से एक को म्युनिसिपैलिटी अपना सभापति चुनती है। सभापति ऐसा आदमी भी हो सकता है जो म्युनिसिपैलिटी का चुना हुआ सदस्य नहीं है।

नामजद सदस्य कौन होते हैं ? और चेयरमैन किसे कहते हैं ?

नगर के कुछ आदमियों के नाम जिले का शासक पेश करता है और वे सदस्य बनाए जाते हैं। इस ढङ्ग से बनाये हुये सदस्य नामजद सदस्य कहलाते हैं। सभापति को ही चेयरमैन कहते हैं। नामजद सदस्यों में या शहर के अन्य व्यक्तियों में यदि कोई प्रभावशाली व्यक्ति हो और उससे नगर के काम में उन्नति होने की सम्भावना हो तो उसे चेयरमैन बना दिया जाता है। सदस्यों का चुनाव हर तीसरे साल होता है। जो लोग हाउस टैक्स देते हैं और उनकी अवस्था १८ वर्ष की होती है वे वोट देने के अधिकारी होते हैं। उन्हें वोटर या मतदाता कहते हैं। निश्चित वेतन पाने वाला या शिक्षित व्यक्ति भी वोटर हो सकता है।

नगर वार्डों में बँटे हुये होते हैं। प्रत्येक वार्ड से एक या एक से अधिक सदस्य चुने जाते हैं। २१ वर्ष की आयु वाले लोग निर्वाचन के उम्मीदवार हो सकते हैं। निर्वाचन में अधिक वोट पाए हुए ही सदस्य हो सकते हैं और वे म्युनिसिपल कमिश्नर कहलाते हैं।

म्युनिसिपैलिटी सदा जनता की भलाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का ख्याल रखती है। ये सड़कें म्युनिसिपैलिटी की ही बनवाई हुई हैं। आते वक्त तुमने जो पानी छिड़कते मोटर देखी थी वह भी म्युनिसिपैलिटी की ही है। म्युनिसिपैलिटी लोगों की स्वास्थ्य-रक्षा के लिए सफाई का प्रबन्ध करती है। लोगों के पानी का प्रबन्ध करती है। शहर की गन्दगी दूर हो, छूत की बीमारी नहीं फैले और खाने-पीने की चीजें अच्छी मिलें—इसकी व्यवस्था करती है। अस्पताल भी लोगों के लाभ के लिए बनवाती है, शिक्षा-प्रचार करना भी उसका उद्देश्य है। इस पार्क के सामने जो वह मकान है वह म्युनिसिपैलिटी का ही है। वह पुस्तकालय है।

नगर में रहने वाले और बाहर से आने वाले लोगों की हर प्रकार की सुविधा का ख्याल रखना म्युनिसिपैलिटी का काम है।

"इन सब कामों के लिए तो रुपए चाहियें; ये रुपए कहां से आते हैं। ?"

म्युनिसिपैलिटी की आय कई ढङ्ग से होती है। तुम्हें याद होगा कि आज सवेरे एक आदमी हमारे यहां से पैसे वसूल करके ले गया था। वह सफाई-कर ले गया था। वह इसी म्युनिसिपैलिटी का कर्मचारी था। तुमने रास्ते में देखा होगा कि सड़क की बगल में बांस की फट्टों की बनी एक सुन्दर झोंपड़ी है, ऐसी झोंपड़ियां इस शहर के हर नाके पर हैं। यहां एक सिपाही और एक किरानी रहते हैं। यह चुङ्गी घर कहलाता है। शहर में बिकने आने वाले हर सामान से चुङ्गी ली जाती है। चुङ्गी की आय म्युनिसिपैलिटी के कोष में जमा होती है। इसके अतिरिक्त हाउस टैक्स, जमीन-कर, व्यापार और पेशा-कर, नदियों और पुलों का कर, सवारियों, पानी, रोशनी, कसाईखाना, हाट, सम्पत्ति और जानवर आदि पर कर लगाने से म्युनिसिपैलिटी की आय होती है। इनके अलावा सरकार से भी सहायता मिलती है। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में कारपोरेशन हैं। इनका काम म्युनिसिपैलिटी जैसा ही होता है। कारपोरेशन का सभापति मेयर कहलाता है।

भैया चलिए, काफी सँध्या हो गई। हां, चलो जिला बोर्डों के सम्बन्ध में तुम्हें डेरे पर ही बता दूँगा। म्युनिसिपैलिटी के सम्बन्ध में साधारण जानकारी की काफी बातें बता दी।

(२)

"भैया, आपने कहा था कि रात को तुम्हें जिला बोर्ड के सम्बन्ध में कहूँगा।

यह बात तो मेरी समझ में आ गई कि नगरों का प्रबन्ध म्युनिसिपैलिटी करती है। पर यह प्रबन्ध कैसे होता है और जिला बोर्ड के जिम्मे कौनसा काम है ?"

म्युनिसिपैलिटी की सहायता के लिए छोटी-छोटी समितियाँ होती हैं। हर समिति के जिम्मे अलग-अलग काम होते हैं। और हरेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ६-७ सदस्य होते हैं। "अच्छा, यह तो बताओ कि हम लोगों के गांव का प्रबन्ध किस प्रकार होता है। वहाँ तो म्युनिसिपैलिटी नहीं है।"

तो क्या जिलाबोर्ड जिला के गांवों का प्रबन्ध करती है? हम लोगों के गाँवों का प्रबन्ध तो लोकल-बोर्ड से ही होता है।

ठीक! परन्तु लोकल-बोर्ड को जिलाबोर्ड की एक शाखा ही समझो। जिलाबोर्ड के तीन भाग होते हैं। इसकी एक शाखा लोकल बोर्ड या स्थानीय-बोर्ड कहलाती है। यह गांवों या कस्बों का प्रबन्ध करता है। दूसरा सबडिविजन बोर्ड होता है। यह एक सबडिविजन में होता है और स्थानीय बोर्डों की निगरानी करता है। तीसरा जिलाबोर्ड है जो सारे जिले के बोर्डों की देखभाल करता है। जिला बोर्ड में सदस्यों की संख्या अधिक होती है यहां भी नामजद सदस्य होते हैं। प्रांतीय सरकार इस बात को तय करती है कि प्रांतीय बोर्ड का सभापति निर्वाचितों में से होना चाहिए या नामजद में से। १२ आना चौकीदार टैक्स देने वाले तथा २१ वर्ष से ऊपर के मैट्रिक पास व्यक्ति जिला बोर्ड के चुनाव में वोट दे सकते हैं। ६ आने चौकीदारी देने वाले हरिजन भी वोटर हो सकते हैं। सदस्यों और सभापति का निर्वाचन ३ वर्ष के लिए होता है। प्रत्येक जिला कई केन्द्रों में बँटा होता है। प्रत्येक केन्द्र के सदस्यों की संख्या निश्चित रहती है। बालिग वोटर भी सदस्य होने का उम्मीदवार हो सकता है। इन बोर्डों का काम म्युनिसिपैलिटी जैसा ही है। इसके अतिरिक्त इन्हें कृषि और पशुओं की उन्नति की ओर ध्यान देना पड़ता है।

हमारे गांव में जो फाटक है, क्या वह जिला बोर्ड का ही है?"

हां, वह जिला बोर्ड का ही है, जिला बोर्ड को इनसे आय होती है। जिला बोर्डों को कुछ रुपये सरकार से भी मिलते हैं, इनकी आय का मुख्य साधन भूमि-कर कमीशन है।

'भूमि-कर का कमीशन क्या?

भूमि-कर का कमीशन तुम नहीं समझे। जमीन का सरकार कर लेती है। इस कर से जितने रुपए आते हैं, उनमें से फी रुपया १ आना कमीशन के रूप में जिला बोर्ड को मिलता है। स्थानीय-बोर्ड में रुपया जिला बोर्ड से आता है, इसलिए उन्हें जिला-बोर्ड की हिदायतों के अनुसार ही खर्च करना पड़ता है।

कलक्टर और कमिश्नर इन बोर्डों की देखभाल करते हैं। बोर्ड के किसी अनुचित काम को वे रोक भी सकते हैं। प्राँतीय सरकार बोर्डों को तोड़ भी सकती है। तोड़ने पर वह नया निर्वाचन करे या अपने आदमियों द्वारा अपना काम चला सकती है।

देखो, तुम अब बोर्डों के सम्बन्ध में काफी बातें जान गए। उन्हें भूल न जाना। अच्छा बतलाओ तो जिला बोर्ड के जिम्मे कौन २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से काम हैं।

वाह भूल क्यों जाऊँगा ? सुनो मैं तुम्हें जिला बोर्ड के कामों को गिनाता हूँ।

(१) सड़कें बनवाना और उनके किनारे पेड़ लगवाना, घाट, नाव और पुल आदि का प्रबन्ध करना।

(२) शिक्षा का प्रचार करना।

(३) चिकित्सा का प्रबन्ध करना।

(४) बाजार, मेला, हाट इत्यादि लगवाना।

(५) कुएँ, तालाब आदि खुदवाकर पानी का प्रबन्ध करना।

(६) खेती को हानि पहुँचाने वाले जानवरों के लिए फाटक का प्रबन्ध करना, और जानवरों की नस्ल सुधारने की तदवीर करना।

क्यों ठीक है न ?

हां, ठीक है। जब तुम बड़े होओगे तो इस सम्बन्ध में और भी अधिक जानोगे। अभी इतना ही काफी है।

खादी गौरव

रचयिता—श्री "विकल"

मलमल कर मलमल कर धारण, मलमल कर पछताओगे।
मारकीन और पहन नैनसुख नहीं नैन सुख पाओगे॥
तङ्ग करै तँजेब डोरिये में जब जकड़े जाओगे।
लट्ठे से बनकर गुलाम हा! गट्ठे रोज उठाओगे॥

पीड़ित दलितों की हित चिन्तक शुद्ध स्वदेशी खादी है।
खादी के हर तार तार में भारत की आजादी है॥१॥

हृदय देव भारत के गौरव गाँधी जी का गीता ज्ञान।
बिजयी विश्व तिरङ्गे प्यारे का है यह अमर निशान॥
भूखों का भोजन अरु दुखिया विधवा के दिल का अरमान।
"विकल" देश पर मिटने वाले परवाने की यह पहिचान॥

सत्य अहिंसा के बल पर ही बापू ने शिक्षा दी है।
खादी के हर तार तार में भारत की आजादी है॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिनलैंड की कुछ बातें

प्रिय बाल बन्धुओ, आपने अखबारों में पढ़ा होगा कि फिनलैण्ड जैसा छोटा सा देश अपनी आजादी की रक्षा के लिए पूरे तीन महीने तक रूस के साथ युद्ध करता रहा। रूस जैसे शक्तिशाली देश के मुकाबले में बहुत दिनों तक लड़ते रहना फिनलैण्ड के लिए आसान न था। आखिरकार विवश हो कर फिनलैण्ड ने रूस के साथ सुलह करली। इस युद्ध में फिनलैण्ड इस वीरता से लड़ा कि उसका नाम इतिहास में सदा अमर रहेगा। कहा जाता है कि इस युद्ध में रूस के ३ लाख सैनिक काम आए। आज मैं आपको उसी वीर फिनलैण्ड का थोड़ा सा हाल बताऊँगा।

फिनलैण्ड चट्टानों, जङ्गलों और झीलों का देश है। यह १४७८११ वर्ग में फैला हुआ है। १९३६ की मर्दुमशुमारी के मुताबिक इसकी कुल आबादी ३८०७१६५ है। हलसिंगफर्स, विपुरी, तुर्कू तथा हम्पेरा इसके मुख्य नगर हैं।

फिनलैण्ड में झीलों का जाल बिछा हुआ है। कहते हैं कि झीलों की तादाद वहां २० हजार है। इन झीलों को नहरों द्वारा एक दूसरे से जोड़ दिया गया है।

वहां की आबो हवा बहुत ठण्डी और सख्त है। वहां ८–९ महीने सर्दी और २–३ महीने गर्मी रहती है। बर्फ खूब पड़ती है।

वहाँ की मुख्य पैदावार जङ्गल की लकड़ी है। जाड़े में प्रायः लकड़ी का ही काम होता है। लकड़ी के अलावा कागज का गुदा भी काफी मिकदार में तैयार किया जाता है। गर्मी के दिनों में कुछ खेती भी होती है। पशु पालन और दूध मक्खन का व्यापार भी वहाँ खूब होता है। वहाँ ६०० से भी ज्यादा डेयरियां हैं। उनमें प्रति वर्ष ५४० हजार मन से भी अधिक मक्खन तैयार किया जाता है। वहां निकल की खानें भी काफी हैं। वहां के ६५ फीसदी आदमी खेती बाड़ी और १५ फीसदी दस्तकारी का काम करते हैं।

शिक्षा, कला-कौशल में फिनलैण्ड बहुत आगे बढ़ा हुआ है। वहाँ अनपढ़ों का नाम निशान तक नहीं। वहाँ तीन युनिवर्सिटियाँ और ११ हजार प्रायमरी स्कूल हैं। हमारा देश तो शिक्षा में फिनलैण्ड से बहुत पीछे है। यहां तो १०० में से केवल ८ मनुष्य ऐसे हैं जो कुछ लिख पढ़ सकते हैं। फिनलैण्ड के लोग सीधे, सच्चे, मेहनती, स्वावलम्बी, ईमानदार और स्वाभिमानी हैं।

युद्ध में फिनलैंड के १५ हजार आदमी मारे गये, ९ हजार स्त्रियां विधवा हुईं, ९५ हजार बच्चे अनाथ हुए, ५ हजार मकानों पर रूसी बम्ब गिरे और ५ लाख व्यक्ति गृह हीन हो गये हैं।

—एक बाल-बन्धु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुलवाड़ी

मजहब रोटी है

अमेरिका में हाल हो में हुई तमाम मुल्कों के नौजवानों की एक मजहबी कांफ्रेंस में बोलते हुए एक रूसी युवक ने कहा—"अगर मजहब कोई ऐसी चीज है जिसकी कि हमें बहुत जरूरत है तो वह रोटी है। आज कल का मजहब तो यही है और होना चाहिए। सदियों से एक मनुष्य ने दूसरे को लूटा है, ठगा है, जुल्म और ज्यादतियों से उसका सब कुछ छीनकर खुद मालिक बन गया है। दुनिया में हर वक्त रोटी का सवाल महत्वपूर्ण रहा है। इसके लिए मनुष्य ने सब कुछ भूलकर मनुष्य के साथ बुरे से बुरा बर्ताव किया है। यह जद्दोजहद आज भी जारी है, प्राचीनकाल से जारी रही है और उस वक्त तक जारी रहेगी जब तक कि रोटी का सवाल हल नहीं हो जाता। अगर आदमी का रोटी का सवाल हल हो जाय, उसे रोटी मिलने में दिक्कत न हो, उसे बेईमानी और जालसाजी न करनी पड़े तो कोई वजह नहीं कि इन्सान हैवान बने और अपने ही साथी और पड़ौसी के खून का प्यासा हो जाय। मनुष्य मेहनत करने के बाद थक जाता है, तब उसे आराम और खाने पीने की जरूरत होती है। यह उसके दिल और शरीर का धर्म कहा जा सकता है। अगर इसे वह ईमानदारी और सहूलियत के साथ पूरा न कर सका तो उसे मजहब या धर्म का क्या फायदा पहुँच सकता है, भूखे आदमी का दिल कैसे पाक साफ और मजबूत रह सकता है।"

(क्रान्ति)

बीसवीं सदी का अनपढ़ जमींदार

वह कुरूप था किन्तु उसकी वाणी कुरूप ही नहीं भयङ्कर थी। धन की ओर-छोर नहीं। दुनिया के अर्थ में सर्वसुखी, समर्थ। वह दान देता था, परन्तु उन्हें जिनसे दान की आशा होती थी। वह आदर करता था, सत्ताधारियों, धनवानों और चापलूसों का। पास हृदय था, परन्तु अपनेपन में डूबा; मान था परन्तु लोभ में दबा हुआ। बुद्धि थी, परन्तु राजकीय आतङ्क द्वारा कुचली हुई विषैली नागन-सी। दया थी, परन्तु अपने घरवालों-बच्चों तक सीमित। क्षमा थी, परन्तु केवल स्वार्थवश। ईर्षा थी, लगान छीनने वाले कांग्रेस के हाथों से, लीडरों से। विद्या थी, परन्तु मूर्खों को उल्टी-सीधी समझाने भर की। घृणा थी, मैली-कुचैली फैली हथेलियों से जो उसके सामने गिड़गिड़ा कर भीख माँगती थीं।

वह बीसवीं सदी का अनपढ़ जमींदार था।

(प्रदीप)

आज की सभ्यता ?

आज की सभ्यता में क्या नहीं है? क्या आज देशों को और जातियों को नहीं जीता जाता? उन्हें गुलाम नहीं बनाया जाता? बर्बर लोग विरोधी मनुष्यों पर कितनी क्रूरता दिखा लेते, परन्तु बच्चों-स्त्रियों पर हाथ उठाना कायरता समझते थे। आज के सभ्य स्त्री बच्चों पर बम गिराना, शत्रु को परेशान करने और आत्म-समर्पण के लिए विवश करने की इसे एक आवश्यक तरकीब मानते हैं। बर्बर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़ते थे, उन्हीं से लड़ते थे। दूसरे लोग अपना २ धन्दा करते रहते, उनसे कुछ न कहते थे। निःशस्त्र को मारना पाप मानते थे। आज की सभ्यता में रात में घरों में सोते हुओं पर, रेल में बैठों पर, बम बरसाना, भयभीत भागते हुओं को मशीनगनों से भून देना, खेतों में ज्वलन शील बम फेंककर आग लगा देना—युद्ध के आवश्यक अङ्ग माने जाते हैं। बर्बर शत्रु को शस्त्रास्त्र से मारने में दोष नहीं मानते थे, परन्तु विष देना आततायीपन गिना जाता था। बर्बर लोग अपनी श्रेष्ठता मना लेने के बाद विरोधी राष्ट्रों को निर्बल बनाए रखने की कल्पना भी न करते थे। आज की सभ्यता में जो एक बार आधीन हो गया, उसे कयामत तक स्वतन्त्र न होने देने की वैज्ञानिक चेष्टा का नाम राजनीति है। बर्बर लोग समान आर्थिक लोभ या जाति विरोध की भावना से प्रेरित होकर एक हो लड़ते थे। आज की सभ्यता में सैनिकों में विचार शक्ति पैदा न होने देने के लिए उन्हें बर्बर बायुमण्डल में रखा जाता है। बर्बर भूखे प्यासे लड़ना गुनाह समझते थे। आजकल की सभ्यता सबसे पहले बिजलीघर, रेल के जङ्क्शन, वाटरवर्क्स आदि पर बम बरसाती है। इसमें शक नहीं कि बर्बर समूहों में भी धनवान निर्धन होते थे किन्तु उनमें पूञ्जीपति भावना नहीं होती थी। धनवान अपने धन को समाज की वस्तु मानता था और उसका काफी भाग लोकहित के कामों में लगाना धर्म समझता था। वह जैसी बर्बरता से प्राप्त करता था, वैसी ही बेपरवाही से खर्च कर डालता था। परन्तु आज की सभ्यता में दान-धर्म सब किसी न किसी अर्थ को लेकर किया जाना बुद्धिमानी है।

एक निकम्मा स्वप्न !

"हम में यदि ऐसे हिन्दू मौजूद हैं जो चाहते हैं कि एक हजार साल पहले का हिन्दू जीवन वापस ले आयें तो उन्हें मालूम होना चाहिए कि वे एक स्वप्न देख रहे हैं जो कभी पूरा होने वाला नहीं है। इसी तरह अगर ऐसे मुसलमान दिमाग मौजूद हैं जो चाहते हैं कि अपनी उस बीती हुई तहज़ीब और समाजी जिन्दगी को फिर ताजा करें जो वह एक हजार साल पहले ईरान और मध्यएशिया से लाये थे तो मैं उनसे भी कहूँगा कि इस स्वप्न से वह जितनी जल्दी जाग जायँ बेहतर है, क्योंकि यह एक अप्राकृतिक कल्पना, एक गैर कुदरती तखय्युल है और इस तरह के खयालात वास्तविकता की जमीन में नहीं उग सकते। मैं उन लोगों में हूं जिनका विश्वास है कि पुरानी चीजों को फिर से ताजा करने की यानी revivalism की जरूरत मजहब के मैदान में है, लेकिन समाजी जिन्दगी में रीवाइवलिज्म का मतलब तरक्की से इनकार करना है।"

—मौलाना आज़ाद

ग्रन्थालय !

—'ग्रन्थालय' के पुजारी अपने जीवन में सदा सफलता प्राप्त करते हैं।

—'ग्रन्थालय' एक लोह चुम्बक है।

—'ग्रन्थालय' के प्रेमी जीवन पर्यंत ग्रन्थों के उपासक रहते हैं।

—'ग्रन्थालय' जीवन लता का पोषक तत्व है।

—'ग्रन्थालय' सरस्वती देवी का परमधाम है।

—'ग्रन्थालय' निर्जीव होने पर भी चेतन होने के कारण सजीव समझा जाता है।

—'ग्रन्थालय' सार्वजनिक संस्था होने के कारण किसी भी तरह का भेद भाव नहीं रखता। छोटा हो या बड़ा हो, अमीर हो या गरीब हो, राजा हो या रङ्क हो—सभी उससे लाभ उठा सकते हैं।

(पुस्तकालय)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपक के प्रकाश में——

A manual of Indian Pharmacopoeia ले० कविराज हरस्वरूप शर्मा, मू० १)

ऊँझा आयुर्वेदिक फार्मेसी गांधी रोड, अहमदाबाद से अंग्रेजी में प्रकाशित इस पुस्तक में आयुर्वेद के आधार पर रस, भस्म, गुटिका, काथ, आसव, अरिष्ट आदि के बनाने के नुसखे, उनके विभिन्न भेदों के साथ लेखक ने अपने अनुभव के आधार पर चुनकर सूत्र रूप में व्यवस्थित ढङ्ग से वर्णित किये हैं। परिशिष्ट में, प्रायः सभी रोगों के लिये उनकी चिकित्सार्थ व्यवहरित नुसखों की सूची व पृष्ठांक देने से पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ गई है। परन्तु साथ में मैटीरिया मैडिका का अभाव जनसाधारण को इसके यथेष्ट लाभ से वञ्चित रखता है।

तेल की पुस्तक——ले० प्रो० लक्ष्मीचन्द एम० ए० एम० एस० सी० (टेकनीकल), मू० १)

विज्ञान हुनर कार्यालय, बनारस सिटी से प्रकाशित इस पुस्तक में तेल के सम्बन्ध में उसकी विभिन्न जातियां, गुण और उपयोगों का वैज्ञानिक, विस्तृत परन्तु मनोरञ्जक शैली में वर्णन किया गया है। हर प्रकार के तेल को तैयार करने की विधि और उसके द्वारा नित्य-व्यवहार की साबुन, वैस्लीन, वार्निश आदि सामग्रियों के बनाने का तरीका इतने आसान ढङ्ग से बताया गया है कि साधारण शिक्षित भी इस पुस्तक के आधार पर उन सब चीजों को खुद तैयार कर सकता है। तेल सम्बन्धी उपरोक्त शिल्प-धन्धों को करने या सीखने वालों के लिये हिन्दी में यह अपने ढङ्ग की पहली पुस्तक है।

कृष्ण गीता —ले० दरबारीलाल सत्यभक्त, प्रकाशक– सत्याश्रम, वर्धा, मू० ।॥)

लेखक महोदय ने इस पुस्तक में भगवत्-गीता के कर्म योग-सन्देश का पद्यमय वर्णन करते हुए वर्तमान सामाजिक, धार्मिक व नैतिक समस्याओं का अपने सत्य समाज के दृष्टिकोण से सुन्दर हल बताया है। पद्य-रचना सुन्दर म प्रवाहमय है। भाषा सरल व मुहावरेदार है।

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली की चार पुस्तकें——

१. विनाश या इलाज (युरोप में सत्य और अहिंसा के प्रयोग)—ले० कुमारी म्यूरियल लीस्टर, मू० ।॥)

सत्य और अहिंसा की कट्टर अनुयायी लेखिका ने अंग्रेजी में लिखी इस पुस्तक में अपने उन अनुभवों का वर्णन किया है जो कि उन्होंने प्रत्येक देश की जनता के सम्पर्क में आकर प्राप्त किए हैं। आपने प्रत्येक देश की जनता के हृदय में इस ईश्वरीय विचार को व्याप्त पाया है कि सब देशों के निवासी भाई-भाई हैं और सर्व साधारण जनता यह चाहती है कि उसे शान्ति के लक्ष्य को प्राप्त करने के निश्चित साधन और मार्ग बताए जावें। युद्ध सामग्री तैयार करने वाले कारखानों के मालिकों व पूञ्जीपतियों के एक देश के विरूद्ध दूसरे देश को भड़काने के हथ-कण्डों का भी आपने नग्न चित्र खींचा है जिससे युद्ध के असली उद्देश्य—बड़े-बड़े व्यवसाइयों द्वारा सर्व साधारण का आर्थिक शोषण—का स्पष्टीकरण हो जाता है। पुस्तक अत्यन्त ज्ञान वर्धक, स्फूर्तिदायक व उपयोगी है।

२. राष्ट्रीय पञ्चायत—प्रस्तुत पुस्तक म० गांधी, डा० पट्टाभि सीतारामैया, श्री राजगोपालाचार्य, श्री एम०एन०राय श्री सम्पूर्णानन्द आदि के लेखों का संग्रह है। इस पुस्तक में राष्ट्रीय पञ्चायत के उद्देश्य, विधान और उसमें अल्पसंख्यकों के अधिकारों को किसप्रकार संरक्षण दिया जायेगा, आदि सब बातों पर प्रकाश डाला गया है। मू० ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. युद्ध-सङ्कट और भारत—इस पुस्तक में युद्ध की घोषणा कर दिये जाने के बाद, वायसराय द्वारा म० गाँधी को मिलने के लिये बुलाने से लगाकर २६ जनवरी तक समय २ पर दिये गये म० गांधी, डा० राजेन्द्रप्रसाद, पँ० जवाहलाल नेहरू आदिके लेख, वक्तव्य तथा कांग्रेस कार्य समिति और महासमिति के वक्तव्य और प्रस्ताव हैं। वर्तमान युद्ध के प्रति कांग्रेस का दृष्टिकोण समझने के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। पुस्तक का मू० ।)

४. सत्याग्रहः क्यों, कब और कैसे ?

इस पुस्तक में म० गांधी के सत्याग्रह विषयक लेखों का सँग्रह किया गया है। पुस्तक में बताया गया है कि सत्याग्रह क्यों, कब और किन हालतों में शुरू किया जा सकता है। सत्याग्रह युद्ध में शामिल हाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को यह पुस्तक बड़े ध्यान से पढ़नी चाहिए। इसका मू० =)

तीस दिन में हिन्दी—ले० श्री भगवान प्रसाद, प्रकाशक सोमीलाल गुप्त, शिवपुर, बनारस, यह पुस्तक बड़े वैज्ञानिक ढङ्ग से लिखी गई है। प्रायमरी स्कूलों के अध्यापकों, अध्यापिकाओं तथा प्रौढ़-शिक्षा में दिलचस्पी रखने वालों के लिए बड़े काम की है। मूल्य =) कुछ अधिक है।

महा पुरुषों की जीवन झाँकी—लेखक श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी, प्रकाशक, छात्र हितकारी पुस्तक माला, दारागञ्ज, प्रयाग, पृष्ठ सँख्या ११७, मू० ।।=)

श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी एक उत्साही एव भावुक युवक हैं। जीवनियां लिखने का आपको बड़ा शौक है। आपकी शैली से पता लगता है कि यदि आपको प्रोत्साहन मिलता रहा तो आप एक दिन उच्च कोटि के जीवनी लेखक बनेंगे। महात्मा जी के पास रहने के कारण आपको देश के प्रसिद्ध नेताओं व राष्ट्र सेवकों के सम्पर्क में आने और उनसे बात-चीत करने का सुअवसर मिलता रहता है जिसके फल स्वरूप आप उनके सादा रहन सहन से बहुत प्रभावित हुए हैं। प्रस्तुत पुस्तक इन्हीं राष्ट्र सेवकों पर लिखे हुए आपके दस लेखों का सँग्रह है। ये लेख कुछ अन्य प्रान्तीय भाषाओं में भी अनुदित हो चुके हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि बाल-बन्धुओं ने इन लेखों को बहुत ही पसन्द किया है।

पुस्तक की भाषा बड़ी सरल तथा शैली रोचक है। एक बार शुरू करके खत्म करने को ही जी करता है। बार बार पढने से भी दिल नहीं भरता। पुस्तक को पढ़ने से नई उमङ्गें, नई भावनाएँ और नये विचार उठते हैं तथा कर्मयोगी बनने और आजादी के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करने की प्रेरणा मिलती है। विद्यार्थियों और युवकों के लिए यह पुस्तक अत्यंत उपयोगी है, उन्हें इसे एक बार अवश्य पढना चाहिए।

शिक्षा-सुधा का 'बेसिक शिक्षाङ्क'—सम्पादक पी० एन० शास्त्री, प्रकाशक—गुप्ता ब्रादर्स, मरहौ धनौरा (मुरादाबाद) वार्षिक मूल्य २), इस अङ्क का ।।)

प्रस्तुत विशेषाङ्क बेसिक शिक्षा विषयक उत्तम लेखों, रोचक कहानियों और सुन्दर कविताओं से भरपूर है। ऐसे पाठनीय और सुन्दर विशेषाङ्क के लिए हम सहयोगी को बधाई देते हैं।

वीर-बाला—त्रिमासिक पत्रिका, प्रकाशक—श्री राजस्थान बालिका विद्यालय, वनस्थली-पोस्ट ऑफिस निवाई (जयपुर) वार्षिक मूल्य १।।) इस अङ्क का ।।=)

प्रस्तुत पत्रिका का १९३९ का विशेषांक हमारे सामने है। इसके सभी लेख और और सम्पादकीय टिप्पणियाँ प्रगतिशील व राष्ट्रीय विचारों से ओत-प्रोत हैं। इसकी सभी सामग्री ठोस और ज्ञान वर्धक है। यह अपने ढङ्ग की एक अनूठी पत्रिका है। हम विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि यह पत्रिका सदियों से पद दलित स्त्री समाज में जागृति व क्रान्ति पैदा किये बगैर नहीं रहेगी। हमारी यह हार्दिक इच्छा है कि ऐसी सुसम्पादित व होनहार पत्रिका का घर-घर में प्रचार हो।

—:०:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

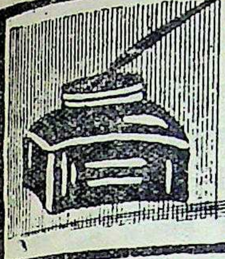

सम्पादकीय नोट

विश्व-माता डाक्टर मोन्टीसोरी ।

शायद ही कोई ऐसा बालहितैषी होगा जिसने मैडम मोन्टीसोरी का नाम न सुना हो । दुनियावी सुखों को लात मारकर आप वर्षों से बालकों की सेवा में जुटी हुई हैं । बालकों की सेवा करना ही आपके जीवन का एक मात्र लक्ष्य है। आप समस्त सँसार के बालकों को स्वतन्त्र व प्रफुल्लित देखना चाहती हैं । ७० वर्ष की वृद्धा होते हुए भी आप रात-दिन बालकों के हित की बात सोचती रहती हैं सोते-जागते, उठते-बैठते, खाते-पीते, आपको बच्चों का ही ध्यान रहता है । आप सँसार के सब बच्चों को एक दृष्टि से देखती हैं, किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं रखतीं । आप सचमुच सँसार के सभी बालकों की सच्ची माता हैं । आम जनता की स्वतन्त्रता के लिए तो सभी प्रयत्न और आँदोलन करते हैं, किंतु बालकों को स्वतन्त्र करने की बात सबसे पहले दुनिया के सामने आपने ही रखने का साहस किया है । आप डंके की चोट से कहती हैं कि जब तक बालक को कुचला जायगा, जब तक उसको परेशान और अपमानित किया जायगा, जब तक उसके व्यक्तित्व को ठुकराया जायगा, जब तक माता-पिता और शिक्षक जबरन अपने विचार उस पर ठूँसते रहेंगे, जब तक उसे निकम्मा और अनसमझ समझा जायगा, तब तक इस दुःखी पीड़ित, और शोषित दुनिया का कदापि उद्धार न होगा । बालक समाज रूपी भवन की नींव है, इसलिए समाज को सुदृढ और मजबूत बनाने के लिए नींव को सुदृढ व मजबूत बनाने की आवश्यकता है । बालकों के स्वतन्त्र हो जाने पर सँसार में कोई भी व्यक्ति गुलाम न रहेगा, दासता का खात्मा हो जायगा और विश्व बँधुत्व की स्थापना हो जायगी ।

मोन्टीसोरी ऐसे ही एक नये समाज का स्वप्न देख रही हैं और उसे पूरा करने के लिए रात-दिन एक कर रही हैं । इस अवस्था में भी आपके सँशोधन और परीक्षण जारी हैं । आप सदा मनन और चिंतन में ही डूबी रहती है । अपनी पद्धति का प्रचार करने के लिए आपने सारे सँसार का दौरा किया है । इसी महान् और पवित्र उद्देश्य को लेकर आप भारत आई हैं और यहां के महत्वपूर्ण स्थानों में घूम रही हैं । यह खुशी की बात है कि आप अपने जीवन के अन्तिम दिन भारत में ही बिताना चाहती हैं । भारत को आप से कितना लाभ होगा इस की कल्पना करना कठिन है ।

आप अँगरेजी भाषा नहीं जानतीं, इटालियन भाषा में ही बोलती हैं । आपका भतीजा आपके भाषणों का अनुवाद कर देता है । आप अपना भाषण हमेशा नये सिरे से तैयार करती हैं । सभाओं और जलसों में भी तैयारी करके बोलती हैं । महज इधर उधर की कुछ चलती हुई बातें कह कर श्रोताओं का समय नष्ट नहीं करतीं । आपकी पुस्तकों का १६ भाषाओं में अनुवाद हो चुका है । वास्तव में आप एक महान् वैज्ञानिक, शिक्षा शास्त्री व बाल-मनोविज्ञानवेत्ता हैं । आपकी नवीन बाल-शिक्षण पद्धति ने दुनिया में क्रांति मचा दी है । स्वतँत्रता और स्वयँ स्फूर्ति आपकी पद्धित के दो आधारभूत तत्व हैं । यह पद्धति बालक को अपनी रुचि के अनुसार अपना विकास करने की पूर्ण स्वतन्त्रता देती है । अहिंसा इस पद्धित का प्राण है । यह पद्धित शारीरिक या मानसिक किसी भी प्रकार के डँड की इजाजत नहीं देती ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप जितनी गम्भीर हैं उतनी ही बिनोदी भी हैं। बालक आपको देखकर मँत्रमुग्ध हो उठते हैं। अहमदाबाद में किसी ने आपको एक चूनरी भेंट की और उढ़ा भी दी। इसपर दूसरी तरफ से किसी ने कहा: "मालूम होता है कि मैडम ने आज विवाह की चूनरी पहनी है।" इसके जवाब में आपने हँसते-हँसते कहा, "हां, हिंदुस्तान से मेरी शादी जो हो रही है।" वास्तव में ऐसी माता ही बालकों के हृदय में घुसकर उनकी कठिनाइयों को महसूस कर सकती है। हमारा दृढ़ विश्वास है कि शुरु से ही यदि बालकों को मोन्टीसोरी पद्धित द्वारा शिक्षा दी जाय तो समस्त समस्याएँ हल हो सकती हैं, पीड़ित मानवता के सब कष्ट दूर हो सकते हैं, नफरत की जगह प्रेम का राज्य स्थापित हो सकता है। विश्वसङ्घ की स्थापना का सिवाए इसके हमें और कोई मार्ग सूझता ही नहीं।

जन-हित इसे कहते हैं !

आचार्य कृपानी ने कांग्रेस की जो वार्षिक रिपोर्ट प्रकाशित की है उससे यह बात भली भांति स्पष्ट हो जाती है कि यदि अपनी सरकार हो तो दरिद्रनारायण के लिये बहुत कुछ हो सकता है। रिपोर्ट में बताया गया है कि कांग्रेसी मन्त्री मण्डलों द्वारा बनाए गए जनहित के कानूनों से युक्तप्रांत की जनता को ३२ करोड़ का लाभ हुआ। अकेले बम्बई में दारूबन्दी, श्रम और भूमि कानूनों के कारण सिर्फ गरीबों को ७ करोड़ का लाभ हुआ। बम्बई को नगदी लाभ ६। करोड़ का हुआ। इसके अलावा किसानों को ४० करोड़ का लाभ हुआ। मद्रास में प्रतिवर्ष जनता को ६ करोड़ रुपये का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त किसानों को ५० करोड़ का लाभ हुआ। अन्य कांग्रेसी प्रांतों की जनता को भी इसी तरह बहुत फायदा पहुँचा। और यह सब कुछ २। वर्ष में हुआ। इससे सहज ही यह नतीजा निकाला जा सकता है कि पूर्ण स्वराज्य के मिलजाने पर हम इतने नङ्गे भूखे न रहेंगे जितने कि आज हैं।

हरिजनों को सुबिधाएँ—

बम्बई सरकार दलित जातियों को ऊँचा उठाने के लिए जो कुछ कर रही है वह अत्यँत सराहनीय और अनुकरणीय है। वहां की सरकार ने घोषणा कर दी है कि जिन स्कूलों में हरिजन बालकों को दाखिल नहीं किया जायगा, उन स्कूलों को कोई सहायता नहीं दी जायगी। अगर किसी स्कूल में एक भी हरिजन लड़का न होगा तो यह समझ लिया जायगा कि वहां हरिजन लड़कों को दाखिल नहीं किया जाता। इस घोषणा के बाद प्रायमरी स्कूलों में हरिजन लड़कों और हरिजन अध्यापकों की तादाद बढ़ गई है। इसके अलावा माध्यमिक स्कूलों और कालेजों में हरिजन विद्यार्थियों से कोई फीस नहीं ली जाती और उनको वजीफे भी दिए जाते हैं। हरिजन लड़कियों में शिक्षा का प्रचार करने के लिए कुछ वजीफे उनके लिए रिज़र्व हैं। कुओं, तालाबों और होटलों का उपयोग अब हरिजन बिना किसी रुकावट के कर सकते हैं। नाम बदलवाने की फीस भी सरकार ने उनके लिए १।=) के बजाय सिर्फ =) ही कर दी है। गरज यह है कि सरकार उनकी उन्नति व भलाई के लिए हर तरह प्रयत्नशील है। हमारा अपना ख्याल तो यह है कि जब तक हरिजन खुद अपने उत्थान के लिए पूर्णतया कोशिश न करेंगे तब तक सरकार या समाज द्वारा किये गये सब प्रयत्न अधूरे ही साबित होंगे। अतः उन्हें चाहिए कि वे अपने पुराने कुसँस्कारों को तर्क करें, अपनी बुरी आदतों को छोड़ें, खुद भी पढ़ें और अपने बच्चों को भी पढ़ाएँ, खूब साफ और सुथरे रहें और इस हीन बिचार को अपने दिल और दिमाग से निकाल दें कि उनकी किसमत में तो सदा गुलाम बने रहना ही लिखा है। उन्हें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि जब तक उनकी अपनी मनोवृत्ति नहीं बदलेगी तब तक उनका उद्धार न होगा। सुधारकों को भी इस बात पर अधिक जोर देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं सेवक—स्वयं सेवकों की तादाद लग भग ३ हजार थी जिनमें मर्द और औरत दोनों शामिल थे। मूसलाधार बारिश होने के बावजूद भी स्वयं सेवकों ने बड़ी तत्परता से काम किया और अपनी जगह पर डटे रहे। रोजाना परेड होती थी।

प्रदर्शिनी—खादी प्रदर्शिनी का बड़ा दरवाजा ९वीं शताब्दी की कला के आधार पर बनाया गया था। प्रदर्शिनी में ६२ खादी की और ३६३ देहाती दस्तकारियों की दुकानें थीं। विभिन्न प्रान्तों के सूतों की एक 'सूत्र वेदि' बनाई गई थी। प्रदर्शिनी में ३०० नम्बर के सूत का बना हुआ ५० इञ्च की चौड़ाई का ६ गज खादी का कपड़ा था। यह कपड़ा अङ्गूठी में से गुजर सकता है और इसका वजन सिर्फ ४ तोला है। यह कपड़ा १५०) रु० में बिका। प्रदर्शनी को ४० हजार आदमियों ने देखा।

पुस्तकों की बिक्री—अखिल-भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा प्रकाशित पुस्तकें खूब बिकीं। 'कांग्रेस और युद्ध सङ्कट' की बिक्री प्रति घँटा २० के हिसाब से हुई। उर्दू का 'कांग्रेस इतिहास' भी खूब बिका।

जेब कतरे—जेब कतरों की सँख्या १८ थी जिन्होंने घड़ियाँ और फाउंटेन पेन आदि चीजों को खूब उड़ाया।

समझौता विरोधी सम्मेलन—कांग्रेस नगर से ९ मील की दूरी पर एक समझौता विरोधी सम्मेलन का भी आयोजन किया गया था। उसके सभापति थे श्री सुभाष बोस।

खर्च और आमदनी—कांग्रेस नगर के निर्माण पर लगभग २॥ लाख खर्च हुए और आमदनी सिर्फ ४० हजार की हुई। यदि बारिश न होती तो आमदनी काफी होती।

प्रस्ताव—वर्किंग कमेटी द्वारा पास किया गया पटना वाला प्रस्ताव ही कांग्रेस के खुले अधिवेशन में भी पास हो गया। इसके अलावा और कोई प्रस्ताव नहीं रखा गया। सिर्फ १६ प्रतिनिधियों ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। किसी भी सँशोधनके पक्ष में२० से अधिक वोट नहीं आए। इससे स्पष्ट हो जाता है कि प्रतिनिधि महात्मा गांधी का ही नेतृत्व चाहते हैं और किसी का नहीं।

इन्द्र देवता का प्रकोप—कांग्रेस के खुले अधिवेशन के रोज इन्द्र देवता इतने बिगड़े कि उस दिन अधिवेशन ही न हो सका। दामोदर नदी में बाढ़ सी आ गई। पंडाल में घुटनों-घुटनों पानी भर गया। किंतु फिर भी ५० हजार आदमी चटाइयां औंधे गीली जमीन पर ही बैठे रहे। राष्ट्रपति आजाद ने घोषणा की कि चाहे आंधी आए, तूफान आए, बाढ़ आए किन्तु कल अधिवेशन जरूर होगा और ऐसा हुआ भी। वर्षा के कारण स्त्रियों और बच्चों की बड़ी दुर्दशा हुई। किसी ने टीलों पर रात बिताई किसी ने किसी तरह। खाने को भी कुछ नहीं मिला। होटलों में भी औंधे नगारे पड़े थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REGD. NO L 3700

* अपील *

देश-हितैषी भारत-वासी,
दानी वीर सुशील ।
श्री श्रद्धालु धनी व्यक्तियों से
है यह नम्र अपील ॥१॥

पहुँचाना है घर-घर सबके,
शुभ समाज आदेश ।
देश-प्रेम सङ्गठन-शक्ति के,
नित नूतन सन्देश ॥२॥

रहे हमारी आर्य-संस्कृति,
जीवित भाषा भेष ।
कौन करेगा ग्राम-ग्राम में,
घर-घर जा उपदेश ॥३॥

'दीपक' ही है पत्र हमारा,
और न कोई शेष ।
पहुँचावेगा ग्रामीणों को,
जीवन के उद्देश ॥४॥

इसके बन जावो सब ग्राहक,
दे कर दान विशेष ।
ग्राम-ग्राम में घर-घर देखो,
पढ़ते इसे हमेश ॥५॥

'दीपक' है यह हिन्दी दीपक,
देगा ज्ञान प्रकाश ।
"शुक्ल" राष्ट्र-भाषा हिंदी का,
गृह-गृह करे विकाश ॥६॥

छिन्दवाड़ा
१५ मार्च १९४०

—आशुकवि रामाधार 'शुक्ल'

मुद्रक एवँ प्रकाशक—श्री कुलभूषण, दीपक प्रेस, साहित्य सदन, अबोहर (पञ्जाब)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, बिहार, बम्बई, उड़ीसा, कोटा, बड़ौदा, व बीकानेर राज्य के शिक्षाविभागों द्वारा स्कूलों व पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत

ॐ

दीपक

वैशाख १९९६] साहित्य सदन, अबोहर [मई १९४०

सम्पादक—तेगराम

मैं जानता हूं मेरी जबान की सख्ती पर लोग एतराज करेंगे। पर क्या सख्ती बिला सबब है? मैं सच की तरह सख्त रहूंगा, और इन्साफ की तरह रू-रियायत से दूर। मैं अपनी बात न जब्त के साथ सोचूंगा, न बोलूंगा, न लिखूंगा। जिसके घर में आग लगी हो, उससे कहो ज़ब्त के साथ शोर मचाये; जिसकी आबरू लुटती हो उससे कहो उसे ज़ब्त के साथ बचाये। मुझे मेरी बात में ज़ब्त मत सिखाओ! मैं सचाई पर हूं; भुलावे में न डालूंगा, मुआफ न करूंगा; पीछे भी न हटूंगा; और लोगों को मेरी बात सुननी पड़ेगी। लोगों की लापरवाही गहरी है—इतनी कि उन्हें जगाने के लिये बुत और मुर्दे भी जी उठने को मजबूर हो जाएँ।

('प्रदीप')

वार्षिक मूल्य २।)
एक अङ्क का।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सँसार का सच्चा कोहेनूर हीरा

चिकित्सा--चन्द्रोदय

सात भाग

इस ग्रन्थ के लिये हिन्दी-भाषा-भाषी-मात्र हाथ पसारते हैं। घर में पैसा नहीं होता तो साहूकार से कर्ज लेकर भी इसे खरीदते हैं; क्योंकि इसके पढ़ने से मनुष्यों की जीवन-रक्षा होती है, उनके रोग दूर भागते हैं। इसी वजह से हरिदास एण्ड कम्पनी के मालिक और

ग्रन्थ लेखक

बाबू हरिदास जी

ने अपना जीवन सफल बनाने के लिए, चन्द रोजों के लिये

आधी कीमत करदी है

		पूरी कीमत	आधी कीमत
चिकित्सा-चन्द्रोदय	१ ला भाग	३)	१॥
,,	२ रा भाग	५)	२॥)
,,	३ रा भाग	४।)	२=)
,,	४ था भाग	४।)	२=)
,,	५ वाँ भाग	५)	२॥)
,,	६ ठा भाग	३।॥)	१।॥)
,,	७ वाँ भाग	१०॥)	५।)
स्वास्थ्य-रक्षा	१३ वाँ सँस्करण	३)	१॥)

दो हजार वर्षों में नई बात

भर्तृहरि महाराज ने तीन शतक लिखे थे। छपी हुई पुस्तक में कोई १०० या १५० सफे हैं। हर सफा और हर श्लोक करोड़ों को भी सस्ता है। दो हजार बरस में ऐसा अनुवाद जैसा हरिदास कम्पनी बेच रही है, कभी नहीं लिखा गया। इसी से इन तीनों शतकों को मनुष्य-मात्र चाहते हैं। आप भी खरीदिये। मँगाते समय ५) पेशगी जरूर भेजें, और पास के रेलवे-स्टेशन का नाम लिखें।

		पूरी कीमत	आधी कीमत
नीति शतक	सचित्र	४॥)	२।)
वैराग्यशतक	,,	५)	२॥
श्रृँगारशतक	,,	३)	१॥)
		१२॥)	६।)

मँगाने का पता—हरिदास एण्ड कम्पनी, मथुरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मूल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २॥) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४)।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जिनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा १ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेसे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख डाक खर्च भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं।

८—जिन सज्जनों को किसी मास का 'दीपक' न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछ ताछ करके बाद में हमारे पास लिखना चाहिये।

८—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें और बदले के पत्र, सम्पादक, 'दीपक' साहित्य सदन, अबोहर के पते से और मूल्य तथा प्रबन्ध विषयक पत्र मैनेजर 'दीपक' के पते से भेजने चाहिएं।

स्तंभ—सूची

१ जीवन-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्योग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं। सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* शुभ सूचना *

श्रीअरविंद के ग्रन्थों का हिंदी-प्रकाशन

श्रीअरविंद के आध्यात्मिक ग्रन्थों को हिंदी-भाषा-भाषी जनता तक पहुँचाने का काम आरम्भ हो गया है। नीचे लिखी पुस्तकें छप चुकी हैं और जो बाकी हैं वे क्रमश: प्रकाशित होंगी।

श्रीअरविंद और उनका योग

इसमें संक्षेप में श्रीअरविंद चरित और उनके योग सम्बन्धी कतिपय लेख हैं। मू० ।।)

माता

इस पुस्तक में श्रीअरविंद ने पुरुषोत्तम और शक्ति का सम्बन्ध और उनके योग के साधना के प्रधान अँग अभीप्सा, त्याग और समर्पण तथा महाशक्ति के चार मुख्य स्वरूपों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। मू० ।।)

योग प्रदीप

इस पुस्तक में चार अध्याय हैं. हमारा लक्ष्य, आधार के लोक, अँग समर्पण और कर्म, जो योग साधना सम्बन्धी अनेक प्रश्नों पर प्रकाश डालते हैं। मू० ।।)

इस जगत की पहेली

यह एक अद्‌भुत और अत्यन्त उद्‌बोधक पुस्तक है। यह जगत् असल में एक पहेली है, जिसका आध्यात्मिक हाल जानने वालों को यह अवश्य पढ़नी चाहिए। मू० ।=)

योग के आधार

इस पुस्तक में योग साधना की नींव स्थिरता, शांति और समता; श्रद्धा, अभीप्सा और आत्म-समर्पण; कठिनाई, इच्छा, आहार, काम-वासना, भौतिक चेतना, अवचेतना, निद्रा, स्वप्न और रोग इत्यादि विषयों पर काफी प्रकाश डाला गया है जो साधकों और जिज्ञासुओं के लिए बहुत ही उपयोगी है। मू० २)

(डाक खर्च अलग)

श्रीअरविन्द-ग्रंथमाला, पांडिचेरी।

सोल-एजेंट्स:—दक्षिण भारत हिंदी-प्रचार सभा, त्यागरायनगर, मद्रास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

{ दीपक—वर्ष ५, संख्या ७, मई १९४० ई० }

विषय	लेखक	पृष्ठ
१ युवक (कविता)—श्री रामकुमार स्नातक	... ...	१
२ प्रेम और मोह—श्री हरिभाऊ उपाध्याय	... ...	२
३ जीवन और शक्ति !—श्री 'रहबर' बी. ए.	... ...	३
४ डाल्टन योजना—आचार्य हरभाई त्रिवेदी	... ...	५
५ उद्देश्य-विहीन शिक्षा-प्रणाली—श्री लोकनायक अणे	... ...	८
६ इङ्गलैण्ड की राजव्यवस्था का इतिहास—श्री गिरिराज जी बी. ए.		९
७ साधु के लक्षण— कन्यूशियस	... ...	१३
८ उत्पादक शरीर-श्रम की प्रतिष्ठा—श्री दादा धर्माधिकारी	... ...	१४
९ मेरी जापान यात्रा —एक यात्री	... ...	१८
१० कुछ गन्दी आदतें—डा० सुरेन्द्रप्रसाद	... ...	२२
११ टहलने का ढङ्ग—जानकीशरण वर्मा	... ...	२३
१२ प्रेम से सुधार—श्री स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती	... ...	२४
१२ प्रेम की फिलासफी	... ...	२४
१४ मुगलों से पहले का भारत—स्व० रामदास गौड़	... ...	२६
१५ चरखे की बरकत—श्री प्रभुदास गांधी	... ...	२८
१६ राष्ट्रीयता के पुजारी—मौलाना आजाद—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी	...	२९
१७ विद्या कैसी हो ?	... ...	३१
१८ पीने के पानी वाले तालाब साफ कैसे रहें ?—गाँधीजी	...	३२
१९ विद्या और विनय—श्री काका कालेलकर	... ...	३२
२० शिशु-शिक्षा—श्री कृष्णाजसराय बी. ए. एफ. टी. एस.	... ...	३३
२१ बालक यदि रूठ जायें तो—श्री रामकृष्ण खद्दरी	...	३६
२२ वन्दी प्रियतम (गद्य-काव्य)—कुमारी मिश्रा	... ...	३७
२३ सूरज और वर्षा—श्री शुकदेवनारायण	... ...	३८
२४ तकली (कविता) —श्री 'विकल'	... ...	४०
२५ धोखेबाज (कहानी) श्री ठा० देशराज	... ...	४१
२६ कुल-दीपक (कविता)—श्री अशुमाली	... ...	४३
२७ नव युवकों से (कविता)—श्री रामाधार शुक्ल	... ...	४४
२८ गौरिल्ला—कुमारी कमला ब्रह्म	... ...	४५
२९ कौन कैसे सोता है—सँकलित	... ...	४६
३० माननीय बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन का साहित्य सदन, अबोहर में आगमन	...	४७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धम बचे अरु धन बचे, रोग समूल नसाये।
यह मौका न चूकिए, असली धूप जलाये॥

मोतीराम सेठी दी

मशहूर धूप नं० १ (रजिस्टर्ड)

प्यारे मित्रो! आप लोगों के सुभीते के लिए शुद्ध और सस्ती धूप तैयार की गई है इसमें आयुर्वेदोक्त कपूरादि वर्ग की कई औषधियों का मिश्रण किया गया है इस वास्ते यह हमारी धूप अन्य धूपों से सुगन्धित व सस्ती भी है, जो वायु में रोगोत्पादक कीटाणु (कृमि) होते हैं उनको मारने व वायु को शुद्ध करने वास्ते अपनी शान की यह धूप एक है। यह धूप जङ्गली जड़ी बूटियों व शुद्ध पवित्र चीजों से तैयार की गई है हर एक भाई को इसका प्रयोग करना चाहिए। हमारे यहाँ पर अगरबत्ती बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है

त्यार करदा मोतीराम सेठी अबोहर

तैयार है! तैयार!! तैयार है!!!

क्या?

कृष्ण छाप चूर्ण नं० १ (रजिस्टर्ड)

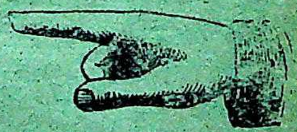

खरीदये और खाइये

यह चूर्ण यथा नाम तथा गुणों से परिपूर्ण है। इस चूर्ण की ३ माशा से ६ माशा मात्रा भोजन के बाद खाने से खाई हुई खुराक का समय पर ठीक रस बनता है। इसके अलावा अजीर्ण, संगरहणी, जी मिचलाना, वमन आदि रोगों का नाश करता है। इसको हर मौसम में खाने से किसी नुकसान की सम्भावना न होगा। इसे वृद्ध, बालक, जवान और स्त्री-पुरुष सेवन कर सकते हैं। यह जङ्गली जड़ी बूटियों द्वारा आयुर्वेद के ज्ञाताओं की देख रेख में बनाया गया है।

नोट:—हमारे इस कारखाने में अगरबत्ती, धूपबत्ती हवन सामग्री बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है।

त्यार करदा मोतीराम सेठी अबोहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools in U. P., C. P., Bihar, Bombay, Orissa, Kotah, Baroda & Gwalior States

दीपक

{ हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग की सम्पत्ति तथा पञ्जाब में राष्ट्रभाषा का प्रचार करने वाली प्रमुख संस्था—साहित्य सदन, अबोहर का मुखपत्र }

सत्यम् :: शिवम् :: सुन्दरम्

सम्पादक—तेगराम

वैशाख १९९७ } वर्ष ५, संख्या ७ / पूर्ण संख्या ५५ { मई १९४०

युवक !

रचयिता—श्री रामकुमार 'स्नातक', हिंदी प्रभाकर

युवक ! कर अपनी कुछ पहचान ॥

तुही सृष्टि है, तुही प्रलय है, तुही आदि अवसान ।
तुही विश्व-उद्धारक सचमुच, शक्तिरूप भगवान ॥ युवक०॥

तुझसे टक्कर ले कर कितने चूर्ण हुये पाषाण ।
तुझसे ही तो सदा हुआ है दुनिया का कल्याण ॥ युवक०॥

तुही राम है, तुही कृष्ण है, तुही युवक ! हनुमान ।
तूने ही निर्जीव जगत में फूँक दिए थे प्राण ॥ युवक०॥

युवक-शक्ति के बिना विश्व क्या, केवल है श्मशान
युवक-शक्ति ! उठ, भरदे जग में फिर गौरव अभिमान ॥ युवक०॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम और मोह

प्रेम आत्मिक और मोह शारीरिक है, अर्थात् जब तक आत्मिक गुण के प्रति आकर्षण है तब तक वह प्रेम का आकर्षण है, जब शारीरिक सौंदर्य या शारीरिक भोग की ओर आकर्षण होने लगे, तो समझो कि वह मोह का आकर्षण है और अपने को सम्भालो। एक सुन्दर पुष्प को हम देखते हैं, उसके दैवी सौंदर्य पर मुग्ध होते हैं. उसमें ईश्वरी छटा के दर्शन करते हैं, यह प्रेम हुआ; जब उसे तोड़ कर सूंघने, या माला बना कर धारण करने का मन हुआ तो समझो मोह के शिकार हो रहे हैं।

दूसरे. प्रेम में जिसे हम प्रेम करते हैं, उसके प्रति त्याग, उत्कर्ष, सेवा करने का भाव होता है, मोह में भोग, सुख, सेवा लेने की चाह रहती है। प्रेमी स्वयँ कष्ट उठाता है, प्रेमपात्र को कष्ट पहुँचाना नहीं चाहता; उसकी उन्नति चाहता है, अधोगति नहीं, मोहित व्यक्ति अपने सुख भोग की अनियन्त्रित इच्छा के आगे प्रेम पात्र के कष्ट और दुःख की परवा नहीं करता। उसकी रुचि अच्छे खान-पान, साज-शृँगार, नृत्य-नाटक-सिनेमा, आमोद-प्रमोद, में होगी—जहाँ कि एक प्रेमी उसके मानसिक, नैतिक और आत्मिक गुणों तथा शक्तियों के विकास में उसकी योजनाओं और कार्यक्रम में मग्न रहेगा।

हमारे हृदय में प्रेम है या मोह, इसकी सच्ची जानकारी तो हम अपने मनो भावों पर निगाह रखके ही कर सकते हैं—बाह्य विधि-विधान से नहीं। बाह्य नियम, मर्यादायें हमें एक हद तक नियँत्रण में रख सकते हैं और इस दृष्टि से बहुत उपयोगी भी हैं, परन्तु वे प्रेम या मोह की परीक्षा के अचूक उपाय नहीं हैं। दुनिया अक्सर बहिर्दृष्टि होती है—बाहरी आचार-विचार से ही वह अक्सर मनुष्य की नाप-तौल करती है। हमारे मानसिक और आन्तरिक भावों के दूर से जानने और समझने का दूसरा साधन भी तो नहीं है। मार्मिक-दृष्टि व्यक्ति तो विरले ही होते हैं; जो ऊपरी हाव-भाव या आचार-विचार में से भीतरी भाव को ताड़लें। अतएव लोक दृष्टि से भी बाह्य मर्यादाओं का बड़ा महत्व है। फिर भी मुख्य और मूल्यवान् वस्तु तो हमारे हृदय का असली भाव ही है। हम आप ही अपने परीक्षक, निरीक्षक, पहरेदार और मैं कहूँगा पथ-प्रदर्शक भी, बनें। हां, सहारा हम भले ही दूसरों का—गुरुजनों का ले लें; पर अन्त में जब हमीं अपने पहरेदार और पथ-प्रदर्शक बनेंगे, तभी सुरक्षितता से हम अपने ध्येय को पहुँच सकेंगे। मैं जितना ही विचार और अनुभव करता हूँ, उतना ही इस विश्वास पर दृढ़ होता जाता हूँ।

प्रेम से मोह, मोह से भोग, भोग से पतन—यह अधोमुख जीवन का क्रम है; प्रेम से सेवा, सेवा से आत्मशुद्धि, आत्मशुद्धि से आत्मोन्नति यह-अधोगति जीवन का। प्रेम से हम मोह की तरफ बढ़ रहे हैं या सेवा की तरफ-यही हमारे आत्म-परीक्षण की पहली सीढ़ी है।

—हरिभाऊ उपाध्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन और शक्ति !

ले०—श्री 'रहबर' बी० ए०

बस्ती से कुछ दूर शीशम का एक पेड़ था, जिसमें सूखे टहने और कुछ शाखायें ही थीं, पत्ते तो नाम को भी नहीं थे। शायद उस पर हमेशा पतझड़ ही रहता था। बसन्त तो उसके लिए मानो कभी आया ही न था। उसे मकड़ियों ने अपना घर बनाया हुआ था।

इस पेड़ की एक टहनी पर बैठे हुए बाज ने गर्दन ऊपर उठाई और नीले, सफेद आकाश में दूर-दूर नजर दौड़ाई। वह चिन्ता-मुक्त हो आनन्दपूर्वक गगन-मण्डल के सौंदर्य को निहार ने लगा।

एक मकड़ी, जो कई दिनों से भूखी थी, बाज को वहां बैठे देख मन ही मन प्रसन्न हो उठी। आज तक उसने इतनी बड़ी मक्खी नहीं देखी थी। अतः यह सोचकर कि यदि यह शिकार हाथ लगे तो कई दिनतक मजे से खाऊँ, मकड़ी जल्दी बाज के चारों ओर ताना तनने लगी।

एक मक्खी भी कहीं पास ही उड़ रही थी। उसने मकड़ी की यह हरकत देखी तो झुँझला उठी। वह चाहती थी कि मकड़ी भूख से तड़प-तड़प कर मरे, उसे कुछ भी खाने को न मिले और मक्खी-जाति को उसके अत्याचारों से छुटकारा मिले। इसलिए वह उड़कर बाज के पास आई और कहने लगी:—"उड़ो, उड़ो! जल्दी करो। देखते नहीं, मकड़ी जाला तन रही है। तुम इसमें फँस जाओगे और वह भूखी डाइन तुम्हें खा जायगी। वह हजारों मक्खियां खा चुकी हैं। वह बड़ी जालिम है। उड़ो, उड़ो! जल्दी करो!!"

बाज ने पहले तो मक्खी की बात सुनी ही नहीं और उसी तरह ध्यान मग्न बैठा रहा, लेकिन जब उसने दोबारा कहा तो बाज जोर से हँसा और बोला:—

"भोली मक्खी! तुम क्यों फिक्र करती हो? देखती नहीं हो कि मैं मक्खी नहीं, बाज हूँ। एक मकड़ी की सामर्थ्य ही क्या है कि मुझे अपने जाल में फंसाले। ऐसी लाखों मकड़ियां मैंने देखी हैं। इन्होंने आज तक गरीब मक्खियों को फँसाने के ही जाल रचे हैं, हमें उनके इन फन्दों की क्या परवाह हो सकती है? दर असल, जो शक्तिशाली है वह किसी के जाल-फरेब और मक्कारी की परवाह नहीं करता। दुनिया में किसी की हिम्मत नहीं कि उसे जाल में बांध ले, अथवा अपनी खुराक बनाले। हमेशा कमजोर ही दूसरों की खुराक बनते हैं, कमजोर ही गुलाम बनाये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते हैं, कमजोरों पर ही जुल्म ढहते हैं, वे ही अत्याचार का शिकार होते हैं। कमजोर ही बलि का बकरा बनाए जाते हैं। उन्हें कुढ़-कुढ़ कर मरने के लिये छोड़ दिया जाता है। लेकिन बलवान—उसके रास्ते में कोई लाख रुकावटें डाले, वह उन्हें ठोकर मारकर आगे निकल जाता है। उसे कोई लाख जँजीरों में जकड़े एक ही धक्के में तड़ातड़ तोड़कर वह स्वतन्त्रता से विचरने लगता है। कमजोर को दबाया जाना तो दुनिया का दस्तूर हो गया है? गरीब पर नित्य नई मुसीबतें टूटती हैं। वह जीवन और मृत्यु के झूले में झूलता रहता है। उसे अगले क्षण का पता नहीं कि वह कौनसा सङ्कट लेकर आवेगी। लेकिन बलवान की ओर कोई आंख उठाकर भी नहीं देख सकता। उसके सामने किसी को जबान हिलाने तक की हिम्मत नहीं होती। अगर इत्तफाक से किसी बलवान को कभी दबा भी लिया गया तो वह ताकत से उठाता है और दबाने वाले के लिए मुश्किल पैदा कर देता है, उसकी मान-मर्यादा को मिट्टी में मिला देता है; और उसे लेने के देने पड़ जाते हैं। इसके विपरीत जहां कहीं कमजोर फन्दे में फँस जाता है, उसे नोच-नोच कर खा लिया जाता है, क्या मजाल कि वह उफ तक कर सके। खाने वाला फिर भी सभ्य और प्रतिष्ठित समझा जाता है। कमजोर खूब सटपटाता है, जाल से निकलने के लिए तड़पता है, आजादी अपना जन्म-सिद्ध अधिकार बताता है, पर उसकी कोई सुनता नहीं। उसे रिहाई नहीं मिलती, बल्कि बाँध रखने की अनेक दलीलें दी जाती हैं, और खुले तौर पर सिद्ध किया जाता है कि वह स्वतन्त्र होने के योग्य नहीं। उसको कहा जाता है कि तेरे भाग्य में जन्म भर गुलाम रह दूसरों की सेवा करना, उनकी उचित अनुचित आज्ञाओं का पालन करना ही बदा है। अतः इसके खिलाफ आचरण करने से वह पाप का भागी होगा। वह भेड़ के समान है, जहां कहीं भी जावेगा उसकी ऊन काटी जावेगी। कहीं ऐसी जगह न जा फँसे कि ऊन तो ऊन जान से भी हाथ धो बैठे। इसलिए अच्छा है यहीं रह पिछले कर्मों का फल भोगता रहे।

प्राकृतिक नियम डँके की चोट कह रहे हैं कि जो भी आजाद रहना चाहता है वह अपने अन्दर शक्ति पैदा करे। फिर सँसार में किसी की हिम्मत नहीं कि उसे गुलाम बनाये अथवा गुलाम रखे।"

इतना कहकर बाज ने पँख फड़फड़ाए, मकड़ी का जाला टूक-टूक हो हवा में उड़ गया। बाज ने स्वच्छन्दता से मुक्त आकाश में लम्बी उडारी भरी। मक्खी खोई-खोई सी बैठी रह गई बाज की प्रबल शक्ति तथा अदम्य उत्साह को देखकर। आज समझी वह सब रोगों-दुःखों का मूल कारण—निर्बलता और आजादी का, सुख का असली इलाज—शक्ति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाल्टन योजना

ले०—आचार्य हरभाई त्रिवेदी, भावनगर

[२]

अब डाल्टन शाला की कुछ विशेषताएँ पेश करते हैं।

नटवर: "जयराम! लगातार डेढ घण्टे तक अंग्रेज़ी प्रयोगमन्दिर में काम करने के बाद मैं इतिहास का काम करने का विचार कर रहा था। किन्तु तुम्हारे सामने आजाने पर मेरा विचार बदल गया और मेरे मन में आया कि मैं भी तुम्हारे साथ ही चलूँ। बताओ तुम कहां जा रहे हो?"

जयराम: "मैं तो सँस्कृत खत्म करके विज्ञान-प्रयोगमन्दिर में जा रहा हूँ। मेरे मन में भी आया था कि तुम भी साथ चलो तो मिलकर काम करने में खूब मजा आयेगा। किन्तु तुम्हारे बुलाने का विचार मैंने छोड़ दिया था। मुझे इस बात का पता था कि तुम्हारा इतिहास का काम अभी बाकी है।"

नटवर: "अब तो तुम मिल गये हो, इसलिए विज्ञान-प्रयोगशाला में ही चलिए। इतिहास का काम मैं कल कर लूँगा।"

जयराम:—"नहीं, इतिहास का काम तो कर ही लें, मैं भी आज विज्ञान नहीं करूँगा। कल साथ ही चलेंगे।"

हीरालाल: "कल पर क्यों छोड़ते हैं? अब तो मैं भी आ गया। चलिए तीनों मिलकर विज्ञान का काम तो आज निपटा दें। कल तो चर्चा-सँघ—वाद-विवाद सभा के लिए तैयारी करनी है। क्या यह बात तुम भूल गए हो?"

❀ ❀ ❀

बालजी: "इन्दु! यह सवाल तो किसी तरह भी समझ में नहीं आता। जरा इसे समझाए तो?"

इन्दु: "……भाई साहब के पास जाइए। मैं किसी काम में लगा हुआ हूं।"

बालजी: "भाई साहब के पास बहुत से विद्यार्थी खड़े हैं। तुम इतना काम करवा दो तो मैं फिर तुरन्त ही भूगोल का काम कर सकूँगा। तुम मदद करो तो मेरा समय बच जायगा।"

इन्दु: "यही बात है तो आवो अभी समझा देता हूँ।"

रमणीक: "मार्कण्ड! यहां खड़े-खड़े क्या कर रहे हो? तुम खुद ही तो कह रहे थे कि अभी हिन्दी का बहुत सा काम बाकी है। मैं तो अंग्रेजी करने जा रहा हूँ. और तुम हिंदी का काम खत्म कर लो। कल हमारा स्वाध्याय (assignment) पूरा हो जाय तो फिर शाम को समुद्र की सैर कर सकते हैं।"

मार्कण्ड: "अभी तो इस अखबार में मजा आ रहा है। हिन्दी प्रयोगमन्दिर में जा रहा था, रास्ते में कुछ देर वाचनालय में बैठने की इच्छा हो गई। अब तो कुछ उत्तम लेख पढ़े बिना नहीं रह सकता। मेरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम पूरा न होने की चिन्ता न करें। कल का कार्यक्रम बनालें। मेरा काम तो पूरा हुआ ही समझें।"

बलवन्तः "रणजीत ! कहां जा रहे हो ? अँग्रेजी शिक्षक कल कह रहे थे कि तीन दिन से तुम उनके प्रयोग-मन्दिर में नहीं गए हो ! सप्ताह तो बात की बात में गुजर जायगा, इसलिए तुम्हें उनसे मिल लेना चाहिए।"

रणजीत:"इस सप्ताह में मैंने अँग्रेजी के काम को स्थगित रखा है। गणित में इतना मजा आ गया है कि इसे पूरा किए बिना और कोई काम करने की इच्छा ही नहीं होती। मैं अँग्रेजी शिक्षक से कह दूँगा कि उनका काम अगले सप्ताह में करूँगा।"

बलवन्त:"मुझे तो यह अच्छा नहीं लगता। मैं तो प्रतिदिन प्रत्येक प्रयोगमन्दिर में जाने में विश्वास रखता हूँ। प्रत्येक विषय को रोज थोड़ा समय देने से एक तो काम बहुत जल्दी खत्म होता है और दूसरे दिल भी नहीं ऊबता।"

रणजीत:"मुझे तो यह जरा भी अच्छा नहीं लगता। मैं तो कितनी ही बार एक विषय को बिलकुल पूरा करके ही दूसरे विषय को हाथ में लेता हूँ। मुझे तो टुकड़े २ करके काम करने में मजा नहीं आता।"

अँग्रेजी शिक्षक:"धीरजलाल ! क्या मैंने जो कुछ तुम्हारी नोटबुक में लिखा है वह तुमने पढ़ लिया है ? अपने अक्षरों को सुधारे बिना काम नहीं चलेगा।"

धीरजलाल:"मास्टर साहब, मैं तो बहुत कोशिश करता हूं। अक्षरों को सुधारने की आप कोई तरकीब बताइए।"

अँग्रेजी शिक्षक:"इस सम्बन्ध में तुम्हारे हिंदी शिक्षक के साथ मिलकर मैंने एक योजना बनाई है। हिंदी प्रयोगमन्दिर में इसकी शोध करनी है। यदि तुम अपने हिंदी अक्षरों को ठीक कर लोगे तो अँग्रेजी अक्षर भी ठीक हो जायेंगे।"

* * *

रतिलाल:"...भाई साहब ! इस श्लोक का अर्थ ठीक नहीं बैठता। अब तो आपके समझाने से ही समझ में आयेगा।"

संस्कृत शिक्षक:"देखो रतिलाल ! जिन शब्दों का अर्थ तुम्हें नहीं आता है उनका अर्थ मैं तुम्हें बता देता हूँ, किन्तु सारे श्लोक का अर्थ तो तुम्हें खुद ही करना होगा। तुम उसे अपनी नोटबुक में लिख लेना, कुछ कमी रह जायगी तो मैं ठीक कर दूँगा।"

रतिलाल:"किन्तु भाई साहब ! कोष देखते २ तो दम निकल जाता है।"

संस्कृति शिक्षक:"रतिलाल ! शुरु-शुरु में तो तुम्हें कुछ ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी। किंतु एक बार परिश्रम कर लेने के बाद फिर बहुत आसानी से थोड़े ही समय में बहुत सा काम कर सकोगे।"

* * *

मणिलाल:"...भाई साहब ! पन्दरह दिन बीमार रहने के कारण मैं सभी विषयों में पीछे रह गया हूँ। दूसरे विषयों को तो पूरा कर सकूँगा, परन्तु संस्कृत और गणित परेशान करते हैं।"

आचार्य:"तुम कोई चिंता न करो। दोनों विषयों का पीछे का स्वाध्याय उन विषयों के शिक्षकों के पास जाकर शुरु करदो, फुरसत के समय उनसे सहायता लेते रहो। तुम्हारे मित्रों ने भी तो तुम्हे मदद देने का बचन दिया है न ? आवश्यकता पड़ने पर मेरे पास भी आ सकते हो, मैं भी तुम्हारी मदद करूँगा। कुछ अधिक समय देने पर एकाध महीने में ही सब के साथ मिल जाओगे।"

* * *

गणित शिक्षक: "आप सब भाइयों को एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुशखबरी सुनाता हूँ। गत मास की निस्बत इस महीने में हमारे प्रयोगमन्दिर की हाजरी ३० फी सदी बढ़ गई है।"

आचार्य: "अपनी शिक्षण पद्धति और धीरज का ही यह परिणाम है। इतिहास प्रयोगमन्दिर में भी दूसरी-तीसरी श्रेणी के विद्यार्थियों की संख्या बढ़ने लगी है। वहाँ के हाजरी रजिस्टर से मुझे इस बात का पता लगा है।"

इतिहास शिक्षक: "आचार्य जी की बात बिलकुल सही है। हमारे यहाँ तो हाजरी के साथ इकाई (किसी विषय का एकदिन का काम) भरने का सवाल भी शुरु सत्र से उपस्थित हो गया था। किंतु समय-समय पर व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से खुले दिल से चर्चा करने के कारण अब तो हमारे प्रयोगमन्दिर में हमारे प्रगति पत्रक अधिक नियमित और व्यवस्थि होने लगे हैं।"

हिंदी शिक्षक: "हमारे यहाँ तो यह समस्या अभी इतनी सरल नहीं हुई है, परन्तु गत सप्ताह जिन दस विद्यार्थियों के नाम मैंने शिक्षक मण्डल में पेश किये थे उनमें से पाञ्चों का काम तो बहुधा एक समान हो गया है बाकी पाञ्चों पर अभी प्रयोग जारी है।"

आचार्य: "हमारा काम तो विद्यार्थियों के न पढ़ने का कारण मालूम करना है ताकि हम उनके साथ ठीक-ठीक व्यवहार कर सकें। यदि हम चाहते हैं कि हमारे विद्यार्थी उत्तरदायित्वपूर्ण स्वतन्त्रता को ग्रहण कर सकें, तो विद्यार्थी की प्रत्येक क्रिया का हमें बारीकी से अवलोकन करना होगा। चित्र तथा सङ्गीत कला में भी विद्यार्थी अब अधिक रस लेते हुए दिखाई देते हैं।"

चित्र शिक्षक: "मुझे तो प्रतिवर्ष नये-नये अनुभव हो रहे हैं। जिन विद्यार्थियों को माता-पिता और शिक्षक कुछ भी नहीं समझते थे, ऐसे विद्यार्थी भी हमारे यहाँ तो बहुत सुन्दर काम करते हैं। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि हमारी शाला के बहुधा विद्यार्थी चित्रकार ही बनेंगे।"

सङ्गीत शिक्षक: "मेरी भी यही राय है। मेरी समझ में यह नहीं आता कि हमारे स्कूल और कालेजों में सङ्गीत की उपेक्षा क्यों की जाती है। हमारे प्रयोगमन्दिर में आने वाले प्रत्येक विद्यार्थी को मैं तो एक कुशल सँगीतज्ञ पाता हूँ। यदि उन्हें मौका दिया जाय तो दस वर्ष में गुजरात में सङ्गीतज्ञों का कुछ ठिकाना न रहे। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि अन्य विषयों की कुर्बानी करके भी सङ्गीत-शिक्षण को खूब आगे बढ़ाना चाहिए।"

आचार्य: "चित्र शिक्षक और सङ्गीत शिक्षक दोनों की बात ठीक है। डाल्टन योजना शुरु करने के बाद हमें बहुत से ऐसे अनुभव हुये हैं। विद्यार्थियों को हमने अब तक पाठ्यक्रम, समय विभाग, परीक्षा आदि अनेक बन्धनों में जकड़ कर रखा है। इन बन्धनों में बन्धे रहने के कारण विद्यार्थी अपना विकास नहीं कर सका है। हम शिक्षकों ने भी उस दिशा में कोई प्रयत्न नहीं किया है। जब तक हम विद्यार्थियों को स्वतन्त्र नहीं करेंगे, तब तक सच्चे विकास का मार्ग नहीं मिलेगा। हमारी शाला में उत्तरदायित्वपूर्ण स्वातन्त्र्य मिलने के फलस्वरुप विद्यार्थियों का विकास सुन्दरतया हो रहा है। किसी एक विषय की उपेक्षा करके अन्य विषयों के शिक्षण पर अधिक जोर देने की हमें जरूरत नहीं है। विद्यार्थी उसी विषय की तरफ खिंचेगा जिसके अभ्यास से उसका सच्चा विकास होता होगा। हमारा काम तो प्रत्येक विषय के लिये यथाशक्य अनुकूलता कर देना है। चित्र और सङ्गीत में रुचिपूर्वक काम करने वाले विद्यार्थी अन्य विषयों में भी उसी रुचि के साथ काम करते हैं। शाला का पाठ्यक्रम विद्यार्थी के सर्वाङ्गी विकास में सहायक होना चाहिए, इस बात का हम सबको अनुभव होने लगा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान शिक्षकः"मुझे भी अपने प्रयोगमन्दिर में नये-नये अनुभव होने लगे हैं। परन्तु गत् सप्ताह में विद्यार्थियों द्वारा किये गये काम का टोटल लगाने में देर लग जाने के भय से मैं अपनी बात को कल पर छोड़ता हूँ।"

आचार्यः"बात बिलकुल ठीक है। आइये टोटल लगालें। आने वाले सप्ताह के लिये मण्डल के मन्त्री कोई ऐसा कार्यक्रम बना लेंगे जिससे कि सभी अपने अपने अनुभवों को बता सकें।"

मन्त्रीः"दूसरा सप्ताह इस काम के लिये ठीक रहेगा। आने वाले सप्ताह में तो गत मास के सम्पूर्ण स्वाध्याय का विहँगावलोकन करना है। कितने ही शिक्षकों की तरफ से एक महत्वपूर्ण मुद्दे पर विचार करने की मुझे सूचना मिली है। अपने २ विद्यार्थियों के साथ स्वाध्याय का वाचन और विवेचन करते समय बहुत से शिक्षकों के पास विद्यार्थियों की तरफ से यह शिकायत आई है कि कितने ही विषयों का स्वाध्याय बहुत लम्बा और कठिन है।"

आचार्यः"हां, इस मुद्दे पर हम पहले ही विचार कर लेंगे। गत मास के सभी विषयों के स्वाध्याय का विहँगावलोकन करते समय हम इस पर विचार कर लेंगे। विद्यार्थियों की शक्ति और समय का ध्यान रख कर बनाये गये स्वाध्याय ही उनके लिए उपयोगी हो सकते हैं। मन्त्री जी के कहने के मुताबिक आने वाले सप्ताह में सबको इस मुद्दे पर विचार करके आना चाहिए। आज तो टोटल लगाने का काम शुरू करते हैं।

(क्रमशः)

उद्देश्य विहीन शिक्षा-प्रणाली

भारत के अधिकतर विश्वविद्यालयों में प्रचलित शिक्षा-प्रणाली का कोई निश्चित ध्येय नहीं है। यह प्रणाली विद्यार्थी के हृदय पर अपना असर नहीं छोड़ती। १५ या १६ वर्ष के अध्ययन के बाद भी वह कोरा कागज ही होता है। लेख तथा वर्णन की रचना चातुरी में दक्ष कोई भी खिलाड़ी उसे अपने प्रभाव में लाने में समर्थ हो जाता है। वह लेखकों तथा उनके ग्रन्थों की आलोचना में असमर्थ होता है। मानवीय उद्देश्यों की सत्ता प्रतिष्ठा तथा उनकी जुम्मेवारी का ज्ञान अध्ययन समय पर न किये जाने से विद्यार्थी किसी भी तरह के मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विचार करने में असमर्थ होकर दूसरे के विचारों की परख नहीं कर सकता। उसका अधिकाँश समय मन को बहलाने वाले साहित्य के पठन पाठन में व्यतीत होता है। गम्भीर विषय से तो उसका थोड़ा सा ही सम्पर्क होता है। परिणाम यह होता है कि भारतीय शिक्षित युवक विद्याध्ययन काल के पश्चात प्रायः शून्य हृदय होकर बाहर आता है। वह यह जानने में असमर्थ रहता है कि— मैं क्या हूं? मुझे क्या होना चाहिये? और मेरे जीवन का क्या उद्देश्य है? वह नहीं जानता कि उसे किधर जाना है और क्या करना है। वह एक ऐसा व्यक्ति है, जिसके आगे एक लक्ष्य नहीं, कोई साहसिक भावना नहीं और कोई कार्यक्रम नहीं। एक बच्चे की तरह उसे अब भी चम्मच से खिलाने की आवश्यकता रहती है। उसे किसी की ओर आजीविका मिलती रहनी चाहिये, अन्यथा वह भूखों मर जायेगा। यह एक अत्यन्त करुणाजनक और दयनीय चित्र है, किन्तु यह है वास्तविक, जिसके आगे आंखें मींच कर अन्धा नहीं बना जा सकता।

—लोकनायक अणे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इङ्गलैंड की राज्य-व्यवस्था का इतिहास

[सन् ४१० से सन् १०६६ तक]

ले०—श्री गिरिराजजी बी० ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

[५]

पिछले चार लेखों में इङ्गलैंड की मौजूदा राज्य-व्यवस्था पर प्रकाश डाला गया है। अब यह देखना है कि अङ्गरेजों ने किस तरह से इन अधिकारों को प्राप्त किया। इस जद्दोजहद का सम्बन्ध देश के इतिहास से बहुत गहरा है और इस के रहस्य को पूर्णतया समझने के लिए इङ्गलैंड के इतिहास की जानकारी बहुत जरूरी है। मगर इन लेखों में मैं ऐतिहासिक घटनाओं की तफसील में नहीं जा सकता। उनका उल्लेख उसी हद तक किया जाएगा जितना कि राज्य-व्यवस्था के इतिहास को समझने के लिए अति आवश्यक है। जिनको इस विषय में अधिक रुचि हो वे इतिहास की कोई अच्छी पुस्तक पढ़ सकते हैं।

एङ्गल-सैक्सन आदि जातियाँ—अङ्गरेज जाति कई जातियों—केल्ट, जूट, एङ्गल, सैक्सन और नारमन—का मिश्रण है। चूंकि रोमन्स (Romans) और उनसे पहिले की जातियों की राज्य-व्यवस्था का असर देश के विधान पर कुछ नहीं पड़ा, इसलिए मैं उसको छोड़ देता हूं और एङ्गल और सैक्सन ने ब्रिटेन में आकर जो राज्य-व्यवस्था की उससे ही शुरू करता हूं। यह कहना, कि इङ्गलैंड का मौजूदा विधान एङ्गल और सैक्सन की राज्य-व्यवस्था का ही विकसित रूप है, गलत न होगा। यह जातियां जर्मनी में एल्ब (Elbe) नदी के किनारे रहती थीं और स्वतन्त्रता प्रिय थीं। ब्रिटेन में आकर इन्हों ने जो राज्य-व्यवस्था की उसको समझने के लिए उन की पूर्व की स्थिति को जान लेना लाभदायक होगा।

उनकी राज्य-व्यवस्था—यह जातियां समूहों में रहती थीं। इनका गुजर खेती और शिकार पर था। अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए ये लड़ाई के लिए हमेशा तैयार रहती थीं। हरएक समूह की एक सभा थी जिसमें सब बालिग आदमी शामिल होते थे। हरएक बात का फैसला इसी सभा में होता था। यही अदालत थी; यही कायदे-कानून बनाती थी और यहीं सुलह और लड़ाई सम्बन्धी बातों का फैसला होता था। व्यवस्था कायम रखने के लिए एक सुयोग्य आदमी को चुन लिया जाता था जोकि Ealdorman कहलाता था। युद्ध सञ्चालन के लिए एक बहादुर आदमी को सेनापति चुन लिया जाता था, जिसे Duce कहते थे। कोई खास फौज न थी। हरएक बालिग आदमी लड़ाई में शामिल हो जाता था। इन जातियों में बड़े २ आदमियों की सेवा करना बुरा नहीं समझा जाता था। इसलिए नौजवान Ealdorman की खिदमत करने में बड़ी इज्जत समझते थे और बहुत से युवक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनके पास रहते थे। आपस का सम्बन्ध नौकर और सेठ का नहीं था बल्कि साथी का था। निशानी के तौर पर एक अङ्गूठी और घोड़ा दिया जाता था और खाने-पीने के प्रबन्ध की जिम्मेवारी भी सरदार पर ही थी। इसके बदले में वे उनकी सेवा करते थे और लड़ाई के समय बड़ी बहादुरी से लड़ते थे और अपनी जान तक की परवाह न करते थे। इसतरह ये जातियां जर्मनी में रहती थीं।

रोमनों का ब्रिटेन से चले जाना—रोमन साम्राज्य को दूसरी जङ्गली जातियां आंख फाड़ २ कर देखती रहती थीं और समय-समय पर नजदीक के इलाकों पर धावा भी मारती थीं। शुरू २ में तो इनका मुकाबला होता रहा, मगर जैसे २ समय बीतता गया वैसे २ रोमन साम्राज्य की शक्ति कम होती गई और इन जातियों के आक्रमण खूब बढ़ते गये, यहाँतक कि अपने देश की रक्षा करने के लिए ४१० A. में रोमन ब्रिटेन से वापिस चले गए। ४०० वर्ष तक रोमनों के आधीन रहकर ब्रिटेन निवासी लड़ना और अपनी रक्षा करना भूल गए। जब दूसरी जातियां इनपर आक्रमण करने लगीं तब कई बार इन्होंने अपनी रक्षा के लिए रोमनों को वापिस आने के लिए कहा। मगर वे तो अपनी ही मुसीबत में पड़े थे, अतः उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की।

एङ्गल-सैक्सन आदि का आगमन—इस परिस्थिति से लाभ उठाकर एङ्गल और सैक्सन जातियों ने गिरोहों में ब्रिटेन में आना शुरू कर दिया और ६०० ए० डी० तक सारा देश इनके कब्जे में आ गया। बहुत से ब्रिटेन निवासी लड़ाइयों में मारे गए और कुछ पश्चिमी भागों में भाग गए, और जो बच रहे वे गुलाम बन गए। इन जातियों के हरएक गिरोह ने अपने रहने के लिए अलग अलग जगह निश्चित करली। ब्रिटेन से लड़ाई समाप्त हो जाने के बाद अपनी २ सत्ता जमाने के लिए इन्होंने आपस में लड़ना शुरू कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि बड़े राज्य छोटों को हजम कर गए। इस तरह से सात बड़े राज्य, जोकि इतिहास में Heptoneby के नाम से मशहूर हैं, स्थापित हो गए। ये थे—Norehumberia, Mercia, East Anglia, Essex, Kent, Sussex और Wessex जो सबके सब स्वतन्त्र थे और आपस में लड़ते रहते थे। आखिरकार सन ८२७ में Wessex (वेसेक्स) राज्य ने Egbert (एगबर्ट) के समय में सारे इङ्गलैंड को अपने आधीन कर लिया। इसका अर्थ कोई यह न समझे कि दूसरे राज्य नष्ट हो गए। दूसरे राजा राज करते रहे, सिर्फ लड़ाई के समय वे एगबर्ट की सरदारी में इकट्ठे होकर लड़ने लगे। यह तो इन जातियों के आगमन और राज्य स्थापित करने का संक्षिप्त विवरण हुआ। अब यह देखना है कि इन्होंने राज्य की व्यवस्था किस तरह से की।

राज्य-व्यवस्था—समाज में मुख्यतः दो वर्ग थे—एक तो नागरिक (Free man) और दूसरा गुलाम। पहला वर्ग दो प्रकार का था—(१) उच्च कुटुम्ब के लोग जिनके पास खूब जमीनें थीं; (२) साधारण लोग जिनके पास थोड़ी सी जमीन थी। इसी तरह गुलाम भी दो तरह के थे। (१) वे जो कि बटाई पर दूसरे नागरिकों की जमीन बोते थे और अलग मकान बनाकर रहते थे; (२) वे जिनका कार्य सिर्फ सेवा करने का था। यह अपने मालिक के बिलकुल आधीन थे और उसी के साथ कुटुम्ब सहित रहते थे। इनकी स्थिति खराब थी।

बादशाह—हरएक गिरोह अपने प्रमुख (Ealdorman) की सरदारी में ब्रिटेन में आया था। जर्मनी में रहते हुए इनको बादशाह की जरूरत न थी। मगर ब्रिटेन में आकर हर समय लड़ाई लड़ते रहने के कारण यह महसूस हुआ कि एक आदमी हमेशा के लिए मुखिया बना दिया जाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसपर देश और सेना के प्रबन्ध की जवाबदारी रहे। इसतरह प्रमुख को ही यह काम सौंपा गया और वह बादशाह कहलाया। ये लोग स्वतन्त्रता प्रिय थे और ब्रिटेन में आ कर भी इन्होंने अपनी इस विशेषता को नहीं छोड़ा। इनकी इस वृत्ति को समझने के लिए स्थानिक सँस्थाओं की व्यवस्था पर प्रकाश डालना होगा।

ग्राम—स्थानिक-संस्था—एङ्गल-सैक्सन राज्य में ग्राम, प्रारम्भिक स्थानिक सँस्था थी। ग्राम की जमीन का कुछ भाग गोचर था और बाकी को सब मिलकर बोते थे और उपज सब में बट जाती थी। इसकी एक सभा थी जिसकी बैठक प्रतिमास हुआ करती थी। हर एक नागरिक इसमें शामिल होता था। चुने हुए प्रमुख की देखरेख में गाँव के सब झगड़ों का फैसला होता था। जरूरत के अनुसार कायदे कानून भी यही सभा बनाती थी और इसी में शतक सभा के लिए प्रतिनिधि चुने जाते थे।

शतक सभा—कितने ही ग्रामों को मिलाकर एक शतक यानी Hundered बनता था यह कुछ नहीं कहा जा सकता कि एक शतक में कितने ग्राम थे और इसका नाम शतक कैसे पड़ा। इसकी भी एक सभा थी जोकि (Hundered moot) शतक सभा कहलाती थी। इसमें हरएक गांव के चार प्रतिनिधि, वहां का प्रमुख और बड़े २ जागीरदार शामिल होते थे। इसके सभापति को शतकाध्यक्ष (Hundered man) कहते थे। इसका मुख्य कार्य सारे शतक की व्यवस्था करना था। इस सभा की बैठक भी प्रतिमास होती थी। दीवानी और फौजदारी मुकदमों का न्याय करना भी इसी का कार्य था। साधारणतया जितने सदस्य हाजिर होते थे वे सब न्यायाधीश का कार्य कर सकते थे, मगर सुविधा के लिए १२ आदमी न्याय करने के लिए चुन लिए जाते थे।

प्रान्त—कई शतकों से मिलकर एक प्रांत अर्थात shire बनता था। जिन छोटे राज्यों को कोई बड़ा राज्य जीत लेता था तो वे उस राज्य के (shire) प्रांत बन जाते थे। शतक की तरह इसकी भी एक सभा थी जिसको शायर मूट (shire moot) कहते थे और इसकी बैठक साल में दो बार होती थी। इसमें ग्रामों के प्रतिनिधि और बड़े २ जागीरदार हाजिर होते थे। प्रांत के मुखिया को एलडोरमैन (Ealdorman) कहते थे। इस का चुनाव शायरमूट में नहीं बल्कि प्रांत की प्रजा की सभा में होता था जिसमें कि सब नागरिकों को हाजिर होने का अधिकार था। मगर ज्यों २ समय बीतता गया यह पद मौरूसी हो गया। इसका कार्य सारे प्रांत और फौज दोनों का प्रबन्ध करना था। शायरमूट का प्रमुख शैरिफ (sheriff) होता था जो कि प्राँत में बादशाह की सब जागीरों की देखरेख करता था और कायदे-कानूनों पर जनता से अमल कराता था। हर तरह का न्याय चुकाना भी इस सभा का कार्य था, मगर सहूलियत के लिए १२ आदमी, एलडोरमैन (Ealdorman) और बड़े पादरी (Bishop) की देखरेख में यह काम करते थे। लड़ाई के समय प्रांत की फौज का सेनापति एलडोरमैन ही होता था।

राजसभा—राज्य के सब प्रांत बादशाह के आधीन थे। वह देश और सेना के प्रबन्ध के लिए जिम्मेवार था और लड़ाई के समय वही सेनापति बनता था। बादशाह की अलग जागीरें थीं। इसके अलावा अदालतों में जो जुर्माना लिया जाता था उसका एक भाग इसको मिलता था। सब तरह की खानों पर इसी की मिलकियत थी। इसकी सहायता के लिए एक राजसभा थी जिसे विटनजीमोट (wetenagemot) कहते थे। महारानी, शाही खानदान के बालिग व्यक्ति, गिरजों और मठों के महन्त, प्रांतों के शासक, राजगृह के प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि इस सभा के सदस्य थे। इस सभा के कुल सदस्यों की तादाद ज्यादा से ज्यादा १०० और कम से कम ३० रहती थी। सभापति बादशाह होता था।

सभापति के कर्त्तव्य—(१) बादशाह का चुनाव करना। बादशाह की मृत्यु के बाद अक्सर बादशाह के लड़के को ही गद्दी पर बैठा दिया जाता था मगर उसके छोटे या अयोग्य होने पर दूसरा आदमी गद्दी पर बैठाया जाता था। ठीक तरह से राज न करने की हालत में राज सभा राजा को गद्दी से भी उतार सकती थी। (२) राज्य के लिये नियम बनाना. (३) ऐसे मुकदमों का फैसला करना जिन्हें शायर मूट नहीं कर सकती थी. (४) बड़े पादरियों को नियुक्त करना (५) प्रांतों के शासकों के चुनाव के बाद उनको शासक के तौर पर नियुक्त करना (६) कर लगाना आदि।

आज कल की तरह अलग फौज नहीं रखी जाती थी। हर एक बालिग आदमी सैनिक था और समय पड़ने पर लड़ने के लिए तैयार हो जाता था।

न्याय पद्धति—मुकदमों का फैसला दो रीति से होता था—(१) सत्यवादी पडोसियों द्वारा निर्दोष ठहराया जाना, (२) गरम लोहे पर चलाना या खौलते हुए पानी में या तेल में हाथ डलवाना। अगर कोई अभियुक्त अपने निर्दोष होने के बारे में १२ सत्यवादी पड़ौसियों की साक्षी दिला सकता था तो वह छोड़ दिया जाता था। ऐसा न होनेपर उसे गरम लोहे पर आंखें मींचकर चलाया जाता था या गरम तेल या गरम पानी में हाथ डाल दिया जाता था। अगर नियुक्त समय में उसके घाव अच्छे नहीं हो जाते तो वह दोषी ठहराया जाता था। आमतौर पर जुरमाने की ही सजा दी जाती थी। जुरमाना अपराध के अनुसार नहीं बल्कि उस आदमी की हैसियत को दृष्टि में रखकर किया जाता था जिसको कि नुकसान पहुँचता था। कतल होने पर कातिल को कतल किये गये आदमी के कुटुम्ब को डन्ड देना पड़ता था।

गुलामों की वृद्धि—राज्य व्यवस्था में स्वतन्त्रत आदमियों (free men) का ही हाथ था। गुलामों या छोटे दर्जे के आदमियों की कुछ पूछ न थी। धीरे धीरे ज्यादा लड़ाई झगड़ों के कारण स्वतन्त्र आदमियों की सँख्या कम होने लगी और गुलामों की तादाद बढ़ती गई। यहां तक की नार्मन लोगों के आक्रमण के समय स्वतन्त्र आदमी बहुत ही थोड़े थे और जो थे वे बड़े जागीरदार थे। चूंकि छोटे मोटे जमींदार डेन लोगों के आक्रमण से अपनी रक्षा नहीं कर सकते थे, इसलिये Alfred ने सब छोटे जमींदारों को हुक्म दिया कि वे अपनी जमीनें बड़े जमींदारों को दे दें और फिर उनसे बटाई पर वापिस लेकर बोयें। इस तरह बहुत से स्वतन्त्र लोग गुलाम हो गये।

केन्द्रीय शासक के शक्तिशाली न होने के कारण ये लड़ाकु जातियां डेन लोगों के आक्रमण को नहीं रोक सकीं। स्थानिक सँस्थाओं में ही यह लोग रस लेते थे, और वहां अपनी स्वतन्त्रता को कायम रखने के लिए खूब प्रयत्न करते थे। केन्द्रीय सरकार से इनका बहुत ही कम सम्बन्ध था। इसलिए वे उसको मजबूत नहीं बना सके जिसका कि बुरा नतीजा इन्हीं को भोगना पड़ा।

ईसाई धर्म का प्रभाव—सन ५९७ से यह लोग ईसाई धर्म को मानने लगे और लगभग सौ साल के अर्से में सब के सब ईसाई हो गये। इसका असर राज्य व्यवस्था पर भी पड़ा। एक ही धर्म के होने के कारण अब इनकी लड़ाइयों में पहले जैसी बर्बता न रही। दूसरे धर्म सम्बन्धी मामलों में मिल कर काम करने से इनमें कुछ हद तक राजनीतिक ऐक्य का भाव भी पैदा होने लगा। ईसाई धर्म के प्रचार से पहिले पादरी लोग राज काज के कामों में भाग नहीं लेते थे. मगर ईसाई पादरी खूब भाग लेते थे। वे अपनी योग्यता के कारण बादशाह पर अच्छा प्रभाव डालते थे और इनके द्वारा रोम और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

दूसरे सभ्य देशों का असर देश पर पड़ा।

डेन्स का आक्रमण—आठवीं सदी के आखिर में डेन्स, जो कि नारवे और डेनमार्क में रहते थे, इङ्गलैंड पर आक्रमण करने लगे। पहिले तो यह लूटमार करके वापिस चले जाते थे, मगर ८५५ के बाद से इन्होंने रहना भी शुरु कर दिया और इनकी सत्ता इतनी बढ़ गई कि ८७९ में (Alfred) एलफ्रेड ने देश का एक अलग भाग इनके रहने के लिये दे दिया। एथलरेड (Ethelred) के समय में इन्होंने फिर आक्रमण किये, किन्तु इनको रुपया पैसा देकर वापिस लौटा दिया गया। रुपया मिलने के कारण इनका लालच बढ़ता गया, यहांतक कि १००२ में देश इनके आधीन हो गया। १०४२ तक डेन लोगों का राज्य रहा और १०४२ में कैनयूट बादशाह के लड़के हैरेल्ड की मृत्यु के बाद जनता ने फिर एथलरेड के लड़के को बादशाह बनाया और इसकी मृत्यु के बाद १०६६ में विलियम (William of-Normandy) अंग्रेजों को हराकर बादशाह बन गया।

आक्रमण का प्रभाव—डेन लोगों के आक्रमणों का असर राज्य व्यवस्था पर काफी पड़ा। (१) देश के रक्षण की सारी जवाबदारी बादशाह पर आजाने के कारण उसकी सत्ता बढ़ी। (२) चूँकि बादशाह को देश का रक्षण करने के लिए सरदारों की सहायता की जरूरत पड़ी, इसलिये उसने नये जागीरदार बनाने शुरु किये जिसके फलस्वरूप सरकारी जमीनें करीब-करीब खतम हो गईं। इन जागीरदारों को न्याय करने का अधिकार भी दिया गया। (३) इससे स्थानिक संस्थाओं की सत्ता को धक्का लगा और उनकी शक्ति कम हो गई। (४) प्राँतों में Ealdermen की सत्ता जाती रही और (Sheriff) शैरिफ की सत्ता बढ़ी (५) चूँकि छोटे मोटे जमींदार (स्वतन्त्र लोग) अपना रक्षण नहीं कर सकते थे, इसलिए उनको अपनी जमीन बड़े २ जागीरदारों को देनी पड़ी। इस तरह स्वतन्त्र लोगों की संख्या बहुत कम हो गई।

इससे हम कह सकते हैं कि १०६६ में विलियम के इङ्गलैण्ड पर कब्जा करने के बाद राज्य व्यवस्था में प्रजा का हाथ बहुत कम हो गया। स्थानिक संस्थाओं की सत्ता कम हो गई थी और बादशाह की शक्ति आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ रही थी। अगले लेख में बताया जायगा कि विलियम ने राज्य व्यवस्था में क्या फेरफार किया और १२१५ में (Magna charta) मैग्ना कार्टा के पास होने तक देश की व्यवस्था किस तरह की रही। एङ्गल और सैक्सन की बाबत जो ज्यादा जानना चाहें वे David Hume लिखित History of England vol 1, Appendix 1 पढ़ सकते हैं।

(क्रमशः)

साधु के लक्षण

१ आँख का इस्तेमाल करते समय स्पष्ट रूप से देखने का प्रयत्न करता है।

२—प्रसन्न वदन रहता है।

३—व्यवहार से स्वाभिमानता टपकती है।

४ सदा सच बोलता है।

५—अपना काम धर्म-बुद्धि से सावधानी के साथ करता है।

६—शङ्का उत्पन्न होने पर दूसरे से पूछता है।

७—जहाँ लाभ होने की सम्भावना हो वहाँ न्याय और प्रमाणिकता का ख्याल रखता है।

८—क्रोध के समय इस बात का विचार रखता है कि क्रोध के कारण कैसी-कैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा।

—कन्फ्यूशियस

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पादक शरीर-श्रम की प्रतिष्ठा

ले०—श्री दादा धर्माधिकारी

आजादी की आगामी अहिंसात्मक लड़ाई के सैनिकों के लिए गाँधीजी द्वारा चरखा चलाने की शर्त को पूरा करना लाजमी घोषित कर देने से, चरखे के सम्बन्ध में बड़ा भारी विवाद उठ खड़ा हुआ है। कांग्रेसियों की बड़ी संख्या चरखा चलाने को इतना महत्व नहीं देती है कि इस शर्त पर अमल किए बिना कोई व्यक्ति आजादी की मौजूदा लड़ाई में सम्मिलित होने योग्य न माना जावे। लेखक ने जो, गाँधी-विचार के विद्वान् पण्डित हैं, बड़े सुन्दर ढङ्ग से बताया है कि मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक विकास के लिए किसी न किसी शरीर-श्रम व समाजोपयोगी उद्योग की आवश्यकता है, जिसके लिए उत्पादक शरीर-श्रम की प्रतिष्ठा कायम करना आवश्यक है। इस जीवित प्रतिष्ठा का प्रतीक चरखा ही है जिसको चलाना आज अहिंसात्मक युद्ध के हरएक सैनिक के लिए अनिवार्य है।

—सम्पादक

मेरे मित्र आचार्य बन्सीधरजी लिखते हैं—"कभी चरखे की अहमियत पर भी 'दीपक' के लिये कोई लेख लिखिये। इस बारे में बड़ा तूफान मचा हुआ है।" मैं आज तक सोचता रहा कि आचार्य बन्सीधर जी को क्या जवाब दूँ? गाँधीजी ने और दूसरे प्रतिष्ठित नेताओं ने चरखे के विषय में जो कुछ आज तक लिखा है उससे जिन लोगों को सन्तोष नहीं हुआ, उनपर मेरे तुच्छ विचारों का क्या असर होगा?

चरखे का उपहास और आलोचना करने वालों के दो वर्ग हैं। एक तो वे जिनके और गांधी जी के विचारों में मूलभूत भेद है और इसलिये चरखे के पीछे जो विचारधारा है उसी का विरोध करने के लिये वे कटिबद्ध हैं। जिनके विचार इस विषय में पक्के हो गये हैं उनके मतभेद की हमें कदर करनी चाहिए और उनसे यही समझौता करना चाहिए कि हम एक दूसरे के मन्तव्यों का आदर करें। दूसरे वे हैं जो न तो गाँधीजी के ही विचार पढ़ने की पर्वाह करते हैं और न दूसरे पक्ष के ही। उनके दिल में चरखे के प्रति एक प्रकार की अरुचि है और गांधीजी की तजवीजें उन्हें कुछ अटपटी तथा असँस्कृत जान पड़ती हैं; इसलिए वे चरखे का मजाक उड़ाया करते हैं।

कुछ लोग तो यह भी कहते हैं कि "गांधीजी क्या जानें अर्थशास्त्र किस चिड़िया का नाम है? उन्होंने कभी अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र का गम्भीर अध्ययन भी किया है? उनकी बातों में नयापन भले ही हो मगर वैज्ञानिकता नहीं है।"

इन लोगों से हम इतना ही पूछना चाहते हैं कि जिन महान् सुधारकों ने अपने अपने समय की रूढ़ सामाजिक कल्पनाओं तथा विचारों में आमूल परिवर्तन किया वे उसी समय के समाज-मान्य अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र को कहां तक मानते थे? डेव्हिडह्यूम के अर्थशास्त्र में और कार्लमार्क्स के अर्थशास्त्र में कौनसी समानता है? क्रांतिकारी नेता की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह विशेषता होती है कि वह अपने समय की रूढ़ कल्पनाओं का दास नहीं होता। अन्यथा वह क्रांति ही कैसे कर सकेगा? जिस अर्थशास्त्र को फ्रेडरिक हैरिसन ने "स्वार्थशास्त्र" (Science of Selfishness) कहा और रस्किन से लेकर मार्क्स तक कई आधुनिक विचारकों ने जिसे "अनर्थशास्त्र" सिद्ध किया, उस अर्थशास्त्र के गांधीजी पण्डित नहीं हैं, यह उनकी त्रुटि नहीं है बल्कि गुण है। इसीलिए उनके विचारों में नयापन और मौलिकता है।

शिक्षित नवयुवक प्रायः ऐसा समझते हैं कि "गांधीजी में उच्च चरित्र के कारण शक्ति तो है लेकिन उनकी बुद्धि बिलकुल मामूली है। वे अपनी धुन के पक्के हैं। जब कोई धुन उनपर सवार हो जाती है तो बेखटके उसी के पीछे पड़ते हैं।"

जब ऐसी आलोचना सुनता हूं तो मुझे एक मजेदार किस्सा याद आता है। कोई बाईस साल पहिले मैं बङ्गाली सीखने की कोशिश कर रहा था। मेरे एक बङ्गाली दोस्त ने मुझे एक किस्सों की पुस्तक पढ़ने को दी। उसमें एक राजकृष्ण बानर्जी नामक कठवैद्य का किस्सा था। ये हजरत किसी डाक्टर के कम्पौंडर रह चुके थे। थे तो बुद्धू मगर कुछ दवाइयों के नाम जानते थे। एक दवा का उपयोग भी याद था। वह दवा थी 'कैस्टर ऑइल' (अँडी का तेल)। हर मर्ज के लिए एक ही नुसखा था। किसी को बुखार आया—"दे दो अँडी का तेल।" जुकाम हुआ—'अँडी का तेल'। बुरे-बुरे सपने पड़े—'अँडी का तेल'। यहां तक कि एक दिन किसी बुढ़िया की बछिया गुम गई और वह सलाह पूछने आई तो उसे भी 'अँडी का तेल' दिला दिया। हर मर्ज का ही नहीं; हर तकलीफ का, हर दिक्कत का, हर सवाल को हल करने का, एक ही इलाज था - 'अँडी का तेल'।

गांधीजी के आलोचक भी गाँधीजी को राजकृष्ण बानर्जी जैसा नीम हकीम मानते हैं और उनकी यह प्रामाणिक राय है कि गाँधीजी के हाथों में देश की जान खतरे में है। वे हर एक सवाल को हल करने के लिए चरखा ही निर्दिष्ट करते हैं। रियासतों में अत्याचार हो रहे हैं तो 'चरखा चलाओ,' हिन्दू-मुसलमानों की लड़ाई होती है तो 'चरखा चलाओ,' सरकार से दो हाथ करने हैं—'चरखा चलाओ,' लोगों को रोटियों के लाले पड़े हैं—'चरखा चलाओ,' !! गांधीजी के आलोचक दङ्ग रह जाते हैं। कोई ठिकाना भी है इस आदमी की हिमाकत का! यह तो इस देश का राजकृष्ण बानर्जी ही है!'

इसलिए हमारा यह फर्ज हो जाता है कि हम चरखे की नीति पर गम्भीर विचार करें कि "चरखा दरअसल अर्थक्रांति का एक उपयुक्त, उपयोगी और उपादेय प्रतीक है या एक दकियानूसी, अर्द्धशिक्षित, सठियाये हुए बुड्ढे का खब्त है?"

गांधीजी कहते हैं कि उनकी अहिंसक नीति का चरखा प्रतीक है। 'प्रतीक' का अर्थ है किसी अव्यक्त भावना और विचार को व्यक्त करने वाली कोई स्थूल या मूर्त वस्तु। हर एक वस्तु में प्रतीक बनने की शक्ति नहीं होती। किसी खास भावना या विचार का प्रतीक होने की शक्ति किसी खास वस्तु में ही पाई जाती है। यह कौनसी शक्ति है? प्रतीक में कौनसी विशेषता होना जरूरी है? हम जिस विचार या भावना को समाज में प्रतिष्ठित करना चाहते हैं उसमें और उस वस्तु में, जिसे हम उस भावना का मूर्त प्रतीक बनाना चाहते हैं, कुछ समान धर्म होना चाहिए। जिस वस्तु में यह विशेषता नहीं है उसमें प्रतीक बनने की शक्ति नहीं है।

समाज में अनेक प्रकार के प्रतीक हैं जो तरसम विचारों के या भावों के द्योतक हैं। एक प्रतीक है कलम और दूसरा तलवार। "कलम बड़ी है या तलवार?"—यह वाद पुराना है। सिक्का एक तीसरा प्रतीक है जो सम्पत्ति का चिन्ह माना जाता है। मुगदर भी एक प्रतीक है जो शारीरिक शक्ति का उपलक्षण माना जाता है। इन पुराने प्रतीकों की जगह नए प्रतीक कायम करने का यह अभिप्राय है कि हम समाज की प्रचलित कल्पनाओं, विचारों और तौर-तरीकों को जड़मूल से बदल देना चाहते हैं। इसी का नाम है क्रांति। इसीलिए 'हँसिया और हथौड़ा' क्रांति के प्रतीक माने जाते हैं। वे कलम, तलवार, मुगदर और चांदी-सोने की जगह एक नयी प्रतिष्ठा कायम करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहते हैं। वह होगी उत्पादक शरीर-श्रम की प्रतिष्ठा।

जो उत्पादक-श्रम की प्रतिष्ठा कायम करना चाहते हैं उनके भी दो वर्ग हैं—एक वे जो जीवन के विकास के लिए शरीरश्रम की आवश्यकता महसूस करते हैं, और दूसरे वे जो श्रम की मात्रा को घटाना चाहते हैं और इसी में सभ्यता मानते हैं। एक दृष्टि से तो शरीर को हृष्ट-पुष्ट और कार्यक्षम रखने के लिए किसी न किसी प्रकार के शरीरश्रम की जरूरत सभी महसूस करते हैं। लेकिन उनमें से एक वर्ग कहता है कि शरीर को मजबूत, फुर्तीला और चपल बनाने के लिए हम व्यायाम, कसरत और खेल आदि का आयोजन अवश्य करें; मगर अपनी जरूरतें पूरी करने के लिए हमें जितनी कम मिहनत करनी पड़े उतना ही अच्छा। गहराई से विचार करने पर इसी नतीजे पर आना पड़ता है कि दरअसल यह पक्ष उत्पादक शरीर-श्रम का पक्षपाती नहीं है। आज कुछ लोग थोड़े से परिश्रम का अपेक्षाकृत बहुत अधिक फल पाते हैं और अधिकांश लोगों को सख्त मिहनत करने के बाद भी अपनी प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी करने का सामान तक नहीं मिलता, यह बात उसे अखरती है। लेकिन अगर सभी अवकाश-भोगी बन जावें, उन्हें बिना हाथ-पैर हिलाये, यन्त्रों की बदौलत विलास की सारी सामग्री अनायास प्राप्त हो जायें, तो इस पक्ष की दृष्टि से इस पृथ्वी पर 'नन्दनवन' आजायेगा। ये समाज को एक विराट कल्पवृक्ष में बदल देना चाहते हैं जहां इच्छा मात्र से सारी कामनाएँ पूरी हो जायेंगी। मतलब यह है कि ये लोग दरअसल श्रम या उत्पादक उद्योग की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ाना चाहते; वे तो सामाजिक विषमता के शत्रु हैं। कुछ लोग केवल मिहनत करें और कुछ थोड़े से केवल चैन करें—यह असमानता उनके लिए असह्य है। वे ऐसा समाज चाहते हैं जिसमें सबके लिए कम से कम काम ज्यादह से ज्यादह फुरसत हो; विलास के साधन और अवसरों में कोई भेद या विषमता न हो।

परन्तु ये लोग भी केवल फुरसत के हिमायती नहीं हैं। इनमें से कुछ लोग 'फुरसत ही आजादी' है, कहने वाले जरूर हैं। लेकिन फुरसत से उनका मतलब निष्क्रियता या निठल्लापन नहीं है। "अनन्त अवकाश, सदा के लिए विश्राम, हमेशा की छुट्टी, नरक की काम चलाऊ व्याख्या हो सकती है"—यह भी उन्हीं का सूत्र है। वे केवल विश्रामवादी या निष्क्रियतावादी नहीं हैं। अतः उन्होंने "फुरसत ही आजादी है" की जगह "अपनी रुचि और प्रवृत्ति के अनुसार काम करने की सुविधा ही आजादी है"—यह दूसरा सूत्र बनाया है।

तात्पर्य यह है कि बिना किसी न किसी प्रकार के शरीर-श्रम के छुटकारा नहीं है। शरीर के स्वास्थ्य के लिए और समाज की उन्नति के लिए हर एक को किसी न किसी प्रकार का शरीर-श्रम करना ही पड़ेगा। अन्तर इतना ही है कि जो लोग समष्टि या समाज की दृष्टि से विचार करते हैं वे यह कहते हैं कि "व्यक्ति को चाहिए कि वह समाज को अधिक से अधिक दे और समाज से कम से कम ले"। "अधिक से अधिक सेवा और कम से कम प्रतिग्रह"—उनका सिद्धांत-वाक्य है। जो लोग इसके खिलाफ हैं वे भी यह तो मानते ही हैं कि उनके आदर्श समाज में मनुष्य ही प्रेरक शक्ति, व्यक्तिगत लाभ या धन प्राप्ति की अभिलाषा नहीं होगी; बल्कि समाज सेवा की बुद्धि होगी। इसीलिए हर एक से उसकी योग्यता के अनुसार काम लिया जायगा और हर एक को उसकी आवश्यकता के अनुसार जीवन की सामग्री दी जायेगी।' गांधी विचार और अन्य विचारों में यही भेद है। इसलिए गाँधी विचार के अनुसार "शरीरश्रम" की जीवन के आवश्यक व्रतों में गिनती होती है। दूसरी विचारधाराओं के अनुसार शरीरश्रम एक जबरदस्ती की दलील है जिसको कम करना मनुष्य के प्रयत्नों का उद्देश्य होना चाहिए। हम कहते हैं, कि "जब मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक विकास के लिए किसी न किसी प्रकार के शरीर-श्रम की तथा समाजोपयोगी उद्योग की आवश्यकता है ही तो जिससे ये दोनों उद्देश्य बहुत बड़े अंश में सफल होते हों ऐसा शरीरश्रम ही अनिवार्य क्यों न बनाया जाय? उत्पादक उद्योग में शरीरश्रम और समाज सेवा, ये दोनों गुण पाये जाते हैं। इसलिए हम उसी की प्रतिष्ठा क्यों न कायम करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब यह सवाल होता है कि समाजोपयोगी शरीरश्रम या उत्पाद उद्योग का विधान करने में क्या व्यक्ति की अभिरुचि और विशेष शक्ति का कोई विचार नहीं किया जायगा ? तब तो वह सामाजिक बेगार होगी, उस में से न तो व्यक्ति की आत्मा का विकास होगा न कला कौशल का। व्यक्ति और समाज दोनों का ऐसे जबरदस्ती के श्रम से पतन ही होगा।" अपनी-अपनी परम्परा, और विशेष शक्ति और अभिरुचि के अनुसार हरेक व्यक्ति कोई न कोई समाजोपयोगी व्यवसाय करे यही वास्तविक "वर्ग धर्म" है। हरएक को अपनी-अपनी रुचि और योग्यता के अनुरूप उद्योग पसन्द कर लेने की आज़ादी होनी चाहिए। लेकिन यह सवाल बाद का है। आज इतना मान लेना काफी है कि हरएक के लिये किसी न किसी प्रकार का शरीरश्रम अनिवार्य कर देना समाज की प्रचलित प्रतिष्ठाओं में क्रान्ति करने के लिए नितान्त आवश्यक है।

दूसरा सवाल यह होता है "कि शारीरिक स्वास्थ्य के लिए जिस प्रकार के शरीर-श्रम की जरूरत है वह उत्पादक उद्योग करने में नहीं होगा। उद्योग में तो किसी एक ही अङ्ग को एक ही तरह का व्यायाम मिलता है। शरीर के स्वास्थ्य और गठन के लिए वह उपयुक्त या पर्याप्त नहीं है।"

बात सही है। लेकिन यहाँ उत्पादक उद्योग का प्रतिपादन केवल शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से नहीं किया जा रहा है बल्कि विशेषतः समाज-स्वास्थ्य की दृष्टि से। मनुष्य के शारीरिक तथा आत्मिक विकास के लिए जिस प्रकार शरीरश्रम की आवश्यकता है उसमें उत्पादक उद्योग का स्थान महत्त्वपूर्ण है इतना ही हमारा निवेदन है।

ऊपर कहा जा चुका है कि समाज के वर्तमान प्रतिष्ठित मुल्कों में तलवार और लेखनी का स्थान बहुत ऊँचा माना जाता है। ये समाज के केवल निष्क्रिय और शोभा के मूल्य नहीं समझे जाते; लेकिन मूल्य समझे जाते हैं। इसीलिए उन मूल्यों की प्रतिष्ठा कायम रखने की गर्ज से उनके साथ कुछ आवश्यक क्रियाएँ और प्रतीक जोड़ दिये गये हैं। सिपाही की वर्दी और उसकी कवायद की समाज में बड़ी प्रतिष्ठा है। कवायद और वर्दी दोनों सिपाहियत के समाज-मान्य प्रतीक हैं। वे सिपाहियत की भावना को नित्य जाग्रत रखने में मददगार होते हैं।

उसी तरह का एक सामाजिक प्रतीक दान भी है। दान 'आर्थिक सँविभाग' (इक्विटेबिल डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ वेल्थ) की वृत्ति का उपलक्षण है। उस क्रिया से हम यह प्रकट करना चाहते हैं कि हम सँविभाग के सिद्धांत में विश्वास करते हैं और दान की प्रत्यक्ष क्रिया से उस विश्वास का सबूत पेश करते हैं। इस्लाम में सभी मुसलमान बराबर हैं। अपने मुसलमान भाई से अपने बन्धुत्व का भाव प्रकट करने के लिए हरएक मुसलमान 'जकात' देना अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझता है।

हमारा ध्येय एक ऐसे समाज का निर्माण है जहाँ दान के लिए स्थान ही नहीं रहेगा; क्यों कि उसमें न तो कोई लेने वाला रहेगा और न कोई देने वाला। उस समाज में सञ्चय और सँग्रह का निषेध रहेगा।

ऐसे समाज का निर्माण तभी होगा जब कि समाज में उत्पादक शरीरश्रम की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। इस परिवर्तन का सूचक प्रतीक चर्खा है। लेकिन 'हँसिये और हथौड़े" के समान हमारे झण्डे पर चरखे का चित्र बना देना काफी नहीं है। झण्डे पर सिर्फ तलवार का या दान की क्रिया का चित्र बना देने से काम नहीं चलेगा। सिपाही को अपने दैनिक जीवन में और धार्मिक मनुष्य को अपने नित्य व्यवहार में उन सिद्धान्तों की उपलक्षणात्मक क्रियाएँ करनी पड़ती हैं। ये क्रियाएँ आचारात्मक प्रतीक हैं। आचारात्मक प्रतीक जीवित और प्रभावोत्पादक होता है। हम जिस प्रकार की अर्थ क्रान्ति चाहते हैं उसके लिए उत्पादक शरीरश्रम की प्रतिष्ठा कायम करना आवश्यक है। इस नई प्रतिष्ठा का जीवित घर क्रियात्मक प्रतीक चरखा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी जापान यात्रा

ले०—'एक यात्री'

[२]

जापानी इन (सराय)—विदेशी ढङ्ग के होटलों के बाद में जापानी होटलों का नम्बर आता है जिन्हें 'इन' कहते हैं। लगभग प्रत्येक स्थान पर मिलने वाले इन होटलों में ही विदेशी यात्री को जापानी रहन-सहन का वास्तविक ज्ञान हो सकता है। यदि यात्री थोड़ी सी असुविधा सहन कर सके, तो इन्हीं होटलों में ठहरना ठीक है। इनमें यात्री को जापानी ढङ्ग से रहना पड़ता है। होटल में प्रवेश करने पर जूते उतार कर कपड़े के स्लीपर पहनने पड़ते हैं और रहने के कमरे के द्वार पर पहुँच कर उन्हें भी उतार नङ्गे पैरों कमरे के भीतर जाना पड़ता है, क्योंकि कमरे में चटाइयां बिछी रहती हैं जिनपर बैठना पड़ता है। साधारणत: जापानी लोग पालती मारकर अथवा घुटनों के बल चटाइयों पर बिछे छोटे २ गद्दों पर बैठते हैं। कहीं २ हाथ टिकाने के लिए लकड़ी के छोटे २ स्टूल भी रखे रहते हैं। सामने एक छोटासा डैस्क होता है। एक ही कमरा भोजन करने, रहने व सोने का काम देता है। जब सोने का समय आता है तो डैस्क को एक तरफ करके रूई, घास या धान के छिलकों से भरे गद्दे चटाई पर बिछा दिये जाते हैं। यों तो एक या दो ही गद्दे एक-दूसरे के ऊपर डाल देने से काम चल जाता है, किंतु अधिक मुलायम करने की आवश्यकता हो तो एक-दो और डाल दिये जाते हैं। तकिया भी धान के छिलके अथवा घास का भरा छोटा सा होता है। शीत ऋतु में गैस पाइप अथवा कोयले की अङ्गीठी से कमरे को गर्म किया जाता है तथा चारों ओर से बन्द रखा जाता है, किंतु रोशनदान आदि का ऐसा प्रबन्ध होता है कि कमरे को बन्द रखने से किसी भी ऋतु में कोई असुविधा नहीं होती। हजामत कमरे में ही बनाई जा सकती है; किंतु हाथ-मुँह धोने के लिए कमरे से बाहर नल पर जाना पड़ता है। जापानियों का स्नान करने का ढङ्ग निराला है। एक स्नानगृह पुरुषों के लिए तथा दूसरा स्त्रियों के लिए पृथक् होता है। इनमें छोटे २ हौज बने होते हैं जहाँ सब एक जगह और एक साथ स्नान करते हैं। यदि किसी यात्री को इस प्रकार स्नान करने में कोई आपत्ति हो तो वह या तो सबसे पहले स्नानगृह में जा कर स्नान करे अथवा कहकर नया पानी डलवाले जिसके लिए उसे अलग कुछ पैसे देने पड़ते हैं। हौज में प्रवेश करने से पहले छोटे से स्टूल पर बैठकर सारे शरीर को साबुन से धो कर अथवा तौलिए या झामे से रगड़कर स्वच्छ कर लिया जाता है, तब ऋतु के अनुसार गर्म अथवा ठण्डे पानी से भरे हौज में प्रवेश किया जाता है। इसमें जितने समय तक उचित समझे बैठा रहे, किंतु शरीर को मलकर अथवा अन्य किसी प्रकार से जल को अशुद्ध न किया जावे। यह प्रथा सम्पूर्ण देश के स्नानगृहों में मौजूद है। इस प्रकार के सार्वजनिक स्नानगृह (Public bath) प्रत्येक ग्राम और शहर में बने हुए हैं जहाँ थोड़े से पैसे देकर स्त्री-पुरुष स्नान किया करते हैं। इन सरायों में जापानी भोजन ही मिलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यदि विशेष प्रबन्ध कर लिया जावे तो विदेशी ढङ्ग का भोजन भी मिल जाता है । यहां भी कार्य करने वाली लड़कियां ही होती हैं जोकि विदेशी भाषा बहुत कम समझती हैं । यहां व्यय होटलों से कुछ कम होता है, किंतु टीमनी (बिल का दशांश) यहां भी देना पड़ता है जिसको इनका स्वामी स्वयँ बाँट देता है ।

इन दो प्रकार के होटलों के अतिरिक्त रैस्टौरां (Restaurant) होते हैं जहां पर केवल खाने-पीने का ही प्रबन्ध होता है, यात्रियों के ठहरने का नहीं । कोई व्यक्ति इन में किसी भी समय पहुँचे, उसे समय के अनुसार भोजन मिल जाता है । इन भोजन-गृहों में विदेशी यात्री ही नहीं वरन् जापानी स्त्री-पुरुषों का अधिकांश भाग भोजन करता है । ऐसे स्थानों को देखकर ही पता लगता है कि जापानी कितने मितव्ययी होते हैं । किंतु कुछ मनचले युवक-युवतियाँ ऐसे भी हैं जो कि पाश्चात्य सभ्यता की ओर आकर्षित होते जारहे हैं । इस प्रकार के लोग विदेशी यात्रियों की तरह अच्छे २ भोजनों में रुपया पानी की तरह बहाने में आना-कानी नहीं करते । यदि यह प्रथा इसी प्रकार प्रचलित रही तो वह दिन दूर नहीं जब जापानियों का दैनिक जीवन भी अन्य पाश्चात्य देशवासियों के समान आमोद-प्रमोद और फिजूलखर्ची का बन जावेगा । स्वभाव में आलस्य आ जाने से कार्यशक्ति का ह्रास होगा जिससे शिल्पकला को धक्का पहुँचेगा और बढ़ता हुआ दैनिक खर्च पूरा होना कठिन हो जावेगा । इस प्रकार जापानियों के सामने भी वही विकट समस्या उपस्थित हो जावेगी जो कि आज पाश्चात्य देशवासियों के सन्मुख उपस्थित है । यदि इसकी रोकथाम अभी से न की गई तो जापान का भविष्य सन्दिग्ध प्रतीत होता है ।

टी रूम (चाय घर) में चाय, डबल रोटी, शराब, बीयर, फल आदि मिल सकते हैं । इनकी भी प्रत्येक शहर में अधिकता है ।

बार-रूम, गिङ्गा आदि—प्रत्येक देश, जाति अथवा समाज की सभ्यता, रहन-सहन, आचार-विचार आदि में आकाश-पाताल का अन्तर है । एक देश अथवा समाज जिस काम को असभ्यता, धृष्टता, अश्लीलता, अनाचार और पाप समझता है, उसी को दूसरा देश या समाज सभ्यता, आमोद-प्रमोद अथवा सुख की सामग्री समझे बैठा है । मुझे अनेक व्यापारियों, अहलकारों, शिल्पियों अथवा अन्य सज्जनों से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ । उन सबका मुझसे सबसे पहला प्रश्न यही होता था कि मैंने कौनसे बार-रूम देखे और कहां की लड़कियाँ अच्छी थी अथवा कहां पर अधिक आदर-भाव हुआ ? इतना ही नहीं वे लोग यात्रियों को स्वयँ ऐसे स्थानों पर ले जाकर वहां के दृश्यों को दिखाना अथवा क्षणिक आनन्द का अनुभव कराना एक प्रकार की सभ्यता या शिष्टाचार का नमूना समझते हैं । जो उसमें भाग नहीं लेता, मैं ठीक नहीं कह सकता कि वे उसको किस दृष्टि से देखते हैं । इस प्रकार के कार्यों में सम्मिलित होने वाले मनचले युवक ही नहीं वरन् श्वेत केश वाले बूढ़े भी होते हैं । आपके बार-रूम में प्रवेश करते ही २-४ युवतियाँ आपका अभिवादन करेंगी और आपको कुर्सी पर बिठाएँगी । एक-एक पुरुष के साथ एक-एक लड़की बैठ जाती है । फिर भोजन, शराब आदि जिस वस्तु की आवश्यकता होती है, मेज पर रख दी जाती है । शराब पीजिए, भोजन कीजिए; बगल में बैठी हुई लड़की को खिलाइए-पिलाइए । यदि आप स्वयँ उससे छेड़छाड़, हँसी-मजाक करने का साहस न करें तो वह स्वयँ ऐसा करने लगती है । यदि कुछ समय तक आपकी ओर से प्रत्युत्तर न मिले तो विवश अलग हो जाती है । वहांपर परस्पर एक-दूसरे का जूठा खाना दोष नहीं समझा जाता है । मैंने अनेक सज्जनों को एक ही गिलास में उन लड़कियों के साथ शराब आदि पीते देखा है । ऐसे स्थानों में बहुधा वस्तुओं का मूल्य दुगना देना पड़ता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वभावत: यह प्रश्न उठता है कि ये लड़कियाँ कौन होती हैं ? मुझे बतलाया गया कि प्राइमरी शिक्षा समाप्त करने के बाद जिन लड़कियों के माता-पिता उन्हें अधिक शिक्षा नहीं दे सकते अथवा उनके पालन-पोषण का भार नहीं उठा सकते, ऐसी लड़कियां अपने माता-पिता और परिवार को सहायता देने तथा अपने विवाह के लिए धनोपार्जन करने के लिए अथवा अन्य प्रकार की आवश्यकता-पूर्ति के लिए अपने भविष्य-जीवन का कार्यक्रम स्वयं निश्चित करती हैं । इस प्रकार कोई होटल में, कोई बार-रूम में अथवा दफ़्र आदि विभिन्न सँस्थाओं में चली जाती हैं, जहाँ पर उनको वहां की स्थिति के अनुसार शिक्षा दी जाती है। मुझे यह भी बताया गया कि यदि परिवार की स्थिति अच्छी न हो और उसको आर्थिक सहायता की आवश्यकता प्रतीत होती हो तो लड़कियाँ कुछ समय के लिए वेश्या-वृत्ति स्वीकार करने में भी आनाकानी नहीं करतीं ।

इसमें सन्देह नहीं कि यहांपर सब कार्य आधुनिक फैशन और आवश्यकता समझकर ही किए जाते हैं। परन्तु, यह मार्ग उचित है अथवा अनुचित, इसका निर्णय करना हमारे लिए कठिन है । ऐसी ही संस्थाओं द्वारा विदेशी लोग जासूसी का कार्य भी कर रहे हैं और पुलिस अथवा अन्य विभागों की कड़ी दृष्टि होते हुए भी, वे लोग अपना कार्य करते चले जा रहे हैं। मैंने एक समाचारपत्र में इस विषय पर एक निबन्ध पढ़ा था जिससे पता लगता है कि जापान सरकार को अब कुछ चिंता होने लगी है और कदाचित ऐसे उपाय सोचे जा रहे हैं जिनसे विदेशियों के लिए कुछ रुकावट हो जाय । जिस देश में लड़कियों की यह दशा हो और उनके सम्बन्धी इस प्रकार के कार्य करने के लिए उन्हें आज्ञा दें, उनको उन्नत अथवा सभ्य कहने की भारतीय सभ्यता आज्ञा नहीं देती, अन्य देश इस विषय में चाहे कुछ भी क्यों न कहें ।

जापानी लड़कियों ने विदेशियों और नवयुवकों को फँसाने का एक और ढङ्ग निकाल रखा है। वहाँ पर डानसिङ्ग हॉल या नाचघर होते हैं, जिनमें लड़कियां नाचती हैं । पुरुष २-२, ४-४ पैसे के टिकट खरीद कर वहाँ जाते हैं और जिस लड़की को चाहें उसके हाथ में टिकट दे कर भरी सभा में उसको बगल में दे कर नाचते हैं । २-३ मिनट के बाद यदि चाहे तो फिर उसी के साथ अथवा दूसरी लड़की के साथ टिकट लेकर नाचना शुरू कर देते हैं । नाच में अनेक जोड़े एक बाजे की तान पर नाचते हैं जिसके सिखाने का प्रबन्ध भी किया जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि जापानी नाचकला प्रसिद्ध है तथा ऐसे नाचघर भी अनेक हैं जहाँ उच्चश्रेणी का नाच दिखाया जाता है।

यह हैं यहाँ के नाच घर और बार-रूम आदि के नमूने जिनकी प्रशँसा प्रत्येक जापानी की जिह्वा पर चढ़ी रहती है तथा जिनके विषय में जापान सम्बन्धी प्रत्येक पुस्तक में सुन्दर वर्णन रहता है। वहाँ पर ऐसी क्रीड़ाओं को केवल आमोद-प्रमोद के नाम से पुकारा जाता है। इतने पर ही बस नहीं हो जाती, रात्रि के समय सड़कों पर घूमने निकलिये, आपको अनेक दलाल मिलेंगे जो अनेकों प्रकार से जापानी लड़कियों की प्रशँसा करके आपको फसाने का प्रयत्न करेंगे, घरों में ले आवेंगे। वहाँ पर भी ऐसे ही दृश्य आपके सन्मुख आवेंगे। इस प्रकार के स्थानों में जाने और विहार करने में अधिक खर्च नहीं करना पड़ता है इसलिये युवकों के पथ-भ्रष्ट होने का अधिक भय रहता है, बिरला ही व्यक्ति यहां के इन जालों से बचकर निकल सकता है । मजा यह कि ऐसी आमोद-प्रमोद की सँस्थाएँ समझी जाने वाली इन जगहों में जाने में जापानी कोई दोष नहीं समझते हैं।

वेश्या और गेशा—जापान में वेश्या भोग-विलास के लिये तथा गेशा नाच-रङ्ग के लिये होती है। सरकारी रजिस्टरों में इनका नियम पूर्वक विवरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखा जाता है और इनके अलग मुहल्ले बसे होते हैं जिनके दृश्य अद्भुत ही प्रतीत होते हैं। वहाँ के विशाल भवन, रङ्ग-बिरङ्गे चित्र और अनेक प्रकार की भड़कीली सामग्री मनुष्य की दृष्टि को चुन्धिया देती है। किसी-किसी स्थान पर अनेकों युवतियों के फोटो लगे होते हैं, उनमें से जिस किसी को आप पसन्द करें और मँगाने की आज्ञा दें वह आपके पास पहुँचा दी जावेगी। कहीं-कहीं वैसे ही दस-बीस युवतियां आकर बैठ जाती हैं, जितनी देर तक आपकी इच्छा हो वहां समय व्यतीत करें। खायें, पीयें मौज उड़ायें। सब बातों का निर्ख नियत है, आप अपनी इच्छानुसार जितना धन चाहें लुटावें। परन्तु विवश करके लूटने की प्रथा नहीं है। इस प्रकार की सँस्थाएँ दो-चार बड़े-बड़े शहरों में ही नहीं बल्कि अनेक ग्रामों में भी होती हैं। सुना गया है कि समय समय पर इनकी डाक्टरी परीक्षा भी होती है जिससे सांघातिक रोग का पता लग सके। इतना होने पर भी इस प्रकार की सँस्थाओं में अनेक रोगिणियाँ होती हैं जिनके कारण मनुष्यों को सचेत रहना चाहिए। इन विषयों पर अधिक प्रकाश डालने की इसलिए आवश्यकता प्रतीत हुई है कि जापान में जाने का विचार रखने वाले युवक भली प्रकार सावधान हो जावें और अपने भविष्य जीवन को नष्ट होने से बचा सकें। थोड़े से समय में ही मुझे पता लगा कि एक भारतवासी ने अपना सम्बन्ध किसी लड़की से स्थायी रूप से किया। गर्भ की सम्भावना हो गई तो अदालत और दण्ड के भय से अच्छी रकम देकर पीछा छुड़ाया। एक और भारतीय युवक पर, जो लगभग ८ वर्ष से यहाँ रहता था, अन्य दोषों के अतिरिक्त यह दोष भी लगाया गया कि अनेक बार ताड़ना करने पर भी उसने लड़कियों से सम्बन्ध विच्छेद नहीं किया और उसे देश-निकाले का दण्ड दिया गया। इन बातों को दृष्टि में रखते हुए यहां पर आने वाले भारतवासियों को अपने नाम, जातीय-यश व देश-गौरव का खयाल करके, इन जालों से बचना ही श्रेयस्कर है; क्योंकि विदेशों में उनके प्रति किए गए न्याय-अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने वाला कोई नहीं है।

जापान में इस प्रकार की सँस्थाओं के प्रचलित होने का विशेष कारण तो समझ में नहीं आया, कदाचित् इसका यह कारण हो कि जापानी जनता अभी तक सामूहिक रूप में धनाढ्य नहीं है, थोड़ेसे गिने-चुने पूञ्जीपतियों के अतिरिक्त वह कठिनता से अपना निर्वाह करती है। दूसरी ओर देश उन्नत होने के कारण सब प्रकार की भोग-विलास और आमोद-प्रमोद की साधन-सामग्री विद्यमान है जिसका उपभोग करने की प्रत्येक व्यक्ति की स्वाभाविक प्रवृत्ति हो रही है। इन्हीं कारणों से, सम्भवतः ऐसी ऐसी सँस्थाओं का जाल रचा गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि रात्रि के समय ऐसे स्थानों में रहने वाली लड़कियां दिन में किसी कार्यालय अथवा अपने घर में काम करती हैं।

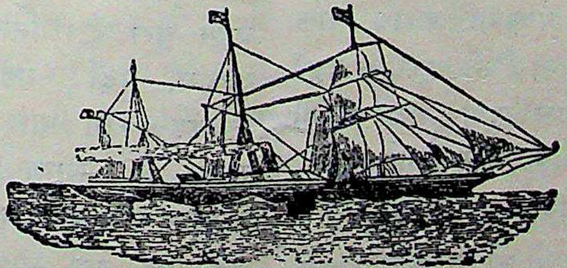

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ गंदी आदतें

ले०—डा० सुरेन्द्रप्रसाद, जयपुर

प्रतिदिन जान या अनजान में हम बहुत सी ऐसी क्रियाएं करते हैं कि जिनका हमारे स्वास्थ्य पर बड़ा अनिष्टकारी प्रभाव पड़ता है। पर आदत पड़ जाने के कारण उनका दुष्प्रभाव उस समय तो हमें अनुभव नहीं होता, किन्तु कुछ समय पश्चात् हम अपने को स्वास्थ्य की दृष्टि से खोखला पाते हैं। उन बुरी आदतों में से कुछ पर यहाँ प्रकाश डाला जाता है।

टट्टी के समय कांखना या जोर लगाना—हम में से अधिकाँश लोग टट्टी में जाते ही मल-विसर्जन के लिए बहुत जोर लगाते हैं। यह बहुत बुरा है। इससे पेट के भीतर की मांस-पेशियाँ अपना स्वाभाविक काम बन्द कर देती हैं और हमें सदा पेट के रोगों का शिकार बना रहना पड़ता है। जोर लगाने से आँतें नीचे सरक जाती हैं और बवासीर के मस्सों का भयङ्कर रोग घर कर लेता है। शौच के समय काँखने से बहुतों का तो वीर्य भी टपक पड़ता है। इसलिये हमें टट्टी में जाकर चाहे दस-पन्दरह मिनट प्रतीक्षा करनी पड़े किन्तु जोर से कांखें नहीं बल्कि मन में यह विचार करें कि टट्टी नीचे उतर रही है। इससे पाखाना अवश्य साफ होगा। यदि कब्ज बना रहता है तो प्राकृतिक ढङ्गों से उसे तोड़ना चाहिये। गणेश क्रिया से भी वह ही हानि होती है, जोकि कांखने या जोर लगाने से।

गुप्तेन्द्रियों को स्वच्छ न रखना—हम प्रायः अपने शरीर के सब भागों को तो अच्छी तरह धोते व साफ कर लेते हैं, परन्तु गुप्तेन्द्रियों की ओर ध्यान नहीं देते। स्नान के समय भी तमाम शरीर गीला कर लिया जाता है, पर जङ्घाओं से लेकर नाभी तक का भाग धोती आदि की आड़ में आकर सूखा का सूखा रह जाता है। जिससे हमारी वे समस्त इन्द्रियाँ दुर्बल हो जाती हैं जिनका स्वच्छ व पुष्ट रखना अत्यावश्यक है। हमें गुप्तेन्द्रियों को ठण्डे जल से खूब मलकर धोना चाहिये। स्त्रियों के लिये भी ऐसा करना जरूरी है। जिस प्रकार कान में मैल जमा हो जाता है उसी भाँति जनेन्द्रियों के अग्रभाग में भी कुछ सफेद-सी काई एकत्रित हो जाती है, इसे भी साफ करना आवश्यक है। सबसे अच्छा यह है कि शौच जाते समय खूब पानी ले जाया जावे और गुदा धोवन के साथ-साथ गुप्तेंद्रियों को भी धो डाला जावे। ऐसा न करने से नपुंसकता जल्दी आती है।

बालों को प्रतिदिन न धोना—आज कल लम्बे-लम्बे बालों का शौक बहुत बढ़ रहा है। स्वास्थ्य की दृष्टि से बालों को न कटवाना लाभप्रद है। पर साथ ही यह भी आवश्यक है कि उन्हें प्रतिदिन स्वच्छ जल से धो डाला जावे। बहुत स्त्रियां कई सप्ताह लगातार सिर से नहीं नहातीं। यह बहुत बुरा है। नित्य बालों को धोने से कभी जुकाम, सर्दी नहीं होती अपितु मस्तिष्क के कई रोग पास नहीं फटकते, बाल काले, सुन्दर व स्निग्ध बने रहते हैं। गुप्तेन्द्रिय के आस पास वाले बालों को भी धो डालना चाहिए। कई मूर्ख उन्हें साफ कर डालते हैं। पर हमारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभव है कि उन्हें उस्तरे या कैंची से काट देने के कारण नामर्दी जल्दी आती है।

मुँह ढक कर सोना—हम सर्दी या अन्य कारण से या आदतवश मुँह ढक कर सोते हैं। इस से लिहाफ के भीतर की बन्द व गन्दी वायु को ही बार-बार साँस द्वारा भीतर लेना व निकालना पड़ता है। तात्पर्य यह है कि निद्रा-काल में हमें शुद्ध वायु नहीं मिल पाती, अतः इस प्रकार ली गई निद्रा हमें तरो-ताजा नहीं कर सकती, और उठते समय हमें आलस्य तथा उबासियां सताया करती हैं। इस प्रकार सोते समय ऐसी विषैली वायु से बचना हमारे लिये परमावश्यक है। सर्दी में भी सोते समय कान तथा सिर को ढक कर नाक तथा मुँह को बिना ढके रखना चाहिए। बरसात में कोई जाली-सी मुँह पर डाली जा सकती है जिससे मच्छर दिक न करें।

बिना चबाये जल्दी-जल्दी खाना—बहुत से लोग १०–१५ मिनट में ही भोजन समाप्त कर लेते हैं। उनका कहना है कि औरत का नहाना मर्द का खाना मिनटों में समाप्त होना चाहिए। पर स्वास्थ्य की दृष्टि से ये दोनों बातें मूर्खों की कहावतें हैं यदि स्त्री अच्छी तरह नहाये तो उसे कम से कम ३०–४० मिनट लगने ही चाहियें। १०–५ मिनट में नहा डालना ठीक नहीं। इसी प्रकार भोजन खूब चबा-चबा कर तथा धीरे-धीरे खाना चाहिए। चबाने से मुँह की राल ग्रास के साथ अच्छी तरह मिलती है, जो पाचन के लिए अत्यावश्यक है। जल्दी खाये गये भोजन का पाचन ठीक तरह नहीं हो सकता। दूध जैसे पेय पदार्थों को भी जुगाली कर-कर के ही पीना उचित है।

टहलने का ढँग

टहलने का खास ढङ्ग क्या है? समस्त शरीर को सीधा रखिए, रीढ़ की हड्डी सीधी तनी रहे। सिर की रीढ की हड्डी के सीध में रखिए और आंखों से ठीक अपने सामने की तरफ देखिए। पेट सिकोड़े रहिए, पैर मजबूती से रखिए। डग भरने के समय अपने पैरों के साथ २ अपने हाथों को भी क्रम से आगे और पीछे की तरफ ले जाइए। मतलब यह कि जितना आगे आपके कदम बढ़ते हैं उतना ही आप अपने हाथों को भी ले जाइए और फिर यथाशक्ति उतना ही पीछे घुमाइए। डग तेजी से भरिए और अपना कदम इस बात को ध्यान में रखते हुए बढ़ाइए कि आपका शरीर आगे की तरफ झुकने न पावे। टहलने के समय मस्तिष्क को मन पर बुरा असर डालने वाली चिंताओं आदि से मुक्त रखिए। यही टहलने की विधि है जिसके द्वारा आपको असाधारण लाभ हो सकता है। आरम्भ में इतना अधिक नहीं टहलना चाहिए जिससे कि शरीर को शक्ति के बाहर श्रम उठाना पड़े। टहलना आरम्भ करने के दिन जब तक थकावट न मालूम हो तब तक टहलना चाहिए। फिर क्रमश टहलने के समय को प्रतिदिन २ मिनट से लेकर ५ मिनट तक बढ़ाना चाहिए। इसप्रकार टहलने की दूरी को भी शक्ति और सुविधा के अनुसार धीरे २ बढ़ाना चाहिए। पहले दिन आप जितनी दूरी तक टहलें उसे सावधानी के साथ ध्यान में रखें; फिर क्रमशः इसे बढ़ावें। इस तरह आप अपनी शक्ति के अनुसार ४–५ मील टहल सकते हैं। यदि आप उपरोक्त बातों को ध्यान में रख, दो महीने तक टहलें तो इसका लाभ अवश्य देखेंगे। टहलने से केवल रोग ही दूर नहीं होते बल्कि पूर्ण स्वास्थ्य भी प्राप्त होता है।

—जानकीशरण वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम से सुधार !

ले०—श्री स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती, भगवद्भक्ति आश्रम, रामपुरा, रेवाड़ी

प्रेम से मनुष्य का सबसे अधिक सुधार हो सकता है इसका अनुभव मुझे सबसे पहिले उस समय हुआ जबकि मैं जेल का अफसर नियत हुआ। जेलखाने में दाखिल होकर वहाँ के प्राणियों की जो अवस्था मैंने देखी तो मेरी आत्मा से आवाज आई कि इन लोगों के साथ सख्ती करने की बजाय नरमी और प्रेम का व्यवहार होना चाहिए। मैंने यह महसूस किया कि सँसार में सबसे अधिक प्रेम का व्यवहार प्राप्त करने के हकदार यही प्राणी हैं। मेरे दिल में तो सरकारी नियम और कायदों के लिए कोई स्थान था ही नहीं। हां, केवल दिमाग में उन नियमों के लिए इतनी जगह थी कि जिससे अफसर नाराज होकर पदच्युत न कर दें, और वह भी इस खयाल से कि मैं उस स्थान में रहकर वहां का कुछ अनुभव प्राप्त करना चाहता था। मेरे साधारण प्रेम के व्यवहार से ही वह चोर और डाकू मुझे मेरे आत्मीय जन से प्रतीत होने लगे। मेरा ख्याल तो यह है कि कोई भी कैदी मुझ से झूठ नहीं बोलता था। कारण उसका यह था कि उसकी सब बुरी आदतें मेरे खयाल में केवल भूल ही थीं फिर मैं कभी किसी को सजा न देकर प्रेम से समझाने की ही बात करता था।

चोर लड़का—

हमारे आश्रम में सङ्गरूर रियासत जीन्द से एक लड़का आया। उस का नाम था कृष्णकुमार। वह पूज्य श्री महाराजजी के एक सत्सँगी का लड़का था। उसको चोरी करने की आदत पड़ गई थी। धीरे-धीरे उसका स्वभाव इतना तीव्र हो गया कि वह ताले तोड़ने लगा। यहां तक कि उसने एक वजीर का ताला तोड़ लिया। उसका पिता राज्य में नौकर था। उसे लड़के के आचरण की बड़ी चिन्ता हुई। उसने लड़के को श्री महाराजजी के पास भेज दिया और सब किस्सा सुनाकर प्रार्थना की कि श्री महाराज जी यह आपकी शरण है।" आश्रम में ब्रह्मचारियों का काम मेरे सुपुर्द था। श्री महाराजजी ने मुझे बुलाकर आज्ञा दी कि यह लड़का आया है। मैंने अर्ज की कि महाराजजी! इसको किस प्रकार रखा जावे?" उन्होंने फरमाया "अपनी कुटिया में रखना चाहिए और प्रेम का व्यवहार करना चाहिए।" मैं उसे अपनी कुटिया में लाया और उससे कहा कि—"कृष्णकुमार! यह कुटिया और इसका सामान सब तुम्हारा है।" इतना कह कर मैं निश्चिन्त हो गया। कृष्णकुमार ने उसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन से कुटिया को अपना समझ लिया और वह मेरी सब वस्तुओं की निगरानी करने लगा मैंने उसको कभी यह उपदेश नहीं किया कि चोरी नहीं करनी चाहिए। मेरा काम तो उसे पुत्रवत प्रेम करना था।

फिर चोरी—

अभी उसको चोरी करने की आदत वैसी ही बनी हुई थी। उसने आश्रम के कोषाध्यक्ष का ताला खोलकर रुपये निकाले। उसके बाद प्रेस के मैनेजर का ताला खोलकर रुपये निकाले। यह दोनों सज्जन बहुत सावधान गिने जाते थे। इन चोरियों के करने पर भी मैंने उसे कुछ नहीं कहा। इसके बाद उसने अपने सहपाठी ब्रह्मचारियों की पुस्तकें चुरा-चुरा कर मेरी कुटिया की अलमारी में भरदीं। कुछ दिन बाद ब्रह्मचारियों ने अपनी पुस्तकों की खोज आरम्भ की और वह इकट्ठे होकर मेरे पास आकर कहने लगे कि हमारी पुस्तकें चुराई गई हैं और वह पुस्तकें कृष्णकुमार ने चुराई हैं। इसलिए हम आपकी कुटिया की तलाशी लेना चाहते हैं। मुझे इस बात का कुछ भी ज्ञान न था कि मेरी कुटिया चोरी के माल से भरी है। लड़कों ने तलाशी ली तो बहुत सी पुस्तकें और सामान निकला। वह सामान तो जिनका था उनको दे दिया गया परन्तु मैंने कृष्ण से कुछ भी नहीं कहा बल्कि वैसे ही प्यार करता रहा। इस दफा कृष्ण की आत्मा प्रेम से विजित हो गई और उसने बिलकुल चोरी करना छोड़ दिया। आगे चलकर उसी कृष्णकुमार ने दूकान खोलकर अपने परिवार का निर्वाह किया।

प्रेम की फिलासफी

१—दुनिया प्यार के लिए बनी है। (वेद)
२—प्रेम गुनाहगारों को सुधार देता है। (कबीर)
३—प्रेम आंखों से नहीं दिल से देखता है। इसीलिए तो प्रेम का देवता (*Cupid*) अन्धा बनाया गया है। (शेक्सपीयर)
४—प्रेम का देवता खिलौनों से खेलता है, क्योंकि वह बच्चा है। (फोर्ड)
५ प्रेम आत्माओं के विवाह का नाम है। (वाल्टेयर)
६—मेहरबानी आदमी के लिए दरवाजा खोलती है, पर प्यार उसे अन्दर ले जाता है। (ड्राइडन)
७—विद्या की ठण्डी रोशनी में प्यार का पौधा कभी भी बढ़ नहीं सकता।
८—प्यार की जीभ आंखों में है। (फ्लैचर)
९ प्रेम कभी तबाह नहीं होता। इसकी पवित्र चिनगारियां हमेशा चमकती रहती हैं। (सौदे)
१०—परमात्मा पूजा का नहीं बल्कि प्यार का भूखा है। (दयानन्द)

[प्रीत-सैनिक]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

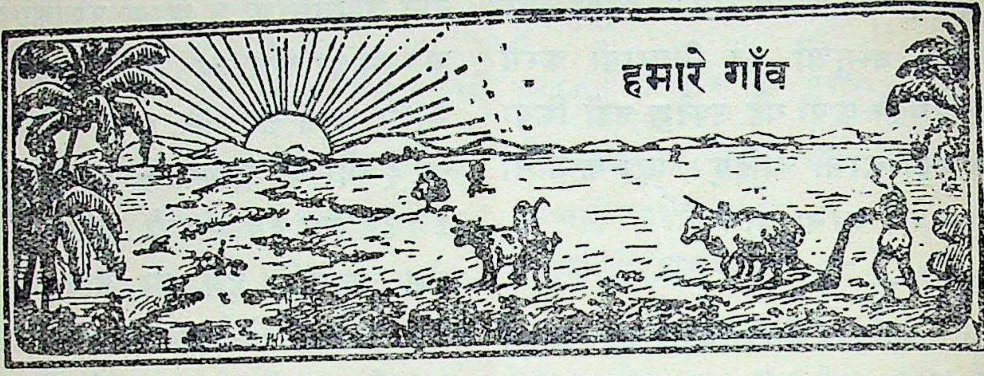

मुगलों से पहले का भारत

ले०—स्व० रामदास गौड़

तारीख़ फीरोजशाही में बरनी ने अलाउद्दीन खिलजी के राज में उन भावों का विवरण दिया है, जिन पर की उस समय के अनाज, तेल, घी, नमक आदि बादशाही हुक्म से बिकते थे। उसने जो भाव दिये हैं उनको आज कल के संयुक्त-प्रान्त के माने हुये तौल में नीचे दिया जाता है।

गेहूँ	एक पैसे में	दो सेर
जौ	,,	साढ़े तीन सेर
धान	,,	तीन सेर
खड़ी माश	,,	तीन सेर
चने की दाल	,,	तीन सेर
मोठ	,,	एक पँसेरी
खांड	,,	साढ़े चार छटांक
गुड़	,,	अठारह छटाँक
मक्खन	,,	साढ़े चौदह छटांक
तिल्ली का तेल	,,	साढ़े सतरह छटाक
नमक	,,	नौ सेर

यह भाव बादशाह के हुक्म से दिल्ली के लिए मुकर्रिर हो गए थे। कोई एक धेला भी बढ़ा नहीं सकता था। यह इतना सस्ता है कि जल्दी विश्वास नहीं होता; पर उस समय खाने-पीने की सब चीजें इतनी सस्ती थीं कि इस भाव से लोग सन्तुष्ट थे। यह भाव उस समय सस्ते नहीं समझे जाते थे। यह इतने ऊँचे भाव थे कि सूखे के समय में भी दिल्ली में गल्ला भरा रहता था। भाव मँहगा करने के लिए गल्ले की बिक्री रोक लेना या नाज को जमाकर रखना घोर अपराध था जिसके लिए बड़ा दण्ड मिलता था। किसानों को अपना लगान देने के लिए अनाज का एक भाग दे देना पड़ता था। अपने खर्च से ज्यादा बचा हुआ अनाज जहां पैदा होता था वहीं किसानों को बेच देना पड़ता था। कपड़े, खाँड, शक्कर, चीनी, घी और तेल सबके भाव बाजारों में ठहरा दिए जाते थे। सब व्यापारियों को चाहे वह हिन्दू हों या मुसलमान, ठहराये हुए भाव पर लेना-देना पड़ता था। व्यापारी लोग उसी बाजार में अत्यन्त सस्ता खरीदकर उसके आसपास अत्यन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महँगा बेच नहीं सकते थे। इस तरह बादशाहत के अन्दर सब बाज़ार कायदे कानून के अन्दर जकड़े हुए थे। शहन-ए मण्डी जिस किसी को कायदे के खिलाफ चलते हुए देखता था कोड़े लगवाता था। दुधार गाय तीन-चार रुपए में और बकरी दस-बारह या चौदह पैसों में मिल जाती थी। यदि कोई दूकानदार दुकान पर वजन में कम तौलता था तो उसे सख्त सजा दी जाती थी। इसका फल यह होता था कि बनिये कुछ ज्यादा ही तौलते थे। बरनी ने इसके चार कारण बताए हैं। (१) बाजारों के कायदों की सख्त पाबन्दी (२) करों का कड़ाई से उगाहा जाना। (३) लोगों में सिक्कों का बहुत कम प्रचार। (४) कर्मचारियों की निष्पक्षता और ईमानदारी।

फीरोजशाह के समय में कर और भी घटा दिया गया। जिन खेतों की सरकारी नहरों से सिंचाई होती थी उनसे पैदावार का दहियक अर्थात पैदावार का दसवाँ भाग लिया जाता था। खाने-पहनने की चीजें इतनी सस्ती थीं कि अकाल के दिनों में भी लोग सहज में विपत्ति काट देते थे। महसूलों और लगानों की कमी से खेती और व्यापार को बहुत लाभ हुआ। शम्स सिराज अफीफ ने नीचे लिखे भाव दिये हैं—

गेहूँ	एक पैसे	पौने दो सेर
जौ	,,	साढ़े तीन ,,
और अनाज	,,	,, ,, ,,
दाल	,,	,, ,, ,,
घी	,,	पौने तीन छटाँक
चीनी	,,	ढाई ,,

कहते हैं कि उस समय बिना खेती के धरती का एक टुकड़ा नहीं बचा हुआ था।

मध्यभारत में बहमनी राज्यों के समय में दशा कुछ बुरी न थी। इतिहास से पता चलता है कि जैसा प्राचीन काल से बराबर चला आता था उस समय गांव-गाँव अपना स्वतन्त्र शासन रखते थे; हरेक गाँव में पञ्चायत रहा करती थी जिसका सरपञ्च उत्तर भारत में मुखिया या चौधरी कहलाता था और दक्षिण भारत में अयगर कहलाता था। मुखिया या अयगरों को या तो पञ्चायत की ओर से खेत मिल जाता था या फसल पर किसान लोग उपज का कुछ अँश दे देते थे। यह अयगर या मुखिया पञ्चायत की ओर से छोटे-छोटे मुकद्दमे फैसला करते थे, माल-गुजारी उघाते थे, अमन और शाँति रखते थे। इन्हीं लोगों के द्वारा राजा और किसान के बीच सम्बन्ध बना रहता था। जान पड़ता है कि यही मुखिया या अयगर काल पाकर जमींदार बन गए। उस समय लगान जरूर बढ़ गया था परन्तु जितना बढ़ा था उस हिसाब से वसूल किया जाना सिद्ध नहीं होता। लगान के सिवाय पचासों तरह के और महसूल मुसलमान बादशाहों ने लगा दिए थे जिनका व्यवहार शहरों से अधिक था। चाहे इन सब उपायों से राज्य की आय बहुत बढ़ जाती रही हो परन्तु पूरा महसूल वसूल होकर शाही खजाने तक पहुँचाने में सन्देह है। यह बात सचाई से कही जा सकती है कि आमदनी के इन उपायों में मुसलमान बादशाह भी किसान की भलाई का बराबर खयाल रखा करता था, तोभी किसान से अब बेगार ली जाने लगी। चराई और विवाह का महसूल भी लिया जाने लगा। आजकल के मोटरावन, हथियावन, नचावन आदि भाँति-भाँति के 'आवनों' का अभी किसी ने सपना भी नहीं देखा था। लोगों को चुङ्गी के रूप में नाज, फल, तरकारी तेलहन और जानवरों पर भी महसूल देना पड़ता था। शहर में आने का रास्ता एक ही था और फाटक पर पहरा रहता था। इसलिए शहर वाले महसूल से बच नहीं सकते थे।

शुरू-शुरू में जब मुसलमानों ने भारत पर चढ़ाई की तो यहाँ से बहुत सा धन लूट ले गए। पहले के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसलमान बादशाहों में विजय की लालसा इतनी रहती थी कि वे बन्दोबस्त की ओर ध्यान नहीं देते थे। देश के भीतर अमन-चैन लाने का काम बलबन ने किया। उसने ठगों और लुटेरों से देश की रक्षा की और उनका दमन किया। मुसलमानों के राज्य में कहीं २ किसानों की दशा बिगड़ गई थी परन्तु अब किसान शान्ति से खेती करते थे और व्यापारी अपना माल एक देश से दूसरे देश में बिना लुटे लेजाने लगे। फिरोज़शाह के समय में जब घोर अकाल पड़ा तो दिल्ली में अनाज तीन पैसे सेर तक चढ़ गया। अलाउद्दीन के समय में शाही भण्डारों और खत्तों में अनाज रखा जाता था और अकाल के समय में सस्ता बिकता था। परन्तु उसके बाद उसके बनाए कानून टूट गए और चीजें मनमाने भाव पर बिकने लगीं। मुहम्मद तुगलक के समय में नकली सिक्कों ने बहुत नुकसान पहुँचाया। कोई १० बरस तक घोर अकाल रहा। दो बरस में सत्तर लाख रुपए तकावी के लिए किसानों को बांटे गए बादशाह ने शाही खत्तों से नाज निकलवा कर बटवाया और फकीरों और काज़ियों को हुक्म हुआ कि मुहताजों की फहरिस्त बनावें। मुहर्रिरों के साथ काजी और अमीर गांव-गाँव घूमकर अकाल पीड़ितों को आदमी पीछे तीन पाव अनाज बाँटते थे। बड़ी-बड़ी खानकाहें मदद बांट रही थीं और कुतुबुद्दीन की खानकाह जिसमें चार सौ साठ आदमी नौकर थे हजारों आदमियों को भोजन नित्य खिलाया जाता था। हाथ की कारीगरी को बहुत बढ़ावा मिला। चार सौ रेशम बुनने वाले सरकारी कारखाने में काम करते थे और सब तरह की चीजें तैयार की जाती थीं। वासफ के लिखने से मालूम होता है कि बिक्रम की चौदवीं शताब्दी में गुजरात एक बड़ा अमीर प्रान्त था जिसकी आबादी घनी थी। इसमें सात हजार गांव और कस्बे थे और लोग धन सम्पत्ति में रँजे-पुंजे थे। खेती से पैदावार बहुत अच्छी होती थी। अङ्गूरों की दो फसल हुआ करती थी। धरती इतनी उपजाऊ थी कि कपास की शाखायें झाड़ की तरह फैल जाया करती थीं और एक बार के लगाने में वही पौधे कई साल तक बराबर कपास की ढोंड़ियां दिया करते थे। मारकोपोलो ने तो लिखा है कि कपास की खेती सारे भारत में फैली हुई थी और कपास के पेड़ छः छः हाथ ऊँचे होते थे. और बीस-बीस बरस तक कपास होती थी। मिर्चें, अदरक और नील बहुतायत से होती थीं। लाल और नीले चमड़े की चटाइयां बनती थीं जिसमें कि चांदी और सोने के काम के पक्षी और पशुओं के चित्र कढ़े हुए होते थे। मारकोपोलो ने यहाँ के निवासियों को सुखी और समृद्ध पाया। व्यापार में कुशल और कारीगरी में दक्ष देखा।

चरखे की बरकत

"दो वर्ष पहले ३०० गज कपड़ा सालाना खरीद कर भी हम लोग आधे नँगे रहते थे, और सौ रुपये से ज्यादा खर्च हो जाता था। बच्चों को अच्छी तरह ढक नहीं पाते थे। अब साल भर में पचीस रुपये भी जेब से खर्च नहीं हुए होंगे और हरेक बच्चे-बूढ़े के पास तीन-तीन जोड़ी कपड़े हैं। जन्म भर में कभी ऐसी बरकत नहीं देखी थी। सिर्फ दो चर्खें की यह बरकत है। हम दोनों कातते हैं, लड़का और बहू कभी-कभी ही चर्खें को हाथ लगाते हैं। वे अपनी खेती-पाती से फ़ुरसत भी नहीं पाते। अब तो मैंने कसम खाली है कि एक कौड़ी का भी कपड़ा कभी नहीं खरीदूँगा — चाहे नङ्गा क्यों न रह जाना पड़े।" जिनके बाल पक गए हैं और जिनकी कमर कमान की तरह लच गई है, ऐसे इन वृद्ध ठाकुर साहब का यह जोश हम सब में भर जाये, तो कैसा अच्छा हो!

—प्रभुदास गाँधी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीयता के पुजारी--मौलाना आज़ाद

ले०—प्रभुदयाल विद्यार्थी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

"आजादी की पहली शर्त कुर्बानी है"—ये शब्द हमारे मौजूदा राष्ट्रपति ने एक दिन मेरी नोटबुक में उर्दू अक्षरों में लिखे थे जिन्हें पढ़ कर हर कोई समझ सकता है कि आप आजादी हासिल करने के लिए कुर्बानी को कितना जरूरी समझते हैं। इस शर्त के कुर्बानी के, भाव आपकी रग-रग में भरे हैं। आजादी की इस शर्त का आपने अपने जीवन में अक्षरशः पालन किया है। आपका हृदय त्याग, बलिदान और राष्ट्रीयता के भावों से भरपूर है। इन्हीं गुणों के—कारण आज कांग्रेसियों के ही नहीं, बल्कि सारे भारतवासियों के हृदय में आपका बहुत आदर है।

मुंह पर अजीब रौनक, छोटी-छोटी दाढ़ी, सिर पर लम्बी काली टोपी, लम्बी शेरवानी सेढ़ का शरीर और मुस्कराता हुआ चेहरा हरेक को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। आपके जीवन का एक मात्र मिशन रहा है—हिन्दु-मुसलिम एकता। सभी हिन्दुस्तानियों को कन्धे से कन्धा मिला कर आजादी के मार्ग की ओर ले चलना। आपने अपना सारा जीवन ही इस मिशन को पूरा करने में लगा दिया है। आपने सोलह-सतरह वर्ष की अवस्था से ही अपने जीवन का ध्येय और मूलमन्त्र देश सेवा बना लिया था, और ज्यों-ज्यों उमर बढ़ती गई इस ध्येय के लिये उत्साह और लगन बढ़ती गई, और आज ऐसा समय आ गया कि आप देश के लिये अपना एक-एक क्षण दे रहे हैं, प्राण निछावर करने को तैयार हैं।

आप भारतीयता के पुजारी, सच्चे मुसलमान तथा इसलामी साहित्य के प्रकाण्ड पण्डित हैं, किंतु मजहबी कट्टरता आपको छू तक नहीं गई है। साम्प्रदायिकता से कोसों दूर रह कर हमेशा राष्ट्रीय नेताओं के साथ एक दिल हो कर काम करते हैं। एक लम्बे अर्से से हिन्दू कांग्रेसी नेताओं के साथ काम करके उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया है कि मुसलमानों से कहीं अधिक कांग्रेसी इस्लामी संस्कृति की रक्षा करने की कोशिश करते हैं। आपकी यह पक्की धारणा है कि कांग्रेस में शामिल हुए बिना न तो हिन्दु-मुसलिम वैमनस्य दूर हो सकता है और न उनकी भूख व गरीबी का सवाल हल हो सकता है।

आपका कहना है कि—"मुसलमान भाई यदि अपने अधिकारों के सँरक्षण के लिये ब्रिटिश सरकार का मुँह जोहेंगे तो ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड़ और मजबूत होगी। मैं अपने ९ करोड़ मुसलमान भाइयों से अनुरोध करता हूँ कि उन्हें अपने ही देश भाइयों को सन्देह की नजर से नहीं देखना चाहिए। कांग्रेस के हाथ में उनका अधिकार सुरक्षित है। जिनकी नियत साफ है उन सबके लिए कांग्रेस का दरवाजा सब दिन खुला है"। देखिये, उनके हृदय में कितनी उच्च भावना और दृढ़ विश्वास है, कांग्रेस के लिये।

आप इस्लामिक फिलासफी और धर्म-शास्त्र के बहुत बड़े विद्वान् आलिम-फाजिल और मौलाना हैं। आपने इन विषयों पर कई प्रमाणिक ग्रन्थ भी लिखे हैं जिनकी प्रशंसा व प्रचार अन्य मुसलिम देशों में भी खूब हुआ है। आपकी विद्वता का लोहा मिश्र, टर्की आदि के विद्वान् भी मानते हैं। आपने बचपन में ही मुसलिम देशों में खूब घूम कर अच्छी विद्वता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा अनुभव प्राप्त कर लिया था।

आपने कुरानशरीफ का सरल भाषा में अनुवाद किया है जिसे कुरानशरीफ के विद्वानों ने बहुत पसन्द किया तथा विद्वतापूर्ण बतलाया है। आपने इस अनुवाद में यह साबित कर दिया है कि कुरानशरीफ में कहीं भी किसी धर्म के प्रवर्तक को बुरा-भला कहने की बात नहीं लिखी है, बल्कि सबको बराबर

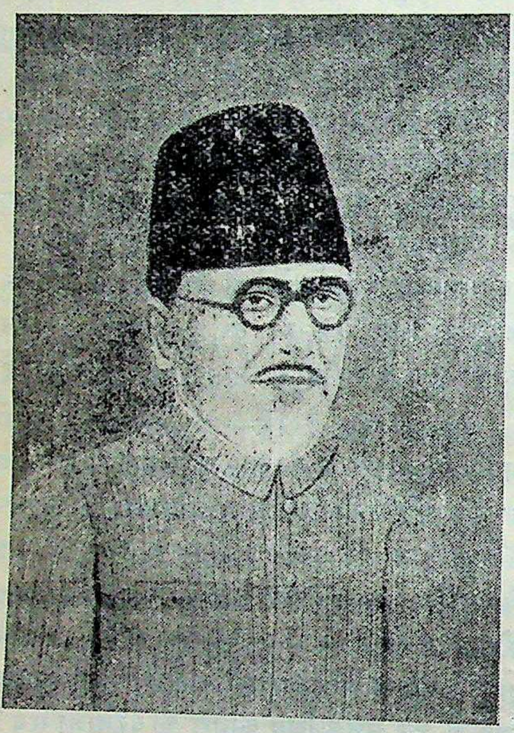

राष्ट्रपति मौलाना आजाद

माना है। उसका एक उदाहरण यहां देना अनुचित न होगा—कुरान ने न केवल उन सब धर्मों के संस्थापकों को सच्चा माना, जिनके मानने वाले उस समय उसके सामने मौजूद थे, बल्कि साफ शब्दों में कह दिया कि मुझ से पहले जितने भी रसूल और धर्म-प्रवर्तक हुए हैं, मैं उन सबको सच मानता हूँ और उन में से किसी एक के न मानने को भी ईश्वरीय सत्य को न मानने से इन्कार समझता हूँ। उसने किसी धर्म वाले से यह नहीं चाहा कि वह अपने धर्म को छोड़ दे, बल्कि जब कभी चाहा तो यही कि सब अपने-अपने धर्मों की असली शिक्षा पर चलें, क्योंकि सब धर्मों की असली शिक्षा एक ही है।"

इस प्रकार, साफ साफ बातों को सामने रखने और कहने के कारण साम्प्रदायिक मुसलमान हमेशा आप से पृथक रहे हैं, और आपकी खूब दिल भर कर निन्दा भी की है। यहां तक कि एक बार तो आपको जान से मार डालने तक की धमकी दे डाली थी और अपने गिरोह से आपको निकाल भी दिया था। आप हमेशा ईद के दिन मसजिद में सबसे पहले कुरान शरीफ पढ़ कर सुनाया करते थे; लेकिन दो-तीन साल से साम्प्रदायवादी मुसलमानों ने आपका बहिष्कार कर दिया। यह सब विरोध होने पर भी आपने अपना सत्य-मार्ग नहीं छोड़ा तथा अपनी राष्ट्रीयता पर हमेशा दृढ़ व निर्भीक होकर चलते रहे। आपका कहना है कि 'सारी बातों पर विचार करने के बाद मैं निस्सङ्कोच भाव से यह घोषणा करता हूं कि न तो देश को हिन्दू सङ्गठन की आवश्यकता है और न मुस्लिम सङ्गठन की ही। आज केवल एक ही सङ्गठन की आवश्यकता है और वह एक मात्र भारतीय राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) का सङ्गठन।"

आपका जन्म १८८८ में मक्का में हुआ था। आपके पिता का नाम मौलाना मुहम्मद खैरुलद्दीन था। वे उर्दू फारसी के बहुत बड़े विद्वान थे तथा उर्दू फारसी में बहुत सी किताबें भी लिखी थीं। प्रारम्भिक शिक्षा भी धार्मिक मिस्र की राजधानी कैरो में हुई। आपने १४-१५ साल की आयु में फारसी तथा अरबी भाषाओं में मुसलमानी धर्म तथा दर्शन-शास्त्र की इतनी शिक्षा प्राप्त करली थी जितनी कि कदीम मदरसों में साधारण विद्यार्थी २५-३० वर्षों में प्राप्त करता है।

आपका सार्वजनिक जीवन १५-१६ वर्ष की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयु से ही शुरू हो गया था। उसी उमर में आपने कलकत्ते से एक मासिक पत्र निकालना शुरू कर दिया था। लखनऊ के "आलहदे" और अमृतसर के 'वकील' पत्र में आप बराबर लेख लिखा करते थे। १९१२ में आपने कलकत्ते से अलहिलाल नामक पत्र भी निकाला। उसमें साम्यवादी राष्ट्रीयता के विरोधी मुसलमानों को आपने खूब आड़े हाथों लिया। आपने ब्रिटिश सरकार की भी अच्छी तरह से अपने पत्र में टीका-टिप्पणी की।

ब्रिटिश सरकार हमेशा आपसे खौफ खाती रही है इसीलिए आप पर १९१४ में दिल्ली, पञ्जाब, संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, और बम्बई में जाने की पाबन्दी लगा दी थी जो बहुत दिनों तक आप पर लगी रही। आपके साप्ताहिक पत्र से १० हजार की भारी जमानत माँगकर सरकार ने पत्र को बन्द करवा दिया था। सन १९१६ में बङ्गाल सरकार ने आपको बङ्गाल छोड़ देने का हुक्म दिया था। आप कलकत्ता छोड़कर रांची चले गए, लेकिन वहां भी सुख से न रहने पाये। चार महीने के बाद आपको वहीं चार साल के लिए नजर बन्द कर दिया गया। देश में बहुत शोर-गुल होने पर चार साल के बाद आप पर से नजर बन्दी का हुक्म उठा।

१९२१ में युवराज के स्वागत विरोधी आन्दोलन में भाग लेने के फल स्वरूप आपको फिर एक साल की सख्त सजा कलकत्ते में दी गई। १९३०, १९३१ और १९३२ में आप गैर-कानूनी कार्य समिति के सदस्य बने रहे और बराबर आन्दोलनों में भाग लेते रहे हैं। १९३२ में आप कांग्रेस के स्थानापन्न राष्ट्रपति भी चुने गए थे। आप समय-समय पर जेल की हवा खाते रहे हैं।

सन् १९२३ में दिल्ली के विशेष अधिवेशन के आप राष्ट्रपति चुने गए थे। अब १९४० में आप फिर बहुत बड़े बहुमत से राष्ट्रपति चुन लिए गए हैं। जिससे यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि आपका देश में कितना आदर और सम्मान है। आपके ऊपर सभी कौम के लोग विश्वास करते हैं।

आपने हिन्दू-मुसलमानों के बीच में सद्भावना का जो बीज बोया है वह अभी देखने में कम आ रहा है, परन्तु वह दिन दूर नहीं है जब सब एक भारत माता की जय का घोष करेंगे जो कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक गूंज उठेगा।

आपकी पाक जिन्दगी से हिन्दू-मुसलमान सभी को राष्ट्रीयता का सबक सीखना चाहिये।

विद्या कैसी हो ?

विद्या दूषित न हो, विद्या आसुरी न हो, विद्या में स्वार्थ और घमण्ड न आवे, इसके लिए प्रयत्न करना शिक्षकों, पुस्तकालय सञ्चालकों, शिक्षा-शास्त्रियों और नेताओं का मुख्य कर्त्तव्य है। हमारे देश में अधिक से अधिक जरूरत है तो चारित्र्य की है। हमारी चारित्र्य की कमियां हमारे नित्य व्यवहार में, हमारे जाति-बिरादरी के काम में, समस्त ग्रामीणों कार्यों में पग-पग पर प्रकट होती है। इसलिए हमें विद्या द्वारा प्रजा को इस प्रकार योग्य बनाना है जिससे प्रजा में सँयम हो, नियम पालन की भावना हो, स्वार्थ त्याग की तैयारी हो, व्यक्तिगत महत्व की दृष्टि को छोड़ कर सार्वजनिक हितार्थ सेनापति नहीं किन्तु सैनिक बनने की उदारता हो।

(पुस्तकालय)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीने के पानी वाले तालाब साफ कैसे रहें ?

बहुतेरे गांवों में एक ही तालाब होता है। उसमें पशु पानी पीते हैं, आदमी नहाते धोते हैं, बर्तन मांजते हैं, कपड़े धोते हैं, और वही पानी पीने के काम में लाते हैं। आरोग्यशास्त्र के पण्डितों ने अनेक प्रयोग करके सिद्ध कर दिया है कि ऐसे पानी में जहरीले कीड़े पैदा हो जाते हैं और यह पानी पीने से सहज ही हैजा वगैरा रोग फैल जाते हैं। थोड़ी सम्भाल से ऐसे तालाब साफ रह सकते हैं। गांव के तालाब के चारों ओर बांध बना देना चाहिए। जिसमें पशु उसमें न जा सके पर उनके लिए पानी पीने की सुविधा जरूर होनी चाहिए। इसके लिए तालाब के पास जैसा बहुतेरे कुवों के पास होता है वैसा हौज बना देना चाहिए। और इसमें गांव के सब आदमी एक-एक घड़ा पानी डाल दें तो जरूरत भर का रोज हो जाया करे।

पानी पीने वाले तालाब में बरतन या कपड़े कभी न धोने चाहिए। इसके दो उपाय हैं। एक तो यह है कि सब अपने घर पानी ले जाकर वहीं धोवें। दूसरा उपाय यह है कि तालाब के पास एक टङ्की रखी जाय। उसमें सब अपने हिस्से का पानी भरदें और उस पानी का उपयोग गांव वाले करें। गांव वालों में आपस में सहयोग और परोपकार की वृत्ति हो तभी यह सम्भव है। यों हाथों हाथ काम न हो तो थोड़े खर्च से टङ्की और हौज भराया जा सकता है। कपड़ा धोने की जगह पानी गिरने से कीचड़ हो जाता है। इस लिए वह हिस्सा पक्का बना लेना चाहिए। पीने के पानी भरने के बरतनों को बाहर साफ करके ही तालाब में डुबोना चाहिए। और ऐसी सुविधा होनी चाहिए कि जिससे पानी भरने वाले के पैर पानी में न पड़ें। यह एक स्थिति की बात हुई कितने ही गाँवों में एक से अधिक तालाब होते हैं या बनाए जा सकते हैं। वहां पानी पीने का तालाब अलग ही होना चाहिए।

—महात्मा गांधी

* * * * *

विद्या और विनया

सरस्वती के दो नाम हैं विद्या और विनया। विद्या से हमारी जानकारी बढ़ती है। हम इसके जरिए प्रकृति को, अपने हृदय को, और मनुष्य समाज को पहचान सकते हैं और उस जानकारी से लाभ उठा सकते हैं।

विनया वह है, जो हमारे मन, बुद्धि और इन्द्रियों को सुसँस्कारी बनाती है। वह हमारी शक्तियों को तेजस्वी, कुशल और सँयमशील बनाती है।

विद्या से हमारा ज्ञान बढ़ता है, विनया से चरित्र खिलता है। हमें सरस्वती माता की विद्या और विनया दोनों रूप से उपासना करनी चाहिए। जो विद्या विनय-सम्पन्न हैं, उन्हीं का पुरुषार्थ सफल होता है, वे ही कृतार्थ और कृतात्म हो सकते हैं।

—काका कालेलकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिशु-शिक्षा

लेे०—श्री० ला० कृष्णजसरायजी बी० ए०, एफ० टी० एस०

माता—पण्डित जी, बच्चे के लालन-पालन के सम्बन्ध में आपने जो बातें बताईं वे मैं भली-भांति समझ गई हूं। अब आप यह बतलावें कि एक वर्ष के बच्चे की शिक्षा की जो बात आपने छेड़ी थी उससे आपका क्या अभिप्राय है?

पण्डित जी—हां, यह भी बताता हूं। वास्तव में जन्म से लेकर बच्चे के लालन-पालन सम्बन्धी जो बातें मैंने बताईं वे भी शिक्षा की जड़ होने के कारण अत्यावश्यक थीं।

शिक्षा आरम्भ करने से पहिले इस बात का ध्यान रहे कि जो इस सँसार में जन्म लेता है वह पिछले जन्म के सँस्कार अपने साथ लाता है। उसमें पिछले अनुभवों के अनुसार बुद्धि, विचार, व भाव होते हैं। इन्हीं सब का सार रूप उसका स्वभाव बनता है। माता, पिता व गुरु का कार्य केवल इतना ही है कि वे ऐसा वातावरण पैदा कर दें जिसमें बालक की सोई हुई बुद्धि, मानसिक व हार्दिक शक्तियाँ जागकर उन्नति करने का प्रयत्न करें। बस अब आपकी समझ में आ गया होगा कि पैदा होते ही बच्चे की शिक्षा क्यों आरम्भ कर देनी चाहिए? बहुतों का मत है कि ७ वर्ष की अवस्था तक बच्चे को कुछ न कहो अर्थात् उसको कुछ शिक्षा ही न दो। उनका यह मत ठीक नहीं है, कारण कि हमारी शक्तियां पैदा होने से पहिले ही हमारे पास होती हैं। वे अवश्य जागेंगी और जैसी स्थिति होगी उसके अनुसार ही आगे बढ़ेंगी। यदि स्थिति भली व विकास के अनुकूल है तो उनका जल्दी व भला विकास होगा। अन्यतः उनका विकास रुक जावेगा या उनका भद्दा उभार होगा। उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रम से जगाना और ऐसी स्थिति पैदा कर देना जिसमें वे भली भांति जाग्रत हो सकें, यही सच्ची शिक्षा है। उसके लिए तो सात वर्ष तक रह ही नहीं सकते। यदि आप ऐसा न करेंगी तो वे शक्तियां भली भांति विकास में न आ सकेंगी और बहुत सी तो नष्ट ही हो जावेंगी। इतिहास भी यही बताता है कि जितने प्रसिद्ध विद्वान्, ज्ञानी, साधु, महात्मा तथा वीर योद्धा हुए हैं उन सबके महान् होने में उनकी माताओं के द्वारा दी गई शिक्षा का बहुत हाथ था। किसी बड़े आदमी की जीवनी ले लो; आपको पता लग जावेगा कि माता की गोद के प्रेम भरे उपदेशों ने ही उसको बड़ा बनाया। एक विद्वान का कथन है कि "बच्चा सात वर्ष की उम्र तक जो बन गया वही रहता है। जो सँस्कार उसके भीतर पड़ गए वही रहते हैं।" शिक्षा का अर्थ पुस्तकें पढ़ना ही नहीं है, बल्कि यह अर्थ तो एक दम गलत है। शिक्षा तो जीवन के सब कार्यों, विचारों व भावों पर लागू होती है। मनुष्य किस प्रकार मनुष्यों के साथ व्यवहार करता है, यह उसकी शिक्षा का अङ्ग है। किस प्रकार खाता, पीता, सोता, नहाता तथा बातचीत करता है, किस प्रकार रहता सहता है, यह सब उसकी शिक्षा का ही परिणाम है। उसके विचार व भाव शिक्षा के सहारे ही काम करने लगते हैं। राणाप्रताप और शिवाजी को किसने वीर बनाया? उनकी माताओं के उपदेशों ने। अतः शिक्षा का यह अर्थ नहीं है कि बालक पालने में ही पुस्तक पढ़ने लगे। पुस्तकें पढ़ना तो शिक्षा का एक अङ्ग है, कारण कि इन पुस्तकों का हमारे मन व हृदय पर प्रभाव पड़ता है, और हम अपने विचारों को एक दूसरे को दे सकते हैं। बस इससे अधिक लिखने पढ़ने का और क्या महत्व हो सकता है? इसलिए जो माता पिता बालक के सात वर्ष यों ही नष्ट कर देते हैं कि सात वर्ष का हो जाने पर पाठशाला में पुस्तकें पढ़ने भेज देंगे, उनको पीछे पछताना पड़ता है। क्योंकि बच्चे ने भली भांति सच्ची शिक्षा के बदले बुरी शिक्षा ग्रहण करली जिसके बुरे सँस्कार जन्म भर के लिए उसके हृदय पर जम गए जिनको पीछे पाठशाला का पठन निकाल भी नहीं सकता है।

माता—परन्तु पँडितजी! छोटी अवस्था में बच्चे को पढ़ाने से वह कमजोर भी हो जाता है?

पँ० जी—नहीं माता जी! यह विचार गलत है। बच्चों को कमजोर, पागल, और भीरु बनाने वाली शिक्षा नहीं है। बालक भय, चिन्ता व दण्ड के दुःख से पागल व कमजोर हो जाता है। इसी कारण हमने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार-बार यही कहा है कि बच्चे को प्रेम से गोद में बिठाकर ही कुछ सिखाना चाहिए। शिक्षा देने में जो दण्ड का काम है वही दुःख का कारण है। इसी दुःख से बच्चा अवश्य ही कमजोर व बीमार हो जाता है। यदि दण्ड के बदले प्रेम का हाथ हो तो शिक्षा में कोई कठिनाई नहीं आती।

माता—तो हां पँडित जी, अब मैं और भी भली भांति समझ गई कि बच्चे की शिक्षा का ध्यान पालने में ही रखना चाहिए। पढ़ने से बालक कमजोर नहीं होते और शिक्षा कोरी पुस्तकों की ही वस्तु नहीं है, बल्कि उसे ठीक रास्ते का ज्ञान कराना और उसकी सोती हुई शक्तियों को जगाने का नाम शिक्षा है। अब आप शिक्षा के साधन और बतला दें।

पँ० जी—लीजिये सुनिये। प्रत्येक बालक के पाञ्च ज्ञानेन्द्रियां और पाञ्च कर्मेन्द्रियाँ हैं। ग्यारहवां मन, बारहवां हृदय, तेरवीं बुद्धि, चौदहवीं आत्मा, और १५ वां शरीर है। यह सब मिलकर एक बालक वा मनुष्य बनता है। इन्हीं सबकी शक्तियों को बढ़ा कर काम में लाना और ठीक काम लेना सच्ची शिक्षा का लक्ष्य है। बचपन से लेकर बुढ़ापे तक या पैदा होने से मरने तक हम इन्हीं १५ अवयवों की शक्तियों को शनैः २ बढ़ाते रहते हैं। जो अधिक स्थूल हैं उनकी शक्तियाँ कुछ समय बीतने पर शिथिल व व्यथित होना प्रारम्भ हो जाती हैं जैसे इन्द्रियां व शरीर बुढ़ापे में शिथिल हो जाते हैं। इसीलिये मनुष्य के लिए शिक्षा ग्रहण करने के शुरू के २५ वर्ष रक्खे गये हैं। इसके पश्चात् इन शक्तियों से इस सँसार में काम लेने के भी २५ वर्ष ही रखे हैं, जिसको गृस्थाश्रम कहते हैं। फिर आगे २५ वर्ष में स्थूल भाग स्थिल होने लगता है और सूक्ष्म भाग की शक्ति को बढ़ाने के लिए व काबू में रखने के लिये भी २५ वर्ष ही हैं। अन्त में २५ वर्ष पूर्ण आयु के हैं। अब आपकी समझ में आया होगा कि इस विद्यार्थी जीवन में जो पैदा होने से २५ वर्ष में समाप्त होता है, बालक का कार्य पूर्ण शिक्षा पाना है—इन इन्द्रियों की शक्तियों अपने मन, बुद्धि व हृदय की शक्तियों का बढ़ाना, विकास में लाना और इनसे काम लेना है। अब केवल यह बताना रहा है कि इनकी शक्तियाँ क्या २ हैं और उनको किस प्रकार बढ़ाया जावे ?

आप जानती हैं कि एक बीज को बड़ा वृक्ष बनाने के लिए क्या २ साधन चाहिएँ ? पहले अच्छी जमीन, अच्छी खाद, फिर आवश्यकतानुसार पानी, फिर सूरज की रोशनी व गर्मी, वायु, रक्षा आदि इतनी बातें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने पर बीज की सोई हुई शक्तियां जागकर विकास में आ फल-फूल देती हैं। ठीक इसी प्रकार बालक की भी दशा है। आप बच्चे को ऐसे वातावरण व स्थिति में रखें जहां वह निर्भय व स्वतन्त्र रह सके। प्रेम के जल से उसे सींचते रहें। बात-चीत, काम-काज, किताब व्याख्यान और लिखने-पढ़ने में ज्ञान रूपी सूर्य की रोशनी उसे देते रहें। बुरे प्रभावों से उसे बचाते रहें, उसकी भीतरी शक्ति को शनैः-शनैः जागने व काम करने दें, रोकें नहीं। यदि बच्चा ऐसे वातावरण में रहेगा तो अवश्य अपनी सोती हुई शक्तियों को जगाता जावेगा और विकास में ला उनसे काम लेने लगेगा। इस प्रकार बीज-रूप बालक वृक्ष रूप-बुद्धिमान और विद्वान् मनुष्य होकर शुभ फल लावेगा।

बालक यदि रूठ जायें तो--

१. सब्र से और दृढ़ता से काम लीजिये।

२. उसकी नकल न चिढ़ाइये।

३. उसको मारिये नहीं झल्लाइये नहीं और उसको गोदी में उठाकर, पुचकार कर या गुदगुदाकर मनाइये भी नहीं।

४. उसके रूठने का जिक्र किसी से न करिये।

५. उसके रूठने पर उसका मजाक न उड़ाइये नाहीं उसके रूठने से खुश होकर हँसिये।

६. रूठकर यदि पसर जाए या किसी कोने में मुँह दबोच के जा बैठे तो छेड़िए नहीं।

७. रूठकर आपके हाथ मारे या आपके काम में बाधा डाले या तोड़ फोड़ करे तो उठाकर दूर बैठा दीजिए और शान्तिपूर्वक समझा दीजिए कि जब मुझसे हँसकर प्रेम से बात करना चाहो तब मेरे पास आ जाना, तब तक यहीं बैठे रहो।

८. उसे यह पता न लगने दीजिए कि आप उसके रूठने से परेशान हैं।

९. उसको समझा दीजियेगा कि उसके रूठे रहने तक जो चीज वह चाहता है उसे नहीं मिलेगी अपने इस बचन को अन्त तक निभाइये।

१०. यदि बालक रूठ चुके और ठीक ढङ्ग पर आ जाए तो उससे माफी मांगने को न कहिये।

एकाध बार बालक रूठेगा परन्तु जब वह देखेगा कि उसके रूठने की कोई परवाह नहीं करता, उससे कोई बोलता नहीं, उसकी कोई खुशामद भी नहीं करता और उसके रूठने से कोई नतीजा भी नहीं निकलता और जो चीज वह चाहता है वह भी नहीं मिलती तो वह फिर रूठना छोड़ देगा।

—००—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बन्दी प्रियतम'

[ले०—कुमारी "मिश्रा"

मेरे वन्दी प्रियतम !

आसोज की पूर्णिमा है ! मेरी प्रतीक्षा की अन्तिम तिथि !! वन्दी-प्रियतम के मधुर मिलन की रात !!! आज मेरे प्रियतम कारागार के कठोर सीकचों से मुक्त होकर मेरी इस टूटी-फूटी कुटिया को पवित्र करेंगे।

आह ! कितनी सुहावनी ! कितनी आह्लादकारी होगी वह घड़ी ! वह क्षण !!

जब मेरे जीवन-धन मधुर स्वरों में कहेंगे—"कहो 'वसुधा' ! अच्छी तो हो" और तब मैं डबडबाई आँखों से उनके चरणों ...। ओ ! गरीबों की सेवा करने में वन्दी होने वाले मेरे देवता ! तुम इसी कारण आठ वर्ष के लिए हथकड़ी और बेड़ियों में जकड़ दिये गये हो कि तुम्हारी कोमल आंखें भारत माँ पर होने वाले दिन-रात के अत्याचार एवँ उत्पीड़न को वर्दाश्त न कर सकीं ! किन्तु मेरी उपेक्षा क्यों ? मैं भी तो इस जननी की लाडली हूँ।

मेरे वन्दी प्रियतम !

आज ही तो आसोज की पूर्णिमा है। मेरे उर में दबी व्यथा, जीवन का सञ्चित सन्ताप नारी का आहत हृदय, तुम्हारा मधुर—प्यार आँखों से आंसू बन-बन कर फूटा पड़ता है—जब देखती हूँ आसोज की पूर्णिमा और छिटकी हुई चांदनी ! मेरे स्वामी !

आठ वर्ष बीत गए। इसी तरह आपकी मधुर स्मृतियों के वैभव को सञ्चित कर रही हूँ—आपकी विरह-जनित मधुर पीड़ा की रसमय आठ बरसातों की कितनी रातें अपलक बिता दीं—घुमड़ २ कर घिर जाने वाले बैरी बादलों, निष्ठुर पपिया और चातक ने रुला-रुला कर मृतवत् बना दिया है।

मेरे वन्दी प्रियतम !

कितने दिन हो गए आपकी वसुधा इसी तरह बैठी २ कल्पना की तूलिका से अपने वन्दी प्रियतम के चित्र बनाती रही है। आज का चित्र—आज का यह अन्तिम चित्र है नाथ ! आज ही आसोज की पूर्णिमा है ! मेरे जीवन-धन ! अपनी कसक, तड़प की सेज पर मैंने आंसुओं की चादर बिछा रखी है देव !

मेरे वन्दी प्रियतम !

आज ही तो आसोज की पूर्णिमा है ! भोर होने को आया— किन्तु अब तक न आये नाथ ! आह ! मेरी आंखों की प्यालियाँ शुष्क हो गईं, तूलिका हाथों से छूटी जा रही है, आठ वर्ष से सञ्चित किये मेरे रङ्ग फैले जा रहे हैं देव !

मेरे वन्दी प्रियतम !

मेरे जीवन-धन !! आह ! अब क्या करूँ—।

काश ! अपना अन्तिम चित्र ! "महाप्रयाण" आपके पवित्र चरणों से पवित्र कर सकती ! अच्छा नाथ ! 'मृत्यु ही हमारा अन्त नहीं है' मेरे वन्दी प्रियतम। हाय ! क्या पूरा न होगा मेरा अन्तिम अधूरा चित्र—'महाप्रयाण'—।

मेरे वन्दी प्रियतम !

आज ही तो है आसोज की पूर्णिमा। मेरी प्रतिभा की अन्तिम तिथि ॥

अन्तिम प्रणाम ! मेरे वन्दी प्रियतम !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरज और वर्षा

ले०—श्री शुकदेवनारायण

सांझ का समय था। बाहर खूब जोरों से वर्षा हो रही थी। खेलने जाने की कोई आशा न देख लड़कों ने चिल्लाना शुरु किया—"नानी ! कह एक कहानी; नानी कह एक कहानी" उनकी बूढ़ी नानी ने कहा—अच्छा सुनो……"एक दिन सूरज और वर्षा में लड़ाई हुई। सूरज बोला— क्यों री वर्षा, तू मेरे काम में दखल क्यों देती है? जब मैं अपनी तेज किरणों से अपनी वाटिका पृथ्वी को गर्म करके सुख पहुँचाता हूँ, तब तू बरस कर उसे गन्दा क्यों कर देती है? अगर मैं न रहूँ तो बेचारी पृथ्वी नष्ट-भ्रष्ट हो जाए। उसके कुल जीव-जन्तु, वृक्ष-लताएँ माटी में मिल जायें। मैंने उस पर जीव पैदा किये; मैंने वनस्पति उगाई; मैं उसे सँवारता हूँ। मेरी ही बदौलत आज वह इतनी हरी-भरी है। गरमी में उसे तपाकर जब मैं और सुन्दर बनाने लगता हूँ तो तू बरस कर मेरे परिश्रम पर पानी फेर देती है। बता, तू बीच में क्यों कूद पड़ती है ?"

"जी हाँ" हँसती हुई वर्षा ने कहा—आपका कहना बिलकुल ठीक है। मैं मानती हूं, आप बड़े शक्तिशाली हैं और चाहें तो एक ही दिन में बेचारी पृथ्वी को झुलस दें। पर मैं आपके किये-कराये पर पानी नहीं फेरती और न ही पृथ्वी को कष्ट देती हूं, उलटा मैं तो उसकी जीवन-दायिनी हूँ। जब वह बेचारी आप की जली हुई किरणों से झुलसने लगती है, और प्यास तथा गर्मी से उस पर के जीव-जन्तु हांफने, जलने लगते हैं, उस समय मैं ही उन्हें बचाती हूँ। प्राण-दान देती हूं उस समय पृथ्वी को मेरी जरूरत होती है, न कि आपकी। उस समय मैं झुलसी पृथ्वी को शीतल करती हूं, उसकी जली-भुनी छाती को जल से सींच-सींच कर शांत करती हूं। मेरे अमृत-तुल्य जल का पान कर जीव-जन्तुओं में नव-जीवन का सञ्चार होता है। अगर उस समय मैं न आऊँ तो पृथ्वी भर के सारे जीव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्तु मर जायें, एक भी बनस्पति न उगे और चारों तरफ सहरा के समान रेगिस्तान नजर आवे। पर मैं आपकी तरह अभिमान नहीं करती।"

'अभिमान!' सूरज ने क्रुद्ध होकर कहा—"क्या मैं अभिमानी हूं? अच्छा इस तरह आपस में लड़ने से तो अच्छा यही है कि अजमा कर देख लें कि हममें से कौन पृथ्वी का अधिक उपकार करता है। मैं लगातार तीन मास तक अपनी किरणों को लगातार बरसाता हूं। देखना इससे पृथ्वी कितनी खुश होती है। तीन मास तक अगर पृथ्वी को मुझसे कष्ट पहुँचा तो मैं अपनी किरणें समेट लूँगा और तू पानी बरसाना।"

"मन्जूर है", मुस्कुराती हुई वर्षा बोली। तब से पानी का बरसना बन्द हो गया। इधर सूरज ने अपनी किरणों को पृथ्वी पर बढ़ा २ कर भेजना शुरु किया। पृथ्वी भर के लोगों ने आरम्भ में तो धूप का स्वागत किया। वे उसमें बैठते, कपड़े सुखाते, और खुश होते। पर धीरे २ उन्हें धूप से अरुचि होने लगी। जिधर सूरज की किरणें बहुत तेज व अधिक परिमाण में पृथ्वी पर आने लगीं। लोग तङ्ग होने लगे। घबराने लगे. धूप से सब के मुंह से हाय! कितनी गर्मी है? शब्द निकलते। तुम्हारी माँ ने कहा—उफ! भीषण गर्मी है तुम्हारे पिता जी बोले-बागों के फूल कुम्हला गए। वे कहते जरा-पानी बरसता! सँसार के प्राणी कहते-जरा पानी बरसता!!! पर सूरज की हठ में कमी न हुई। उसकी गर्मी बढ़ती ही गई, दिन पर दिन बढ़ती ही गई। लोग सूरज से चिढ़ने लगे। कितने ही इसे कोसने लगे। फूल सूख गए, घास सूख कर पीले पड़ गए नाले खुश्क हो गए और नदियाँ अपनी तली में सट गईं। किसान घबराकर आसमान को देखते। उनके खेत झुलस गए थे। नई फसल की तैयारी करें तो कैसे? जबकि महीनों से जमीन पर एक बून्द तक न गिरी थी। गरमी बढ़ती ही गई। मजूरों को भर-पेट अन्न मिलना दूभर हो गया। बहुत से उपवास करने लगे। जिनके पास नाज थे वे कन्जूसी से खर्च करने लगे। बच्चे प्यास से बिलबिलाने लगे। लू के कारण लोग मरने लगे। किसानों ने वर्षा को बुलाना शुरु किया। सब सूरज से प्रार्थना करते—वर्षा को भेजो! चिड़ियां चिल्लातीं—पानी! पौधे सिसकते—पानी! बच्चे तरसते—पानी! सूर्य की गरमी कोई नहीं चाहता था।

दुनिया की इन सब दुःख भरी बातों से सूरज को दुख होने लगा। यद्यपि उसने पृथ्वी के भले के लिए ही उसे तपाना शुरु किया था। किन्तु अब उसे मालूम हो गया कि वर्षा का कहना ही ठीक था। उसने घबराकर वर्षा को पुकारा, और कहा—'देखो, वर्षा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रानी, पृथ्वी झुलस गई, कोई उपाय करो, उसे बचाओ! नहीं तो सब जीव-जन्तु मर जायेंगे।"

सूरज की बातों को सुनकर वर्षा मुस्कराने लगी। देखते २ अन्धेरा छा गया, खूब जोरों से आंधी आई और पानी बरसने लगा। पानी पाकर नदियां उमङ्ग पड़ीं, झरने हँसने लगे, चिड़ियां गाने लगीं, पौधे खिल उठे, बच्चे नाचने लगे और किसान हुलस गए। पृथ्वी निहाल हो गई। सूरज ने पृथ्वी को देखा और हँसते हुए बोला—'मैंने गलती की थी वर्षारानी! सचमुच तुम्हीं पृथ्वी को सँवारती हो! मैं तो बरबाद करता हूं।"

"नहीं-नहीं," हँसती हुई वर्षा, ने कहा "आप यहां भी भूल करते हैं। पृथ्वी को हम दोनों ही सँवारते हैं। बिना आपकी गर्मी और रोशनी के मैं कुछ भी नहीं कर सकती। पृथ्वी को हम दोनों की जरूरत है। इसलिए आगे हमें लड़ाई नहीं करनी चाहिए।"

तब से सूरज और वर्षा में लड़ाई नहीं होती। आरम्भ में सूरज अपनी किरणें बरसाता है और बाद में वर्षा होती है। इससे पृथ्वी खुश रहती है।

बस मेरा किस्सा खतम हुआ।" नानी ने कहा।

—०—

तकली

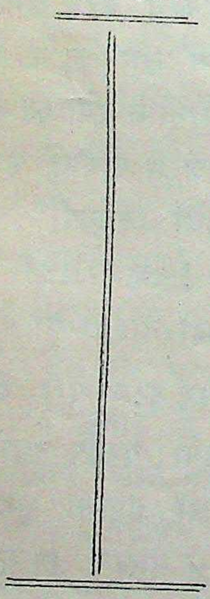

श्री 'विकल'

तकली का तार निराला।
तकली का तार निराला॥
मुर्दा भारत में बापू ने,
फिर से जीवन डाला॥१॥
एक बनाये हिन्दू—मुसलिम,
पिला प्रेम का प्याला॥२॥
कात-कात कर सूत घनेरा,
बुनलो शाल दुशाला॥३॥
मानचेस्टर लङ्काशायर की,
पड़ा मिलों में ताला॥४॥
जिसे देश का ध्यान नहीं है,
हो उसका मुँह काला॥५॥
'विकल' हिन्द पर मिटने,
की राह बताने वाला॥६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धोखेबाज !

ले०—ठा० देशराज

एक ठग साधु का वेष बनाकर रहता और लोगों से कहता कि मैं चांदी का सोना बना देता हूँ और कागज के नोट। लोग उसके बहकावे में आ भी जाते थे, यद्यपि न तो वह चांदी का सोना बना सकता था और न कागजों के नोट ही। वह करता यह था कि जब लोग उसे चांदी की वस्तुएँ या रुपए दे देते तो वह कहता कि—जहाँ कोई न देख सके ऐसी जगह में यह करामात सिद्ध करूँगा और फिर एकान्त स्थान में जा बैठता। इस प्रकार, जब भी उसे मौका मिल जाता, सब रुपया-पैसा लेकर चम्पत हो जाता। बस यही उसका धन्धा था।

एक बार एक बुढ़िया भी उसके झांसे में आ गई और अपने कानों की चांदी की बालियाँ सोने की करवाने के लिए उस साधु वेषधारी ठग को दे दीं। साधु ने कहा—"माई! मैं एकान्त स्थान में बैठकर इनका सोना बना दूँगा।" और मरघट की ओर चल दिया।

बुढ़िया के एक लड़का था। उसने जब मां से यह बात सुनी तो वह रात में ही साधु की करामात देखने के लिए श्मशान की ओर चल दिया। थोड़ी दूर उस ओर जाने पर वह देखता क्या है कि साधु भगा जा रहा है। लड़का भी उसके पीछे हो लिया और रात-भर चलता रहा। सूरज निकलने पर जब साधु ने पीछे फिर कर देखा तो एक लड़के को अपना पीछा करते पाया। उसने तुरन्त छुरा निकाल लिया और लड़के से पूछा कि तू कौन है? लड़के ने इस समय अपना भेद न खोलते हुए नम्रतापूर्वक विनती की—"महाराज मैं एक अनाथ बच्चा हूँ, मुझे अपनी सेवा में ले लो।' साधु ने स्वीकार कर लिया और लड़का उसके साथ हो लिया।

वे चलते-चलते एक दिन एक शहर में ठहरे। वहां भी साधु ने अपनी ठगी फैलाई—एक सेठानी उसके जाल में फँस गई और उसे अपने बगीचे में ठहराकर सोना बनाने के लिए चाँदी दी। साधु के ठहरने के स्थान के पास ही सेठ जी का सोने का कमरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। लड़का इस फिकर में था कि किसी तरह इस साधु को पकड़वाए। साधु भी उसके इस भाव को ताड़ गया और उसकी निगरानी रखने लगा। लड़के को किसी से भी बातें नहीं करने देता था। आखिर लड़के को एक तरकीब सूझी। वह कहने लगा—'महात्मा-जी! कोई कहानी सुनाइए।' साधु ने कहा—'मुझे तो कोई कहानी आती नहीं। तू ही सुना, लड़के के मन में तो थी ही यही बात कि मैं कहानी कहूँ। उसने इस प्रकार कहना शुरु किया:—

एक बिल्ली थी आलसी और काम-चोर। उसे भूखा रहना मञ्जूर था किन्तु मेहनत करके कुछ पैदा करना नहीं चाहती थी। वह थी भी बड़ी चालबाज जिससे बिना कुछ मेहनत किये ही किसी न किसी शिकार को फांस ही लेती थी। एक दिन, जब उसे बहुत भूख लगी तो चूहों को अपने जाल में फँसाने के लिए उनके बिलों के पास बैठकर गाने लगी:—

आओ रे ओ चुहियाचूहे !
मैंने कीये मीठे पूए।
दिन-भर काती चर्खा पूनी,
हलकी भारी मोटी ऊनी॥
आओ प्यारे जल्दी आओ,
खाओ पीओ मौज उड़ाओ।
माखन मिश्री तुम्हें चखाऊँ,
हलुआ पूड़ी तुम्हें खिलाऊँ॥
धोती साफे तुम्हें बंधाऊँ,
सौड़ चादरें खूब उढ़ाऊँ।
दूर कहां तुम इतनी जाओ,
आओ चुहिया चूहे आओ॥

बिल्ली के इस लुभावने गीत को सुनकर सब चूहे बाहर निकलने की तैयारी करने लगे। एक समझदार बूढ़े चूहे ने इस बात पर विचार किया तो उसे लगा कि ये सब लोभ-वश बिल्ली के धोखे में फँस रहे हैं। अतः उन सब को रोकते हुए कहा—भाई, जरा ठहरो, मुझे बिल्ली से बातें करने दो, तब तुम बाहर निकलना, सब चूहों ने अपने सरदार की बात मानली।

सरदार चूहा बिल के द्वार तक निकला और बोला:—

खुद तो मौसी दुबली पतली,
दिखतीं सारी हड्डी पसली।
माखन मिश्री तुमको मिलती,
क्यों कर तेरी गरदन हिलती?
चालों से मत हमको भुतला,
मत बातों से हमको फुसला॥
तू तो फिरती देह उघारे,
हमें सौड़ कैसे दे डारे?

अपनी कलई इस प्रकार खुलते देखकर बिल्ली ने चूहे पर झपाटा मारा। किन्तु चूहा पहले से ही सावधान था; झट बिल में खिसक गया।

लड़का जब इस कहानी को कह रहा था तो सेठ भी अपने कमरे में बैठा उसे ध्यान से सुन रहा था। उसके मन में ख्याल आया कि यह कहानी तो इस साधु पर भी लागू हो सकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इस ख्याल के पक्का होते ही वह कमरे से निकलकर बगीचे के एक झाड़ के नीचे छिप कर बैठ गया। जब आधी रात हुई तो साधु सेठानी के दिये हुए चांदी के जेवरों को पोटली में बांधकर भागने के लिए तैयार हुआ। सेठ ने झाड़ के नीचे से निकलकर झट से उसे पकड़ लिया और चोर-चोर चिल्लाने लगा। सैंकड़ों आदमी इकट्ठे हो गए और उस साधु को लात-घूसों से मारने लगे।

उस ठग की जब इस तरह पिटाई हो रही थी तो लड़का खुशी के साथ गा रहा था:—

जब अपनी ही देह उघारे फिरै।
और कूँ सौर कहां से करै?

कुल-दीपक

रचयिता—श्री "अँशुमाली"

मात-पिता गुरु जन की सेवा,
करता खुशी खुशी में।
आपस के झगड़े की बातें,
देवे टाल हँसी में॥
पाखण्डी, दुर्गुणी जनों को,
ठीक राह पर लावे।
सत्य-मार्ग को कभी न तजकर,
नीति—न्याय अपनावे॥
देश-भलाई की अभिलाषा,
दिल में नित रहती हो।
पर-हित की अविरल शुभ धारा,
नस-नस में बहती हो॥
बनें दुश्मनों का भी प्यारा,
माँ का बड़ा दुलारा।
है सब की आँखों का तारा,
वह 'कुल-दीपक' न्यारा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ नवयुवकों से ॥

हे भारत के होनहार प्रिय,
बढ़े चलो, बस बढ़े चलो।
भावी राज्य तुम्हारा होगा,
सत्य मार्ग पर चले चलो ॥१॥

सिंहों के हो पूत सभी तुम,
निज रूपों को मत भूलो।
वीर भूमि में जन्म लिया है,
इसी बात पर सब फूलो ॥२॥

बन जावो वीर बहादुर सब,
कर्मवीर दृढ़ बन जावो।
बनो देश-भक्त गुण-पूजक,
धर्म-वीरता दिखलावो ॥३॥

घबड़ाओ मत, साहस रखना,
वीरों के सम तुम जग में।
बन प्रतापी प्रताप शिवा सम,
सहो सङ्कटों को मग में ॥४॥

कहलावो सच्चे सेनानी,
बस जाओ मां की आंखों में।
रण-प्रांगण में चमक उठो,
बस दिखो तुम्हीं लाखों में ॥५॥

करो नित्य जनता की सेवा,
निज कर्त्तव्य उसे मानो।
छिपे हुए जनता में जनार्दन,
यह सेवा उनकी जानो ॥६॥

भव्य भावना नर-नाहर से,
तुम ले लो सब मिल प्यारे।
भारत मां के सच्चे सेवक,
वीर जवाहर जो प्यारे ॥७॥

विश्व प्रशँसित गांधी जी से,
सिद्धाँत लिए बढ़ते जावो।
सत्य अहिंसा के पथ पर चल,
सभ्य नागरिक बन जाओ ॥८॥

'आशुकवि' श्री रामाधार शुक्ल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"गोरिल्ला"

लेखिका—कु० कमला ब्रह्म

गोरिल्ले अफ्रीका के ऐसे भयानक जङ्गलों में रहते हैं कि, अति निर्भीक शिकारी भी अचानक उनके निराले वास-स्थल में जाने का साहस नहीं करते। ऐसे निर्जन व भयानक जङ्गल के सुनसान स्थानों में रहने के कारण गोरिल्लों के विषय में अन्य साधारण जीव-जन्तुओं की भांति, मनुष्यों को बहुत ही थोड़ा ज्ञान है। गोरिल्लों की प्रकृति तो अफ्रीका के भयङ्कर जङ्गल की अपेक्षा अधिक भीषण होती है अतः आज तक कोई भी शिकारी पूरी उम्र के जीते हुए गोरिल्ले को पकड़ नहीं सका है। बन्दर जाति का प्राणी होने के कारण भी प्रत्येक शिकारी और अफ्रीका के असभ्य आदिम निवासी भी सिंह की अपेक्षा इन लोगों से अधिक डरते हैं।

इनके शरीर के रोंए, रीछ के रोंए के समान काले और लम्बे होते हैं और इनकी आकृति भी सिंह, व्याघ्र, रीछ आदि हिंसक पशुओं से भी भयङ्कर होती है। जङ्गल के भीतर इन्हें देखने से अति प्राचीन युग के असभ्य मनुष्यों की बात याद आ जाती है। पश्चिमी अफ्रीका के क्येमेरून राज्य के जङ्गल में, नीचला गिनि प्रदेश के बन भाग में और बेलजियम काङ्गो राज्य के पूर्व भाग के अरण्यमय पर्वत-अञ्चल में गोरिल्लों को रहते हुए देखा गया है।

८६-८७ वर्ष पहिले गोरिल्लों का नाम भी कोई नहीं जानता था। लगभग १८४७ से इनकी जानकारी सँसार को हुई है। पूर्ण व्यसक गोरिल्ला ५-६ फुट तक लम्बा होता है। भारी पुरुष गोरिल्ला का वजन ५ मन तक होता देखा गया है। क्रोधित अवस्था में इनके रोंए खड़े हो जाते हैं जिससे इनकी आकृति बहुत ही भयङ्कर हो जाती है। अवस्था के अनुसार इनके रोंए के रङ्ग भी बदल जाते हैं। सुदृढ़ छाती से निकली इनकी दोनों भुजाएँ अत्यन्त दीर्घाकार की होती हैं। देह को जरा झुकाने से ही इनके लम्बे हाथ प्रायः भूमि स्पर्श कर डालते हैं। इन सुदीर्घ बाहुओं की उँगलियां इनके पैरों की उँगलियों से बहुत बड़ी होती हैं। ये वृक्ष के नए-नए पत्ते और फल खाते हैं। घोर कृष्णवर्ण के मुख मण्डल में, सब दांतो को गुलाबी मसूढ़ों के साथ बाहर निकाल कर, मोटे शरीर वाले मनुष्य की तरह दो पैरों पर खड़े होकर जब ये चिल्लाते हुए अपने शत्रु पर आक्रमण करते हैं तब इनकी शक्ल अत्यँत डरावनी व भीषण हो जाता है। ये जब गुस्से में हो जाते हैं तो इतने जोर से चिल्लाते हैं कि वन-भूमि काँप उठती है। आक्रमण करने के समय गोरिल्ला की आकृति सिंह, बाघ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि की अपेक्षा सैंकड़ों गुणा भीषण हो जाती है। उस समय ये अपनी छाती पर बार-बार हाथ पीट कर दौड़ते हुए आते हैं और शिकारियों पर आक्रमण करते हैं। ये अपने नुकीले दांतों व लम्बी भुजाओं से दाब कर शिकारियों का काम तमाम कर देते हैं। आहत होने पर गोरिल्ले क्रोध से ऐसे पागल हो उठते हैं कि उसी क्षण क्रम से ८-१० गोली लगने पर भी ये युद्ध करते रहते हैं।

ये इतने अधिक में फल-पत्ते खाते हैं कि अपने आहार के लिए इनको यहाँ से वहां भटकना पड़ता है। वृक्ष पर पक्षियों के घौंसले देखकर ये उसके भीतर से अण्डे लेकर बड़े आनन्द से खाते हैं। ये बहुत जोर से दौड़ सकते हैं। अफ्रीका के जङ्गल में पामनट ट्री जिञ्जार ब्लेड ट्री, प्यपान ट्री इत्यादि वृक्ष ही इनके प्रिय आहार हैं। इन वृक्षों के पत्ते, फूल, फल, अङ्कुर आदि इनका भोजन है।

हाथी और गोरिल्लों की बहुत अनबन रहती है, क्योंकि हाथी इनके इन प्रिय वृक्षों को नष्ट कर डालते हैं। गोरिल्ले जब हाथी को आता हुआ देख पाते हैं तो वृक्ष की डाल लेकर छिप जाते हैं और हाथी के निकट आने पर उसकी सूँड पर जोर-जोर से मारने लगते हैं। रात को सोने के लिए ये किसी बड़े वृक्ष पर एक प्रकार का घौंसला बनाते हैं और उसमें स्त्री गोरिल्ला अपने बच्चों के साथ रहती है। पुरुष गोरिल्ला अपने परिवार की रक्षा के लिए, घौंसले में न रहकर उसी वृक्ष के नीचे रहते हैं। इसी उद्देश्य से पुरुष गोरिल्ले वृक्ष के नीचे बहुत डाल-पत्तों का ढेर लगाकर वेदी सरीखा बना लेते हैं और रात को उसी पर सो जाते हैं। ये प्रति दिन अपने लिए नए २ घौंसले बनाते हैं और प्रत्येक वृक्ष पर एक ही घौंसला रहता है। दिन को अपने लड़के, बच्चे लेकर ये चरते फिरते हैं।

कौन कैसे सोता है ?

कुत्ता—जमीन पर बैठकर, सुकड़कर लेकिन बड़ी सावधानी से और बूढा हो जाने पर खड़े-खड़े।

घोड़ा-खड़े खड़े।

हाथी—खड़े-खड़े।

परिन्दे—सिर को पीठ की तरफ फेरकर और चौंच को अपने परों पर छिपाकर।

लम्बी टांग वाले परिन्दे—एक टांग पर खड़े होकर।

उल्लू-बैठे-बैठे।

चिमगादड़—टहनियों में उलटा लटक कर।

बतख—खुले पानी पर एक पांव पर तैरते हुए।

लोमड़ी और भेड़िया—सारे जिस्म को समेट कर।

खरगोश व सांप—बिना आंखें बन्द किये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य सदन अबोहर में

माननीय बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन का आगमन

संयुक्त प्रान्तीय असेम्बली के स्पीकर, अनेक संस्थाओं के संस्थापक व संचालक सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता माननीय श्री बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन का इस संस्था के साथ आरम्भ से ही गहरा सम्बन्ध रहा है और इसके कार्य-कर्त्ताओं को सदैव आपका सद्-परामर्श व सहयोग प्राप्त होता रहा है। पिछले ४-५ वर्ष से आप यहाँ नहीं आ सके। इस बीच में संस्था की ओर से कई नये कार्य तथा प्रवृत्तियां आरम्भ हो गई। अतः अर्से से आपकी इच्छा थी कि अबोहर में पहुँच कर साहित्य सदन के उपरोक्त विविध कार्यों का निरीक्षण तथा चालू प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में कार्य-कर्त्ताओं से विचार विनिमय करूँ।

लाहौर से वापिस लौटते हुए आप २४ अप्रैल को ४॥ बजे शाम की गाडी से अबोहर पहुँचे और सीधे साहित्य सदन में पधारे। तहसील फाजिल्का के कांग्रेसी कार्य-कर्त्ता आपकी उपस्थिति से लाभ उठाने के लिए उस दिन साहित्य सदन में एकत्रित हुए और सबसे पहले माननीय टण्डन जी ने उन्हीं से बातें कीं। कार्य-कर्त्ताओं ने चर्खा, खादी-प्रचार, कांग्रेस के आगामी सत्याग्रह-संग्राम आदि देश की मौजूदा समस्याओं के सम्बन्ध में प्रश्न पूछे तथा उन्हें हल करने में उपस्थित होने वाली अपनी कठिनाइयों को दूर करने के उपाय पूछे। आपने सभी बातों पर, विशेषतः खादी की फिलासिफी पर बड़े सुन्दर ढङ्ग से प्रकाश डाला और सब प्रश्नों का सन्तोष पूर्ण उत्तर दिया।

रात के समय आपने साहित्य सदन के कार्य-कर्त्ताओं से सँस्था-सञ्चालन सम्बन्धी बातों पर विचार किया। अगले दिन प्रातः आठ बजे साहित्य-सदन की प्रबन्ध कमेटी के प्रधान, मन्त्री, सदस्यों व अबोहर शहर तथा इलाके के हिंदी प्रेमियों से हिंदी-प्रचार के सम्बन्ध में बातें कीं। आपने बतलाया कि देवनागरी लिपि जैसी वैज्ञानिक व फोनैटिक लिपि को जो लोग नहीं अपनाते हैं वे शिक्षा के नाम पर अपना समय व शक्ति नष्ट कर रहे हैं। बहुत से समझदार विद्वान् मुसलमानों ने खुले दिल से इसे स्वीकार किया है कि नागरी लिपि ही सर्वश्रेष्ठ लिपि है, धार्मिक-कट्टरता के कारण यदि मुसलमान देवनागरी लिपि को न अपना कर अनेक त्रुटियों से पूर्ण अरबी लिपि को ही पकड़े रहेंगे तो वे घाटे में रहेंगे। तुर्की का उदाहरण हमारे सामने है। वहां पर कमालपाशा ने अरबी लिपि को निकम्मी समझ कर अलग फैंक दिया और रोमन लिपि को अपनाया, यद्यपि नागरी लिपि से रोमन लिपि बहुत दोष पूर्ण है।

आपको पञ्जाब में आर्य समाज व सनातनधर्म सभाओं द्वारा वेद, रामायण, गीता आदि के धर्म-प्रचार के मौजूदा तरीकों पर बड़ा दुःख हुआ। आपने कहा कि जो व्यक्ति हिंदी का एक अक्षर नहीं जानता वह चाहे आर्य समाजी हो या सनातनी, वह किसी भी अंश में अपने धर्म का लाभ या वेद, गीता आदि का प्रचार नहीं कर सकता है, भले ही वह ऐसी सभा-सोसाइटियों का सदस्य हो, इन कामों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये धन भी देता हो तथा ऊँचे स्वर से मन्त्र उच्चारण करता हो अथवा भजन-उपदेश सुनाता हो) तबला-मजीरा बजाने या व्याख्यान झाड़ने से धर्म प्रचार नहीं होता है । धर्म जीवन है, वह कह कर सुनाने की बात नहीं वह तो करने की चीज है । अपने धार्मिक सिद्धान्तों पर अमल करने तथा अपनी सँस्कृति की रक्षा के लिए पञ्जाब के हिंदुओं का सर्व प्रथम कर्त्तव्य यह है कि वे स्वयं हिंदी सीखें और अपने बच्चों की शिक्षा देवनागरी लिपि द्वारा ही शुरू करें ।

आगे चलकर आपने कहा कि जब मैं १५ वर्ष पूर्व पञ्जाब में आया तो उस समय यहां के स्कूलों में हिन्दी के लिए कोई स्थान न था । किंतु अब मैं समझता था कि वह स्थिति बदल गई होगी तथा बहुत अधिक स्कूलों में पहली श्रेणी से हिंदी की पढ़ाई का प्रबन्ध हो गया होगा । लेकिन इस बार जब मुझे लाहौर में यह पता लगा कि पञ्जाब की आर्य समाज व सनातन धर्म सभाओं की ओर से चलने वाली ५ सौ के लगभग शिक्षण सँस्थाओं में से केवल ५-६ सँस्थाओं में ही पहली कक्षा से हिंदी पढ़ाने का प्रबन्ध है, तो मेरे आश्चर्य व दुख का ठिकाना न रहा । इससे मुझे लगा कि पञ्जाब के हिंदुओं का भविष्य बहुत ही अन्धकार पूर्ण है, उन्हें अपनी भाषा तथा सँस्कृति की रक्षा का बिलकुल ख्याल नहीं ।

बातें जारी रखते हुए आपने इस बात पर जोर दिया कि अबोहर म्युनिसिपैल्टी के हाई स्कूल व प्राइमरी स्कूल में पहली श्रेणी से हिन्दी पढ़ाने का प्रबन्ध होना चाहिए तथा हिन्दी पढ़ने वाले विद्यार्थियों का माध्यम हिन्दी ही होना चाहिए । इसके लिए आपने प्रेरणा की कि साहित्य सदन, के कार्यकर्त्ताओं व अन्य हिंदी प्रेमियों को घर-घर व गली-गली जाकर जोरदार आँदोलन करना चाहिये लड़कों के सँरक्षकों को इस बात के लिए तैयार करना चाहिए कि वे बच्चों की शिक्षा देवनागरी अक्षरों द्वारा आरम्भ कराय । आस-पास की मण्डियों व देहातों में भी इस प्रकार का आँदोलन करने की आवश्यकता पर आपने पूरा जोर दिया तथा इसे बहुत महत्वपूर्ण कार्य बतलाया ।

बाद में आपने आस-पास के गाँवों से आये देहातियों से बात-चीत की । आपको यह जानकर आश्चर्य हुआ कि इन हिंदी भाषा-भाषी गाँवों में लोगों को अपने बच्चों को मजबूरन उर्दू पढ़ानी पड़ती है क्योंकि शिक्षा-विभाग की ओर से हिन्दी की पढ़ाई का कोई प्रबन्ध नहीं । आपने गाँव वालों से जोरदार शब्दों में प्रेरणा की कि वे अपने बच्चों को आरम्भ से हिंदी ही पढ़ावें और अपने गांव में हिंदी की पढ़ाई का प्रबन्ध करने की सरकार से लगातार माँग करते रहें । यह न्यायोचित माँग सरकार को अवश्य ही पूरी करनी पड़ेगी ।

साहित्य सदन के विभिन्न विभागों—केन्द्रीय पुस्तकालय, चलता पुस्तकालय, मासिक 'दीपक' दीपक प्रेस, पुस्तक-प्रकाशन आदि के कार्यों व उनकी मौजूदा आर्थिक स्थिति की आपने पड़ताल की तथा भविष्य के कार्यक्रम व सञ्चालन के लिए कार्यकर्त्ताओं को महत्व पूर्ण सुझाव बतलाये । इसके बाद आपने साहित्य सदन की समस्त भूमि तथा उस पर स्थित सभी भवनों को घूमकर देखा । इस प्रकार, साहित्य सदन की अवस्था का प्रत्येक दृष्टि से अध्ययन करने व कार्यकर्त्ताओं से गम्भीर विचार-विनिमय करने में आप सारा दिन व्यस्त रहे ।

अन्त में सँस्था के सम्बन्ध में आपने जो विचार प्रकट किये उसका कुछ अँश इस प्रकार है:—"...... हिंदी का यह बहुत अच्छा केन्द्र है । पञ्जाब में इस प्रकार की अभी दूसरी संस्था नहीं है । आवश्यकता इस बात की है कि इस केन्द्र से चारों ओर हिन्दी का प्रकाश फैले और यहाँ से निरन्तर समीपस्थ स्थानों में जनता के लिए हिंदी पठन-पाठन का प्रोत्साहन मिलता रहे ...।" शाम की गाड़ी से आपने सहारनपुर के लिये प्रस्थान किया और गाड़ी के १॥ घण्टा लेट होने पर भी रवाना होने की आखरी क्षण तक आप साहित्य-सदन, के भविष्य के कार्य-क्रम पर कार्यकर्त्ताओं से बातें करते रहे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निहालखेड़े में एक विवाह

अबोहर इलाके में निहालखेड़ा मशहूर गाँव है। यहाँ के चौधरियों के ठाट-बाट, ववाह-शादी की शान-शौकत, बारात में ५-५ सौ आदमी जाने, दहेजों में हजारों रुपए देने आदि बातें प्रसिद्ध हैं। पिछले दिनों इनके खानदान में हुई एक शादी मे काफी सुधार और कम खर्ची से काम लिया गया है। चैत की पूर्णिमा को चौ० मामराज नम्बरदार के सुपुत्र का विवाह अजीमगढ़ में हुआ। बारात में ९० आदमी आये। डूम-डाढ़ी या तमाशबीन कोई नहीं बुलाया गया, सिर्फ एक ढ़ोल बजाने वाला था। बारात ने सिर्फ ५ समय रोटी जीमी। भात, रङ्गबरी-पडला और दहेज आदि में दिया-लिया मामान बिलकुल नहीं दिखाया गया। इस प्रकार, इस बिवाह में ये बातें अबोहर प्रांतीय ग्राम सुधार पञ्चायत के नियमों के अनुसार हुईं। यद्यपि शिक्षित लोगों तथा दूसरे इलाके के देहातियों की दृष्टि में विवाह में इतना खर्च करना अधिक ही है। किंतु इस इलाके में इन जैसे बड़े-बड़े जमीदारों के विवाह में होने वाली भारी फजूल खर्ची और कुरीतियों को देखते हुए, इस विवाह में काफी कम खर्ची व सादगी बरती गई है। पञ्चायत के नियमों को बने कई वर्ष हो गए हैं, तब से लोगों की हालत दिन पर दिन गिर रही है। अब समय आ गया है कि पञ्चायत नियमों में सुधार करके विवाह के खर्च को और भी अधिक कम करे। निहालखेड़े वालों ने इस विवाह में इतना सुधार करके हिम्मत का काम किया है। उन्हें चाहिये कि आगे होने वाले विवाहों में इससे भी कम खर्च करें। इलाके के दूसरे जमीदारों को भी इस मिसाल से लाभ उठाकर पँचायत के नियमों के मुताबिक विवाह करना चाहिए।

मन्त्री—ग्रामसुधार पञ्चायत, अबोहर

सर्वोत्तम विशुद्ध

आयुर्वेदिक औषधें

सस्ते मूल्य पर मिलने का एक मात्र कारखाना

सचित्र सूचीपत्र मंगाकर देखिये।

सुख संचारक कम्पनी, मथुरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REGD. No. L. 370

No. 2014 Dr 40

Government of Bikaner.
Dated 1. 4. 1940

From
The Director of Education,
Bikaner State,
Bikaner.

To
The Manager,
Sahitya Sadan,
Abohar.

DEAR SIR,

I write to inform you that the following publications submitted by you, have been approved by this department as noted against them:—

1. "Deepak" Monthly Journal — Approved for use in Schools.
2. Easap-Niti-Nikunj. — Approved as prize and Library book for use in Schools.
3. Vishwa Dhaya. — ,,
4. Bal Gopal. — ,,

Yours faithfully,
(Sd.) Ram Singh
for Director of Education,
BIKANER STATE.

दीपक प्रेस में नया टाइप

कई दिन से लोगों को शिकायत थी कि 'दीपक' प्रेस में टाइप पुराना हो गया है जिससे छपाई ठीक नहीं होती।

हमने यह शिकायत दूर करदी है। हिन्दी का सारा पुराना टाइप बदल कर उसके बदले हिन्दी टाइप के लिये प्रसिद्ध इलाहाबाद व बम्बई की टाइप-फाउण्डरियों से आकर्षक फेस वाला कई सौ रुपये का बढ़िया नया टाइप मंगवाया है।

अब 'दीपक' की छपाई भी बहुत सुन्दर होगी तथा प्रेस में छपाई का दूसरा काम भी बढ़िया होगा।

दीपक प्रेस की विशेषताएं

इलाके भर में सब साधनों से पूर्ण सबसे बढ़िया छापाखाना, शुद्ध और आकर्षक छपाई, माडरेट रेस, समय की पाबन्दी। एक बार जरूर आजमाकर देखिये।

मैनेजर, दीपक प्रेस, साहित्य सदन, अबोहर (पञ्जाब)

मुद्रक एवं प्रकाशक—श्री कुलभूषण, दीपक प्रेस, साहित्य सदन, अबोहर (पञ्जाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...प्रांत, मध्यप्रान्त, बिहार, बम्बई, उड़ीसा, कोटा, बड़ौदा, व बीकानेर राज्य के शिक्षाविभागों द्वारा स्कूलों व पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत

दीपक

[साहित्य सदन, अबोहर का मासिक पत्र]

उद्योग द्वारा शिक्षा

"उद्योग द्वारा शिक्षा का अर्थ यह नहीं है कि सब ज्ञान उद्योग से देना है। लेकिन जिस तरह कुञ्जी से हम ताला खोलते हैं उसी तरह उद्योग के द्वारा जीवन खोलना है। यही उद्योग द्वारा शिक्षा के संक्षेप में मानी हैं। इसलिए जीवन से संबंधित हरएक विषय हमारी शिक्षा में आ सकता है। उसको कृत्रिमता से उद्योग से जोड़ने की कोई जरूरत नहीं है।"

—विनोबा

...ष्ठ १९९७
...न १९४०

सम्पादक
तेगराम

वा० मू० २॥)
एक प्रति ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरमी और बरसात में सेवन करने योग्य धातु पौष्टिक दवा—

* सुधावलेह *

विश्वास करें यह औषधि इस भूतल का अमृत है। खाने के साथ २४ घण्टे में अपना गुण दिखाती है। इसके सेवन से धातुपुष्टि होती है, दिल दिमाग़ में तरी और ताकत आती है। दिल की धड़कन, सिर की कमजोरी, याद न रहना, आंखों के आगे अन्धेरा आना, चक्कर आना, सिर घूमना हाथ पैर के तलवे जलना, खुलकर भूख न लगना वग़ैरह आराम होकर मनुष्य का जीवन नवीन हो जाता है। जिनको गरमी के कारण स्वप्नदोष होते हैं वे इस अमृत को गरमी के चार महीने जरूर खावें। कीमत १०) रु० सेर है, पर ग़रीब भी लाभ उठा सकें इसलिए ५) रु० सेर दिया जावेगा। महसूल डाक पैकिङ्ग १–) कुल ६–) में दवा का फल देखो।

बेलाग प्रशंसा पत्र।

नोंकझोंक संपादक – श्री दामोदरदास जी चतुर्वेदी महोदय लिखते हैं: —

"आपके सुधावलेह ने मेरे लिये तो अमृत का सा गुण दिखलाया। आज दवा ली और कल से ही सब शिकायतें दूर होकर मेरे जीवन में एक नये वसन्त का आगमन आरम्भ हो गया। वस्तुतः आपका सुधावलेह सुधा की वह सुन्दर स्रोतस्विनी है, जिसका आश्रय लेकर अनेक निराश और निर्बल व्यक्ति नवजीवन तथा नई शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। रोग-सन्तप्त प्राणियों के उपकार के लिये आपने इस अवलेह का निर्माण कर अत्यन्त अनुग्रह किया है। ईश्वर इस जन-सेवा के लिये आपको अखण्ड यश प्रदान करे!"

गरमी के मौसम में सेवन करने योग्य

नवधातु रोगान्तक चूर्ण ६।)

आनन्द वर्द्धक चूर्ण ३)

इस जलते हुए मौसम में ४० दिन तक इन्हें सेवन करके अपना वीर्य शुद्ध और पुष्ट करें। दुर्बलता, स्वप्नदोष वग़ैरह मार भगावें। ४० साल की परीक्षा का नतीजा है, कोई और दवा इनके समान नहीं है। डाक खर्च १।) सवा रु०

पता—हरिदास एण्ड कम्पनी, मथुरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

{ दीपक—वर्ष ५, संख्या ७, मई १९४० ई० }

विषय	लेखक	पृष्ठ सं०
१ धर्मवनाम धार्मिकता	श्री काका कालेलकर	१
२ ब्रह्मचर्य	,, ब्रजमोहन मिहिर	२
३ सफेद पत्थर अथवा लाल हृदय	सङ्कलित	४
४ डाल्टन योजना	,, आचार्य हरभाई त्रिवेदी, भावनगर	५
५ प्रसन्नता	,, "रहबर" बी०ए०	१०
६ मेरी जापान यात्रा	"एक यात्री"	११
७ देश के युवको ! सुनो !!	साहित्यभूषण श्री रामनाथलाल 'सुमन'	१४
८ "केवल दो लंगोटी और एक कम्बल"	श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी	१५
९ इङ्गलैण्ड की राज्य व्यवस्था का इतिहास	,, गिरिराज बी०ए०	१६
१० पत्रों का मूल्य	सङ्कलित	२०
११ 'सेंस आफ ह्यूमर'	ब्रा० श्रीप्रकाश एम०एल०ए०	२१
१२ दीपक के प्रति (कविता)	श्री रामकुमार 'स्नातक'	२२
१३ मण्डला की सिंहनी	श्री दयाशँकर मिश्र	२३
१४ महिलाओं में फैशन	श्री शकुन्तला बेहल	२४
१५ शिशु शिक्षा	श्री कृष्णजसराय बी० ए०	२६
१६ स्त्रियां देश के लिए क्या करें ?	—दीपक	२९
१७ जापान के वीर बालक	श्री बँसीधर	३०
१८ पनडुब्बे और जलसुरँगें	श्री अनिल	३४
१९ भारत गान (कविता)	श्री 'विकल'	३६
२० 'देने में आनन्द'	कु० कमला ब्रह्म	३७
२१ भारत तेरी सपूत सन्तान (कविता)	श्री रमेशचन्द्र जैन, अमृतसर	३८
२२ सम्पादकीय नोट— देश-भक्ति इसे कहतेहै. ! एक कुली की कीमत ! भोजन और शौर		३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मुल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २॥) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४)।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जिनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा ३ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेसे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख डाक खर्च भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं।

८—जिन सज्जनों को किसी मास का 'दीपक' न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछ ताछ करके बाद में हमारे पास लिखना चाहिये।

८—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें और बदले के पत्र, सम्पादक, 'दीपक' साहित्य सदन, अबोहर के पते से और मूल्य तथा प्रबन्ध विषयक पत्र मैनेजर 'दीपक' के पते से भेजने चाहिएं।

स्तंभ—सूची

१ लोकमत-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्यग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म बचे अरु धन बचे, रोग समूल नसाये।

यह मौका न चूकिए, असली धूप जलाये।

मोतीराम सेठी दी

मशहूर धूप नं० १ (रजिस्टर्ड)

प्यारे मित्रो ! आप लोगों के सुभीते के लिए शुद्ध और सस्ती धूप तैयार की गई है। इसमें आयुर्वेदोक्त कपूरादि वर्ग की कई औषधियों का मिश्रण किया गया है इस वास्ते यह हमारी धूप अन्य धूपों से सुगन्धित व सस्ती भी है, जो वायु में रोगोत्पादक कीटाणु (कृमि) होते हैं उनको मारने व वायु को शुद्ध करने में अपनी शान की यह धूप एक है। यह धूप जंगली जड़ी बूटियों व शुद्ध पवित्र चीजों से तैयार की गई है हर एक भाई को इसका प्रयोग करना चाहिए। हमारे यहाँ पर अगरबत्ती बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है।

तैयार करदा:—**मोतीराम सेठी, अबोहर** (पञ्जाब)

तैयार है ! तैयार है !! तैयार है !!!

क्या ?

कृष्णा छाप चूर्ण नं० १ (रजिस्टर्ड)

खरीदिये और खाइये

यह चूर्ण यथा नाम तथा गुणों से परिपूर्ण है। इस चूर्ण को तीन माशा से छै माशा मात्रा भोजन के बाद खाने से खाई हुई खुराक का समय पर ठीक रस बनता है। इसके अलावा अजीर्ण, संगरहणी, जी मिचलाना, वमन आदि रोगों का नाश करता है। इसको हर मौसम में खाने से किसी नुकसान की सम्भावना न होगी। इसे वृद्ध, बालक, जवान और स्त्री-पुरुष सेवन कर सकते हैं। यह जंगली जड़ी बूटियों द्वारा आयुर्वेद के ज्ञाताओं की देख-रेख में बनाया गया है।

नोट:—हमारे इस कारखाने में अगरबत्ती, धूपबत्ती, हवन सामग्री बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है।

तैयार करदा:—**मोतीराम सेठी, अबोहर** (पञ्जाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-सदन समाचार

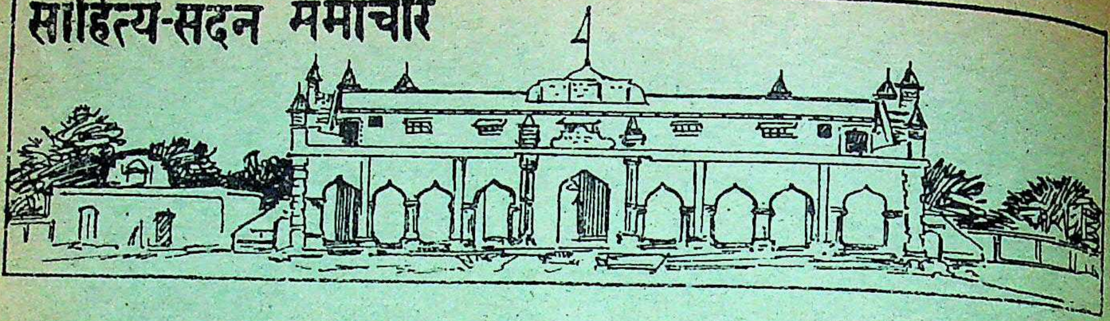

शाँति निकेतन-शिल्प भवन की लाख की वस्तुऐं

छोटी बड़ी १० चिड़ियां, ३ बतखें, १ तोता, १ दवात चमड़े का कुञ्जीकेस तथा लेडीज बैग सबका मूल्य ५)

मधुसूदन विलेज इन्डस्ट्रीज इंस्टीट्यूट कटक की लकड़ी की वस्तुऐं

सारस मू० १), ऊँट मू० १), गाय मू० १), घोड़ा मू० १), गिलहरी मू० ।।)

दी उड़ीसा हार्नवर्कस मगलबाग कटक की सींग तथा कागज के गूदे की वस्तुऐं

हिरण के सिर २, सांप छोटे बड़े २, कँघा १, हुक्का १ हवाई जहाज १, कछुआ १, पैन २, चिड़ियां २, लमटंगा १, सबका मू० ९)

गूदे की वस्तुऐं

मगरमच्छ २ मू० ।=), मेंढक २ मू० =), बतख मू० ।), कोचरी २ मू० =) तस्वीर गांधी जी मू० =)

अ० भा० चर्खासंघ विहार शाखा मधुबनी की वस्तुऐं

चन्दन का पंखा मू० १।।), सादा पखा =)।।

नागपुर की पानी में पैदा होने वाली लकड़ी की वस्तुऐं -

हर किस्म के फूल मू० ।।=), गजरा मू० ।=), पानी में खिलने वाले फूल ५, मू० १)

गांधी खद्दर भण्डार लाहौर की खद्दर की वस्तुऐं -

खद्दर का बटुआ ।-) मेजपोश मू० ।।।)

संगमरमर की वस्तुऐं—

शिव पार्वती मू० १।।=) बुद्ध भगवान् मू० ।।।)

घास की वस्तुऐं -

छोटे बड़े झाड़फनूस तथा बक्स ४ मू० २।।।-)।। चटाई मू० १)

चौ० महावीरसिंह जी 4th year गांव अलखपुरा निवासी ने एक फुलकारी प्रदान की।

शाहनरपाल कुंवरजी पटेल द्वारा प्राप्त -

सिक्का चांदी महाराज श्री खेगार जी कच्छ भुजकोरी
,, तांबा पाई सँ० १९६५

इस मास में आई हुई नई पुस्तकें

(१) नागरी लिखावट मू० ।=), (२) सर्वसँग्रह मू० ।।=), (३) गाँवों की आर्थिक जाञ्च प्रश्नावली मू० =), (४) राष्ट्रीय आंदोलन और उसका विकास ८ प्रतियां दर -), (५) राष्ट्रीय जागरण का इतिहास ८ प्रतियां दर -), (६) सदाचारी जीवन ही जीवन है ८ प्रति दर -), (७) All India Swadeshi Directoy 1933 Price 4 as (८) बिहार का चित्रित गौरव मू० १)

एक विवाह

श्री चौ० रामचन्द्रजी गोदारा गांव मदेर सुपुत्र बीरबलसिंह का विवाह अक्षय तृतिया को श्रीगंगानगर में चौ० रामचन्द्र पलाणिया गाँव अमरपुरा जालू की सुपुत्री लक्ष्मीदेवी के साथ पूर्ण वैदिक रीति से हुआ। बरात सिर्फ एक दिन ठहरी और दहेज, जेवर आदि सब खोटी रस्में जड़मूल से उड़ादी गईं। यह सब कार्य श्री चौ० बुद्धराम जी के प्रयत्न तथा प्रबन्ध से हुआ।

—सम्वाददाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools ... Bombay, ... Baroda & Bikaner States

दीपक

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग की सम्पत्ति तथा पञ्जाब में राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रचार करने वाली प्रमुख संस्था—साहित्य सदन, अबोहर का मुखपत्र

सत्यम् :: शिवम् :: सुन्दरम्

सम्पादक—तेगराम

ज्येष्ठ १९९७ | वर्ष ५, संख्या ८ | जून १९४०

पूर्ण संख्या ५६

धर्म बनाम धार्मिकता

एक जमाना था जब बड़े बड़े सम्राट भी अपने राजमुकुट हाथ में ले कर धर्माचार्यों की अदालत में खड़े हो जाते थे। साहित्य, कला, विज्ञान सबको धर्म की अदालत में अपनी निर्दोषता और निष्ठा सिद्ध करनी पड़ती थी!

अब वे दिन चले गए हैं। क्योंकि धर्मों से मानो धार्मिकता ही रूठ गई है। अब आर्य-धर्म, विश्वासी-धर्म, इस्लाम, बौद्ध-धर्म, यहूदी-धर्म इत्यादि सबके सब धर्म मानवता की अदालत में अभियुक्त होकर खड़े हुए हैं। धर्म के नाम पर इतनी संकीर्णता फैलाई जा रही है, इतना मनुष्य-द्रोह किया जा रहा है कि अब सबके सब धर्म न्यायमूर्ति न रह कर मुलजिम (अभियुक्त) बन गए हैं।

प्रथम सत्व जाता है, बाद में प्रतिष्ठा जाती है। फिर स्थान भ्रष्ट होते देर ही कहां? धर्मों ने धार्मिकता छोड़ दी और अपना नाश किया। अब धार्मिकता को धर्मों से बचाने के दिन आ गए हैं।

—काका कालेलकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचर्य्य

ले०—श्री ब्रजमोहन मिहिर

पहले, जब आज कल की भांति दूषित वातावरण नहीं था, ब्रह्मचर्य की रक्षा सुलभ थी और स्वतः हो जाया करती थी। उस समय का रहन-सहन, वेष-भूषा, आचार-विचार, शिक्षा-प्रणाली और सभ्यता आदि बातें लोगों को ब्रह्मचर्य-व्रत के धारण करने में सहायता पहुँचाती थीं। आधुनिक काल की परिस्थिति ठीक इसके विपरीत है। पहिले बाल-जीवन पवित्र और सरल था। लोगों का आहार-विहार नियमित था। वे सत्य के उपासक होते थे। अतः ब्रह्मचर्य-व्रत में स्थित रहने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होती थी।

ब्रह्मचर्य-व्रत को स्थायी बनाने के लिए आश्रम-धर्म भी उसका एक प्रधान अङ्ग था। प्राचीनकाल के पुरुष गृहस्थाश्रम में केवल इन्द्रीय-सुख और काम-लोलुपता के लिए नहीं प्रवेश करते थे। विद्यार्थी जीवन समाप्त करके विद्यालय से निकलने के पश्चात जिनका उद्देश्य प्रवृति-मार्ग में आकर सृष्टि उत्पन्न करना रहता था, केवल वे ही गृहस्थाश्रम धर्म स्वीकार करते थे। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने पर भी उनका जीवन विलासी नहीं होता था, बलकि किसी मुख्य उद्देश्य की पूर्ति के हेतु इस आश्रम धर्म में भी वे अपना रहन-सहन शुद्ध व नियमित रखते थे। अपने सदृश्य एक नूतन आकृति को उत्पन्न करने के हेतु वे रति-रहस्य में सम्मिलित होते थे, अन्यथा नहीं। जीवन में केवल कुछ ही ऐसे अवसर होते थे जब उन्हें अपनी शक्ति को बहिर्मुख करने की आवश्यकता पड़ती थी। सन्तान हो जाने के पश्चात, उसके युवास्था प्राप्त कर लेने के पूर्व ही, वे गृहस्थाश्रम छोड़कर वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करते थे। आज कल जैसी भद्दी प्रथा उस समय प्रचलित नहीं थी कि किसी परिवार के पिता और पुत्र दोनों सन्तानोत्पत्ति के कार्य में प्रवृत्त रहते हैं। महाभारत काल में भारतवर्ष की जनसँख्या लगभग अठारह करोड़ थी, इस समय लगभग चालीस करोड़ है। यह हमारी काम-लोलुपता का ही फल है।

आज कल जीविका का प्रश्न सँसारव्यापी विकट समस्या हो रही है। स्वतन्त्र देशों ने कृत्रिम उपायों द्वारा इसके हल करने का कुछ आयोजन किया है; लेकिन उन्हें फिर भी पूरी सफलता नहीं मिल रही है।

भारतवर्ष में विदेशी सरकार होने के कारण यह प्रश्न और भी कठिन हो रहा है। जिस समय भारतवर्ष की जनसँख्या कम थी और भूमि के उर्वरा और रत्नगर्भा होने के कारण भोजन, वस्त्र तथा जीवन की अन्य आवश्यक सामग्री का कोई अभाव नहीं था, उस समय विवाह के शुभ अवसर पर वर-वधु को यह आशीर्वाद दिया जाता था कि वह दम्पति अनेक सन्तानों से सम्पन्न होवे। देश व समाज की उस समय की स्थिति व आवश्यकतानुसार ऋषियों तथा शुभचिंतकों का यह आशीर्वाद उनके लिए शुभ प्रवचन था। लेकिन आधुनिक परिवर्तित स्थिति में वैसी शुभ कामना दुःख का मुख्य कारण बन सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सँसार के इस अशांत वातावरण में, देश में भीषण गरीबी व अत्यधिक आबादी हो जाने से, यहां के युवक-युवतियों का युग के अनुसार यह मुख्य धर्म होगा कि वे अपने को विवाह-बन्धन से मुक्त रखने का प्रयत्न करें। यद्यपि विवाह-बन्धन से अपने को अलग रखना तथा आचरण पूर्ण-सँयमशील बनाना, चरित्र की पवित्रता की पराकाष्ठा है। मन और शरीर दोनों से ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना निस्सन्देह बहुत ही कठिन है, लेकिन शरीर और मन के होम किए बिना उसकी पूर्णता कदापि सम्भव नहीं हो सकती। इस सम्बन्ध में उसे इन विचारों को हृदयङ्गम करना चाहिए कि यदि मनुष्य और ऊपर उठना चाहता है तो उसके मन के अँदर स्त्री और पुरुष भाव की कोई पृथक् सत्ता न रह जांय। स्त्री और पुरुष की पृथक् सत्ता सृष्टि का कारण होती हैं, किंतु जिस समय प्रकृति पुरुष में विलीन हो जाती है उस समय उसकी सृजन-क्रिया का कार्य समाप्त हो जाता है। स्त्रियां प्रकृति रूपिणी हैं। अतः मनुष्यों के लिए यह कहा जाता है कि वे प्रकृति को देखते हुए उससे शनैः २ अलग हो जाने की कोशिश करें। इस सिद्धांत को ही सामने रखकर प्राचीनकाल में स्त्री-पुरुषों के लिए आश्रम-धर्म का आयोजन किया गया था। लेकिन आज भी यह जन-कल्याण के लाभ के लिए नवीन व उपयोगी है। अतः आधुनिक काल के स्त्री-पुरुषों को इस सिद्धांत का मनन करके उससे लाभ उठाना चाहिए। इससे एक दूसरा लाभ यह भी होगा कि ऐसे स्त्री-पुरुष सँसार की आर्थिक समस्या के प्रश्न को हल करने में सहायक होंगे।

इस कठिन विधान को समझने व उस पर अमल करने के लिए यह आवश्यक है कि इसमें हृदय और मन दोनों का पूर्ण सामाञ्जस्य हो। दोनों के मेल से कार्य आसान हो सकेगा। अन्यथा मनुष्य अपनी वास्तविक आवश्यकता को न समझकर या तो उसे बलात्कार से दमन करने की कोशिश करेगा या अनर्गल भोग-वासनाओं में डूब जायगा। दोनों ही दशाऐं असङ्गत हैं। चरित्र कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे किसी नियम अथवा नियन्त्रण में बांधकर सुधारा जा सकता है। किसी भावना को दमन करके जब कोई बात चरित्र में लाने की चेष्टा की जाती है तो उसका परिणाम हमेशा दुःख और क्लेश होता है।

चरित्र एक स्वाभाविक वस्तु है। इसको बिना किसी शर्त और दबाव के समझना चाहिए। जब हमारा मन किसी इच्छा के प्रति लालायित है तो हमें उन बातों को समझने की आवश्यकता है जो हमें उस बात को करने के लिए बाध्य करती हैं, न कि उसके लिए बाह्य-नियम और किसी प्रकार के नियन्त्रणकी। नियम और नियन्त्रण के आधीन होकर जो बात की जायगी उसमें कर्त्ता की इच्छा, प्रसन्नता और उसके विचार की कोई गम्भीरता न होगी। उस समय नियम और नियन्त्रण की शृँखला केवल कुछ समय के लिए उस इच्छा का दमन करेगी। किंतु अवसर के सन्मुख आने पर पहिले जितना इच्छा का दमन किया गया था उससे भी अधिक वेग के साथ उसकी पूर्ति की जायगी। अतः चरित्र सम्बन्धी बातें जबरदस्ती पालन की जाने वाली नहीं हैं।

मनुष्य जब अपने चरित्र में किसी बात को लाना चाहता है तो उसको उसकी ऊपरी बातों को समझने की चेष्टा न करनी चाहिए, बलकि वह उस इच्छा के रहस्य को समझे और उसकी गम्भीरता और आंतरिक स्थिति समझते हुए अपनी इच्छा का विश्लेषण करे। जिस बात को मनुष्य अपने चरित्र में लाना चाहता है उसके प्रति उसकी पूरी रुचि होनी चाहिए, क्योंकि पूरी रुचि से किसी बात को छोड़ने या अपनाने में वह प्राणी उस बात को भली प्रकार अपने चरित्र में ला सकेगा। चरित्र के सम्बन्ध में इन बातों का ध्यान रखते हुए जब कोई बात अपनाई जाएगी तो वह पूरी उतरेगी और उसका परिणाम भी अच्छा होगा। जिस विचार का जबरदस्ती दमन किया जाता है उसका कालान्तर में उभाड़ होता है, किंतु स्वाभाविक तरीके से जो काम किया जाता है उसके लिए प्रयास नहीं करना पड़ता। ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करने के इच्छुकों को इन मनो-वैज्ञानिक तथ्यों का जानना आवश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचर्य-व्रत के पालक के लिए भोजन की ओर भी ध्यान देने की जरूरत है। यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि जैसा भोजन किया जाता है वैसा ही शरीर और मन बना करता है। अतः ऐसा भोजन नहीं करना चाहिए जो अँदर के तन्तुओं को उत्तेजित करे। अधिक सब्जी, मोटे आटे की रोटी, थोड़ी मात्रा में दाल व चावल, ताजे फल, आधी छटांक तक घी और आध सेर तक दूध ब्रह्मचर्य पालकों के लिए उत्तम भोजन है। कुछ भूख रखते हुए भोजन समाप्त करना चाहिए। रात्रि में रोटी सब्जी का सादा भोजन ही सूर्यास्त तक कर लेना लाभदायक है। ब्रह्मचारियों के लिए रात्रि में दूध सेवन भी अहितकर है। बासी भोजन और मांस का सेवन कभी न किया जाय। गरम मसाला, मिर्च, गुड़, चीनी, नमक और तेल ब्रह्मचर्यपालन के लिए हानिकर हैं। अतः इन्हें भी त्याज्य समझना चाहिए। नमक का उपयोग छोड़ देना मुश्किल जरूर है, किंतु छोड़ दिया जाय तो विशेष हितकर है।

जो व्यक्ति स्वभाव और मन से ब्रह्मचर्य पालन करना चाहते हैं उनको भी इस व्रत का अनुष्ठान करना चाहिए, क्योंकि ब्रह्मचारी का मन और शरीर पवित्र रहना आवश्यक है मन का व्यापार शरीर के कार्य से कहीं कठिन है। मन में वासना के रहते किसी अनुष्ठान के प्रति स्थिर रहने के लिए यदि बलात्कार किया जायगा तो उसका परिणाम बहुत घातक होगा। इससे मनुष्य का चित्त उद्विग्न हो जाता है और जीवन की सरसता नष्ट हो जाती है। मन में किसी वासना को रखते हुए ऊपर से रोकथाम करके शरीर द्वारा उसके विरुद्ध आचरण करने पर प्राण-जगत् में बहुत बड़ा आघात पहुँचता है। वासना को रखते हुए जिस किसी बात को शरीर द्वारा साधक रोकना चाहता है उसका परिणाम ठीक उससे उलटा होता है। मन में उसकी वासना का बेग प्राण-जगत् में एक बलवान सँस्कार बन कर उसको सदा अनिष्ट पहुँचाया करेगा।

जैसाकि इस लेख में ऊपर लिखा जा चुका कि स्त्री की सत्ता का पुरुष के अँदर विलीन हो जाना ही ब्रह्मचर्य-व्रत की चरम सीमा है। लेकिन यह उच्च आदर्श इतना कठिन है कि इसके साधने में कोई ही विरला सफल हो सकता है। इससे नीचे उतर कर साधक को यदि इतनी सफलता भी मिल जाय कि स्त्री की आकृति उसके मन में बसकर उसे उद्विग्न न कर सके, तो यह भी थोड़ी सफलता नहीं है। स्त्रियों के प्रति राग छोड़ देने से ही यह सम्भव हो सकता है, अन्यथा नहीं। स्त्री का ख्याल रखते हुए उसके प्रति आकृष्ट हो जाना स्वाभाविक ही है।

(शेष फिर)

सफेद पत्थर अथवा लाल हृदय

एक प्रसिद्ध कालेज में एक प्रख्यात प्रोफेसर रहते थे। उनके पास नगर के मुख्य व्यक्तियों का एक डेपूटेशन आया, किसी धर्मस्थान के आंगन में सङ्ग-मरमर लगाने के लिए चन्दा लेने! प्रोफेसर साहेब ने पूछा:—

"पहले भी काम चलता ही जा रहा है सङ्ग-मरमर की क्या जरूरत है ?"

डेपूटेशन ने उत्तर दिया कि एक तो साधारण चबूतरे का फर्श सुन्दर मालूम नहीं होता, दूसरे जनता के पांव खराब हो जाते हैं।

"आप पहले जनता को तो सुन्दर बनालें" प्रोफेसर साहेब ने अहसास भरे शब्दों में कहा—"जिस जनता को धूप और वर्षा में नंगे पांव चलना फिरना पड़ता है, जिस जनता के अनेक सदस्यों को पेट भरकर रोटी नहीं मिलती, उसकी रूखी-सूखी, फीकी रोटी छीन कर, हृदयों का रक्त निचोड़ कर, आप उन्हें सफेद पत्थर सा बना रहे हैं, यदि आप मुझ से पूछते हैं तो जहां २ सङ्ग-मरमर लगा हुआ है, उसे बेच कर उसका अनाज लेकर भूखी जनता का पेट आपको भरना चाहिए।"

(प्रीतलड़ी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाल्टन योजना

ले० — श्री आचार्य हरभाई त्रिवेदी, भावनगर

[३]

डाल्टन शाला की कुछ विशेषताएं उपस्थित कर मैंने यह बताने का प्रयत्न किया है कि किस प्रकार विद्यार्थी अन्दर ही अन्दर स्वतन्त्रता और सहयोग के सिद्धान्त को ग्रहण कर सकते हैं। शिक्षकों तथा आचार्य की चर्चा से भी डाल्टन शाला की कुछ विचारणीय बातें आप समझगये होंगे। अब इस बात पर भी विचार कर लेना चाहिए कि डाल्टन योजना के मूलभूत सिद्धान्त क्या हैं तथा व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और सामूहिक-स्वातन्त्र्य में समन्वय कैसे किया जाये।

डाल्टन योजना का प्रथम सिद्धान्त स्वतन्त्रता है। जिस शाला में विद्यार्थी को स्वतन्त्रता नहीं दी जाती, वह शाला उसका कोई हित नहीं कर सकती। हमारी आज की शालाओं में विद्यार्थी के शरीर और बुद्धि को बुरी तरह बन्धन में जकड़ दिया जाता है। कक्षा-पद्धति समय-पत्रक का बन्धन, दूषित पाठ्यक्रम, परीक्षा का भूत, ये सब चीजें विद्यार्थी का कचूमर निकाल देती हैं जिससे न तो उसका शारीरिक विकास होता है और न बौद्धिक ही। इस परिस्थिति को बदलने का एक ही मार्ग है— स्वतन्त्रता। यदि शालाओं में विद्यार्थी को स्वतन्त्रता नहीं दी जायेगी तो उसकी स्वतन्त्रता विषयक दृष्टि धुंधली पड़ जायेगी और भावी जीवन में पराधीनता उसे बुरी नहीं लगेगी।

शालाओं में ही भावी स्त्री-पुरुषों का निर्माण होना है। अतः भावी समाज को अगर स्वतन्त्र और स्वाधीन बनाना है तो शालाओं में स्वाधीनता और स्वतन्त्रता को दाखिल करना होगा। आज की शाला का विद्यार्थी जितना स्वाधीन और स्वतन्त्र होगा, उतना ही भावी समाज स्वाधीन और स्वतन्त्र होगा। भावी समाज की समस्त रचना का आधार शालाएँ ही हैं। अतः शाला को आदर्श समाज का एक छोटा सा रूप बनकर रहना चाहिए। इस आदर्श समाज का प्रथम सिद्धांत स्वतँत्रता होना चाहिए। आदर्श समाज में अपने ढङ्ग से स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करते हुए भी प्रत्येक व्यक्ति समाज की स्वतन्त्रता व विकास का पोषक होगा। इस स्वतन्त्रता का प्रयोग शालाओं में ही शुरू होना चाहिए। शालाओं में ऐसी स्वतन्त्रता की शुरूआत करने का श्रेय डाल्टन योजना को है। शालाओं में विद्यार्थी के लिए सबसे बड़ा बन्धन समय पत्रक का था। इस बन्धन के पीछे अन्य अनेक बन्धनों का होना स्वाभाविक ही था। विद्यार्थियों को एक ही कमरे में बैठना पड़ता था, इस लिए बैठकों की व्यवस्था जड़ और निश्चल होती थी। बैठकों की इस व्यवस्था के कारण विद्यार्थियों के शरीर में पैदा हो जाने वाली भयङ्कर व्याधियों के आंकड़े जरूर चौंका देने वाले होंगे। बैठने की जड़ता के अलावा विद्यार्थियों के लिए निश्चित समय पर निश्चित विषयों का अनिवार्य रूप से पढ़ने का बन्धन अत्यधिक हानिकारक था। डाल्टन योजना ने समय-पत्रक को हटाकर विद्यार्थी को इन सब बन्धनों से छुटकारा दिलाया है।

डाल्टन योजना में समय-पत्रक के अनुसार चलने वाले स्कूलों की तरह घन्टे नहीं बजते। इस योजना में वद्यार्थी को अलग-अलग विषय पढ़ने के लिए सुबह से शाम तक न तो एक ही कमरे में बन्द होकर बैठना पड़ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और न अपनी इच्छा के विरुद्ध निश्चित समय में निश्चित विषय ही पढ़ना पड़ता है। विद्यार्थी शाला में आकर पहले अलग-अलग विषयों के स्वाध्याय (एक मास के निर्धारित काम) देखता है, तब अपनी रुचि-अरुचि के अनुसार काम करने का टाइमटेबिल बनाता है। इस योजना में विद्यार्थी जहां चाहे घूम फिर सकता है। अपनी इच्छानुसार अपने ही ढङ्ग से अपनी बुद्धि का विकास कर सकता है। उसे जब चाहे विश्राम करने और जब चाहे काम छोड़कर बैठने से कोई नहीं रोक सकता। इस योजना में कक्षाएँ नहीं होतीं। वहां अलग-अलग विषयों के लिए अलग-अलग प्रयोगमँदिर होते हैं जिनमें विद्यार्थी अपनी इच्छानुसार जब चाहे जा सकता है। किसी विषय से मन उकता जाने पर वह उसी विषय को पढ़ने के लिए बाध्य नहीं किया जाता। इस योजना में समस्त शाला की पुनर्रचना इस ढँग से की गई है कि विद्यार्थी अपना शारीरिक और बौद्धिक विकास स्वतन्त्रता पूर्वक बड़ी तेजी से कर सकता है। स्वतन्त्रता का सही अर्थ यही है। स्वतँत्र वातावरण वही हो सकता है कि जिसमें रहकर मनुष्य खुद-ब-खुद अपना विकास कर सके। डाल्टन योजना ने यही स्वतँत्र एवँ प्राणप्रद वातावरण विद्यार्थी को प्रदान किया है। डाल्टन शाला में विद्यार्थी के आस पास की परिस्थिति भी उसकी सहायक होती है। उसका साथी विद्यार्थी उसका सहायक होता है, उससे बड़ी उम्र का विद्यार्थी उसका सलाहकार होता है, शिक्षक सच्चे अर्थ में उसका मित्र और गुरु होता है। जो कुछ आज की शालाएँ नहीं कर सकी थीं, उसी को शालाओं में स्वतन्त्रता को स्थान देकर डाल्टन योजना ने सिद्ध कर दिखाया है।

डाल्टन योजना का दूसरा सिद्धांत है जिम्मेवारी। जिम्मेवारी का जो अर्थ आज हम लगाते हैं वह अर्थ यहाँ नहीं समझना चाहिए। आज कल हमारी शालाओं में दो प्रकार की स्थिति पाई जाती है--एक तो विद्यार्थी को किसी प्रकार की जिम्मेवारी न देना और दूसरी जिम्मेवारी तो देना किंतु उसे पूरा करने के लिए आवश्यक स्वतँत्रता न देना। ये दोनों स्थिति हानिकारक हैं। छोटी उम्र के विद्यार्थियों को जिम्मेवारी न देकर हमने समाज में गैरजिम्मेवार आदमियों की सँख्या को बहुत बढ़ा दिया है। यदि यह पूछा जावे कि समाज के किसी अङ्ग में सबसे बड़ी खामी क्या है, तो फौरन एक ही जवाब मिलेगा—जिम्मेवारी का सर्वथा अभाव। कितने ही सामाजिक कामों के अपूर्ण रहने अथवा बिगड़ने का भी यही कारण हो सकता है। ऐसी हालत में यदि व्यक्ति या समाज को कोई बात सीखनी है तो वह है जिम्मेवारी का सच्चा ज्ञान। समाज में दिखाई देने वाली गैरजिम्मेवारी का बीज हमारी आज की शालाओं में बोया जाता है। मैं पहिले ही बता चुका हूं कि भावी समाज का निर्माण शालाओं में ही हो सकता है। और जब तक ऐसा न होगा तब तक हम अपने विचार का आदर्श-समाज स्थापित न कर सकेंगे। अतः शालाओं में एक ऐसी योजना होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों में जिम्मेवारी का सच्चा ज्ञान पैदा हो। डाल्टन योजना ऐसी ही है।

आज तक हमारी शालाओं में जिम्मेवारी की कुछ भी तालीम नहीं दी गई है। शाला के किसी भी काम के लिए विद्यार्थी अपने को जिम्मेवार नहीं समझता। शाला की स्वच्छता, व्यवस्था, पाठ्यक्रम तथा परीक्षा आदि के लिए विद्यार्थी नहीं बलकि शिक्षक जिम्मेवार है। किसी कक्षा में यदि कोई शिक्षक गैर-हाजिर हो तो कक्षा के दैनिक काम के लिए विद्यार्थी जिम्मेवार नहीं होते। शाला की स्वच्छता और व्यवस्था के लिए काफी नौकर रखे जाते हैं, और ऐसे सख्त नियम बनाये जाते हैं जिससे कि विद्यार्थी उपरोक्त किसी भी काम में दखल न दे सके। परीक्षा का समय निकट आने पर पास होने के लिए विद्यार्थियों की अपेक्षा शिक्षक अधिक चिंतित रहते हैं। इन सब कमियों का कारण हमारे आज के विद्यार्थियों की गैरजिम्मेवारी है।

इस गैरजिम्मेवारी को दूर करने के लिए नियम—कायदे बनाए गए हैं, अनुशासन स्थापित किया गया है और इनको भँग करने वाले के लिए सजा रखी गई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इतना होने पर भी विद्यार्थी जिम्मेवार नहीं बनता। विद्यार्थी के शाला-जीवन में उत्पन्न हुई गैरजिम्मेवारी को वह बड़ा हो कर सामाजिक जीवन में भी ले जाता है। यही कारण है कि वर्तमान समाज गैरजिम्मेवार व्यक्तियों का समूह दिखाई पड़ता है। विद्यार्थी में जिम्मेवारी का भाव पैदा करने के लिए, कायदे-कानून और सजा के सिवाय हमें और कोई उपाय सूझता ही नहीं। हम विद्यार्थी को कोई ऐसा मौका ही नहीं देते जिससे कि वह अपनी जिम्मेवारी समझकर कोई काम करे। मौका न मिलने और नियमों से परेशान हो जाने के कारण विद्यार्थी गैरजिम्मेवार हो जाता है। ऐसे गैरजिम्मेवार विद्यार्थी में हम विश्वास पैदा नहीं कर सकते। सख्ती के कारण पैदा हुई गैरजिम्मेवारी अविश्वास पैदा करती है, जिससे विद्यार्थी अधिकाधिक गैरजिम्मेवार बनता जाता है। इस प्रकार, अविश्वास और गैरजिम्मेवारी का विषैला चक्र चारों ओर चलता रहता है जिसमें से न तो शिक्षक बाहर निकल सकता है और न विद्यार्थी ही।

हमारे यहां पाई जाने वाली दूसरी स्थिति है स्वतंत्रता हीन जिम्मेवारी। यह स्थिति तो पहली से भी अधिक खतरनाक है। यह ठीक है कि विद्यार्थियों को कहीं कहीं जिम्मेवारी दी जाती है, किन्तु इस जिम्मेवारी को निबाहने के लिए जिस प्रकार की स्वतन्त्रता उन्हें मिलनी चाहिए वह नहीं दी जाती। इसलिये सारी व्यवस्था में गड़ बड़ मच जाती है। ऐसी व्यवस्था में न तो नियमों का पूर्णतः पालन और न जिम्मेवारी का ज्ञान ही होता है। ऐसी परिस्थिति में विद्यार्थी जिम्मेवार बनने के बदले अधिक आलसी, ढोङ्गी और अधिकार का दुरुपयोग करने वाला बनता है। समाज में भी जहां-जहां ऐसे प्रयोग होते हैं, वहां-वहां प्रचलित व्यवस्था में काफी अंधाधुंधी फैल जाती है। किसीको जिम्मेवारी का काम तो सौंप दिया जाये किंतु उसे पूरा करने के लिये स्वतन्त्रता न दी जाए तो वह या तो परेशान होकर बैठ जावेगा या अधिकार हाथ में आने पर मनमानी करने लगेगा।

आज की शालाओं के मानीटरों की स्थिति कुछ अंश में इसी प्रकार की होती है। मानीटरों को कक्षा की जिम्मेवारी तो दी जाती है, किन्तु इस जिम्मेवारी को पूरा करने के लिये जो स्वतन्त्रता और साधन मिलने चाहिएं वे उन्हें नहीं दिये जाते। और मजा यह है कि दी गई जिम्मेवारी को पूरा न करने के लिये उन्हीं बेचारों को दोषी ठहराया जाता है। स्वतन्त्रता रहित जिम्मेवारी का नतीजा हमेशा आलस्य और स्वच्छंदता के रूप में हमारे सामने आता है। जब तक यह स्थिति शालाओं में कायम रहेगी तब तक जिम्मेवार समाज-निर्माण के हमारे सभी प्रयत्न विफल साबित होंगे।

डाल्टन योजना में विद्यार्थी को जिम्मेवारी के साथ साथ स्वतन्त्रता भी दी जाती है। इसके जो परिणाम सामने आए हैं, वे सचमुच आश्चर्यजनक हैं। इससे हमें पता चलता है कि छोटे से बालक में कितनी अद्भुत शक्ति छिपी रहती है। जिम्मेवारी और स्वतन्त्रता प्राप्त होने से विद्यार्थी किस प्रकार अपनी जिम्मेवारी को निबाहता है और किस प्रकार प्राप्त हुई स्वतन्त्रता को काम में लाता है, इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। विद्यार्थी को जिम्मेवारी देकर न तो किसी प्रकार पछताना ही पड़ता है और न स्वतन्त्रता स्वच्छंदता का रूप धारण करती है। स्वतन्त्रता और जिम्मेवारी का समन्वय होने के कारण विद्यार्थी के समस्त जीवन में आवश्यक संयम और जिम्मेवारी का यथार्थ ज्ञान पैदा हो जाता है। विद्यार्थियों के लिये स्वाध्याय (एक मास का निर्धारित कार्य) तैयार करके उनके काम की जिम्मेवारी उन ही पर डालदी जाती है। फिर अपना काम किस वक्त करना है और कितना करना है इसके लिए विद्यार्थी पूर्ण स्वतन्त्र रहता है। ऐसी जिम्मेवारी और स्वतन्त्रता ने विद्यार्थी को धोखा दिया हो, ऐसा कोई उदाहरण देखने में नहीं आया है। हां, जहां विद्यार्थी की स्वतन्त्रता पर थोड़ी-बहुत पाबन्दी लगा दी जाती है, वहां शिक्षकों को सावधानी रखनी पड़ती है कि विद्यार्थी मिली हुई जिम्मेवारी को ठीक-ठीक अदा करता है या नहीं। किन्तु डाल्टन योजना में इस प्रकार की स्वतन्त्रता और जिम्मेवारी के लिये स्थान नहीं है।

डाल्टन योजना ने सबसे पहिले स्वतँत्रता और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिम्मेवारी का द्वार खोलकर शिक्षा-क्षेत्र में एक अद्भुत चमत्कार कर दिखाया है। अब प्रगति करना हमारे हाथ की बात है। विद्यार्थी में, और उसमें छिपी हुई अनन्त शक्ति में विश्वास रखते हुए यदि उसे जिम्मेवारी और स्वतन्त्रता दी जावे तो आज की शालाओं का ढाञ्चा बहुत कुछ बदल जावे। आज तो शाला और विद्यार्थी को तथा विद्यार्थी और शिक्षक को एक दूसरे से कुछ सरोकार नहीं है। विद्यार्थी शाला को भूतावास और शिक्षक को राक्षस समझता है। इस स्थिति को बदलने के लिए स्वतन्त्रता और जिम्मेवारी को समस्त शिक्षा-योजना का आधार मानकर आगे चलना होगा। डाल्टन योजना का निर्माण इन्हीं सिद्धांतों को लेकर हुआ है। जहां-जहां इस योजना पर अमल किया जाता है वहां-वहां विद्यार्थी के मन में, शाला और शिक्षक के प्रति प्रेम-भाव की वृद्धि हुई है, पढ़ाई के विषयों की ओर उसकी अभिरुचि बढ़ी है और ऐसा प्रतीत होता है कि वह उनके द्वारा अपना वास्तविक विकास कर रहा है।

डाल्टन योजना का तीसरा महत्वपूर्ण सिद्धाँत है सहयोग। जहां स्वतन्त्रता और जिम्मेवारी है वहां व्यक्तिगत तथा समष्टिगत सहयोग पैदा हो ही जाता है। शाला को तो महज सहयोग के लिए आवश्यक अनुकूल वातावरण पैदा करना होता है। वर्तमान समाज को जितनी आवश्यकता स्वतन्त्रता और जुम्मेवारी की है उतनी ही सहयोग की भी है। किंतु आज तो सहयोग जैसी कोई चीज हमारे समाज में दिखाई ही नहीं पड़ती। आज तो चारों ओर स्पर्द्धा का बोल बाला है। इस स्पर्द्धा का कारण हमारी आज की शालाएें ही हैं। हमारी कक्षा व शिक्षा-पद्धित, परीक्षा, शालाओं में पलने वाली पराधीनता तथा जिम्मेवारी का अभाव आदि ऐसी चीजें हैं जिनसे स्पर्द्धा फलती फूलती है। ऐसे स्पर्द्धायुक्त वातावरण में सहयोग कैसे पनप सकता है? यदि नम्र सत्य कहने की इजाजत दी जाये तो मैं कहूँगा कि इस स्पर्द्धा ने विद्यार्थी-विद्यार्थी के बीच, शिक्षक-शिक्षक के बीच तथा शिक्षक और विद्यार्थी के बीच वैर-भाव का भयङ्कर बीज बो दिया है। इस ईर्षाग्नि से बचने वाला कोई व्यक्ति दिखाई नहीं देता। शाला से निकलकर समाज में भी यह स्पर्द्धा जा पहुँची है। व्यापारी और अन्य धन्धा करने वाले ही स्पर्द्धा करते हों, सो बात नहीं है। किंतु अब तो शाला-शाला में भी अँदर ही अँदर स्पर्द्धा घुस गई है। इस स्पर्द्धा से पैदा हुई ईर्षाग्नि मनुष्य को मनुष्यता से गिरा देती है। जब एक शाला की दूसरी शाला के साथ स्पर्धा हो जाती है तो शाला का शिक्षक घड़ी भर के लिए अपने शिक्षकपने को भी बालाये-ताक रखता हुआ दिखाई देता है। इस प्रकार जहां देखो वहीं स्पर्द्धा का राज है। ऐसी स्थिति में, शालाओं में सहयोग स्थापित करने के अनेक प्रयत्न करने पर भी आज कहीं भी सहयोग दिखाई नहीं पड़ता। सहयोग की बातकरना आज अरण्य-रोदन के समान है।

डाल्टन योजना ने सहयोग पैदा करने की सच्ची परिस्थिति उत्पन्न करके स्पर्द्धायुक्त वातावरण को नष्ट किया है। यद्यपि डाल्टन योजना परीक्षाओं और नम्बरों को नहीं मिटा सकी, फिर भी प्रयोगमन्दिर स्थापित करके उसने सहयोग को जन्म दिया है। निस्सँदेह यदि परीक्षा आदि न हो तो स्पर्द्धा को मिटाने और शुद्ध सहयोग स्थापित करने में अत्यधिक सुविधा हो। किंतु डाल्टन योजना में प्रयोगमन्दिर की रचना, स्वाध्यायों की व्यवस्था और रुचि-अरुचि के अनुसार इच्छित विषय पढ़ने की आजादी आदि कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं कि जिससे विद्यार्थी-विद्यार्थी के बीच व्यक्तिगत और सामूहिक सहयोग की भावना उत्पन्न हुए बिना नहीं रह सकती।

इस योजना में सहयोग के लिए भाषण या सूचना देने की जरूरत नहीं पड़ती। प्रयोग-मन्दिर में विद्यार्थी अलग-अलग या छोटी-छोटी टोलियों में एक दूसरे के साथ मिलकर काम करते हैं। नीचे की श्रेणी के विद्यार्थी शिक्षक को काम में लगा देखकर सहायतार्थ ऊँची श्रेणी के विद्यार्थियों के पास चले जाते हैं। ऊँची श्रेणी के विद्यार्थी स्वतन्त्र रूप से काम में सँलग्न होते हुए भी उनकी मदद करने में जरा भी सँकोच नहीं करते क्योंकि उनकी मदद करने से उनको एक प्रकार का आनन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सन्तोष होता है । एक प्रयोगमन्दिर में से दूसरे प्रयोगमन्दिर में जानेवाला विद्यार्थी या विद्यार्थियों का समूह एक-दूसरे के साथ काम करने के सम्बन्ध में सलाह-मशवरा करता है । अपनी जिम्मेवारी पूर्णतया अदा करने के लिए विद्यार्थी एक-दूसरे के साथ मिलकर काम करना जरूरी समझते हैं जिससे सच्चे सहयोग का जन्म होता है। इस प्रकार कुछ समय के बाद मिलकर काम करना विद्यार्थी का स्वभाव बन जाता है और एक बार सहयोग का मजा चखने के बाद वह यथा सम्भव स्पर्द्धा के जाल में नहीं फँसता । आज की शालाओं की स्थिति में अधिक फेरफार किए बिना ही यदि हम उनमें इस योजना को दाखिल करदें तो थोड़ा कष्ट उठाकर ही हम स्पर्द्धा के स्थान पर सहयोग का वातावरण पैदा कर सकते हैं ।

डाल्टन योजना के उपरोक्त ये तीन मुख्य सिद्धांत नवीन शिक्षा के प्राण हैं । इन तीनों सिद्धान्तों से निकलने वाले छोटे-बड़े उप-सिद्धान्तों से जब हमारी शालाओं का वातावरण भरपूर होगा, तभी सच्चे अर्थ में व्यक्ति तथा समाज का विकास होगा और तभी व्यक्ति और समाज में प्रेमपूर्ण तथा सम्मानपूर्ण मेल हो सकेगा ।

डाल्टन योजना को 'व्यक्तिवाद-पोषक-योजना' समझना भूल होगी । कोई भी सच्ची शिक्षा-योजना केवल व्यक्तिवाद पर खड़ी नहीं रह सकती । व्यक्ति को समाज का अनिवार्य अङ्ग बनकर रहना होगा । समाज के साथ मेल मिलाये बिना उसका काम चल ही नहीं सकता । किंतु इसका यह अर्थ हरगिज नहीं है कि समाज व्यक्ति का दमन करे और अपनी मनमानी चलावे । अतः शिक्षा योजना ऐसी होनी चाहिए कि जो व्यक्ति और समाज का समन्वय करा सके । डाल्टन योजना ऐसा ही समन्वय कराती है । एक दिन के कार्यक्रम का लगभग आधा भाग सामूहिक-शिक्षा को दिया जाता है । इसीलिए इस योजना को सम्मेलन भी कहते हैं । सामूहिक-शिक्षा की योजना के पीछे केवल शक्ति या समय की कमी का सवाल नहीं है । दिन के सभी भागों में विद्यार्थी को स्वतन्त्रता दे कर अपना विकास करने के साथ २ उसे इन सम्मेलनों द्वारा त्याग-भावना पैदा करने का मौका भी दिया जाता है । इन सम्मेलनों में काम करके ही उसे इसबात का पता लगता है कि समूह के साथ काम करने में कितना त्याग करना पड़ता है । शिक्षा में व्यक्तिवाद और समष्टिवाद का ऐसा सुन्दर समन्वय करने का श्रेय इसी डाल्टन योजना को है ।

डाल्टन योजना का प्रयोग करने वाले को इसके इन सिद्धांतों के ज्ञान के अलावा और भी बहुत सी छोटी-बड़ी व्यावहारिक बातों को जानने की जरूरत है । इस योजना में विद्यार्थियों और प्रयोगमन्दिरों के समय-पत्रक कैसे होने चाहिएं, प्रयोग-मन्दिर और विद्यार्थियों के प्रगतिपत्र (progress reports) क्या होते हैं, स्वाध्यायों का क्या मतलब है और उन्हें किस ढङ्ग से तैयार करना चाहिए आदि सभी बातों को अच्छी तरह जानने के लिए 'डाल्टन योजना' पर लिखी हुई किसी भी पुस्तक को पढ़ लेना चाहिए ।

किसी भी योजना का सार उसके अन्दर छिपे हुए तत्वों में होता है । ये तत्व मनोविज्ञान की नवीनतम विचारधारा और जीवन-विज्ञान के गहरे अभ्यास पर अवलम्बित होते हैं । इसलिए जरूरत है तत्वों के समझने की क्योंकि पद्धति तो तत्वों के पीछे २ चलती है। अस्तु, मैं यह आग्रह नहीं करता कि कल ही से माध्यमिक शालाओं में डाल्टन योजना पर अमल किया जावे । मैं खूब समझ सकता हूं कि अपनी वर्तमान स्थिति और मर्यादाओं के कारण हम इस योजना की बहुत सी बातों को नहीं अपना सकते । मैं तो केवल इतना ही चाहता हूं कि हम इस योजना की तह में छिपे तत्वों को पहचानें और यदि सम्भव हो तो उनके अनुसार अमल करें ।

मेरी दृढ़ धारणा है कि हमारी आज की माध्यमिक-शालाएँ आदर्श-विहीन हैं । यह स्थिति अब एक लम्बे अर्से तक कायम नहीं रह सकती । अतः समय आ गया है कि हम अपनी माध्यमिक-शिक्षा का पुनर्निर्माण करें ।

(पूर्ण)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसन्नता

'रहबर'

सुबह होते ही गडरिये ने रेवड़ को बाड़े से बाहर निकाला और जङ्गल की तरफ ले चला।

रेवड़ में एक बकरा बड़ाही शरारती और चञ्चल था। कभी इधर कूद जाता, कभी उधर फांद जाता, कभी दीवार की ओर उछलता, कभी चबूतरे पर चढ़ता। कभी किसी बकरी को टक्कर मारता और कभी किसी मेमने से छेड़-छाड़ करता। सारांश यह कि वह रेवड़ में गड़बड़ फैलाने का कारण बना हुआ था।

चरवाहा उसके हाव-भाव व हरकतें देखता और चिढ़ता था। किन्तु बकरा बार-बार मना करने पर भी उद्दण्डता से बाज न आता था। आखिर चरवाहे ने झुंझला कर कहा, "ओ, कम्बख्त बकरे! किस लिए इतना उछलता-कूदता है? जानता नहीं कि मौत तेरे सिर पर मंडरा रही है। मसल मशहूर भी है कि 'बकरे की मां कबतक खैर मनाएगी।'

यह सुन कर बकरा हँसा, खूब हँसा और इतना हँसा कि चरवाहे को उस पर गुस्सा आगया और लकड़ी उठा कर उसे मारने दौड़ा। इस पर बकरे ने कहा:—

"भाई, चरवाहे! किसलिए बिगड़ता है? क्यों मौत की धमकी देता है? देख, हम मनुष्य नहीं कि मृत्यु के पहले ही मृत्यु के ग़म से मर जाएँ। हम मनुष्य की भांति—क्या भरोसा है जिंदगानी का, आदमी बुलबुला है पानी का—आदि निराशा भरे राग नहीं अलापते। हम अपने आप को हड्डी, मांस और रक्त से बना मजबूत शरीरधारी जीव समझते हैं। हम पानी के बुलबुले की तरह फूट कर व्यर्थ ही अपने शरीर को खो नहीं देते हैं, बल्कि मर कर भी तेरा या तेरे सजातियों का पेट भरते हैं, अथवा किसी पीर फकीर या देवी-देवता की भेंट चढ़ते हैं। सारांश यह कि हम किसी न किसी के मनोरञ्जन के लिए जीवन बलिदान करते हैं। फिर बताओ तो हमें मरने में रञ्ज किस बात का है? यह कहावत कि "बकरे की मां कबतक खैर मनाइगी" मानव-कल्पना मात्र है। वरना हमारी मां तो हमें जनकर सदैव प्रसन्न रहती है। इन्सान ने खुद तो जीवन को पहचाना नहीं किन्तु वह समझता है कि दूसरों ने भी उसे नहीं समझा है। तभी तो मनुष्य के बच्चे बचपन से ही सीखने लगते हैं:—

न घर मेरा न घर तेरा, चिड़िया रैन बसेरा।

यद्यपि हम मनुष्य नहीं, पशु ही हैं, किन्तु हमारे रोम-रोम में जीवनोन्माद भरा हुआ है। हमें मा के दूध, वृक्षों के पत्तों और हरी-हरी घास से जीवन रस मिलता है। हम 'न घर तेरा, न घर मेरा' के कायल नहीं होते, हम तो जब तक जीते हैं इस संसार—विस्तृत संसार को अपना घर समझते हैं........।

मेरे मन में उमङ्ग उठती है कि दौड़ता हुआ संसार के इस छोर से उस छोर तक जा पहुंचूं; हृदय हिलोरें लेता है कि उछल कर इस नीले आकाश को चूमलूँ, तीव्र उत्कण्ठा होती है कि उड़ कर इस वृक्ष की उस हरी-भरी टहनी पर जा बैठूं और उस चिड़िया की तरह चहचहाऊँ!"

यह कहकर बकरे ने एक छलांग लगाई और रेवड़ के इस सिरे से उस सिरे पर जा पहुँचा। मस्ती में झूमता, सीना तनाये आनन्द से फूला जा रहा था वह रेवड़ के आगे-आगे। न मौत की परवाह, न परलोक की चिन्ता। प्रसन्नता में ही उसने जीवन की, सच्चे जीवन की झांकी देखी; इसे ही जीवन का लक्ष्य समझा। चरवाहा तृषित आंखों से उस आनन्दोल्लसित बकरे की ओर देख रहा था और चकित व विस्मित था उसकी बातों व विचारों को सुनकर!

—०—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी जापान यात्रा

ले०—'एक यात्री'

[३]

सवारियों और आवागमन के साधन—

सन् १८७२ से पहिले इस देश में भी यात्रा के लिए बैल गाड़ी, घोड़ा गाड़ी, पालकी, रिक्शा आदि सवारियों का प्रचार था, तथा पैदल यात्रा करने की भी प्रथा थी। इस प्रकार, एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने में समय अधिक लगता था। और जान-माल का भी खतरा रहता था। जापान में सन् १८५२ में कोमोडोर पैरी नामक अमरीकन ने यूकोहामा के निकट समुद्र के पास सबसे पहली रेलवे लाइन बनवाई, जिसका उद्घाटन महाराजा मैत्री ने किया। इसके पश्चात् सन् १८७२ में एक अङ्गरेज इञ्जिनीयर की देख रेख में दूसरी रेलवे लाइन योकोहामा से टोकियो तक बनाई गई। सन् १८७४ में एक और लाइन कोबे से ओसाका तक बनाई गई। और बाद में तो अनेक लाइनें खुल गईं।

सन् १९०३ तक तो ये सब रेलवे लाइनें प्राइवेट कम्पनियों ने अपने धन और प्रबन्ध से चलाईं। किंतु बाद में जापान सरकार ने छत्तीस करोड़ रुपया देकर इन सबका प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया। इस समय इस देश में सरकारी रेलवे लाइन की लम्बाई ९५०० मील के लगभग और कम्पनियों की रेलवे लाइन की लम्बाई ६१०० मील के लगभग है। लाइन की चौड़ाई ३ फिट ६ इञ्च और चाल ४० से ५० मील प्रति घण्टा है। प्रायः देश के प्रत्येक भाग में रेलगाड़ी चलती हैं। तीसरे दर्जे का किराया भारतवर्ष के समान एक पैसा प्रति मील के हिसाब है। दूसरे दर्जे का किराया तीसरे दर्जे से दुगुना और पहिले का तीन गुनः होता है परन्तु इन दर्जों की बनावट में ज्यादा अँतर नहीं होता है। हरेक दर्जे की गाड़ी में गद्देदार सीट होती है जोकि दो दो सवारियों के लिए अलग २ होती है। प्रत्येक एक्सप्रेस गाड़ी के साथ भोजन व सोने वाली गाड़ी लगी रहती है। सोने वाली गाड़ी के लिए किराये के अतिरिक्त कुछ और देना पड़ता है। पहाड़ी प्रदेश होने के कारण यहां की रेल यात्रा रमणीय प्रतीत होती है। किसी-किसी लाइन पर गाड़ी को अनेक लम्बी २ टनलों (सुरङ्गों) में से गुजरना पड़ता है जो कि बड़े २ पहाड़ों को काटकर बनाई गई हैं। इससे यहाँ के इञ्जिनीयरिङ्ग विज्ञान की उन्नति का पता लगता है। इन सुरङ्गों वाली रेलवे लाइनों के बनने से हर कोई यात्री समस्त जापान का भ्रमण सुविधा पूर्वक कर सकता है।

रेलों के अतिरिक्त किसी २ भाग में सौ २ मील लम्बी ट्रामवे चल रही हैं। कोबे, ओसाका, योकोहामा, टोकियों आदि बड़े २ शहरों के बीच रेलवे व ट्रामवे दोनों चलती हैं, जो कि बहुधा प्रति दस मिनट के अँतर से आती जाती रहती हैं। बड़े २ स्टेशनों पर यात्रियों की सुविधा के लिए आने जाने वाली गाड़ियों का समय लाउड स्पीकर (Loud Speaker) द्वारा थोड़े थोड़े समय पर सुनाया जाता रहता है। स्टेशन पर चाहे कितनी ही भीड़ होवे, किंतु धक्के-मुक्के की कम ही नौबत आती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, क्योंकि जब तक उतरने वाली सब सवारियां डब्बे से बाहर न आजावें तब तक चढ़ने वाली सवारियां अँदर जाने का प्रयत्न ही नहीं करतीं। क्या ही अच्छा हो कि हम भारतवासी भी रेल में उतरते-चढ़ते समय इस नियम का पालन करें।

शहरों तथा बड़े-बड़े कस्बों में एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए ट्रामवे, बस और टैक्सी बहुत मिल जाती हैं जिनका किराया बहुत कम होता है। टैक्सी का किराया प्रत्येक शहर में अलग-अलग होता है। बहुत से स्थानों पर मीटर लगी टैक्सियाँ चलती हैं अत यात्री मिटर देखकर किराया दे देते हैं, और किराया कम ज्यादा करने के लिए झगड़ा नहीं करना पड़ता संक्षेपतः यहां सवारियों में यात्रा करनी सुगम, सस्ती और आनन्दप्रद होती है। किसी-किसी स्थान पर पहाड़ियों पर चढ़ने के लिए Cable Car अथवा Rope Way (लाठवाली गाड़ियां या झूले) जैसी सवारियां होती हैं; जिन पर चढ़ना ही नहीं उन्हें देखना भी आश्चर्यजनक प्रतीत होता है। थोड़े से समय में जापान में आवागमन के साधनों की इतनी उन्नति होना देशवासियों की बुद्धिमत्ता कार्यतत्परता और सङ्गठन शक्ति का सूचक है।

इसके अतिरिक्त जापान में रेडियो का प्रचार इतना अधिक है कि कोई ग्राम ऐसा नहीं कि जहां रेडियो न लगे हों। इसके द्वारा बच्चों को शिक्षा दी जाती है, गायन कला सिखाई जाती है, भाषण सुनाये जाते हैं, देश विदेश की प्रत्येक नवीन व महत्वपूर्ण सूचना बतलाई जाती है। इस प्रकार कोई भी सन्देश या अपील देश के एक कोने से दूसरे कोने तक सब के कानों में पहुँचादी जाती है और आवश्यकता पड़ने पर कोई भी काम देशवासियों से बहुत शीघ्र कराया जा सकता है। रेडियो का मूल्य कम होने और छोटे से देश में २० के लगभग ब्राडकास्टिङ्ग स्टेशन होने के कारण प्रत्येक घर और दुकान में एक एक रेडियो का होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

डाक, तार और टेलीफोन—यहां पर एक तोला तक वजन वाले लिफाफे का मूल्य ४॥ पाई तथा कार्ड का २॥ पाई है। ५ तोला तक वजन वाले अखबार पर एक पाई, छपे हुए कागजों व नमूने आदि के पैकेटों पर ८ तोला तक ३ पाई डाक महसूल लगता है। रजिस्ट्री के लिए सवा आना, विदेशी डाक के लिफाफे पर सवा आना और हवाई डाक के लिफाफे पर ५ आने के टिकट लगते हैं। तार और टेलीफोन पर साधारणतया चार आने लगते हैं टेलीफोन से तार की दर अधिक होने के कारण टेलीफोन का ही प्रयोग अधिक किया जाता है। डाक-तार आदि की इतनी सस्ती दरें देखकर हमें आश्चर्य ही होता है क्योंकि हमारे यहां इनकी दरें बहुत अधिक हैं।

भौगोलिक दशा तथा प्राकृतिक दृश्य—सन् १९३० की जन संख्या के अनुसार कोरिया, फारमूसा और दक्षिणी सँघालियन को मिलाकर जापान राज्य की आबादी ९०३९६०४३ थी। इसकी लम्बाई ५०°-५६" उत्तर दशांश से २१°-४५" दक्षिण दशांश तक २९००-मील और चौड़ाई २०० मील है। इस समस्त द्वीप-समूह के समुद्री किनारे की लम्बाई १९१०७ मील और क्षेत्रफल १७५२६५ वर्ग मील है। अकेले जापान का क्षेत्रफल १४७४४१ वर्ग मील है। यदि इसमें कोरिया देश का ८५२२८ वर्ग मील क्षेत्रफल और मिला दिया जावे तो जापान राज्य का क्षेत्रफल २६०४९३ वर्ग मील हो जाता है। सम्पूर्ण देश का अधिकांश भाग पहाड़, नदी और झीलों से ढका है। शेष भाग का ७० प्रतिशत ऊँची भूमि तथा ३० प्रतिशत नीची भूमि है। नदियों के पास की नीची भूमि में अधिकतर चावल ही होता है।

इस देश में प्राकृतिक झरनों की भरमार है। बहुत से झरनों का जल रासायनिक दृष्टि से मनुष्य की आरोग्यता के लिए बड़ा उपयोगी है। वहां पर पहाड़ियों से छोटे-बड़े लगभग ११०० झरने निकलते हैं, जिनमें से अधिकांश ऐसे स्थानों पर हैं कि जहां आने-जाने का समुचित प्रबन्ध नहीं है। वहां के कुछ प्रसिद्ध झरने हैं—नौबीरोवात्सु, क्यातात्सु इकाओ, मियाकोश्ता आतामी, अतीमा, विप्पु दोगो आदि, जिनका पानी ८०° से २२६° फार्नहाइट तक गर्म होता है। इन झरनों के निकट यात्रियों के ठहरने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े-बड़े होटल बने हुए हैं जिनके स्नानागारों में गर्म व ठण्डे जल के नल लगे रहते हैं। यात्री ऋतु अनुसार जैसे जल से भी चाहे स्नान कर सकता है। यह जल आरोग्य-वृद्धि तथा कई प्रकार के रोगों के लिए बड़ा ही उपयोगी माना जाता है। इसके अतिरिक्त पहाड़ी स्थान होने के कारण, यहां का जलवायु भी स्वास्थ्यकर होता है। अतः अनेकों विदेशी यात्री तथा जापानी भी; वायुपरिवर्त्तन तथा स्वास्थ्य लाभ के लिए ग्रीष्म-ऋतु में यहां आकर ठहरा करते हैं। शनिवार और रविवार को इन स्थानों पर बड़ी भीड़ रहती है।

जापान राज्य की ९०३९०४३ जन-सँख्या में स्त्री-पुरुषों की सँख्या का अनुपात १००:१०२.१ है। कुल जन-सँख्या में से कोरिया में २२०५८३०५, फारमूसा में ४५९२५३७, दक्षिणी सँघालियन में २९५१९६ और जापान में ६४४५००८५ आदमी रहते हैं। जापान में स्त्री-पुरुषों की सँख्या का अनुपात १००:१०१.९ है। वहां पर ४३८ मनुष्य प्रति वर्गमील के हिसाब से आबादी है। घनी आबादी के लिहाज से सँसार में जापान का नम्बर चौथा है। बेलजियम में ६३५, हालैण्ड में ५५६ और इंगलैण्ड में ४८८ मनुष्य प्रति वर्गमील आबादी है।

राज्य कर्मचारी और पुलिस विभाग—

यहां के राज्य-कर्मचारी अपने को जनता का स्वामी अथवा अधिकारी न समझकर उसका सेवक समझते हैं। उनका वेतन भी अधिक नहीं होता। भारतवर्ष से तो वहां के कर्मचारियों का वेतन कदाचित तिहाई होता है। वहां निम्न व उच्च श्रेणी के कर्मचारियों के वेतन में अधिक अन्तर नहीं होता, कारण कि उन सब को साधारण ही जीवन व्यतीत करना पड़ता है। हमारे यहां के राज्य-कर्मचारियों की तरह उन्हें व्यर्थ की शान-शौकत की आवश्यकता नहीं होती। वहां पर रिश्वत का भी बहुत कम प्रचार है। रिश्वत लेने का पता लगने पर सरकार की ओर से लेने और देने वाले—दोनों को कठोर दण्ड दिया जाता है। सुना गया है कि हाल ही में एक बड़े कर्मचारी को ६५००० येन—जोकि उसने अपने पदाधिकार काल में रिश्वत के रूप में लिए थे, जुर्माना तथा २ वर्ष कैद का दण्ड दिया गया था। एक रिश्वत देने वाले को भी ६ मास कैद का दण्ड दिया गया था।

प्रत्येक भाग का कर्मचारी अपना काम हँसी-खुशी और उत्साह के साथ करता हुआ प्रतीत होता है। वहां के सभी लोगों के चेहरों पर मुस्कराहट और हँसी के के सिवाय क्रोध शोक आदि का चिन्ह तक नहीं दिखाई देता है। आप किसी कर्मचारी से अथवा अन्य व्यक्ति से कोई प्रश्न कीजिए। वह भली प्रकार सोच-विचार कर बड़े मधुर शब्दों में सिर झुकाकर उत्तर देगा। स्त्रियां और बच्चे भी दूसरों से इसी प्रकार का वर्ताव करते हैं। पुलिस के कर्मचारिओं की कार्य-तत्परता सराहनीय है। देश में विद्रोह, लड़ाई-झगड़े दबाकर शाँति स्थापित करना उसका प्रथम कर्त्तव्य है। चोरी आदि का पता लगाना उसके बांये हाथ का काम है। सुना जाता है कि चोर का नाम चाहे न बताया जावे परन्तु चोरी का पता अवश्य लगा लिया जाता है। चोरों को इस प्रकार की यँत्रणाएँ दी जाती हैं कि जिनको सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। चोर को गर्म कमरे में बन्द करके अथवा अन्य प्रकार से यातना देकर चोरी छुड़ाने का प्रयत्न किया जाता है। किंतु इससे यह न समझा जावे कि यहां के पुलिस वालों में मनुष्यता ही नहीं होती। यदि कोई आदमी उनसे कोई बात पूछे अथवा किसी प्रकार की सहायता माँगे तो वे सहर्ष उस काम को करने के लिए तत्पर रहते हैं। पुलिस का प्रबन्ध ऐसा पूर्ण है कि कोई विदेशी यात्री जहां भी जावे, जो कुछ भी करे, उस सब का कच्चा चिट्ठा पुलिस के पास फौरन पहुंच जाता है आप किसी जगह जाइए, या तो पुलिस स्वयँ पूछकर आपका पता मालूम करेगी अथवा जहां आप जाते हैं या ठहरते हैं वहां वालों के द्वारा आपके विषय में पूरा-पूरा विवरण प्राप्त कर लेगी। यदि आप कई कार्यालय देखते हैं अथवा और कोई कार्य करते हैं, तो पुलिस को पहले से ही इसका पूरा पता रहता है। पुलिस वालों की इतनी तीव्र दृष्टि होने के कारण ही विदेशियों को जापान में जाने तथा कोई राजनैतिक महत्व का काम करने में कुछ भय सा लगता रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु जब तक आप देश के नियमों के अनुसार अपना कार्य कर रहे हैं, आपको पुलिस आदि से किसी प्रकार का भय नहीं। ऐसी अवस्था में पुलिस और दूसरे राज्य-कर्मचारी हर प्रकार से आप के काम में सहायता देना अपना कर्त्तव्य समझेंगे। राज्य-कर्मचारियों, विशेषतः पुलिस के सुप्रबन्ध के कारण ही जापान में घरों तो ताला आदि लगाने की प्रथा नहीं है। कोई व्यक्ति अपना, सामान या नकदी आदि बिना ताले में बन्द किये बाहर ही रखा छोड़ कर चाहे कहीं चला जावे, उसके चोरी जाने का भय बहुत कम है। जिस किसी को कोई पड़ी हुई या किसी की गुम हुई वस्तु मिल जाती है, उसे वह पुलिस में जाकर जमा करा देता है। आप अपने हाथ से कोई वस्तु किसी को दें तो वह सहर्ष स्वीकार कर ली जाती है। किन्तु बिना पूछे किसी की वस्तु उठाना, जापान में चोरी समझा जाता है। दरिद्रता होते हुए भी यहां के निवासियों की यह धारणा अति सराहनीय है। पुलिस का प्रबन्ध भी प्रशंसनीय है। किंतु यह आश्चर्य की बात है कि बाररूम आदि का प्रबन्ध करने में वह क्यों आना कानी करती है. यह भी तो ऐसी संस्थाएं हैं जहाँ पर प्रजाजन राजकीय नियमों का उल्लङ्घन कर दुराचार करते हैं।

राज्य-प्रणाली—जापान का राज्य-प्रबन्ध १२ भागों में विभाजित है जिनमें से प्रत्येक विभाग का कार्य-सञ्चालन एक-एक मन्त्री करता है। इन १२ मन्त्रियों और प्रधान को मिला कर के बिनेट बनती है। ये १२ विभाग इस प्रकार हैं: (१) विदेशी मामलों के लिये। (२) देशान्तर-गत मामलों के लिये। (३) धन सम्बन्धी। (४) युद्ध सम्बन्धी। (५) सामुद्रिक सेना व जहाज आदि। (६) न्याय। (७) शिक्षा। (८) कृषि और जङ्गलात। (९) व्यापार और शिल्प। (१०) डाक और तार। (११) समुद्रपार वाले मामले। (१२) रेलवे। प्रत्येक मन्त्री के ऊपर अपने विभाग का कार्य व उत्तरदायित्व होते हुए भी उसका मासिक वेतन ६०००) वार्षिक के लगभग बताया जाता है, जब कि भारतवर्ष में इन्हीं पदों पर काम करने वालों का वेतन इससे ५-६ गुना अधिक होता है। ये लोग अपने उत्तरदायित्व को भली प्रकार समझते हुए तथा राज्यसेवा को धर्म मानते हुए अपना कार्य करते हैं। इनमें से अधिकाँश बड़ी-बड़ी जायदादों के स्वामी अथवा कम्पनियों व कारखानों के सञ्चालक होते हैं। ये लोग इस प्रकार के उत्तरदायित्व पूर्ण पदों को देश-सेवा की दृष्टि से स्वीकार करते हैं तथा अपने अनुभव के अनुसार उन्नति के उपाय जनता के सामने रख कर उसका पथप्रदर्शन करते हैं। (क्रमशः)

देश के युवको! सुनो!!

सुनो राष्ट्र की नवीन शक्तियो! सुनो ओ युवको! जगो उठ खड़े हो—संसार को अपने सौंदर्य से, अपनी माधुरी से नहला देने के लिए! स्वतन्त्रता की गति में खड़े हो और विजय को स्फूर्ति में प्रयाण करो। दलित मानवता की मुक्ति तुम्हारे अन्दर छिपी है! पतित, पद-दलित तुम्हें देख रहे हैं। मिलकर उनके उद्धार के लिए खड़े हो जाओ! ओ राष्ट्र के हजारों ईसा और बुद्ध! तुम्हें मानवता की पीड़ा को आश्वासन-मय भुजाओं में बांधना चाहिए। जगो, उठो और गरीबों, पिछड़े पथिकों, दलितों और भूपतित जनों के कन्धों से कन्धा मिलाकर खड़े हो जाओ!। तुम्हें प्रत्येक वस्तु विनय-पूर्वक ग्रहण करनी होगी, तुम्हें प्रत्येक काम सेवा-भाव में ओतप्रोत होकर करना होगा! तुम्हारे लिए गोरी और रङ्गीन जातियों में कोई भेद न होना चाहिए; तुम्हारे सामने खास ईश्वरीय ब्राह्मणों और परित्यक्त अछूतों में कोई अन्तर न पड़ना चाहिए। सेवा तुम्हारा साधन, प्रेम तुम्हारा लक्ष्य हो! दूसरों के लिए सब कुछ सहो; अपने लिए किसी को दुःखी मत करो। मुक्ति तुम्हारी कीर्ति बने, स्वतन्त्रता तुम्हारी आत्मा बने! सर्व-मय, सर्वग्राही प्रेम तुम्हारा अस्त्र हो।

—साहित्यभूषण श्रीरामनाथलाल 'सुमन'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"केवल दो लंगोटी और एक कम्बल"

एक दिन वह मिला और उसने केवल इतना कहा कि "मैं बिना रुपये पैसे की मदद लिए, आज तीन साल से देशाटन कर रहा हूं। मेरा एकमात्र ध्येय आत्म-चिंतन करना है।"

कितने जीवट का वह आदमी है ? इतनी लंबी यात्रा करली उसने "केवल दो लंगोटी और एक कंबल" के सहारे। इन्हीं दो चीजों को ले कर उसने सारे उत्कल प्रांत की खाक छान डाली, वहाँ के जङ्गल निवासियों के बीच में वह निर्भीक होकर घूमा। देहातों में वह कितना घूमा-फिरा और देहातियों के बीच वह कितने समय रहा, इसकी गिनती नहीं की जा सकती। सात सौ तीस दिन वह बिना किसी प्रकार की सहायता के उत्कल प्रांत में घूमा है।

उत्कल प्राँत छोड़ वह मध्यप्राँत की ओर चल पड़ा और घूमता २ एक दिन वर्धा भी आ पहुंचा। देखने में कितना हंसमुख और खुशमिजाज ? तन्दुरुती का क्या कहना ? वह केवल एक दिन हमारे यहाँ ठहरा और दूसरे दिन पैदल ही चल पड़ा बंबई प्रेसीडेन्सी की ओर लंबी सड़क पर। पास कौड़ी छदाम नहीं। 'कहाँ जा रहे हो' पूछने पर उत्तर दिया 'अपने मकसद की ओर' और हंसता हुआ हमसे विदा हो गया कन्धे पर कंबल डाले और एक हाथ में जलपात्र लिए।

मनुष्य में साहस और आत्मविश्वास होना चाहिए। केवल ये दो चीजें पास में होने पर वह संसार में क्या नहीं कर सकता ? तीन साल से परिव्राजक होकर वह सच्चा ज्ञान हासिल कर रहा है। खाना मिल गया, खालिया; जमीन मिल गई, सो-लिया। ऐसा ही व्यक्ति दुनिया का पथ-प्रदर्शन कर सकता है, लोगों को सच्ची रोशनी दे सकता है। अपने प्राणों का मोह छोड़, अपनेपन को तिलाँजली दे दुनिया में क्रान्ति पैदा कर सकता है।

बाल-बच्चों के मोह में फंसे हुए हम लोग आजादी नहीं पा सकते। हमें अपने अधिकारियों की खुशामद करनी पड़ती है, आत्मा को बेचकर काम करना पड़ता है, अपने मालिक को खुश करने की खातिर झूठ बोलना पड़ता है, तब कहीं जाकर दोनों वक्त रोटी मिलती हैं।

यदि हम जीवन का सच्चा सुख - आजादी हासिल करना चाहते हैं तो हमें "केवल दो लंगोटी और एक कंबल" का आदर्श सामने रख, धनवानों और सत्ताधीशों की गुलामी तर्क करनी होगी। देश के आजादी पसन्द लोगों को आज उसी सन्यासी की तरह अपना जीवन बनाना पड़ेगा। बिना इसके आजादी हासिल नहीं हो सकती। आजादी के दीवाने जब "केवल दो लंगोटी और एक कंबल" अपनी सैनिक पोशाक बनाकर देशसेवा के लिए कटिबद्ध हो जावेंगे तभी आजादी उनके पैरों को चूमेगी। आजादी पसन्द लोगों के लिए, केवल वही दो चीजें दुनिया को नए सांचे में ढालने के लिए काफी हैं।

—प्रभुदयाल विद्यार्थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इङ्गलैंड की राज्य-व्यवस्था का इतिहास

[सन् १०६६ से ११३५ तक]

ले० —श्री गिरिराजजी बी० ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

[६]

सन् १०६६ में विलियम ने अङ्गरेजों को सेन्लैक की लड़ाई में हराया। मगर वह देश को जीत लेने के कारण ही बादशाह न हुआ। उसने राज-सभा से बादशाह होने के लिए अपना चुनाव कराया। यह उसकी बड़ी अक्लमन्दी थी। इससे उसने अपने साथियों को बता दिया कि वह उनकी ही अनुकूलता के अनुसार राज नहीं कर सकता; बल्कि उसको अङ्गरेजों के हितों का भी ख्याल रखना जरूरी है। यह बतलाने के पहिले कि विलियम ने राज्य-व्यवस्था में क्या-क्या फेरफार किया, यह जान लेना जरूरी है कि यूरोप में जमींदारी पद्धति (feudalism) की शुरुआत किस तरह से हुई, वहां वह किस तरह की थी, और इँगलैण्ड में उसका क्या स्वरूप हो गया?

हम देख चुके हैं कि जरमनी और दूसरे उत्तरीय देशों में रहने वाली जातियां स्वतन्त्रता प्रिय थीं। इन जातियों का हर एक आदमी देश-रक्षार्थ लड़ाई में हर समय अपने सरदार का साथ देने को तैयार रहता था। अतः जब इन जातियों ने रोमन साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया, तो जीते हुए प्रदेशों की व्यवस्था करने, उनको अपने आधीन रखने और दूसरी जातियों के आक्रमणों से अपनी रक्षा करने के लिए एक प्रकार की जमींदारी-पद्धति जारी हुई, जो कि इतिहास में feudalism के नाम से मशहूर है।

जमींदारी पद्धति:—इस पद्धति में बादशाह सब से बड़ा जमींदार होता था जिसकी मिलकियत सारा देश था। बादशाह सारे देश को बड़े-बड़े जमींदारों को जागीरों में बांट देता था, और यह बड़े जमींदार अपनी जमीनों को दूसरे छोटे जमींदारों में बांट देते थे। फिर यह छोटे जमींदार अपने से छोटे जमींदारों को जमीनें बांट देते जो कि उसे काश्तकारों को बोने के लिए दे देते थे। हर एक वर्ग जिससे जमीन लेता था उस ही के लिए वफादारी की कसम खाता था। उससे और ऊपर वाले वर्ग से उसका कोई सम्बन्ध नहीं रहता था। बड़े जमींदारों के जागीरदारों का बादशाह से कुछ सम्बन्ध नहीं था, और इसी तरह से दूसरों का भी। जमींदार और उसके मुजारों का पारस्परिक सम्बन्ध इस तरह से था:— (१) एक दूसरे की रक्षा और मदद करता था। मुजारों को अपने जमींदार की तरफ से उसके दुश्मनों के साथ लड़ना होता था, फिर चाहे बादशाह ही क्यों न हो। (२) लड़ाई के अवसर पर खाने-पीने और हथियारों का प्रबन्ध मुजारों को स्वयँ ही करना पड़ता था। (३) हर एक मुजारा अपने जमींदार की ही अदालत में जाकर न्याय कराता था, और न्याय चुकाने में अपने जमींदार की मदद करता था। (४) अपने मुजारे के पालन-पोषण के लिए जमींदार जमीन देता था। मृत्यु के बाद जमीन जमींदार की हो जाती थी और वारिस को कुछ रुपया भेंट देने पर वापिस मिलती थी। अगर वारिस नाबालिग होता तो जागीर की देख-रेख जमींदार ही करता और उसके शिक्षण आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यक खर्चों के लिए एक नियत रकम देता रहता था। अगर जागीर की वारिस लड़की हो तो जमींदार उसकी योग्य वर के साथ शादी कर देता था।

बहुत से ऐसे जमींदार, जो किसी के आधीन न थे, किंतु उस समय के आक्रमणों से अपनी रक्षा नहीं कर सकते थे, वे भी इसी पद्धति में शामिल होकर बड़े शक्तिशाली जमींदारों के आधीन हो गए। इसी तरह की व्यवस्था फ्रांस और मध्ययूरोप में थी। आरम्भ में यह व्यवस्था ठीक-ठीक चली, मगर जैसे-जैसे समय बीतता गया, जमींदारों की सत्ता बढती गई और बादशाह की ताकत बिलकुल कम होती गई, यहाँ तक कि वह नाम मात्र का ही बादशाह रह गया।

विलियम पहिला फ्रांस के बादशाह का एक बड़ा जमींदार ही था। उसे मालूम था कि किस तरह से इस पद्धति के कारण वहां का बादशाह कटपुतली के समान हो गया था और उसके जमींदार जब उसका सामना कर बैठते थे तो वह कुछ नहीं कर सकता था।

इगलैण्ड में इसका स्वरूपः—यह कहना ठीक न होगा कि विलियम ने ही इस पद्धति को इङ्गलैण्ड में जारी किया। वह तो पहिले से ही वहां मौजूद थी, किंतु इस व्यवस्थित रीति से नहीं जैसी कि फ्रांस या मध्ययूरोप के दूसरे देशों में। (१) हम पहिले देख चुके है कि आंगल और सैक्सन जातियां में बड़े २ आदमियों की सेवा करना बुरा नहीं समझा जाता था। अतः जब यह जातियां इँगलैण्ड में आई तो बड़े २ सरदारों के साथ बहुत से आदमी भी उनके साथी की हैसियत से आकर रहने लगे। सरदारों ने उनके पालन-पोषण के लिए उनको जमीनें दे दीं। यह एक दूसरे की रक्षा करना अपना फर्ज समझते थे। (२) एल्फ्रेड के समय में जब डेन लोगों के आक्रमण खूब होने लगे थे और छोटे जमींदार और दूसरे स्वतन्त्र लोग अपनी रक्षा नहीं कर सकते थे, तब एलफ्रेड ने ऐसे सब आदमियों को बड़े जमींदारों के आधीन होने के लिए हुक्म जारी कर दिया था और यह सब बड़े २ जमींदारों के काश्तकार बन गए थे। (३) हम पहिले देख चुके हैं कि डेन लोगों के आक्रमणों के कारण बादशाह की लड़ाई में मदद पाने के लिए नए जागीरदार बनाने पड़े थे और उनको अपनी जागीरों में न्याय चुकाने का भी हक दे दिया गया था। (४) फ्रांस की तरह विलियम के आने से पहिले, इङ्गलैण्ड में भी बड़े २ और शक्तिशाली जमींदार मौजूद थे। इस प्रकार यूरोप की जमींदारी पद्धति के मुख्य चिन्ह वहां भी मौजूद थे।

विलियम की व्यवस्थाः—उसने इङ्गलैण्ड में जमींदारी पद्धति के स्वभाविक विकास को, जैसा कि मध्य-यूरोप में हुआ रोक दिया। वह अच्छी तरह से जानता था कि उसके साथी अपना स्वार्थ-सिद्ध करने के लिए उससे तरह-तरह की आशाएँ रखेंगे और फ्रांस की तरह यहां भी वे बादशाह के जागीरदार होना चाहेंगे। इसी ख्याल से उसने राज-सभा द्वारा अपने आप को बादशाह चुनवा लिया। वह अपने साथियों को अपने आधीन रखने के लिए अङ्गरेजों को शामिल करना चाहता था, दूसरी ओर अङ्गरेजों को शक्तिशाली न होने देने के लिए अपने साथियों की मदद चाहता था। राजसभा द्वारा उसे बादशाह स्वीकार कर लेने पर उसकी नीचे लिखी ख्वाहिशें पूरी हो गईः—

(१) सबसे पहिले तो देश के जमीदारों को अपने आधीन किया। एडवर्ड (the conpessor) को कोई औलाद न थी। उसकी मां विलियम के पिता की भुवा थी। कहते हैं कि जब विलियम इङ्गलैण्ड में आया तब एडवर्ड ने उसको अपने बाद राज्य का अधिकारी स्वीकार कर लिया था। इसलिए गद्दी पर बैठते ही उसने कहा कि मैं तो गद्दी का असली वारिस था, अतः जो जमींदार मेरे खिलाफ होकर लड़े उन्होंने राजविद्रोह किया और जो मेरी मदद करने के लिए नहीं आये उन्होंने भी नागरिकता का उलङ्घन किया, क्योंकि हर एक नागरिक का यह फर्ज था कि वह लड़ाई में बादशाह की मदद करे। इस प्रकार उसने राजद्रोहियों की जमीनें छीन लीं और जिन पर नियमों के उलँघन करने का दोष लगाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था उनसे जुरमाना लिया। इस रीति से उसके पास बहुत सी जमीनें और खूब रुपया इकट्ठा हो गया। फिर उसने सब जमींदारों को अपने आधीन कर लिया। (२) वह अपने पैर पर आप ही कुल्हाड़ी मारनी नहीं चाहता था। वह जानता था कि एक आदमी को इकट्ठी जमीनें देने से किस तरह से बादशाह की ताकत कम हो जाती है, इसलिए सिवाए तीन आदमियों के उसने किसी को एक जगह जागीरें न दीं, बल्कि सबको थोड़ी-थोड़ी करके कई जगह दीं। जिन तीन आदमियों को एक साथ जागीरें दीं वे जागीरें ऐसी थीं कि उनकी व्यवस्था करने के लिए ही आदमी को सारी शक्ति लगानी जरूरी थी। फिर उन तीनों में से दो तो पादरी थे जोकि विरसे में किसी को जायदाद नहीं दे सकते थे। खुद अपने पास उसने १४०० जागीरें रखीं। (३) मध्य यूरोप में जागीरदार किले बना कर रहते थे और इस तरह से वे बहुत ही शक्तिशाली बन गए थे। उसने तमाम पुराने किलों को अपने आधीन कर लिया और सख्त हुक्म जारी कर दिया कि कोई किले बना कर न रहे। (४) बड़े २ जमींदार अपने ही कायदे-कानून बना लेते थे; लेकिन इङ्गलैण्ड में सारे देश भर में एक ही कायदा था और एक जगह से दूसरी जगह सामान इत्यादि ले जाने पर किसी तरह का कर न लगता था। विलियम ने देश की स्थानीय सँस्थाओं की रक्षा की और उनको उसी तरह से कायम रखा। उसने कानून बनाया कि जागीरदार अपनी जागीर के आदमियों का फैसला अपनी अदालत में कर सकता है, मगर जब दूसरे आदमी झगड़े में शामिल हों तो उनका फैसला शतक और प्रांत की ही अदालतें करें। चूँकि उसने जागीरें बांट-बांट कर ही दी थीं इसलिए अक्सर न्याय के लिए शतक और प्रांत की अदालत में ही जाना पड़ता था (५) उसने हर एक जमीदार और काश्तकार से बादशाह के प्रति वफादार रहने की कसम ली और साफ तौर पर बता दिया कि कोई जागीरदार या काश्तकार बादशाह के खिलाफ लड़ने के लिए अपने जमींदार का पक्ष नहीं ले सकता। (६) उसने नागरिक को लड़ाई में बादशाह की मदद करने की पुरानी पद्धति कायम रखी। इन सब युक्तियों से उसने जागीरदारों की ताकत को बढ़ने से रोका। निस्सन्देह इसके साथियों ने कई बार झगड़े किए मगर इसने अङ्गरेजों की मदद से सब को नीचा दिखाया।

पादरियों के साथ सलूक- इससे पहले पादरियों और दूसरे नागरिकों में किसी तरह का भेद न था। प्रांत का मुखिया और धर्मगुरु मिलकर न्याय किया करते थे। पुराने सब पादरी अंग्रेज थे, अतः उनकी जगह उसने नये नार्मन पादरी बड़ी तेजी के साथ बनाये। मगर वह यह नहीं चाहता था कि यह पादरी लोग प्रांत के बादशाह के प्रतिनिधि को अपने प्रभाव में दबालें। इसलिये उसने पादरियों की अदालतें अलग करदीं, जिसका परिणाम बाद में बहुत खराब हुआ, इसे हम आगे चलकर देखेंगे। मगर दूसरी बातों में इसने उन्हें अपने आधीन रखा जैसे कि बादशाह की आज्ञा बिना किसी जागीरदार या दूसरे नागरिक को धर्मबहिष्कृत न किया जाय, बिना आज्ञा पोप के साथ किसी प्रकार का पत्र व्यवहार न किया जावे, इत्यादि।

यह जानने के लिये कि इंगलैंड में किस-किस की कितनी-कितनी ज़मीन है, उसने एक कमेटी बनाई जिसने सारे देश का दौरा करके एक रिपोर्ट तैयार की और उसे पुस्तक का स्वरूप दे दिया गया। यह Domesday Book के नाम से मशहूर है।

विलियम की मृत्यु १०८७ में फ्रांस में हुई। जब वह मृत्यु शैया पर पड़ा हुआ था तो उसने अपने लड़के विलियम दूसरे को इंगलैंड के लाट पादरी के नाम एक पत्र लिख कर दिया जिसमें उससे दरख्वास्त की कि वह राजसभा से उसके लड़के विलियम को बादशाह चुनवाने की कोशिश करें। इससे ज्यादा वह और कुछ नहीं कर सकता था। आखिर राजसभा ने उसके लड़के को बादशाह बना दिया और उसने न्याययुक्त राज्य करने का विश्वास दिलाया। विलियम द्वितीय ने १३ वर्ष राज्य किया। इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्षों में विलियम पहले ने जो कानून बनाये थे उन पर सख्ती के साथ अमल किया गया और जमींदारों की सत्ता को बढ़ने न दिया गया।

सौभाग्य से विलियम द्वितीय को कोई औलाद न थी। अतः उनकी मृत्यु पर इंगलैंड में राजसभा ने उनके छोटे भाई हैनरी को राजा बनाया। इस प्रकार राजसभा का बादशाह बनाने का पुराना अधिकार नार्मन विजय के बाद भी कायम रहा। चूंकि हैनरी को अपने भाई रावर्ट का डर था कि कहीं वह गद्दी पर बैठने का दावा न करे, इस लिये प्रजा का विश्वास प्राप्त करने के लिये उसने खूब कोशिश की और गद्दी पर बैठते ही एक शाही फरमान जारी किया जिसके अनुसार उस समय की सब शिकायतों को दूर कर दिया गया। यह फरमान हैनरी पहिले का प्रतिज्ञा-पत्र कहलाता है; इसकी मुख्य शर्त यह थीं:-- (१) पादरियों के मरजाने पर उनकी जागीरों को बादशाह खाली रखकर फायदा नहीं उठायेगा, बल्कि बहुत जल्दी दूसरों को दे दी जायंगी। (२) बादशाह जमींदारों से उचित और निश्चित कर ही लेगा और जागीरों के नाबालिग वारिसों के साथ सख्ती से बरताव नहीं किया जायगा, उनकी मरजी के खिलाफ वारिसों की शादी नहीं की जायेगी। (३) जमींदार अपने काश्तकारों के साथ ऐसा ही बरताव करेंगे जैसा कि वे चाहते हैं कि बादशाह उनके साथ करे। (४) जायदाद या दूसरी किस्म की मिलकियत के लिये वसीयत नामा किया जा सकेगा। (५) शासन अँग्रेजी कानून के अनुसार होगा।

राज्य व्यवस्था विलियम १ का समय राज की सुव्यवस्था करने में ही बीता और विलियम १ ने विलियम १ की पद्धति को स्थिर किया। हैनरी १ ने राजपद्धति में काफी सुधार किया। इस समय बादशाह की ताकत खूब बढ़ी हुई थी। पुराने जमींदारों से जागीरें छीन लेने और नई पद्धति जारी कर देने के बाद बादशाह बिलकुल खुदमुख्तियार हो गया था। राजसभा को बादशाह के नियुक्त करने का अधिकार जरूर था और उसकी सभा भी होती थी, मगर उसमें इतनी ताकत न थी कि वह बादशाह के खिलाफ कुछ कर सकती। अगर नार्मन बादशाहों को राजसभा न चुनती और बादशाहों को जमींदारों को आधीन करने के लिये अँग्रेजों की मदद की जरूरत न पड़ती तो राज-काज में प्रजा के अधिकार कुछ भी न रह जाते।

जब कि आंगल और सैक्सन लोगों ने ज्यादातर स्थानिक संस्थाओं पर ही जोर दिया और मध्यस्थ सरकार पर ध्यान नहीं दिया, नार्मन लोगों ने इसका ठीक उलटा किया। उन्होंने मध्यस्थ सरकार को शक्तिशाली बनाया और स्थानिक संस्थाओं को पहिले की तरह जारी रक्खा और उनका सम्बन्ध मध्यस्थ सरकार के साथ कायम किया। पहली प्रथा के अनुसार बादशाह के साथ बड़े-बड़े जागीरदार रहते थे जिनका कार्य बादशाह को सलाह देना था। इनकी राज दरबार में बड़ी इज्जत होती थी। इन लोगों ने अपने पदों को मौरूसी बना दिया था। नई राज-व्यवस्था के अनुसार यह पद नाम मात्र को ही रह गये और सारा काम नीचे के ओहदेदारों के पास चला गया। न्यायाधीश (Justiciar) चान्सलर (chancellor) और खजानची (Treasurer) इन तीन ओहदेदारों पर सारे देश की जिम्मेवारी आ गई। ये ओहदेदार आज तक मौजूद हैं, मगर इनके कार्यों और नामों में कुछ तबदीली हो गई हैं।

जब बादशाह फ्रांस चला जाता था तो देश की सारी जवाबदारी न्यायाधीश पर आ जाती थी। chancellor बादशाह का मँत्री था। लिखाई-पढ़ाई का सारा काम वही करता था। बादशाह की मुहर उसके पास रहती थी और वही उसको सब कागजों पर लगाता था। खजानची बादशाह की आय का हिसाब रखता था। जिन-जिन मदों से बादशाह को आमदनी होती थी उन सबकी जांच पड़ताल करना इसी का काम था। आय का खर्च किस तरह होता है यह उसके देखने का काम नहीं था। खर्च करना बादशाह के ही इख्तियार की बात थी।

बादशाह की अदालत— ये सब ओहदेदार बादशाह की अदालत (King's Court or Curia

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Regis) के सभ्य थे। बादशाह इनकी मदद से राज करता था। मगर जब वह बाहर होता था तब न्यायाधीश की अध्यक्षता में यह अदालत काम करती थी। जो काम बादशाह से सम्बन्ध रखता था उसे यह कमेटी करती थी। यथा:—प्रांत (shire moot) की अदालत के मुकदमों की अपील इसी अदालत में आती थीं। (२) बड़े-बड़े जमीदारों के झगड़ों का फैसला यहीं होता था। (३) देश की तमाम अदालतें इसी के आधीन थीं। (४) कभी-कभी इस अदालत के सभ्य प्रांतों में दौरे पर भी जाते थे। जब यह ओहदेदार रुपए सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार करते थे तब यह सभा इक्सचैकर की अदालत Court of Exchequer कहलाती थी।

बादशाह सारे देश में दौरा करता रहता था। उस समय इस बात का बड़ा महत्व था क्योंकि इसी तरह से सब अफसरों और जमीदारों पर बादशाह का प्रभाव कायम रह सकता था! उसकी अदालत हमेशा उसके साथ रहती थी। मगर साल में तीन जगहों पर तीन बार राज-सभा भी होती थी, जिसमें लाटपादरी—धर्मगुरु, बड़े-बड़े जमींदार, प्रांतों के प्रतिनिधि सरदार और धनी लोग शामिल होते थे। नार्मन बादशाहों की राज-सभा थी। अब इसे विटनजीमोट (witenagemot) की बजाय ग्रेटकौन्सिल (Great Council) कहते थे। अब बादशाह की सत्ता इतनी बढ़ गई थी कि यह सभा उसपर किसी तरह का अँकुश नहीं रख सकती थी। मगर यह सब कुछ होते हुए भी इसका कायम रहना और इसकी बैठक होते रहना ही काफी महत्व की बात थी।

Feudalism की बाबत अधिक जानने के लिए

(१) Constitutional Govt. in England by Maitland पृष्ठ १४० से १६४

(२) History of England vol ii परिशिष्ट ii by David Hume.

(३) Rise of Constitutional Govt. in England by C. Ransome अध्याय ii पढ़ें।

(क्रमशः)

पत्रों का मूल्य

पत्र तो हम आप सभी लिखते हैं, लेकिन इतिहास में ऐसे व्यक्ति भी हो गए हैं, जिनके पत्र हजारों लाखों रुपए में बिक चुके हैं। नेपोलियन ने अपने सैन्य-विभाग के अधिकारियों के नाम जो पत्र लिखे थे, वे २४६९ पौंड में बिके हैं। अभी कुछ साल पहिले नपोलियन के प्राय: ३०० पत्र, जो उसने अपनी प्रेयसी मेरी लुई को लिखे थे, फ्राँसीसी सरकार ने १५,००० पौंड में खरीदे हैं। अपनी पिछली पत्नी जोसेफाइन के नाम लिखे गए उसके आठ पत्र और भी ऊँचे मूल्य ४,४ ० पौंड में बिके थे।

नेल्सन के कुछ पत्रों का एक संग्रह २५०० पौंड में बिका था। राबर्ट और एलिजाबेथ बैरेट ब्राउनिङ्ग के प्रेमपत्र १९१३ में ६५५० पौंड में बिके थे और एलिजाबेथ के २२ पत्रों को एक अमेरिकन ने ८००० पौंड में खरीदा था। ब्राउनिङ्ग के दूसरे कुछ पत्र ३६५६ पौंड में नीलाम हुए थे।

शेक्सपियर के कुछ नाटकों में एक हँसोड़ अभिनेता फाल्स्टफ का नाम आता है, जिसे अब तक आम तौर पर लोगों ने काल्पनिक पात्र समझ रखा था; पर अब उसके नाम के पत्र मिले हैं, जिनसे पता चलता है कि वह काल्पनिक नहीं, वास्तविक मनुष्य था। सर जान फाल्स्टफ के नाम से १४४९ में लिखे हुए कुछ पत्र १९१९ में ६९० पौंड में बिके थे। अमेरिगो वास्कुवीका १४७६ में लिखा हुआ एक पत्र—पत्र क्या मुश्किल से दो वाक्य ३९० पौण्ड में बिके थे। इसी इटैलियन परिव्राजक के नाम अमेरिका का नाम रखा गया मालूम होता है।

(विश्वमित्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सेंस आफ ह्यूमर'

संसार की यात्रा में हम सब के लिए जो अन्धे की लकड़ी की तरह अचूक सहारा है वह 'सेंस आफ ह्यूमर' है। मुझे खेद है कि पंडितों से परामर्श करने पर भी इसका हिंदी का पर्याय मुझे नहीं मिला। यदि यह भाव हमारी संस्कृति में नहीं है तो मेरी समझ में हमारी संस्कृति की बड़ी भारी त्रुटि है। इसका अर्थ हास्यप्रियता या विनोद कुशलता नहीं है। इसका अर्थ यह है कि हम में यह शक्ति हो कि हम अपने ऊपर स्वयं हँस सकें और यदि कोई दूसरा हम पर हँसे तो उस हँसी में हम खुले दिल से उसके साथ शामिल हो सकें। दूसरे का उपहास करना तो हमारे लिये बायें हाथ का खेल है। अधिकतर तो हमारी बातचीत केवल व्यंग्य का रूप ही धारण करती है। दूसरों की दिल्लगी उड़ाने में हम किसी से कम नहीं हैं। पर हम अपनी बुराई सुन बड़े अप्रसन्न हो जाते हैं, अपना जरा सा भी मजाक बर्दाश्त नहीं कर सकते। हमारा मुँह एकदम फूल जाता है, अगर जिसका हम उपहास करते हों, जिसका उपहास करने का हम अपने को अधिकारी समझते हों, वह उलट कर थोड़ी भी हमारी दिल्लगी करदे। 'सेंस आफ ह्यूमर' अर्थात् अपने ऊपर हँस सकने की शक्ति हमको इस संसार के बड़े-बड़े दुर्गम मार्गों से सफलतापूर्वक निकाल सकती है। इसकी ही कमी हमें हैरान किये रहती है। इसके न होने से हमारा सामाजिक सम्बन्ध नष्ट हो जाता है। सबको सदा सबसे सचेत रहना पड़ता है। जरा-जरा सी बात में हम बुरा मान जाते हैं। थोड़े-थोड़े मतभेद के कारण हम बड़ा अनिष्ट कर डालते हैं।

इस सब का कारण बातचीत की कला का मूल आधार और उसके चारों तरफ का अनुकूल वातावरण अर्थात् 'सेंस आफ ह्यूमर' का अपने में न होना ही है। यही शक्ति है जिससे अपने ऊपर हँस सकते हैं, अपने ऊपर की गई हँसी को समझ सकते हैं, अपने ऊपर हँसने वाले का खुशी से हाथ बंटा सकते हैं। जिनको यह शक्ति नहीं है उनको मेरी यही सलाह है, यद्यपि बिना पूछे सलाह देना अनुचित है, कि आप इस संसार में आकर गलत जगह आये हैं। यह स्थान आपके लिए नहीं है। आपको यहां से यथा संभव जल्द भाग जाना चाहिए और याद मृत्यु के द्वार से भागने में डर लगता है तो आप कहीं एकान्त में येनकेन प्रकारेण अपना जीवन व्यतीत कीजिए। यदि आपको समाज में रहना है अर्थात् यदि आपको अपने कुटुम्ब, अपने सम्बन्धी, अपने मित्र, अपने पड़ोसियों और उन नाना प्रकार के प्राणियों से उचित संबन्ध रखना है, जिनका संपर्क आप चाहें या न चाहें संसार में होता ही रहेगा, तो आपको बातचीत की कला और बहस की कला सीखनी होगी। आपको अपने में 'सेंस आफ ह्यूमर' पैदा करना होगा, अर्थात् उस शक्ति देवी की आराधना करनी होगी जिसके वरदान से आप अपने को उस तरह देख सकें जिस तरह दूसरे आपको देखते हैं, आप अपने पर हँस सकें, आप अपना उचित स्थान पहचान सकें, आप उपयुक्त काम कर सकें और आप अपना ठीक पद पा सकें।

—बा० श्रीप्रकाश एम०एल०ए०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपक के प्रति

र०—श्री रामकुमार 'स्नातक'

१

तुम अन्धकार को हरने,
जीवन घट भरने आये।
या इस निराश जीवन में,
आशा के झरने लाये॥
प्रेमी पर बलि हो जाना,
परवानों को सिखलाया।
सच्चा गुरु बनकर पहले,
तन अपना अहो! जलाया॥

२

सूरज को तुमसे ज्यादह,
तेजस्वी कैसे मानें।
वह अन्त तेज का, तुमको,
प्रारम्भ तेज का जानें॥
यदि मौत खड़ी हो आगे,
क्या बात भला है ग़म की।
देखो, इस दीप-शिखा को,
जलकर सोने सी चमकी॥

३

प्याले का मधु पी करके,
तुम हँसते अजब हँसी हो।
कैसे हँसना है भाता?
जब देह कहीं झुलसी हो॥
"विघ्नों की आँधी में भी,
हँसना सीखो तुम प्राणी।"
यह शिक्षा देते सबको,
दीपक! तुम पूरे ज्ञानी॥

४

तुम धीर तपस्वी बनकर,
चुपचाप जले जाते हो।
या मूल्य मूक सेवा का,
सचमुच तुम प्रगटाते हो॥
किस्मत में तेरी दीपक,
क्या जलना ही जलना है।
या परहित जलने में ही—
सुख का अनुभव करना है॥

५

परहित सर्वस्व लुटाते,
जग कहता तुम्हें दिवाना।
पर तुमने ही रातों को—
है दिवस बनाना जाना॥
दीपक की नहीं शिखा यह,
है बीज क्रान्ति का प्यारा।
जो बढ़कर जला सकेगा,
जुल्मों का जङ्गल सारा॥

६

है तेल जहां तक बाकी,
तब तक तुम जले चलोगे।
तन में ताकत है जब तक,
परहित में बढ़े चलोगे॥
आँधी का झोंका आकर,
चाहे तो तुम्हें बुझादे।
पर जीते हुए तुम्हारे,
प्रण को कैसे तुड़वादे॥

७

हे दीपदेव! भारत के आँगन में आकर चमको।
जीने, मरने का सच्चा कुछ भेद बतादो हमको॥
इम अपने लघु जीवन का कुछ मूल्य आँकना सीखें।
मरने में जीवन-झाँकी का दृश्य झाँकना सीखें॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मण्डला की सिंहनी

ले०—श्री दयाशंकर मिश्र

आज मण्डला राज्य की सारी प्रजा सिर धुन-धुन कर रो रही थी। घोड़े हिनहिना रहे थे। हाथी चिंघाड़ रहे थे। गायें जोर-जोर से रम्भा रही थीं। सारा राजमहल रुदन और हा-हाकार से भर गया था। रानी दुर्गावती के माथे से सिंदूर पोंछ दिया गया, चूड़ियां तोड़ दी गईं। आज मण्डला के राजा दलपतिशाह अपने एक तीन वर्ष के बच्चे को छोड़ स्वर्गलोक सिधारे थे।

*　　　*　　　*

मनुष्य पर सङ्कट भी एक साथ आया करते हैं। सुबह का समय था। पेड़ों पर चिड़ियां फुदक-फुदक कर गा रही थीं। उसी समय दो राजपूत घुड़सवार तीर की तरह तेज घोड़ों को दौड़ाते हुए आए और राजमहल के नीचे आकर खड़े हो गये। उन्होंने रानी दुर्गावती को खबर दी कि "बादशाह अकबर के हुक्म से उज्जैन का नवाब आसफखां एक बड़ी फौज लिये मण्डला पर चढ़ाई करने चला आ रहा है।"

रानी ने नवाब को कहला भेजा, "अगर आपको और आपके बादशाह को मुझ से लड़ाना ही था तो जब राजा जीवित थे उस समय लड़ने आते। अब मेरे पुत्र को बड़ा हो जाने दीजिये। आज मुझ अनाथ विधवा पर चढ़ाई करना अकबर जैसे बादशाह को शोभा नहीं देता।" किंतु आसफखां न माना। वह तेजी से चला आ रहा था।

फौजी कपड़े पहिन, सारे अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हो जब रानी हाथी पर बैठ लड़ाई के मैदान में आई तो अपनी बहादुर रानी का यह रूप देख सारी प्रजा में एक मर्दानगी की लहर पैदा हो गई। सारी फौज मातृभूमि की आजादी की रक्षा करते हुए मरने कटने के लिये बेचैन हो उठी। सिपाहियों का खून खौलने लगा, भुजायें फड़कने लगीं। सबकी आंखें चमक रही थीं। उधर आसफखां की फौज भी धूल उड़ाती चली आ रही थी।

दोनों फौजें उमड़ते हुए दो समुद्रों की तरह एक दूसरे पर टूट पड़ी थीं। 'सनसन' करते हुए तीर, 'छपछप' करती हुई तलवारें और 'खटखट' करते हुए तेगे सूर्य के प्रकाश में चमक उठे। खून की नदियां बह निकलीं। लोथ पर लोथ कट-कट कर गिरने लगी। रानी दुर्गावती के भी कई घाव आये थे। सारे कपड़े खून से सुर्ख हो रहे थे, फिर भी रानी ने हिम्मत न हारी थी। वह चिल्ला-चिल्ला कर "बढ़े चलो बहादुरो, मार लिया मैदान·····" अपनी फौज को उत्साहित कर रही थी और खुद सबके आगे भूखी और चोट खाई हुई सिंहनी की तरह दुश्मनों की फौज को काट रही थी। शाम होते होते आसफखां की फौज भाग खड़ी हुई और विजय माला रानी दुर्गावती के गले में पड़ गई।

*　　　*　　　*

थोड़े दिनों बाद पिछली हार का बदला लेने के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसफखां ने फिर मण्डला पर धावा बोल दिया किन्तु इस बार भी उसे रानी के सामने मुंह की खानी पड़ी।

* * *

आसफखां दो बार बुरी तरह हार चुका था। तीसरी बार उसने एक बहुत बड़ी फौज लेकर चढ़ाई की थी। लड़ाई के मैदान में दोनों फौजें लड़ रही थीं। इस बार रानी दुर्गावती के साथ उसकी आंखों का तारा बहादुर राजकुमार भी अपनी छोटी सी तलवार और छोटा सा धनुषबाण लिये लड़ रहा था। लड़ते-लड़ते उस सुन्दर राजकुमार का तीर-तलवारों से सारा शरीर छलनी हो रहा था। बेटे की बहादुरी देख माँ की छाती फूल उठी; उसकी आंखें छलछला आईं। शाम हो चुकी थी। रानी और राजकुमार की बहादुरी देख आसफखां और उसकी फौज दङ्ग रह गई थी। तब एक सनसनाता हुआ तीर आया और रानी की आंख में आ गड़ा। रानी तीर को आंख में से खींच रही थी कि दूसरा तीर गर्दन में समा गया। उसी समय एक राजपूत ने खबर दी कि "अपनी फौज चारों मोर्चों पर मर चुकी है, केवल ३०० राजपूत बाकी रह गए हैं, आप अपने को बादशाह के अर्पण करदें तो इस तरह तलवारों से कट कर मरना नहीं पड़ेगा" यह सुनना था कि उस घायल रानी का सारा चेहरा गुस्से से तमतमा उठा। "दूर हट कायर! राजपूत होकर अपनी रानी को ऐसी सलाह दे रहा है। मौत समीप देख क्या भूल गया कि एक राजपूत क्षत्राणी गुलामी की जिन्दगी से मर जाना अच्छा समझती है।" शेरनी की तरह दहाड़ते हुये रानी ने अपनी जहरीली कटार निकाली और अपने पेट में भोंक ली।

पश्चिम दिशा में सूर्य डूब रहा था। सूर्य की लाली ने सारे आकाश को रक्त वर्ण बना दिया था। उस खूनी आकाश के नीचे, शहीद देश भक्तों के खून से रङ्गी हुई उस मातृभूमि पर खून से लथपथ, कभी न टूटने वाली नींद में सो रही थी रानी दुर्गावती—"मण्डला की सिंहनी"!

महिलाओं में फैशन

ले० श्री० शकुन्तला बेहल, लायलपुर

आज चारों ओर फैशन का बोलबाला है। जहां देखो वहीं फैशन का राज है। जहां जावो वहीं फैशन का दौरदौरा है। क्या शहर और क्या कस्बा सभी जगह फैशन की धूमधाम है। ऐसी दशा में महिलाएं इस रोग से कैसे बच सकती थीं। आज वे भी फैशन की इतनी ही शिकार हैं जितने कि पुरुष। वे भी फैशन की दौड़ में किसी से पीछे नहीं हैं। यदि यह भी कहा जावे, कि मर्दों और स्त्रियों में फैशन की होड लगी है, तो कुछ बेजा न होगा। यों तो फैशन का आज सभी प्रान्तों में बोलबाला है, किन्तु हमारा प्रान्त सब से बाजी ले गया है। पैरिस से जो फैशन निकलता है, वह सीधा लाहौर आ पहुँचता है। पुरुषों की तरह पढ़ी लिखी महिलाएं भी विदेशी सभ्यता की गुलाम बनती जा रही हैं। वे सब बातों में यूरोप की नकल करती हैं। उन्हें सेन्ट चाहिये, लवेंडर चहिये, क्रीम चाहिये, पौडर चाहिये और चाहियें ऊंची ऐड़ी के जूते। इतना ही नहीं उन्हें चटकीले भड़कीले बड़े बारीक विलायती रेशम के वस्त्र चाहियें। देशी दन्त मंजन व दतौन भी अब उन्हें अच्छी नहीं लगती। डेविस पार्क एण्ड को० (Davis Park and Co.) की बनी टूथ-पेस्ट और ब्रुश चाहिए। कहां तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिताऊँ, विदेशी फैशनेबिल चीजों से आज हमारे घर भरे पड़े हैं। एक तरफ देश की कमरतोड़ गरीबी और दूसरी तरफ फैशन पर इतना खर्च ! उफ ! हमें अपनी इस दयनीय दशा पर रोना आता है। हमारा सिर मारे लज्जा के झुक जाता है। कहां है हमारा आज वह नारी आदर्श? आज तो हम तितली बनी हुई हैं। हमारा सारा समय बनाव-सिंगार, सिनेमा देखने और गप-शप लड़ाने में ही चला जाता है। आज हमारी बहनें फैशन पर जो रुपया खर्च करती हैं, उसे देशहित के कामों में खर्च करें तो हमारा कितना कल्याण हो सकता है। फैशन की गुलामी के कारण हमारे प्यारे देश का करोड़ों रुपया विदेशों को चला जाता है। हमारे भाई-बहन भूखों मरते हैं, नंगे फिरते हैं, तरह-तरह की मुसीबतें सहन करते हैं किन्तु हमारे कानों पर जूं तक नहीं रेंगती। आह ! आज हम इतनी पाषाण-हृदय हो गई हैं, हमारी सहृदयता और कोमलता का दिवाला निकल गया है।

इस फैशनपरस्ती ने हमारे घरों को तबाह और बर्बाद कर दिया है--प्रेमभाव को नष्ट कर दिया है। पढ़ी लिखी स्त्रियों का खर्च फैशन की वजह से इतना बढ़ गया है कि पति बेचारा कमाते २ मरजाता है किन्तु फिरभी पूरा नहीं पड़ता। मासके अंतिम सप्ताह में ही उसकी जेब खाली हो जाती है। समझदार पति कभी समझाता भी है तो स्त्री नाक-भौं सिकोड़ लेती है, बोलती नहीं, रूठ कर बैठ जाती है। मैं मानती हूं कि पुरुष भी फैशन के लिये कुछ कम जिम्मेवार नहीं हैं। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि पुरुष यदि गलती करते हैं—गढ़े में गिरते हैं तो हम भी उनका अनुकरण करें। मेरा दृढ़ विश्वास है कि अगर महिलायें सम्भल जावें, झूठे फैशन को छोड़ दें, बनाव-सिंगार को तिलांजलि दे दें तो फिर पुरुषों में क्रान्ति आते देर न लगेगी।

फैशन ने हमारा शारीरिक व नैतिक पतन किया है, हमें दूसरों की नजरों में गिराया है। यही वजह है कि आज आये दिन हम अखबारों में पुरुषों द्वारा स्त्रियों को तङ्गकिये जाने की घटनाएं पढ़ा करते हैं। यदि महिलायें सादगी और सरलता से जीवन बिताने लगें तो बहुत हद तक ऐसी दुःखद और अपमानजनक घटनायें बन्द हो सकती हैं।

आधुनिक सभ्यता के पुजारी चाहे जो कहें मैं तो यही कहूँगी कि बनाव-सिङ्गार विलासता को जन्म देता है, ब्रह्मचर्य पालन के रास्ते में बाधा डालता है। स्कूल और कालेजों की ओर दृष्टिपात करके देख लीजिये। जो लड़कियां सादगी से रहती हैं उन्हें कोई कुछ नहीं कहता, उनकी ओर कोई आंख उठाकर नहीं देखता,किन्तु तितली बनी हुई लड़कियों के सम्बन्ध में ऐसा नहीं कहा जा सकता। इसका कोई यह मतलब न निकाले कि फैशनेबिल लड़की के साथ छेड़खानी करने का किसी को अधिकार है। ऐसा कदापि नहीं होना चाहिए। मैं तो सिर्फ यही कहना चाहती हूं कि यदि लड़कियां तितली बनना छोड़ देंगी तो वे बहुत सी मुसीबतों से बच जाएंगी, घर का खर्च कम हो जावेगा, उपयोगी काम करने के लिये बहुत समय मिल जावेगा।

महिलाओं को समझ लेना चाहिए कि सच्चा सौंदर्य बनाव-सिङ्गार, बाह्य टीप-टाप या बन-ठन कर चलने में नहीं है। सच्चा और स्थायी सौंदर्य तो हृदय की पवित्रता में है, कर्त्तव्य परायणता में है, दुखियों और पीड़ितों के साथ सहानुभूति करने में है, गुलामी को दूर भगा आजादी हासिल करने में है। अतः ढोङ्ग को छोड़ हमें वास्तविकता की ओर कदम बढ़ाना चाहिए। हमारे अंदर आज जो दर्गुण आ घुसे हैं उनके दूर करने में ही हमें अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिए। यदि हमने अपनी भूल को महसूस नहीं किया और फैशन की आंधी में ही उड़ती रहीं तो निस्सन्देह हमारा भविष्य खतरे में है। क्या समय रहते रहते महिलाएं सम्भलने का प्रयत्न करेंगी ?

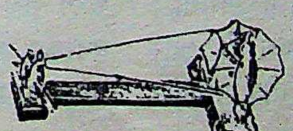

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिशु-शिक्षा

ले०—श्री कृष्णजसराय बी०ए०, एफ०टी०एस०

[गतांक से आगे]

माता—पण्डित जी, अब आप यह भी तो बतावें कि इन १५ अवयवों को किस भांति शक्तिशाली बनावें ? वे साधन क्या हैं ?

पँ० जी—ठीक भी तो है। लीजिए, मैं पहिले पाञ्च ज्ञानेन्द्रियों को लेता हूँ। पाञ्चों ज्ञानेन्द्रियां ये हैं—आंख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा। ये पांचों इन्द्रियां सारे सँसार का ज्ञान कराती हैं। इसी कारण इन्हें ज्ञानेन्दियां कहते है।

(१) आंख देखकर सब कुछ बताती हैं। प्रत्येक वस्तु का ज्ञान कराती हैं। जो कुछ आंख के सामने आता है उसका ज्ञान हमको हो जाता है। जिस वस्तु का ज्ञान हम प्राप्त करना चाहते हैं उसको अपनी आंखों से देखते हैं। आंखें ही हमको इस सँसार का पहिला ज्ञान देती हैं। इसी कारण हमने कहा था कि बालक का जन्म-स्थान बहुत सुन्दर सुहावना होना चाहिए, जिससे बच्चे को सँसार का पहिला ही दृश्य सुहावना व रुचिकर दीख पड़े। अब आगे देखने की शक्ति को प्रवल करने के लिए वच्चे को रङ्गों का ज्ञान कराना चाहिए। बच्चे को ऐसे पालने में सुलाओ जिसके चारों ओर रङ्गीन शीशे की कलमें लगी हों या रङ्गीन फीते बँधे हों। उन रङ्गों के नाम बच्चे को बताओ। नाम ले लेकर बच्चों का हाथ उन पर लगवाओ। कुछ दिनों में बच्चा ठीक रँग बताने लगेगा। दीवारों पर भी सुँदर रङ्ग-बिरङ्गी तस्वीरें लगा दो और उनके नाम तथा रूप बच्चे को बताती रहो। गोद में लेकर बच्चे को कमरे में घुमाओ और कमरे की सब वस्तुओं के नाम बताया करो। इसी प्रकार जब बाजार ले जाओ वहां जो-जो चीजें बच्चा देखे उन का ठीक हाल उसको बताओ। जब बाग की सैर को जाओ वहां फूल-फल उसे दिखाओ और बताओ। यही आंख की शिक्षा है। इसी प्रकार करने से बच्चा खूब गौर व ध्यान से देखना सीख जायगा और वह जिस वस्तु को देखेगा उसका पूरा ज्ञान हासिल कर सकेगा।

(२) कान—ये सुनने का काम करते हैं तथा हम सुनने द्वारा सँसार का ज्ञान प्राप्त करते हैं। शब्द-ज्ञान कान द्वारा ही होता है। शिक्षा का कार्य है कि इस श्रवण शक्ति को बढ़ावें। बढ़ाने के साधन सुनिए।

क—नित्य छोटे-छोटे पद मधुर स्वर से बच्चे के पास बैठकर गाया करो।

ख—सुरीले धीमे स्वर से बच्चे को बाजा सुनाया करो।

ग—सदा मधुर वाणी से लोरी देकर बच्चे को सुलाया करो।

घ—बच्चे को वस्तुओं के जो नाम बताओ ठीक बताओ जिससे बड़ा होकर वह वही ठीक नाम उच्चारण करने लगे। आज कल माताएँ बच्चों को ठीक नाम न बताकर अँट-शँट नाम बता देती हैं। जैसे—पानी को पापा या मामा, इससे बच्चे को बड़ी कठिनाई पड़ती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ा होकर उसे ये नाम भुलाने पड़ते हैं और ठीक नामों का प्रयोग करना पड़ता है। जब सब पानी को पानी ही कहें तो वह पापा या मामा कैसे कहे। अतः पापा-मामा को भूलकर उसे पानी ही कहना पड़ता है और भुलाने में याद करने से भी अधिक कठिनाई पड़ती है। अतः बच्चे को पानी का नाम पानी ही बताओ, यह न समझो कि बच्चा कुछ समझना ही नहीं, बोलता नहीं, यह ठीक शब्द बोल न सकेगा, फिर ठीक शब्द बताकर क्यों अपना समय नष्ट करें। यह बात नहीं है। जब बच्चा पापा, मामा समझ जाता है तो पानी के समझने और बोलने में क्या आपत्ति है? आपको तो उतना ही समय पानी के समझाने में लगेगा जितना कि पापा और मामा के समझाने में; फिर व्यर्थ उसे अशुद्ध बताकर क्यों कठिनाई में डाला जावे?

ङ- छोटी-छोटी कहानियां बच्चे को सुनाया करो। कुछ बातें किसी किताब में से जो बहुत सरल हों सुनाया करो।

माता—परन्तु पँडित जी, इतना छोटा बच्चा कहानी, पहेली, गाना-बजाना, क्या समझे? क्यों समय वृथा नष्ट किया जावे?

पँ० जी—नहीं माता जी, ऐसा नहीं है। यदि आप नित्य ही ऐसा किया करेंगी तो आपको पता लगेगा कि दो-चार दिन में ही बच्चा आपके गाने-बजाने तथा बात-चीत करने की ओर ध्यान देने लगेगा। कुछ दिन पीछे हँसने लगेगा। समझता नहीं तो हँसता क्यों? आपका गाना-बजाना, कहानी बड़े ध्यान से सुनेगा। रोता भी होगा तो रोने से बन्द हो जावेगा। साथ ही इसके आप देखेंगी कि आपका बच्चा औरों की अपेक्षा जलदी बोलने लगेगा। उसका उच्चारण भी शुद्ध होगा। शनैः २ कुछ बात चीत भी करने लगेगा, कहानियां कहने लगेगा, परँतु माता जी ये सब बातें शांति व धैर्य की हैं। बच्चा एक बार में ही नहीं समझता। बार-बार कहने की ही आवश्यकता होती है। माता बनना व शिक्षा देना कोई आसान काम नहीं है, बड़ी टेढ़ी खीर है। केवल माता का बच्चे के प्रति प्रेम ही इन सब कठिनाइयों को सरल व मधुर बना देता है।

जब कुछ दिनों में बच्चा स्वयँ गाना-बजाना सीख जाये और वह बात चीत करना, कहानियां कहना आरँभ कर दे तो उसे रोको नहीं, उसका उत्साह बढ़ाओ और उसके लिए ऐसे साधन प्रस्तुत कर दो जिससे उसको इन कार्यों में सरलता पड़े और उसकी भीतरी शक्तियां विकास में आ सकें। यदि ऐसा करोगी तो बच्चा नित्य ही उन्नति करता चलेगा।

यह बात यहां याद रखने क. है कि आंख व कान का कुछ ऐसा सम्बन्ध है कि एक के ज्ञान से दूसरे का भी ज्ञान होता है। बच्चे के पालने के चारों ओर यदि रङ्गीन घण्टियां लटका दो और उनके रङ्गों का नाम ले लेकर उनको बजाते जाओ तो बच्चे को आंख द्वारा रङ्गों का और कान द्वारा शब्द का ज्ञान होता रहेगा। इसी प्रकार यदि किसी माता को जल तरङ्ग बजाना आता हो तो वह रङ्गीन कटोरों में जल भर कर बजाने से रङ्गों व शब्द का ज्ञान एक साथ बच्चे को दे सकती है। इसी प्रकार रङ्ग-रङ्ग के रबड़ के गुब्बारे भी बच्चों के झूलों में बाँधकर उन रङ्गों के नाम बच्चों को बतलाए जा सकते हैं। इस प्रकार बच्चे को खेलने में ही शिक्षा दी जा सकती है, परन्तु माता स्वयँ चतुर होनी चाहिए।

(३) नाक—सूंघने के लिये है। सुगन्ध, दुर्गन्ध का ज्ञान नाक में जो घ्राण-शक्ति है उसके द्वारा होता है। नासिका को सदा साफ रक्खो जिससे बच्चे को सुगन्ध या दुर्गन्ध का ज्ञान हो। अक्सर माताएं इस बात का ध्यान नहीं रखतीं और बच्चों की नाकें सदा गन्दी व भरी रहती हैं जिससे उनको सांस लेने में भी कठिनाई होती है और सुगन्ध व दुर्गन्ध का ज्ञान तो हो ही नहीं सकता। अतः सदा नाक साफ रक्खो, और कमरे में धूप नित्य जलाया करो। सुगन्धित पुष्प बच्चे को नित्य दिया करो, जिनसे खेल कर वह प्रसन्न भी होगा और गन्ध का ज्ञान भी उसको होता जायगा। मता बताती जाये कि बेटा यह गुलाब का फूल है, यह मौगरे का, यह गेंदे का; इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार और फूलों का ज्ञान कराती रहे। दुर्गन्ध का ज्ञान कराने के लिये दुर्गन्धित वस्तु आप बच्चे के पास लावें, आप देखेंगी कि बच्चा नाक-भौं चढ़ाने लगेगा। ज्योंही ऐसा करने लगे, उसे समझाओ कि यह दुर्गन्ध है। इसके पास रहने से बीमारी हो जाती है। अतः दुर्गन्ध को कभी पास नहीं रहने देना चाहिये।

(४) जिह्वा से स्वाद का ज्ञान होता है। यह चख कर बता देती है कि किस वस्तु में क्या स्वाद है? स्वाद द्वारा ही रसों का पता चलता है। छोटा बच्चा मां के दूध का ही स्वाद जानता है। ज्यों ही उसको छुड़ा दो वह मुंह बिगाड़ने लगता है। बार-बार कोई वस्तु मुंह में देने से वह उसका स्वाद भी जानने लगता है। ज्ञान कराने के लिये जरा सा शहद चटाया करो। कभी नारङ्गी का रस, कभी अनार का रस, कभी खट्टा और कभी चरपरा या कड़वा और नमकीन, इस प्रकार सभी रसों का ज्ञान बच्चे को करा दो। फिर वह उसके भेद को पहचान लेगा। जो उसको रुचिकर होंगे उनसे प्रसन्न होगा। जो अरुचिकर होंगे, उनसे नाक-भौं चढ़ावेगा। उसको अपने पास से हटावेगा। अब समझो कि इसे रसों का ज्ञान हो गया। यह याद रहे कि चखते समय बच्चे को यह अवश्य बताती जावो कि यह मीठा है, यह खट्टा है, यह चरपरा है और यह नमकीन है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे की जिह्वा अत्यन्त कोमल होती है, अतः कभी उसके मुंह में अत्यन्त तीक्ष्ण रस जैसे लाल मिर्च आदि न दो, अन्यथा छाले पड़ जावेंगे। इससे बच्चे को बहुत दुःख होगा।

जब बच्चे को रसों का ज्ञान हो जावे तो बच्चे को कभी उस पदार्थ के खिलाने की कोशिश न करो जिसको वह खाना या मुंह में लेना पसन्द नहीं करता, जिससे मुंह बन्द करले अथवा नाक-भौं चढ़ाता हो। दवा हो तो इच्छा के विरुद्ध भी दे सकती हो, परन्तु समझाने के पश्चात् कि देखो बेटा 'यह दवा है, इससे तुम्हारा दुःख दूर हो जावेगा।'

(५) त्वचा से छूकर ठण्डे, गर्म, नरम तथा सख्त वस्तु का ज्ञान होता है। अधिकतर हाथ से जो कर्मेन्द्रिय है, यह काम लिया जाता है हल्के-भारी का ज्ञान भी हाथों द्वारा ही होता है। ठण्डे गर्म का ज्ञान सारे शरीर की खाल से होता है, परन्तु हल्के भारी का ज्ञान केवल हाथ से ही अच्छा होता है। इस प्रकार हाथ ज्ञानेन्द्रिय भी है और कर्मेन्द्रिय भी। बच्चा अपनी माता की कोमल गोद, अपने बिस्तरे, कठोर पृथ्वी आदि से यह ज्ञान प्राप्त करता है। बच्चे को कभी नरम-नरम बिस्तरों पर सुलावो, कभी तख्त पर और कभी जमीन पर। खेलने के लिए कभी उसके हाथ में रबड़ का खिलौना दो, कभी मिट्टी का, कभी टीन का और कभी काठ का। इस प्रकार उसको बता-बता कर कि बेटा यह रबड़ है, देखो कैसा मुलायम है; यह मिट्टी है, कैसी कड़ी है; यह टीन है, यह उससे भी कड़ा है; यह काठ है, यह कितना हल्का है और सख्त है? कभी बच्चे के हाथ में बर्फ देकर कहो कितनी ठण्डी है? कभी जरा गर्म वस्तु हाथ में देकर पूछो यह कितनी गर्म है? कुछ दिनों में बच्चा स्वयं समझ जावेगा कि यह गर्म है, यह ठण्डी है, यह हलकी है, यह भारी है आदि।

इस प्रकार पांचों ज्ञानेन्द्रियों की शक्तियों को प्रबल बनाते समय और शिक्षा देते समय माता को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये:—

१—शिक्षा देते समय धैर्य न जाता रहे, गुस्सा न आ जावे।

२—प्रेम से काम लिया जावे अन्यथा सब साधन व्यर्थ हो जावेंगे।

३—बच्चे को कभी डरावो धमकाओ मत, मारने का तो स्वप्न में भी ध्यान न करो।

४—कई-कई बार छोटी २ बातों को दुहराने या बार-बार करने से थक या घबरा न जाओ।

५—याद रक्खो पहिले छः महिने बहुत कठनाई के हैं, पीछे कार्य में कुछ सरलता आ जाती है, क्यों कि बालक बोलने की चेष्टा करने लगता है। उसका ध्यान जमने लगता है। चलने फिरने लगता है। फिर माता का कार्य और भी रोचक व हल्का हो जाता है।

६—बच्चे को कभी ऐसा दृश्य न दिखाओ जिससे वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंखें बन्द करले, रोने चिल्लाने लगे। ऐसा करना बताता है कि बालक भयभीत हो गया है। इस प्रकार भयभीत हो जाने का प्रभाव भी स्वास्थ्य पर बहुत बुरा पड़ता है।

७—बच्चे के कान के पास कोई रोमांच खड़े करदेने वाला शब्द न करो। बहुत सी माताएं बच्चों के कानों में जोर से कुर्ं···र···र कुर्ं···र···र का शब्द करती हैं, और जब बच्चा जरा घबरा सा जाता है तो प्रसन्न होती हैं। ऐसा करना बहुत हानिकारक है। कभी २ तो बच्चे के कान का कोमल पर्दा फट जाता है या कान बहने लगता है। और वह सदा के लिये बहरा हो जाता है।

८—बच्चे को गोद में लेकर या बच्चागाड़ी में बिठा कर नित्य सैर कराने आप ही ले जाओ, नौकर के हाथ न भेजो। घर में या रास्ते में बच्चे की नजर जिन वस्तुओं पर पड़े, उनके नाम और गुण उसे बताया करो। जो आवाज आवे उसे बताओ जो कोई सुगन्ध आवे उसे समझाओ, जो पशु-पक्षी दीखें उनके नाम बताओ। माता जी यह काम बड़ा पित्तेमारी का है, परन्तु बच्चे की उन्नति का ध्यान रख कर करना ही उचित है।

माता—आपने ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति को बढ़ाने के साधन तो बताये, परंतु कर्मेन्द्रिय और मन आदि शक्तियां बढ़ाने के साधन अभी रहे हुए ही हैं।

पं०जी—कर्मेन्द्रियां तो स्वयं शरीर के बढ़ने के साथ बढ़ती जाती हैं। ज्यों-ज्यों बच्चा बढ़ता है, स्वस्थ रहता है, त्यों-त्यों ही कर्मेन्द्रियां स्वयं बढ़ती जाती हैं और बच्चा स्वयं उन्हें काम में लाने लगता है, जैसे पैरों से चलना, हाथों से वस्तुओं को पकड़ना व छूना, शनैः शनैः तोड़ना, बनाना। ज्यों-ज्यों ज्ञानेन्द्रियों की शक्तियां बढ़ती जायेंगी त्यों-त्यों ही बच्चा कर्मेन्द्रियों से काम लेना सीखता जावेगा। माता-पिता का तो काम यह है कि बच्चा जब हाथों से काम करने लगे तो उसे रोकें नहीं, उसका उत्साह बढ़ावें, जो काम वह ठीक न करे तो स्वयं ठीक करदें। जब बच्चा बड़ा हो जावे तो कुछ खास काम करना अवश्य सिखावें। हम इस सम्बन्ध में आपको आगे कुछ और बतावेंगे।

मन, बुद्धि तथा हृदय भी ज्ञानेन्द्रियों की शक्तियां बढ़ाने से ही बढ़ते हैं। जो २ वस्तु बच्चा रखता है, समझता है, सुनता है, सूंघता है, छूता है उनसे मनमें विचार उत्पन्न होते हैं, बुद्धि भी कुछ २ काम करना शुरू कर देती है। मां को देख बच्चे का हृदय प्रेम से भर जाता है, इसी को आगे को बढ़ना कहते हैं। मन, बुद्धि, व हृदय के बढ़ने से आत्मा प्रबल होती है। इसी कारण आज जो एक साधारण बच्चा है वह कल एक ज्ञानी और महान आत्मा बन जाता है।

माता—यह शिक्षा देने के साधन तो आपने खूब बताये, बातें तो अभी बहुत जानने को बाकी हैं। बहुत सी बातें पूछनी रह गईं, परन्तु अब समय बहुत हो गया है; बाबू जी आते होंगे, उनके भोजन का प्रबन्ध करना है। आप कल फिर कृपा करें। आपने तो आज भी बड़े ही काम की बातें बताई हैं।

पं०जी—हां माता जी, ठीक है। मैं कल फिर आऊँगा, इसी समय।

माता—पं०जी प्रणाम। (बहू ने भी हाथ जोड़ दिये)।

पं०जी—सुखी रहो। (प्रस्थान)

(क्रमशः)

स्त्रियां देश के लिए क्या करें ?

१-स्त्रियां चरखा चला, विदेशी चीजों का बहिष्कार कर, फिजूलखर्चियों को बन्दकर, देश की सेवा कर सकती हैं।
२-रूढ़ियों, वहमों, भ्रमों, अन्ध-विश्वासों और मिथ्या रस्मों को छोड़ वे देश का बड़ा भारी कल्याण कर सकती हैं।
३-घर २ और मुहल्ले २ में आजादी का सन्देश सुनाकर सोती हुई जनता को जगा सकती हैं।
४-पर्दे की लानत को मिटाकर अपनी पिछड़ी हुई बहनों में क्रांति पैदा कर सकती हैं।
५-अपने घरों में सफाई व व्यवस्था रखकर वे समस्त देश में सफाई व व्यवस्था का प्रचार कर सकती हैं।
६-अपनी सन्तान को साहसी बनाकर तथा अपनी अनपढ बहनों को पढाकर वे सच्ची देशसेवा कर सकती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जापान के वीर बालक

ले०—श्री बंसीधर

प्रिय बाल बन्धुओ ! शायद आप सोचते होंगे कि संसार के सभी बच्चे आपकी तरह दुःखी और परेशान रहते होंगे। किंतु यह बात नहीं है। आजाद देशों के बच्चे सदा प्रसन्न चित्त रहते हैं, खूब खेलते हैं, खूब आनंद करते हैं। वे कभी उदास और मुरझाए हुए दिखाई नहीं देते। इस लेख में मैं आपको जापान के देशभक्त बच्चों का कुछ हाल बताऊंगा। इससे आपको पता चल जाएगा कि आप में और जापान क बच्चों में कितना अंतर है।

जापान के बच्चे कई बातों में संसार के सभी बच्चों से बाजी ले गए हैं। देशभक्ति, स्वच्छता, सादगी और सरलता में कोई उनका मुकाबला नहीं कर सकता। वे बचपन से ही इतने सहनशील हो जाते हैं कि दुःख-सुख की जरा भी परवाह नहीं करते जापानी बच्चे फूलों को बहुत पसंद करते हैं। फूलों को देखने के लिए वे मीलों चले जाते हैं। वे फूलों के बड़े सुन्दर गुलदस्ते बनाते हैं। जापान के गरीब से गरीब बालक भी एकाध घण्टा फूलों के लगाने में लगाते हैं। बालुरेत से चित्र बनाने का भी उन्हें बड़ा शौक है। जापानी बच्चे बड़े मेहनती होते हैं। वे रात-दिन कुछ न कुछ काम करते ही रहते हैं। गप लड़ाना, शोर-करना, इधर-उधर की बातों में समय गंवाना उन्हें अच्छा नहीं लगता हमारे देश के बच्चों की तरह वे आलसी और झगड़ालू नहीं होते। वे अपना सब काम चुपचाप करते हैं। बड़ों की आज्ञा का पालन करते हैं, उनका आदर करते हैं। वे सब के साथ बड़े अदब और नम्रता से पेश आते हैं। उनका रहन-सहन, खान-पान बहुत सादा है। अनुशासन का वे बड़ा ख्याल रखते हैं। चोरी वे कतई नहीं करते सदा सच बोलते हैं।

शिक्षा—जापान में ६ साल से लेकर १२ साल तक के सभी बालकों को पढ़ना पड़ता है। स्कूल जाने योग्य बालकों में से ९९.४८ प्रतिशत बालक स्कूल में जाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार के किसी भी अन्य देश में ऐसा नहीं है। जापान में पढ़ाने का ढङ्ग बड़ा रोचक है। खेल-खेल में बच्चों को बहुत कुछ सिखा दिया जाता है। हमारे बच्चों की तरह आंख मींच कर तोते की तरह उन्हें पुस्तकें नहीं रटाई जातीं उनकी रुचि का ख्याल रखते हुए उन्हें पढ़ाया जाता है किसी बालक को सजा नहीं दी जाती। सभी बालक अपना पाठ खुशी-खुशी याद कर लेते हैं। अमीर-गरीब सभी बच्चे साथ-साथ पढ़ते हैं, सब काम अपने हाथ से करते हैं। कमरे की सफाई तक बालक ही करते हैं सभी बालक गहरी नीली फौजी ढङ्ग की पोशाक पहनकर स्कूल में जाते हैं पुस्तकों को फौजी ढङ्ग के थैले या रेशमी रुमाल में बाँधकर ले जाते हैं कक्षा में शिक्षक न हो तोभी वे चुपचाप अपना काम करते हैं। यहां के बालकों की तरह वे एक दूसरे को नहीं छेड़ते और न ऊधम मचाते हैं जापानी बच्चे नौकरी के लिए नहीं पढ़ते। बड़े होकर वे व्यापार करते हैं या कोई स्वतंत्र धंधा। आजादी से जिंदगी बसर करना वे बहुत पसन्द करते हैं हमारे देश के पढ़े-लिखों की तरह वे नौकरी के लिए इधर-उधर मारे २ नहीं फिरते।

स्वावलम्बन—जापानी बच्चों को इस ढङ्ग से शिक्षा दी जाती है कि वे अपनी पढ़ाई का खर्च आसानी से निकाल लेते हैं। पढ़ाई के लिये वे अपने माता-पिता से कुछ नहीं लेते। वे पढ़ते भी हैं और साथ साथ कमाते भी हैं। छोटी-छोटी उम्र के बालक मोटर, ट्रामगाड़ी, साइकिल, बेतार का तार, तेल-साबुन, खिलौने आदि हजारों छोटी २ चीजें बनाकर बेचते हैं। जापान का ६-७ साल का बालक ऐसी सुंदर चीजें बना लेता है जिन्हें हमारे देश के बी०ए० और एम०ए० भी नहीं बना सकते छुट्टी के दिनों में कारखानों में काम करके वे काफी रुपया कमा लेते हैं। कितने ही बालक बैङ्क में अपना हिसाब रखते हैं और जरूरत पड़ने पर वहाँ से रुपया निकाल लेते हैं। इस प्रकार जापान के बालक शुरू से ही अपने पाँव पर खड़ा होना सीख जाते हैं। इसके विपरीत हमारे देश के बालक तो क्या पढ़े लिखे भी खर्च के लिए माता-पिता का मुंह ताकते रहते हैं। नौकरी के सिवाय वे और कुछ काम कर ही नहीं सकते। हाथ के काम से तो वे नाक भौं सिकोड़ते हैं। भूखों मर जायेंगे किंतु कोई धंधा न करेंगे लेकिन जापान में यह हालत नहीं है। वहाँ के बालक और बालिकाएँ आसानी से जीवन निर्वाह कर सकती हैं।

खेल—जापानी बच्चे खेल में भी किसी से पीछे नहीं हैं। हां, वे ऐसे खेल नहीं खेलते जिनमें समय तो खूब लगे किंतु लाभ कुछ न हो। वहाँ के बच्चे कुश्ती लड़ना,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैरना, नाव चलाना बड़ा पसंद करते हैं। जुजुत्सु खेल भी वे बड़े शौक से खेलते हैं। इस खेल से वे अपने से दुगुने-तिगुने आदमी को आसानी से पछाड़ सकते हैं। बड़े भाई-बहन छोटे भाई बहनों को पीठ पर बाँधकर गलियों में खिलाने ले जाते हैं। खेलते समय बालक न तो शोर मचाते हैं और न लड़ाई झगड़ा करते हैं। किंतु हमारे देश के बच्चे तो खेल में आफत मचा देते हैं। यदि कोई निरीक्षक न हो तो सारा समय लड़ाई झगड़े में ही गुजर जाता है।

भ्रमण—जापान में भ्रमण शिक्षा का अनिवार्य अङ्ग है। इतवार या किसी छुट्टी के दिन सब बालक पहाड़ी या ऐतिहासिक स्थानों पर भ्रमण के लिए जाते हैं। अपना २ खाना साथ ले जाते हैं। भ्रमण का प्रोग्राम पहिले से ही बना लिया जाता है। इन भ्रमणों से बालकों को बड़ा लाभ होता है। वे नई २ चीजें देखते हैं, नई २ बातें सीखते हैं, वीर और साहसी बनते हैं। भ्रमण से लौटने पर सब बालक नोट लिखकर अपने अध्यापक को दिखाते हैं। साल में एक बार स्कूल के सब बालक रात भर पैदल चलते हैं। इसमें उन्हें बड़ा मजा आता है। हमारे देश के बच्चों को यदि रात-भर पैदल चलाया जावे तो शायद माता-पिता अपने बालकों को स्कूल में ही न भेजें। शुरू से ऐसी आदत न होने की वजह से हमारे देश के बच्चे दूर जाने से घबराते हैं।

फौजी शिक्षा—जापान में प्रत्येक बालक के लिए फौजी शिक्षा भी जरूरी है। १२ साल की उम्र तक जापानी बालक फौजी ड्रिल, तलवार चलाना, तीर चलाना, बन्दूक चलाना आदि सब बातें सीख जाता है। जापानी बालक अपनी बन्दूक लिए, वर्दी पहने, परेड करते हुए जब बाजार से गुजरते हैं तो वह नजारा देखते ही बनता है। वे मस्त होकर फौजी गीत गाते हैं और झंडे को सलामी देते हैं।

बाल-सभा—जापान में बाल-सभाओं के लिए बाल भवन बने हुए हैं। वहाँ बालक अपनी सभाएँ करते हैं। गर्मागर्म बहस होती है। देश की सभी समस्याओं पर वाद-विवाद होता है, प्रस्ताव पास होते हैं। इन प्रस्तावों को पार्लिमेंट के पास भेज दिया जाता है। बाल-सभा का सब काम बालक ही करते हैं। बालक ही सभापति और बालक ही मंत्री बनते हैं। इन बाल-सभाओं में देश भक्ति व स्वास्थ्य संबंधी विषयों पर खूब चर्चा होती है। किंतु हमारे देश में ऐसी सभायें कहाँ हैं? बालक तो दर किनार हमारे देश के तो युवक भी जब बोलने के लिए खड़े होते हैं तो लड़खड़ाते हैं, और कांपते हैं पसीना-पसीना हो जाते हैं।

बाल-समाचारपत्र—जापान में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-समाचार पत्र भी खूब निकलते हैं। कुछ पत्र तो ऐसे हैं जिनकी व्यवस्था व संपादन बालक ही करते हैं। बाल-संपादक देश की समस्याओं पर दिल खोलकर अपने विचार लिखते हैं। बालक इन पत्रों को बड़े चाव-से पढ़ते हैं और अपने देश का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इन पत्रों में दूसरे देशों की भी जरूरी खबरें रहती हैं। बाल-पुस्तकालयों की भी जापान में कमी नहीं है। पुस्तकालय बालोपयोगी साहित्य से भरपूर होते हैं। बालक इनसे खूब लाभ उठाते हैं।

स्वच्छता-व्यवस्था—स्वच्छता-व्यवस्था तो वहां के बालकों में कूट २ कर भरदी जाती है। जापानी बालकों के कपड़े, नाक, कान, आँख आदि सभी साफ सुथरे रहते हैं। जापानी बालक जहाँ कहीं जरा सा भी कूड़ा-करकट देखता है, उसे फौरन उठा देता है। बालकों के कमरे, फर्श आदि सब साफ रहते हैं। गर्द-गुब्बार का तो कहीं निशान भी दिखाई नहीं देता। माता-पिता तथा शिक्षक सभी स्वच्छता का बड़ा ध्यान रखते हैं। स्वच्छता की तरह व्यवस्था का भी बालक बड़ा ध्यान रखते हैं। वे अपनी सब चीजों को सभाल कर तरतीब के साथ रखते हैं प्रत्येक चीज अपने २ स्थान पर रखी रहती है। किंतु हमारे बच्चों में सफाई और व्यवस्था का नाम तक नहीं। वे सिर से पाँव तक गंदे रहते हैं। उनका शरीर गंदा, कपड़े गंदे और पुस्तकें गंदी! उन बेचारों का कसूर भी क्या है। उन्हें ये बातें सिखाता कौन है? यहाँ तो बच्चों की चीजें और पुस्तकें इस तरह बिखरी पड़ी रहती हैं मानों एक अच्छा-कबाड़ी बाजार लगा हो।

देश-भक्ति—जापानी बालकों की देशभक्ति जगत्-विख्यात है, देशप्रेम तो उनकी रग-रग में समाया हुआ है। अपने देश का अपमान वह तनिक भी गवारा नहीं कर सकते। देश के लिए हंसते २ मर मिटना तो उनके लिए एक खेल है। जापानी बालक मृत्यु से जरा भी नहीं डरते। देश के लिए आत्मघात कर लेना उनके लिए एक साधारण सी बात है। मातृभूमि के लिए वे भारी-भारी कठिनाई उठा सकते हैं, मुसीबत झेल सकते हैं, अपना सब कुछ लुटा सकते हैं। वे अपने ही देश की बनी चीजें काम में लाते हैं। विदेशी चीजों को इस्तेमाल करना देश-द्रोह समझते हैं। प्रत्येक जापानी बालक को ४८ सवाल-जवाब कंठस्थ कराये जाते हैं जिससे बचपन में ही देश-भक्ति उनके रोम-रोम में बस जाती है। नमूने के तौर पर कुछ सवाल-जवाब नीचे दिये जाते हैं।

स०—तुम्हारे जीवन का उद्देश्य क्या है?

ज० - अपने देश की सेवा करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स०—तुम्हारी शिक्षा का उद्देश्य क्या है ?

ज०—अपनी मातृभूमि को उन्नत तथा समृद्धिशाली बनाना।

स०—तुम्हारी हार्दिक अभिलाषा क्या है ?

ज०—ऐसा सुअवसर मिले कि देश की सेवा में बलिदान होकर अमर हो जाऊं।

स०—तुम्हारा धर्म क्या है ?

ज०—स्वतन्त्रता, पुरुषार्थ तथा स्वास्थ्य-रक्षा।

स०—तुम्हारे आभूषण क्या हैं ?

ज०—आत्म-सम्मान, आत्म-विश्वास तथा आत्म-बल।

प्रिय बाल-बंधुओ ! ऐसे वीर और देश-भक्त हैं जापान के बच्चे ! आप में भी शक्ति है। आप भी जापानी बच्चों की तरह वीर निर्भीक और साहसी बन सकते हैं। मैं जानता हूँ कि आपके रास्ते में रुकावटें हैं। हौवा और बिलाव का डर दिखाकर आपकी भावनाओं और उमङ्गों को बचपन में ही चूर चूर कर दिया जाता है। शैतान और नालायक कह कर आपको ठुकराया जाता है, फटकारा और दुत्कारा जाता है। किंतु यह सब कुछ होते हुए भी आप सब मिलकर, बाल सभाएं बनाकर, अच्छी २ पुस्तकें पढ़कर, अपने और दूसरे देशों के वीर बालकों का हाल जानकर, अपने जीवन को सुखमय बना सकते हैं। आप एक क्षण के लिए भी यह न समझें कि आप में ताकत नहीं है, उत्साह नहीं है, योग्यता नहीं है आप में सब कुछ है, आपने अपने को अभी पहचाना नहीं है। अपने को पहचानते ही आप गजब कर दिखायेंगे। जापान के बच्चे तो क्या दुनिया के किसी भी देश के बच्चों से आप पीछे न रहेंगे।

पनडुब्बे और जल सुरंगें

ले०—श्री अनिल, हजारीबाग

बालको ! आज कल जो लड़ाई चल रही है, उसमें पनडुब्बे और जल-सुरङ्गों से खूब काम लिया जा रहा है। पनडुब्बे एक तरह की बड़ी नावें मछली के आकार की होती हैं। ये पानी के ऊपर और पानी के भीतर चलती हैं। इस की लंबाई ३६४ फुट तक होती है। यह पानी के भीतर लगातार ६० घण्टे तक रह सकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इसकी बनावट बड़ी चतुरता से की गई है। इसके भीतर बिजली की रोशनी, खाने पीने का सामान, मीठा पानी और नाविकों के रहने के स्थान बने रहते हैं। शत्रु के जहाज पर ये आक्रमण कर फौरन डूब जाता है। फिर किसी को इसका पता नहीं चलता। समुद्री लड़ाई में, जहाज डुबोने में ये बड़े काम आते हैं। पनडुब्बा पानी पर पड़ा रहकर शत्रु के जहाजों को ताकता रहता है। ज्योंही उसे जहाज आने की आहट मिलती है, वह हमला करने के लिए सावधान हो जाता है। मौका पाते ही पनडुब्बे का कप्तान उस पर तारपीडो नामक एक हथियार छोड़ता है। यह बिजली के जोर से चलता है जैसे ही तारपीडो जहाज को लगता है, जहाज डूबने लगता है, और पनडुब्बा गायब हो जाता है। इस पनडुब्बे में एक ऐसा आश्चर्यजनक यंत्र रहता है; जिससे पानी के भीतर से १३ वर्गमील की ऊपरी सतह देख सकते हैं। इस यंत्र का नाम पेरिसकोप है। पनडुब्बा पानी की सतह पर एञ्जिन द्वारा और पानी के भीतर बिजली से चलता है। सबसे पहिले पनडुब्बों को जर्मनी ने ही बनाया था।

जल-सुरङ्ग

ये लोहे के गोले होते हैं; और पानी पर तैरते हैं इनमें भड़कने वाली चीजें भरी जाती हैं। ये उस जगह पानी में छोड़े जाते हैं, जहाँ से शत्रुओं के जहाज आते जाते हों! ज्योंही जहाज की इससे टक्कर होती है, यह गोला शीघ्र ही फूट पड़ता है। यह इतनी तेजी से फूटता है कि जहाज के टुकड़े २ हो जाते हैं। जल-सुरङ्गे अब और भी तेज बनाई गई हैं। एक चुम्बकीय गोला जल-सुरङ्ग ऐसी होती है; जिसमें चुम्बक रहता है। वह गोला जहाज को अपनी तरफ खींच लेता है। जहाज आप-से-आप आकर इससे टकरा जाता है। चुम्बक वाला गोला बड़ी खतरनाक चीज है।

इन्हीं पनडुब्बों द्वारा जर्मनी और ब्रिटेन में समुद्री लड़ाई जोरों से चल रही है। कभी-कभी कप्तान निशाने में चूक भी जाता है; जिससे जहाज डूबने नहीं पाते। निशाना लगाने के पहिले, जहाज की रफ़्तार, जहाज की दूरी तथा तारपीडो की चाल का पूरा पता लगाना पड़ता है। जरासी भूल हो जाने पर निशाना चूक जाता है, और शत्रु भाग निकलता है। ('बच्चों की दुनिया')

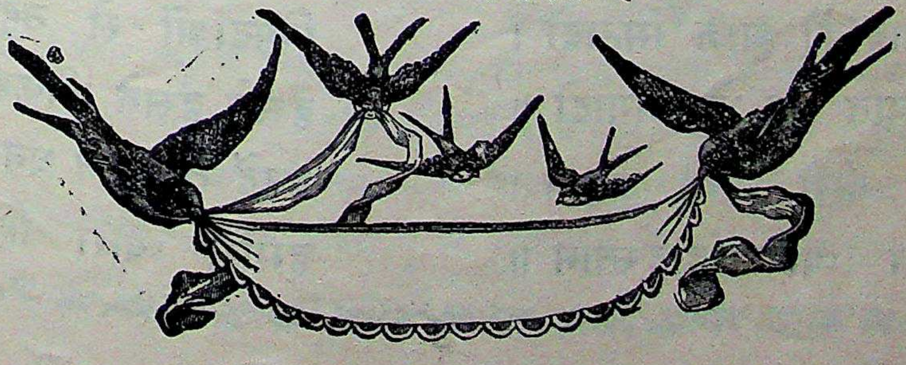

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत-गान

'विकल'

इसे आजाद करो भगवान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

(१)
विद्या, बुद्धि, धन में बल में ।
जिसके सम था न भूतल में ॥
उसका होता अब अपमान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

(२)
खून पसीना नित्य बहावें ।
भोजन हा ! भर पेट न पावें ॥
भूखे हैं मजदूर किसान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

(३)
जैनी सिक्ख बौद्ध इसाई ।
हिन्दू मुसलिम भाई भाई ॥
करते हैं सब मिल गुणगान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

(४)
खादी ताना खादी बाना ।
सत्य अहिंसा के गुण गाना ॥
करमें लेकर अमर निशान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

(५)
भेदभाव को आज मिटादो ।
छूत छात का भेद भगादो ॥
जागो वीरो जगा जहान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

(६)
विपदाओं से नहीं डरेंगे ।
हँसते हँसते 'विकल' मरेंगे ॥
करदें तन मन धन बलिदान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'देने में आनन्द'

लेखिका--कु० कमला ब्रह्म

उस दिन भयङ्कर, सुन-सान, काली रात थी, चारों ओर घनघोर घटा छाई हुई थी, बिजली बार-बार चमक रही थी। इतने में ही मेघों का गर्जन शुरू हुआ और जोर२ से वर्षा होने लगी।

ऐसे डरावने समय में मुनुआ अकेला बेहताशा दौड़ता हुआ जा रहा था। दौड़के २ वह डाक्टर साहिब के घर की ओर मुड़ा और दरवाजा खटखटाने लगा। डाक्टर साहिब समझे कि "कोई रोगी होगा, अच्छी रकम हाथ लगेगी। एक तो पानी बरस रहा है, दूसरे रात का समय, अतः दूनी फीस अवश्य लूंगा।" पर जब डाक्टर साहिब ने दरवाजा खोला तो सामने एक भिखमंगे लड़के को खड़ा पाया। वे बड़े नाराज हुए और डपट कर लड़के से पूछा? "क्यों बे क्या है?" मुनुआ ने हाथ जोड़ कर कहा, "गरीब परवर, मेरी प्यारी मां सख्त बीमार है, उसके लिये दवाई दीजिए, देरी करने से शायद वह मर जायगी। सरकार थोड़ा सा·········।"

डाक्टर साहिब ने कठोर स्वर से चिल्ला कर कहा, "हरीदीन, हरीदीन, इस भीखमंगे को खदेड़ कर दरवाजा बन्द करदो।" जैसा मालिक वैसा नौकर। हरीदीन ने आकर कहा, "चल बे पाजी भाग यहाँ से, चोरी करने आया है, ठहर तुझे अभी तमाशा दिखाता हूँ।"

मुनुआ ने काँपते हुए कहा—"महाराज! थोड़ी सी दवा दे दो, मुझे मारो मत मैं·········।" इतने में हरीदीन ने उसकी खूब गत बनाई और उसे बाहर निकाल दिया। आखिर रोते २ मुनुआ अपने घर चला गया और जाकर देखा कि उसकी मां चल बसी है। बेचारा मुनुआ संसार में अपनी माँ को ही जानता था, उसे अब सारा संसार सूना दिखने लगा। वह शोक से व्याकुल हो उठा और पछाड़ खाकर गिर पड़ा। जब होश में आया तो सवेरा हो चुका था।

मुहल्ले वालों को पता लगा तो सेवासमिति वालों को खबर की गई। वे मुनुआ की माँ का दाह-संस्कार करने को आये। मुनुआ अपनी माँ को लिपट कर रो रहा था और सेवासमिति वालों को उसे उठाने न देता था। आखिर उसका दाह-संस्कार किया।

मुनुआ ने आज दो दिन से कुछ खाया नहीं था, और खाता कहाँ से, वह तो अपनी माँ के सिवाय किसी को जानता न था और घर में कुछ खाने को था नहीं। वह भूख से तड़फने लगा और द्वार-द्वार पर जाकर भीख माँगने को विवश हुआ। किसी ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दया कर उसे एक रोटी दे दी। मुनुआ रोटी को खाने ही वाला था कि उसे किसी की करुणा भरी आवाज सुनाई पड़ी—'एक रोटी, भूखा हूँ'। उसने कुछ दूर पर एक अन्धे को रोते हुए देखा और झट से उसके पास जाकर पूछा, "भाई, क्यों रो रहे हो?" बूढ़े अन्धे ने कहा, "सरकार बहुत भूख लगी है, कुछ खाने को दीजिए।" भूखे मुनुआ ने अपनी रोटी उसे दे दी। अन्धे ने आनन्द से गद्‌गद् होकर कहा, "हुजूर, आज दो दिन से माँग रहा हूँ, किसी ने मेरी तरफ ध्यान ही न दिया। आज मुझे खाने को न मिलता तो मर जाता। मेरे लिए यह रोटी ही काफी है।"

बूढ़ा रोटी खाकर मुनुआ को आशीष देने लगा। इतने में उसे जान पड़ा कि कोई उसके गले में हाथ डालकर कह रहा है—"मित्र! मुझे हुजूर मत कहो, मैं तुम्हारी ही तरह एक अभागा हूँ, दो दिन से मैं भी भूखा हूँ। आज भाग्यवश एक रोटी पायी और उसे तुम्हें खिला कर मैं, अत्यन्त आनन्दित हो रहा हूँ। मित्र, आज मैंने जाना कि देने में ही आनन्द है।"

भारत तेरी सपूत सन्तान!

धन्य भारत! तेरी सपूत सन्तान।
हुए हैं तुममें अनगिन वीर महान॥
भीम—अर्जुन जैसे योद्धा बलवान।
विश्व गाता है जिनके यश का गान॥

धर्म—प्रचारक हुए जागा सँसार।
महावीर और बुद्ध—किया उद्धार।
उनका कर अनुगमन करो शुभ करनी।
बच्चो! करदो पुण्यमयी यह धरनी॥

—रमेशचन्द्र जैन, कक्षा सप्तम, अमृतसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

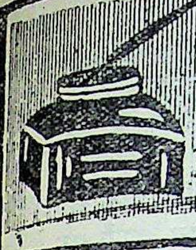

सम्पादकीय नोट

देशभक्ति इसे कहते हैं !

यूरोप में स्थिति के एकदम गम्भीर हो जाने से इँगलैंड की पार्लमिंट में हाल ही में एक क्रांतिकारी एक्ट पास किया गया है। इस एक्ट से इँगलैंड की सारी आबादी और जायदाद पर सरकार का कब्जा हो गया है। वह अब किसी भी आदमी से जो काम चाहे ले सकती है। किसी भी समय काम के लिए उसे बुला सकती है। आवश्यकता होने पर जायदाद की भी मांग कर सकती है। इसी प्रकार बैंकों पर भी सरकार का नियन्त्रण हो गया है। नया एक्ट अमीर-गरीब, छोटे-बड़े, मर्द-औरत, सभी पर लागू होगा। इसमें किसी के लिए भी अपवाद नहीं है। कहने का मतलब यह है कि इस एक्ट ने सारी सत्ता सरकार के हाथ में दे दी है, वह जो उचित समझे करे। कानून उसके रास्ते में कोई बाधा नहीं डाल सकता। दूसरे शब्दों में राष्ट्रहित के लिए व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का कुछ अर्से के लिए बलिदान कर दिया गया है। पाठक यह पढ़कर हैरान होंगे कि इतना क्रांतिकारी बिल दोनों सभाओं में केवल २॥ घण्टे में सर्व सम्मति से पास हो गया। किसी भी पार्टी के नेता ने इसका विरोध नहीं किया। उसी दिन सम्राट के हस्ताक्षर भी इस एक्ट पर हो गए। केवल २॥ घण्टे में इँगलैंड की स्थिति बदल गई। उसका काया-कल्प हो गया। बर्नार्डशा ने ठीक ही कहा है कि रूस जो काम बीस साल में नहीं कर सका वह इँगलैंड ने २॥ घण्टे में कर दिखाया।

अँग्रेजों की प्रचण्ड देशभक्ति व एकता का यह एक ज्वलँत उदाहरण है। अपने प्यारे राष्ट्र की रक्षा के लिए, उसे हिटलरिज्म से बचाने के लिए इँगलैंड का बच्चा-बच्चा भारी से भारी कुर्बानी करने के लिए तैयार है। इसे कहते हैं देशभक्ति ! इसे कहते हैं आजादी के लिए मर मिटना ! यहां तो आजादी के लिए मत भेदों को मिटाया जा रहा है, निर्दय शत्रु के दांत खट्टे करने के लिए सिर-धड़ की बाजी लगाई जा रही है, किंतु यहां का, हमारे देश का बाबा आदम ही निराला है। हम आज भी हिंदुस्तानी न होकर हिंदु-मुस्लिम, सिख और इसाई हैं और जरा-जरा सी बातों पर सिर फुटव्वल कर रहे हैं। मत भेदों की खाई को और भी चौड़ा कर रहे हैं। अपना उल्लु सीधा करने के लिए नाना प्रकार के प्रपञ्च रच रहे हैं, जाल बिछा रहे हैं, व्यर्थ के लड़ाई-झगड़ में अपना समय खो रहे हैं। सङ्कट के समय भी हम साथ बैठकर, कँधे से कन्धा मिलाकर, डटकर काम नहीं कर सकते। हम तो आज भी 'पाकिस्तान' और 'खालिस्तान' के स्वप्न ही देखते हैं और "अपनी २ ढपली और अपना २ राग" वाली कहावत को चरितार्थ कर रहे हैं। हमें गुलामी से इतना मोह हो गया है कि हम इसे छोड़ ही नहीं सकते। जैसे बँदरिया अपने मरे हुए बच्चे को भी छाती से चिपकाये रहती है और उसे छोड़ती नहीं, उसी तरह हम भी गुलामी से चिपटे रहना चाहते हैं। इसे छोड़ते हुए हमें दुःख होता है, दर्द होता है, पीड़ा होती है। काश ! भारतवासी अपनी मूर्खता को समझें, अपनी सदियों की गुलामाना जहनियत को तर्क करें, निहित स्वार्थों को छोड़ें, फिजूल के मत भेदों को मिटाएँ और किसी को यह कहने का मौका न दें कि हम आपस में लड़ते हैं इसलिए हमें अभी स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती। स्वतँत्रता लेने-देने की वस्तु नहीं है। जब हमने दृढ़ निश्चय कर लिया कि हम स्वतन्त्र होकर ही रहेंगे, गुलामी की धज्जियाँ उड़ा देंगे तो फिर दुनिया की कोई भी शक्ति हमें पराधीन नहीं रख सकेगी। किंतु सवाल तो यह है कि क्या हम ऐसा निश्चय करने के लिए तैयार हैं ? क्या आजाद मुल्कों की तरह आजादी की कीमत चुकाने का हम में साहस है ?

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक कुली की कीमत !

एक दिन कलकत्ता के एक गोरे सिपाही ने एक रिक्शा किराए पर की। जब रिक्शा किले के दरवाजे पर पहुंची तो रिक्शा वाले ने गोरे से किराया माँगा। पूरा किराया न मिलने पर गोरे और रिक्शा वाले में कुछ कहा-सुनी हो गई। बस, फिर क्या था, गोरे सिपाही का पारा एकदम चढ गया। एक काले आदमी का उसे अपने सामने इस तरह बोलना फूटी आंखों न भाया। उस ने आव देखा न ताव, जोर से रिक्शा-कुली को एक घूँसा जमा दिया। गरीबी के मारे, दुबले-पतले उस कुली में इतनी ताकत कहां थी कि वह इस चोट को झेल सकता। घूँसा लगते ही वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा और अस्पताल में जाकर उसकी मृत्यु हो गई। मुकदमा चला। गोरे सिपाही पर केवल २५०) रुपया जुर्माना हुआ और वह छोड़ दिया गया। इससे लोगों में बड़ा असन्तोष फैला। किंतु बना कुछ भी नहीं। हाईकोर्ट के दो न्यायाधीशों ने भी यही राय दी कि स्थिति विशेष में जो कुछ किया गया है वह ठीक है। यदि कुली के हाथों कहीं गोरे सिपाही की मृत्यु हो जाती तो आफत का पहाड़ टूट पड़ता। किंतु इस देश में गरीबों के जीवन का मूल्य ही क्या है ? केवल २५०) रुपया ! आये दिन इस अभागे देश में इस तरह की दुर्घटनाएँ होती रहती हैं। गरीबों की इस देश में कोई पूछ नहीं है। उनके दिल पर जो कुछ गुजरती है उसे वही जानते हैं। वह कहें किससे ? उनकी कहीं सुनवाई तो होती नहीं। जिन कुलियों को इस घृणा-दृष्टि से देखा जाता है वही आड़े वक्त में देश के काम आते हैं, इसकी सेवा करते हैं। यदि ये न हों तो दुनिया का काम ही बन्द हो जावे। न ये विशाल महल रहें और न ये बड़े २ कारखाने। देश की बहुमूल्य सम्पत्ति के साथ इस प्रकार निर्दयता का व्यवहार किया जाना सरासर लज्जाजनक और अपमानजनक है। इससे पता चलता है कि मानवता का कहाँतक पतन हो गया है। जबतक नए समाज का निर्माण न होगा, जबतक सबके साथ मनुष्यता का व्यवहार न होगा, जबतक गरीब और पीड़ित तकदीर के चक्कर में पड़े हुए अन्याय को बिना चूँ-चिरा के सहन करते रहेंगे, जबतक स्वाभिमान की रक्षा के लिए मनुष्य अपना सब कुछ होम देने के लिते तैयार न होगा, जबतक मनुष्य अपनी रक्षा के लिए दूसरों की ओर देखता रहेगा; तबतक मानवता के साथ खिलवाड़ होता ही रहेगा और इस विषम स्थिति में किसी भी प्रकार का परिवर्तन न होगा। अतः आवश्यकता है कि गरीब अपने छोटे होने का खयाल छोड़कर अपने अधिकारों की रक्षा खुद करना सीखें अन्यथा वे इसी प्रकार दमन की चक्की में पिसते रहेंगे, पददलित होते रहेंगे और दूसरों से ठुकराए जाते रहेंगे। अपनी कीमत बढाना उन्हीं के हाथ में है।

भोजन और शोर—

भोजन के समय शोर-गुल का होना स्वास्थ्य पर कितना बुरा प्रभाव डालता है, इसका हम भारत वासियों को कुछ ज्ञान ही नहीं है। अगर कोई समझाता भी है कि भोजन के समय हो-हल्ला करना ठीक नहीं है तो लोग उल्टे उसका मजाक उड़ाने लगते हैं। यही वजह है कि हमारे भोजनालयों में, दावतों में, गार्डन-पार्टियों में कभी-कभी तो इतना शोर मचता है कि किसी शान्तिप्रिय आदमी के लिए वहाँ भोजन करना कठिन हो जाता है। वैज्ञानिकों ने अपने परीक्षणों द्वारा आज यह सिद्ध कर दिया है कि ऐसी जगह भोजन करना जहाँ गुल-गपाड़ा होता हो, स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। ऐसे स्थान में ४० प्रतिशत राल कम बनती है जिसके फलस्वरूप भोजन आसानी से नहीं पचता। भोजन पचाने में राल कितनी मदद देती है यह बात किसी भी समझदार व्यक्ति से आज छिपी हुई नहीं है। किन्तु जहां शोर हो वहां राल कम बनती है। इसलिये हमें चाहिए कि जहाँ तक हो सके भोजन करते समय शांति रक्खें। इसका मतलब यह नहीं कि हम बिलकुल गूंगे ही बन जावें और इशारों में ही बात करें। कहने का तात्पर्य सिर्फ यह है कि भोजन के समय व्यर्थ ही शोर-गुल न मचायें, जोर-जोर से न चिल्लायें, वाद-विवाद न करें, यदि बोलने की जरूरत पड़े तो आहिस्ता से बोल सकते हैं।

—०—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वोत्तम विशुद्ध

आयुर्वेदिक औषधें

सस्ते मूल्य पर मिलने का एक मात्र कारखाना

सचित्र सूचीपत्र मंगाकर देखिये।

सुख संचारक कम्पनी, मथुरा

श्वेत कुष्ठ

१०० वर्ष का अनुभव

९० प्रतिशत रोगी आराम

खाने की दवा मूल्य ४), लगाने की प्रति गोली १), डाक-व्यय आदि ॥-)

प्रिय वैद्यजी,

मैं जापान से अभी लौटा हूँ। मुझे आपको यह सूचित करते अत्यन्त हर्ष होता है कि अब मेरे सभी सफेद दाग़ बिलकुल अच्छे हो गए हैं। आपकी औषधि मैं अपने साथ जापान ले गया था और बराबर नियम से व्यवहार करता रहा था।

—सेठ हशमतराय हैदराबाद सिंध

नोट: - "श्वेत कुष्ठ चिकित्सा" पुस्तक बिना मूल्य मंगा कर पढ़ें।

राजवैद्य सीतलप्रसाद एण्ड सन्स देहली

चाँदनी चौक, मोती बाजार के सामने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REGD No. L. 3700

बसायें एक नया सँसार !

मिलें सब धर्मों के सरदार, बसायें एक नया संसार ॥

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई,
मिलकर आये भाई-भाई।
सत्य पिता के हम सब बच्चे, मात अहिंसा सबकी माई
उमड़ पड़ेगा प्यार।
बसायें एक नया सँसार ॥१॥

राम, कृष्ण, जिन, बुद्ध हमारे,
ईसु मुहम्मद धर्म दुलारे।
सबने सच्चा ज्ञान बताया, थे परमेश्वर के सब प्यारे
लड़ें हमीं बेकार।
बसायें एक नया सँसार ॥२॥

ऋषि-मुनियों का ध्यान धरेंगे,
मुल्लाओं का मान करेंगे।
पादरियों की प्रीचें सुनकर, सेवा के पथपर विचरेंगे
होगा तभी सुधार।
बसायें एक नया सँसार ॥३॥

वेद, पुरान कुरान, पढ़ेंगे,
पढ़कर आगे और बढ़ेंगे।
मां के पूत सपूत कहाकर क्यों उतरेंगे और चढ़ेंगे
यह उन्नति का द्वार।
बसायें एक नया सँसार ॥४॥

मन्दिर में पूजा पढ़ आयें,
मस्जिद में नमाज को जायें।
'चर्चों' में 'प्रेयर' गागाकर अपने मन को मस्त बनायें
होगा प्रेम प्रचार।
बसायें एक नया सँसार ॥५॥

परम्परा के गीत न गायें,
जगहित में ही धर्म बतायें।
दुष्फल बन्धन को ठुकराकर हितकर बंधन में बंधजायें
यही ज्ञान का सार।
बसायें एक नया सँसार ॥६॥

क्रिया काण्ड का बोझ हटायें,
बिगड़े मन को शुद्ध बनायें।
अपने मनका मोह मिटाकर, विश्वप्रेम का राग सुनायें
यही सत्य आधार।
बसायें एक नया सँसार ॥७॥

अपना तो अधिकार न छोड़ें,
पर न परायी सीमा तोड़ें।
देश-देश में प्रेम भाव से मानवता का बँधन जोड़ें
होगी शांति अपार।
बसायें एक नया सँसार ॥८॥

कभी न समझें प्रेम भङ्ग में,
बहें स्नेह की रस तरङ्ग में।
सङ्ग-सङ्ग में एक रङ्ग में सूर्य्यचन्द की शिव उमङ्ग में
दङ्ग बने सँसार,
भरे सब धर्मों का दरबार।

वर्धा
२०–५––१९४० }

—'सूर्यचन्द' डाँगी (सत्यभक्त)

मुद्रक एवँ प्रकाशक—श्री [illegible], दीपक प्रेस, साहित्य सदन, अबोहर (पञ्जाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाब, संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, बिहार, बम्बई, उड़ीसा, कोटा, बड़ौदा व बीकानेर राज्यों के शिक्षाविभागों द्वारा स्कूलों के लिए स्वीकृत।

ॐ

दीपक

आश्विन १९९७] साहित्य सदन, अबोहर [अक्तूबर १९४०

सम्पादक—तेगराम

वार्षिक मूल्य २।)
एक अङ्क का ।)

विश्वकवि श्री रविन्द्रनाथ टैगोर

आपके अकस्मात् अत्यधिक बीमार हो जाने के कारण सारा देश चिन्तित हो गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलता पुस्तकालय प्रबन्ध कमेटी

चलता पुस्तकालय प्रबन्ध कमेटी की बैठक 'तुलसी जयन्ती' उत्सव के अवसर पर १० अगस्त को दिन में १ बजे चलता पुस्तकालय मन्दिर में हुई और सर्वसम्मति से नीचे लिखे प्रस्ताव स्वीकृत हुए:—

१—प्रबन्ध कमेटी अगले वर्ष के लिए चलता पुस्तकालय कमेटी के प्रधान का चुनाव करे तथा प्रधान अगले वर्ष के लिए प्रबन्ध कमेटी बनावें।

२—सर्व सम्मति से आगामी वर्ष के लिए चौ० टीकमदास जी भूमियाँवाली चलता पुस्तकालय कमेटी के प्रधान चुने गए।

३—चलता पुस्तकालय कमेटी के मेम्बर तथा चलता पुस्तकालय के परम हितैषी श्री लाभूराम रिणवां, गांव बारेकाँ की दुखद असामयिक मृत्यु पर यह कमेटी अत्यन्त शोक प्रकट करती है तथा उनके कुटुम्बियों के साथ गहरी सहानुभूति प्रदर्शित करती है।

४—साहित्य सदन हितैषी ग्रामीण भी इसके केन्द्रीय पुस्तकालय से यथोचित लाभ उठा सकें, इसके लिए चलता पुस्तकालय प्रबन्ध कमेटी आवश्यक समझती है कि चलता पुस्तकालय की ओर से कम से कम ३ प्रतिनिधि केन्द्रीय पुस्तकालय की प्रबन्ध कमेटी में लिए जावें। इन प्रतिनिधियों का चुनाव चलता पुस्तकालय प्रबन्ध कमेटी करे। प्रधान मन्त्री इस आशय का प्रस्ताव केन्द्रीय पुस्तकालय कमेटी के सामने रखें।

५—चलता पुस्तकालय प्रबन्ध कमेटी की ८ अक्टूबर १९३९ की बैठक में जो प्रबन्ध कमेटी के मेम्बरों की वार्षिक सहायता ६) निश्चित हुआ था, वह अधिक है। प्रत्येक मेम्बर कम से कम ।) मासिक या ३) वार्षिक सहायता अवश्य दें, किन्तु जो मेम्बर पहले से ही इससे अधिक वार्षिक सहायता देते हैं वा देने की सामर्थ्य रखते हैं, वे पहले की तरह पूरी सहायता दें।

६—चलता पुस्तकालय कमेटी की ओर से उन सभी गाँवों से जिनमें पुस्तकें पहुंचती हैं, एक २ ऐसा मेम्बर चुना जावे जो उस गांव में चलता पुस्तकालय के लिए हर प्रकार की सहायता व प्रचार में सहायक बनें। इसकी मेम्बरी फीस १) वार्षिक हो, जो उस वार्षिक सहायता के अलावा हो जो वह पहले से ही चलता पुस्तकालय को देता आ रहा है।

श्री प्रधान जी ने चलते पुस्तकालय के कार्य कर्त्ताओं से सलाह करके अगले वर्ष के लिए चलता पुस्तकालय प्रबन्ध कमेटी के पदाधिकारियों व मेम्बरों का चुनाव नीचे लिखे अनुसार किया:—

प्रधान—चौ० टीकमदास जी, **उपप्रधान**—[१] चौ० हरिश्चन्द्र ढाका, गाँव नत्थू ढाका [२] चौ० लक्ष्मीचन्द, निहालखेड़ा, **प्रधान मन्त्री**—चौ० मनफूलसिंह बी. ए. एल-एल. बी. **सहायक मन्त्री**—चौ० आशाराम जी, ताजापट्टी, **कोषाध्यक्ष**—चौ० रामरख पूनियाँ पञ्जकोशी **निरीक्षक**—चौ० स्यालीराम काजला पञ्जकोशी [२] चौ० सूरदास भूमियाँवाली, **सदस्य**—चौ० चेतराम पूनिया, पञ्जकोशी, [२] चौ० शिवदत्तसिंह ढाका, उडांग, [३] चौ० मामराज नम्बरदार, चूडीवाला, [४] चौ० सहीराम बागड़िया, दुतारावाली, [५] चौ० लेखराम, महराजपुर, [६] चौ० मामराज पूनियां, बाजीदपुर, [७] चौ० लेखराम श्योराण; कुलार, [८] चौ० काशीराम, अमरपुरा, [९] मेहता नरनारायण, भङ्गरखेड़ा, [१०] स० नगेन्द्रसिंह, दानेवाला, [११] मा० रामसिंह, रामपुरा, [१२] चौ० साँवलराम, कटेड़ा, [१३] स० ईश्वरसिंह गद्दोंडोब।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

{ दीपक—वर्ष ५, संख्या १२, अक्तूबर १९४० ई० }

	विषय	लेखक	पृष्ठ सं०
१	कामना (कविता)	श्री अम्बिकाप्रसाद उपाध्याय	१
२	प्रौढ़ शिक्षा-प्रचार के उपाय	,, आचार्य काका कालेलकर	२
३	ग्राम सेवक का कार्य	,, हरिभाऊ उपाध्याय	३
४	अपने को जानो	,, व्रजमोहन मिहिर	४
५	सत्सङ्ग का व्यवहारिक स्वरूप	,, स्वामी तारकानन्द	६
६	अभिलाषा (कविता)	,, 'विकल'	७
७	प्राकृतिक अध्ययन	,, रामकृष्ण 'खद्दर' जी	८
८	इङ्गलैण्ड की राज्यव्यवस्था का इतिहास	,, गिरिराज जी बी० ए०	११
९	गीत (कविता)	,, आचार्य 'बटुक'	१४
१०	वृद्ध भिखारी (कहानी)	,, हृदयनारायण शर्मा	१५
११	सेनापति की पुकार	,, काशीनाथ त्रिवेदी	१८
१२	वह अद्भुत दृश्य	,, प्रभुदयाल विद्यार्थी	२०
१३	मलेरिया	,, डा० सुरेन्द्रप्रसाद	२१
१४	किसान चित्रकार	,, शुकदेवनारायण	२२
१५	परदा-प्रथा केवल एक रूढ़िवाद है !	,, राधादेवी गोयनका	२६
१६	शिशु-शिक्षा	,, कृष्णजसराय बी० ए० एफ० टी० एस०	२८
१७	अन्न की पुतली	,, ठा० देशराज	३०
१८	बाल प्रश्नोत्तरी	,, रामावतार विद्याभास्कर	३२
१९	मार्चिंग गीत	,, विकल	३३
२०	वीर ताम्रध्वज	,, मा० गुलाबसिंह कार्तिकेय	३४
२१	दीपक के प्रकाश में		३७
२२	सम्पादकीय नोटः—		३९

हमारी विवशता

पाठक इसी अङ्क में यह दुःखद समाचार पढ़ेंगे कि प्रेस के मशीनमैन की स्त्री का देहान्त हो गया। बीमारी की अवस्था में तथा बाद में कई दिन भी वे प्रेस में काम नहीं कर सके। इस स्थान पर और कोई प्रेस का काम जानने वाला मिल नहीं सकता। अतः लगभग एक सप्ताह 'दीपक' की छपाई बन्द रही जिससे उसका ठीक समय पर निकलना असम्भव हो गया आशा है पाठक इस ५ दिन की देरी के लिए क्षमा करेंगे।

—मैनेजर 'दीपक'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मूल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २॥) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४)।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जिनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढ़ाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा। १ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेसे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख डाक खर्च भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं।

८—जिन सज्जनों को किसी मास का 'दीपक' न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछ ताछ करके बाद में हमारे पास लिखना चाहिये।

९—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें और बदले के पत्र, सम्पादक, 'दीपक' साहित्य सदन, अबोहर के पते से और मूल्य तथा प्रबन्ध विषयक पत्र मैनेजर 'दीपक' के पते से भेजने चाहिएं।

स्तंभ—सूची

१ जीवनन-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्यग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म बचे अरु धन बचे, रोग समूल नसावे।
यह मौका न चूकिए, असली धूप जलावे।

मोतीराम सेठी दी

मशहूर धूप नं० १ (रजिस्टर्ड)

प्यारे मित्रो ! आप लोगों के सुभीते के लिए शुद्ध और सस्ती धूप तैयार की गई है। इसमें आयुर्वेदोक्त कपूरादि वर्ग की कई औषधियों का मिश्रण किया गया है इस वास्ते यह हमारी धूप अन्य धूपों से सुगन्धित व सस्ती भी है। वायु में जो रोगोत्पादक कीटाणु (कृमि) होते हैं उनको मारने व वायु को शुद्ध करने में अपनी शान की यह धूप एक है। यह धूप जंगली जड़ी बूटियों व शुद्ध पवित्र चीजों से तैयार की गई है हर एक भाई को इसका प्रयोग करना चाहिए। हमारे यहाँ पर अगरबत्ती बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है।

तैयार करदा:—**मोतीराम सेठी, अबोहर** (पंजाब)

तैयार है ! तैयार है !! तैयार है !!

क्या ?

कृष्णा छाप चूर्ण नं० १ (रजिस्टर्ड)

खरीदिये और खाइये

यह चूर्ण यथा नाम तथा गुणों से परिपूर्ण है। इस चूर्ण की तीन माशा से छः माशा मात्रा भोजन के बाद खाने से खाई हुई खुराक का समय पर ठीक रस बनता है। इसके अलावा अजीर्ण, संग्रहणी, जी मिचलाना, वमन आदि रोगों का नाश करता है। इसको हर मौसम में खाने से किसी नुकसान की सम्भावना न होगी। इसे वृद्ध, बालक, जवान और स्त्री-पुरुष सेवन कर सकते हैं। यह जंगली जड़ी बूटियां द्वारा आयुर्वेद के ज्ञाताओं की देख रेख में बनाया गया है।

नोट:—हमारे इस कारखाने में अगरबत्ती, धूपबत्ती, हवन सामग्री बढ़िया से बढ़िया तैयार की जाती है।

तैयार करदा:—**मोतीराम सेठी, अबोहर** (पंजाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-सदन अबोहर का
नया प्रकाशन

१—मेरी जापान यात्रा

विद्वान् तथा अनुभवी लेखक ने इस पुस्तक में भारत से जापान के मार्ग में पड़ने वाले महत्वपूर्ण स्थानों तथा जापान के दर्जनों सुप्रसिद्ध नगरों व दर्शनीय स्थानों, भौगोलिक स्थिति, प्राकृतिक सौंदर्य तथा राजनैतिक अवस्था, उत्कृष्ट शिक्षा-प्रणाली, समाजव्यवस्था, घरेलु-जीवन, धार्मिक-विचार आदि जापानी-जीवन के प्रत्येक पहलू का बारीकी से अध्ययन करके उल्लेख किया है।

जापान किस प्रकार इतना सस्ता माल तैयार कर अन्य देशों के बाजार अपने माल से भरता है? आदि महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर लेखक ने सुन्दर ढङ्ग से दिया है।

लेखक ने स्वयं कारखानों व घरों में जाकर वहां दस्तकारी की प्रत्येक प्रक्रिया का निरीक्षण करके पुस्तक में वर्णन किया है। इसमें जापानियों की जबरदस्त सङ्गठन-शक्ति, औद्योगिक-उन्नति, कठिन-परिश्रम, देश-भक्ति, सादगी आदि उन सब गुणों का वर्णन है जिनके कारण जापान ने यह अपूर्व उन्नति की।

पुस्तक में जापान सम्बन्धी कोई भी जानने योग्य बात छूट नहीं गई है। भारतवर्ष के प्रत्येक व्यक्ति—व्यापारी, शिल्पकार, शिक्षक व विद्यार्थी, महिला-समाज, राजनीतिज्ञ, देश-सेवक, साधारण जनता आदि—सभी के लिए पुस्तक में अनमोल बातें हैं। एक बार अवश्य पढ़िये। पृष्ठसंख्या लगभग १७५, मू० १)

२—बाल-गीत

इस छोटी सी पुस्तक में बाल-जीवन से सम्बन्ध रखने वाली सभी बातें छोटे-छोटे सरल पद्यों में रखी गई हैं। इनमें से बहुत से पद्य बालकों को कर्त्तव्य बताने की तात्कालिक आवश्यकता के समय निर्मित हुए हैं, तथा जिन आश्रम-बालकों के लिए ये लिखे गए थे, उन्होंने इनका अपूर्व स्वागत करके लेखक को इनके प्रचार के लिए प्रोत्साहित किया है।

इसमें अनन्त सत्य के ऊँचे से ऊँचे आदर्शों का बाल-संस्करण करके बालकों के सामने रखा गया है ताकि सत्य के अमर सन्देशों द्वारा बालकको मानसिक-शिक्षा मिले, उसका विकास पूर्णतः हो। इन पद्यों में मनुष्य-जीवन सम्बन्धी कोई भी बात छूट नहीं गई है। सौसे अधिक विषयों पर प्रकाश डालकर बाल-शरीर में उतरने वाली कर्म-शक्ति को सत्कार्यों की ओर प्रवाहित करने का प्रयत्न किया गया है।

इन पद्यों को कण्ठस्थ कर तथा उनमें वर्णित विचारों को पथप्रदर्शक मानकर चलने वाला बालक महान् व्यक्तित्व प्राप्त करेगा। प्रत्येक भारतीय बच्चे के हाथ में यह पुस्तक होनी चाहिए।

पृष्ठ संख्या १०० के लगभग मू० लगभग ।।)

साहित्य-सदन, अबोहर द्वारा प्रकाशित अन्य पुस्तकों के लिए नीचे लिखे पते पर लिखियेः—

प्रबन्धक, प्रकाशन-विभाग साहित्य-सदन अबोहर (पंजाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools in Punjab, U.P., C.P., Bihar, Bombay, Orissa, Kotah, Baroda & Bikaner States.

दीपक

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग की सम्पत्ति तथा पञ्जाब में राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रचार करने वाली प्रमुख संस्था—साहित्य सदन, अबोहर का मुखपत्र।

सत्यम् :: शिवम् :: सुन्दरम्

सम्पादक—तेगराम

आश्विन १९९७ | वर्ष ५, संख्या १२ | पूर्ण संख्या ६० | अक्तूबर १९४०

कामना

ज नता-जर्नादन की सेवा मैं सदैव करूँ,
न म्रता से जनता-जर्नादन को ध्याऊँ मैं।
ता कत लगा दूँ दीन दुखियों के हितार्थ सब,
ज ब जब जरूरत हो कष्ट भी उठाऊँ मैं॥
ना म की न चाह बदनामी का न भय हो मुझे,
र खके समत्व अपनत्व भूल जाऊँ मैं।
द लित निरीह दीन-दुर्बलों की सेवा ही से,
न र में नारायण की अनुभूति पाऊँ मैं।
की र्ति-कान्ता कांचन का लोभ न सतावे मुझे,
से वा सदैव मेरे जीवन का व्रत हो।
वा सना नहीं है कुछ यही कामना है सदा—
मे री सारी आयु देश-सेवा में ही गत हो॥
रा ष्ट्र की समुन्नति हो, भारत आजाद रहे,
व्र त पूर्ण करने में मेरा चित्त रत हो।
त न-मन सदैव जन-हित में ही व्यस्त रहे,
हो के भयत्रस्त पथ-भ्रष्ट चित्त मत हो॥

—अम्बिका प्रसाद उपाध्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रौढ़-शिक्षा-प्रचार के उपाय

[श्री आचार्य काका कालेलकर]

प्रौढ़ लोगों में अक्षर-ज्ञान का प्रचार करना इतना कठिन नहीं है, जितना कि उस अक्षर-ज्ञान को पक्का करना कठिन है। लोग सीखते हैं और भूल जाते हैं।

लोगों को अक्षर-ज्ञान देने के बाद उसे कायम करने के लिए परीक्षाओं का सहारा अच्छा है। परीक्षाओं की तैयारी करना, परीक्षाओं में बैठना, उत्तीर्ण होना—इस सब काम में एक किस्म का चाव रहता है।

किन्तु प्रौढ़ों को राष्ट्रभाषा पढ़ाने का तरीका मेरी दृष्टि से अलग ही होना चाहिए। वहां हमारा उद्देश्य, केवल अक्षर-प्रचार या भाषा-प्रचार न होकर, ज्ञान-प्रचार ही होना चाहिए। हमारे देश में प्राचीन काल से श्रौत-शिक्षा (Oral instruction) का प्रचार था। कथक, पुराणिक, हरिदास या ग्रन्थी पुस्तक पढ़कर सुनाते थे और गाँव के सब लोग मिलकर धार्मिक श्रद्धा से सुनते थे।

इस शिक्षा में इहलोक और उसके कर्त्तव्य के प्रति उदासीनता और परलोक के इतिहास—भूगोल में दिलचस्पी बढ़ने के कारण केवल निवृत्ति-मार्ग की शिक्षा का ही प्रचार हुआ।

किन्तु, अब हमें राष्ट्रीयता, सदाचार, आत्मनिष्ठा, संयम और जन-सेवक का आदर्श सामने रख कर प्रौढ़ों को रोजाना इसी के अनुकूल साहित्य पढ़कर सुनाने का तरीका जारी करना चाहिए। जिन्हें लिखना-पढ़ना नहीं आता और न सीख ही सकते हैं, उनको भी संस्कारों से और विविध जानकारी से वंचित नहीं रखना चाहिए। यदि उन्हें देश-विदेश का सामयिक ज्ञान कराया जावे तथा उनके शारीरिक, मानसिक, नैतिक, व्यवहारिक-ज्ञान के विकास के लिए श्रौत-शिक्षा का उपयोग किया जावे तो हम उन्हें शिक्षित, संस्कृत बना सकेंगे, फिर भले ही उन्होंने अक्षर-ज्ञान के रूप में कुछ भी लिखना-पढ़ना न सीखा हो। इस प्रकार शिक्षित होने के बाद में यदि वे कुछ लिखना-पढ़ना भी सीखना चाहेंगे तो थोड़े से प्रयत्न से ही बहुत जल्द सीख जावेंगे, तथा जो कुछ पढ़ेंगे उसे पचावेंगे, सम्भाल कर रखेंगे, भूलेंगे नहीं। अतः प्रौढ़-शिक्षा के लिए हमें ऐसी रात्रि-पाठशालाएं खोलनी चाहियें जिनमें दो विभाग हों। एक श्रावण-विभाग अर्थात् सत्-साहित्य सुनाने का विभाग (श्रवण = सुनना, श्रावण = सुनाना) और दूसरा विभाग पठन-पाठन का हो।

जिन लोगों ने श्रावण-वर्ग का अच्छा लाभ उठाया है, वे अक्षर-ज्ञान होते ही चाव से पढ़ते हैं और पुस्तकालय को ज्ञान की प्याऊ समझते हैं। जिनको खूब सुनाया है वे ही साहित्य के भक्त बनते हैं।

वैद्य, डाक्टर, वकील, इञ्जिनीयर, फोटोग्राफर, अध्यापक आदि लोगों को बुला-बुलाकर प्रौढ़-शिक्षणालयों में उनके व्याख्यान करवाने चाहिएं। भोजन, शौच, स्नान, निद्रा, व्यायाम आदि बातों से लेकर राजनीति और विश्व-व्यवस्था तक की बातें लोगों को समझाई जाएँ। मासिक पत्रों के लेख पढ़े जावें। तब जाकर लोग पाया हुआ अक्षर-ज्ञान सम्भाल कर रखेंगे और उसे बढ़ावेंगे भी।

वह धर्म यथार्थता से इतना ही दूर है, जितना उत्तरी ध्रुव दक्षिणी ध्रुव से, जो यह सिखाता है कि एक धर्म में पैदा होने वाले, दूसरे धर्म में पैदा होने वालों से भिन्न हैं और इनका कोई मिलाप न होना चाहिए।

यह विचार धर्म के सर्वथा विपरीत है। धर्म यदि एकता की बढ़ती अनुभूति का नाम नहीं तो यह कोई ईश्वरीय सिद्धान्त नहीं धोखा है, कपट है, जाल है। ('प्रांतलड़ी')

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्राम-सेवक का कार्य

[श्री हरिभाऊ उपाध्याय]

ग्राम सेवा का महत्व इस बात में है कि ग्राम भारतवर्ष की प्राणरूप इकाई है। यदि गाँव नहीं है तो जिस भारत पर हम गर्व करते हैं, वह भारत भी नहीं रहने का। जब भारत में शहर बसने और बनने शुरू हुए तो हमने माना कि हम सभ्यता और सँस्कृति की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। मगर आज हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि शहरों ने हमें बेकस और बेबस बना दिया है। शहर उन बड़े-बड़े साम्राज्यों के प्रतीक बन गए हैं जो बहुतों को चूसकर थोड़ों के लिए सुख साधन जुटाते हैं। इस कटु और निठुर अनुभव ने हमें शहरों से ध्यान हटा कर ग्रामों की ओर धकेला है। हम गाँवों की तरफ मुखातिब तो हुए हैं लेकिन अभी ग्राम-सेवा की भावना हमारे मन में उतनी नहीं है जितनी राजनैतिक सङ्गठन की। इसका अर्थ यह हुआ कि अभी हम ग्राम-वासियों का उपयोग राजनैतिक आन्दोलनों में कर लेने की—एक तरह के exploitation की—बुद्धि व भावना से उनकी सेवा के लिए ललच रहे हैं। राजनैतिक आन्दोलन कोई बुरी या हेय वस्तु नहीं है, परन्तु मनमें एक और बाहर दूसरी बात रख कर काम करना 'सेवा' नहीं कहला सकता।

'सेवा' के सीधे अर्थ दो होते हैं— एक तो किसी प्रकार के बदले की आशा न रखना और दूसरे प्राथमिक अभावों व आवश्यकताओं की पूर्ति करना। हमारे राजनैतिक या दूसरे कार्यक्रम में उनका उपयोग करना—यह भावना बदले की ही आशा है। हमें यह विश्वास ही रखना चाहिए कि यदि हमने उनके अभाव-अभियोग दूर किये तो उससे उनमें जीवन, जागृति व बलका सञ्चार होगा ही। फिर उसका उपयोग वे स्वतः ही अपने जीवन के लिए उपयोगी व आवश्यक कामों में करने लगेंगे। एक बीमार की बीमारी दूर करदी, उसमें शक्ति व नवजीवन का सञ्चार हो गया, वैद्य का काम पूरा हुआ। अब वह व्यक्ति अपने आप अपने कार्यों को निबाहेगा। ग्राम-सेवक का काम एक प्रकार से ऐसे वैद्य का ही काम है। राजनैतिक जागृति, शिक्षण, आंदोलन जिन्हें करना है वह करें और करेंगे ही, लेकिन ग्राम सेवक का वह काम नहीं है। ग्राम-सेवक उनकी मानवी आवश्यकताओं और अभावों की पूर्ति में अपना समय व शक्ति लगावेगा। वह देखेगा कि गांवों के लोगों को जो कुछ रोटी-कपड़ा मिलता है, सफाई सुघड़ता व सुव्यवस्था के साथ उसका उपयोग करना सीखें। घर, आँगन, पशुशाला साफ-सुथरी रहे जिससे बीमारियों का अन्देशा कम हो, घर के व खेत के कूड़े-कचरे तथा पशुओं के मल-मूत्र का उपयोग खाद के लिए हो, जिससे खेती की पैदावार बिना अधिक खर्च किए बढ़ सके। बीमारियों के अवसर पर उनके लिए उचित दवाओं का प्रबन्ध हो। बच्चों की पढ़ाई-लिखाई तथा वयस्कों की ज्ञान-वृद्धि का उद्योग हो। कुरीतियों से बचें और उन्हें दूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने में कटिबद्ध हों। अपना कपड़ा तथा दूसरी जरुरियात जहां तक हो अपने घर, खेत, गांव या पड़ौस से पूरी करने की आदत डालें। परस्पर सहयोग से मिलकर व एक हो कर काम करना सीखें। झूठे लड़ाई-झगड़ों से दूर रहें। सच बात कहते और सच काम करते हुए किसी से न दबें, न डरें। ये संस्कार, यह ज्ञान और आचार, स्वराज्य या स्वतन्त्रता की असली बुनियाद हैं।

ग्राम-सेवा का यह सबसे बढ़िया कार्यक्रम है। भलेही इसे आप नीरस रचनात्मक कार्यक्रम कहें। भलेही राजनैतिक कार्य से इसका मूल्य कम आंका जाय। मगर मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि इस 'नीरस' कार्यक्रम के बिना, जिसे लोग राजनैतिक काम या आन्दोलन कहते हैं, फीका ही नहीं, बेकार और पंगु है। जो योग्यता और क्षमता मैंने रचनात्मक कार्यकर्त्ताओं में पाई है, वह केवल राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं में नहीं मिलती। राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं में एक चमक तो होती है पर स्थिर प्रभाव का अभाव रहता है। इसलिए उनके प्रति आदर तो रहेगा, परन्तु प्रभाव की कुञ्जी रचनात्मक कहे जाने वाले कार्यकर्त्ताओं के हाथों में रहेगी, क्यों कि उनका जनता के नित्य जीवन से सम्बन्ध व सम्पर्क रहेगा। उनकी नित्य तपस्या के वे साक्षी रहते हैं।

मगर राजनैतिक काम जितना सरल है रचनात्मक काम उतना ही कठिन है। ग्रामों में जाकर रचनात्मक काम करना तो और भी मुशकिल है। जो भाई गाँवों में जाकर बैठे हैं, उनकी तपस्या के आगे "पञ्चाग्नि" तपना कठिन नहीं है। पद-प्रसिद्धि, कीर्ति तो दूर, स्वास्थ्य व जीवन के लिए आवश्यक साधन-सामग्री से भी बञ्चित रह कर जो प्रसन्नता पूर्वक ग्राम सेवा में लगे हुए हैं उन्हें मेरे शतशः प्रणाम हैं।

अपने को जानो

[श्री ब्रजमोहन मिहिर]

संसार के समस्त दृश्य और अदृश्य पदार्थ, मनुष्य इतर प्राणी आदि सब बहुत अच्छे हैं; राग द्वेष की अवस्था से रहित अनासक्त होकर प्रत्येक पारस्परिक विकास और अन्योन्य सहायता के हेतु हैं। इसकी अनुभूति केवल उसी मनीषि व्यक्ति को हो सकती है जिसका अनुभव सङ्कीर्णता को लांघ चुका है। इस अवस्था को प्राप्त कर लेने पर वह समष्टि के साथ एक होकर अनायास संसार के कल्याण का हेतु बन जाता है। किन्तु इस अवस्था में भी वह संसार के लिए कोई पथ निर्दिष्ट नहीं करेगा। जैसा कि राम, कृष्ण, बुद्ध तथा अन्य इस कोटि के प्राणियों द्वारा लक्षित होता है। श्री गीताजी में अर्जुन के प्रति श्री कृष्ण के प्रवचनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पथ निर्दिष्ट करना सत्य की अनुभूति का बाधक है।

प्रारम्भिक अवस्था में मनुष्य की स्थिति अपनी बद्ध दशा में रहती है। बद्ध दशा में किसी निर्दिष्ट पथ का यथार्थ अनुशीलन कठिन है और प्रायः साधक के लिए अनिष्टकर प्रमाणित होता है। मनकी इस दयनीय दशा में भी उसके अति समीप उसका सुख-दुःख है और उसका क्रम है। उसके पार्थिव शरीर पर इसका प्रभाव प्रतिक्षण पड़ता रहता है। जीवन को विकसित करने के लिए यही उसका दीपक है। इसके प्रकाश में मनुष्य जितनी शीघ्र उन्नति कर सकता है उतनी अन्य किसी उपाय द्वारा नहीं। जीवन को समझने तथा उसे विकसित करने के लिए अन्य सब साधन कृत्रिम हैं, क्योंकि उन में से किसी का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्ध जीवन के साथ सीधा नहीं है। सुख-दुःख को समझ कर उनसे बीत-राग हो जाना ही मनुष्य का परम पुरुषार्थ है। अन्य उपाय जीर्णशीर्ण पटपर पेवन्द लगाने की भांति निर्बल और अप्रतिम हैं। अतः जीवन को समझने के लिए उसके भाव ही मुख्य साधन हैं।

दूध के उफान में शीतल जल का प्रयोग उसे तत्क्षण तो शांत कर देता है किन्तु उसके अन्दर की गर्मी वैसी ही बनी रहती है। उसमें स्थायी शांति तो उसी समय आती है जब वह अग्नि के सम्पर्क से अलग कर दिया जाता है। ऐसा ही हमारा जीवन है। इसके रहस्य को समझने के लिए हमें इसके क्रम को समझना है। किसी कृत्रिम उपाय द्वारा इसकी आन्तरिक उद्दीप्त ज्वाला शांत नहीं होती। यह हो सकता है कि वह कुछ समय के लिये मूर्छित वा शांत हो जाय। जीवन का पूर्ण बोध हो जाना उसके विराटरूप को देख लेना है। यही इसका वास्तविक उद्देश्य है।

अच्छे या बुरे आदि दैविक आदिभौतिक और आध्यात्मिक आदि सभी कार्यों का प्रभाव कर्त्ता के ही मन और शरीर पर पड़ता है। इन्द्रिय और मन दो प्रथक् वस्तु नहीं हैं। वासना के वश जो कुछ भी किया जाता है उसमें मन का पूर्ण सहयोग रहता है इसीलिए अच्छे और बुरे कार्यों के परिणाम के हिसाब से उस हद तक मन सुखी और दुःखी होता है। यह यों भी समझा जा सकता है कि कार्य करने वाली तो इन्द्रियां हैं, लेकिन मन उनका परिणाम की शकल में भोक्ता है। आगे चल कर सूक्ष्म विचार और कार्य में चित्त, बुद्धि और मन का भी पूर्ण सहयोग है। जगत् में जो कुछ किया जाता है उसके सुख दुःख का प्रभाव इन तीनों पर पड़ता है। इस अवस्था में भाव ही प्रधान हैं। स्थूल शरीर द्वारा इन्द्रियों की सहायता से जब कार्य किया जाता है तब उसका प्रभाव शरीर और मन दोनों पर पड़ता है और जब मन, चित्त, बुद्धि द्वारा भाव-जगत में कार्य किया जाता है तो उसके परिणाम का भोक्ता मन ही होता है।

किसी भी कार्य या भाव पर विचार करने से यही प्रमाणित होता है कि मनुष्य स्वयं ही उसका कर्त्ता और भोक्ता है। प्रत्येक दशा में जब कर्त्ता पर ही कार्य के परिणाम का असर पड़ता है तो यह कैसे सम्भव हो सकता है कि मनुष्य दूसरों का अनुयायी बने। दूसरों के कहने से जब कोई काम किया जाता है तो मेरी समझ में उसमें उतना वेग नहीं रहता जितना कि अपनी ओर से सोच समझ कर किये हुए काम में। दूसरों की समझ से काम करने पर कार्य में कभी पूर्णता नहीं आने पाती।

जब सब कार्य और उसका प्रतिफल अपने ही ऊपर निर्भर करता है तो मनुष्य के सामने जो कुछ भी करने का कार्य है उसे वह स्वयं अपनी सजग बुद्धि की सहायता से करे। अपनी बुद्धि पर निर्भर करके कार्य करने से उसके परिणाम के सम्बन्ध में डरने की कोई बात नहीं है। अपनी बुद्धि पर निर्भर करके कार्य यदि बिगड़ भी गया तो उससे हानि के बजाय लाभ अधिक होगा, क्यों कि उससे अपने अन्दर आत्मविश्वास अधिक बढ़ेगा और कार्य को समझने की क्षमता प्राप्त होगी। भव्य विशाल भवन दृढ़ नींव पर ही ऊँचा उठाया जा सकता है। यदि मनुष्य पूरी तौर से अपना होना चाहता है तो उसको चाहिए कि अपनी ओर से ही सजग होकर वह अपने सब कार्यों पर गौर करे। यही एक ऐसा क्रम है जिस के बल पर जीवन की समस्या समझी और सुलझाई जा सकती है। जो मनुष्य पूर्णतः अपना हो चुका है, जिसने अपनी समस्याओं को हल कर लिया है, वही दूसरों को कुछ सहायता पहुंचा सकता है। सहायता पहुँचाने के अतिरिक्त कोई किसी का पथ प्रदर्शक नहीं बन सकता। दूसरों का पथ-प्रदर्शक बनना वैसा ही है जैसे एक प्रज्ञाचक्षु दूसरे प्रज्ञाचक्षु का रक्षक बन रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्संग का व्यावहारिक स्वरूप

[स्वामी तारकानन्द प्रधान, न्यायभवन भारतवर्ष]

अपने व्यवहारिक जीवन में सचाई को अपनाने वाले मनुष्यों का पारस्परिक सहानुभूति को दृढ रखने वाला सम्मिलन ही सत्सङ्ग का सच्चा कल्याणकारी स्वरूप है।

मानव समाज में दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक तो स्वभाव से मनुष्य समाज की शांति को सुरक्षित रखने वाले और दूसरे अपने अन्यायी स्वभाव से समाज की शक्ति का भङ्ग करने वाले।

समाज की शांति को सुरक्षित रखने वाले मनुष्य अपने मन में दूसरों को उनके उचित अधिकार से वञ्चित करके स्वयँ लाभ उठाने की भावना को कभी स्थान नहीं देते। दूसरों को उनके उचित अधिकार से वञ्चित न करने की भावना ही सत्य है और यह ही सच्ची ईश्वर की भक्ति है। इसके विपरीत, दूसरों का अधिकार छीनकर स्वयँ लाभ उठाने की भावना 'असत्य' अर्थात् अधर्म है। अनीश्वर भक्ति है, और नास्तिकता है। मनुष्य समाज में सदा से सत्य और असत्य का यह विरोध रहता चला आया है और सदा ही रहेगा।

मानव समाज का आदर्श कल्याणकारी जीवन यही है कि सब मनुष्य स्वयँ सत्य को अपनाए रहें और असत्य का विरोध करते रहें।

सत्य को अपनाने वाले मनुष्य अपने व्यवहारिक जीवन में जिस धर्म मार्ग पर चलते हैं, वह मार्ग ही असत्य को अपनाने वाले उनके विरोधी मनुष्यों के मार्ग की रुकावट बन जाता है, क्योंकि वे सत्यनिष्ठ लोग उनके स्वार्थ के अनुकूल काम करना या उनका आखेट बनना स्वीकार नहीं करते। इस प्रकार, असत्य को अपनाने वाले स्वार्थी मनुष्य उन्हें अपने स्वार्थ का रोड़ा समझ लेते हैं और उन पर आक्रमण किए बिना नहीं रहते।

अस्तु, यह बात स्पष्ट है कि जो कोई मनुष्य धर्म में प्रेम रखने वाला या ईश्वर का भक्त होगा उसके पास असत्य के विरोध करने का अवसर आये बिना नहीं रहेगा। यह कभी नहीं हो सकता कि कोई मनुष्य धर्म में प्रेम रखने वाला ईश्वर भक्त भी हो और उसके पास असत्य का विरोध करने का अवसर न आवे।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि मनुष्य अपने व्यवहार में ईश्वर के प्रति प्रेम को असत्य का विरोध करके ही प्रकट कर सकता है। अर्थात् जो असत्य का विरोध नहीं कर सकता उसे ईश्वर में प्रेम नहीं है। ईश्वर प्रेमियों का यह स्वभाविक कर्त्तव्य बन जाता है कि वे सर्वदा अन्याय के विरोधी बनें और उसे देखते ही उसके विरोध में खड़े हो जाएं। जब तक अन्याय के विरोध में खड़ा नहीं हुआ जायगा तब तक ईश्वर-भक्ति निरर्थक है, और केवल आत्म-वञ्चना है। सच्चे ईश्वर भक्त अपने और दूसरों के ऊपर अन्याय होना सहन नहीं कर सकते।

जिस समय मनुष्य अन्याय का विरोध करता है उसी समय अन्याय के हाथों से उसके पीड़ित होने का अवसर आ जाता है। जो मनुष्य पीड़ित होने से बच रहे हैं वे इसी कारण से कि उन्होंने अन्याय के आगे सिर झुका रखा है।

चूँ कि असत्य के अन्याय से पीड़ित होने वाले व्यक्ति के व्यवहारिक जीवन से असत्यवादी के स्वार्थ के मार्ग में विघ्न पड़ता है इसीसे वह उसके ऊपर आक्रमण करता है। सूक्ष्म निर्णय-शक्ति कहती है कि ये आक्रमण किसी विशेष व्यक्ति के ऊपर न होकर सीधे सत्य के ऊपर होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस विवेचना से यह सिद्ध हुआ कि जो मनुष्य किसी भी एक सत्यनिष्ठ के ऊपर आक्रमण कर रहा है वह केवल उसी का नहीं किंतु सम्पूर्ण मानव समाज का शत्रु है। इसलिए उसका उचित विरोध करके उसके कामों को निष्फल बनाना सत्यप्रेमी मनुष्य-समाज के प्रत्येक सदस्य का व्यक्तिगत और सामाजिक कर्त्तव्य बन जाता है।

जिन मनुष्यों ने समाज में रहते हुए सत्य को अपना रखा हो वे ही सन्त हैं। समाज को छोड़कर सत्य को अपनाना आत्मवञ्चना है। सन्त जीवन मनुष्य के व्यवहारिक जीवन में ही स्थान पाने योग्य है। व्यवहारिक जीवन से पृथक् सन्तपने का कोई मूल्य नहीं है। ऐसी परिस्थिति में सत्सङ्ग का भी यही अभिप्राय रह जाता है कि हम जिनके साथ रहते हों उन मनुष्यों के सुख-दुख, शान्ति-अशान्ति आदि सब परिस्थितियों में अपने को उनके साथ सहानुभूति करने वाला बनाए रखें। अपने पास जो कुछ भौतिक शक्ति हो उसे सत्य सम्पत्ति मानकर उसमें से अपना व्यक्तिगत अधिकार हटाकर उसके द्वारा अत्याचार पीड़ित सत्यसेवक की सेवा करें।

जो मनुष्य सत्य की सेवा करने का अवसर आने पर अपने भौतिक सामर्थ्य को सत्य की सेवा में लगाने से बचता है वह उसका धन-मोह है। कुछ लोग इस प्रकार के धन-मोह में फँसकर भी 'सत्सङ्ग' करने का सँतोष करते हैं। वह सत्सङ्ग नहीं, वह तो उसका दिखावा है। ऐसे झूठे सत्सङ्ग निकम्मे मनुष्यों के समय नष्ट करने के साधन बनकर वाद-विवाद आदि का रूप धारण कर लेते हैं।

सत्सङ्ग के इस भ्रान्तरूप का समाज में से बहिष्कार करके समाज के सामने सच्चे शक्तिशाली सत्सङ्ग को सुप्रतिष्ठित करना और असत्य को अपमानित तथा पराभूत करते रहना ही सचा सत्सङ्ग है।

अभिलाषा

[श्री 'विकल']

हाला मधुशाला वाला, प्याला कर चूर चूर,
विनही पिलाये मतवाला तू बनादे आज!
पूजा न नमाज पाठ, रोजा न कुरान वेद,
मन्दिर मस्जिद में माँ! ताला तू लगादे आज॥

भेदभाव भूल जायँ आपस के वैर त्याग,
एक रस एकता का प्याला तू पिलादे आज।
'विकल' हथेली पर शीश नित लिये फिरैं,
उर में स्वतन्त्रता की ज्वाला तू जगादे आज॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृतिक अध्ययन

[रामकृष्ण 'खद्दरजी']

प्राकृतिक अध्ययन से हमारा अभिप्रायः ऐसी खोज से है जिसका उद्देश्य जीव-जन्तुओं और वृक्षों का भीतरी रहस्य मालूम करना हो। अर्थात् किस प्रकार वे जीते हैं? किस प्रकार वे एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं? और उनका मानव जीवन से क्या सम्बन्ध है, आदि बातों का ज्ञान प्राप्त करना। इसका तात्पर्य यह हुआ कि खुली हवा आदि जैसी भी प्राकृतिक अवस्था में वे रहते हैं उसका अध्ययन करना ही 'प्राकृतिक अध्ययन' कहलाता है। शहरी शिक्षक कह सकते हैं—"तब हमारे लिए तो यह असाध्य है कि हम खुले स्थानों में अपने बच्चों को ले जाकर उन्हें पौधों, वृक्षों इत्यादि की बढ़ती दिखावें। यद्यपि यह बात ठीक है कि शहर और प्रकृति में काफी दूरी है, परन्तु हमें इसके लिए कुछ न कुछ उपाय सोचना ही पड़ेगा क्योंकि प्रकृति तो स्वयम् ही बालकों को हाथ पसार प्राकृतिक शक्तियां द्वारा अपनी गोद में खिलाने के लिये बुलाती है।

पाठों की आवश्यकता:—

यह विचार अभीतक भी लोगों के दिलों में मौजूद है कि, प्राकृतिक अध्ययन से अभिप्राय वृक्षों और जीव-जन्तुओं विषयक पाठ पढ़ा देना ही है। यही एक खास कारण है कि शिक्षक 'प्राकृतिक अध्ययन' विषय को न ले और ही विषय अधिक पसन्द करते हैं। जब तक यह बात स्वयँ स्फुरित न हो, तब तक बालकों को यह बताना कि—"फूल की पँखड़ियां इतनी होती हैं, पक्षी के पर इस प्रकार के होते हैं, गधे का खुर चिरा हुआ नहीं होता है, मेंढक के आगे के पैर में इतने अँगूठे होते हैं आदि बिलकुल ही हास्यस्पद और थका देने वाली बातें हैं, क्योंकि बालक के लिए इतनी बातें याद रखनी बहुत कठिन हैं?

क्या हमारे अन्दर यह मजबूत विचार नहीं है कि यह सब बातें व्यर्थ की हैं? क्या हम गुलाब के फूल को देख कर खुश नहीं होते? उसकी सुगन्धी को मन-मोहक नहीं समझते? उसके रङ्ग क्या हमें प्यारे नहीं लगते? जरूर लगते हैं, सबको लगते हैं; चाहे किसी को स्कूल में इसका पूरा विवरण बताया गया हो या नहीं। अतः प्राकृतिक अध्ययन से हमारा उद्देश्य, जीव-जन्तुओं या वृक्षों की चीर फाड़कर उनकी खोज करना नहीं है बल्कि उनका जीवन-चरित्र मालूम करना है।

शिक्षक नोट करले कि:—

१. बालक देखना चाहता है। आज कल तो शिक्षक १५-२० मिनट में ही सारा प्राकृतिक अध्ययन अपनी कक्षा में पाठ पढ़ाकर समाप्त कर देते हैं। क्या बालकों को उस में कुछ दिलचस्पी होती है? बालक तो सारी चीजें स्वयम् अपनी आंखों से जिन्दा देखना चाहता है। जहां कहीं भी उनको अवसर मिलता है वहां बहुत से बालक तो घण्टों, बैठे प्राकृतिक दृश्य देखा करते हैं। कक्षा में बैठकर खरगोश की बाबत बता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना उतना अच्छा नहीं जितना कि खरगोशों के पास बालकों को ले जाकर उनके सम्बन्ध में बताना है।

२. बालकों को ताजा और दिलचस्प बातें बतानी ही श्रेयस्कर हैं; क्योंकि ऊट पटांग चीजों को भूलकर बालक दिलचस्प ही बातें याद रखता है। ताजा और दिलचस्प बातें क्या हो सकती हैं? यह आगे बताया गया है।

३. शहरी शिक्षक भी बहुत से ऐसे अवसर मालूम कर सकते हैं जब प्रत्यक्ष रूप में सारी प्राकृतिक चीजें दिखाई जा सकती हैं। उसको अपने सुभीते के लिए एक योजना पहले ही तैयार कर लेनी चाहिए कि शहर में कहां-कहां प्राकृतिक अध्ययन प्रत्यक्ष रूप में "सम्भव" है। जैसे:—

अ. मकानों इत्यादि की किङ्गरियों में जहां पक्षी (कबूतर, चिड़िया, फाख्ता, गुरसल, तोते इत्यादि २) अपना घोंसला बनाकर रहते हैं।

ब. घरों के कौने-कचोनों में, दिवारों पर जहां (अञ्जन हारी और उसका घर—मकड़ी और उसका जाला—झींगर—चीटियां इत्यादि २) कीड़े मकौड़े अपना घर बना लेते हैं।

स क्या बालकों के आगे पीछे कहीं बाग है? यदि है तो उसमें किस प्रकार के वृक्ष उगते हैं?

ड. क्या बालकों ने अपने-अपने घरों पर भी कुछ बो रखा है? यदि हां, तो वह क्या-क्या है? क्या उन्होंने कुछ जानवर भी पाल रखे हैं? यदि हैं, तो वे कौन २ से हैं?

ई. शहर में जहां फल-फूल, शाक-भाजी वालों की दुकानें होती हैं वहां काफी तादाद में चीजें देखने को मिल सकती हैं। इत्यादि-इत्यादि।

४. शिक्षक को यह मालूमात करनी चाहिए कि बालक अपने संरक्षकों के साथ कहीं घूमने भी जाता है या नहीं? और यदि जाता है तो कहां जाता है? इस प्रकार की मालूमात शिक्षक को बालकों की प्राकृतिक वस्तुओं की खोज कराने में सहायक सिद्ध होगी।

कक्षा के कमरे में प्राकृतिक अध्ययनः—

नीचे लिखा सामान वहाँ पर चाहिए।

१. बागवानी के लिए कुछ डिब्बे। ये लकड़ी के या टीन के हों और इन्हें खाद से भर कर उनमें बालकों से कुछ बीज बुवाए जा सकते हैं। बालक जिस दिन बीज बोएं यह नोट करलें तथा दिन-प्रति-दिन उनमें जो २ उन्नति होती रहें उसको भी नोट करते रहें। बालकों को इस प्रकार की क्रिया देखने में मजा आयेगा, और वे इस प्रकार खोजपूर्ण कार्य कर सकेंगे।

२. कुछ पालतू जानवरों को स्कूल में ही लाकर बच्चों को दिखाया जा सकता है। यदि सम्भव हो तो कुछ स्कूल में ही पाल भी लिए जायें।

३. शीशे के वर्तनों में या टीन के डब्बों में पानी भर कर और उनमें मछली, मेढ़क इत्यादि कुछ जलचर छोड़ कर उनका बालकों से अध्ययन कराया जा सकता है।

४. बच्चों और शिक्षकों के लिये प्राकृतिक पुस्तकालय के रूप में ऐसी प्रचुर सामग्री हो, जहां खूब पुस्तकें अध्ययन को, और उपरोक्त अन्य सामान प्रत्येक चीज को प्रत्यक्ष रूप से दिखाने के लिए हो।

५. चित्रों का भी खूब संग्रह हो।

६. एक ऐसी बड़ी मेज हो कि जिस पर रखकर उपरोक्त प्रत्येक वस्तु का वर्णन ठीक प्रकार से हो सके।

बालकों को देखने में सहायता करनाः—

बालकों से यह कह देना कि बाग में जाकर पक्षियों, पेड़ों आदि को देखकर उनके विषय में कुछ आ कर बताओ, केवल समय को ही व्यर्थ खोना होगा, क्योंकि वे वहां कुछ देखेंगे और कुछ नहीं। इस प्रकार वे बहुत ही कम देख सकेंगे। अतः पहले शिक्षक को निश्चित संकेत बालकों को बता देने चाहियें। तब बालक बागों में घण्टों तक चीजों को देखेंगे।

सब से जरूरी बात यह है कि शिक्षक को उन्हीं चीजों की बाबत अधिक बताना चाहिए जिनको कि बालक प्रति-दिन देखता हो या जिसका उसके लिए देखना सम्भव हो। प्राकृतिक अध्ययन के समय बालकों को उनके सम्बन्ध की बातें पूछनी चाहियें। उनको पक्षियों की, जानवरों की कहानियां और गाने भी सुनाने चाहियें। इसके लिए श्यामपट और चित्रों का भी खूब प्रयोग होना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब किसी चीज का स्कूल में लाकर दिखाना असम्भव हो तो उस चीज के समान अन्य चीज दिखाकर बच्चों को समझाया जा सकता है। उदाहरणार्थ शेर और चीतों को यदि बालक प्रत्यक्ष न देख सकें तो उस समय बिल्ली को सन्मुख रखकर उनके सम्बन्ध में सभी बातें बताई जा सकती हैं। बिल्ली और शेर की आदत और शकल भी बहुत कुछ मिलती-जुलती है।

बालकों को प्रवास के लिए भी ले जाया जाये। चिड़िया घरों, बागों इत्यादि की बालकों को यथाशक्य सैर करानी चाहिए। इन स्थानों पर क्लासरूम में बचे हुए काम की पूर्ति होनी चाहिए। यकायक ही शिक्षक इन स्थानों पर बालकों को न ले जाये, बल्कि उसको एक निश्चित प्रोग्राम बना लेना चाहिए जिससे बालक अपने समय का वहां पर सदुपयोग कर सकें।

बालकों को किसी जानवर आदि के अवलोकनार्थ किस प्रकार संकेत देने चाहियें, इसका एक उदाहरण नीचे दिया जाता है:—

घोड़े का उदाहरण:—

बालकों को किन-किन बातों के अवलोकन के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। कुछ संकेत:—

१. घोड़ा खुशी, हँसी और गुस्से की हालत में क्या करता है?

२. किस तरह बैठता है और खड़ा होता है?

३. क्या आराम करता हुआ भी वह दाना चबाता है?

४. यदि एक कुत्ते को तुम घोड़ों के झुण्डों में ले जाओ तो वह क्या करेंगे?

५. कैसे मालूम हो कि घोड़ा सुन रहा है?

६. घोड़े की और गाय की दुम में क्या फर्क होता है?

७. खाते समय घोड़े के मुंह की क्या हरकत होती है?

८. नाम लिखो उन सब चीजों के जिनको कि तुम समझते हो कि घोड़ा पसन्द करता है?

९. क्या इनमें से कुछ ऐसी भी हैं जिनको गाय पसन्द नहीं करती?

१०. क्या गाय कोई चीज ऐसी भी खाती है जिसको घोड़ा नहीं खाता?

यह भी बताइये कि:—

१. घोड़े बहुत मिलनसार होते हैं।

२. तबेलों में साथियों से बहुत प्रेम करने लगते हैं।

३. वे दूसरे जानवरों से भी दोस्ती गांठना पसन्द करते हैं। जैसे बिल्ली, कुत्ता इत्यादि।

४. उनकी ऐसी आश्चर्यजनक स्मरणशक्ति है कि वे जिस रास्ते से एक बार निकल जाते हैं उसको कभी नहीं भूलते।

५. वे बिल्ली की तरह अन्धेरे में भी देख सकते हैं।

बालकों को इतने संकेत काफी हैं। बालक को अवलोकन करने दीजिये और आपको अपनी मालुमात बताने दीजिये। यदि आप यह समझें कि बालक अवलोकन नहीं कर रहा है तो आप स्वयम् उसको अवलोकन कराइये या उसे इसके लिए उत्साह दिलाइये। यही बालकों के लिए ताजा और दिलचस्प बातें हैं।

प्राकृतिक अध्ययन में निम्न चीजों का अध्ययन कराना चाहिए:—

१. मौसम।

२. जन्तु जीवन।

३. कीड़े मकौड़ों का जीवन।

४. वृक्ष और फूल।

५. परिन्दों का अध्ययन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इङ्गलैंड की राज्य-व्यवस्था का इतिहास

[सन् १३७७ से १४८५ तक]

ले० —श्री गिरिराजजी बी० ए०, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

[१०]

पिछले लेख में बताया जा चुका है कि तृतीय एडवर्ड के समय में पार्लियामैंट को महसूल लगाने, खर्च की देख-रेख करने, कानून बनाने, और ठीक काम न करने की सूरत में मन्त्रियों पर मुकदमा चलाने के अधिकार मिल गए थे। इससे ऐसा मालूम होता है कि उस समय की और आजकल की पार्लियामैंट में कुछ ज्यादह फर्क न था। किन्तु वास्तव में ऐसी बात नहीं थी। उस समय पार्लियामैंट की बुनियाद मजबूत पाये पर न थी। उस समय की पार्लियामैंट बादशाह या बड़े बड़े जागीरदारों के हाथ में कठपुतली के समान थी. उन्होंने जिस तरह चाहा उसी तरह उसे नचाया। आम जनता की कुछ सुनाई न थी। हां, दोनों दलों (बादशाह व जागीरदार) के बीच सत्ता के लिए जब झगड़ा होता था तब हर एक सामान्य वर्ग को अपनी तरफ खेंचना चाहता था। अतः जितने भी अधिकार पार्लियामैंट को मिले थे वे सब इसी कशम-कश का नतीजा थे। जब बादशाह और जागीरदार एकसाथ मिल जाते थे तब किसी को भी सामान्य वर्ग की चिन्ता न होती थी, क्योंकि उसमें कुछ भी ताकत न थी। १३४९ की प्लेग के बाद इसी कारण मजदूरों के लिए तबाही से पहले की उजरत पर काम करने का कायदा पास हुआ था। अकसर, बादशाह अमीर-उमराओं की सत्ता को कम करने की फिक्र में रहते थे, क्योंकि उनका ही उन्हें डर रहता था।

एडवर्ड तृतीय की मृत्यु के समय जागीरदार बड़े शक्तिशाली थे। १३४७ तक इङ्गलैंड कृषि प्रधान देश था, किन्तु प्लेग के बाद पार्लियामैंट के कानून बना देने पर भी मजदूरों की उजरत कम नहीं हुई, क्योंकि उस समय साथ ही अनाज का भाव भी चढ़ गया था। इस समय जमीदारों ने खेती करना छोड़ कर ऊन की खातिर भेड़ें पालनी शुरू कीं। ऊन का व्यापार खूब चला और जमीदार माला-माल हो गए। उन दिनों एडवर्ड तृतीय को फ्रांस से लड़ते रहने के कारण फौजी सिपाहियों की हमेशा जरूरत रहती थी और वह बड़े-बड़े जागीरदारों द्वारा उनको इकट्ठा कराता था; इसलिए उसकी मृत्यु के बाद जब लड़ाई ढीली पड़गई तो बहुत से जागीरदारों ने इन सिपाहियों को अपने पास से तनख्वाह देकर रख लिया। इससे उनकी सत्ता खूब बढ़ गई।

१३७७ में एडवर्ड की मृत्यु के बाद इसका पोता काले राजकुमार (Black prince) का लड़का रिचर्ड गद्दी पर आया। काला राजकुमार, फ्रांस में १३७६ में लड़ते हुए मारा गया था। गद्दी पर बैठते समय रिचर्ड की उमर ११ वर्ष की थी। अतः राजकाज का काम चलाने के लिए पार्लियामैंट ने अपनी देख-रेख में एक कमेटी नियुक्त की, किन्तु कर लगाने तथा उसे वसूल करने का अधिकार पार्लियामैंट के पास ही रहा। इसके अलावा. पार्लियामैंट को इस बात की निगरानी भी करनी थी कि रुपया जिस कार्य के लिए मञ्जूर किया जाय उसको उसी में खर्च किया जाये। इस तरह से पार्लियामैंट की सत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काफी बढ़ी हुई थी। उपरोक्त कमेटी में (Earl of Suffolk) स्फोक का नवाब बड़ा योग्य और प्रभावशाली आदमी था। उसने एडवर्ड को लड़ने के लिए अपने पास से रुपया भी खूब दिया था। उसकी राय थी कि देश लड़ते-लड़ते तङ्ग आ गया है अतः अब लड़ाई बन्द कर देनी चाहिए। जागीरदार यह नहीं चाहते थे, क्योंकि लड़ाई बन्द हो जाने से उनकी सत्ता कम होती थी। इसलिए Suffolk (स्फोक) को निकाल देने के लिए वे शोरोगुल मचाने लगे। रिचर्ड, यद्यपि अभी लड़का ही था, किन्तु उसने इस मांग को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। आखिर जागीरदारों ने एडवर्ड द्वितीय की तरह उसे भी गद्दी से उतारने की बात की जिससे वह उनसे डर गया और स्फोक को निकाल दिया। इस प्रकार जागीरदार बादशाह के दुशमन हो गए। स्फोक Suffolk के चले जाने के बाद जागीरदारों ने ११ आदमियों की एक कमेटी नियुक्त की जिसको बादशाह ने न्यायाधीशों से गैर-कानूनी ठहरवा दिया। फिर जागीरदारों ने बादशाह के साथियों से लड़ाई की और १३८८ में एक पार्लियामैंट बुलाई जिसमें पांच बड़े जागीरदारों ने बादशाह के साथियों पर मुकदमा चलाकर उनको मौत की सजा दे दी। उन्होंने बादशाह को भी अपने हाथ में कर लिया। थोड़े अर्से बाद, सन् १३८९ में, बादशाह बालिग हो गया और स्वयम् काम करने लगा। किन्तु जागीरदारों के आधीन रहना उसे अखरता था। वह उनके पञ्जे से निकलने की तजवीज करने लगा। आखिरकार उसने पांच जागीरदारों में से दो को अपनी तरफ कर लिया और अपने पक्ष की पार्लियामैंट बुलाकर बाकी तीन पर मुकदमा चलाया, जिनमें दो को मौत की सजा दी गई और एक को देश-निकाले की।

इसके बाद, Shrews burry (शिरुज बरी) में एक और पार्लियामैंट बुलाई गई। उस समय पार्लियामैंट में बादशाह का विरोध करने वाला कोई नहीं था, इसलिए उसने जीवन भर के लिए कर वसूल करने का अधिकार ले लिया, साथ ही १३८८ की पार्लियामैंट, कि जिसने स्फोक Suffolk और Devere (डीवेरे) को देश-निकाला दिया, की कार्यवाई रद करवाई और देश का कारोबार चलाने के लिए इस प्रकार, सब सत्ता हाथ में लेकर वह अपनी मरजी के अनुसार नादिरशाही चलाने लगा, न्याय बेचने लगा और प्रजा से जबरदस्ती कर्ज लेना शुरू कर दिया। इस प्रकार उसने जो समझ में आया सो किया। उन जागीरदारों को भी, जिनको उसने अपनी तरफ कर लिया था, आपस में अदावत हो जाने के कारण देश-निकाला दे दिया और उनकी जागीरें जब्त करलीं। पादरियों को भी उसने Lallards की मदद करके अपने विरुद्ध कर लिया। तृतीय एडवर्ड के समय में विकलिफ Wycliffe नाम के एक विद्वान् ने पादरियों के मौज-शौक के जीवन पर आक्षेप किया और कहा कि जिस तरह से ये पादरी जीवन बसर करते हैं वह धर्म के विरुद्ध है। उनको जागीरें नहीं रखनी चाहियें और न दूसरी तरह से भोग-विलास में जीवन व्यतीत करना चाहिए। हर एक आदमी धर्म के मामले में स्वतन्त्र है आदि। इसके अनुयाइयों को Lallards का नाम दे दिया गया।

रिचर्ड द्वितीय की राजपद्धति से सारे देश में हाहाकार मच गया, किन्तु किसी में हिम्मत न थी कि उसका विरोध कर सके। उसने प्रभावशाली जागीरदारों में से कुछ को देश-निकाला दे दिया और कुछ को मरवा डाला। इस अशान्ति से लाभ उठाकर जब रिचर्ड आयरलैंड में गया हुआ था तब Henry Duke of Hareford हेयर फोर्ड का ड्यूक हेनरी, जिसको देश-निकाला दे दिया गया था, देश में वापिस आया और बादशाह के विरोधियों को अपनी तरफ करके मुकाबले के लिए तैयार हो गया। परिणाम यह हुआ कि जब रिचर्ड वापस आया तो उसने अपने आपको बड़ी विचित्र स्थिति में पाया। उसको कैद कर लिया गया और एक पार्लियामैंट बुलाई गई जिसने उसे गद्दी से उतार दिया और हेयर फोर्ड के ड्यूक हेनरी (Henry Duke of Hareford) को जो लँकास्टर वँश का था गद्दी सौंपी गई। यह एक क्रांति थी, क्योंकि हेनरी Henry गद्दी का असली वारिस न था हक यार्क (York) वँश के राजकुमार एडवर्ड मांटीमर (Edward Mortimer) का था। पार्लियामैंट की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६६७

पसन्दगी के कारण ही हेनरी को राज मिला, और यह हेनरी चौथे के नाम से १३९९ में गद्दी पर आया।

रिचर्ड के शासन काल पर नजर डालने से मालूम हो जाता है कि उस समय सामान्य जनता में कुछ भी शक्ति न थी। बादशाह और जागीरदारों में से जो भी शक्तिशाली होता था वही उसको अपनी तरफ खींच लेता था। दूसरे, जनता को मनमानी हकुमत अखरती जरूर थी, किन्तु उसको किसी न किसी प्रभावशाली व्यक्ति के नेतृत्व की जरूरत थी।

चूँकि चौथे हेनरी Henry IV को पार्लियामैंट ने बादशाह बनाया था, उसका राज गद्दी पर हक न था, इसलिए उसने पार्लियामैंट को अपने साथ रखा और जागीरदारों की सत्ता कम करनी शुरू की। अपने आपको मजबूत करने के लिए उसने पादरियों को व Lallords को तरह-तरह से तकलीफ पहुँचाकर अपनी तरफ किया। उसने अपने मन्त्री पार्लियामैंट की इच्छानुसार नियुक्त किए, रुपया किस तरह से खर्च किया जा सकता है उसकी देख-रेख का अधिकार भी पार्लियामैंट को दे दिया और कानून बना दिया कि रुपए सम्बन्धी सब कानून पहिले आम सभा में ही पेश हों और वहां से पास हो जाने पर ही उमरा सभा में जायें। इससे आम सभा की सत्ता उमरा सभा से ज्यादा बढ गई।

इसकी मृत्यु १४१३ में हुई और इसके बाद इसका लड़का हेनरी पाँचवां गद्दी पर आया। उसने ९ वर्ष राज्य किया। उसका सारा समय फ्रांस के साथ लड़ने में ही बीता और उसका काफी भाग इँगलैंड के आधीन कर लिया। देश की प्रतिष्ठा बढाने के कारण आम सभा ने भी उसका साथ दिया, जबकि अमीर-उमरा तो सदा उसके साथ लड़ाइयों में शामिल ही रहे और इनकी और उनकी खूब बनी। इसकी मृत्यु १४२३ में हो गई और इसका लड़का, जिसकी उमर नौ मास की थी, Henry VI के नाम से गद्दी पर बैठाया गया तथा देश की व्यवस्था का सारा कार्य एक कमेटी को सौंप दिया गया, जिसने २० वर्ष तक राज्य किया।

जैसे-जैसे इस कमेटी की सत्ता बढती गई पार्लियामैंट की सत्ता कम होती गई। शुरू २ में तो पार्लियामैंट की राय से ही इस कमेटी ने काम किया, किंतु आहिस्ता-आहिस्ता इसने सब सत्ता पार्लियामैंट से छीन ली। बादशाह को जीवन भर के लिए Tonnage और Poundage वसूल करने का अख्तिार देने के बाद इसकी शक्ति कुछ न रही। देश में आने वाली एक टन शराब पर जो कर लगता था वह टनेज Tonnage और एक पौंड सूखे माल पर, जो देश में आए या दश से बाहर जाय जो कर लिया जाता था वह Poundage पौंडेज कहलाता था।

इसके पिता ने फ्रांस का जो भाग जीता था, सिवाय कैले Calais के वह सब हाथ से निकल गया और वहां से बड़े-बड़े जागीरदारों और सरदारों के आने पर देश में अराजकता फैल गई। उनके पास हथियारबन्द सिपाही थे, इस लिए उन्होंने जो मन में आया करना शुरु किया। उनके ऊपर न्यायालयों का भी कोई अधिकार न रहा। इस प्रकार उनको दबाने के लिए बादशाह कुछ भी न कर सकता था। १४५० में Jackcade जैककेड के नेतृत्व में प्रजा ने बलवा किया। किन्तु यह कह कर कि फरमानों पर ध्यान दिया जायगा और स्थिति सुधारी जायगी, बलवे को शांत किया गया और Jackcade को मार डाला गया। चूँकि गद्दी का असली मालिक रिचर्ड द्वितीय के बाद यार्क वँश (York) का राजकुमार था, किंतु पार्लियामैंट ने लङ्कास्टर वँश के राजकुमार Henry VI को गद्दी दे दी थी। Henry VI हेनरी छठे के अयोग्य होने और देश की ठीक तरह से व्यवस्था न करने के कारण अमीर-उमराओं में दो पक्ष हो गए। एक ने बादशाह का साथ दिया और दूसरे ने York (यार्क वँश के राजकुमार का। मामला यहां तक बढा कि उनमें १४५५ में आपस में लड़ाई शुरू हो गई, और यह अन्तर-विग्रह १४५५ से लेकर १४८५ तक जारी रहा। यह गुलाबों की लड़ाई के नाम से मशहूर हो गई क्योंकि यार्क (York) वँश का चिन्ह सफेद गुलाब का फूल था और लँकास्टर (बादशाह) वँश का लाल गुलाब था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४६१ में पार्लियामैंट ने Henry VI को गद्दी से उतार कर Edward of York (यार्क वंश के राजकुमार) एडवर्ड को तख्त पर बैठा दिया। किन्तु इससे लड़ाई बन्द नहीं हुई। आखिर कुछ समय के बाद Henry कैद कर लिया गया और उसकी पत्नि फ्रांस भाग गई। हेनरी की पत्नि मार्गरेट ने १४७१ में फिर लड़ाई की और ट्यूकजबरी Tewkes bury के मुकाम पर उसकी फिर हार हुई। इस लड़ाई में वह अपने लड़के सहित पकड़ी गई। लड़का मार डाला गया और हेनरी जेलखाने में मर गया। १४७१ के बाद एडवर्ड चौथे का सामना करने वाला कोई न रहा और उसने Lancaster लङ्कास्टर वंश वालों की जागीरें जब्त कर लीं। इन जागीरों की आमदनी से और प्रजा से जबरदस्ती दान—यानि Benevolences लेकर अनियन्त्रित राजसत्ता का आरम्भ किया, पार्लियामैंट की जरा भी परवाह न की। इसने १४८३ तक राज्य किया। मगर देश की हालत हेनरी Henry के समय से किसी तरह से भी अच्छी न रही। इसके बाद उसका बड़ा लड़का, जिसकी उमर १२ वर्ष की थी, एडवर्ड पाँचवें के नाम से गद्दी पर बैठाया गया और उसके चाचा रिचर्ड आफ ग्लौसस्टर Gloucester के हाथ में सब राज-काज सौंप दिया। थोड़े ही मास बाद यह कह कर कि एडवर्ड, एडवर्ड चौथे का नाजाइज लड़का है, वह स्वयम् गद्दी पर बैठ गया, और उसको और उसके छोटे भाई को कतल कर दिया और रिचर्ड तृतीय नाम धारण किया। मगर लँकास्टर वंश के राजकुमार ने इसे चैन से न रहने दिया। १४८५ में Henry ट्यूडर ने इसको बौसवर्थ Boswarth की लड़ाई में मार डाला और स्वयम् Henry VII हेनरी सातवें के नाम से गद्दी पर आया। इस प्रकार ट्यूडर वंश का आरम्भ हुआ। लङ्कास्टर वंश की राज-कन्या ने एडमण्ड ट्यूडर Edmond Tuder के साथ विवाह किया था, उसीका हेनरी Henry लड़का था। यार्क वंश के समय में पार्लियामैंट की सत्ता नहीं के बराबर ही थी. ट्यूडर वंश के समय में (१४८५ से १६०३ तक) क्या हाल रहा, यह अगले लेख का विषय होगा।

गीत !

[आचार्य 'वटुक']

नव-विहान के सुखद चरण रे !
नूतनता, नवजीवन भरता, आ; विहान के मृदुल चरण रे !!

लेकर लौटे नवल उषा को—
यही अमा की रात्रि अरे ! कल।
सब प्रमाद तन्द्रा भग जाए
हो डर निश्छल, मन हो निश्चल ॥
आ, तू जीवन-ज्योति जगाकर—
कर अज्ञान-तमिस्र हरण रे !
नव-विहान के सुखद चरण रे !! ॥१॥

माँ के सब जञ्जाल जञ्जाल जलादे—
जलता दीपक करता टिमटिम।
वैमनस्य की आग बुझाता—
मधुर-मधुर मधु बरसे रिमझिम ॥
'जय स्वतन्त्रते ! भरत-भूमि जय !'
बढ़कर बोले आज मरण रे !
आ, विहान के सुखद चरण रे !! ॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्ध भिखारी

कहानी

[पं० हृदयनारायण शर्मा, बहावलपुर]

पौष मास की कड़कती सर्दी, अमावस की अन्धेरी रात,—आकाश पर चारों ओर घनघोर घटा छाई थी, हड्डियों तक में घुस जाने वाली शीतल वायु बड़े वेग से चल रही थी······। बादलों की गरजना व बिजली की कड़क से दिल कम्पायमान हुआ जाता था।

दो पहर रात गुजर चुकी थी, वर्षा अभी-अभी बन्द हुई थी। गली-कूचों में सब ओर कीचड़ ही कीचड़ था जिससे चलना-फिरना कठिन हो रहा था। सब नगरवासी अपने २ घरों में आराम से गरम बिस्तरों पर लेटे हुए थे, अङ्गीठियाँ जल रही थीं। बाजारों में बिलकुल मौन का राज्य था, चारों ओर सन्नाटा था। परन्तु कभी-कभी कुत्तों के भौंकने की आवाज सुनाई दे जाती थी। पवन का वेग इतना प्रबल था कि वह दरो-दीवार से जोर से टकराती हुई खिड़कियों को तोड़ कर भीतर प्रवेश करने का यत्न करती थी। उस समय क्या कोई अभागा घर से बाहिर निकल सकता था·······?

रायसाहिब रूपकिशोर अपने घर में अङ्गीठी के पास आराम कुर्सी पर लेटे अपने बच्चों तथा स्त्री के साथ हास्य-विलास कर रहे थे। बाहर से एक ध्वनि सुनाई दी। स्त्री ने कहा कि शायद वायु की खड़खड़ाहट होगी। परन्तु कुछ समय के उपरान्त वही ध्वनि निकट हो जाने के कारण मनुष्य के शब्द स्पष्ट सुनाई देने लगे। रायसाहिब ने खिड़की खोली—बाहर कोई पुकार रहा था—"बाबा! वर्षा और शीत के बचाव के लिये किसी छत के नीचे कोई स्थान दे दे········।"

रायसाहिब ने टार्च का बटन दबाकर उस पर प्रकाश डाला। फटे-पुराने वस्त्र पहने एक वृद्ध भिखारी उसे दृष्टि-गोचर हुआ।

उस प्रकाश को बूढ़े ने आशा की किरण समझा और बड़ी नम्रता से प्रार्थना की—

"बाबू जी! ईश्वर तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को चिरञ्जीव रखे। मुझ अभागे दरिद्र पथिक पर दया करो। मैं शीत के कारण मरा जा रहा हूं। मेरे वस्त्र सब भीग·····।" ठण्डक के कारण से दांत जुड़ गये और वह अधिक न बोल सका।

रायसाहिब ने बात काट कर कहा—"हां, ठीक है; परन्तु हम क्या करें? जाओ क्षमा करो। मेरे पास तुम्हारी रात्रि व्यतीत करने के लिए कोई स्थान नहीं।" इतना कह कर वे खिड़की बन्द करके आराम कुर्सी पर आ लेटे।

स्त्री ने कहा—"परन्तु यह बेचारा अब जाएगा कहाँ? वर्षा सिर पर खड़ी नाच रही है और पर्वत सी भयङ्कर लम्बी रात्रि बाकी पड़ी है। यदि इस बेचारे को कोई स्थान दे········।"

रायसाहिब ने बीच में ही बात काट कर बड़े क्रोध से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर दिया—"तो फिर स्थान है कहां ? क्या सिर पर बिठाओगी ? कौनसा कमरा उसे दोगी ? उसका सारा शरीर और वस्त्र कीचड़ से लथ-पथ हैं।"

स्त्री मौन हो गई, किन्तु फिर कुछ सोचकर कहा—"क्या ग्राज में स्थान नहीं है ? मोटर तो कल से राजेन्द्र कानपुर लेकर गया हुआ है।"

"हां ! परन्तु नौकर सब सो चुके हैं। इतनी रात गये किस-किस को बुला भेजूं कि इसे ग्राज खोल दें। ऐसी हड़कंप सर्दी व भयङ्कर वायु में तो किवाड़ खोलना भी कठिन है। नरेश के सरदी लग जाने का भय है।" रायसाहिब ने टालते हुए कहा और फिर किसी अन्य विषय पर वार्तालाप छेड़ दिया।

सर्दी से सुन्न हुए शरीर को लेकर बेचारा दुर्बल पथिक कोरा सा उत्तर पाकर लुढ़कता हुआ गली के कौने पर पहुँच चुका था। भयानक और अन्धेरी रात्रि में निराशा उसके दुःखी मन को अधिक व्याकुल कर रही थी।

कुछ आगे जाकर वह रुक गया। बिजली की चमक में उसे सामने एक टूटा-फूटा और भद्दा सा मकान दीख पड़ा।

मकान की बाहिर वाली दीवारें स्पष्ट बता रही थीं कि यह किसी निर्धन मजदूर के रहने का स्थान है। जब वह किवाड़ों के सामने गया तो भीतर से धुंआ निकलता हुआ प्रतीत हुआ। वह किञ्चित झिझका, फिर उत्साह करके आगे बढ़ा और धीरे से किवाड़ पर थपकी दी।

'जीवण' अपनी पत्नि के साथ अग्नि के पास बैठा हुआ आनन्द से धूम्रपान कर रहा था। उसका लड़का 'रामूं' पास ही चारपाई पर सो रहा था। किवाड़ की खटखट से 'जीवण' चौंका और उठकर कुंडी खोली।

पथिक पहले तो सहम कर पीछे हट गया, परन्तु फिर 'जीवण' के पूछने पर बोलाः—

"बाबा ! रात्रि अन्धेरी है तिस पर यह वर्षा तथा शीत। वायु भी बड़े वेग से सांय-सांय कर चल रही है। अभी सारी रात्रि शेष है,······यदि ईश्वर के नाम पर मुझ दुःखी, अभागे पर दया करो तो रात्रि व्यतीत करलूं। अति कृपा होगी। ईश्वर तुम्हारा भला करे।"

'जीवण' अधेड़ उमर का आदमी था। बेचारा लोकल क्लाथ मिल्स में मजदूरी करता था। वह बोलाः—

"बाबा ! आओ, भीतर आ जाओ।"

पथिक का मन इस रात पहली बार गुद्‌गुदाया। उसके होंठ हिले। उसने धीमे-धीमे शब्दों में आशीर्वाद दिया और भीतर चला गया।

जीवण की धर्म-पत्नि बड़ी धर्मात्मा, दयावान् और पतिव्रता स्त्री थी। वह पथिक के मुरझाये हुए मुख से भांप गई कि बेचारा भूखा है।

उनके घर में केवल आध सेर आटा बाकी बचा पड़ा था जिसकी उसे दूसरे दिन प्रातः ही काम पर जाते हुए जीवण को रोटी बनाकर देनी थी। अतः बेचारी ने कुछ देर सोचा, फिर चुप हो रही। फिर सोचा········अन्त में बूढ़े से पूछा—"बाबा ! तुम प्रातःकाल से ही खाली पेट प्रतीत होते हो········।"

जीवण के ध्यान में यह बात अभी तक न आई थी। यह सुन वह चौंक पड़ा और स्त्री से कहा, "हाँ ! हां !! आटा गूंधो और शीघ्र ही भोजन तय्यार करके खिलाओ।"

स्त्री ने कहा "परन्तु आटा········!"

जीवण समझ गया, बोला—"कोई बात नहीं। मैं कल प्रातः व्रत धारण करूँगा और बिना कुछ खाये ही काम पर चला जाऊँगा।"

पथिक ने बड़ी नम्रता से कहा, "इतना कष्ट न करो।"

जीवण ने कहा "नहीं ! नहीं !! कष्ट कैसा ? हम ईश्वर का ही तो दिया हुआ प्रतिदिन खाते हैं।"

उसकी स्त्री ने शीघ्र ही भोजन तैयार करके पथिक के आगे ला रखा। उसने बड़े आनन्द से खाया। पथिक ने सच्चे मन से हार्दिक आशीर्वाद दिया, उसके गुणों का गान किया तथा सन्तोषजनक श्वास ली·····।

भिखारी का मुख, जो पहले की भूख और कष्ट से मुरझा रहा था, अब किञ्चित मात्र प्रसन्नता से फूल की भांति खिल रहा था। उसके मुख से गम्भीरता टपक रही थी; और उदर की अग्नि शान्त हो जाने पर उसके नेत्रों में चमक और होठों पर मुस्कराहट उत्पन्न हो रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भिखारी अपने मुख में कुछ गुनगुनाया। फिर जीवण की ओर सम्बोधित होकर बोलाः—

"ईश्वर तुम्हें आनन्द रखे। तुम्हें शक्ति दे, धन दे ताकि दरिद्रों, अनाथों और भूखों का सहारा बन सको।"

अर्ध रात्रि से कुछ अधिक समय बीत चुका था अतः अग्नि के समीप ही सब चटाइयों पर लेट गये और लेटते ही निद्रा की गोदी में प्रेम का झूला झूलने लगे······।

*   *   *

सुबह हुई। आकाश पर बादलों का नाम तक न था। वायु बन्द हो चुकी थी। जीवण की आंख खुली तो सूर्योदय हो गया था। वह घबराया हुआ उठा। स्त्री को जगाया। जब दूसरी ओर दृष्टि डाली तो रात वाला वृद्ध-भिखारी गुम था। आश्चर्य में थे वे दोनों कि कारण क्या है·······?

चारों ओर ध्यान पूर्वक देखा तो एक चमकता हुआ स्वर्ण का टुकड़ा पड़ा हुआ दृष्टिगोचर हुआ। उसके एक ओर कुछ मध्यम शब्द लिखे हुए थे।

रामूं स्थानीय पाठशाला की चतुर्थ श्रेणी में विद्याध्ययन कर रहा था। जीवण ने उसे दिखाया तो रामूं ने पढ़ा—

"निर्धन ही ईश्वर की सची पूजा करते हैं इसलिए वह उसे अधिक प्रिय हैं।"

रामूं पाठशाला चला गया और जीवण मिल्स में काम पर चला गया।

सारा दिन जीवण का मन बड़ा प्रफुल्लित रहा कि अब उसके पास धन जमा हो जायेगा क्यों कि वह स्वर्ण का टुकड़ा तोल में तीन छटांक से कम न था।

दोपहर के समय मिल्स में भोजनार्थ जब एक घण्टे का अवकाश मिला तो सब मजदूर दौड़ते हुए मिल्स के फाटक पर इकट्ठे हुए। जीवण भी उधर ही को हो लिया। वहाँ पर मालिकों की ओर से नोटिस-बोर्ड पर एक नोटिस लगा हुआ था जिसे मिल्स का क्लर्क पढ़कर सुना रहा था। कई मजदूरों और क्लर्कों तथा अन्य सेवकों का मासिक वेतन बढ़ाया गया था। जीवण को सब मजदूरों से अधिक तरक्की मिली थी उसका, मासिक वेतन डेढ़गुणा बढ़ गया था।

घर पर आकर जीवण ने सुना कि रायसाहिब रूपकिशोर का छोटा लड़का नरेश नमूनिया हो जाने के कारण काल का ग्रास हो गया।

दूसरे दिन उसने सुना कि राजेन्द्र, जो मोटर लेकर कानपुर गया था, मोटर डाकगाड़ी से टकराकर चकनाचूर हो गई, वह स्वयँ सख्त घायल होकर सरकारी चिकित्सालय में स्वर्गधाम पहुंच गया है।

रायसाहिब का हरा-भरा घर एक रात में ही उजड़ गया। अब उसका घर शमशान से बाजी लगा रहा था। रायसाहिब का मन उदासीन और कुम्हलाया हुआ रहने लगा; परन्तु उसकी स्त्री समझ चुकी थी कि उस दिन वाले पथिक की आहें ईश्वर के न्यायालय में पहुँच कर बदला ले चुकी हैं।

रायसाहिब की स्त्री ने अब निश्चय कर लिया कि नित्यप्रति किसी निर्धन को भोजन करा के ही मैं भोजन किया करूँगी।

रायसाहिब भी अब वह रायसाहिब न थे। उनका मन बहुत कुछ बदल चुका था। संसार की थपेड़ों ने उन्हें बहुत कुछ समझा दिया था। उन्हों ने एक पुस्तक 'सची-भक्ति' के नाम से लिखी जिसे जनता ने बहुत पसन्द किया।

रामूं एक दिन पाठशाला से आकर घरपर अपना पाठ, जो था तो कठिन परन्तु मनोरञ्जक होने के कारण, बारर पढ़ रहा था। जीवण और उस की स्त्री, जो अब एक स्वच्छ सुन्दर मकान में रहते थे, बड़े ध्यान से उस का पाठ सुन रहे थे। पाठ का प्रस्ताव इस प्रकार थाः—

"सायंकाल के समय चन्द्रमा की पहिली किरण के साथ देवता पृथ्वी पर उतर आते हैं ताकि वह ईश्वर की जनता की रक्षा करें और प्रत्येक धर्मात्मा तथा दुरात्मा व्यक्ति के जीवन-चरित्रों से अपने जगत्पिता परमात्मा को सूचित करें। वह सूर्य की पहिली किरण के साथ ही आकाश में धर्मराज्य के न्यायालय में उपस्थित होकर अपनी रात्रिचर्या का वृतान्त सुनाते हैं।"

'जीवण' ने अपनी स्त्री की ओर गम्भीर दृष्टि से देखा। शायद दोनों समझ चुके थे कि 'वृद्ध भिखारी भी आकाश लोक का एक देवता ही था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेनापति की पुकार

[श्री काशीनाथ त्रिवेदी]

यूरोप में इस समय घनघोर लड़ाई छिड़ी हुई है। लाशें तड़प रही हैं। खून की नदियां बह रही हैं। घर-बार जल रहे हैं। महल और मठ ढह रहे हैं। गांव और शहर बरबाद हो रहे हैं। आदमी आदमी का वैरी बन गया है। बम बरसाये जाते हैं। आग उगली जाती है। लड़ने वालों की तो खैर है ही नहीं; न लड़ने वालों की भी कुशल नहीं। चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है। दुनिया बैठी तमाशा देख रही और दुआ माँग रही है। भगवान् जाने यह कातिल लड़ाई कब खतम होगी? कौन जीतेगा? कौन हारेगा?

* * *

इसमें शक नहीं कि लड़ने में बहादुरी है। लड़ना बुरा भी नहीं। वह जरूरी भी हो सकता है। पर जिस तरह की बे-लगाम और 'बे-काम' लड़ाई आज यूरोप में चल रही है, उससे न यूरोप वालों का कोई लाभ है, न दुनिया का कोई फायदा। रोज हजारों की जानें जाती हैं; रोज करोड़ों ही नहीं, अरबों पर पानी फिरता है, वैर बढ़ता जाता है, आग बुझती नहीं— धधकती और भड़कती चली जाती है। भूख मिटती नहीं। जितना नुकसान हो रहा है, उसका हजारवां या लाखवां भाग भी भरपाई के रूप में किसी को मिल नहीं रहा। अकाल की कराल छाया सारे यूरोप को भयभीत किए दे रही है!

* * *

इस लड़ाई में औरतों और बालकों की मुसीबतों का कोई पार नहीं! उन पर चौतरफा आफतों के पहाड़ ढह रहे हैं। कहर बरस रहा है। हजारों बहनें और हजारों बालक हर रोज, हमेशा के लिए अनाथ होते चले जा रहे हैं। समाज की जड़ में घुन लग रहा है। अपने बिराने और बिराने अपने हो रहे हैं। बालकों को मजबूर होकर मा-बाप से दूर परदेश में जाना पड़ रहा है। खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने और लिखने-पढ़ने की सांसत बढ़ रही है। खेलना-कूदना मुहाल हो रहा है। छाती पर बोझ और मुंह पर ताले जड़ दिये गये हैं। कल का सूरज कैसा उगेगा, कोई जानता नहीं। आग उगलने वाले बमों और जहरीली गैसों से लदे हुए भीमकाय हवाई-जहाज आज यूरोप के आसमान में चीलों की भांति मण्डराते नजर आते हैं। यमराज के यमदूत भी इतने भयावने, इतने कठोर और इतने विनाशकारी नहीं होते, जितने यूरोप वालों के ये 'विमान' आज साबित हो रहे हैं!

भगवान्, इन 'विमानों' से सबको बचावे!

* * *

उधर यूरोप में यह सब हो रहा है। एक महा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभारत मचा हुआ है। और, इधर भारत में एक बिलकुल निराली, नई, अचरज भरी पावनकारी दुनियां का जन्म होने जा रहा है। इस दुनिया में मार-काट, लूट-खसोट, खून-खराबी, छीना-झपटी और जोर-जुलुम की पूरी मनाही रहेगी। इसमें कोई किसी का बैरी न होगा। सब आपस में भाई-भाई होंगे। हक के लिए वे लड़ेंगे भी, मगर उस लड़ने में मार-धाड़ न होगी, खून-खराबा न होगा। हक के लिए आदमी जरूरत पड़ने पर हँसते-हँसते मर मिटेगा; पर अपने हाथों किसी को मारेगा नहीं। खून और खुराफात से वह नफरत करेगा। उसका दिल दया और करुणा से भरा होगा। स्नेह का सागर उसमें उमड़ता मिलेगा। लाग-डांट और खुदगरजी से वह कोसों दूर रहेगा। सबके लिए जीकर वह अपने लिए भी जीयेगा। उसके जीवन में बदबू नहीं खुशबू होगी। उसमें मिठास की सूरत और हँसी की सूरत चमकती मिलेगी। वह खुद झुक कर चलेगा और बे-मतलब किसी को झुकाना पाप समझेगा।

* * *

सेवाग्राम के साधु का दुःखी दुनिया के लिए आज यही सन्देश है। लोग कहते हैं, इसमें नया कुछ नहीं। हजारों वर्षों से दुनिया में यही होता आया है। ईसामसीह ने दुनिया को यही सबक सिखाया था। उनसे पहले गौतम और महावीर ने भी इसी की पैरवी की थी। पर किसी की चली नहीं। दुनिया का जो रवैया तब था, वही आज भी है। ईसा को मानने वाले, उसे भगवान् का इकलौता बेटा समझने वाले, उसके दीन पर ईमान रखने वाले आज यूरोप में ईसाई न रह कर कसाई का बाना पहन चुके हैं। गौतम का अनुयायी जापान अपने ही पड़ोसी चीन पर भेड़िये की भांति मुंह फाड़े सवार है। ऐसी हालत में भाईचारे की बातें चलाना, लड़ाई-झगड़ों से बचने को कहना, मार-काट से नफरत करना, या फौज और पुलिस को बेकार बताना निरा पागलपन है। यह पागलपन फकीरों को शोभा दे सकता है, पर दुनियादारों के लिए तो यह एक महँगा सौदा है। वे हक-नाहक अपना नुकसान काहे कराने लगे?

* * *

बात सच भी है और झूठ भी। सच इसलिए कि जो है; उससे इनकार नहीं किया जा सकता; झूठ इसलिए कि दुनिया में नाम गौतम, महावीर और ईसा का ही रहा है। ये ही मरकर अमर हुए हैं। बाकी जो इनकी सलाह को ठुकरा कर, इनकी राह को छोड़ कर चले, वे मरकर फिर जी नहीं सके।

पुराना तबतक नया ही है, जब तक उस पर अमल नहीं होता। उसमें बासीपन नहीं, ताजगी रहती है। ईसा के वचन, गौतम की बातें और महावीर के बोल आज भी मरे हुओं में जान फूंकने की ताकत रखते हैं। बड़े-बड़े दिमाग वालों में, सूरमाओं और लड़वैयों में वह ताकत और धीरज कहां, जो उनको इन फकीरों की राह चलने का बल दे सके? कोई तलवार की धार पर चलले, या इनकी पुकार पर चलले!

* * *

मरकर जीना चाहने वालों के लिए तो फकीरों, पागलों या दीवानों की दिखाई यह राह ही असली और अमली राह है। भारत का बूढ़ा फकीर, सेवाग्राम का साधु,—जो आज देश के दीवानों की निगाह में बेताज का बादशाह है, जो देश के खातिर बुढ़ापे में एक बार फिर सर पर कांटों का तार लादे, नये तरीके से सेनापति का काम करने निकला है, जो दुनिया की हर हँसी और मजाक को सर माथे चढ़ाकर आजादी से शादी करने के लिए बुढ़ौती में फिर दुलहा बना है—पुकार-पुकार कर बार-बार दुनिया को यही सीख दे रहा है कि ये दुनियादारो! जरा सोते से जागो, खुली आंखों से दुनिया की कीमत आंको; आदमियत की राह को आदमी की तरह पहचानो; देवता न बन सको न सही, आदमी तो बने रहो; माया-ममता न छोड़ सको, न छोड़ो; पर मानवता से तो मुंह न मोड़ो! अपने अधिकारों को समझो; अपनी ताकत को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तौलो; अपने तोशे-भरोसे पर जीना सीखो; अपनापन छोड़ कर परायेपन में न फँसो, पराये धन और पराई हुकूमत को ललचाई निगाह से न देखो, सबका समान भाव से आदर करो, किसी को अपना बैरी न समझो, हिलमिल कर रहो, एका जोड़ो, गुलामी से मुंह मोड़ो, दीनता और खुशामद छोड़ो! तोपों और गोलियों का सामना बमों और गैसों से नहीं, खुली छाती और मुसकुराते चेहरों से करो। वे आग बरसावें, तो तुम ऊपर फूल बरसाओ! वे मारने आयें, तो तुम मरने को बढ़ जाओ, पर अपनी ओर से उनपर हाथ न उठाओ! मानवता इसी में है। वीरता, विजय और अमरता भी इसी में है। सुख और समाधान, शान और एहसान सब कुछ इसी में है।

* * *

भारत के सेनापति की, जीवन के ७३ वें साल में अपने देश वासियों से यही विनय है। वह चाहता है कि लोग सचमुच उसकी कुछ सुनें, सुन कर सचमुच कुछ अमल करने लगें, और करके दुनिया को दिखादें कि फकीरों या साधुओं की बातें हमेशा ही गलत और बे-सूद नहीं होतीं।

बड़ों के बजाय देश और दुनिया के बालकों से उसे बड़ी आशा है। नौजवानों पर उसकी टकटकी लगी हुई है। वह मानता है कि वे उसकी तरह, उससे भी कहीं अधिक, सरल, भोले और सीधे हैं। दुनियादारी का असर अभी उनपर कम ही हुआ है। यदि बालक उसकी बातों की गांठ बांध सकें और नौजवानों से मिलकर उसकी राह चलना शुरू कर सकें तो बात की बात में देश की हवा साफ हो जाय, बीमारी मिट जाय, गुलामी की जड़ें उखड़ जायँ और अकेला आरत भारत ही नहीं, वरन् सारी पीड़ित मानवता आजादी की साँस देने और सुख की नींद सोने लगे।

भगवान् करे हमारे बूढ़े सेनापति के सब मनोरथ तुरन्त सफल हों, उसके सारे अरमान खूब फलें-फूलें, और उसकी सुखमयी छाया में दुखी दुनिया तुरत ही सुख के और सोने के दिन देखे! ॐ शान्तिः ३!

वह अद्भुत दृश्य

'अरे बाप रे बाप!' चिल्लाती कराहती हुई एक ५५-६० साल की बुड्ढी औरत अचानक बापू के कमरे में आ घुसी। बापू उस समय सो रहे थे। अचानक गहरी नींद से उनकी आंख खुल गई। सामने क्या देखते हैं कि एक बुड्ढी औरत, जो मैले वस्त्र पहने हुए है, रो रही है। बापू ने शांत और गम्भीर स्वर में पूछा कि क्या हो गया, क्यों रोती हो? बुड्ढी औरत ने कहा—'डसला'। बापू ने फिर कहा—क्या 'डसला'? औरत मराठी जबान जानती थी। वह चिल्लाती और कराहती हुई बार-बार यही कहती जाती थी कि 'डसला' 'डसला'। इतने में महादेव भाई पहुंच गये। उन्होंने बापू से कहा कि 'डसला' के मानी हैं विच्छू ने काट लिया। बापू उस बुड्ढी के पैर को अपने एक हाथ से पकड़े हुए बैठे थे और दूसरे हाथ से पङ्खा झल रहे थे। महादेव भाई को आज्ञा दी कि रसोड़े से आग लाओ। महादेव भाई दौड़ते हुए रसोड़े में गये और जल्दी ही आग ले आये। बापू एकाग्र मन से अपने दोनों हाथों से उसके पैर को उठाकर आग के ऊपर लगभग एक घण्टे तक सेंकते रहे। जब उस औरत को कुछ आराम हुआ तब बापू जाकर आराम करने लगे और अपने बदले उसकी सेवा में महादेव भाई को तथा अन्य आश्रम के लोगों को लगा दिया।

जिस समय बापू उस बुड्ढी की सेवा कर रहे थे उस समय का वह दृश्य अनोखा और अद्भुत था। उस बुड्ढी का भाग्य सराहिये कि बापू ने उसकी सेवा की।

थोड़ी देर के लिए मान लो कि यदि वही बुढ़िया किसी अमीर-उमराव के कमरे में पहुँच गई होती तो उसकी क्या गति हुई होती? यह कल्पना के बाहर की बात है। जो अपने को प्रजा के हितैषी और सेवक कहते हैं क्या वे भी उस बुड्ढी की सेवा एकाग्र होकर करने में तल्लीन होते? यह विचारणीय विषय है जिसे मैं पाठकों की कल्पना पर छोड़ रहा हूं।

—प्रभुदयाल विद्यार्थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मलेरिया

[डा० सुरेन्द्रप्रसाद, जयपुर]

आज कल बहुत से लोग मलेरिया के शिकार होते हैं। मलेरिया को मौसमी बुखार के नाम से पुकारा जाता है। इसके आक्रमण के पूर्व रोगी को ठण्ड लगती, शरीर काँपता और दाँत कटकटाते हैं। फिर थोड़ी देर बाद ही ज्वर चढ़ता है और कुछ घण्टों रह कर स्वतः ही उतर जाता है। ज्वराक्रान्त दशा में सिर हाथ-पैर तथा पीठ में दर्द होने लगता है। कभी कभी इस प्रकार ज्वर के दूसरे या तीसरे दिन दौरे भी हुआ करते हैं।

डाक्टरों की राय में मलेरिया मच्छरों के कारण फैलता है। वे लोग मच्छरों को मारने और उनकी बढ़ती हुई संख्या को रोकने के लिए सैंकड़ों उपाय करते हैं। मलेरिया के प्रतिकार स्वरूप कुनैन का भी प्रयोग करने की राय दी जाती है। भारतवर्ष में प्रतिवर्ष सैंकड़ों रुपयों की कुनैन बाहर से आती है।

वास्तव में मलेरिया का कारण शरीर में दूषित रक्त का होना है। बरसात में जब धूप नहीं निकलती, तो भोजन का ठीक पाचन नहीं हो पाता और शरीर में रक्त की गति धीमी पड़ जाती है। इस प्रकार रक्त-शुद्धि में रुकावट हो जाने से ज्वर का प्रकोप हो जाता है। जिनका रक्त साफ है, उन्हें मच्छरों के काटने पर भी मलेरिया नहीं होता। मच्छर के डङ्क भी अशुद्ध रक्त में ही अपना प्रभाव डाल सकते हैं। वे जङ्गली जातियाँ, जो स्वभाविक जीवन व्यतीत करती हैं, मच्छरों से भरे जंगलों व नदी-नालों के पास रहते हुए भी उन्हें मलेरिया नहीं होता। अतः मलेरिया से बचने के लिए रक्त को शुद्ध रखना आवश्यक है। इसके लिये भोजन में मोटे चोकर युक्त आटे की रोटी, शाक (कुछ कच्चे भी), बरसाती फलों का प्रयोग करना, बहुत कम मात्रा में खाना, खुली और साफ हवा में घूमना तथा रहना चाहिए। प्रति दिन नीबू का रस और पानी मिला कर पीना चाहिए। वर्षाऋतु में नीबू का रस पीने से वायु, पित्त तथा कफ तीनों ठीक रहते हैं।

मलेरिया से बचने के लिए कुनैन का प्रयोग अत्यन्त ही घातक और भयङ्कर है। इससे शरीर का विष भीतर ही भीतर दब जाता है और आगे चलकर क्षय तथा कान, नेत्र आदि के रोग सताते हैं। जो लोग कुनैन का अधिक प्रयोग किया करते हैं, उनकी अधेड़ावस्था तथा वृद्धावस्था बड़ी शोचनीय हो जाती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। दीर्घ जीवन तथा स्वास्थ्य चाहने वालों को कुनैन से बचना चाहिए। मलेरिया को दूर करने के लिए अधोलिखित चिकित्सा-क्रम काम में लाना उचित है।

मलेरिया के रोगी को दो-तीन दिन का उपवास करना, उपवास काल में पेट की सफाई के लिए एनीमा का प्रयोग करते रहना, और थोड़ा २ जल तथा नीबू का रस देते रहना बहुत जरूरी है। उपवास पहले दौरे से लेकर दूसरे दौरे के दिन तक करना चाहिए। इसके अलावा रोगी को धूप-स्नान देना और किसी प्रकार वाष्प देकर तमाम शरीर में पसीना लाना भी लाभदायक है। पसीनों से विष जल्दी निकल जावेगा। दिन में एक दो-बार ठण्डे जल का पेडू-स्नान भी लिया जावे। मच्छरों से बचने के लिए हमें साफ खुले स्थान में रहना, मच्छरदानी का प्रयोग करना और रात्रि को सोते समय नीबू के रस तथा सरसों के तेल को मिलाकर इसकी तमास शरीर पर मालिश कर के सोना बहुत ठीक रहेगा।

किसान चित्रकार

[श्री शुकदेवनारायण]

प्रतिदिन भोर में बूढ़ी दादी सफेद ऊँची टोपी पहने अपने पोते के बिछावन पर झुक कर अत्यन्त स्नेहभरे शब्दों में उसे उठाया करती, "उठ मेरे बच्चे, तुझ से बहुत पहले ही उठकर पक्षीगण प्रभु का यश गान कर रहे हैं।"

शिशु मिलेट को दादी बहुत ही प्यार करती थी। ग्रेवील के उस छोटे से घर में दादी का रोज सवेरे उठाना वह जन्मभर नहीं भूला। दादी की गोद के बाद मिलेट को लुभाया गिर्जे की घण्टी की मधुर ध्वनि ने। रोज शाम को, सुबह और दोपहर को गिर्जे का घण्टा ग्रेवील के खेतों में गूंजा करता। यह घण्टी खेतों में काम करने वालों को काम शुरु और समाप्त करने के लिए बजती थी। शाम को जब वह घण्टा बजता तो किसान काम बन्द कर हाथ जोड़ सिर झुका प्रभु का ध्यान करते और तब घर आते थे। शिशु मिलेट, जो अपने पिता के साथ खेतों में जाता था. उस सान्ध्य घण्टी को जिसे वे एंजिलस कहते, बड़ी श्रद्धा से सुनता और सबकी तरह सिजदा करता। उसके लिए घण्टी की ध्वनि बाईबिल की पंक्तियों की तरह थी और उस ध्वनि को सुनना उसकी दिनचर्या का मुख्य भाग बन गया था। गांव की हर सुन्दर वस्तु से अधिक वह ध्वनि उसे प्यारी थी। लेकिन उस समय किसी ने, स्वयँ मिलेट ने भी नहीं सोचा था कि ग्रेवील ग्राम का वह 'एञ्जिलस' एक दिन उसी द्वारा चित्ररूप में सबके सामने आएगा और उसे अमर बनायेगा।

कैसे उसने इतनी बड़ी सफलता प्राप्त की. उसकी सफलता की कुञ्जी क्या थी? आइये, हम उसकी जीवन-कथा से उस गुप्त भेद को ढूँढ निकालें।

उस महान् चित्रकार का शैशव बड़ी मौज में बीता। यद्यपि उसका जन्म निर्धन परिवार में हुआ था और जीविका का साधन खेती ही थी, पर उसके परिवार के लोग सुसंस्कृत थे। उसके जीवन पर सबसे अधिक छाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी बुढ़िया दादी लूसी की पड़ी थी।

चाचा एबी चार्ल्स भी मिलेट को अत्यन्त प्रिय था। वह एक पादड़ी था और फ्रांस की राज्यक्रांति के समय ग्रेवील के गिर्जे में छिपकर उसने अपनी जान बचाई थी। वह बूढ़ा आदमी खेत में श्रमिक और गिर्जे में पादड़ी था। सवेरे वह गिर्जे में सरमन कहता, फिर पादड़ी की पोशाक उतार, कन्धे पर फावड़ा ले खेतों में मिहनत करता। यहीं उसकी मिलेट से दोस्ती हुई और शिशु ने उस प्यारे चाचा को पाया। उसी चाचा ने मिलेट को पढ़ना-लिखना सिखाया। एबी के मरने के बाद मिलेट स्कूल में भेजा गया। सात ही वर्ष की अवस्था में मिलेट बड़े-बड़े शब्दों के हिज्जे कर लेता, इससे लोग चकित रहते। बचपन से ही वह समुद्र की गम्भीरता से प्रभावित हुआ था। ग्रेवील का गिरजाघर समुद्र के किनारे ही था। मिलेट ने घण्टों समुद्र की लहरों को टकरा कर चूर-चूर होते देखा था। वह उस भीड़-भरभड़ के दिन को कभी नहीं भूला जब सन्त दिवस के उत्सव में लोग गिरजे में ठसाठस भरे थे, और एक आदमी ने खबर दी कि समुद्र में जहाज डूब रहा है। उसी समय सब लोग उत्सव छोड़ समुद्र तट पर जा पहुँचे। डूबतों को बचाने का पूरा प्रबन्ध किया गया, फिर भी काफी लोग डूब गए। समुद्र तटपर लाशों का ढेर लग गया। बालक मिलेट ने सोचा कि दुनिया के दिन पूरे हो गए।

मिलेट जब बारह वर्ष का था, तभी उसकी घनिष्टता गाँव के पादड़ी से हो गई। वह पादड़ी मिलेट से अत्यन्त प्रभावित हुआ। बालक का प्रकृति-प्रेम और पढ़ने की रुचि देखकर पादड़ी मिलेट को लेटिन पढ़ाने लगा। वह मिलेट के साथ ही बाईबिल और कवि वरजिल की कविताओं को भी गाता। वह पादड़ी मिलेट की उल्टी-सीधी हर बात और हर विचार को बड़े ही गौर से सुनता। इस प्रकार, छोटी उमर में ही मिलेट के अच्छे-अच्छे भावों को सुनकर उसे बड़ा आश्चर्य होता। "आह! मेरे लड़के," उसके मुख से अनायास ही निकल पड़ता "तुम्हारी जिंदगी में काफी दिक्कतें हैं और तुम नहीं जानते कि तुम्हें किन-किन से लोहा लेना है।" उसकी बातें सच थीं, जैसा कि मिलेट की जीवन-कथा से हम पाएंगे, पर इन सबके बावजूद भी वह अपने पवित्र उन्नत शैशव के लिए ईश्वर को धन्यवाद देता रहा।

बचपन में मिलेट ने घर के आस-पास पाये जाने वाले सभी मुर्गी-मुर्गे पेड़-पौधों का चित्र बनाया था, पर इतने से किसी को सन्देह नहीं था कि वह चित्रकार होगा। वह खेतों में काम करने जाता और उसे पूरा विश्वास था कि कुछ ही दिनों में पिता की तरह उसके हाथों में भी हल की मूठ आएगी। लेकिन एक साधारण सी घटना से उसका सारा जीवन ही बदल गया, और उन्नीस वर्ष की अवस्था में ही वह खेती छोड़ चित्र बनाने में लग गया। उसने एक दिन एक बूढ़े आदमी को गिरजे से लौटते देखा। बुढ़ापे के कारण उसकी कमर झुक गई थी। मिलेट ने एक खड़िया का टुकड़ा उठाकर रसोड़े की दीवाल पर उस बूढ़े का चित्र खींच डाला। वह चित्र इतना साफ था कि जिसने भी उसे देखा उसी ने उस बूढ़े को पहचान लिया और खूब हँसा, पर मिलेट के पिता को उससे हँसी नहीं आई। वह बड़ा ही गम्भीर हो गया। उसने देखा कि उसके पुत्र में प्रतिभा है। थोड़ी सहायता से वह प्रतिभा चमक सकती है। उसी क्षण उसने उसे उन्नत करने का मौका देने का निश्चय किया। उसने मिलेट को खेत का काम छोड़ देने को कहा और सरवर्ग में जाकर चित्रकारी का अभ्यास करने की राय दी।

मिलेट को इससे बड़ी प्रसन्नता हुई। कुछ ही दिनों में वह अपने पिता के साथ अपने नये पुराने चित्रों को लेकर सरवर्ग के एक चित्रकार के पास चला। सरवर्ग के एक चित्रकार ने मिलेट को अपना शिष्य बनाया, और उसकी राय से मिलेट सरवर्ग के अजायबघर में जाकर चित्रों की नकल करता रहा। इस तरह दो मास भी नहीं हुए थे कि मिलेट को पिता के मरने का दुखद समाचार मिला। पिता की अन्त्येष्टि में मिलेट घर गया। उसने दृढ़तापूर्वक निश्चय किया कि अब मैं कूँची को छोड़ कर—हल ही अपने हाथ में लूँगा। लेकिन उसकी बूढ़ी दादी ने उसके दृढ़ निश्चय को बदल दिया। उसे उसकी प्रतिभा में विश्वास था। "मेरे बेटे," उसने कहा "तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभु की इच्छा माननी ही पड़ेगी। तुम्हारे पिता ने हल छुड़ाकर तुम्हारे हाथ में कूर्चा पकड़वाई थी, तुम उसकी आज्ञा मानों और सरवर्ग जाओ।"

अतः मिलेट पुनः सरवर्ग लौटा। सरवर्ग में दो वर्ष उसने कठिन परिश्रम किया। इतने समय में उसकी प्रतिभा काफी चमकी। सरवर्ग की नगर कौंसिल में उसे छात्रवृत्ति देकर पेरिस भेजने की चेष्टा की गई। काउण्टी-कौंसिल ने चार सौ और नगर-कौंसिल ने छः सौ फ्रैंक्स की वार्षिक छात्रवृत्ति देना मञ्जूर किया। एक कौड़ीहीन कला के छात्र के लिए यह अपूर्व अवसर था। तो भी ग्रेवील में उसकी माँ और दादी ने इस खबर को सुनकर अधिक प्रसन्नता प्रकट नहीं की। सुदूर पेरिस महानगर में उनका अकेला लड़का भटकता फिरेगा। लेकिन मिलेट के पिता की इच्छा का उन्हें ख्याल था, अतः जी कड़ा कर ईश्वर को याद कर उन्होंने सिसकते मिलेट को विदा किया। अत्यन्त हुलास के साथ मिलेट पेरिस की ओर चला। पर नारमण्डी की सीमा पार करते ही उसे अपार व्यथा हुई। जन्मभूमि के प्रति उसका प्रेम उमड़ पड़ा। बड़ी-बड़ी दो बूँदे टपका कर उसने जन्मभूमि को छोड़ा।

पेरिस में मिलेट का मन नहीं लगा। उसे पेरिस के खेल-तमाशे, शहर की भीड़ और उद्देश्यहीन जीवन से घृणा होती। शहर के शौकीन, फुर्तीले लोगों से मिलते उसे सँकोच होता। गाँव के उस युवक को शहरी लड़के जङ्गली आदमी कह कर चिढ़ाते। शहर की दिल्लगी से वह अत्यन्त घबराता था। पर कुछ बातें मिलेट में ऐसी भी थीं, जिनकी रक्षा वह अत्यन्त साहस से करता था। उन दिनों जो चित्रकला प्रचलित थी, मिलेट उसका घोर निन्दक था। उसने साफ शब्दों में वैसे चित्रों की आलोचना की और माँग आने पर भी वैसे चित्र नहीं बनाये। उसने भूखों मरना मञ्जूर किया, क्योंकि उसके बनाये चित्र बिकते नहीं थे, पर प्रचलित परम्परा को मानना स्वीकार नहीं किया। सरवर्ग की नगर-कौंसिल ने दो वर्ष के बाद छात्रवृत्ति देना बन्द कर दिया। मिलेट के निर्वाह का एक मात्र सहारा उसकी कूची रह गई। इस कारण उसकी दिक्कत अधिक थी। उसने कई बार कुछ ही फ्रैंकों के लिए साईनबोर्ड तक बनाये, पर मांग के चित्र नहीं।

कुछ दिनों के बाद मिलेट का विवाह हुआ और पत्नि तथा बच्चों का बोझ भी कन्धों पर पड़ा। एक बार अपने छः चित्रों को उसने एक जोड़ी जूते के लिये दिया, और बिछावने के लिए एक चित्र! एक दिन एक मित्र ने कलाकार और उसकी पत्नी को एक अन्धेरे कमरे में बिना अङ्गीठी के अर्द्धविभुक्षित बैठा पाया। दो दिनों से उन्होंने भोजन चखा भी नहीं था। उस मित्र ने मिलेट को कुछ रुपये दिये तो मिलेट ने हँस कर उसे धन्यवाद देते हुए कहा—"यह रकम ठीक वक्त पर मिली। बच्चों को अभी तक कष्ट झेलना नहीं पड़ा था, आज तक के लिये उनका भोजन था।"

इन कठिन दिनों में भी मिलेट की कला का विकास होता रहा। अन्य कलाकार भी मिलेट की प्रतिभा का लोहा मानने लगे, पर मिलेट ने कभी भी इसका अभिमान नहीं किया। किसी व्यक्ति का चित्र मिलेट बड़ा ही साफ बनाता था। निर्वाह का वही एक जरिया था उसके पास। उसका हृदय पेरिस से दूर ग्रेवील के किसानों के बीच घूमा करता। सुन्दर शृँगार किए राजकुमारियों का चित्र, उससे चित्र विक्रेता मांगा करते, पर उसे वह पसन्द नहीं था। वह सहस्रों बार हलवाहों का चित्र बनाता था, पर सुन्दर शहर की स्त्रियों के चित्र उसके हाथों से तैयार नहीं हुए। उसने शहर छोड़ कर गांव में लौटने का निश्चय किया। शहर में मिलेट के लिए कोई आकर्षण नहीं था। गांव की साधारण रोजमर्रा की चीजों में वह विशेष सौंदर्य देखता। पेरिस के लोग भड़कीली पोशाक में गुड़ियों की तरह चित्रित रमणियों की छवि पसन्द करते। यही उस समय की कला भी थी, जो मिलेट को नापसन्द थी। उस कला से भिन्न वह चित्र बनाता था। "एक दिन दुनिया मेरे चित्रों को भी पसन्द करेगी," उसने सोचा।

अपनी पत्नी की सम्मति पा मिलेट पेरिस छोड़ वारबिजन गांव में जाकर बस गया। यहां आकर मिलेट ने अपनी शहरी पोशाक उतार डाली और किसान का चोंगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा लकड़ी का जूता पहना। जङ्गल की खुली हवा में उसने स्वतन्त्रता की सांस ली। यहीं आकर उसने श्रमिक जीवन सम्बन्धी अनेक चित्र बनाए। वारवीजन के बीस वर्षों के जीवन में उसने श्रमिक जीवन के हर एक पहलु का अध्ययन किया। उसने भेड़ों को चराते गडरियों का चित्र बनाया। बीज बोते, फसल काटते, केरौनी करते, आलू खोदते युवक-युवतियों के श्रमिक जीवन सम्बन्धी अनेक चित्र मिलेट के गम्भीर अध्ययन का परिचय देते हैं। स्त्रियों का चित्र भी उसने बनाया, पर उसने उन्हें चरखा कातते, कपड़े धोते, सन बांटते, मट्ठा मथते और बच्चों को खिलाते-पिलाते चित्रित किया। जङ्गल में लकड़ियाँ काटते, तख्ते चीरते और उन्हें ढोते लकड़हारे, और मजदूर मिलेट के हाथों से चित्रित हो जनता के सामने आए। इस प्रकार के सैंकड़ों चित्र मिलेट ने बनाए। सवेरे, दोपहर और शाम को भिन्न भिन्न समयों के चित्र बनाये। ग्राम्य-जीवन सम्बन्धी अनेक सुन्दर चित्रों में 'एञ्जिलस' भी एक था। उस चित्र ने उसे अमर बना दिया। फ्राँस सरकार ने उस चित्र को चौबीस हजार पौण्ड में खरीद लिया।

इस प्रकार क्रमशः मिलेट का दरिद्रता के साथ का संघर्ष भी मन्द पड़ने लगा। लेकिन मिलेट ने इसे समझा नहीं। उसने सङ्कट में कर्ज लिया, मित्रों ने मदद की। पर उसके जीवन में सदा एक बात का दुख रहा। अपने गांव में जाने भर का पैसा वह कभी एकत्र नहीं कर सका और जिस दिन उसके हाथ में पैसा आया उस दिन तक उसके गांव के प्रिय लोग मर चुके थे। उसके अनेक मार्मिक चित्रों में एक अत्यन्त ही मार्मिक था। दो स्त्रियां चितिज की ओर आँखें बिछाए उसकी प्रतिक्षा कर रही थीं, जो आ नहीं रहा था।" उसकी दादी और माँ इसी तरह उसकी प्रतीक्षा करती-करती इस सँसार से चली गईं, पर मिलेट से भेंट नहीं हुई। मां के मरने के एक वर्ष बाद अपने एक चित्र से मिलेट को कुछ अधिक पैसे मिले, और उसने सपरिवार ग्रेवील तक जाने का प्रबन्ध किया। लेकिन वह गाँव बिलकुल बदल गया था। मिलेट का स्वागत करने के लिए कोई भी उसका प्रिय नहीं बचा था। मित्र नहीं थे। बूढ़े मर चुके थे। हां, वह पादड़ी उसे गिरजे में झुका हुआ मिला, जिसने मिलेट को लेटिन पढ़ाया था। मिलेट को देख वह पादड़ी बुड़बुड़ाया—"आह! मेरे बच्चे··· ? क्या तुम अब भी बाईबिल पढ़ते हो? उसके सङ्गीत क्या तुम्हें याद हैं?"

'नहीं,' मिलेट ने कहा, "मेरे जीवन में जो कुछ है, सब बाईबिल की बदौलत ही है।"

"अच्छा, अच्छा, मैं सन्तुष्ट हो गया," उस पादड़ी ने कहा—'मैंने अच्छी जमीन पर बीज बोया और प्यारे बेटा, तुम अच्छी फसल काटोगे।' पर मिलेट फसल काटने के लिए इस सँसार में नहीं रहा। फिर भी उस पादड़ी की बात सच्ची हुई। मिलेट ने कूची से सँसार को श्रमकी सुन्दरता और महत्ता समझाई। जीवन के अन्तिम दिनों में फ्राँस के बड़े-बड़े कलाकारों ने मिलेट की कला का सर्वोच्च स्थान माना।

उसके बहुत से चित्र १८६७ की प्रदर्शनी में दिखाए गए। दूसरे वर्ष उसे एक सम्मानित पद "क्रॉस आफ दी लीजन आफ ऑनर" Cross of the Ligion of Honour. मिला। पेरिस के सबसे बड़े गिरजाघर में चित्रकारी करने के लिए उससे प्रार्थना की गई। इससे उसे खुशी हुई पर तब तक मिलेट की शक्ति समाप्त हो चुकी थी। उसी वर्ष जनवरी में वारवीजन में उसने इस सँसार से आँख मूंद ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

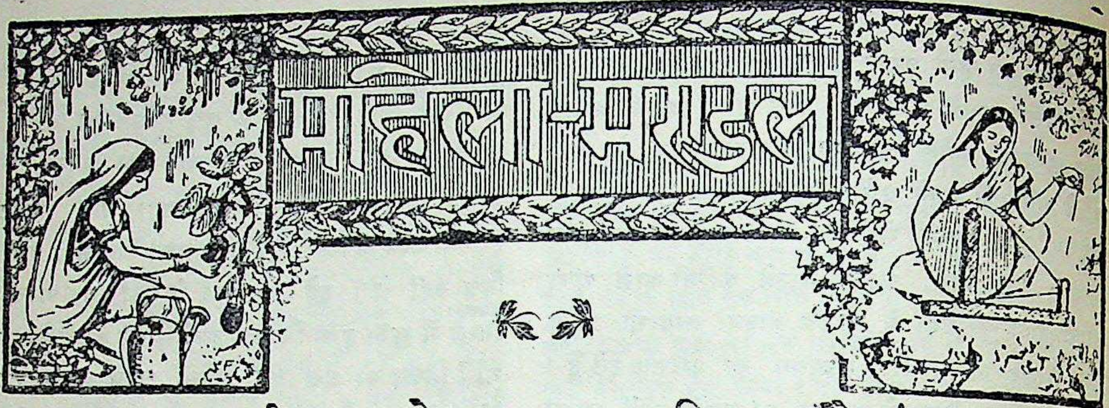

पर्दा-प्रथा केवल एक रूढ़िवाद है !

[श्रीमती राधादेवी गोयनका]

स्त्री पुरुषों का समान अधिकार—"स्त्रियों का प्रश्न उत्पन्न होते ही स्त्रियों का समाज में क्या स्थान है, यह सवाल प्रथमतः उत्पन्न हो जाता है। स्त्री-पुरुष की समानता में तो किसी को अविश्वास न होना चाहिए। मनुष्य समाज में दोनों समान हैं। समाज के लिये दोनों आवश्यक हैं, और दोनों के यथोचित कर्तव्य पालन पर समाज की सुख, शांति और प्रगति निर्भर है।"

पर्दे का प्रश्न—"पर्दा-निवारण का प्रश्न मारवाड़ी समाज के सुधार-क्षेत्र में आज प्रथम स्थान पाये हुए है। मारवाड़ी समाज का सुधार और पर्दा-निवारण ये दोनों शब्द एक साथ हो गये हैं। किसी भी समाज का सुधार और प्रगति महिला समाज के सुधार बिना नहीं हो सकती, और महिला-समाज की प्रगति जब तक पर्दा-निवारण नहीं होता तब तक नहीं हो सकती। अतः महिलाओं का पर्दा-निवारण मारवाड़ी समाज के सुधार का श्रीगणेश है। बिना पर्दा-निवारण के सामाजिक सुधार की कल्पना करना बिना नींव के इमारत बनाने का प्रयत्न करना है। पर्दा-निवारण की बात कहते ही हमारी संस्कृति से उनका क्या सम्बन्ध है, प्राचीन काल में पर्दा था या नहीं, पर्दा हमारे समाज में कब से आया आदि प्रश्न पूछे जाते हैं। खोज की बात दूसरी है। लेकिन सुधार की दृष्टि से हमारे सामने सीधा सवाल है कि आज पर्दा-निवारण आवश्यक है या नहीं ? और उसका सीधा उत्तर यही है कि वर्तमान समय में पर्दा-निवारण की शीघ्रातिशीघ्र आवश्यकता है।

पर्दा का वर्तमान रूप—"आज हमारे समाज में पर्दा केवल घूंघट के रूप में रह गया है। हमारे यहां पर्दे का वह भीषण स्वरूप नहीं है जो मुसलमान समाज में या हिंदुस्तान के उत्तरी भागों के कुछ समाजों में है। हमारी स्त्रियां पीहर में पर्दा नहीं करतीं, सुसराल में ही करती हैं। हमारी स्त्रियां घर वालों से पर्दा करती हैं, बाहर वालों और अपरिचितों से नहीं करतीं, यह तत्वहीन बात प्रतीत होती है। यह एक रूढ़ि के रूप में रह गया है। स्त्रियां नौकरों से बराबर बोलती हैं, पर्दा भी नहीं करतीं। लेकिन पति का दोस्त, जेठ, स्वसुर या कहीं-कहीं अपनी सास तक से पर्दा करती हैं। यदि स्त्रियों को अपने घर वालों से कोई बात पूछनी पड़ती है, तो वहां भी नौकर टेलीफोन का काम करता है और यदि नौकर न हो तो भीतर से बात कर उसकी प्रतिध्वनि से हमारी महिलाएं अपना काम कर लेती हैं। जिन बड़े बूढ़े और गुरुजनों की सङ्गति का लाभ अधिकाधिक उठाना चाहिए उनके सामने तक बहुओं का आना मना है, परन्तु जिन लोगों से यथाशक्य दूर रहना चाहिये उनसे बात करने में आपत्ति नहीं समझी जाती! पर्दा हमारे जीवन में किस प्रकार दुश्मन हो जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका अनुभव, अभी अकोला में जो बहुत बड़ी बाढ़ आई थी, उस समय मुझे मिला। स्त्रियां हतबुद्धि सी हो गईं और कई स्थानों पर उन्हें घसीट कर घरों से बाहर निकाला गया। पर्दे के कारण गृह-व्यवस्था में जो कठिनाइयां होती हैं, मेहमानों के आने पर जो सङ्कट खड़ा हो जाता है उसका हमें प्रतिदिन अनुभव होता है। हमारी स्त्रियां परोस नहीं सकतीं। मेहमानों के आदर-सत्कार की व्यवस्था नहीं कर सकतीं। घर में कोई मेहमान आ जाय तो स्त्रियों को घर जेलखाना हो जाता है। पर्दे से प्रवास में भी अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। पर्दे में न धार्मिकता है, न उपयोगिता और न सामयिकता ही। यह एक पुरानी रूढ़ि है, और प्राचीनता के नाम पर अभी हमारे सिर पर वह सवार है।"

हमारी कमजोरी—"इधर पर्दा-निवारण के सम्बन्ध में मारवाड़ी समाज में काफी आन्दोलन हो रहे हैं। वयोवृद्ध पर्दा-निवारण की उपयोगिता स्वीकार करते हैं, युवक तो पर्दा प्रथा के विनाश के कार्य में सलग्न दिखाई देते हैं। हमारी हर एक सामाजिक सभा पर्दा-निवारण का प्रस्ताव पास करती है। एक मत से प्रस्ताव पास होते दिखाई देते हैं। परन्तु व्यवहार में देखा जाय तो पर्दा-निवारण का कार्य नहीं के समान प्रतीत होता है। अनेक युवक, जो पर्दा-निवारण की बातें करते हैं वे भी व्यवहार में असफल दिखाई देते हैं और अनेक बार यह भी सुनने में आता है कि पुरुष तैयार हैं, मगर स्त्रियां निवारण के लिये तैयार नहीं हैं।"

"आज तक यह पुरुषों की ओर से कहा गया है; किन्तु अब हम स्त्रियों की ओर से भी कहना चाहती हैं कि हम पर्दा-निवारण के लिए तैयार हैं।

"संसार की बदलती हुई भयङ्कर परिस्थिति में यदि हमें जीवित रहना हो तो हमें स्त्रियों के पर्दा-निवारण के कार्य को बड़ी तेजी के साथ करना चाहिए, हम लोग अति प्राचीन दस-पांच महिलाओं के नाम लेकर स्त्रीत्व के आदर्श की दुहाई दिया करते हैं। लेकिन आदर्श भी समय के बदलने के अनुसार बदलते रहते हैं। आज के आदर्श हैं लक्ष्मीबाई, अहिल्याबाई होलकर, श्रीमती सरोजिनी नायडू आदि। आज देश इस प्रकार का स्त्री आदर्श चाहता है।

"मेरा यह कहना नहीं है कि आर्थिक क्षेत्र में स्त्रियों को पुरुषों के बराबर कमाने जाना चाहिए। लेकिन साथ ही साथ उन पर समाज का भयानक प्रतिबन्ध भी नहीं करना चाहिए। आज भी कितनी ही स्त्रियां पापड़, मुंगोड़ी करके कसीदा और सीना आदि काम करके, अपना तथा अपने बच्चों का पालन करती हैं, लेकिन इन निराधार स्त्रियों ने भूख की ज्वाला से झुलस कर घर में रह कर स्वयं ही इन कामों को निकाला है। समाज ने ऐसा कोई नियम नहीं बनाया है कि निराधार स्त्रियों को क्या करना चहिये और न उनके लिए शिक्षण की ही कोई योजना है कि वे पढ़कर समाज, राष्ट्र या साहित्य की सेवा कर सकें अथवा अध्यापिका या डाक्टर आदि बनकर स्वावलम्बी होकर अपना तथा समाज का कुछ भला कर सकें।"

शिक्षा की आवश्यकता—"लगभग २०–२५ वर्षों से समाज में सुधार-सुधार की आवाज उठ रही है। अनेक सभाएं होती हैं, विचार-विनिमय होते हैं लेकिन अभी तक कुछ इने-गिने सुधारकों के अतिरिक्त सुधारों को किसी ने नहीं अपनाया और जब तक समाज की सर्वसाधारण जनता सुधारों को नहीं अपनाती तब तक केवल पांच-पचास बड़े घरानों का सुधार क्या अर्थ रखता है ? मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि विद्या-रूपी प्रकाश के बिना हमारा यह अन्धकार का पर्दा हट नहीं सकता ! सामाजिक रूढ़ियों को हटाने के लिये शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। हमारे समाज में स्त्री-शिक्षा के सम्बन्ध में बहुत से मत-भेद हैं। कुछ लोग समझते हैं कि लड़कियों को केवल अक्षर-ज्ञान हो जाय। ऐसे भाइयों के लिये अवश्य ही मैं कहूंगी कि उन्हें विद्या के महत्व का ज्ञान नहीं है। हमें अपनी कन्याओं को शिक्षा और उच्चकोटि की शिक्षा देने को तैयार रहना चाहिये"।*

---

* पर्दा निवारक सम्मेलन कलकत्ता की अध्यक्षा की हैसियत से दिये गये भाषण पर से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिशु-शिक्षा

[श्री ला० कृष्णजसराय बी. ए., एफ. टी. एस.]

(अगस्त के अङ्क से आगे)

पण्डित जी—जब बच्चा तीन वर्ष का हो चुके और चौथा वर्ष लगे तो अपने ही घर में एक पाठशाला खोल लो जिसमें मुहल्ले के उसी आयु के बच्चे भी आकर पढ़ा करें। एक अध्यापिका जो मोण्टीसोरी परिपाटी से पढ़ाना जानती हो रखदो और उसकी देखभाल में आप पूरा भाग लो। यदि ऐसा न कर सको तो आप बच्चे को किसी ऐसी पाठशाला में, जहां छोटे बच्चों की पढ़ाई का प्रबन्ध हो दाखिल करा दो।

माता—हैं पण्डित जी, यह क्या कहा ? मैं तो समझी नहीं। यह तो बताइये वह मोण्टीसोरी परिपाटी क्या है ?

पं० जी—माता जी ! मोण्टीसोरी एक मेम साहिबा इटली राज्य की रहने वाली हैं। उन्होंने बड़े परिश्रम से बड़े अनुभवों के बाद एक प्रणाली ऐसे बालकों के लिये निकाली है जिनकी आयु दो वर्ष से चार वर्ष तक होवे। फिर प्रणाली का द्वितीय भाग चार से सात वर्ष तक के बालकों के लिये है। प्रणाली कितनी ही बातों में बहुत उत्तम है। इसमें खेल का खेल और पढ़ाई की पढ़ाई है। यद्यपि भारत जैसे गरीब देश के लिये यह खर्च की दृष्टि से अवश्य ही कठिन है, क्योंकि इसमें प्रयाप्त उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि इस प्रणाली का प्रचार भी यहां जैसा होना चाहिए था नहीं हो पाया है। परन्तु जो लोग इतना खर्च कर सकें उनके लिए यह प्रणाली अवश्य ही अच्छी है। यदि शहर से दूर एक आश्रम बनाकर बच्चों को रखा जावे, जहां बच्चे खुली शुद्ध तथा स्वच्छ वायु और रोशनी में रह सकें, मनमाने खेल खेल सकें, प्रकृति के दृश्य देख सकें और अपना जीवन भी प्रकृतिमय बना सकें, साथ ही अध्यापक भी प्रेम से पढ़ाने वाले हों तो मोण्टीसोरी प्रणाली से भी अधिक ज्ञान उस थोड़े समय में ही उन्हें प्राप्त हो सकता है।

माता—हां पण्डित जी, अब मुझे याद आया। जब मैं कुम्भ के मेले पर इलाहाबाद गई थी तो वहां हम एक दिन बच्चों की एक पाठशाला देखने गए थे। वहां कई मेमें बच्चों को पढ़ाती थीं, बच्चे बहुत प्रसन्न दीख पड़ते थे। वह सारे ही स्वतन्त्र थे। कहीं खेलें, कहीं कूदें; खेलने की वस्तुओं से अलमारियें भरी पड़ी थीं। कमरे की दीवारें नकशों तथा तस्वीरों आदि से भरी थीं। जिधर नजर जावे बच्चों को किसी न किसी प्रकार के खेल में शिक्षा मिल रही थी। वह पाठशाला भी मोण्टीसोरी परिपाटी की ही बताई गई थी। परन्तु आपने यह ठीक कहा उसमें खर्च वास्तव में बहुत है। हां, इस प्रकार की सँस्था जिसमें आश्रम का सा प्रकृतिमय स्वरूप हो और बिना आडम्बर के हो तो वह और भी अच्छा है। पंडित जी ! मैं तो अवश्य ऐसा ही करने का विचार करूँगी। आपका पोता चलने-फिरने, बोलने लगेगा तो या तो एक अध्यापिका को घर पर रख कर सारे मोहल्ले के बच्चों के लिए ही एक पाठशाला खोल दूंगी या फिर किसी ऐसे ही आश्रम में भेज दूंगी।

शिक्षा में खेलों का महत्व

पं० जी—यह बीच में दूसरा ही विषय छिड़ गया। हाँ, हम आपको कुछ बातें जो शिक्षा सम्बन्धी रह गई हैं और बताये देते हैं। जब तक बच्चा बड़ा होकर किसी आश्रम में न जावे तब तक घर में शिक्षा का कुछ सामान अवश्य इकट्ठा कर दें—जैसे रङ्गदार गेंदें, रङ्ग के नमूनों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किताबें, चाक की रङ्गीन बत्तियाँ, रङ्गीत कुकड़ियाँ, पशु-पक्षियों के चित्र, फूलों-फलों व वृक्षों के चार्ट, वनों उपवनों के सुहावने चित्र, कलों, मशीनों, पैदावार के नकशे, देश-देश के मनुष्यों, स्त्रियों व बालकों के चित्र, मिट्टी, टीन या लकड़ी आदि की बनी हुई वस्तुएं इत्यादि। ये सब बहुत रोचक, लाभदायक और शिक्षाप्रद होती हैं।

माता—इनसे बच्चों को किस प्रकार शिक्षा दी जाती है।

पं० जी—इनसे बहुत से खेल खिलाये जाते हैं और उनकी बावत बता-बताकर ज्ञान भी कराया जाता है। हम आपको नमूने के तौर पर केवल एक खेल का उदाहरण देते हैं। इसी प्रकार आप और भी खेल बना सकते हैं। आप दो बहुत गहरे रङ्ग छांट लें जैसे लाल व नीला। इन दोनों रङ्गों से चाक बत्तियें या कुकड़ी आदि इस प्रकार रंगें कि पहली सबसे गहरी फिर उससे कुछ फीकी आदि। मानों गहरी लाल व नीली मां हैं और कम लाल व नीले उनके बच्चे हैं। यह बात बच्चे को समझा कर उससे कहो कि लाल मां को पहिले बिठाकर फिर उसके बच्चे इस तरह लगावें कि पहिले बड़ा बेटा फिर उससे छोटा फिर उससे छोटा और इसी प्रकार नीली माँ का छोटा बड़ा बेटा केवल हलके व गहरेपन के भेद से होगा। दो बच्चे जब इस प्रकार दो रङ्गों से खेलें या अधिक बच्चे हों तो अधिक रङ्ग हों। माता या अध्यापिका बैठी २ प्रेम से देखती रहें और ज्यों ही बच्चा रङ्ग लगाने में चूक जावे तो प्रेम के साथ उसे ठीक कर देवें और बच्चे को समझादें। इस प्रकार बच्चे को मनोविनोद के साथ-साथ रङ्गों की गहराई तथा हलकेपन तक का बहुत ही उत्तम ज्ञान हो जावेगा। इसी प्रकार बहुत से खेल सब प्रकार की शिक्षा के बनाए जा सकते हैं। नकशों को दिखा कर कभी-कभी बच्चों को बाग-बगीचों की सैर भी करानी चाहिए। आप देखेंगी कि वे कितनी जल्दी पशु-पक्षी तथा फलों व फूलों का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार का वस्तु-ज्ञान भूला नहीं जा सकता। उनके गुण आदि के लिए छोटी-छोटी कहानियां आदि भी सुनानी अच्छी रहती हैं। बच्चों से उन वस्तुओं के विषय में बात चीत करनी चाहिए। जो प्रश्न बच्चे करें उनके उपयुक्त तथा रोचक स्वरूप में उत्तर भी सरल भाषा में दिये जावें, उनको प्रश्न करने से कभी न रोको। यही सच्ची व आसान शिक्षा-प्रणाली है। बच्चे के जो बात समझ में नहीं आती या जिसको वह नहीं जानता उसको वह जानना चाहता है, इसी कारण पूछता है; इस बात को समझा देना ही वास्तविक शिक्षा है। बहुत से मूर्ख व आलसी माता-पिता बच्चों की बातों का उत्तर न देकर उन्हें उलटा झिड़क देते हैं, 'तू तो कान खाये जाता है' कह कर चुप कर देते हैं। बच्चा बेचारा चुप हो जाता है और नित्य का इसी प्रकार का व्यवहार बच्चे की विचार-शक्ति को नष्ट कर देता है। बच्चे में किसी चीज की बावत सोचने-समझने की शक्ति नहीं रहती और न उसमें साहस ही रहता है। माता जी, आप ऐसा कभी न कीजियेगा। ज्ञानवान और सुशील बनाने का यह पहिला उपाय है कि आप उसके सारे ही प्रश्नों का प्रेम के साथ उत्तर दें। समय २ पर बात चीत में बच्चे को उत्साहित करने का प्रयत्न करें। बच्चों को समझाते समय यदि चित्र खींचने या वस्तु दिखाने की आवश्यकता पड़े तो अवश्य चित्र खींचकर या वस्तु दिखाकर समझाओ। इस प्रकार बच्चा सरलता से समझ जाता है और बहुत प्रसन्न होता है। वह कभी-कभी स्वयँ भी चित्र खींचने की आवश्यकता अनुभव करने लगता है। जब वह चित्र बनाना चाहे उसे न रोको प्रत्युत उसकी सहायता करो। अपने हाथ में उसका हाथ लेकर चित्र खिंचा दो, देखो वह कितना प्रसन्न होता है। नित्य इसी प्रकार अभ्यास कराने व उत्साह बढ़ाने से बच्चा जल्दी ही अच्छी चित्रकारी करने लगता है। इसी प्रकार बच्चों को किसी भी भाषा के अक्षर बहुत सुगमता से पढ़ाए लिखाए जा सकते हैं। बच्चे से पढ़ने लिखने का नाम न लेकर उसके सामने किसी सरल अक्षर का चित्र बनाओ और उससे कहो इसका अमुक

[शेष पृष्ठ ३२ पर देखो]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्ल की पुतली

[श्री ठा० देशराज जी]

एक शहर में एक लड़की रहती थी, उसका नाम था—'अक्ल की पुतली' वह बहुत बुद्धिमान और हाजिर-जवाब थी। सारा शहर उसकी अक्लमन्दी की प्रशंसा करता था। जिस बात का जवाब शहर भर में कोई नहीं दे सकता था उसका जवाब 'अक्ल की पुतली' क्षण भर में दे देती थी।

'अक्ल की पुतली' की बुद्धिमानी की चर्चा होते-होते राजमहल तक पहुंच गई। रानी ने उसे अपने महल में बुलवा लिया। उस समय वहाँ राजा भी बैठा था। 'अक्ल की पुतली' की बुद्धिमानी की प्रशंसा सुन कर राजा ने उसकी परीक्षा लेनी चाही और उससे सवाल पूछा—"अच्छा, बताओ हमारी रानी की सबसे बड़ी इच्छा क्या है?" लड़की ने तुरन्त उत्तर दिया—"यही कि मेरा सुहाग अचल रहे। यकीन न हो तो रानी जी से इसी समय पूछ लो।" भला रानी इससे इन्कार कैसे कर सकती थी। उसने भी 'हाँ' कर दी। राजा बहुत खुश हुआ और उसे बहुत सा इनाम दे कर विदा किया।

एक दिन 'अक्ल की पुतली' अकेली ही पहाड़ की सैर को निकल पड़ी। पहाड़ की ठण्डी २ पवन व सुन्दर दृश्य उसे बहुत अच्छे लगे, अतः वह दिन भर वहीं टहलती रही। शाम होने पर घर को लौटने लगी तो क्या देखती है कि सामने एक जबरदस्त दानव आ रहा है। वह लड़की को देखते ही हंसा। अक्ल की पुतली भी हंस पड़ी। दानव ने पूछा—"लड़की! तू क्यों हंसती है?" लड़की ने कहा—"मैं देखती हूँ कि काल तेरी चोटी पकड़ कर मेरी तरफ खींचे ला रहा है।" दानव ने पूछा—'सो कैसे?' अक्ल की पुतली ने कहा—"पड़ौस का दानव मुझे जहर खिलाकर यहां छोड़ गया है कि जब तू मुझे खायगा तो जहर तेरे पेट में फैल जायेगा और तू मर जावेगा।" यह सुनकर दानव को पड़ौसी दानव पर बड़ा क्रोध आया और उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारने के लिए उल्टे पैरों लौट पड़ा।

'अक्ल की पुतली' भी आगे को चल दी। अन्धेरा बराबर बढ़ता जा रहा था। उसने आगे देखा कि भूतों की बरात जा रही है। एक भूत दौड़ा हुआ 'अक्ल की पुतली' के पास आया और पूछा—'लड़की, तू कौन है?' पुतली ने कहा—'मैं तो वही हूँ जो कल तुम थे।' भूत ने सोचा कि यह तो कोई पहुंची हुई देवी है, जो हमारी कल की बातों को भी जानती है, अतः उसने हाथ जोड़कर कहा—देवी! मैं आपकी क्या सेवा करूं, आज्ञा दीजिये।' लड़की ने कहा—'देखो, उधर कौए काँव-काँव कर रहे हैं, वहाँ कोई सरोवर जान पड़ता है, वहाँ तक मुझे पीठ पर बैठाकर ले चलो।' भूत ने अक्ल की पुतली को पीठ पर बैठाकर सरोवर के पास पहुंचा दिया।

उस सरोवर के पास चार ठग रहते थे। लड़की को देखकर चारों ही आ गये और भूत के चले जाने पर बोले—'रखदे यहाँ, जो कुछ भी तेरे पास है।' लड़की ने कहा—'पर यह तो बतलाओ कि जो माल-असबाब पीछे से आ रहा है उसको तो हाथ न लगाओगे?' ठग चक्कर में पड़ गये और एक दूसरे के मुंह की ओर ताकने लगे। वे कोई जवाब देते कि इससे पहले ही 'अक्ल की पुतली' ने कहा—'जरा चले तो जाओ, मेरा सामान कोई रास्ते में ही न लूट ले। ऐसा हुआ तो मेरे या तुम्हारे—किसी के भी हाथ कुछ न लगेगा।' ठगों ने कहा कि लड़की ठीक तो कहती है। वे तुरन्त, जिधर से लड़की आई थी, उधर को चल पड़े।

उधर लड़की ने पहले तो सरोवर में पानी पिया और फिर ठगों के मकान की ओर चल पड़ी। वहाँ वह क्या देखती है कि एक घुड़साल में चार बहुत सुन्दर घोड़े बन्धे हैं। 'अक्ल की पुतली' ने चारों घोड़ों को खोलकर बाहर निकाला और एक पर सवार हो तथा तीन की गर्दन में रस्सा डाल अपने शहर की ओर ऐड़ लगादी। ठग भी जब बहुत दूर तक घूम-फिरकर निराश हो लौटे तो देखा कि लड़की नहीं है तथा घोड़े भी नदारद हैं। सब हाथ मल कर रह गये।

'अक्ल की पुतली' घोड़ों को दौड़ाती हुई नदी के किनारे पहुंची। उसे नदी की ओर बढ़ते हुए देख नदी के देवता ने कहा—'इस वक्त रात में पार नहीं होने दूंगा।' 'अक्ल की पुतली' बोली—'इससे हमारा तो कोई नुकसान होने से रहा; हाँ, माई जी रात भर उस किनारे आप की बाट देखती रहेंगी।' नदी के देवता ने कहा—'तो तुम चलकर उन्हें जल्दी खबर करदो। मैं भी नाव लेकर आता हूँ।' नदी को पार कर 'अक्ल की पुतली' अपने घोड़ों को सरपट दौड़ा कर रफूचक्कर हुई। जब नदी का देवता नाव लेकर उस पार पहुँचा तो वहाँ निरा सन्नाटा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे दिन शहर में शोर मच गया कि 'अक्ल की पुतली' चार बढ़िया घोड़े लाई है। राजा भी उन घोड़ों को देखने आया। घोड़ों को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गया कि यह तो वही घोड़े हैं जो चार वर्ष पहिले उसके अस्तबल में से चोरी हो गये थे। उसने 'अक्ल की पुतली' से पूछा—'बेटी, ! यह घोड़े तुमने कहाँ पाये ?' 'अक्ल की पुतली' ने शुरू से आखिर तक का सब हाल राजा को सुना दिया।

राजा 'अक्ल की पुतली' की बुद्धिमानी और साहस पर इतना खुश हुआ कि उसको भारी सम्पत्ति तथा उच्च आदर दे सम्मानित किया। राज्य भर में 'अक्ल की पुतली' का यश फैल गया। सब लोग उसका आदर-मान करने लगे।

[पृष्ठ २९ का शेष]

नाम है जैसे पहिले 'I' '—' 'I' 'न', 'त', 'प', फ', 'व', 'ब' 'क', इत्यादि। बच्चा स्वयँ नकल करने लगेगा। जब वह कुछ बनाले तो अक्षर का नाम लेकर कहो तुमने 'न' या 'प' खूब बनाया। इस प्रकार खेल में अक्षर लिखना व नाम दोनों ही बच्चे को खूब आ जावेंगे और कई बार करने से शुद्ध उच्चारण भी सीख जायगा। इसी प्रकार अक्षरों के चिन्ह बना २ कर भाषा सिखाई जा सकती है। इस प्रकार शिक्षा देने में माताओं और अध्यापिकाओं को एक बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि बालकों का स्वभाव चञ्चल होता है, वह देर तक बैठकर एक कार्य में नहीं लगा रह सकता। कभी कुछ कार्य करना चाहता है, कभी कुछ। इस बात का ध्यान रखते हुए माता व अध्यापिकाएँ उन्हें रोकें नहीं, जबरदस्ती कोई काम न करावें। पहिले से ही दो-चार काम सोच रखें। ज्योंही बालक एक काम से उकताया दिखाई दे झट उसका ध्यान दूसरे काम की ओर लगादें। इस प्रकार बालक कभी काम करने से न घबरावेगा। यदि जबरदस्ती किसी काम में लगाए रहने का उद्योग किया जावेगा तो वह जल्द उकता जावेगा और फल यह होगा कि बालक जिद्दी व हठी हो जावेगा और पढ़ना-लिखना सीखने से उसको घृणा हो जावेगी। माता जी ! आप ऐसी भूल कभी न करना, बालक कोमल व चञ्चल मन वाले होते हैं। उनसे उनकी मर्जी के अनुसार ही काम लेना लाभदायक होगा। अपने आराम व तकलीफ का ध्यान करके उनके साथ जल्दी व जबरदस्ती का व्यवहार करना बालक को अपने हाथ से खोना है।

बाल प्रश्नोत्तरी

प्र० विद्वान् किसको कहा जाता है ?

उ० जो भले बुरे की पहचान करके भलाई को लेता है और बुराई को छोड़ देता है।

प्र० तो क्या बहुत सी पुस्तकें पढ़ने से या परीक्षाएँ पास कर लेने से मनुष्य विद्वान् नहीं बनता ?

उ० नहीं। प्र० क्यों नहीं बनता ?

उ० जैसे पानी कहने से प्यास नहीं बुझती, रोटी कहने से भूख नहीं मिटती, जैसे गुड़ का बोझ उठाने से मुंह मीठा नहीं होता, इसी प्रकार पुस्तकें पढ़ लेने या परीक्षा में सफल हो जाने से कोई विद्वान् नहीं बनता। किन्तु मनुष्य अच्छी पुस्तकों में लिखी हुई अच्छी बातों को अपने व्यवहार में लाने से ही विद्वान् बनता है।

—रामावतार विद्याभास्कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्चिंग गीत

[श्री 'विकल']

इन्कलाब, ज़िंदाबाद ।
इन्कलाब, ज़िंदाबाद ॥

विश्व में महान् था ।
जो सुखों की खान था ॥

सर्वगुण निधान था ।
स्वर्ग के समान था ॥

तन में है वतन का दर्द,
मन में है वतन की याद ॥१॥

आगे पग बढ़ाएंगे ।
न पीछे हम हटायेंगे ।

मुसीबतें उठायेंगे ।
स्वतन्त्रता को लायेंगे ॥

तन में है वतन का दर्द,
मन में है वतन की याद ॥२॥

देश है हमारा ज्ञान ।
देश है हमारा ध्यान ॥

देश है हमारा मान ॥
देश है हमारा प्रान ॥

तन में है वतन का दर्द,
मन में है वतन की याद ॥३॥

भेद भाव भूल जाएँ ।
सब को हँस गले लगाएँ ॥

प्रेम में विकल बनाएँ ।
एक साथ मिल के गाएँ ॥

तन में है वतन का दर्द,
मन में है वतन की याद ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर ताम्रध्वज

[मा० गुलाबसिंह 'कार्तिकेय']

श्री 'रेवा' जी की दक्षिणी-सरहद पर 'धर्मकुरु' नाम का एक विशाल राज्य था। दानी मोरध्वज इस देश के राजा थे। वे प्रथम श्रेणी के सत्य-निष्ठ और ईश्वर के अनन्य-भक्त थे। परमेश्वर की असीम कृपा तथा अपने और पूर्वजों के पुण्यप्रताप से राजा ने ताम्रध्वज जैसा एक वीररत्न पाया था।

विधाता ने ताम्रध्वज को पिता के अनुरूप सब गुणों से सम्पन्न कर अक्षय-वीर बनाया था। प्रतिदिन के आखेट से राजकुमार की वीरता पर मानो गाढ़ी पालिश चढ़ रही थी। अवस्था में नाबालिग होने पर भी ये बड़े-बड़े वीरों के छक्के छुड़ाया करते थे।

नर्मदा जी के इर्द-गिर्द विशाल पर्वतों के अनेकों पुंज हैं। इन्हीं पर्वतों से युद्ध करते-करते नर्मदा जी की शक्ति क्षीण हो गई है। मण्डला का 'सहस्त्र-धारा' और जबलपुर का 'धुआँ-धार' इसके प्रत्यक्ष नमूने हैं। इन विकराल पर्वतों में भांति-भांति के पशुदल गुफाएं बनाकर निवास करते हैं। कुमार ताम्रध्वज इन्हीं पर्वतों में वन-क्रीड़ा किया करते थे।

बसन्त का महीना था। खुशबूदार मन्द-मन्द वायु बह रही थी। अपने नशे में मतवाले वन-पशु अठखेलियाँ कर रहे थे और राजकुमार ताम्रध्वज इन्हीं पशुओं की घात में 'वन विहार' को निकले थे। 'समय की बात' इन्होंने एक मृग छौने का पीछा किया। वह छलांगें मारता हुआ उपवन के मुहाने की ओर भागा। उसके पीछे राजकुमार और उनके सब साथी दौड़े। ज्यों ही यह जङ्गल के अन्तरीप पर पहुंचे, राजकुमार की दृष्टि एक अरबी घोड़े पर पड़ी।

घोड़े का रङ्ग भौंरे जैसा श्याम था। नख से शिख तक उसपर एक लम्बी चौड़ी जीन पड़ी थी, जिसके चौगिर्द मोतियों की सुन्दर झूल थी। सुन्दरता के लिहाज से घोड़ा, श्री कृष्णजी को छलने वाले घोड़े, 'केशी-राक्षस' से कम न था। घोड़े के मस्तक पर एक भोज-पत्र चिपका था। उस पर बड़े-बड़े अक्षरों में **"विजय-यज्ञ का घोड़ा"** लिखा था।

घोड़े के पीछे बेशुमार रथ और अपरिमित सेना थी। अगणित रथों में पहला रथ सर्वश्रेष्ठ था। उसमें एक से बढ़कर एक सोलह घोड़े जुते थे। रथ के मध्य में आकाश से बातें करने वाली विशाल ध्वजा फहरा रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्वजाके बीचोंबीच हनुमानजी की सजीव-मूर्ति शोभायमान थी। घोड़ों की रास पकड़े हुए श्रीकृष्ण भगवान सच्चे प्रेम का परिचय दे रहे थे।

रथ के मध्य में एक स्वर्ण सिंहासन पर वीरवर अर्जुन विराजमान थे। सम्पूर्ण शरीर लोह-कवच से आच्छादित था। हाथों में धनुषवाण, बगल में तलवार, कमर में कटार और पीठ पर तर्कश था।

जङ्गल के छोर में खड़े हुए ताम्रध्वज की दृष्टि ज्योंही घोड़े पर पड़ी, उनके शरीर में वीरता का सञ्चार हो उठा। उसी वक्त अपने घोड़े पर से उतर कर उसने घोड़े को पकड़ लिया। फिर क्या था सारी सेना में खलबली मच गई। स्वयं वीरवर अर्जुन अपने रथ से नीचे तो आये पर कुछ मिनटों के लिए रुक से गये। वह बालक की तरफ टकटकी लगाकर देखते ही रह गये, बालक की वीरछवि ने उनको मोहित कर लिया।

ओफ! कितना सुन्दर बालक है। फूल से भी मृदु और स्वभाव में मधु से भी मीठा जान पड़ता है। अवस्था में केवल सात वर्ष का होने पर भी वीरता का पुतला सा है। इसकी हड्डी-हड्डी में बल और नस-नस में जादू झलकता है। सिर पर रेशमी दुपट्टा, मुख पर वीर रश्मियां, गठे हुए बदन पर सटी हुई चपकन, दोनों बगलों में लटकती हुई तलवारें, पीठ पर वाणों से भरा तर्कश और हाथों पर धनुषवाण मेरे 'गाण्डीव-धनु' को भी लज्जित कर रहा है। परन्तु अफसोस! आज यह मेरे हाथों से मारा जायगा और मुझे बाल-हत्या का दोष लगायेगा। नहीं, नहीं! मैं ऐसा हर्गिज न होने दूंगा! शायद इसे मेरा जौहर विदित नहीं है—इसीसे अज्ञानता के कारण विजय-अश्व को पकड़ लिया है। खैर! मैं इसे अपना परिचय दे दूं—फिर देखा जायगा। ऐसा मन में सोच अर्जुन कृत्रिम-क्रोध के आवेश में बोले—'ओ नादान छोकरे! तूने विश्व-विजयी पाण्डवों के घोड़े को पकड़ कर बड़ा अपराध किया है? क्या तुम्हें हमारा पराक्रम मालूम नहीं है? महाभारत में विजय पाने वाले हमीं पांडव हैं। मैं वही अर्जुन हूं—जिसने 'छाया-वेधीवाण' से मछली को मारकर द्रौपदी से विवाह किया है। आज समस्त-भूमण्डल में मेरा ही बोल-बाला है। मेरे गाण्डीव में वह शक्ति है, जिसके एक ही वाण से संसार भस्म हो सकता है। यदि तुझे अपनी जान प्यारी है तो घोड़े को छोड़ दे और अपने घर भग जा?"

वीर ताम्रध्वज काठ के पुतले तो थे ही नहीं जो अर्जुन की बातों से डर जाते, अथवा कागज के फूलों की भाँति पानी पड़ने से गल जाते। वे निडर हो बोले—'वीरवर अर्जुन! यह मुझे अच्छी तरह मालूम है कि आप संसार में पहले नम्बर के योद्धा हैं। महाभारत के युद्ध में आप ही ने विजय पाई है और आज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अश्वमेध-यज्ञ' करने जा रहे हैं। पर आपको यह भी मालूम होना चाहिये कि यह देश भी वीरों से खाली नहीं है; इसमें आप से भी बढ़-चढ़ कर वीर मौजूद हैं। यह वीर, तथा दानी मोरध्वज का राज्य है और मैं वीर पिता का वीर पुत्र ताम्रध्वज हूं। मेरे जीतेजी आप मुझ से घोड़ा वापिस पाने की आशा छोड़ दें।'

निरे बालक की बातों से धनञ्जय के शरीर में खून का उबाल आ गया। वे सच-मुच क्रोधावेश में आ बोले— 'रे दुधमुहे बच्चे! शेर के थपाड़े खाने के लिये निर्भीक बातें करता है। यह अर्जुन का समर है, बच्चों की कहानी नहीं! मैं वह नाग हूं, जिसके काटने से कोई नहीं बच सकता क्या तू नहीं जानता, कि कर्ण, भीष्म, द्रोणाचार्य, आदि अनेकों वीरों ने मेरे ही हाथों से वीर-गति पाई है। बोल अब तू क्या चाहता है? घोड़े को छोड़ कर मेरा लोहा मानना या मरना।'

ताम्रध्वज बालक होने पर भी विजय के स्वामी थे। अतः धनुष पर बाण चढ़ाकर दो कदम आगे बढ़ कर बोले— 'ऐ स्यारों के शेर अर्जुन! अकेले आप ही क्षत्री के जाये नहीं हैं? यदि आप पौनिया नाग हैं तो मैं भी खगेश सुत हूँ। मैंने आपके सरीखे हजारों व्यालों को काट खाया है। बस अब मैंने जान लिया कि आपको वीरता का बड़ा घमण्ड है। लाचार होकर मुझे भी बाल-वीरता दिखानी ही होगी। अब आप अपनी सेना को सचेत कीजिये? देखिए मेरा शर छूटने ही वाला है?'

अब तो भट-पारथ से न रहा गया। वे युद्धनाद करते हुए बोले—'वाहरे बेटा दानामेट! मैं तो समझता था कि तू बातों से ही बाज आ जायगा, पर अब मजबूरन तेरा बध करना ही पड़ेगा?'

अर्जुन का इतना कहना था कि वीर ताम्रध्वज ने अपने इने-गिने साथियों की तरफ इशारा किया। इशारा पाते ही वे अर्जुन के असंख्य-दल पर टूट पड़े। यहाँ जिस समय अर्जुन ने अपने गाण्डीव पर टङ्कोर दिया, आकाश थर्रा गया। पृथ्वी को भूकम्प का सा धक्का लगा। सैनिकों के छक्के छूट गये।

सब तरह से हताश हो अर्जुन ने अपना काल बाण छोड़ा। उसके प्रहार ने वीर ताम्रध्वजको कुछ क्षण के लिए बेहोश कर दिया। परन्तु विधाता को तो बाल वीरता का परिचय देना था। होश में आतेही कुंवर फिर अर्जुन की सेना से हाथ धोकर भिड़ गये। इस बार वीर पारथ को सेना सहित अठारह कदम पीछे हटना पड़ा। गुस्से में आकर ज्यों ही ताम्रध्वज ने काल-बाण का प्रहार किया, वीरवर अर्जुन धड़ाम से धरती पर गिर पड़े। तब छाती पर सवार हो बालक ने कहा— 'बोलो अब क्या चाहते हो— पराजित होकर मरना या प्राणों की भीख?— देश की सारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति बच्चों पर ही निर्भर रहती है। परन्तु मूर्ख जनता बाल्य शक्ति का दुरुपयोग करती है। जो देश बच्चों को शक्तिशाली बनाता है वह अवश्य ही विजय पाता है।

घमण्डी अर्जुन! घबड़ाओ मत? दया करना बालकों का प्राकृतिक गुण है। मैं भी आपको अभय दान ही दूंगा। इतना कह वीर ताम्रध्वज ने बागडोर से 'पारथ' की मुश्कें बान्ध लीं और उन्हें अपने पिता के पास भेज दिया।

दीपक के प्रकाश में——

जीवन साहित्य (मासिक) सम्पादक—हरिभाऊ उपाध्याय, प्रकाशक—सस्ता साहित्य मण्डल, देहली. वार्षिक मू० २) एक प्रति का ।)। सस्ता साहित्य मण्डल ने गत १५ वर्षों में स्फूर्तिदायक, मननशील, सस्ता साहित्य हिन्दी संसार को भेंट कर भारी सेवा की है। अब 'जीवन साहित्य' के रूप में उसने प्रतिमास उत्तम सुपाठ्य सामग्री भेंट करने की जो योजना आरम्भ की है वह श्लाघनीय है। 'वास्तविक साहित्य वही है जो जीवन में से निकलता है' इस उद्देश्य को सामने रखकर यह पत्र निकाला गया है। अतः इसमें जीवन की कसौटी पर कसे हुए विशेष अध्ययन, चिन्तन-मनन, व अनुभव से युक्त लेख रहते हैं। प्रस्तुत अङ्क में ऐसे ही खरे, तपे लेखकों, विचारकों तथा साधकों के जीवन सम्बन्धी विचार दिए गये हैं। आज देश को इस प्रकार के साहित्य की अत्यन्त आवश्यकता थी। सस्ता साहित्य मण्डल ने इस कमी को पूरा करके हिन्दी पत्र-संसार की भारी कमी को पूरा किया है। हम पत्र की पूर्ण सफलता तथा घर-घर में प्रचार चाहते हैं।

भारतीय गोशालाएं—लेखक श्री उत्तमचन्द मोहता, प्रकाशक—श्री युवक समिति सिरसा (हिसार) पृष्ठ सं० ५२, मू० ।=) भारतीय गोशालाओं की अत्यन्त हीन तथा दर्दनाक दशा देखकर किस गोभक्त तथा गोहितैषी को रोना न आयेगा। हमारी आज की गोशालाओं में गो वंश की ऐसी दुरावस्था से पीड़ित एक हृदय ने उनके सुधार के कुछ उपाय अपने प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर प्रस्तुत पुस्तक के रूप में प्रकट किये हैं। पुस्तक यद्यपि छोटी है किन्तु इसमें जो कुछ भी लिखा गया है अनुभव की कसौटी पर कसके व गोपालन विशेषज्ञों व गोसाहित्य के विद्वानों के प्रमाणों सहित नाप तोल कर लिखा है। व्यर्थ का एक भी अक्षर नहीं लिखा गया, न शब्दाडम्बर या आलँकारिक भाषा का प्रयोग कर पुस्तक का आकार बढ़ाया है। अनुभव-सिद्ध प्रत्यक्ष-गोपालन विषयक बातें सीधे-सरल शब्दों में समझाई हैं। गोशालाओं की कमियां, उनको दूर करके उन्हें उत्तम ढङ्ग की बनाने की प्रत्येक बात को सिलसिलेवार बताया गया है। इसमें गोशाला व उनके पशुओं के पालन व प्रबन्ध सम्बन्धी कोई बात छूट नहीं गई है! प्रत्येक गोशाला ही नहीं बल्कि गोशाला के प्रत्येक सदस्य के पास इस पुस्तक की एक प्रति रहनी आवश्यक है। इसमें सुझाए ढङ्ग से कार्य किया जावे तो हमारी गोशालाएँ उत्तम हो जावें।

गीता प्रेस गोरखपुर की ५ पुस्तकें:—

१. महात्मा विदुर—महाभारत काल के महापुरुषों में विदुर का महत्वपूर्ण स्थान है। उनमें नीति-निपुणता, भगवत्प्रेम, सदाचारिता, स्पष्टवादिता आदि महान् गुण थे। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने महात्मा विदुर के जीवन व चरित्र के उपरोक्त गुणों का सरल भाषा में सुन्दर वर्णन किया है। विदुर की जीवन घटनाओं के अलावा उनकी धर्मनीति का, उनके उपदेशों का भी सँकलन किया है। पृ० ५८, मू० =)॥

२. भक्त सौरभ—आधुनिक काल के ५ भक्तों की विश्वसनीय कथाएँ उनके जीवन चरित्र, कष्टों, उपदेशों भगवत्प्रेम आदि का बहुत ही रोचक भाषा में वर्णन किया गया है। भक्तों के लिए पुस्तक पठनीय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृष्ठ ११० मू० ।)

३. दोहावली—गो०तुलसीदासजी की रचनाओं में 'दोहावली' का प्रमुख स्थान है। आपने अपनी अनुभूति का सार दोहों में व्यक्त किया है, उन्हीं का यह संग्रह है जिसमें ज्ञान, भक्ति, सदाचार, नीति, वैराग, प्रेम आदि विषयों पर प्रकाश डाला है। प्रस्तुत पुस्तक में उक्त दोहों पर सविस्तार टीका बड़ी सँयत भाषा में की है। तुलसी के ज्ञान-भण्डार को सर्व साधारण के लिए सरल बनाकर लेखक ने बड़ा उपकार किया है। पृ० २०२, मू० ॥)

४. Philospy of love—नारद के भक्ति सूत्रों की भक्त-हृदय श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार ने अँग्रेजी में सुविस्तृत व्याख्या की है तथा भगवद्भक्ति विषयक अन्य भक्तों—तुलसी, सूर, शँकराचार्य आदि की भक्तिपूर्ण रचनाओं का उल्लेख करके भगवद्-भक्ति के अलौकिक गुण व अपरिमित लाभ का वर्णन किया है। अङ्गरेजी पढ़े भक्तों के लिए यह उपयोगी है। पृ० ३४२, मू० १)

५. the divine name and its Practice—श्री पोद्दार जी ने राम नाम की महिमा तथा उसके सुमरिन-जप स्वरूप प्राप्त होने वाले अनन्त लाभों का वर्णन किया है। आपने अनेकों युक्तियों, दृष्टान्तों द्वारा सिद्ध किया है कि भगवत्प्राप्ति का सबसे सरल, सस्ता सहज उपाय नाम स्मरण ही है। पृ० ९६, मू० ≡। इन सभी पुस्तकों का कागज व छपाई उत्तम गेटअप भी आकर्षक है।

यूरोप का रावण हर हिटलर—लेखक श्री लक्ष्मीप्रसाद भारद्वाज, प्रकाशक—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ। पृ० २००, मू० १)। आज सँसार में हिटलर की बहुत चर्चा है। एक साल के अन्दर उसने अनेकों देशों की स्वतन्त्रता छीनली। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने हिटलर को रावण की तरह इस युग में अत्याचारों का प्रत्यक्ष अवतार बताकर किस प्रकार उसने नाजीवाद की स्थापना तथा प्रजातन्त्र का खात्मा कर तानाशाही चलाई, वैयक्तिक स्वतन्त्रता का गला घोंटा, यहूदी का जर्मनी में नाम न छोड़ा, नाजी सरकार की खुफिया पुलिस 'गेस्टापो' के नृशँस्ता पूर्ण कार्य तथा नाजी शासन की 'रोटी की जगह बम्ब का गोला' नीति का विस्तार से वर्णन किया है तथा हिटलर के जीवन व कार्यों पर भी प्रकाश डाला है। हिटलर के सम्बन्ध में असली हालात जानने के इच्छुक इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें।

भूगोल (महासमर अंक)—'भूगोल' हिंदी में अपने विषय की एक ही चीज है, और इसके विशेषाङ्क तो बिलकुल बे-जोड़ होते हैं, क्योंकि हिन्दी में भूगोल-शास्त्र पर इतनी तन्मयता से न तो कोई श्री पं० रामनारायण मिश्र की भाँति इतना समय, शक्ति और धन लगा सकता है और न ऐसी चीज ही हिन्दीसँसार को दे सकता है। प्रस्तुत अङ्क भूगोल' के १७ वें अङ्क का विशेषाङ्क है जिसके तीन भाग हैं—एक में गत् महायुद्ध का दैनिक घटनाओं सहित विस्तृत वर्णन है, दूसरे में उक्त युद्ध की समाप्ति से १९३६ तक की प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं का उल्लेख है तथा तीसरे भाग में यूरोप में छिड़े मौजूदा युद्ध का जुलाई तक का ब्यौरा दैनिक घटनाओं सहित दिया गया है। युद्ध-विषयक अनेकों नक्सों व आँकड़ों के अलावा आधुनिक युद्ध-विद्या जल, थल व वायु युद्धों में काम में आने वाले युद्ध के साधन व सामग्री आदि सबका पूर्णतः वर्णन किया गया है। इस अङ्क को पढ़कर मौजूदा युद्ध-विषयक अच्छा ज्ञान हो जाता है। सवासौ पृष्ठों के इस अङ्क का मूल्य १।) तथा वार्षिक मूल्य ३), पताः— भूगोल' कार्यालय, इलाहाबाद।

सुधा (विशेषाँक)—सम्पादक—श्री दुलारे लाल भार्गव व श्री सावित्री, प्रकाशक गङ्गा पुस्तक माला, लखनऊ, वार्षिक मू० ६), इस अङ्क का १।) तथा पृष्ठ सँ० २२६। 'सुधा' का यह १४ वें वर्ष का प्रवेशांक है जिसमें भाषा, साहित्य, काव्य, राजनीति, अर्थशास्त्र, इतिहास, समाज व्यवस्था, अन्वेषण, भ्रमण आदि विषयों पर अधिकारी लेखकों के उच्च-कोटि के लेखों का सँग्रह है। गद्य-काव्य, नाटक, कहानी, हास-परिहास के अलावा श्री हरिऔध, श्री मैथिली शरण गुप्त, प्रो: रामकुमार वर्मा 'निराला', 'वचनेश', पन्त, 'बच्चन' आदि हिन्दी के अग्रगणीय कवियों की रचनाएँ, तिरँगे व सादे लगभग ६ दर्जन चित्र हैं। सामग्री उच्चकोटि की तथा समयानुकूल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

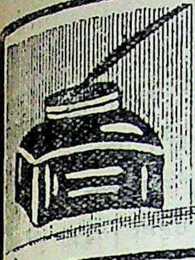

सम्पादकीय नोट

पशु-धन का नाश

बढ़िया नसल के उत्तम गाय, बैल आदि पशुओं की खान हिसार जिला व बीकानेर, जोधपुर जयपुर, आदि राज्यों में पिछले दो-तीन वर्षों में भयङ्कर अकाल पड़ने से पशु-धन भारी सँख्या में नष्ट हो गया है। अकेले हिसार जिले में सन् १९३५ में जहाँ ६ लाख से ऊपर पशु थे वहां इन अकालों में ४ लाख से ऊपर पशु मर जाने से अब डेढ़ लाख के करीब पशु रह गए हैं। राजपूताने के उपरोक्त राज्यों में तो पशुओं का इससे भी अधिक नाश हुआ है। इन स्थानों के निवासियों का असली धन तथा जीवन-निर्वाह का साधन ये पशु ही थे। उनके नष्ट होने से आज ये लोग भी नष्ट प्रायः हो गए हैं। इस वर्ष अच्छी वर्षा होने से जङ्गल में घास उगा किंतु आज पशु नहीं रहे जबकि वहां गत वर्ष घास के बिना पशु तड़फकर मरे थे। पशु धन की इस भारी कमी का समस्त प्रदेश की माली हालतपर भारी असर पड़ा है। कहां तो इन लोगों के घरों में मनों घी भरा पड़ा रहता था तथा घी बेचकर बड़े मजे से घर का खर्च चलाते थे, कहां आज इनके बच्चों तक को लस्सी के दर्शन दुर्लभ हो गए हैं। उत्तम शुद्ध घी के लिए प्रसिद्ध इस प्रदेश में अब घी बहुत ही कम और मँहगा हो गया है, वह भी मिलावटी; शुद्ध घी तो अब मिलना असम्भव हो गया है। वनस्पति घी का गाँवों में इतना प्रचार हो गया है कि बीकानेर राज्य के एक स्कूल मास्टर ने बतलाया कि गांव में किसी के घर दूध मोल लेने जाने पर वह कहता है कि दूध तो नहीं है, हां घी बहुत है। वह सब वनस्पति घी ही होता है। पशुओं की सँख्या इतनी कम हो जाने के कारण अच्छा दुधारू पशु भी मिलना कठिन हो गया है। मई मास में एक ग्रामीण मित्र ने प्रसङ्गवश कहा कि यदि इस वर्ष भी इस प्रदेश में वर्षा न हुई तो पशुओं का खोज तक न मिलेगा और यदि वर्षा हो गई तो जो पशु २०) रु० मूल्य का है वह ६०-७० रु० में मिलेगा। वर्षा हो जाने से उक्त देहाती मित्र की बात सच्ची सिद्ध हुई। दुधारू पशु बहुत मँहगे हो गये हैं। जिस गो धन के ऊपर भारत-भूमि के निवासी टिके हैं उसका तो बुरी तरह नाश हो गया है। राजपूताने से लगते पञ्जाब के नहरी इलाके से इस समय बागड़ में दुधारू पशु जा रहे हैं, किन्तु उनमें भैंसों की सँख्या ही अधिक है। इस प्रकार, इस मरुभूमि में भी अब गौओं का स्थान भैंसें ही ले रही हैं। अस्तु, पशु-धन विशेषतः गोधन की इस कमी का पूरा होना अत्यावश्यक है।

गाँधी जयन्ती —

२ अक्टूबर से गांधी जी ७२ वें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। अतः सारा देश बड़े उत्साह से आपकी जयन्ती मना रहा है। इस उम्र में, जब अधिकांश भारतीय मृत्यु की गोद में चले जाते हैं अथवा सब काम-धन्धा छोड़ जाने की तैयारी में लग जाते हैं, महात्माजी युवकों जैसे उत्साह और स्फूर्ति से काम कर रहे हैं। अभी-अभी एक बार फिर उन्होंने देश की बाग-डोर अपने हाथों में सम्भाल कर अपने वीरोचित भाषण व जोशीले वक्तव्यों द्वारा देश-वासियों को आजादी के युद्ध के लिए आवाहन किया है। इस बुढापे में भी दिन-रात काम करने की आपकी गजब की शक्ति और अनथक परिश्रम देख युवक भी दांतों तले अँगुली दबाते हैं। ऐसे लोह-पुरुष का नेतृत्व प्राप्त कर देशवासी अपने लक्ष्य—आजादी को बहुत निकट समझने लगे हैं। किन्तु महात्मा जी ने आजादी हासिल करने के लिए, सत्याग्रह आन्दोलन की तैयारी के लिये कुछ शर्तें—रचनात्मक-कार्य-क्रम रखा है जिसके पूरा हुए बिना वे स्वराज्य-प्राप्ति असम्भव समझते हैं। ये शर्तें हैं—चरखे और खादी का घर २ में प्रचार, हरिजनोद्धार विभिन्न जातियोंमें एकता व नशा निषेध। इन सब बातों का मूल स्रोत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—सत्य और अहिंसा। मन, वचन, कर्म से सत्य व अहिंसा का पालन करते हुए यदि हमने उपरोक्त शर्तों को पूरा कर दिया तो स्वराज्य हमारी मुट्ठी में आगया, हम देश का आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक सङ्गठन करने में पूरे सफल हो गये। यही है गांधी जी का कार्य-क्रम तथा देशवासियों के लिए सन्देश जिसे पूरा कराने के लिए वे बार-बार हमें प्रेरित कर रहे हैं। अतः उनकी पुण्य-जयन्ती मनाने का सर्वोत्तम ढङ्ग, सबसे अच्छा साधन है, उनके उपरोक्त कार्य-क्रम को पूरा करना। महात्माजी की प्रवृत्तियों में श्रद्धा रखने वाली—कांग्रेस, चर्खासंघ, हरिजन सेवासंघ, ग्रामोद्योग-संघ, गांधीसेवासंघ आदि सँस्थाएं 'गांधी जयन्ती सप्ताह' में इसी कार्य-क्रम को पूरा करने के लिये, महात्मा जी का सन्देश घर-घर में पहुँचाने के लिए अत्यधिक प्रयत्न कर रही हैं! आइयें, हम भी इस पवित्र-जन्मतिथि पर उनके बताये रचनात्मक कार्यों को करते हुए उनके प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करें।

देवनागरी लिपि सुधार योजना—

देवनागरी लिपि की श्रेष्ठता तथा इसके भारत की राष्ट्रीय लिपि स्वीकार किये जाने पर इसको और अधिक पूर्ण बनाने का हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने प्रयत्न किया है। देवनागरी लिपि के लेखन, मुद्रण, टाइपराइटर आदि में कम से कम समय, धन व शक्ति लगे तभी वह रोमन आदि लिपियों के मुकाबले में टिक सकती है। इसी बात को सामने रख कर सम्मेलन ने इस लिपि में जहां वैज्ञानिकता की थोड़ी बहुत कमी थी उसे पूरा करने, स्वरों व उनकी मात्राओं में सामञ्जस्य स्थापित करने, भ्रम पड़ने की सम्भावना वाले अक्षरों का रूप अधिक भ्रमरहित करने, कई रूपों वाले अक्षरों व अँकों का १-१ रूप निर्धारित करने आदि सुधारों द्वारा देवनागरी लिपि को सर्वाङ्गपूर्ण बनाने के विचार से इसमें आवश्यक संशोधन करने के लिए एक समिति बनाई थी जिसने वर्तमान देवनागरी लिपि में कुछ उपयोगी सुधार सुझाये हैं। सम्मेलन ने हिन्दी-संसार का मत जानने के लिए इन सुधारों को प्रचारित किया है। समय की मांग और अन्य लिपियों के मुद्रण टाइपराइटिंग में सुविधा आदि विशिष्ट गुणों को देखते हुए हमें भी देवनागरी लिपि में उपरोक्त सुधार स्वीकार करने चाहिएँ। यद्यपि इस लिपि के प्राचीन रूप को देखने की अभ्यस्त हमारी आंखों को यह रूप अटपटा और भद्दा सा लगेगा, किंतु उपयोगिता तथा समय की आवश्यकता को देखते हुए हमें इस रूप को अपनाना ही पड़ेगा। किसी भी वस्तु का स्थायीत्व सौंदर्य की अपेक्षा उपयोगिता पर अधिक निर्भर करता है। अस्तु, यदि हमने देवनागरी लिपि में आवश्यक सुधार न किए तो रोमन लिपि के पक्षपाती जो उसकी सरलता, व्यवहारिकता आदि गुणों पर मुग्ध हैं, रोमन लिपि ही देश भर में प्रचलित करने का प्रयत्न करेंगे, जो देश के लिए घातक सिद्ध होगी। अतः हमें समय रहते चेतना चाहिये तथा देवनागरी लिपि में आवश्यक सुधार कर इसे सर्वाङ्गपूर्ण बनाना चाहिये।

एक सदन निवासी का निधन—

सदन परिवार की एक देवी, प्रेस कर्मचारी श्री राजसिंह की धर्मपत्नि का २६ ता० को प्रातः देहान्त हो गया। आपको कई दिन से दस्त थे तथा पूरे समय से पहिले ही बच्चा पैदा हुआ जो उसी समय चल बसा। किंतु प्रसव के बाद भी दस्त व बुखार ने आपको ऐसा दबोचा कि होश न रहा। बेचारी ५ दिन तक बिलपती-तड़पती मौत से लड़ती रही। सदन निवासियों ने अपने अल्प साधनों के अनुसार दिन-रात दौड़-धूप की, परन्तु प्राण-रक्षा कर न सके, सबको शोक-सागर में छोड़ आपके प्राण-पखेरू उड़ गये। सदन में यह पहली हृदयविदारक मौत है। देवी जी लगभग २०-२१ वर्ष की पूर्ण युवा थीं। आपने अभी तक किसी भी सांसारिक सुख को दिल भर के नहीं भोगा था। न सन्तान-सुख ही पा सकीं। भावी जीवन की सभी इच्छाओं और हसरतों को सीने में दबा समय से पूर्व ही आत्मीय जनों से नाता तोड़ गई। आज समस्त सदन-परिवार अपने एक साथी को सदा के लिए खोकर खोया-खोया सा हो रहा है। कम बोलना, सङ्कोचशील स्वभाव आदि स्त्री-सुलभ गुणों से युक्त देवी जी की आत्मा ने अन्तिम दिनों में जो असह्य वेदना झेली, जब उसी समय हम उसे शांति न दे सके तो आज जब शरीर से मुक्त हो उनकी आत्मा हमारी पहुँच या कल्पना से भी दूर है तो हम किस मुंह से उसे शान्ति देने की बात कहें।

—०—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५० वर्ष की अनुभूत औषधें

सुधासिंधु

कफ, खांसी, दमा, हैजा, शूल, संग्रहणी, अतिसार, पेट दर्द आदि रोगों की बिना अनुपान की दवा की० ॥)

दद्रुगजकेसरी

हर प्रकार के दाद को बिना जलन और कष्ट के नाश करने वाली एक मात्र दवा । की० ।)
डा० ख० १ से २ तक ।=)

सुख संचारक कम्पनी, लिमिटेड, मथुरा

'दीपक प्रेस' अबोहर

सुन्दर, शुद्ध और बढ़िया छपाई के लिए इलाके भर में प्रसिद्ध है । एक बार आजमाइये ।

तानसेन के गाने

में क्या जादू था ? यह जानना चाहें तो मासिक पत्र 'सङ्गीत' मँगाइए । २०० पृष्ठ के विशेषाँक (ताल अङ्क) सहित बार्षिक मूल्य २।) है । नमूना मुफ्त मंगाकर देखिये ।

मैनेजर 'संगीत' हाथरस यू० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REGD No. L. 3700

"DEEPAK"

Deepak (*Hindi*). A monthly journal. Edited by Syt. Teg Ram and published by Sahitya Sadan, Abohar. Annual subscription Rs 2-8-0; single copy 0-4-0.

Deepak enjoys the unique position of being the first Hindi journal in the Punjab which caters to all healthy tastes and which meets the requirements of the times. Its chief aims are to push forward the rural uplift movement, to help in rebuilding the present educational system in the light of our immediate and cultural needs through the medium of Hindi. A perusal of the list of subjects and problems, which the journal aims at discussing in its issues is extremely gratifying. It includes New Education and Educational Methods, a National Language for India, Rural Uplift, Health and Food, Nature and Seience and Current Events An important feature of the journal is that it is absolutely free from communal tinge. Children's section and women's page add to its value.

In the present issue we find contributions by such eminent personalities and writers as Mahatma Gandhi and Acharya Vinoba.

Articles on Religious Education, the Constitutional Development of England and Beggary are at once thought-provoking and instructive The journal should prove very useful for school and college libraries

September 29, 1940. THE 'TRIBUNE'

* * * *

शान्त, उज्ज्वल और विनम्र सेवा का प्रतीक

'दीपक'

सहयोगी 'कर्मवीर' खण्डवा, अपने १४-९-४० के अङ्क में लिखता है:—

"साहित्य सदन अबोहर का मासिक मुखपत्र दीपक अपनी सुरुचि, साहित्यिकता और नैतिकता में, अपना गांधीयुगीन आदर्श रख कर जिस सजगता और सादगी से चलाया जाता है, उसे देख कर उसकी सेवाओं की प्रशंसा करने को जी-चाहता हैं।......हम दीपक की शान्त, उज्ज्वल और विनम्र सेवा की प्रशंसा करते हैं।"

मुद्रक एवं प्रकाशक:—श्री कुलभूषण, दीपक प्रेस, साहित्य सदन, अबोहर (पञ्जाब)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाब, संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, बिहार, बम्बई, उड़ीसा, कोटा, बड़ौदा व बीकानेर राज्यों के शिक्षाविभागों द्वारा स्कूलों के लिए स्वीकृत।

दीपक

कार्तिक १९९७] साहित्य सदन, अबोहर [नवम्बर १९४०

दीवाली अंक

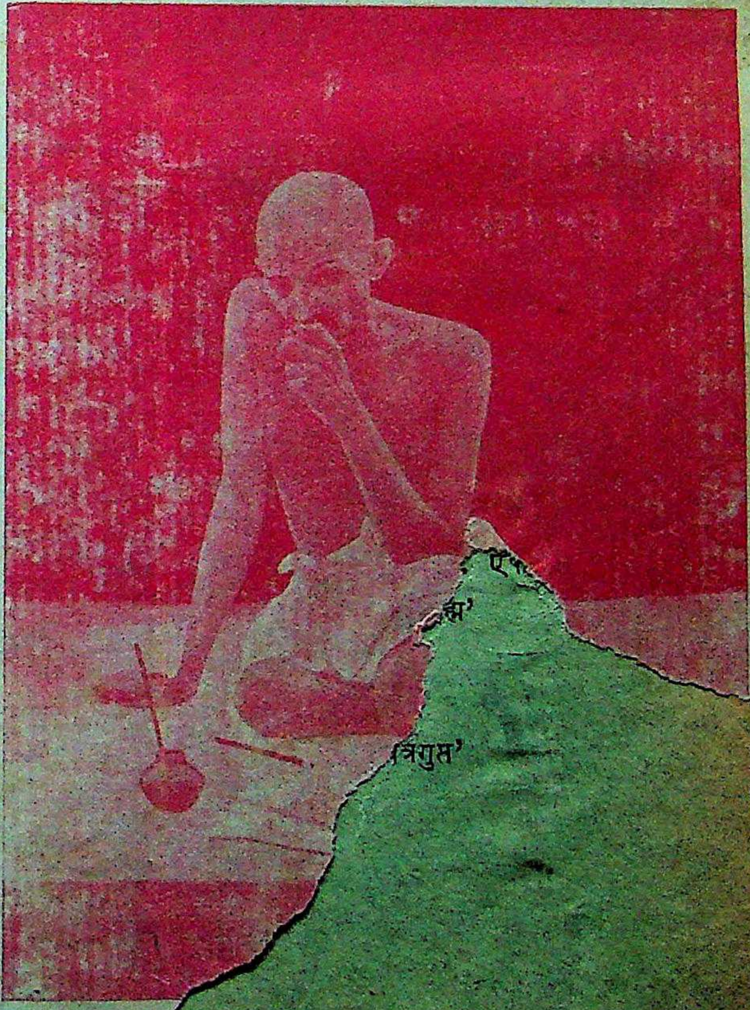

भारत स्वतन्त्रता सत्याग्रह संग्राम के सन्नायक।

सम्पादक— तेगराम

वार्षिक मूल्य २॥)
एक अङ्क का ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मूल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २।।) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४) ।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफ़ाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जिनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा ३ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेमे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख ... भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं ...

८—... का 'दीपक' न मिले ... करके बाद में

सहयोगी

"साहित्य सदन अबोहर के ...

गांधीयुगीन आदर्श रख कर जिस सज ... लिये पुस्तकें

प्रशंसा करने को जी-चाहता है।......हित्य सदन,

... क पत्र

मुद्रक एवं प्रकाशकः—श्री कुलभूषण, दीप

स्तंभ-सूची

१ जीवनन-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्यग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

{ दीपक--वर्ष ६, संख्या १, नवम्बर १९४० ई० }

	विषय	लेखक	पृष्ठ सं०
१	प्रभु कहां है ?	श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर	१
२	भाषा ज्ञान	,, किशोरलाल घनश्याम मशरूवाला	२
३	गाँधीजी का नेतृत्व	,, दादा धर्माधिकारी	५
४	प्रकृति तथा मनुष्य	,, प्रिंसिप्ल छबीलदास	८
५	दीपक (कविता)	,, रामकृष्ण' भारती' शास्त्री	९
६	बालक का हठ और उसकी सिद्धि	,, प्रो एस. पी. कनल बी. ए., (आनर्स) लण्डन	१०
७	बदला	,, स्व० गिजुभाई	१३
८	बालक की मांग	,, काशीनाथ त्रिवेदी	१४
९	तेरा यह दीपक-	,, अभयदेव सन्यासी	१६
१०	घर में बालक का स्थान क्या है ?	,, स्व० गिजु भाई	२०
११	रजनीगन्धा (कविता)	,, 'यात्री'	२५
१२	औद्योगिक क्रांति और आधुनिक सभ्यता	,, गिरिराज जी बी. ए.	२६
१३	माँ से ? (कविता)	,, 'विकल'	२८
१४	सपना था (कहानी)	,, दयाशङ्कर मिश्र	२९
१५	दीवाली	,, ब्रजभूषण मिश्र	३१
१६	क्षयरोग से बच्चों का बचाव	,, शुकदेवनारायण	३२
१७	संदेश (कहानी)	,, 'रहबर'	३७
१८	सन्त विनोबा	,, जयचन्द जैन	३९
१९	शिशुशिक्षा-	,, कृष्णजसराय बी. ए. एफ. टी. एस.	४१
२०	मीरा (कहानी)-	,, कु० कमलरानी 'ब्रज'	४३
२१	वैद्यों के कामकी बात	,, स्वामी केशवानन्द	४४
२२	मनुष्यता	,, प्रभुदयाल विद्यार्थी	४८
२३	भारतवर्ष हमारा है (कविता)	,, अनन्तराम 'चित्रगुप्त'	५०
२४	सम्पादकीय नोट—		५१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप बेकार क्यों हैं ?

यदि आप (१) अमेरिका के बेकार लोगों की भांति कलम-दवात के सहारे केवल डाक की सहायता से बिना पूंजी रुपया कमाना चाहते हैं (२) योरोप की उन फर्मों के पते जो नई-नई वस्तुओं के नमूने मुफ़ भेजती रहती हैं (३) अमेरिका की उस फ़र्म का पता जो केवल पत्र लिखने पर सँसार भर की प्रत्येक चीज का आपको पता बता देगी (४) ५०) से ५००) की पूञ्जी तक के कारखाने लगाने का पूरा विवरण जिनसे ६०, से ३००) मासिक तक कमाया जा सकता है (५) इङ्गलैण्ड व अमेरिका की ताज़ा मालूमात और घर बैठे एजेन्सी लेने के ढङ्ग और पते (६) स्वदेशी चीज़ों से विलायती वस्तुएँ बनाना, ४००) तोला मूल्य की बताई जाने वाली "भीन सीन" को अपने देश में पैदा करना (७) भारत के कच्चे माल से रुपया कमाना चाहते हों तो इस पुस्तक को अवश्य मंगाकर पढ़ें। इसके अतिरिक्त इसमें सैकड़ों ऐसी दस्तकारियाँ लिखी हैं जो आज तक सुनने में नहीं आईं और उनसे साधारण पूंजी वाला आदमी दो तीन रुपया रोज घर बैठे कमा सकता है, २५०) पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य १।) रु०, पोस्टेज ।≈)

१०० गुणा नफे का व्यापार

सँसार में सबसे लाभदायक व्यापार पेटेण्ट औषधियों का हैं। इससे सौ गुना नफ़ा कमाया जा सकता है। एक पैसा लागत की दवा के दो दो रुपये मिलते देखे हैं। अमृतधारा और सुधासिन्धु के मालिकों ने एक पेटेण्ट दवा के नुस्खे से लाखों रुपया कमाया है। विलायती फर्में एक-एक पेटेण्ट दवा से करोड़ों रुपया कमा रही हैं। यदि उनकी तरह आप भी भारतवर्ष, जर्मनी, इंगलैंड, अमेरिका की प्रसिद्ध और सर्वप्रिय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये की बिकने वाली पेटेण्ट औषधियों के नुस्खे बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीख कर साधारण पूंजी से प्रायः सभी प्रचलित पेटेण्ट औषधियों को स्वयं तैयार करके विज्ञापन द्वारा मुक़ाबिले में कम क़ीमत में बेचकर सैकड़ों रुपये मासिक स्थायी आमदनी पैदा करना चाहते हैं, तो आज ही 'पेटेण्ट औषधियाँ और भारतवर्ष' नामक पुस्तक की एक प्रति मंगाकर कारोबार शुरू करदें। सम्भव है, फिर यह पुस्तक किसी मूल्य पर न मिल सके मू० ॥), पो० ।-)

पताः—**रसायन फर्मेसी, (दी) संगरिया, (बीकानेर)**

'दीदी'

हिन्दी पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि शीघ्र ही श्रीनाथसिंह के सम्पादकत्व में "दीदी" नाम की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका स्त्रियों और लड़कियों के लिए निकलनी शुरू होगी। यह पत्रिका सर्वथा निर्दोष होगी और भारतीय स्त्रियों की आवश्यकताओं और आदर्शों के अनुकूल होगी। इसमें गन्दे विज्ञापन नहीं छापे जायँगे और इसका वार्षिक मूल्य लागतमात्र यानी सिर्फ २) होगा। कोशिश यह होगी कि इसे मामूली पढ़ी स्त्रियाँ भी पढ़ और समझ सकें और मामूली आय वाले लोग भी इसके ग्राहक बन सकें।

पत्रिका का पहला अङ्क केवल डाइरेक्टरों और समालोचकों के लिए निकाला जायगा। जो १५ नवम्बर तक ग्राहक बन जायँगे उनके पास भी यह अङ्क राय के लिए मुफ्त भेजा जायगा और पत्रिका के नियमित अङ्कों में उनकी राय का भी खयाल रक्खा जायगा। विशेष जानकारी के लिए नीचे लिखे पते पर पत्र-व्यवहार कीजिये।

प्रेमलता देवी, संचालिका 'दीदी'

७३०, कटरा इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools in Panjab, U.P., C.P., Bihar, Bombay, Orissa, Kotah, Baroda & Bikaner States.

सत्यम्
शिवम्
सुन्दरम्

वर्ष ६,
सँख्या १
पूर्ण सँख्या
६१

प्रभु कहां है ?

[श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर

भजन, पूजा, साधना और आराधना—ये सब छोड़ दो। बन्द द्वारों वाले इस मन्दिर के एकान्त तथा अन्धकारमय कोने में तुम किसकी प्रार्थना कर रहे हो ? अपनी आँखें खोलो और देखो कि प्रभु कहां है ?

वे वहाँ गए हैं, जहाँ किसान मिट्टी तोड़कर अपनी खेती कर रहा है तथा जहां सड़क बनाने वाला पत्थर कूट रहा है।

धूप हो अथवा वर्षा, वह उनके साथ है। उसके वस्त्र धूली से सने हैं। अपने वस्त्र उतार डालो और रेतीले किनारे पर उसके समान होकर आ जाओ।

मुक्ति ! अरे, मुक्ति कहाँ है ? हमारे प्रभु ने प्रसन्नता पूर्वक स्वयँ ही सृष्टि का बन्धन ले लिया है। वह हम सबके साथ सदा के लिए बन्धा हुआ है।

अपना ध्यान छोड़दो। अपने पुष्प और सुगन्धि को एक ओर छोड़ दो। जीर्ण शीर्ण तथा धूलिसने वस्त्रों का क्या डर ? अपने मस्तक पर पसीने की बूँदों के साथ तथा परिश्रम के समय मिलकर एकरस हो जाओ।

(अनु० श्री रामकृष्ण 'भारती' शास्त्री)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा ज्ञान

[श्री किशोरलाल घनश्याम मशरूवाला]

कुछ साल पहले 'नव जीवन और सत्य' मासिकमें अंगरेजी में मदिरा नाम से मैंने एक लेख लिखा था। उसमें चुभती हुई भाषा में यह बताने की कोशिश की गई थी कि अंगरेजी भाषा का नशा हमपर किस हदतक सवारहै। हम में से कइयों का ख्याल है कि जो मोहक शक्ति अंगरेजी में है वह और किसी भाषा में नहीं। भाषाओं की चर्चा करते हुए हम प्रायः कहा करते हैं, "अमुक भाषा तेजस्वी है, अमुक निस्तेज है; अमुक मधुर एवं अमुक आक्रमणशील है।" जरा गहराई से सोचने पर पता चलता है कि अँगरेजी भाषा ने हमारे दिलों पर जो आसन जमा लिया है, वह उसकी अपनी विशेषता के कारण नहीं बल्कि हमारी अपनी विशेषता की बदौलत है।

पुराने जमाने से अबतक के अपने इतिहास की छान-बीन करने से मालूम होता है कि विभिन्न भाषाओं में उन भाषाओं के बोलने वालों के समान ही प्रवीणता प्राप्त करने और स्वभाषा की अपेक्षा परभाषा के प्रति आदर व्यक्त करने की प्रथा हमारे देश में सदियों पुरानी है। जो प्रधानता आज हम अंगरेजी को दे रहे हैं, किसी जमाने में वही संस्कृत को देते थे और आज भी अक्सर स्वभाषा की अपेक्षा संस्कृत का आदर हम अधिक ही करते हैं। जिस प्रकार आज मातृभाषा में बोलने की अपेक्षा अंगरेजी में बोलना हमारे विद्वानों को अधिक प्रिय है, और अतिशय परिश्रम के कारण वे इस में सिद्धहस्त होगये हैं, जिस प्रकार स्वभाषा में की गई ह्रस्व—दीर्घ या व्याकरण की भूलें हमें उतनी लज्जित नहीं करतीं, जितनी अंगरेजी में करती हैं, अथवा उतनी हास्यास्पद नहीं बनातीं, जितनी अंगरेजी में बनाती हैं, उसी प्रकार एक जमाना था, जब संस्कृत के प्रति भी हमारी ऐसी ही दृष्टि थी। जिस प्रकार अंगरेजी सीखने के बाद मातृभाषा में बात चीत करना असभ्यता का लक्षण माना जाने लगा और इस तरह का ख्याल रखने वाले लोग बालकों को मातृभषा से पहले अँगरेजी सिखाने के विचार से घरमें भी अँगरेजी का व्यवहार करने लगे। उसी प्रकार संस्कृत ही में बोलने का व्रत लेने वाले और उपनयन के साथ या उससे भी पहले बच्चों को शब्द रूपावलि और धातुरूप कोश कण्ठाग्र कराने वाले शास्त्रियों की इस देश में कमी नहीं रही है। आज भी ऐसे कुछ लोग देश में पड़े हों, तो आश्चर्य नहीं! जिस तरह आज गांधीजी जैसों को अँगरेजी के मोह के लिये जनता को खरी खोटी कहनी पड़ती है, उसी तरह संस्कृत सम्बन्धी यथार्थ मोह के लिये अखा, एक नाथ और ज्ञानेश्वर जैसों को खरी खोटी कहनी पड़ी थी, और एकनाथ के समान स्वभाषा में ग्रन्थ रचना का आग्रह रखने वालों को संस्कृत के हिमायतियों के हाथों अपमानित और त्रस्त भी होना पड़ा था।

पुराने जमाने में संस्कृत के स्थान पर मातृभाषा की महिमा को बढानेवालों में बुद्ध और महावीर अग्रगण्य प्रतीत होते हैं। उस के बाद महाराष्ट्र के सन्तोंने मराठी भाषा को संस्कृत के समान ही आदरणीय बनाने की कोशिश की। हिन्दी में भी तुलसी, कबीर, सूर आदि ने यही किया। गुजरात में प्रेमानन्द ने गुजराती भाषा की सेवा शुरू की; लेकिन उन्हें संस्कृत के साथ गुजराती का मुकाबला नहीं करना था, वे तो प्रान्तीय भाषाओं में गुजराती कोउच्च स्थान दिलाने के हिमायती थे। संस्कृत के साथ स्वभाषा या मातृभाषा का मुकाबला गुजरात में अखा ने किया! एकनाथ के समान, बल्कि उनसे भी कुछ तीखी भाषा में उन्होने कहा है:—

'भाषा ने शुंवलगे भूर, जे रणमां जीतेते शूर;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत बोले ते शुं थयुं, काई प्राकृत मांथी नाशी गयुं,
बावन नो सघलो विस्तार, अव्वो त्रेपनमो जाणेपार,
संस्कृत प्राकृत जे बड़े भणे, जेम काष्ठ विषे रह्यो माथाकणे;
ते छोड्यां वाणां नावे अर्थ, तेम प्राकृत विना संस्कृत ने व्यर्थ;
बधा दाम व्यापारी लखे, अखा व्याज न्हाये छूटा पखे;

तथापि अन्तर्प्रान्तीय भाषा के रूप में विद्वानों के बीच संस्कृत आज भी प्रतिष्ठित है।

किन्तु परभाषा सीखने का हमारा उत्साह अब संस्कृत के सम्बन्ध में कुछकम हुआ. तो दूसरी भाषा के प्रति बढ़ा। देश में मुसलमानों का राज्य स्थापित होते ही आज जो प्रधानता हमने अङ्गरेजी को दे रखी है हमारे पूर्वजों ने वही फारसी को दी। उन दिनों मुसलमानों के साथ फारसी के ज्ञान में बराबरी से टक्कर लेने वाले फारसी के प्रकाण्ड पंडित हिन्दुओं में होगये। तब फारसी जानने वाले की हर जगह इज्जत होती थी। जिस प्रकार आज सड़क पर बैठकर जूता सीने वाले किसी मोची को अच्छी अङ्गरेजी बोलते देखकर हमें आश्चर्य होता है, और जिस तरह आज स्टेशन पर गुजराती या हिन्दी में बोलने से जो काम नहीं होता, वही अङ्गरेजी का एक शब्द कह देने से होजाता है। उस जमाने में यही हवा फारसी की थी। पढ़े फारसी बेचे तेल यह देखो कुदरत का खेल।' का मतलब भी यही है कि फारसी का जानकार तेल का मामूली धन्धा करे, उससे बढ़ कर आश्चर्य और क्या हो सकता है।

जिन लोगों की गुलामी का जुआ हम अपनी गर्दन पर रखते हैं, उनकी पोशाक, भाषा, रिवाज सभी कुछ अपनाने की आदत पुराने जमाने से हमें पड़ी हुई है। शिवाजी महाराज ने हिन्दूपद— पादशाही कायम की परन्तु राजभाषा, भूषा और लिपि तो उनके जमाने में भी अर्से तक मुसलमानों की हो रही। राजपूताने के अनेक हिन्दू राज्यों में आज भी राज्य की भाषा उर्दू है, और बहुत सम्भव है कि उर्दू से पहले फारसी रही हो। उत्तरी हिन्दुस्तान के बहुतेरे हिन्दुओं को आज भी बचपन से उर्दू लिपि सिखाई जाती है, वे बेचारे देवनागरी लिपि पढ ही नहीं सकते।

इसीलिये जब देश में अङ्गरेजी राज्य कायम हुआ तो सहज ही यहां अङ्गरेजी को प्राधान्य प्राप्त होगया। हमारे देश में उच्चारण शुद्धि और व्याकरण पर शुरू से ही बहुत परिश्रम होता रहा है। इसलिये दूसरे राष्ट्रों की जनता की अपेक्षा हमारे लिये हर किसी भाषा का शुद्ध-शुद्ध उच्चारण करना और उस भाषा पर प्रभुत्व प्राप्त करना अधिक आसान होगया है। दो चार भाषायें तो हम सहज ही हंसते-खेलते सीख लेते हैं। यही वजह है कि राष्ट्रीय शिक्षा का आन्दोलन शुरु होने पर हिन्दी को पाठ्य क्रम का एक अङ्ग बनाने में कोई कठिनाई न हुई। उन दिनों कइयों का यह ख्याल था कि हिन्दी को अनिवार्य और अङ्गरेजी को ऐच्छिक रखा जाय, लेकिन अधिकांश विद्यालयों और विद्यार्थियों ने अङ्गरेजी को यथावत कायम रक्खा और ऊपर से हिन्दी का बोझ भी उठा लिया। फलतः आज कई विद्यार्थी, गुजराती, अङ्गरेजी, हिन्दी और संस्कृत, फारसी या फ्रेंच आदि चार-चार भाषायें एक साथ सीखते दिखाई पड़ते हैं। यदि अनिवार्य कताई के स्थान पर एक और भाषा सीखने का विकल्प कर दिया जाय, तो बहुतेरे विद्यार्थी कताई छोड़ कर भाषा का नया आभूषण पहनने को तैयार हो जायेंगे।

इसे हम अपनी एक राष्ट्रीय सिद्धि कह सकते हैं; लेकिन जिस प्रकार प्रत्येक सिद्धि अन्तिम ध्येय की प्राप्ति में विघ्न रूप होती है, उसी प्रकार यह सिद्धि भी हमारे लिये बाधक हुई है। सिद्धि अपना मूल्य बढ़ाकर साध्य को गौण बना देती है। भाषा की विशेषता, उसके प्राण उस भाषा के शब्दों में नहीं, बल्कि उसका प्रयोग करने वालों के चरित्र में है। इस तथ्य को प्रायः हम भूल जाते हैं और यह मानने लगते हैं कि अमुक भाषा में दूसरी भाषाओं की अपेक्षा अधिक तेज, अधिक माधुर्य या अधिक कर्कशता आदि हैं। उसके साथ हम यह भी मानने लगते हैं कि उस भाषा को सीखने मात्र से हम में वैसे गुण आजायेंगे! अमेरिका के एक व्यायाम शास्त्री ने शौर्य प्राप्ति का एक विचित्र उपाय बताया है। उसका कहना है कि पीठ गरदन और सिर को एक विशेष रीति से रख कर चलने से आदमी की शान बढती है। सच है, चलने का ढोंग किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जासकता है; लेकिन तभीतक जबतक सामने कोई सेर का सवा सेर, कोई सच्चा शानदार आकर खड़ा नहीं होता। झूठी शान बघारने की आदत होते हुए भी सच्ची शान वाले के सामने आदमी सर उठाये और सीना ताने खड़ा नहीं रह सकता। क्योंकि अन्दर से छाती धड़कती जो रहती है।

बूम पड़े जब बाहरे, सबनिकसै संसार।
सच्चा पक्का पारखा, जबनिकसै तरवार !!'

इसी प्रकार हमारा भी यही ख्याल होगया है कि जिस भाषा में हम बोलते हैं, उस भाषा के बोलने वालों के गुण हम में आजाते हैं। दूसरे लोगों की भाषा और पोशाक को अपनाने से यदि उनके गुण भी हम में आसकते, तो शेर की खाल ओढ़कर गधा शेर क्यों न बन जाता। गुण या ज्ञान चित्त की विशेषता है। वाणी या वस्त्र की नहीं, वाणी और वेश उसका किंचित् दर्शन करा सकते हैं, उसे उत्पन्न नहीं कर सकते।

मातृभाषा का निरादर हमारा एक बहुत पुराना रोग मालूम होता है। अपनी निजकी भाषा को हमने सदैव पंगु ही समझा है और स्वभाषा का यह अनादर हममें आत्मविश्वास की कमी के कारण ही उत्पन्न हुआ है। जिस प्रकार दासता की स्वीकृति में स्वाभिमान और आत्मविश्वास की कमी ही मुख्य रहती है, उसी प्रकार पर भाषा के मोह की जड़ में भी इन दोनों का अभाव पाया जाता है।

मातृभाषा का आदर बढ़ाने का उपाय यह नहीं है कि हम दूसरी भाषाओं को सीखने सिखाने का विरोध करें। यह तो चाचा का अपमान कर के पिता का सम्मान बढ़ाने के जैसी अटपटी बात हो जायेगी। लेकिन साथ ही हमें यह भी भूलना होगा कि परभाषा के ज्ञान में कोई खास ज्ञान, मान, महत्त्व या विद्वता रही हुई है। मनुष्य के लिये बिना प्रयोजन के एक भी अन्य भाषा सीखना आवश्यक नहीं है। प्रयोजन वश उसे पुनःपुनः नई-नई भाषायें सीखनी पड़ सकती हैं। यदि किसी कार्य या प्रयोजन की निश्चित सम्भावना हो तो उसकी सिद्धि के लिये आवश्यक होने पर कुछ अन्य भाषाओं को सीखने का प्रबन्ध किया जा सकता है। लेकिन उसके साथ यह धारना न रहनी चाहिये कि किसी अन्य भाषा को सीख लेने मात्र से सीखने वाला विशेष आदर या सम्मान का पात्र बन जाता है। न किसी के दिल में यह भ्रम रहना चाहिये कि जिन विद्यार्थियों को दूसरी कोई भाषा नहीं आती, उनके विकास में कोई कमी रह जाती है।

दूसरी भाषा को उस भाषा के बोलने वालों के समान ही शुद्ध २ बोलने और लिखने का मिथ्याभिमान हमारे इस देश में ही बहुत पुष्ट हुआ है और यह सब हमारी गुलामी का नतीजा है। जापान वाले लाखों का व्यापार अपनी टूटी फूटी अङ्गरेजी के बल कर लेते हैं, और अपने उस अभाव या अज्ञान के लिये वे कभी शरमिन्दा नहीं होते। श्री० पोलरिशार जैसे विद्वान अशुद्ध अङ्गरेजी बोलते हुए नहीं लजाते क्योंकि अङ्गरेजी उनकी मातृ भाषा नहीं है सिर्फ काम चलाने भर को वे उसे जानते हैं। लेकिन हमारे दफ़्तरों में अङ्गरेजी के प्रभुत्व की बड़ी महिमा है। बरसों बम्बई में रहकर गुजरात वाले अशुद्ध मराठी बोले या महाराष्ट्र वाले अशुद्ध गुजराती बोले, तो उसमें न बोलने वाले को बुरा मालूम होता है, न सुनने वाले को; लेकिन अङ्गरेजी की एक मामूली सी भूल हो जाने पर हम मारे शरम के जमीन में गड़ जाते हैं। सोचते हैं, धरती फट जाय और हम उस में समा जायें!

भाषा के नाते गुजराती या हिन्दी आदि का संस्कृत से जो सम्बन्ध है, उस के कारण गुजराती आदि का समुचित ज्ञान प्राप्त करने के लिये संस्कृत का ज्ञान आवश्यक हो सकता है, इसे मैं समझ सकता हूँ। लेकिन जब कोई यह कहता है कि संस्कृत न जाननेवाला पूर्ण सुशिक्षित नहीं है, अथवा वह सम्पूर्ण विकास नहीं कर सकता है, तो उसका यह कथन मुझे तो विचित्र सा मालूम होता है। तब मैं सोचता हूँ कि हम नहीं जानते कि ज्ञान पदों का नहीं, पदार्थों का विषय है। पदार्थ को जानने वाला ही ज्ञानी बनता है। अगर मनुष्य यह नहीं जानता कि किसी भाषा विशेष में पदार्थ विशेष का क्या नाम है, तो वह उसे नया नाम दे सकेगा, लेकिन जो केवल पद को जानता है, वह पदार्थ को पहचान नहीं पायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाँधीजी का नेतृत्व

[दादा धर्माधिकारी]

बम्बई में काँग्रेस की बागडौर फिर गाँधी जी को सौंप दी गई है। कई लोगों को यह बात कुछ अटपटी और बेतुकी सी लगती है। जिन लोगों का यह विचार है कि गाँधीजी की अहिंसक प्रतिकार नीति मनुष्य स्वभाव के और अनुभव के खिलाफ है वे अब उस नीति से ऊब गये हैं। इसलिए जब वर्धा के जून वाले प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस की कार्यसमिति ने और बाद में महासमिति ने भी गांधी नीति का त्याग कर दिया तब इन संशयात्माओं को थोड़ी बहुत तसल्ली भी हुई। परन्तु चन्द दिनों के बाद ही गांधी जी फिर नेतृत्व के सिंहासन पर बैठा दिये गये हैं। यह देखकर वे कुछ असमञ्जस में पड़ गये हैं। अतः इस घटना का थोड़ा सा विश्लेषण करना आवश्यक हो गया है।

अहिंसा के सिद्धान्त के बारे में या स्वराज्य के साधन के रूप में उसकी उपयुक्तता के बारे में, कार्यसमिति में और गांधी जी में कोई मतभेद नहीं था। कम से कम कार्यसमिति ऐसा कहती थी। मतभेद केवल इस विषय में था कि यदि काँग्रेस को तुरन्त राजशासन के अधिकार प्राप्त हो जायँ तो राज्य-सञ्चालन में वह अहिंसक नीति से कहां तक काम ले सकेगी। परन्तु जब भारत मन्त्री और बड़े लाट ने काँग्रेस की माँग ठुकरा दी तो वह प्रश्न ही खतम हो गया और उसके साथ रहा-सहा मत-भेद भी हवा हो गया।

परन्तु गांधी जी की नीति की उपयुक्तता और श्रेष्ठता के विषय में गम्भीर विचार करना आवश्यक है।

जो लोग अपने आप को इतिहासवेत्ता कहलाते हैं उनकी राय में गाँधी जी एक व्यवहार विमुख शुष्क वेदांती हैं जो अपनी ही कल्पना के सँसार में विहार किया करते हैं और मनुष्यों की धरती पर कभी पदार्पण ही नहीं करते।

परन्तु दरअसल बात ऐसी नहीं है। गांधी जी एक ध्येयनिष्ठ और आदर्शपरायण व्यक्ति अवश्य हैं। जैसा कि किसी भी महान् राष्ट्र के नेता को होना भी चाहिए। परन्तु वे कोरे सिद्धान्तवादी नहीं हैं। उनके नेतृत्व में नीतिनिपुणता और तत्वनिष्ठा का अद्भुत सामञ्जस्य पाया जाता है। जीवन के सनातन सिद्धान्तों को अपनी चारों ओर की परिस्थिति पर लागू करने की उनकी शक्ति और सिफत अपूर्व है।

यह स्वाधीनता का ही प्रश्न लीजिये। केवल इतिहासवेत्ता प्रायः पोथी पण्डित और गतानुगतिक होते हैं। वे कहते हैं कि आज तक कोई भी राष्ट्र कभी सशस्त्र युद्ध के बिना स्वतन्त्र नहीं हुआ है। इतिहास में इसकी एक भी मिसाल नहीं है। फिर भारत ही गांधी जी की अहिंसक नीति के प्रयोग से कैसे स्वतन्त्र हो सकता है?

जरा गहराई से सोचने पर विदित होगा कि इस दलील का नतीजा यह है कि भारत कभी आजाद हो ही नहीं सकता इतिहासज्ञों का यह तर्क यदि एक अनुमान के रूप में पेश किया जाय तो इस प्रकार उपस्थित किया जा सकता है।

बिना हथियारों के स्वाधीन होना असम्भव है।

हमारे पास हथियार नहीं हैं।

इसलिए हमारा स्वाधीन होना असम्भव है।

बस, मामला खतम है। इससे गहरा निराशावाद और क्या हो सकता है; शस्त्रास्त्रों की बातें ऊपर-ऊपर से बड़ी जोशीली और बहादुरी की प्रतीत होती है परन्तु उनकी तह में प्रगाढ़ निराशावाद है, कमजोरी है और लकीर की गुलामी है।

उस दिन महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध सन्त श्री ज्ञानेश्वर का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरित्र एक सिनेमा में देखा। ज्ञानेश्वर सन्यासी के पुत्र थे। इसलिये वे जाति बहिष्कृत थे। उन्होंने पण्डितों से प्रार्थना की कि वे उन्हें शुद्ध करलें। पण्डितों ने सारी पोथियाँ उलट-पुलट कर देखीं परन्तु उन्हें कोई आधार न मिला। उन्होंने ज्ञानदेव से कहा - 'भाई, हम विवश हैं। पहले कभी किसी सन्यासी के पुत्र ही नहीं हुआ था। इसलिए शास्त्र में इसका उल्लेख नहीं है। तुम्हें बहिष्कृत ही रहना होगा।'

राजनीति-शास्त्री और इतिहास के पण्डित भी हिन्दुस्तान के साथ कुछ ऐसा ही गम्भीर मज़ाक करते हैं। वे कहते हैं कि पहले कभी इतना विशाल देश और इतनी विराट जनसँख्या मुट्ठी भर लोगों की गुलाम हुई ही नहीं थी। इसलिए हमें इतिहास से कोई पथप्रदर्शन नहीं मिलता। गांधीजी कहते हैं कि इतिहास में कोई मिसाल नहीं है इसका इतना ही अर्थ है कि हमारे लिए पुरुषार्थ का अधिक उज्ज्वल क्षेत्र है। हमें नया रास्ता बनाना होगा। अपने ही पराक्रम से नई पगडण्डियाँ और नई लीकें बनानी होंगी। यह तो हमारे लिए आनन्द और गौरव का विषय है।' कहां तो उन पोथी-पण्डितों का वह निष्ठुर निराशावाद और कहां आविष्कारक गांधी की यह आशापरायणता!

जो लोग शस्त्रवाद के कायल हैं वे वीरता और हिंसा को मिला देते हैं। शूरता और क्रूरता के भेद का उन्हें होश ही नहीं है। गांधीजी की विशेषता इसी में है कि उन्होंने सारे सँसार को यह समझाने की चेष्टा की कि हिंसा से वीरता का कोई रिश्ता नहीं है। यह कोई जरूरी बात नहीं है कि जहां शस्त्र हो वहीं वीरता हो सकती है। वीर-वृत्ति का अधिष्ठान शस्त्र या अन्य कोई बाहरी उपकरण नहीं है। वीर वृत्ति मनुष्य के हृदय का गुण है। इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि जो निहत्थे हैं वे निर्वीर्य और असहाय ही हों। निःशस्त्र लोग भी बहादुर हो सकते हैं और शस्त्रधारियों की अपेक्षा अधिक उज्ज्वल पराक्रम कर सकते हैं। गांधी जी की यह अपूर्व सिखावन भारतवासियों के लिए आशा का सन्देश और पुरुषार्थ का दर्शन है।

व्यावहारिक नीति की दृष्टि से भी गांधी जी की अहिंसक प्रतिकार की नीति ही समयोचित और कार्यक्षम है। कारण:—

(१) भारत की गुलामी का कारण यह नहीं है कि हम निहत्थे या सामरिक शिक्षा से वञ्चित हैं। जब अँग्रेज इस देश में आये उस वक्त हमारे पास हथियार थे। राजपूत मराठे, सिक्ख गुरखे आदि फौजी कौमें अच्छी तरह हथियार चलाना जानती थीं। आमजनता को भी हथियार रखने या बरतने की मुमानियत नहीं थी। बल्कि ऐसा भी कहा जा सकता है कि हमारे हथियारों के ही भरोसे अँग्रेजी राज्य की नींव डाली गई। अगर हमारी फौजी कौमें दिलोजान से अँग्रेजों की मदद न करतीं तो उनकी सत्ता यहां कायम न हुई होती। आज भी हमारे ही भरोसे अँग्रेजी राज्य कायम है। मतलब यह कि यह कथन गलत है कि हम निहत्थे हैं या फौजी तालीम से वञ्चित हैं इसलिए गुलाम हैं।

(२) आज भी अगर हमें हथियार दे दिये जायँ तो इसमें सन्देह है कि उनका उपयोग हम अँग्रेजों के खिलाफ कहांतक करेंगे। हममें आपस में इतना परस्पर भय और अविश्वास है कि हम उन हथियारों का उपयोग एक दूसरे के खिलाफ ही करेंगे और सरकार यह तमाशा देखकर मन ही मन मुस्करायेगी। सारांश, सशस्त्र क्रांति के लिए भी साम्प्रदायिक और जातीय एकता अनिवार्य है। जब वह एकता सफल हो जाएगी तब हमें अँग्रेजों के खिलाफ शस्त्र प्रयोग करने की आवश्यकता ही नहीं होगी इसलिए स्वाधीनता के लिए हमें जरूरत है एकता की, ना कि हथियारों की।

(३) अँग्रेजों से सशस्त्र लड़ाई हम तभी कर सकते हैं जब कि हमारे खिलाफ और सरकार की तरफ से लड़ने के लिए भारतीयों का कोई दल, समुदाय या सम्प्रदाय तैयार न हो। यदि अधिकांश भारतवासी यह निश्चय करलें कि वे अपने देशभाइयों के खिलाफ सरकार की सहायता नहीं करेंगे तभी यह हो सकता है। लेकिन इस शर्त के पूरे होने का भी यही मतलब है कि हम एक हो जायँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और एक दिल से काम करें। मतलब यह कि बिना एकता के सशस्त्र प्रतिकार असम्भव है और एकता के होते हुए वह अनावश्यक है। इस लिए अहिंसा ही श्रेयस्कर नीति है।

(४) सरकार से सशस्त्र लड़ाई करने के लिए हमें फौजी शक्ति और साज सरञ्जाम में कम से कम उसकी बराबरी तो करनी चाहिये। उतने अद्यतन साधन और हथियार जुटाने चाहिएँ और नये-नये आविष्कार भी करने चाहियें और यह सब अँग्रेजों के यहां होते हुए करना चाहिए। क्या यह सरकार इतनी सारी तैयारियां चुपचाप करने देगी? और अगर करने देगी तो बिना युद्ध के ही हमें राज्य क्यों नहीं सौंप देगी? सारांश, जबतक अँङ्गरेज सरकार का राज्य है तब तक हम फौजी ताकत या साज-सामान में उसकी बराबरी नहीं कर सकते। जितनी फौजी तालीम वह लेने देगी और जितनी तैयारियां वह करने देगी उतनी से ही सन्तोष मानना होगा। साराँश यह कि हम शस्त्रास्त्रों के प्रयोग में भी तभी प्रवीण हो सकेंगे जब कि हम स्वाधीन होंगे। अब यह सोचने की बात है कि किस की तजवीज अव्यवहार्य है? गांधी जी की या शस्त्रावादियों की?

(५) यूरोप में हाल ही में जो घटनाएँ घटी हैं वे इस बात का ज्वलन्त और असन्दिग्ध प्रमाण उपस्थित करती हैं कि राष्ट्रीय आत्मरक्षा के लिए सैनिक सङ्गठन काफी नहीं है। जब कि वर्षों तक सैनिक सङ्गठन और शिक्षा देने के बाद भी वर्तमान यूरोपीय राष्ट्र आत्मरक्षा करने में असफल रहे स्वयं इङ्गलैण्ड को भी अन्य राष्ट्रों की सहायता की आवश्यकता है तब हिंदुस्तान जैसा एक अननुभवी देश इस ढङ्ग से अपनी आत्मरक्षा करने में कैसे सफल हो सकता है? यह आशा भी कैसे की जाती है कि बात की बात में यह देश सारे अद्यतन साधनों से और शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित ही नहीं बल्कि उनके प्रयोग में प्रवत्त हो जायगा? यदि व्यवहारिक दृष्टि से विचार किया जाय तो मानना होगा कि आज की परिस्थिति में हिंदुस्तान हिंसक साधनों से बाह्य आक्रमण का प्रतिकार नहीं कर सकता। सैद्धान्तिक वादविवाद को छोड़दें तो भी व्यवहारिक तल पर यह बात निर्विवाद है कि अपनी वर्तमान स्थिति में भारत-सैनिक सामर्थ्य से सँसार में अपनी प्रतिष्ठा कायम नहीं कर सकते और न सशस्त्र प्रतिकार से अपनी आत्मरक्षा ही कर सकते हैं।

(६) बाहरी हमले के बचाव के लिए तो सशस्त्र सङ्गठन का कोई उपयोग नहीं है। अब भीतरी हुल्लड़ या दङ्गा-फसाद का प्रश्न शेष रह जाता है। इस विषय में भी यही निवेदन है कि भारत की आम जनता निःशस्त्र और हिंसक प्रतिकार में अनिशस्त्र है। आज एकाएक उसमें वह सामर्थ्य कैसे आ सकती है? इस लए उसे भी अपनी इज्जत और माल मिलकीयत के लिए अपनी जान देने की नीति ही बरतनी होगी। इस क्षेत्र में भी अहिंसक प्रतिकार की नीति ही सर्वसुलभ और कार्यक्षम हो सकती है।

बुद्धिमानी, व्यवहारज्ञता और पुरुषार्थ ही इसी में है कि हम अपनी प्राप्त परिस्थिति में प्राप्त साधनों से भारत की जनता में अधिक से अधिक आशा आत्मविश्वास और पराक्रम की सामर्थ्य उत्पन्न करें। स्वराज्य की प्राप्ति बाह्य आक्रमण का प्रतिकार और अंतर्गत उत्पात का प्रतिकार इन तीनों क्षेत्रों में गाधी जी की अहिंसक नीति ही व्यवहार्य और कार्यक्षम हो सकती है।

हिंदुस्तान की निहत्थी जनता में अहिंसक वीरता की शक्ति जागृत करके गांधीजी उसे उसके अपने और हिंसाज्वर पीड़ित सँसार के उद्धार का मार्ग बता रहे हैं। इसी में उनके नेतृत्व की अपूर्व विशेषता और कुशलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति तथा मनुष्य

[श्री छबीलदास]

विकासवादी तथा प्रारम्भी विद्या विशेषज्ञ हमें बतलाते हैं कि मनुष्य ने जन्म लेते ही अपने आप को प्रकृति की गोद में पाया। मनुष्य ने आँख खोलते ही अपने चारों ओर घने जंगल, ऊँचे २ पहाड़, लम्बी २ तथा गहरी नदियां, आन्धी तथा तूफान, मेघ तथा वर्षा, ओले तथा कुहर और सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक तथा भयानक वन जन्तुओं को पाया। मेघों के गर्जन, बिजली की चकाचौन्ध नदियों की बाढ़, मूसलाधार वर्षा, इन्द्र धनुष तथा भूकम्प आदि घटनाएं मनुष्य को चकित और भयभीत कर देती थीं, उसी भय तथा आश्चर्य ने उसे प्रकृति की पूजा करना सिखलाया। हिन्दु, यूनानी, रोमन मिश्री तथा नारविजयन का जन्म उसी काल में हुआ। मानव-दिमाग ने हजारों देवी—देवताओं, राक्षसों, यज्ञों आदि को जन्म दिया।

धीरे २ मनुष्य ने होश संभालना शुरू किया। उसे प्रकृति के कई रहस्यों का पता लगता गया। अब उसने प्रकृति की पूजा करना छोड़ कर प्राकृत पदार्थों से काम लेना तथा सेवा कराना शुरू कर दिया। ईसा की बीसवीं शताब्दि तक तो मनुष्य ने प्रकृति को यहां तक वश में कर लिया कि प्रकृति मनुष्य का दास कहलाने लगी वायु की तरङ्गों तथा अन्तरिक्ष को वश में करने से हजारों मील की दूरी पर बैठे हुए हम व्याख्यान तथा गाने रेडियो द्वारा सुन सकते हैं। बोलने तथा चलने फिरने वाले चित्र बना कर तो विज्ञान ने मनुष्य को लगभग अमर सा बना दिया है। सिनेमा तथा बोलते चित्रपट द्वारा अब यह भी सम्भव हो गया है कि आज से दस बीस हजार अथवा लाखों वर्ष पीछे भी लोग गान्धी, हिटलर, चर्चिल, स्टालिन अथवा आइनस्टान के मुख से उन्हीं की भाषा में उन के भाषण सुन सकें तथा उन के वास्तविक वेशभूषा आदि को देख सकें।

विज्ञान की सहायता से मनुष्य ने सब प्रकार की व्याधियों तथा बीमारयों के कीटाणुओं का पता भी लगा लिया है, और उन की अद्भुत चिकित्साएं भी ढूंढ कर उनको समूल नष्ट कर दिया है। विज्ञान ने मानवजीवन को सुखी, व्याधिहीन, स्वस्थ तथा चिरायु बनाने में काफी सहायता की है।

मनुष्य ने कृषि तथा उद्योगधन्धों में विज्ञान के आविष्कारों से काम लेकर पैदावार में सैकड़ों गुणा वृद्धि कर ली है। जहां पहले अनाज का एक दाना पैदा न होता था वहां विज्ञान अब हजार दाने पैदा करता है। मानवी आवश्यकताओं तथा सभ्यता का सामान इस प्रचुर मात्रा में तैय्यार होता है कि स्वर्ग के देवतागण भी मनुष्य के भाग्य पर ईर्षा करते होंगे। सिन्धप्रान्त के मरुस्थल को इंजीनीयरों ने हमारे देखते २ नन्दन कानन बना डाला। जहां बारहों महीने धूल उड़ा करती थी और अन्धड़ चला करते थे, वहां अब प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये की गेहूं, कपास तथा अन्य फसलें पैदा होती हैं। आज यदि राजपूताना, बीकानेर, तथा हिसार आदि अभागे प्रदेश अनावृष्टि के कारण दुर्भिक्ष के शिकार होते हैं तो इस में मानव आलस्य तथा अनुद्योग का दोष है, न कि प्रकृत का।

अब प्रश्न उठता है कि यदि रावण की तरह मनुष्य ने इन्द्र, वरुण, कुबेर, अग्नि अर्थात् (बिजली, जल आदि) आदि पर पूर्णविजय प्राप्त करली है तो क्या कारण है कि अभी तक स्वर्ग पृथ्वी पर नहीं उतरा? मानव जीवन आज भी क्यों इतना दुःखी, अशान्त, क्लान्त तथा नीरस है? चारों ओर युद्ध, कलह, हत्याकांड तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारकाट का बाज़ार क्यों गरम है ? इसका उत्तर यह है कि मनुष्य ने जहां प्रकृति की असीम शक्तियों को वश में कर लिया है वहां उसने अपने आप को काबू रखने में नितान्त शक्तिहीनता का परिचय दिया है। यदि यह बात न होती तो हम धन तथा सामान की इतनी प्रचुरता और बाहुल्य के होते हुए इतनी दयनीय दरिद्रता और कंगाली न देखते। एक ओर करोड़ों व्यक्ति अनाज के दाने २ को तरस रहे हों और दूसरी तरफ करोड़ों मन अनाज को निर्दयता से ईंधन की तरह जलाया डाला जारहा हो, ऐसा पागलपन संसार के इतिहास में देखने को कभी नहीं मिला। मानव स्वभाव की इस स्वार्थ परायणता, नीचता और अदूरदर्शिता को काबू में रखने का एक ही उपाय है कि धनोत्पादन के जितने भी साधन हैं अर्थात् सब, कल कारखानों मशीनरी, जमीन बैंकों, खानों, जङ्गलों, नदियों आदिपर व्यक्ति विशेष का नहीं वरन् मानव समाज का सांझा अधिकार हो। इने गिने व्यक्तियों के स्वार्थ के कारण हमारी स्वर्गमयी भूमि नरक बन रही है। संसार से अनाचार, अत्याचार, युद्ध हत्याकाण्ड, वैमनस्य, ईर्षा, द्वेष आदि के निर्मूल करने का केवलमात्र उपाय यही है कि धन परसे व्यक्तिगत अधिकार शीघ्रातिशीघ्र उठ जाए। यदि यह न किया गया तो प्रकृतिका आशीर्वाद हमारे लिए अभिशाप बनता रहेगा। वायुयानों से घातक बम तथा विषैली गैसें बरसेंगी। कारखानें गोली बारूद तथा अन्य नाशकारी सामग्री तैय्यार करते रहेंगे। मनुष्य अपने भाइयों के रक्त के प्यासे बने रहेंगे। पृथ्वी पर स्वर्ग एक सुख स्वप्न मात्र रह जाएगा

दीपक !

[रामकृष्ण 'भारती' शास्त्री]

दीपक तू हरदम जलता रह
जल-जल, आलोकित कर जग को दूर अन्धेरे को करता रह।
दीपक तू.........॥१॥

जलना ही है काम तुम्हारा,
सहना ही है काम तुम्हारा,
उज्ज्वल ही है नाम तुम्हारा,
तुमपर शत-शत शलभ निछावर, उनकी स्मृति में तू जलता रह।
दीपक तू.........॥२॥

वायु भले तुझको कलपाए,
झँझा का झोंका बल पाए,
वर्षा भी निज ठाठ दिखाए,
फिर भी मत कर्तव्य भुलाना, निज आदर्श-मार्ग चलता रह।
दीपक तू.........॥३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बालक का हठ और उसकी सिद्धि"

[प्रो० एस. पी. कनल बी. ए. (आनर्स) लण्डन, रामसुखदास कालिज, फीरोजपुर]

प्रत्येक माता पिता को अनुभव है कि उनका बालक आयु के बढ़ने के साथ-साथ छोटी २ बातों पर हठ करने लग जाता है। हठ भी ऐसी बातों पर करता है कि जो स्पष्ट रूप से गलत हैं और जो कई अवस्थाओं में उसके लिये हानिकारक भी हैं। बालक की ऐसी अवस्था बहुत कष्टदायक होती है। उसे कितना ही समझाने का यत्न किया जाय, वह सब निष्फल जाता है। उसे मार कर यदि उसका हठ तोड़ा जाय तो उस समय के लिये तो शायद काम चल जावे परन्तु मार से बालक का हठ बढ़ जाता है। इसलिये बालक के हठ की घटना एक अति दुखदाई घटना है जिसमें क्या बालक और बालक के माता पिता और क्या दूसरे लोग सब मुफ्त में झगड़ा खरीद लेते हैं और व्यर्थ ही दुख का अनुभव करते हैं।

अस्तु स्वभाविक प्रश्न यह उठता है कि यह हठ की घटना क्योंकर उत्पन्न होती है? माता पिता बालक को अत्यधिक प्यार करते हैं, उसके लिये प्रत्येक प्रकार का त्याग करते हैं, फिर बालक अपने माता पिता के साथ क्यों हठ करता है? क्या बालक की प्रकृति ही इस प्रकार की बनी हुई है कि उसके लिये हठ करना स्वाभाविक है? नहीं। हठ बालक की मानसिक अस्वस्थ अवस्था का चिन्ह है और यह अस्वस्थ अवस्था प्राकृतिक नहीं होती और न ही हो सकती है। परन्तु जब बालक की प्राकृतिक शक्ति का ठीक विकास न हो तो मन की अवस्था अस्वस्थ हो जाता है, और जितनी अधिक प्राकृतिक शक्तियों की ठीक उन्नति न हो उतना ही मन रोगी होता जाता है।

बालक की कौनसी प्राकृतिक शक्ति है कि जिसके ठीक विकास न होने से बालक में हठ की प्रवृति पैदा हो जाती है? प्रत्येक बालक में एक प्राकृतिक शक्ति यह होती है कि वह अपने वातावरण पर प्रभुत्व ज़माना चाहता है और अपने सामाजिक जनों में बढ़िया समझा जाना चाहता है। इस प्राकृतिक शक्ति को अङ्ग्रेजी भाषा में Self-assertive instinct कहते हैं। इस प्राकृतिक शक्ति की तृप्ति अनेक अवसरों और भिन्न २ रूपों में देखी जा सकती है। बालक जब नये कपड़े पाता है तो उसका व्यवहार देखिऐ। तब उसको घर में रखना कठिन है, वह घर से बाहर जाने के लिये व्याकुल होता है और मौका पाते ही वह कहां जाता है? अपने मित्रों के पास। उन्हें अपना नया कुड़ता, अपना नया कोट, अपना नया जूता दिखाऐ बिना उसकी तृप्ति नहीं होती। बालक को नये कपड़े पहनने की आधी से अधिक खुशी इस बात को लेकर है (चाहे वह इस बात को शांत रूप से जानता हो या नहीं) कि इसके यह कपड़े मित्रों की दृष्टि में उसे बढ़िया दिखते हैं। इसी प्रकार, यदि कोई धनवान सम्बन्धी बालक को कुछ पैसे दे जाय तो फिर तमाशा देखिऐ। माता बालक को कहती है कि वह पैसे उसे दे दो, परन्तु वह पैसों से जुदा होने के लिये तैयार नहीं होता। वह कहती है कि अच्छा उन को जेब में रखो और किसीको न दिखाना। परन्तु बालक यह बात कहाँ मानने को तैयार है। ज्योंही उसे अवसर मिलता है वह घर से बाहर अपने मित्रों से जा मिलता है। उन्हें वह पैसे दिखाता है। यहां तक कि कई बार ऐसा करते उन्हें गुम भी कर बैठता है। इसी प्रकार जब बालक कोई चीज अच्छी प्रकार से सीख जाता है तो माता की आफत आ जाती है। वह बालक माता को बार २ तंग करता है कि देखो मैं कैसा अच्छा नाचता हूं, मैं कैसा अच्छा पढता हूं, मैं कैसा अच्छा लिखता हूं, मैं कैसा अच्छा गाता हूं, इत्यादि २। इसी प्रकार बालक लड़का अपने पिता की तरह कपड़े पहनना चाहता है। उनकी तरह सोटी लेकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ना चाहता है और उनकी अनुपस्थिति में इनका स्थान ...में विशेष सुख का अनुभव करता है और उसी ...ार नौकरों पर हुक्म चलाने में सुख अनुभव करता है। ...लक लड़की अपनी माता की नाई कपड़े पहनना चाहती ...। यही कारण है कि रोकने पर भी छोटी २ लड़कियां ...ी लेती हैं और साड़ी पहनने में सुख अनुभव करती हैं ...र बुरके की कैद को हर्ष के साथ चाहती हैं। इसी ...ह वह अपने दैनिक खेल में माता बनती हैं खाना पकाती ...। वह बच्चों को खाना खिलाती हैं, उनको सो जाने का ... देती हैं। उनकी शादी करती हैं। ऐसी सब ...ाओं और गलतियों में बालक की Self assertive ...तिक शक्ति की तृप्ति होती है। बालक की इस ...तिक शक्ति का उद्देश्य यह है कि वह सन्मान की ...ु समझी और स्वीकृत की जाय। इस प्राकृतिक शक्ति ...तृप्ति तब ही होती है जब व्यक्ति कोई काम अच्छी ...ह सीख जाय। अर्थात् जब कोई व्यक्ति अच्छी तरह से ...किल चलाना, मोटर चलाना या कोई बड़ी कला सीख ...ा है तो जिस सुख का उसे अनुभव होता है वह इस ...तिक शक्ति की तृप्ति के कारण है। इसी तरह जब ...क का सामाजिक जन आदर और सन्मान करते हैं तो ...से जो खुशी होती है वह इस प्राकृतिक शक्ति की तृप्ति ...कारण है।

माता पिता बालक की इस प्रबल प्राकृतिक शक्ति को ...तों में नहीं लाते। वे बालक के व्यक्तित्व को स्वीकार ...ीं करते और न ही उसका आदर और सन्मान करते हैं। ...क की असहाय अवस्था का फायदा उठा कर वे ...े एक अजीवित वस्तु की नाई चलाते हैं। परन्तु ... प्रकार के व्यवहार का परिणाम हठ की शोकमय घटना ...। कैसे? एक उदाहरण लीजिये मानो कि एक बालक ...ने खेल में तन्मय है। इसी समय, बालक की माँ ...जाती है और बालक को हुक्म देती है कि तुम एक ... खेल छोड़ दो और बाजार से यह २ चीजें ले आओ। ...एक मिनट के लिये भी यह विचार नहीं करती कि यह ...क के खेलने का समय है इसलिये यह बालक का ...य है और इस समय पर उसका कोई अधिकार नहीं। बालक के इस निजके समय को जबरदस्ती छीन लेना डाकाजनी नहीं तो क्या है? आखिरकार घर का काम बालक के खेल से अधिक आवश्यक है। आधुनिक मनोविज्ञानी माँ की इस बात को स्वीकार करने को त्यार नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि घर का काम आवश्यक है, परन्तु माँ के लिये ही, बालक के लिये नहीं। बालक के लिये तो खेल घर के काम से अधिक आवश्यक है। बालक को यह आश्चर्यजनक अनुभव होता है कि माता पिता उसकी रुचियों (Interest) को अपनी रुचियों का सा महत्व और आदर क्यों नहीं देते। बालक को इस बात से अधिक आघात पहुँचता है कि माता पिता उसका कोई समय, उसका कोई काम, उसका निज का नहीं समझते और बिके हुए पराधीनता प्राणी के समान उससे व्यवहार करते हैं।

इसी प्रकार कल्पना करो कि बालक की मौसी बाहर से आई है। वह बालक को मिलना और प्यार करना चाहती है। बालक की माँ एक दम नौकर को हुक्म देती है कि बालक को बुला लाओ। बालक यह हुक्म पा कर कुढता और जलता है। यह शायद दूसरी या तीसरी बार है कि उसे खेल से उठाया गया है। बालक अपने खेल को समाप्त करना चाहता है, लेकिन उसका यह सौभाग्य कहाँ? थोड़े समय के पश्चात् उसकी माँ की क्रोधभरी आवाज आती है कि तुम अभी तक क्यों नहीं आए। बालक न चाहता हुआ भी खेल छोड़ कर आ जाता है। कमरे में आते ही पिता उस पर क्रोधित होता है कि उसने इतनी देर क्यों की। बालक को उस क्रोध से आघात पहुँचता है और उसके मन से यह दुखदाई आवाज निकलती है ऐ मेरे बड़ो तुम इतने कठोर क्यों हो? तुम मेरे व्यक्तित्व की कोई परवाह नहीं करते। तुम मुझसे मेरा निजका समय भी छीन लेना चाहते हो। तुम मेरा निज कुछ भी नहीं रहने देना चाहते। तुम अपने बड़ेपन और मेरे असहायपन का यह अनुचित फायदा उठाते हो, इसकी सजा से तुम नहीं बच सकोगे आदि "बालक की यह दिल को छूने वाली आवाज अज्ञात मौन होती है और इसीलिये वह हठ के रूप में प्रकाश पाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब मान लीजिये की रोटी खाने का समय होगया। बालक, जो खेल से कई बार उठाया गया है, आधी से कम रोटी खाता है। माँ उसे पूरी रोटी न खाने के लिये बुरा-भला कहती है और बालक की इस अवस्था के लिये अपने आपको उत्तरदायी ठहराने के स्थान पर उलटा बालक को ही हठी कह कर कोसती है। यह बात यहाँ पर ही समाप्त नहीं हो जाती है, भविष्य में यह बालक दूर और अपने माता पिता के आक्रमण से सुरक्षित स्थान में जा कर खेलता है। वह माँ बाप के हुक्म को मानने के लिये बहाने करता है और अन्त में ऐसी अवस्था आ जाती है कि वह अनाज्ञाकारी बन जाता है और छोटी २ बात पर जिद्द करने लग जाता है। यह सब कुछ बालक के व्यक्तित्व का अनादर और असन्मान करने का परिणाम है। बालक ने हठ को अपना किला बनाया है जिस के द्वारा वह अपनी आत्मा और निज जीवन की रक्षा करना चाहता है। बालक हठ में अपने आत्मसन्मान की रक्षा देखता है। यह सच है कि हठ से आत्म सन्मान की रक्षा नहीं होती। बालक का यह तरीका गलत है। हठ से आत्मिक तृप्ति (Self Satisfaction) व आत्मिक प्रकाश (Self eXpression) नहीं मिलता, परन्तु आत्मिक विकार (Self distortion) उत्पन्न होता है। परन्तु बालक का उद्देश्य पूर्णतः ठीक है कि मेरा निज का जीवन मेरा है और इसका आदर सन्मान आवश्यक है।

हठ का मूल और मुख्य कारण बालक के व्यक्तित्व या उसके निजी जीवन का अनादर है। यह अनादर कई प्रकार से हो सकता हैं। उपरोक्त दृष्टान्तों में बालक को निज के समय का अनादर बताया गया है। नीचे लिखे तीन और प्रकार से बालक के व्यक्तित्व या निज के जीवन का अनादर होता है:—

१. कई अवसरों पर माता-पिता बालक को ऐसा काम करने के लिए आज्ञा देते हैं जिसके लिए वह अयोग्य है। ऐसे अवसर पर बालक यह कहने के स्थान पर कि मैं नहीं कर सकता, यह कहता है कि मैं नहीं करूँगा। वह अपनी अयोग्यता स्वीकार करने में हेठी समझता है।

२. माता-पिता या दूसरे बड़े आदमी बालक के निजी जीवन सम्बन्धी बातें अर्थात् उसके मित्र की चिट्ठियों में या उसकी और अपनी निज की बातों में खामख्वा हस्तक्षेप करते हैं और लुक-छिप कर उनके भेद मालूम करना चाहते हैं।

३. माता-पिता और दूसरे बड़े आदमी आये दिन दूसरे बालकों से अपने बालकों का मुकाबला करते रहते हैं कि वह ऐसा है, तू ऐसा नहीं। वह मेहनती है, तू मेहनती नहीं। वह आज्ञाकारी है, तू आज्ञाकारी नहीं। इससे भी बालक हठी हो जाता है।

हठ की सिद्धि—उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि यदि बालक को हठ की आदत से सुरक्षित रखना हो तो माता-पिता और शिक्षकों को उपरोक्त ४ कारणों को पैदा होने का अवसर ही नहीं देना चाहिए।

यदि अज्ञानता के कारण बालक हठी हो जाय तो उसकी सिद्धि क्या है? हठ बलपूर्वक छुड़ाने से नहीं छूटता, और न ही बालक का हठ बालक के आगे पीछे फिरने से टूट सकता है। जब बालक हठ करे तो उसे छोड़ देना चाहिए। लेकिन जब वह थोड़ा भी मुड़ने का चिन्ह दिखाये तो उसे स्वीकृत करने के लिए तैयार रहना चाहिए। परन्तु अधिक लीनता और उत्सुकता नहीं दिखानी चाहिए, क्योंकि बालक फिर हठ की अवस्था में चला जाता है। जब बालक का माता पिता के साथ हठ हो जाय तो बालक को शिक्षक या माता-पिता को अपने मित्र से सहायता लेनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक— स्व० गिजुभाई

बदला ?

शिक्षक को अपने काम का क्या बदला मिलना चाहिए ? उसकी तनख्वाह तो इतनी कम है कि वह उसके सुन्दर और पवित्र कार्य का बदला हो ही नहीं सकता। उल्टे उससे तो उसकी और उसके काम की हँसी ही होती है। समाज में शिक्षक का दर्जा इतना मामूली है, कि वह न केवल उसके सजीव कार्य का कोई बदला नहीं है, बल्कि समाज की ओर से 'उपहार-स्वरूप' मिलने वाली एक अन्यायपूर्ण सजा सी है।

शिक्षक को बदला दे कौन ? उसे दिया क्या जाय ? सच पूछो तो उसके सच्चे और अच्छे काम का कोई मूल्य, कोई पुरस्कार हो ही नहीं सकता। उसका काम ही पुरस्कार से परे है। न समाज और न व्यक्ति ही उसको पुरस्कृत कर सकता है। धन या पद से भी उसकी सेवाओं का बदला नहीं चुकाया जा सकता।

इसीलिए शिक्षक को चाहिए कि वह ऐसे किसी पुरस्कार की आशा रखकर व्यर्थ ही अपने को दुर्बल न बनावे ! इस मृगतृष्णा से वह सदा बचे। किसी पुरस्कार की मिथ्या आशा से आशान्वित होकर उसे अपना तेज और तत्त्व खोना नहीं चाहिए।

यदि शिक्षक चाहे तो वह देख सकेगा कि उसे अपने काम का एक ऐसा अमूल्य अनुभव प्राप्त होता है, जो किसी भी दशा में धन या सत्ता द्वारा खरीदा नहीं जा सकता। यह अनुभव उसके विद्यार्थियों के सच्चे प्रेम का है। पाठशाला की चहार-दिवारी के अन्दर बैठकर निष्ठापूर्वक काम करने वाले प्रत्येक शिक्षक और शिक्षिका को प्रत्यक्ष रूप से यह अनुभव प्राप्त होगा कि बालकों के प्रेम की अखण्ड धारा सदा उन पर बरसती रहती है। बच्चों के उस प्रेम को वे अपनी आँखों देख सकते हैं। अपने शिक्षक को तनिक सा बीमार पाकर—फिर वह बीमारी मामूली से सिर-दर्द की या जुकाम की ही क्यों न हो,—बालक चिन्तातुर और उदास हो उठते हैं। जब शिक्षक बालकों को छोड़ कर कहीं दूर, परदेश जाता है, तो बालक उसके वियोग का तीव्र अनुभव करते हैं। शिक्षक को सहज गुस्से में पाकर बालकों का मन ऊँचा-नीचा हो उठता है। जब बालक के माता-पिता शिक्षक के सम्बन्ध में कोई अपमानजनक या चुभने वाली बात कह देते हैं, तो बालक दुखी हो उठता है, रोने लगता है। और कभी कभी कहने वालों को खरी-खोटी भी सुना देता है। निष्ठापूर्वक काम करने वाले शिक्षक को अपने काम का यह बदला मिलता है। बालकों के इस असीम, अविच्छिन्न और निर्व्याज प्रेम से बढ़कर कोई क्या पुरस्कार हो सकता है ? जो शिक्षक अपने कार्य द्वारा यह प्रेम पा सकता है, वह क्षणभर के लिए भी बढ़ी-चढ़ी तनख्वाह या सामाजिक मान सम्मान की परवाह क्यों करने लगा ? यदि ऐसे शिक्षकों की सँख्या बढ़ने लगे, पाठशालाओं का समस्त कार्य बालकों और शिक्षकों के प्रेम से अनुरञ्जित रहे, शिक्षक की प्राणशक्ति बालकों पर वरदान की भाँति निरन्तर बरसती रहे, और बालक उसके ज्ञान का आनन्द उठाते हुए सतत् विकसित होते रहें, तो अवश्य ही समाज शिक्षक को ऊँचा आसन देगा और उसके सुख-दुःख की चिन्ता भी रखेगा।

लेकिन शिक्षक तो प्रेमदान से पहले ही पुरस्कार चाहते हैं न ? उन्हें कर्त्तव्य पालन से पहले समाज में प्रतिष्ठा पानी है न ? जहाँ यह स्थिति हो, वहाँ बालकों के उक्त प्रेम का स्वप्न भी कोई कैसे देख सकता है ? और, जहाँ स्वप्न भी सम्भव नहीं, वहाँ सच्चा पुरस्कार कैसे मिल सकता है। —अनु० काशीनाथ त्रिवेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक की मांग

[श्री काशीनाथ त्रिवेदी]

बालक क्या चाहता है ?

रहने को साफ और सुथरा घर।
स्वतन्त्र और स्वाधीन घर।
हवादार और रोशनी वाला घर।
खुला और लम्बा-चौड़ा घर।
बाग-बगीचों वाला घर।
खुशबूदार और सुहावना घर।
दिलदार और लुभावना घर।
प्यार और मनुहार से भरा घर।

पहनने को साफ सुथरे कपड़े।
हाथ-कते हाथ-बुने कपड़े।
सीधे-सादे और सुहावने कपड़े।
ढीले-ढाले और मन-भावने कपड़े।
तन और मन को आजादी देने वाले कपड़े।

खाने को सादा और स्वाद वाला भोजन।
दूध दही और माखन-मिसरी वाला भोजन।
माँ के हाथों बना मिठास-भरा भोजन।
साग-सब्जी और फल-फूल वाला भोजन।
हाथ पिसे हाथ कुटे नाज का भोजन।
ताजगी और ताकत देने वाला भोजन।
ताज़ा और तृप्तिकारक भोजन।
समय पर मिलने वाला भोजन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वच्छ और सुघड़ता से परोसा जाने वाला भोजन।
प्रेम से खिलाया जाने वाला भोजन।
हलका और हाजिम भोजन।

खेलने को अच्छे और भले साथी।
साफ सुथरा और सुघड़ आँगन।
लम्बा चौड़ा और खुला मैदान।
हरा-भरा और सुहावना मैदान।
तरह-तरह के देशी खेल।
मैदान के खेल और घर के खेल।
शक्ति और सुव्यवस्था सिखाने वाले खेल।
गन्दगी और गाली-गलौच से बचाने वाले खेल।
होड़ा-होड़ी और मारा-मारी से बचाने वाले खेल।
भाईचारा या बहनापा बढ़ाने वाले खेल।
स्वस्थ और सुन्दर बनाने वाले खेल।
सज्जन और शूर बनाने वाले खेल।
सच्चे, सीधे, स्वदेशी और सस्ते खेल।

पढ़ने को अच्छी-भली पुस्तकें।
सरल सुन्दर और सस्ती पुस्तकें।
बड़े २ अक्षरों वाली पुस्तकें।
छोटे-छोटे पाठों वाली पुस्तकें।
मजेदार मजमूनों वाली पुस्तकें।
तरह-तरह की बातों वाली पुस्तकें।
फुलवाड़ी के फूलों की पुस्तकें।
बाग-बगीचों की सैर की पुस्तकें।
पेड़-पौधों के जीवन की पुस्तकें।
पशु-पक्षियों के जीवन की पुस्तकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीट-पतङ्गों के जीवन की पुस्तकें ।
मगरमच्छों के जीवन की पुस्तकें ।
मानव-जातियों के जीवन की पुस्तकें ।
ज्ञान-विज्ञान की पुस्तकें ।
यान विमान की पुस्तकें ।
चिड़ियाघरों और अजायबघरों की पुस्तकें ।
लुहार, सुनार, कुम्हार, कहार की पुस्तकें ।
नाई, धोबी, तेली, तमोली की पुस्तकें ।
जुलाहा, हलवाहा, मछुआ, भुजुआ की पुस्तकें ।
राज, कारीगर, मिस्त्री और सङ्गतराश की पुस्तकें ।
देश-देश और प्रान्त २ की पुस्तकें ।
नदी, पहाड, झील, सागर, सरोवर की पुस्तकें ।
एशिया, अमेरिका, यूरोप और अफ्रीका की पुस्तकें ।
महायुद्धों की रोमाञ्चकारी पुस्तकें ।
महापुरुषों की मीठी मनोहारी पुस्तकें ।
जीवनचरित्रों की अनूठी पुस्तकें ।
सरल सुन्दर और सस्ती पुस्तकें ।
मन को गुदगुदाने वाली पुस्तकें ।
दिल को ऊँचा उठाने वाली पुस्तकें ।
उपदेशों और सीखों से खाली पुस्तकें ।
बाल-मन को समझाने वाली पुस्तकें ।
बाल-मन की भूख को बुझाने वाली पुस्तकें ।
सच्ची, अच्छी और भली पुस्तकें ।

सोने को शान्त और हवादार घर ।
साफ-सुथरा और खुला घर ।
धूल और धूएँ के त्रास से खाली घर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मक्खी-मच्छर और डाँस से खाली घर।
पिस्सू और खटमल से खाली घर।
बमचख और कोलाहल से खाली घर।
बदबू से दूर घर और खुशबू से पूर घर।
लिपा-पुता और चिकना घर।
साफ, बेदाग और सुन्दर बिछावन।
तन्दुरुस्त तन, शान्त और प्रसन्न मन।
मीठी-मीठी लोरियाँ गाती हुई माँ।
थपकियाँ देती और सुहलाती हुई माँ।
कहानियाँ सुनाती और हँसाती हुई माँ।
मीठेबोल बोलकर सुलाती हुई माँ।

तेरा यह दीपक

[श्री अभयदेव सन्यासी, गुरुकुल कांगड़ी]

कार्तिकी अमावस आ गई है और बहुत से दीपक जलाए जा रहे हैं। ये क्यों जलाए जा रहे हैं? यह तो इन दीपकों के मालिक जानें। पर इतना जानता हूँ कि दीपक की सार्थकता ही इसके जलाए जाने, प्रकाशित व प्रदीपित किए जाने में है प्रदीपित करने से वह दीपक होता है और उसमें दीपित करने की जितनी शक्ति होती है उसी के अनुसार वह अपने चारों तरफ के अन्धेरे को थोड़ा-बहुत दूर करता है।

वैसे तो अपने २ घर में हरेक रात ही लोग दीपक जलाते हैं पर इस रात बहुत से दीपक इकट्ठे जलाए जा रहे हैं, दीपावली जलाई जा रही है। यह विचित्र बात है। यही नहीं' दीपावली भी कभी २ किन्हीं अन्य अवसरों पर जलाई जाती है और आजकल सिनेमा घरों पर या किन्हीं-किन्हीं अन्य दुकानों पर हर रोज ही दीपावली हो रही होती है। पर फिर भी इस कार्तिक अमावस की पवित्र दीपावली की महिमा और शोभा अपनी ही है। दीपावली यही कहाती है। इस में एक पवित्रता की भावना है जो अन्यत्र कहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। इसको पवित्र बनाने वाली विशेषता क्या है?

जलता हुआ दीपक कितना सुन्दर लगता है। उसकी ऊपर उठने वाली स्थिर प्रकाशमय लौ कितनी मनमोहिनी है।

'यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमास्मृता।'

इस दीपक में ध्यान केन्द्रित करते, दीपक की इस सुन्दरता में लौलीन होते मैं स्वयं दीपक बन जाता हूं। ऐसा अनुभव होने लगता है कि मैं भी एक जीता जागता दीपक हूं। यद्यपि अभी अनजला दीपक हूँ। इस भौतिक देहरूपी मेरे जरा से मिट्टी के बरतन में जो शुक्ररूपी तैल भरा गया है और मेरुदण्डरूपी बत्ती लगाई है वह मानव दीपक के रूप में जलने के लिए ही तो किया गया है जगत् के सब ब्रह्मचारी जलते हुए दीपक हैं। ऋषि दयानन्द जैसे आजन्म ब्रह्मचारी बहुत बड़े और बहुत भारी प्रकाश वाले, बहुत दूर-दूर तक का अन्धकार दूर कर सकने वाले महाप्रकाशमान दीपक थे, जो उनसे प्रकाश चाहने वाले अन्य बहुत से अनजले दीपकों को जला सकते थे और न जाने कितनों को जला गये थे। निःसन्देह जलता हुआ दीपक ब्रह्मचर्य जीवन की कहानी ही कहता है।

आज बहुत से दीपकों को जलाया जाता देख कर, हे मेरे स्वामी! मुझमें भी भावना उठती है कि क्या आज तेरे इस दीपक के जलाया जाने का भी समय आ गया है? मैं बहुत समय से इसकी बाट जोह रहा हूँ। क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरी सार्थकता इसी में है कि मैं एक दिन जल उठूं, प्रदीपित हो जाऊं। मैंने तेरी कृपा से अभी तक अपने इस तैल को कभी बरबाद नहीं होने दिया है, इस बत्ती को कभी झुकने और गिरने नहीं दिया है, इस बरतन को मजबूत और सुरक्षित रखा है कि कहीं छेद होकर, त्रेड आकर या किसी अन्य तरह इसका तेल चूने न लगे इसका पूरा फिकर रखा है। यह सब मैंने बड़े धैर्यपूर्वक इसी लिए किया है कि एक दिन तूने अपनी ज्योति के क्षण भर के स्पर्श से सिर में इसे जगा देना है, जला देना है, प्रकाशित कर देना है, और मेरे जीवन को सार्थक कर देना है। क्या वह शुभ घड़ी आज आगई है? दीपकों को जलता देखकर और दयानन्द का स्मरण आकर कुछ ऐसी ही शुभ आशंका होती है कि शायद अब मेरे भी जल उठने का समय आ गया है यह मैं जानता हूँ कि जब भी तुम मुझे प्रदीपित करना चाहोगे तुम्हारी दिव्य ज्योति का केवल एक क्षण भर का पवित्र स्पर्श ही काफी होगा। उस क्षणिक स्पर्श से ही मैं जल उठूंगा, जगमगा उठूंगा और निहाल हो जाऊंगा। क्या वह क्षण अब भी नहीं आया है? मैं तो ज्योति का प्यासा हूँ, तेरी अक्षय ज्योति का। तू अपनी ज्योति से ऐसा जगादे कि मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनवरत जगता रहूँ, सदा ही तेरी ज्योति से जगता हुआ तेरे काम आता रहूं।

जैसे एक मानव-दीपक जलता है, वैसे मानव-दीपकों की दिवाली भी होती है। बहुत से ब्रह्मचर्य दीप्ति रखने वाले ऊर्ध्वरेता मिल कर जलते हैं, और मिलकर जगत् के अन्धकार को दूर करते हैं। प्रायः ऐसा होता है कि अक्षय ज्योति से ज्योति पाने वाले, एक बड़े भारी दीपक के चारों ओर अन्य बहुत से दीपक जल उठते हैं और शताब्दियों के अन्धकार को देखते २ दूर कर देते हैं शायद वैसा ही एक दीपावली का समय अब आगया है उसके लिए दीपक जलाए जाने प्रारम्भ हो गये हैं। ऐसा भी दीखता है। इसीलिए मैं पूछता हूँ कि इस पवित्र दीपावली में हिस्सा लेने के लिए, हे मेरे रचयिता स्वामी! तू आज क्या मुझे जला देगा?

मैं पवित्र दीपावली की बात करता हूं, अपवित्र दीपावली तो रोज सिनेमा-घरों जैसी बहुत हो रही हैं। लोग मिलकर जल रहे हैं, चमक-दमक रहे हैं, इसलिए कि वे इस तरह लोगों को अपनी इस बाहरी चमक दमक द्वारा फंसावें और उन्हें पतित करें। वे लोग मुझे भी अपनी (अपवित्र) चमक से जल जाने को प्रलोभित करते रहते हैं। पर मैं तो इतने काल से तेरे पवित्र प्रकाश स्पर्श को पाने के लिए ही तपस्या कर रहा हूं। उस तेरी पवित्र दीपावली में काम आने के लिए तैयारी करता हुआ चिरकाल से प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जो कि दीपावली अन्य लोगों को सचमुच अन्धकार से और अन्धकार जनित पीड़ाओं से छुड़ाने वाली होती है, और (अतएव) दिव्य होती है। उस दीपावली में अब क्या देर है? मैं तो देख रहा हूं कि अमावस तो आ गई है, अधिक से अधिक अन्धकार का समय आ चुका है और मैं आशाभरी निगाह से यह भी देख रहा हूँ कि कुछ दीपकों का जलना भी प्रारम्भ हो गया है। फिर अब तेरे इस दीपक के जलने में क्या देर है?

नास्तिक कौन?

जो लोग भलाई की शक्ति को नहीं मानते और अपने जीवन में और प्रति दिन के व्यवहार में बुराई की शक्ति को स्वीकार करते हैं, वास्तव में वे ही नास्तिक हैं। विश्वास से मनुष्य को ऐसा भारी साहस होता है कि उसके द्वारा उसके जीवन के सम्पूर्ण कष्ट और निराशायें जो स्वार्थ के कारण उत्पन्न होती हैं, दूर हो जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर में बालक का स्थान क्या है ?

[स्व० गिजुभाई]

रोज रसोई किसे पूछकर बनाई जाती है ?

कितनी मातायें ऐसी हैं, जो रसोई बनाते समय बालक की रुचि-अरुचि का खयाल रखती हों—सोचती हों कि बालक को कौन चीज रुचेगी ? कौन हजम होगी ?

जब बालक को कोई चीज अच्छी नहीं लगती, हम तुरन्त कह उठते हैं: "यह खाना क्या जाने ? इसे स्वाद का कोई ख्याल हो तब न ?"

जब तीखी या चरपरी चीज खाने से बालक इनकार करता है, हम चट से कह चलते हैं: "वाह तीखा खाने की आदत तो डालनी चाहिए।"

अगर हमें खारी या खट्टी चीजें अच्छी लगती हैं, तो हम बालक के सामने तो खारी-खट्टी की हिमायत करते हैं; दाल-भात रुचता है तो दाल- भात की, और साग-सब्जी रुचती है, तो साग-सब्जी की हिमायत करते हैं।

चूँकि बालक हमसे कद में और डील-डौल में छोटे हैं, उन्हें हमारी हर एक आज्ञा का पालन करना ही चाहिए। लेकिन इससे भी हमें सन्तोष हो तब न ? हम चाहते तो यह हैं कि बालक हमारी सी आदतों वाला, हमारे से शौकों वाला और हमारे जैसा रुचि-अरुचि वाला बने !

उसे चाहिए कि वह हमारी तरह बैठना सीखे; हमारी तरह बोलना-बतलाना सीखे; हमारी तरह खाना-खिलाना सीखे ! अगर वह यह सब नहीं करता है, तो हमारी जान वह निकम्मा है, नालायक है।

हम चाहते हैं कि जैसे हम हैं, हमारे बालक भी वैसे ही बनें। हम खुद अपनी तरफ से यह फैसला दे चुके हैं, कि बालकों के लिए हमारा आदर्श पर्याप्त है। हममें कितने हैं, जो समझते हों कि बालक हमसे भी ऊँची वृत्ति और शक्ति के बन सकते हैं ?

क्या हम जानते हैं कि अपने पूर्व पुरुषों की अपेक्षा हम किन २ बातों में आगे बढ़े हैं ? क्या हम अपनी इस उन्नति के पूरे इतिहास से परिचित हैं ?

दुनिया आगे बढ रही है या पीछे हट रही है ?

बच्चों के विचारों का हम अपने दिल में कितना खयाल रखते हैं ? अगर बालक विलायती के बदले देशी कपड़े पहनना चाहता है, तो क्या हमारा अर्थशास्त्र उसमें बाधक नहीं होता ? क्या बालक के लिए हम अपनी स्वार्थ-पूर्ण दृष्टि को भुला सकते हैं ? क्या यह सच नहीं है कि हम बालक को भी नवयुग की नई कल्पनाओं से बचाते हैं ? क्या हम चाहते हैं कि वह उनसे अनुप्राणित हो ?

कई बालकों को सिर पर टोपी रखना या पैर में जूते पहनना अच्छा नहीं लगता; लेकिन उनके इस तरह नङ्गे और नंगे पैर घूमने से घर के बड़े बूढ़ों की बेइज्जती जो होती है ?

कुर्ते या कमीज की जेब भी जहां बाबूजी चाहेंगे, वहीं लगेगी न ? इसमें भी बालक की सहूलियत का खयाल कोई क्यों रखने लगा ?

लड़की की घाघरी और पोलके का रङ्ग ढङ्ग भी तो मां ही पसन्द करती है न ? कोई मानता है कि बालक में खुद भी पसन्द करने की शक्ति है ? बचपन में हमें कौन कुछ पसन्द करने देता था ? हम बचपन में गुलाम रहे, तो अब हमारे बालकों को भी तो उसका कुछ प्रायश्चित करना चाहिए न ?

किस समय और किस दिन बालकों को कैसे कपड़े पहनने चाहिएँ, इसका निर्णय भी तो अनुभवी माता ही करती है। जो मां को अच्छा लगता है, सो सबको अच्छा लगता है। अगर बालक किसी जुलूस या सभा के लायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कपड़े न पहने, तो उसमें बदनामी मां की ही न होगी ? नन्हे बच्चों की बदनामी क्या और बेइज्जती क्या ?

बालक माता-पिता की प्रतिष्ठा को सुरक्षित रखने के साधन जो ठहरे। बालक और हैं क्या ? माता-पिता की दम्भ और अभिमान वृत्ति को सन्तुष्ट रखने के साधन ही न ?

बूढ़ी मां जिन चीजों को खुद नहीं पहन सकती, उन्हें बालकों पर लादकर खुश होती है। जब माँ उदास या गमगीन हो, कभी बालकों को मौज करना चाहिए ?

बालक तो आखिर नन्हे और निकम्मे ही न हैं ! उन्हें रङ्ग की परख क्या ? कला की क़द्र और पहचान क्या ? सौंदर्य से उन्हें वास्ता क्या ? वे तो मां-बाप की बड़ी २ गुडिड्यां हैं। मां-बाप अपनी इच्छानुसार उन्हें सँवारेंगे और सजायेंगे। उन्हें देख २ कर खुश होंगे। खेलायेंगे और खिलायेंगे। और यह सब भी तो बहुत अच्छे माने जाने वाले माता-पिता के बालकों को ही न नसीब होगा।

बालक चाहते हैं कि वे नँगे बदन खेलें, लेकिन फिर शिष्टाचार का क्या होगा ? पहले मां-बाप खुद शिष्टाचार की गुलामी से मुक्त होंगे, तभी न वे बालकों को उससे मुक्त रख सकेंगे ?

पसीना चाहे चू रहा हो, पर कपड़े तो पहनने ही होंगे। बदन चाहे चारों ओर से जकड़ जाय, खुलकर खेलना-कूदना चाहे मुहाल हो जाय, पर कपड़े पहनने ही होंगे। बिना कपड़ों के बालक कितना भद्दा लगता है ? उसके सहज सुन्दर शरीर को जब तक हम बनावटी कपड़ों से ढक नहीं देते, हमें कल नहीं पड़ती। हमारी कला रसिकता का दिवाला नहीं पिटता !

लेकिन बालक आखिर है तो सामाजिक प्राणी। उसे समाज के सब नियम तो जान ही लेने चाहिएँ न ? वह बचपन से कपड़े पहनना न सीखे, और फिर बड़ा होकर नङ्गा भटके तो ?

बालक कुदरत का खिलौना है। खुली हवा और सुबह के सूरज की धूप उसके प्यारे दोस्त हैं। पृथ्वी की गोद, मां की प्यारी गोद से भी उसे अधिक प्रिय है। पृथ्वी तो उसकी मां की मां है न ?

लेकिन बालक को खुली हवा में जाने दिया जायगा तो उसे जुकाम न हो जायगा ? सूरज की धूप में भटकने से उसे बुखार न आजायगा ? और जमीन पर लोटने से कपड़े गन्दे न होंगे ? बदन गन्दा न होगा ? अपनी इस मान्यता को हम कभी भूल सकते हैं ?

सोने से बिछौना खराब होता है, इसलिए बिछौने पर सोना नहीं, खेलने से कपड़े गन्दे होते हैं, इसलिए खेलना भी नहीं ! यह हमारा न्याय है।

हमारे लिए एक कायदा। बालकों के लिए बिलकुल दूसरा कायदा। लेकिन कभी किसी ने बालक से पूछा भी है कि "लल्ला ! तुम खेलना चाहते हो या कपड़े सम्भालना ?"

कैसा मुँह तोड़ जवाब मिलेगा, किसी ने सोचा है ?

कुदरत की सोहबत से बालक में नई जिन्दगी पैदा होती है। किसी ने कभी खयाल किया है कि पृथ्वी के स्पर्श से बालक को कितनी खुशी, कितना आनन्द होता है ?

जब बालक आपके आगे २ दौड़ेगा और आप उसके पीछे २ चलेंगे, तभी आप समझ सकेंगे कि खुलकर खेलना बालक को कितना पसन्द है !

कोई जानता है कि बालक के विचार में सारी सृष्टि-सारा जीवन कितना चमत्कारमय, कितना अद्भुत और अजीब है !

पृथ्वी की निर्मल धूल बालक को हमारे चन्दन से भी ज्यादा प्यारी है।

हवा की हलकी मीठी तरङ्गें उसे हमारे बिकारी चुम्बनों से कहीं प्रिय हैं।

बाल सूर्य की कोमल किरणें उसे हमारे खुरदरे हाथों से कहीं मुलायम मालूम होती हैं।

जहां हमें कुछ भी नहीं दिखाई देता; वहीं बालक चमत्कार देखता है।

नन्हीं सी तितली को देखकर बालक पागल हो उठता है, पतिङ्गों को देखकर वह खुद पतिंगा-सा बन जाता है, मेंढक देखकर वह मेंढक की तरह कूदने लगता है, घोड़ों को देखकर वह हिनहिनाता और गाय को देखकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाय की तरह रम्भाने या डचकारने लगता है

घास का नन्हा-सा तिनका भी बालक की दृष्टि में एक महान् सँग्रह योग्य पदार्थ है

अगर आप उसकी जेब टटोलेंगे, तो उसमें आपको घास के तिनके और फूलों और पत्तियों के ढेर मिलेंगे !

प्रकृति में स्नान किए बिना बालक प्रकृति के रहस्यों को क्यों कर बूझ सकेगा ?

चाँद की चाँदनी, नन्हीं सी कलकल बहती नदी, खेतों की धूल, बाड़ी के बीच बनी झोंपड़ी, पहाड़ियों के कङ्कर खुले मैदान की हवा और आसमान की रङ्ग-बिरङ्गी शोभा, ये सभी बालक को प्रकृति की ओर से प्राप्त उपहार हैं ।

इन सबका स्वतन्त्रता पूर्वक उपयोग करने से हम बालक को क्यों रोकें ?

यदि बालकों को खुले आसमान के नीचे, उन्मुक्त प्रकृति के बीच, रात-दिन रहने दिया जाय, तो वे कभी घर में आने का नाम भी न लें !

फूल तो बालकों के जिगरी दोस्त हैं । उन्हें देखकर वे नाच उठते हैं । दूर से फूलों की महक पाकर उनके नथुने फड़क उठते हैं; चेहरा दमक उठता है, दांत की कलियां खिल उठती हैं; और गालों पर दो नन्हे गड्ढे दिखाई देने लगते हैं ।

बालक फूलों पर मुग्ध रहता है और माता बालक पर मुग्ध !

बालक पहले प्रकृति के माधुर्य को समझता है, बाद में वह माधुर्य को समझ पाता है ।

जब बालक धूल में लोटकर ऊपर आसमान की ओर एक टक देखता है, तो कहिए वह क्या करता है ?

वह समग्र प्रकृति को पीता नजर आता है । सारी सृष्टि को अपने स्नेह से भरता पाया जाता है ।

चाँद उसे रोज-रोज नया-नया आनन्द दे जाता है ।

चाँद रात ही में दिखाई पड़ता है । बालक सोचता है: यह चाँद दिन में कहाँ छिप जाता होगा ? लुका-छिपी का खेल बालकों ने कहीं चाँद ही से तो न सीखा हो ?

हम आप 'हबुक पोथी' या 'घी चुपड़ी रोटी' का जो चाहें, अर्थ करें; पर यह काम लोक साहित्य के आचार्यों का है । हम चाहे बालक को चुपाने के लिए ही इस रोटी को याद करते हों, तोभी बालक तो यही सोचता होगा कि मां उसे चाँदी की रोटी नहीं, चाँद का तेज खिला रही है ।

चाँद की चाँदनी, उसकी शीतलता, भला किसे अच्छी न लगेगी ?

बालक का आनन्द चाँद का रङ्ग निरखने में, उसकी चाँदनी में नहाने में, और उसके तेज को अपनी आँखों में भरने में है !

बालक तुरन्त ही इस बात को मान लेता है कि चाँद में जो धब्बा है, वही निरा धब्बा नहीं, बल्कि कोई हरिण है या कोई बुढिया बैठी चर्खा चला रही है । यह बालक के भोलेपन का नहीं, उसके पागलपन का सबूत है । प्रकृति को देखकर वह उसमें ऐसा तल्लीन हो जाता है । विज्ञान की कर्कशता बालक के कोमल मस्तिष्क को नहीं सुहाती । यही वजह है कि बालक को परियों की कहानियाँ इतनी प्रिय होती हैं । अद्भुतता उनका स्वभाव है, और अद्भुतता में ही उनका आनन्द !

लेकिन बालक के साथ चाँदनी में घूमने की फ़ुरसत हमें हो, तब न ?

हमें चाँद पर जो कविता रचनी होती है ? हरिण और बुढिया की लोककथा के रहस्य का पता जो लगाना होता है ? हमें चन्द्रलोक में जीवित प्राणियों के रहने ना रहने की खोज जो करनी होती है !

हमें फ़ुरसत हो कैसे ? मनुष्य सच्चा कवि बने कैसे ? मनुष्य चित्रकला के चमत्कार का अनुभव क्यों कर करे ?

प्रकृति का आकण्ठ पान किए बिना, मनुष्य प्रकृति का चित्रण कैसे करे ? उसका स्तुतिगान कैसे करे ? उस पर काव्य किस प्रकार लिखे ?

बिना खाए कभी किसी का पेट भरा है क्या ?

बालक को प्रकृति से दूर रखकर हम उसे क्या बनायेंगे देव या राक्षस ? मैं फिर पूछता हूँ: घर में बालक का स्थान क्या है ?

मकान बनवाते समय कोई सोचता है कि उसमें बालक के लिए कितने कमरे कहां-कहां रहेंगे ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किराये का घर लेते समय भी हम नहीं सोचते कि उसमें बालकों के खेलने-कूदने लायक जगह है या नहीं ? मकान मालिक से हम दूसरे दसों प्रश्न पूछते हैं: घर में मोरी है या नहीं ? रसोई घर में उजेला रहता है या नहीं ? सोने के कमरों में हवा आती है या नहीं ? नहाने के लिए नल और पेशाब-पाखाने के लिये टट्टी है या नहीं ? गादी-गदेलों को धूप में सुखाने के लिए ऊपर छत या चाँदनी है या नहीं ? आदि-आदि ! लेकिन क्या कभी किसी ने अभी तक यह पूछने या जांचने की तकलीफ उठाई है कि घर में बालकों के लिए खेलने-कूदने की भी जगह है या नहीं ?

किराये का मकान लेते समय हमें भला अपने बालक क्यों याद आने लगे ? बालकों के लिए अलग जगह कैसी ? यह खयाल ही हमें अटपटा और नया मालूम होता है।

इन नन्हें २ बचों का अभ से स्वतन्त्र अधिकार ? इनके लिए आज से इतनी खटपट ? सारा घर इन्हीं का तो है ? ये इसमें रहें, खायें, पीयें और मौज करें ! घर में घूमने-फिरने और खेलने से इन्हें कौन रोकता है ?

लेकिन वे कहां गायें ? कहां बैठकर बात-चीत करें ? कहां खेलें ? कहां दौड़ें घूमें ?

रसोई घर में जाते हैं तो मां की परेशानी बढती है; उसका सारा प्रबन्ध मिट्टी हो जाता है; अगर माँ देव-घर में बैठी पूजा पाठ में लगी है, तो उसकी पूजा में विघ्न होता है।

दीवान खाने में पिताजी या तो अखबार पढते मिलते हैं; या अपने किसी मवक्किल का केस तैयार करते होते हैं, या किसी मरीज को देखते होते हैं या गांव अथवा शहर की किसी सभा में होने वाले अपने भाषण के मुद्दे लिख रहे होते हैं। वहां बचों को खुलकर खेलने का मौका कोई क्यों देने लगा ?

ओसारे में दद्दा और जीजी बैठे अपना सबक याद कर रहे हैं। बच्चे न तो उधर जा सकते हैं, न उनके आस पास कहीं खेल कूद सकते हैं और न गा ही सकते हैं। जहां जाते हैं, वहीं से उन्हें वापस होना पड़ता है।

अगर तकदीर से कहीं कोई एकान्त कोना मिल भी गया तो वहां बैठकर बालक को काल्पनिक गुड्डों और गुड्डियों का खेल खेलकर खुश होना पड़ता है। झूठ-मूठ का खाना और झूठ-मूठ का बोलना पड़ता है।

कल्पना शक्ति के विकास का यह कोई तरीका नहीं है।

शिक्षा-शास्त्रियों का यह एक निरा भ्रम है।

घर में हम अपने और अपने मेहमानों के लिए मेज कुर्सी, चटाई, जाजम वगैरा सब कुछ रखते हैं। लेकिन बालकों के लिए खास तौर पर एक टाट का बोरा भी हम कभी रखते हैं क्या ?

बालक अपने दोस्तों और मुलाकातियों को कहां बैठावे ? किस पर बैठावे ?

लेकिन क्या हम कभी यह जानने की भी कोशिश करते हैं कि नन्हें बालकों के भी अपने दोस्त होते हैं ?

दोस्त तो हमारे आपके ही हो सकते हैं। नन्हें बच्चे भला दोस्ती में समझें क्या ? लेकिन हमारी आपकी दोस्ती मतलब की होती है, जब कि बालकों की दोस्ती निर्दोष और निःस्वार्थ !

हमारे पास अपने गहने-कपड़े रखने को आल्मारियां, पेटियाँ और सन्दूकें होती हैं। बालक अपने कङ्कर-पत्थर, सीप और शँख कहाँ रक्खें ? क्या उनके बटोरे हुए पंखों-पींछों, और गुड्डा-गुड्डियों वगैरा को रखने के लिए घर में कोई स्वतन्त्र जगह होती है ?

हमारी किसी चीज की चोरी हो जाने पर बालक कोई ध्यान नहीं देते। लेकिन अगर कोई उसके पींछों और शंख-सीपों को चुरा लेते हैं, तो बालक तिलमिला उठता है ? उसका तो मानो सारा राज ही लुट जाता है ! फिर भी उसके इस बहुमूल्य संग्रह को सुरक्षित रखने के लिये हम उसे एक पेटी या सन्दूकची तक नहीं देते ! कैसी अजीब बात है ?

सच तो यह है कि बालक है किस गिनती में ! कितने ऐसे घर हैं, जहां बालक के कद का खयाल रखकर खूंटियां गाड़ी जाती हों ! अलगनियां और आल्मारियों का बन्दोबस्त किया जाता हो ? घर में बसाये हुए अच्छे-अच्छे चित्र भी काफी ऊँचाई पर टांगे जाते हैं। बड़े-बड़ों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नजर भी इन पर छठे-चौमासे ही पड़ पाती है, बच्चों की तो बात ही क्या ? वे इन चित्रों को न कभी देख पाते हैं, न सराह पाते हैं।

बालक के कपड़े हम टांग देते हैं। ऊपर से लोटा-गिलास हम उतार देते हैं। बड़े-बड़े वजनी पटे हम बिछा देते हैं। थाली कटोरी भी हम सजा देते हैं।

बेचारा बालक क्या करे ? बड़ी-बड़ी वजनदार चीजों को वह किस प्रकार पकड़े ? कैसे उठावे ? जी तो उसका बहुत चाहता है, पर वह करे क्या ?

हम जानते हैं कि बालक सशक्त नहीं है, अतएव ताकत के सभी काम हमें उसके लिए कर देने चाहिएं। बाल-प्रेमी माता पिता सोचते हैं कि ऐसा करके वे अपने बालकों को बहुत सुख पहुंचाते हैं।

बालक के महत्व को समझने का दावा करने वाले कहते हैं कि बालक के लिये जितना कुछ वे करते हैं सो बाल-पूजा और बाल-सम्मान की दृष्टि से ही करते हैं लेकिन ये सब बालक को प्रतिपल अपङ्ग बनाते रहते हैं, उसे गुलाम बनाते हैं। हम जिसके गुलाम बनते हैं, वह हमारा गुलाम बनता है ?

क्या हम बालक का विश्वास करते हैं ? काम के बरतन उठाने देते हैं ? उसे खाना परोसने देते हैं ? लालटेन या चिराग जलाने देते हैं। आग सुलगाने देते हैं ? उसके अपने छोटे २ रूमालों और कपड़ों को उसे अपने हाथों धोने देते हैं ?

हमतो कह उठते हैं कि बालक से यह हो नहीं सकता। हम मानते हैं कि उसमें व्यवस्था शक्ति होती ही नहीं। लेकिन हमें आँखें, हों तब न हम बालक की इन शक्तियों को देख सकेंगे ?

अज्ञान घोर अन्धकार ने हमें चारों ओर से घेर लिया है।

बालक का विश्वास करके हम कभी उसे स्वतन्त्र रूप से काम करने का अवसर देते हैं ?

हम बालक के बदले खा नहीं सकते; उसके बदले चल नहीं सकते, उसके लिए खेल नहीं सकते !

लेकिन हम उसके बदले उसके बरतन माँज देते हैं; उसे कपड़े पहना देते हैं, उसके लिए पटे बिछा देते हैं।

अगर कोई हमें हमारे लायक काम करने से इन्कार कर दे तो ? हमारा सारा काम कोई हमारे लिए कर दिया करे तो ? हम सेठ रहेंगे या गुलाम ?

क्या ऐसा स्वामित्व हम पसन्द करेंगे ?

यह स्वामित्व होगा या मृत्यु होगी ?

बालक तो सब कुछ कर सकता है। वह छोटे-छोटे बरतन माँज सकता है; नन्हीं झाड़ू से घर बुहार सकता है, छोटी बहन को झुला भी सकता है।

लेकिन हमें यह सूझता नहीं है !

यदि हम बालक को अपने जीवन में उचित स्थान दें, तो पृथ्वी पर स्वर्ग का राज्य स्थापित हो जाय। घर में देव-क्रीड़ा करने आवें। देवों को मृत्यु लोक में जन्म लेना पड़े। स्वर्ग बालक के सुख में है। स्वर्ग बालक के स्वास्थ्य में है। स्वर्ग बालक की निर्दोष मस्ती और मुसकान है। स्वर्ग बालक के भोले-भाले गान तान में है।

— अनु० काशीनाथ त्रिवेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजनीगंधा

हजारी बाग सैंट्रल जेल
१५-६-३९

तुम खिलो रात की रानी !
हो म्लान भले यह जीवन और जवानी
तुम खिलो······
प्रहरी - परिवेष्टित इस वन्दी - शाला में
मैं सड़ूं सही, पर, ताजी रहे कहानी
तुम खिलो······
ये प्रहरी के बूटों की कर्कश टापें
रह-रह कर बहुधा नींद तोड़ जाती हैं !
आँखें खुलतीं तो मन झुंझला उठता है
ये हृदयहीन···ये निर्मम निर्दय नर पशु
इतने में तेरी प्रिय सुवास से सुरभित
शीतल समीर का हल्का झोंका आता
सारा अभाव - अभियोग भूल जाता हूँ
यह आकुल मन इतना प्रमुदित हो जाता !
जय हो तेरी कल्याणी !
यह जेल और यह सेल-निरोधित प्राणी !
इस आङ्गन मेंउस ओर तुम्हारा खिलना !
यह भीनी-भीनी सारी रात महकना !
दिन हुआ कि बस हो गईं मौन तुम सजनी
निशि आते ही फिर खिलीं, कौन तुम सजनी–
रजनीगंधा बन कर भू पर उतरी हो ?
अभिशापित सुर-बाला हो या कि परी हो?
पुलकित करतीं अवरोधित तन-मन वाणी
जय हो ······

—'यात्री'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औद्योगिक क्रान्ति और आधुनिक सभ्यता

[श्री गिरिराज बी० ए, गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद]

१८वीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति संसार के इतिहास में एक महान् घटना बनी। वाट Wyatt और स्टीफेन्सन Stephenson को जिन्होंने भाप में छिपी हुई शक्ति की शोध की उन्हें शायद स्वप्न में भी ख्याल न हो कि इस शोध से संसार में इतनी भारी क्रांति पैदा हो जायगी। योरप और अमेरिका की तो बिलकुल काया पलट हो गई। १७७० ई० से पहिले वहां की क्या हालत थी, अब कितना भी ग्रामों में घूमा जाय पता नहीं चल सकता। इसके लिये इतिहास के वर्क ही उलटने होंगे। वहां के वर्तमान निवासी अपने पूर्वजों के रहन सहन, खान-पीन, उद्योग-धन्धों, धार्मिक, और आर्थिक स्थिति का हाल जानकर शायद मन ही मन में शर्मायें और आश्चर्य में पड़ जायें कि ऐसी स्थिति में भी आदमी जीवन व्यतीत कर सकता था। इस क्रांति का असर व्यापार तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि इसने मनुष्य के विचारों को उथल-पुथल कर इसके हर एक कार्य-क्षेत्र में परिवर्तन कर डाला और एक नया युग शुरु किया; यद्यपि इस घटना को हुए अब १५० वर्ष से ज्यादा हो गए हैं तथापि सामाजिक व्यवस्था में इससे जो तोफान पैदा हुआ वह अब तक ठीक न हो पाया है और संसार की हालत देखते हुए फिलहाल इसके ठीक होने की कोई सूरत भी नहीं दिखाई देती।

विज्ञान की ईजादों ने इन्सान को वह ताकत दे दी है जो इसे इससे पहिले कभी हासिल न थी, और अब वह ऐसे काम कर रहा है जिनका इसे स्वप्न में भी खयाल न था टैलीफून Telephone द्वारा यहां बैठे हुए मिन्टों में लन्दन और न्यूयार्क से बात कर लेना रेडियो द्वारा संसार के एक कोने की बात दूसरी जगह सुन लेने हवाई जहाज के द्वारा पांच छः दिन में करांची से लन्दन पहुंच जाने, मृत्यु शय्या पर पड़े हुए आदमी, आयरनलँग (Iron lung) और दूसरी इसी तरह की चीजों से जान बचा लेने, अर्से से बँजड़ पड़ी हुई जमीनों को तरह-तरह की खाद डालकर अदल बदल कर फसल बोकर काबिले काश्त बना लेने, मनुष्य की जरूरतों को पूरा करने के लिए कलों द्वारा जितनी चाहें पैदा कर लेने, किसी भी जगह बैठे हुए पुस्तकों द्वारा बड़े २ सन्तों और महापुरुषों की बातें सुन लेने और अनेक प्रकार से मनुष्य को लाभ पहुँचाने की शक्ति इस क्रांति में भरी पड़ी है। इसका उपयोग अब भी कुछ हद तक हो रहा है मगर अधिक इसका उपयोग, कुछ आदमियों के हाथों में अथाह रुपये का इकट्ठा हो जाने में और असँख्यों को गरीब रखने में कारखानों की अस्वस्थजनक परिस्थिति में काम करते रहने के कारण काम करने वालों का स्वास्थ्य बिगाड़ने में, कारखानों में कलों द्वारा ढेरों माल पैदा करके उसको खपाने के लिए तरह-तरह की तरकीबें निकाल कर दूसरे देशों की उन्नति रोक कर, पशुबल के आधार पर उनको अपने आधीन रखने में अपने माल के विकास के लिए हर एक देश से अपने को सर्वोपरि बनाए रखने के खयाल से, मनुष्य के सँहार करने वाले साधनों पर खूब रुपया खर्च करके, उनको ज्यादा से ज्यादा बनाए रखने की कोशिश करते रहने में, अपना उल्लू सीधा रखने के लिए, तरह-तरह के मन घड़न्त सिद्धांत निकाल कर कोमल बच्चों के मन को एकांगी शिक्षण द्वारा पक्षपात से भरकर, मनुष्य को मारने के लिए तैयार करने में, मनुष्य विनाशक साधनों के मुकाबले में शिक्षण और स्वास्थ्य-रक्षण जैसे उपयोगी कामों को गौण समझकर उन पर पूरा न ध्यान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने में ही हो रहा है।

आज देश, देश का शत्रु बन रहा है और एक-एक का नाश करने पर तुला हुआ है। १९१४ का महायुद्ध और लड़ाई औद्योगिक क्रांति से ही पैदा हुई सामाजिक अवस्था का परिणाम है। ऐसा क्यों? क्या इससे पहिले संसार में लड़ाइयाँ न होती थीं? क्या उस समय के आदमी देवता पुरुष थे? ये प्रश्न जरूर पूछे जा सकते हैं। यह मानना पड़ेगा कि पहिले भी लड़ाइयां होती थीं और आदमी काम, क्रोध, लोभ आदि से मुक्त न थे, मगर फिर भी जो आज हर तरफ मारा मारी और समाज में असमानता दिखाई देती है वह न थी। बात यह थी कि पहिले बादशाह अपनी कीर्ति और प्रख्याति बढ़ाने के लिए ही लड़ते थे और लड़ाइयां जल्दी-जल्दी न होती थीं वे इतनी भयानक न थीं जितनी कि आज कल की हैं। फौजें ही आपस में लड़ती थीं और सामान्यतः प्रजा को आज के मुकाबले में दसवां हिस्सा भी कष्ट न होता था। विज्ञान की ईजादों के कारण वीरता के साथ आमने सामने होकर लड़ना तो जाता ही रहा। हवाई लड़ाई में तो अधिकतर सामान्य प्रजा, जो कि लड़ाई में शामिल नहीं, वही मरती है और बच्चों से लेकर बूढ़ों तक कोई भी सुरक्षित नहीं। आज कल हवाई शक्ति पर ही जीत का आधार है। चीन में लाखों बेगुनाह बच्चों का शिकार हुए और आज कल योरप में कितने हो रहे हैं। इसका कुछ हदोहिसाब ही नहीं। आज कल तो स्थिति ऐसी हो गई है कि या तो लड़ाई की तैयारी में देश लगा रहे या अपनी हस्ती कायम रखने के लिये दूसरे से लड़े। चाहे लड़ाई हो या न हो मगर देश का कार्य लड़ाई के ही ख्याल से होता है। पहिले की तरह से आज कल की लड़ाइयां प्रख्याति बढ़ाने के लिए नहीं हैं। इनका हेतु तो मशीनों द्वारा ढेरों तैयार किए हुए माल को बेचने के लिए देशों को जीतना और वहां से कच्चा माल लाकर उसको पक्के माल (Manufactured goods) की शक्ल देकर उससे दस गुने और बीस गुने पैसे बनाना है। साम्राज्य स्थापित करने का विचार इस क्रांति का ही परिणाम है।

पहिले मनुष्य के लोभ लालच की सीमा थी। क्योंकि उसको आदमियों से ही काम करना पड़ता था और जितना बड़ा उसका कार्य होता था उतने ही उसको ज्यादा आदमी रखने पड़ते थे। इस कारण आदमी के पास बहुत ज्यादा रुपया इकट्ठा न हो सकता था। जैसे कि आज कल करोड़ों रुपया एक आदमी के पास जमा हो सकता है। यह तब सम्भव न था। जितनी गरीबी और बेकारी हर एक देश में आज कल है वह भी न थी, क्योंकि एक आदमी का काम एक आदमी ही करता था, अब की तरह से बहुतों को बेकार नहीं कर सकता था। कलों के कारण एक आदमी ही बहुतों की जगह काम कर डालता है। इससे आदमियों की कमी के कारण जो बचत होती है वह सब एक आदमी के ही पास चली जाती है। आदमियों के कारण आदमी इतनी कम मजदूरी पर काम करने को तैयार हो जाता है कि उसका पूरी तरह से पेट भी नहीं भरता। क्या करे खाली से जो कुछ सही वही ठीक। इस तरह से दो वर्ग पूंजीपति और मजदूर लोग समाज में बन गए। जिनके बीच हमेशा कशमकश चला ही करती है।

औद्योगिक क्रांति और विज्ञान की ईजादें मनुष्य के मस्तिष्क विकास का सबूत हैं। इन ईजादों के कारण जो साधन अब पैदा हो गए हैं और होते जा रहे हैं उनका समाज के लाभार्थ उपयोग करना तब ही सम्भव है जबकि मनुष्य के हृदय का भी खूब विकास हो गया हो। आदमी के मस्तिष्क का तो खूब विकास हुआ और हो रहा है मगर हृदय ने उसका साथ न दिया। इसलिए यह सब ईजादें बन्दर के हाथ में उस्तरे के समान साबित हुईं, जो आदमी की नकल करके बजाय दाढ़ी बनाने के अपना मुँह ही काट लेता है। योरुप जो कि इस नई सभ्यता या असभ्यता का जन्मदाता है जब तक लूट-खसोट की नीति और साम्राज्य स्थापित करने के ख्याल को छोड़ कर सही अर्थ में ईसाई न हो जायगा तब तक संसार से यह हाहाकार नहीं मिट सकता। अगर योरुप ऐसा करने को तैयार न हो तब वे देश जिनको वहां की कौमें अपने चँगुल में फँसाये रखना या फँसाना चाहती हैं, ऐसी शक्ति और बल अपने में पैदा करें कि जिससे उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

कौमों को मुँह की खानी पड़े, तो यह देश सँसार को आए दिन की खूँरेज़ी से छुट्टी दिला सकते हैं। वह शक्ति या बल योरुपीय देशों जैसा नहीं हो सकता। राष्ट्रीयता के सँकुचित भाव को छोड़ कर, अन्याय का सामना करके और तिलाञ्जलि देकर, सँहार करने वाले साधनों पर रुपया खर्च न करके धर्मान्धता छोड़कर, काले-गोरे का भेद-भाव मिटाकर, बच्चों के मन में शिक्षण द्वारा शुरू से ही हर सँसार वासी के लिए भ्रातृ-भाव पैदा कराकर, अँतर्राष्ट्रीय व्यापार हर एक देश के लिए हितकारक और उन्नतिकारक बनाकर, हर एक मनुष्य को कार्य देकर, उसके जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने की जिम्मेवारी लेकर ही हम ऐसी शक्ति पैदा कर सकते हैं जो कि आसुरी शक्ति का सामना कर सके। यह तभी सम्भव है जबकि हर एक आदमी इसकी गम्भीरता और आवश्यकता समझ कर अपने कार्य-क्षेत्र में इसी रीति से व्यवहार करें, वरना यह सब ईजादें एक ऐसे राक्षस के समान साबित होंगी कि जिसकी तृप्ति सारे सँसार को हड़प करके ही हो सकेगी।

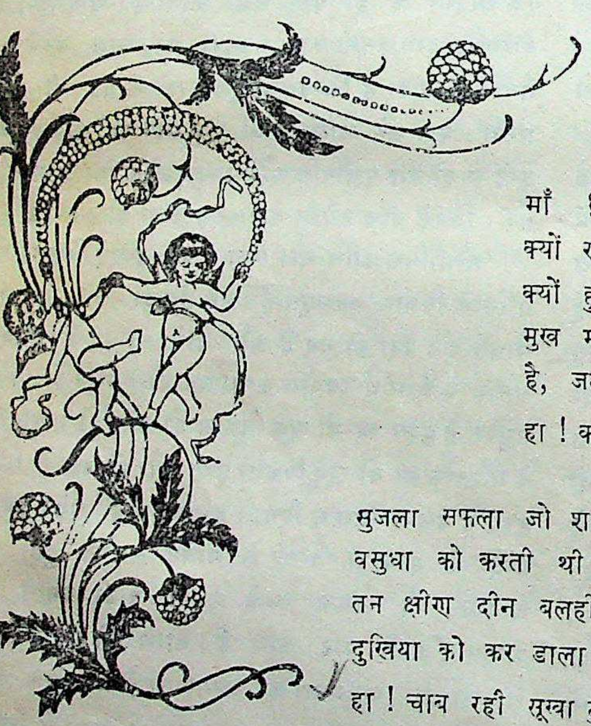

माँ से ?

[र० श्री विकल]

माँ ! ऊपर को करतो मुखड़ा।
क्यों रही हाथ पर टेक माथ,
क्यों हुए धूल धूसरित केश।
मुख म्लान वह रही अश्रुधार,
है, जननी कैसा आज भेष॥
हा ! कहाँ गया तनका कपड़ा ॥१॥

सुजला सफला जो शस्य श्याम,
वसुधा को करती थी निहाल।
तन क्षीण दीन बलहीन आह !
दुखिया को कर डाला निढाल॥
हा ! चाब रही सूखा टुकड़ा ॥२॥

मेरी नस-नस में तेरा खून,
मेरे हर स्वर में तेरा राग।
जननी का मूक प्रलाप देख,
जलती है उर में बिकल आग॥
माँ ! कुछ तो कह सुत सों दुखड़ा ॥३॥

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सपना था !"

कहानी

[श्री दयाशङ्कर मिश्र]

वह कैदी था ! आजन्म कैदी !! रूखे उलझे हुए बाल, धंसी हुई आँखें और चेहरे पर फैली हुई गहरी झुर्रियों का जाल देखकर कौन कह सकता है कि किसी दिन उसकी आँखों में भी यौवन का उन्मेष था, उसने भी कभी रङ्गीन स्वप्नों की दुनिया बनाई थी। वह भी कभी आशा अभिलाषा और महत्वाकांक्षाओं को लेकर जीवन-प्राङ्गण में उतरा था और यह कि उसने भी कभी जीवन के खेल खेले थे मौत को मुट्ठी में बांध कर !

वह खड़ा था अपने दोनों मजबूत शिथिल हाथों से जेल के उन काले मोटे सींकचों को पकड़े हुए उदास मन ! खिन्न चित्त !!

सदा की तरह इस बार भी सावन आया था। घने काले बादलों में बिजली चमकती, फिर गड़ गड़ड़......कर बादल गरज उठते किन्तु उस युवक-वृद्ध बन्दी की आवाज में आज पहली सी गरज शेष न रही थी।

वह चुपचाप खड़ा अपनी निस्तेज आँखों से सावन की उस हरियाली में भी अपने पूर्व-सञ्चित अरमानों का खण्डहर और आशाओं का पतझड़ देख रहा था।

जाने क्यों ? सन्तरी की कलाई में बन्धा पतला सा धागा—किसी बहिन की राखी—देख-देख कर उसका जी रो उठता था। दस साल की सूखी आँखें डबडबा आईं थीं, वह रोना चाहता था, खूब आँसू बहाना चाहता था, इतने आँसू ! जिनमें डूब कर मर सके !

पानी की हल्की बौछारों से बहती हुई एक रोती हुई सी आवाज आ रही थी, सङ्गीत के करुण स्वरों में बन्धी हुई, अपने परदेशी भैया की याद में कोई गा रही थी दुखियारी बहिन, "रखियाँ बन्धालो भय्या, सावन आया" आज रक्षा-बन्धन था।

"सन्तरी ! कौन गा रहा है ?" रुंधे हुए कण्ठ से कैदी ने पूछा।

"कोई पगली है कैदी ! कल शहर में मैंने देखा था; बहुत सी भीड़ उसके पीछे जा रही थी। कहती थी, "मुझे जेल बतादो, मैं अपने भैया को छुड़ाने आई हूँ। उन्होंने हत्या नहीं की है" "की है" लड़के बोल उठते। तब वह चिल्लाती "नहीं की है ! नहीं की है !! फिर खीज कर, चिढ़ कर, जोर-जोर से रो-रो कर गा उठती "रखियाँ बन्धालो भैया सावन आया।"

"क्या लङ्गड़ी भी है वह पगली ?"

"हाँ, एक पैर घसीट कर चलती है वह पगली।"

"कैदी ! क्या तुम जानते हो उस पगली को ?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया—"पगली है ! एक पैर घसीट कर चलती है वह पगली !!" बड़बड़ाता रहा फिर एक बीभत्स हँसी हँस कर अपने काले कम्बल पर लेट गया—अर्धनिद्रित, अर्धविक्षिप्त सा। अतीत की स्मृतियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सजग हो उठीं:—

नौजवान नेता—मजदूरों का देवता !—जमींदारी जब्त, घर-मकान जब्त—पिता की मौत—एक दिन माँ का शव जलाकर लौटता है। सारी रात गाँव से बाहर अपने नये मकान ! फूंस की झोंपड़ी में वह लम्बी मनहूस रात, छोटी बहिन के आँसू पोंछते-पोंछते बिताई थी······ बेकारी के दिन पानी पी-पीकर दोनों ने गुजारे थे। इस रक्षा-बन्धन के दिन भूख की धधकती ज्वाला में वह बहन भस्म हुई थी। उसे हैजा हुआ था—मृत्यु के मुंह में दबोची उस बहिन का भयङ्कर डरावना चेहरा बोल उठा—'भैया·· माँ के··पास··राखी··बन्धा··' उसने एक हिचकी के साथ दम तोड़ दिया था।

पानी की रिमझिम, सारी गलियां कीचड़ से भरी थीं। वह सिर से सफेद कफन बांधे भारी पैरों चला जा रहा था। पीछे-पीछे बहिन की लाश और कभी-कभी एक डरावनी दिल कंपा देने वाली आवाज—'राम राम सत्य है! सत्य बोलो मुक्त है !!' रास्ते में एक लड़की के हाथ में राखी देख वह रो पड़ा था तब गाँव के लोगों ने समझाया था 'ये भी तो तुम्हारी ही बहिनें हैं मर्द होकर रोते हो भले आदमी·····!'

श्मशान के पास पहुंचते २ पास की झोंपड़ी से एक चीत्कार निकल कर उसके कानों में भर गया। भैया! भैया बचाओ। दो चीत्कारों के बाद एक दबे भरांये कण्ठ की कम्पती आवाज—ठांय ! किसी ने गोली चलाई। वह झपटा और झोंपड़ी में पहुँचा। वहाँ उसकी आँखों ने देखा—एक अलूहड़ छुई-मुई सी एक लड़की! गाँव के जमींदार की कलाई में जकड़ी हुई। हाथ से मुंह दबा हुआ था और पास में खून से लथपथ छटपटाता हुआ एक मानव शरीर दम तोड़ रहा था। शायद बहिन का एक मात्र सहारा उसका भैया मददगार !

उसने उस अनजान बहिन की लाज बचाने के लिए उसका मुकाबिला किया, जान खतरे में डाली। जमींदार की पिस्टल ने दो बार 'ठांय·····ठांय की आवाज के साथ आग उगली। उसके साथ ही उसका हाथ कन्धे से उखड़ गया था दूसरी गोली से उस नई बहिन की टांग टूटी थी, कितने जोर से वह चीख पड़ी थी—तब पिस्टल वाली कलाई में उसने एक हाथ से वार किया। पिस्टल एक गोली छोड़ती हुई छिटक कर अलग जा पड़ी थी और वह गोली जमींदार की मौत बनकर छाती फाड़ती हुई अन्दर जा बैठी थी। हरे गोबर से लिपा झोंपड़ी का वह आङ्गन खून से लाल होगया। सिसकती, कांपती बहिन ने उसके सूने माथे पर आज के दिन खून का टीका लगा कर उसकी कलाई पर राखी बान्धते हुए कहा था उस बहिन ने—'भैया ! आज एक भैया खोया है, दूसरा पाया है। भूल न जाना माया का यह नया नाता !' उसने अपनी मृत बहिन की आकृति उस नई बहिन के चेहरे पर स्पष्ट होती देखी थी।

जमींदार के खून का अपराधी ठहराया गया। अदालत के कटघरे में हथकड़ियों, बेड़ियों से जकड़ा हुआ खन··खनन·····करता हुआ वह लाया गया। वह मानता था 'सत्य की सदा विजय होती है' वह निर्दोष है ! रुपयों से खरीदे गए विद्वान वकीलों ने उसे खूनी साबित करने के लिए गला फाड़-फाड़ कर सर पटके तब वह कठघरे में खड़ा सोच रहा था—एक बहिन मानवता की भीख मांग रही थी—अनीति, अन्याय जमींदार की पशुता के खिलाफ चीख-चीख कर मदद माँग रही थी, उसने मदद दी है ! क्या यह अपराध है ?

जज के होंठ हिले थे फैसला सुनाने के लिए। उसने और पास में खड़ी माया ने दम साध कर, छाती पर हाथ रखकर फैसला सुना था·····आजीवन कैद !' सारी अदालत गालियों और जयजयकारों से गूंज उठती है—माया दौड़ कर कठघरे से जाते हुए उससे चिपट गई थी। कुछ आदमियों ने आपस में काना-फूंसी की थी। एक सिपाही ने उस माया का हाथ पकड़ कर जमीन पर पटक दिया था। वह चिल्ला पड़ा था इस कमीनी हरकत पर और तब सन्तरी ने बन्दूक का कुन्दा दीवाल से मार कर आवाज दी थी। माया चिल्ला रही थी—भैया ! भैया !! ओ·····भैया !!!

+ + +

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैदी के कानों में सालों पहले की एक परिचित आवाज गूंज उठी—भैया ! भैया !! ओ······भैया !!! उसका एक होंठ दूसरे पर चढ गया, दांत भिड़ गए, सारा शरीर अकड़ता गया उसकी उंगलियाँ उलझ उलझ कर सिर के रूखे बालों को खींचने लगी। एकाएक उसके होंठ खुल गये। हाँफता हुआ वह चिल्ला पड़ा - 'माया ! माया !!'

पानी की रिमझिम को चीरती हुई वह आवाज रात की अन्धेरी से ढकी हुई सेन्ट्रल जेल की दीवारों से टकरा-टकरा कर छितरा गई मा···· या·····!

'क्या है कैदी ?'

'कुछ नहीं सन्तरी ! सपना था !'

दीवाली

[श्री ब्रजभूषण मिश्र]

हम हिन्दुओं के यहाँ त्यौहारों की कोई कमी नहीं। हर एक त्यौहार के अन्तर्गत कोई न कोई खास बात होती है। कोई त्यौहार उपवास का, कोई धर्म का, कोई खाने का और कोई वीर-पूजा का। हर एक उत्सव में कुछ न कुछ शिक्षा भरी रहती है। उसको समझकर उपयोग में लाना हमारा कर्त्तव्य है।

दिवाली का उत्सव हमको एक विशेष सन्देश देता है, वह है सङ्गठन। दिवाली का शब्दार्थ दियों की कतार है। यदि इन मिट्टी के दीयों की जगह काँच के वल्ब लगा कर रोशनी करते हैं तो वह शीतलता, मनोहरता एवं सौन्दर्य नहीं प्राप्त होता। इसमें कुछ कर्कशता की बू रहती है। जरा सी दिये में जरा से तेल और रूई के सदुपयोग से कितना आकर्षक दृश्य सामने उपस्थित हो जाता है ! हमारे सामने कोई चीज तुच्छ नहीं। साधारण चीजों को भी एकत्रित कर सुन्दर रूप दे देना सङ्गठन के तत्त्व को जानने का सबूत उपस्थित करता है। एक नाचीज दीपक के लवर को सङ्गठित कर हम अमावस्या की भीषण काली रात्रि को भी उजेली करने में समर्थ हैं। यह हमारे सङ्गठनशक्ति के महत्व का ज्वलन्त उदाहरण है।

विभिन्न परिस्थितियों में रहते हुए हम इतना तो कर ही सकते हैं कि हर एक मुहल्ले के बालक और युवक प्रतिदिन सायङ्काल को एक खुले मैदान में एकत्रित हों, खेल खेलें, अपने दुःख-सुख की बातें करें, लाठी, गदकाफरी आदि कलाओं को सीखें। जब इस प्रकार के निष्णातों की सँख्या बढ जायगी तो ये कहीं भी रहें सब मिलकर अमावस्या के समान भीषण अन्धकार को भी नष्ट करने में समर्थ हो सकते हैं। अतः इस दीवाली पर इस त्यौहार को सक्रियरूप देना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षयरोग से बच्चों का बचाव

[श्री शुकदेवनारायण]

क्षय रोग जिसको सँक्षिप्त अँग्रेजी में टी० बी० (T. B.) कहते हैं, छूत की बीमारी है और बड़ी खतरनाक है। यह रोग चोर की तरह चुपके-चुपके शरीर में प्रवेश करता है और घुन की तरह भीतर ही भीतर उसे चाट जाता है। जिसको इस रोग ने पकड़ा वह जल्द से जल्द न सम्हला तो उसे मरा ही समझिए, भले ही दवा दारू में उसके हजारों रुपए क्यों न खर्च हो जायँ। पर जल्द से जल्द सम्भलना आसान नहीं है। कहा है, न कि यह मर्ज चोर की तरह चुपके-चुपके लोगों को पकड़ता है और जब तक पहचान में आए न आए ला इलाज हो जाता है। वही खुश किस्मत असाध्य होने के पहले अपने रोग को पहचान पाता है जो अपने शरीर की फुर्ती, ताकत और वजन को तौलता रहता है और उन्हें कमती होता देख किसी तजरबेकार की तुरत शरण लेता है। पर ऐसे लोगों की सँख्या अधिक नहीं होती; हिन्दुस्तान जैसे अनपढ़ और गरीब देश में तो और भी कम।

हल्का बुखार, जरा तेज नाड़ी, सूखा गला, साथ ही सूखी खांसी, रात को सोते हुये पसीना, फिर रात के तीसरे पहर नींद का उचटना और जरा बेचैनी मालूम होना, कभी-कभी शीत का सिहरन, साथ ही तौल और ताकत की लगातार कमी, ये ही क्षयरोग के लक्षण हैं। रोग के आरम्भ में आदमी सोचता है कि गर्मी के कारण योंही जरा थकावट आ गई है। नेक चिन्ता हुई तो वह आईना देखता है और अपने चेहरे की रौनक पर खुश हो जाता है। वह कभी २ मित्रों से भी अपने उचाटपन की शिकायत करता है और सलाह लेता है। सभी कहते हैं - कुछ नहीं है जी ! पेट का सारा फसाद है, कल ठीक हो जाओगे। पर यह कल एक दिन काल के रूप में उसके सामने आ खड़ा होता है, जबकि उसके मुंह से थोड़ा या बहुत खून थूक के साथ आने लगता है और कमजोरी तथा निराशा उसे खाट से साट देती है। फिर जान और माल दोनों से हाथ धो बैठता है।

ऐसा भयङ्कर है यह क्षय-रोग और ऊपर का वर्णन केवल उसके एक रूप का ही है। सर्वप्रथम यह रोग कहां और कब हुआ यह कहना कठिन है। हिन्दुस्तान में तो प्राचीनकाल से किसी न किसी रूप में इसका प्रवेश है। वैदिक साहित्य में इसका उल्लेख है। धन्वन्तरि के काल में भी इस रोग का प्रसार था। बैबीलोन, मिश्र और यूनान के प्राचीन ग्रन्थों में भी इस रोग का वर्णन मिलता है। आज कल भी सर्वत्र यह रोग होता है, हाँ कहीं कम और कहीं ज्यादा। इस रोग के प्रसार के सम्बन्ध में (पब्लिक हेल्थ कमिश्नर विद दी गवर्नमेंट) ने अपने १९३२ के अङ्क में लिखा है—क्षय-रोग प्रत्यक्ष रूप से भारत के गाँवों में फैल गया है। मुख्यतः बङ्गाल, मद्रास, पञ्जाब, बिहार और उड़ीसा प्राँत अधिक आक्रान्त हैं। फेफड़े का क्षय (राजयक्ष्मा , सँयुक्त प्रदेश और बम्बई को छोड़ कर अपने अन्य रूपों से अधिक व्यापक है। मध्यप्रदेश में रोग का कम प्रसार ध्यान देने योग्य है और शायद इसका कारण बस्ती का दूर-दूर होना तथा आवागमन कठिनाई का होना है।

"Tuberculosis is evidently very wide spread throughout the villages of India but is specially serious in Bengal, Madras the Punjab, Bihar and Orisa. Pulmonary Tuberculosis

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

seems to be much more common than extra pulmonary types except in U.P. and Bombay. The low incidents in C. P. is remarkable and is perhaps associated with the sparse distribution of the population and with defective means of communication. Tuberculosis is well known to be exceedingly prevalent in cities and large towns but little is known as to its incidence in rural areas. The evidence of the dispensary doctors goes to show that the disease is very widely disseminated throughout India. From other sources of information it seems likely that the disease is increasing steadily and rather rapidly. The estimate of just over two million cases of Tuberculosis in India as a whole is probably too low; every large town is known to be very heavily infected and therefore an estimate which is based on the incidence of the disease in agricultural villages must be unduely favourable."

" -- Public Health Commissioner with the Government.

यूरोप के अनुसन्धान की ताकत जब बढी तब वह क्षय रोग द्वारा भीषण नर सँहार देखकर इसकी उत्पत्ति के मूल कारण की खोज में लगा। १८८२ ई० में एक जर्मन डाक्टर राबर्टकोश ने पता लगाया कि क्षय-रोग एक प्रकार के कीटाणु के आक्रमण के कारण होता है। इस कीटाणु की शकल लम्बे और कुछ मुड़े हुए तिनके जैसी होती है और इतनी छोटी होती है कि बिना अच्छे खुर्दबीन के देखी नहीं जा सकती। अङ्गरेजी में ऐसे कीटाणु को बैसीलस (Bacillus) कहते हैं। जहां इन कीटाणुयों का आक्रमण होता हैं वहाँ छोटे-छोटे दाने से उभर आते है जिन्हें अङ्गरेजी में ट्यूबर्क्स (Tubercles) कहते हैं। इसलिए क्षय रोग के कीटाणु को हम ट्यूबर्क्ल बैसीलस या टी० बी० कहने लगे हैं। क्योंकि ये लम्बे होते हैं और जहाँ आक्रमण करते हैं वहां छोटे २ दाने जैसा उभार पैदा करते हैं।

इन कीटाणुओं में खुद चलने फिरने की ताकत नहीं होती। हवा के सहारे वा किसी चीज से सटकर ये शरीर में प्रवेश करते हैं। सर्दी बर्दाश्त करने की इनमें आश्चर्य-जनक शक्ति होती है। ऐसी शक्ति कि इन्हें शून्य डिग्री से भी कम ताप में रखदो तोभी जीवित पाओगे। डाक्टर स्वीथिन वैक्म वे ४२ दिनों तक इन्हें द्रवित वायु (liquid air) में रखा और फूलते फलते पाया। पर गर्मी इनको प्रिय नहीं हैं। डाक्टर कोश और रैन्सम ने अपने प्रयोगों से सिद्ध कर दिया है कि कुछ ही घण्टों की तेज धूप इन कीटाणुओं को निष्क्रिय बना देती है।

इधर की खोज में पता लगा है कि क्षय रोग के कीटाणु बनस्पति जगत् के प्राणी हैं: कुकुर मुत्ते और खूनी के वँश के। खूनी और कुकुर मुत्ते जैसे उद्भिज सर्दी और नमी में पैदा होते हैं—धूप से बिलकुल दूर। इनमें हरापन (Chlorophyll) नहीं होता हैं। सर्दी, नमी और अन्धेरा इनके अनुकूल है पर खुश्की गर्मी और सूर्य की किरण इनके प्रतिकूल क्षय-रोग के कीटाणुयों की हालत भी ठीक ऐसी ही है। इनके भी भोजन लेने, पचाने और बढने का तरीका वनस्पिति-जगत् के और प्राणियों से भिन्न होता है। पैरासाईटस (Parasites) होते हैं और दूसरे २ प्राणियों के शरीर में प्रवेश कर उन के जुटाये हुए आवश्यक खाद्यों को आप डकार जाते हैं जब तक कि उन अभागे प्राणियों के जीवन का अन्त नहीं हो जाता।

क्षय-रोग के कीटाणु सँसर्ग में आकर मनुष्य शरीर के प्रत्येक अवयव (Tissue) तथा अङ्ग (Organ)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर आक्रमण करते हैं। जिस अङ्ग पर उनका आक्रमण हुआ उस अङ्ग के नाम से रोग विख्यात हुआ। फेफड़े को इन कीटाणुओं ने दूषित किया तो इसे फेफड़े का क्षय (Pulmonary tuberculosis) कहेंगे। क्षय के इस रूप से हम इतने परिचित हो गए हैं कि क्षय रोग कहने से उसके इस रूप को ही समझते हैं यद्यपि इसे पुस्तकों में राजयक्ष्मा कहा गया है। लिम्फ (lymph) में इन कीटाणुओं का आक्रमण हुआ तो गांठ क्षय (glandular tuberculosis) होता है। आंत में आक्रमण होने से आंतक्षय (intestinal tuberculosis) रीढ़ में सुषुम्ना क्षय (tuberculosis of the spinalcord), मस्तिष्क में मस्तिष्क-क्षय (Tubercular minigites) और हड्डी में ममरखा (Ricketes) कहलाता है।

यद्यपि राजयक्ष्मा से बच्चे और बूढ़े कम पीड़ित देखे गए हैं तथापि क्षयरोग से उन्हें मुक्त समझना भयङ्कर भूल है। मद्रास के ऐन्टीसेप्टिक ने अपने क्षय-अङ्क १९३७ में लिखा है कि आज भारत में जितने शिशु मरते हैं उनमें आठ फी सदी मौत का कारण क्षय रोग है। जन्म के बाद प्रायः आठ मास तक क्षय बच्चों को नहीं पकड़ता है। आठ से दो वर्ष तक के बीच में शरीर इस प्रकार का हो जाता है कि क्षय-रोग के कीटाणु शरीर में प्रवेश कर सकें। पहले पांच वर्ष तक बच्चों में क्षय-रोग के निम्न भेद पाये जाते हैं:—

टयूबरकुलर मेनिङ्गजाईटिस (Tubercular meningitis) का स्थान पहला है। इससे पाँच वर्ष की आयु तक के शिशुओं की मृत्यु अन्य क्षयों की अपेक्षा तीन गुनी अधिक होती है। कण्ठमाल गले में सूजन तथा गाठें सूज जाना, हड्डियों का सड़ना और अत्यधिक सर दर्द मेनिङ्गजाईटिस क्षय के लक्षण हैं। इससे पेट आदि में भी छोटी-छोटी गांठें बन्ध जाती हैं। यह साँस अथवा दूध से क्षय के कीटाणुओं के प्रवेश करने से होता हैं। पेट का क्षय (Abdominal tuberculosis) भोजन के दूषित होने से होता है। दूध में क्षय-रोग के कीटाणुओं के मिलने से बच्चे इस रोग से पीड़ित होते हैं। इससे गर्दन में गिल्टियाँ निकल आती हैं तथा अन्य स्थानों में सूजन हो जाती है। दूध पचता नहीं और बच्चा धीरे २ सूखकर मर जाता है। पहले पाँच वर्ष तक फेफड़े के क्षय (Pulmonary tuberculosis) का रूप भिन्न होता है। दो वर्ष की अवस्था में टयूबरकुलस ब्रोंकाईटिस (Tuberculus bronchitis) बदलकर ब्रोंको नीमोनिया (Broncho Pnemonia) हो हो जाता है। इसका एक छोटा रूप होता है जिससे फेफड़े में में कभी-कभी छेद हो जाता है। इसे ऐक्यूट केसीयस नीमोनिया Acute caseous pnemonia-with or without acute cavity formation कहते हैं। तीसरा chronic firoid Pnemonia कहलाता है। इससे फेफड़े में अनेक छोटे २ छेद हो जाते हैं। इसके चौथे रूप को Caseous tuberculus कहते हैं। यह फेफड़े के ऊपर ही होता है (at the hilums of the lungs) और धीरे-धीरे समूचे फेफड़े को घेर लेता है। बच्चों में क्षय के और रूप छिपे हुए होते हैं। यह छिपा हुआ क्षय (Latent tuberculosis) आप से आप अच्छा हो जाता है अथवा बीज की तरह बहुत दिनों तक रहता है तथा अनुकूल अवसर आने पर बढ़ जाता है। पर बचपन में ही शरीर कमजोर हो जाने पर अथवा निमोनिया, खांसी, टांसिल, आंव आदि बीमारियों के कारण इनका लक्षण स्पष्ट हो जाता है। जिस अङ्ग में क्षय के कीटाणु होते हैं उस अङ्ग में सूजन पीड़ा आदि होती है और बच्चा मर जाता है।

क्षय रोग का प्रसार बच्चों में बहुत ज्यादा है। लेकिन इनका लक्षण जवान आदमी के क्षय से भिन्न होता है। क्षय-रोग की शङ्का शिशु के जन्म से ही नहीं की जा सकती। जर्मनी के प्रसिद्ध डाक्टर प्रोफेसर बर्चु ने सिद्ध किया है कि यह रोग वँशगत नहीं है। अगर मां को क्षय है तो शिशु को उसके सम्पर्क से यह रोग हो जाया करता है। पर, अगर विशेष सावधानी रखी जाये तो मां के दूध से यह रोग नहीं भी हो सकता है। माँ के स्तन का दूध बहुत ही कम क्षय रोग के कीटाणुओं में से दूषित होता है। भले ही माँ क्षय-रोग से क्यों न पीड़ित हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Antiscaptic tuberculosis number 1937)

बच्चों में क्षय के कीटाणुओं के प्रवेश करने के दूसरे कारण हैं। आमाशय में यह दूषित भोजन से पहुंचता है। फेफड़े आदि में (Respiratory tract), खांसने, छींकने तथा उस आदमी से बातें करने जिसके शरीर में क्षय-रोग के कीटाणु प्रविष्ट हो गए हैं यह कीटाणु प्रवेश करता है। धूल से ये कीटाणु बड़ी आसानी से इधर उधर फैलते हैं। नाक, कान, आँख, होंठ द्वारा चुम्बन, सूंघने, सांस लेने और चमड़े से ये कीटाणु शरीर में प्रवेश करते हैं। बहुत से बच्चे कुत्ते, बिल्ली आदि से बहुत खेलते हैं। क्षय के कीटाणु इन जानवरों के रोएँ और पैर में सट कर बच्चों के शरीर तक पहुँच जाते हैं। ये जानवर सर्वत्र जाते हैं और थूक आदि बलगम पर पैर रखते हैं। वहां से इन जानवरों के शरीर में कीटाणु सट जाते हैं। शैशव काल में शिशु हर वस्तु को मुँह में रख लेता है। उनके इधर-उधर पड़े होने से उनका सम्पर्क बहुधा क्षय रोग के कीणुओं से हो जाता है।

बच्चों में क्षय-रोग होने के और भी कारण हो सकते हैं। एक ही घर में अनेक छोटे छोटे बच्चे अनेक लोगों के साथ सोते हैं। ऐसे घरों में स्वच्छ हवा का अभाव होता है। जाड़े के दिनों में लोग खिड़की आदि बन्द रखते हैं। यह तो बात हुई घरों की। बच्चों को बराबर बहुत से लोग गोद में रखते हैं। इससे उसका बहुत सा आक्सीजन (Oxygen) वे लोग ले लेते हैं। जब दो आदमी पास पास बैठते हैं तो आक्सीजन Oxygen के बटवारे के लिए उन दोनों में प्रतियोगिता होती है और उन में जो मजबूत रहा उसे आक्सीजन अधिक मिलता है। इस कारण विदेशों में बच्चों को गाड़ी में रखकर घुमाने की प्रथा प्रचलित की गई। हमारे यहाँ स्कूल के होस्टलों में भी एक कमरे में ठसाठस विद्यार्थी भर दिये जाते हैं। इससे उस कमरे की सफाई में कमी आ जाती है और अधिक आदमी साथ सोने से एक की साँस दूसरे के शरीर में प्रवेश करती है। जब कभी हमारे शरीर में आक्सीजन (Oxygen) की कमी होती है हमारे शरीर के कीटाणु बाहरी दूषित कीटाणुओं से कमजोर पड़ जाते हैं और उनके कमजोर पड़ने से हमारे शरीर में अन्य कीटाणु रोग फैलाते हैं। शरीर की स्फूर्ति और ओज अगर ठीक रहे तो शरीर बाहरी कीटाणुओं से रक्षित रहेगा। शरीर की दुर्बलता भी रोग का कारण है। रोग फैलने का दूसरा कारण पोषण का अभाव है। लोगों को गरीबी के कारण पौष्टिक भोजन नहीं मिलता। गाँव के लाखों बच्चों को दूध-दही मयस्सर नहीं होता। मुश्किल से उन्हें दो जून रोटी नसीब होती है। उन्हें बहुत अधिक अन्य काम करने पड़ते हैं जिससे उनकी स्फूर्ति (Energy) खर्च होती है और शरीर दुर्बल होता है। पोषण का अभाव गाँव वालों को ही नहीं है, शहरों में भी लाखों बच्चे पाये जाते हैं जिन्हें पौष्टिक भोजन नहीं मिलता। स्कूलों के छात्रालयों में बहुत कम बच्चे पौष्टिक भोजन प्राप्त करते हैं। फल तो हमारे यहाँ के बच्चे अभाव के कारण खाते ही नहीं। अगर कोई अपने भोजन में पौष्टिक पदार्थों का समावेश करना चाहे भी तो उसके मार्ग में बड़ी २ कठिनाइयाँ हैं। आज विशुद्ध खाद्य पदार्थों का नितान्त अभाव है। पैसे के कारण लोग थोड़ी चीजों में बहुत सी चीजें मिलाकर बेचते हैं। गाँव २ में मक्खन बनाने की मशीनों का प्रचलन हो गया है। इससे शुद्ध दूध की बड़ी कमी होगई है। दूध ही नहीं घी, दही, तेल, आटा, चीनी, चावल सब में मिलावट पाई जाती है। फिर जीभ के स्वाद के कारण भोजन अनेक ढङ्ग से पका कर बिगाड़ दिया जाता है। पोषण का अभाव और दूषित भोजन बच्चों में क्षय-रोग फैलाने के मुख्य कारण हैं।

बाल-विवाह भी क्षय-रोग के कई कारणों में एक है। बचपन में विवाह कर देने से शारीरिक कमजोरी बढती है और सन्तान भी दुर्बल होती हैं। क्षय-रोग दुर्बलता का रोग है। इसलिए दुर्बल बच्चे इसके कीटाणुओं से शीघ्र पीड़ित हो जाते हैं।

शारदा बाल-विवाह कानून के अन्तरगत बचपन के अन्दर १८ वर्ष के लड़के और १४ वर्ष की लड़कियाँ ली गयी हैं। इस लेख में बचा शब्द से १८ वर्ष के लड़के और १४ वर्ष की लड़कियाँ समझनी चाहियें।

हम देखते हैं कि जल-वायु में क्षय-रोग के कीटाणु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्याप्त हैं। कीटाणुओं से बचना तो प्रायः असम्भव है। हवा के कण-कण में सहस्रों कीटाणु विद्यमान हैं। पर कीटाणुओं की उपस्थिति रोग का अनिवार्य कारण नहीं है। हम अपने शरीर को ओजपूर्ण रखकर इनसे बच सकते हैं। खुली हवा में सोना रोग को रोकने में सहायक होता है। आज विदेशों में बच्चों को इस रोग के चँगुल से छुटाने के लिये खुली हवा में अनेक स्कूल बन रहे हैं। ऐसी बहुत सी सँस्थाएं उन देशों में बनाई गई हैं जहाँ बच्चे खुली हवा और धूप में अपना काफी समय बिताते हैं। हमारे देश में भी मजदूर श्रेणी के लोगों में क्षय-रोग अधिक नहीं पाया जाता। उनका भोजन पौष्टिकता से शून्य होता है पर उनका शरीर शहर के लोगों से पुष्ट और मजबूत होता है। इसका कारण है—वे खुली हवा में सोते हैं उनके शरीर में अच्छी तरह धूप और हवा लगती है। इन्हीं प्रकृति प्रदत्त तत्वों पर उनका जीवन टिका हुआ है।। खुली हवा में आक्सीजन काफी मात्रा में मौजूद है और शरीर को यह पर्याप्त मात्रा में मिलता है। क्षय के कीटाणु शरीर का आक्सीजन ले लेते हैं। पर अगर हमें शरीर की आवश्यकता के अनुसार आक्सीजन मिलता जाये तो हमें अधिक हानि नहीं होगी। हवा में दूसरी गैस है—ओजोन। यह गैस खुली हवा में सुबह के समय मिलती है। समुद्र के किनारे इसका अनुभव कुछ देर तक किया जा सकता है। यह गैस शरीर के लिए लाभदायक मानी गई है। क्षय-रोग के रोगियों को डाक्टर इस हवा के लिए गाँव और समुद्र के किनारे लेजाने को कहते हैं। इसके अलावा हमारे शरीर में अन्य कई प्रकार की गैसों की जरूरत होती है जो हमें खुली हवा में अनायास ही मिल सकती हैं। दूसरी सुविधा सूर्य की किरण से मिलती है। सूर्य की रश्मियों में कीटाणुओं को नाश करने की बड़ी ताकत है। सूर्य की रश्मियाँ पानी में आक्सीजन पैदा करती हैं। शरीर को भी उनसे आक्सीजन और विटामिन (Vitamin) मिलते हैं। बनस्पतियों में हरा रङ्ग सूर्य की रश्मियाँ पैदा करती हैं, जिनमें प्रचुर मात्रा में विटामिन (Vitamin) विद्यमान हैं। बहुत से डाक्टरों के मत से हरा रङ्ग क्षय के कीटाणुओं को नाश करने में समर्थ है। भोर में सूर्य की किरण में बच्चों को लिटाना, घुमाना दौड़ाना लाभदायक है। छोटे बच्चों को तेल लगाकर माताएँ धूप में लिटा देती हैं। उनका शरीर पुष्ट होता है। क्षय रोग के रोगियों को डाक्टर समुद्र के किनारे और पहाड़ों पर जाने को कहते हैं। वहां उन्हें वे शाम सुबह इसी उद्देश्य से टहलने को कहते हैं कि उनके शरीर पर सूर्य की रक्तिम रश्मियाँ पड़ सकें। विदेशों में सूर्य की रक्तिम रश्मियों को पाने के लिए अनेक वैज्ञानिक प्रबन्ध हैं। स्वीटजरलैंड में बहुत से सेनोटौरियम (Sanctorium) बने हैं, जहाँ रोगियों को सूर्य की रक्तिम किरणों से तपाया जाता है। सूर्य से हमें सात रङ्ग की रश्मियाँ प्राप्त होती हैं। ये रश्मियाँ हमारे शरीर तथा हमारे भोजन, वस्त्र, जल सब को शुद्ध करती हैं तथा कीटाणुओं को मारती हैं।

(क्रमशः)

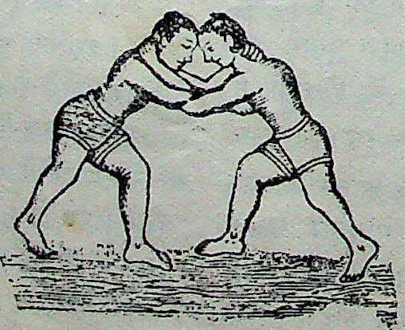

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्देश

'रहबर'

घूमते २ हम हिमालय की उस चोटी तक जा पहुँचे, जिसके सिर पर पहुँचने के लिए, आदमियों ने कितने ही जतन किए, लेकिन, उसके निर्मल पाँव उसे छू तक न सके। वहाँ ऊपर-नीचे चारों ओर पहाड़ों के बड़े-बड़े सिलसिले थे, साफ-स्वच्छ श्वेत, बर्फ का रमणीय दृश्य था। हम हिमालय की गोद में, बैठे उस महान् चोटी की ओर देख रहे थे, और ज्यों २ हम उस पावन दृश्य को देखते थे हमारा आश्चर्य शनैः २ बढ़ता जाता था कि हमारे एक साथी ने चोटी को सम्बोधन कर पूछा,—"ऐ महान् हिमालय की महान् चोटी माउन्ट एवरेस्ट! तूने तमाम दुनियाँ देखी है, तू संसार के आरम्भ से इसी तरह गरदन उठाये खड़ी है, इनसान ने कई मरतबा तेरे शिखर पर पहुंचने का दुरुत्साह किया, किन्तु वह सफल न हो सका; तू अजय है। लेकिन इस भारतवर्ष पर कितने ही आक्रमण हुए, कितनों ही ने इसे पराजित किया और कितनों ही का इस पर शासन हुआ। अस्तु, यह सदियों से गुलाम चला आता है और आज भी गुलाम है। क्या तू जो हमेशा स्वाधीनता में पली है और अब भी स्वाधीन है अपने प्यारे भारतवर्ष पर तरस न खायेगी, इसे स्वाधीनता का मार्ग नहीं बता सकती?"

हिमालय की वह भव्य, प्रशान्त चोटी गम्भीर भाव से मुसकुराई और फिर इस प्रकार बोली, 'ऐ भारत के नवयुवक! घबराने की कोई बात नहीं, संसार में यह परिवर्तन, आते ही रहते हैं और आते ही रहेंगे। संसार के लम्बे जीवन में, यह थोड़ी सी सदियाँ तो क्षण मात्र हैं। देश की आत्मा अमर होती है, उसे कोई जीत नहीं सकता, पराजित नहीं कर सकता, उसका अस्तित्व मिटा नहीं सकता।

मेरी स्वतन्त्रता इस बात का उज्ज्वल प्रमाण है कि मैं देश की आत्मा हूँ। एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष ही नहीं, तमाम देशों व जातियों की ऐसी ही निश्चल, अमर और अजीत आत्मा है। उस पर कोई भी शक्ति विजय प्राप्त नहीं कर सकती। हो सकता है, कि कोई जाति, अपनी कला-कौशल से, शारीरिक शक्ति से या बुद्धिबल से दूसरी जाति के शरीर पर अपना अधिकार जमा ले, उस देश के धन, दौलत और सम्पत्ति को अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करती रहे।

लेकिन यह लूट खसोट यह अन्याय और जबरदस्ती, हमेशा के लिए नहीं चल सकती। देश की आत्मा में, अपने आपको जीवित रखने की शक्ति है और जाति का शरीर ही इस आत्मा का घर है. इस घर पर कोई अपना अधिकार कुछ देर के लिए तो भले ही जमा ले, किन्तु आत्मा को यह स्वीकार नहीं, कि वह अपना यह घर सदा के लिए उसी को सौंप कर शाँत हो जाय चुपचाप बैठ जावे। वह इसको दूसरे के अधिकार से छुड़ाने के लिये, प्रयत्न करती ही रहती है। उसे इसके लिए, दुःख तकलीफ और कष्ट सब कुछ उठाना पड़ता है। मगर वह अजीत है इन कष्टों की परवाह नहीं करती है और किसी दशा में भी, अपनी हार नहीं मानती. कोशिश नहीं छोड़ती, अपने अधिकार को खोया हुआ नहीं समझती। आखिर एक दिन आता है, कि उसे विजय प्राप्त होती है, अपना खोया हुआ अधिकार फिर मिल जाता है।

संसार में जितने लड़ाई झगड़े और रक्तपात होते हैं उनका एक मात्र यही कारण है कि स्वार्थी मनुष्य और स्वार्थी जातियाँ, दूसरी जातियों का अधिकार छीन लेती हैं। किन्तु उन जातियों की स्वतन्त्र आत्मा, उस अधिकार को वापिस लौटाने के लिए बेचैन रहती है और उसकी बेचैनी उस समय तक दूर नहीं होती, जब तक वह उसे लौटा नहीं लेती। इसके लिए उसे जो लड़ाई-झगड़ा करना पड़ता है वह उसके करने में न्याय युक्त होती है। लेकिन दूसरी जाति, जिसने उसके शरीर पर अधिकार जमाया है - वह उस अधिकार को कायम रखने के लिये, जो कुछ भी करती है सरासर अत्याचार होता है। और अत्याचार कभी फल फूल नहीं सकता।

आज संसार में वे साम्राज्य, जिन्होंने अपने स्वार्थ के लिए, दूसरे देशों को अपने माल की मण्डी बनाया हुआ है, वे कभी जरूर नष्ट होंगे। लेकिन उन पराधीन देशों की जातियाँ आज भी अमर हैं, उनकी आत्मा अजित है। वे जातियाँ अमर रहेंगी यद्यपि उनके ये साम्राज्य मिट जायेंगे, और मिट रहे हैं। क्या हुआ, अगर इस समय भारतवर्ष गुलाम है, इसकी आत्मा सजग है, वह अपनी स्वतन्त्रता के लिए, जो जद्दोजहद कर रही है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह सत्य पर है और इस सत्य के लिए बलिदान देना उसने सीखा है। वह अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता को एक न एक दिन जरूर प्राप्त कर लेगी। तुम नौजवान हो, तुम्हारे शरीर में शक्ति है, ताजा खून है, दिलों में वलवले हैं, जाति की आत्मा तुम्हारा ही मुंह देख रही है। तुम्हीं उसका सर्वस्व और शक्ति हो उठो, अपना कर्त्तव्य पूरा करो। मैं तुम्हारी खोई हुई स्वतन्त्रता को अपनी गोद में लिये बैठी हूं संसार की कोई शक्ति, इसे मुझसे छीन नहीं सकती। तुम अपने सीने में उत्साह भर कर उठो, मेरे इस सन्देश को घर घर पहुंचा दो। जब तुम, इस सन्देश को पहुंचा दोगे, सब नौजवान एक स्वर होकर और एक मन से, इस स्वतन्त्रता की रक्षा का प्रण ले लेंगे। इसके लिये तन, मन, धन का बलिदान देने की प्रतिज्ञा कर लेंगे, तो मैं तुम्हारी यह स्वतन्त्रता तुम्हें लौटा दूगीं—

दूसरों का मुंह ताकने से, केवल बातें करने से, कुछ नहीं बनता, और निराश होना तो सबसे बड़ा पाप है। तुम इस निराशा को छोड़ो, और आशावादी बनो और सोचो कि तुम कभी गुलाम नहीं थे, और न कभी गुलाम हो सकते हो, मैं तुम्हारी स्वतन्त्रता का चिन्ह हूँ। किस में यह शक्ति है जो मुझ पर विजय प्राप्त करे। केवल तुमही साहस हार बैठे हो। इस साहस को एक बार फिर धारण कर लो, बस तुम स्वतन्त्र हो। जाओ मेरे इस सन्देश को देश के कोने २ में पहुँचा दो और युवकों को, अपने कर्त्तव्य पालन के लिए तैयार करो। यह तुम्हारा काम है। अगर इससे चूकोगे तो अपने देश को अपने आपको धोखा दोगे।" यह कहकर वह महान चोटी सदा के लिए चुप हो गई। हमने उसकी महानता को इन शब्दों में देखा और नतमस्तक हो प्रणाम किया।

सन्त विनोबा

[श्री जयचन्द जैन वर्धा]

श्री आचार्य विनोबा जी इस गांधी युग की सन्तमण्डली के एक महान् रत्न हैं। विनोबा जी को नाम से काम नहीं है। यही कारण है कि सारा जीवन देश कार्य में बिताने पर भी वह अखबारी दुनिया से दूर रहे। उनको बहुत ही कम लोग जानते हैं लेकिन जो जानते हैं वे उनका लोहा मानते हैं और सदा के लिए उनके भक्त हो जाते हैं।

विनोबा जी का जन्म बम्बई के निकट गागादे ग्राम में 'भावे' नामक महाराष्ट्रीय कुल में हुआ है। किंतु उनकी सारी शिक्षा 'बड़ौदा' में ही हुई है। उन्होंने चित्रकला का विशेष अभ्यास किया है किंतु उनकी रुचि गणित की ओर ही रही है।

उस जमाने में लोकमान्य तिलक के विचारों का उन पर काफी प्रभाव पड़ा। और जब वङ्गभङ्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का आन्दोलन चला तो वे बहुत उत्तेजित हुए थे। और उन्होंने श्री छत्रपति शिवाजी के गुरु रामदास की बात ब्रह्मचारी रहकर देश सेवा करने की प्रतिज्ञा ली जिसे आज तक निभाते चले आ रहे हैं।

विद्यार्थी दशा में इनका ध्यान धार्मिक और अध्यात्मिक विषयों की ओर आकर्षित हुआ और उन्होंने मराठी तथा संस्कृत ग्रन्थों का खूब अध्ययन किया। सँसार से विरक्त होकर, देश-सेवा की धुन में प्रथम तो वे हिमालय की ओर भाग निकले परन्तु वहाँ उनको वांछनीय शांति तथा सन्तोष न मिला। उसी समय उन्होंने महात्मा गांधीजी के साबरमती आश्रम का नाम सुना और वे वहां आकर बस गए। उनका स्वास्थ्य तब भी कोई अच्छा न था पर आत्मबल पर उन्होंने आश्रम के कठोर शारीरिक श्रम सहर्ष सहन किए।

सन् १९२१ में विनोबा जी वर्धा आए और सत्याग्रहाश्रम की स्थापना की तभी से आप आचार्य पद से विभूषित हुए हैं। सत्याग्रहाश्रम के विसर्जन के बाद आप वर्धा से दो मील पर नालवाडी ग्राम में एक मामूली बाँस की कुटिया में बस गए। आपने यहां पर खादी केंद्र की स्थापना की है और आज यहां चर्मालय, दुग्धालय आदि आदर्श सँस्थाएं आपके नेतृत्व में चल रही हैं। इसके पश्चात् से स्वास्थ्य सुधार के लिए आप वर्धा से ६ मील पर पौनार ग्राम में नदी तट पर, रमणीय प्रपात के निकट सुन्दर अट्टालिका में रहने लगे। गत तीन वर्षों से आप यहाँ पर भी कुछ न कुछ करते ही रहते हैं। आपने यहाँ पर भी खादी केंद्र की स्थापना की है। आप रोजाना कुछ समय देहात के अशिक्षित बच्चों, बूढों को पढाने में खर्च करते हैं। आप एक आदर्श शिक्षक हैं।

विनोबा जी में आध्यात्मिकता कूट-कूट कर भरी हुई है। इसलिए नवआगन्तुक को वे रूखे से प्रतीत होते हैं। उन्होंने गीता के तत्वों को समझ कर, उनपर अमल भी किया है। आपके विचार मौलिक और मार्मिक हैं। गांधीवाद के प्रकांड विद्वान हैं, यही कारण है कि गांधी जी समय २ पर आपकी सलाह लेते रहते हैं। गोया आप गांधी जी के दायें हाथ हैं। श्री विनोबाजी व्यवहारदक्ष सन्त हैं इसीलिए खादी के कार्य को इस सफलता से कर सके हैं और आज भी नए-नए आविष्कारों में लगे रहते हैं।

विनोबा जी शहरों से दूर रहना पसन्द करते हैं। उनके जीवन का उद्देश्य देश सेवा यानी ग्रामोद्धार है और जीवन बहुत ही सादा है। आप एक देहाती की जिंदगी बसर करते हैं। सिर्फ एक धोती पर पञ्जे पर दिन काटते हैं। वे एक हाथ में तकली और दूसरे हाथ में गीता लेकर गाँवों में पैदल ही घूमते रहते हैं। उन्होंने मराठी में कुछ लेख भी लिखे हैं जिनका सँग्रह छप चुका है। उनको गीता ही एक प्यारी चीज है।

गत राष्ट्रीय आंदोलनों में उन्होंने नागपुर तथा पिंपलनेर में प्रमुख भाग लिया था और दो बार जेल यात्रा भी कर चुके हैं। इस समय आप की आयु ४६ वर्ष की है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

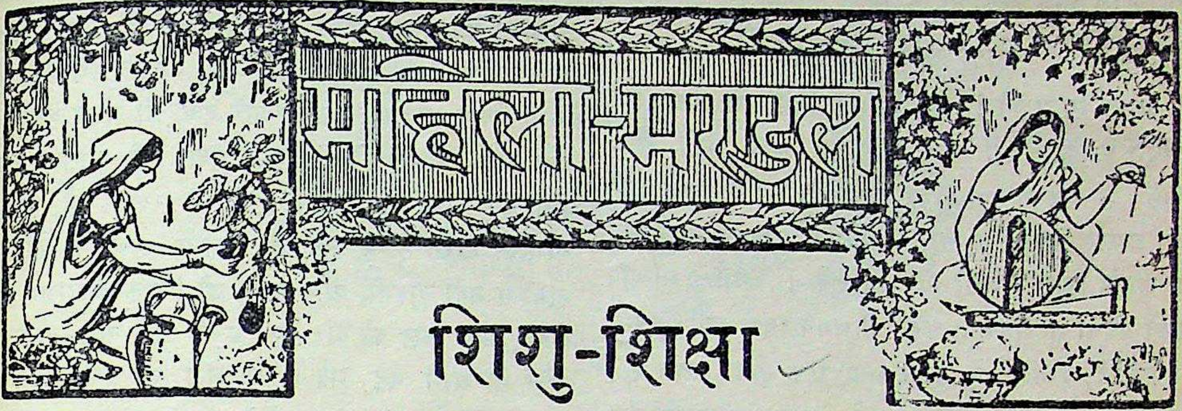

शिशु-शिक्षा

[श्री कृष्णजसराय बी० ए०, एफ० टी० एस०]

[गताङ्क से आगे]

शिक्षा व वस्तु निरीक्षण

बालकों को कभी-कभी बड़े-बड़े बाजारों, नुमाइशों, मेलों, कारखानों आदि में अवश्य ले जाया करें। बच्चा जो जो बातें पूछे उसका प्रेम से उत्तर दिया करें। साथ ही बच्चे की मानसिक व स्मरण शक्ति बढाने के लिए घर पर आकर वे सब बातें जो वहां हुई थी पूछो और लिखना जानता हो तो लिखवाओ। कई बालक साथ गए हों तो एक रोचक खेल के रूप में वे बातें पूछना एक प्रकार का मनो-विनोद बन जाता है।

खेल का कोई नाम रखलो, जैसे 'आंखों का खेल'। अब बच्चों से कहो कि देखो आंख रखते हुए भी सँसार में दो प्रकार के आदमी होते हैं, एक जिनको दिखाई देता है, दूसरे वे जिनकी आँखें खुली रहने पर भी दिखाई नहीं देता। हम अभी यह बात तुम्हें समझावेंगे। जो सब से अधिक चीजों के नाम जो तुमने देखी हों लिखेगा वही जीतेगा, बस वही आँख खोलकर चलने वाला माना जावेगा और बाकी आँखें बन्द करके चलने वाले माने जावेंगे। साथ ही कभी २ समय भी नियत कर देना चाहिए जैसे १५ मिनट या आध घण्टा, इस प्रकार करने से जल्दी व समय के अनुसार विचार व स्मरण करने की आदत होगी।

जब बालक जरा और बड़ा होकर अधिक समझदार हो जावे उसे प्रेम के साथ अपनी स्थिति व परिस्थिति का ज्ञान अवश्य करादो। उसे बात चीत द्वारा बताओ—(क) अपने कुटुम्ब की सब बातें। (ख) अपने पड़ोसियों की बातें (यह ध्यान रहे कि पड़ोसियों के प्रति कभी कोई बुराई की बात बच्चे को न बताओ) बातें प्रेम व सहानुभूति बढाने की हों। (ग) अपने मुहल्ले का हाल। (घ) अपने ग्राम का हाल। (ङ) अपने देश का हाल। (च) फिर पृथ्वी भर का हाल शनैः शनैः बतलाओ।

ये सब बातें इस प्रकार बताई जावें कि वे रोचक और शिक्षाप्रद भी हों और बच्चे के हृदय व मन पर उनका प्रभाव भला ही पड़े। सब के साथ बिना किसी भेदभाव के सहानुभूति व प्रेम का भाव उसके हृदय में जमे। उसको यह चाव लग जावे कि मैं कब बड़ा होऊँ और सबके साथ प्रेम का व्यवहार उनकी सहायता व सेवा कर सकूं। ऐसा करने में आप नकशों व चार्टों का सहारा ले सकती हैं। अपने गली, मुहल्ले, ग्राम व शहर तो बच्चों को कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी अपने साथ लेजाकर भी दिखा सकती हैं।

शिशु और नौकर

परन्तु माता जी! अमीर आदमियों से मेरा यह निवेदन है कि नौकरों द्वारा वह यह कार्य बच्चों से न करावें। मैं खूब जानता हूँ कि नौकर अमीरों के बच्चों को किस प्रकार रखते हैं। मारना, पीटना, झुड़कना, डराना यह उनके लिए मामूली सी बात है। अमीर माँ-बाप अपने बच्चों से बातचीत करने में समय व्यर्थ नष्ट करना समझते हैं; इसलिये वे उनके लिए एक नौकर रखते हैं। यही कारण है कि अमीरों के बच्चे अधिक बिगड़ते हैं। नौकरों की बुरी आदतें बच्चे सब सीख ही नहीं लेते किन्तु नौकर अपने स्वार्थवश उनको खास तौर पर सिखाते हैं जैसे सिग्रेट पीना। बच्चा पीवेगा तो नौकर के भी हाथ आवेगा। इसी प्रकार और भी। अतः इस प्रथा को परिवर्तन करना ही होगा तभी अमीरों के बच्चे सुधर सकेंगे। कारण कि जो अमीर इस बात को समझ जावें तो वे अपने बच्चों के लिए ऐसी स्थिति व परिस्थति पैदा कर सकते हैं कि जिससे उनके बच्चे ही नहीं गरीबों के बच्चे भी उनसे लाभ उठा सकें। माता जी! इसी कारण तो पहले हमने आप से कहा था कि जो मुहल्ले में धनाढ्य हों वे अपने घर बच्चों के लिए एक पाठशाला खोल लें, जहां सारे मुहल्ले के बच्चे पढ़ा करें।

माता जी—हां पण्डित जी, मैं समझी। वह दिन आवे, मैं ऐसा ही करूँगी। पण्डित जी अब देरी बड़ी हो गई। बाबू जी आते ही होंगे, आज तो यहां तक ही रहने दें। कल एक बार फिर आने का कष्ट उठावें और जो जो बातें आपने बताई हैं उन सबको सूक्ष्म रूप में दोहरा दें। जिससे उनको याद रखने में व काम में लाने में कुछ २ सुगमता हो जावे।

पण्डित जी—अच्छा मैं कल ठीक दस बजे फिर आऊँगा और जिस प्रकार आप चाहती हैं, उसी प्रकार सबको फिर दोहरा दूँगा। मेरा तो मतलब यही है कि किसी प्रकार माताएँ अपने प्यारे बच्चों को योग्य बनाने में लग जावें। भारत को छोड़ सारे देशों की माताएँ अपने बच्चों की शिक्षा अपने ही हाथों में रखती हैं, यह तो अभागा भारत ही है जहां की माताएँ बच्चों के हाथ भी लगाना नहीं चाहतीं, और माता जी! एक अचम्भा और देखो, आज कल की बी० ए०, एम० ए० पास स्त्रियां तो और भी आगे बढ गई हैं। बहुतेरी तो बच्चा ही पैदा करना नहीं चाहतीं, जो किसी के हो भी गया तो बस उसके लिए नौकर लाओ, क्योंकि उन्हें तो फुर्सत है ही नहीं जो अपने बच्चे का पालन-पोषण करें। माताजी! ऐसी शिक्षा से तो शिक्षा न देना ही ठीक है। आज कल की यह शिक्षा-प्रणाली तो अवश्य बदलनी चाहिए। स्त्रियों को तो वही शिक्षा देनी चाहिए, जिससे वे सच्ची पत्नियां व माताएं बनें। यह दूषित फल तो केवल इस बात का है कि शिक्षा माताओं द्वारा न दी जाकर नौकरों द्वारा दी जाती है। यदि भारतीय माताएँ यह काम फिर अपने हाथ में लेलें तो देश शीघ्र ही उन्नति प्राप्त कर शिशु पालन व शिक्षण में दूसरे देशों से आगे निकल जावें। कारण कि माता ही हमारा सबसे पहिला गुरु है, उससे जो शिक्षा उसकी प्रेम भरी गोद में मिलती है वह सारे जीवन अमिट हो जाती है। बालक के कोमल हृदय, मन व शरीर पर जो माता की शिक्षा का गहरा प्रभाव पड़ता है, उसे एक बार तो विधाता भी नहीं मिटा सकती। अतः मेरा माताओं से यही नम्र निवेदन है कि यदि वे अपने गुरुत्व को फिर से समझ लें वे उसका उचित उपयोग करें तो भारत का भविष्य ही बदल जावे। माता जी! लो अब मैं जाता हूं। कल फिर आऊँगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मीरा"

[कु० कमलारानी 'ब्रह्म']

रतनपुर में विनोद नाम के एक रईस रहते थे, उनके सिर्फ एक ही लड़की थी। उस लड़की का नाम मीरा था। मीरा की माँ यशोदा और विनोद बाबू अपनी एक मात्र सन्तान को प्राणों से भी अधिक प्यार करते थे। एक दिन उनके यहाँ एक लड़की रोती हुई आई। मीरा वहीं खेल रही थी, वह झट उसके पास गई और पूछने लगी—'बहिन तू क्यों रोती है ?' लड़की ने रोते हुए कहा—'भूख लगी है सरकार ! कुछ खाने के लिए दीजिये। मीरा ने सहानुभूति दिखलाते हुए पूछा—'तेरे माँ-बाप कहाँ हैं ?' लड़की ने कहा, "वे मर गए हैं। हुजूर मैं, मांग-मांग कर ही खाती हूँ पर आज कई दिनों से बुखार आ गया था, इसलिए उठ नहीं सकी थी'। दुःख से मीरा का हृदय भर आया वह अपनी माँ से बोली' "माँ अपने यहां तो बहुत आदमी रहते हैं, इसे भी रखलो न, यह बड़ी दुःखी है।" माँ ने कहा, इसको कैसे रखें बेटी यह तो अछूत है।"

मीरा ने दुखित होकर कहा तुम तो उस दिन कह रही थीं कि गांधी जी अछूतों का उद्धार कर रहे हैं, अब वे मन्दिर में घुस सकते हैं। फिर तुम उसको घर में क्यों नहीं रख सकती।" माँ ने सोचते हुए कहा, "मैंने कहा तो था पर......"। मीरा बीच ही में बात काटती हुई आँखों में आँसु भरकर बोली, "यह बड़ी दुखिया है माँ ! इसे रखलो। उस दिन तो बाबूजी भी व्याख्यान दे रहे थे कि हममें और हरिजन में कुछ अन्तर नहीं है, फिर तुम क्यों नहीं इस लड़की को रख लेतीं।"

आखिर को मीरा की बहुत अर्जू मिन्नतें करने पर लाचार होकर उसके माँ बाप दुखिया को अपने यहां रख लिए। मीरा ने कुछ ही दिनों में दुखिया को लिखा पढाकर सभ्य बना डाली। उन दोनों में बहुत प्रेम हो गया था। एक दिन मीरा के जन्म दिन में लोगों को निमन्त्रण दिया गया। लोग धीरे २ आने लगे। यशोदा और विनोद उनकी बड़ी आवभगत करने लगे। इतने में मीरा दुखिया को लेकर वहां गई। सब उसे पुचकारने लगे और तरह २ की चीजें उपहार देने लगे। मीरा ने अपनी सारी चीजें दुखिया को दे दीं।

किसी ने उससे पूछा, "बेटी यह कौन है ? इसे तो पहिले नहीं देखा था"। मीरा हँसती हुई बोली, "यह मेरी हरिजन बहिन है।"

सबों ने कहा, "ह-रि-ज-न, अछूत ! अरे राम २ हम अभी जाति ही को खो बैठे थे। ये लोग अछूत को घर में रखते हैं। चलो २ अभी नहाना पड़ेगा।" बस फिर क्या था सब उसी दम उठकर चले गए। यशोदा और विनोद मुँह ताकते ही रह गए। तरह २ के पकवान मिठाई बनाए गए थे सब जहां के तहां पड़े रहे। बिनोद गुस्सा से कांपते हुए दुखिया को लेकर जाने लगे। मीरा दुखिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पकड़ कर रोती हुई बोली, "बाबू जी ! दुखिया को मत ले जाइए। उसने कुछ कुसूर नहीं किया है, कुछ दण्ड देना हो तो मुझे ही दीजिए।" पर विनोद को तो चाण्डाल क्रोध ने धर दबाया था वे आपे से बाहिर हो गए। मीरा के कोमल गाल में थप्पड़ों की बौछार करते हुए बोले, खबरदार ! अब से दुखिया का नाम कभी मत लेना, तेरे ही लिए तो मुझे इतने लोगों का अपमान सहना पड़ा।" वे दुखिया को लेकर चले गए। उसी दिन से मीरा को बुखार आ गया। बीमारी बढती गई कितने ही डाक्टर वैद्य आए पर कुछ न हुआ। विनोद कहते, "अहा ! यह फूल सी लड़की जो कि कभी मार नहीं खाई थी मेरे मार की चोट को नहीं सह सकी" पर मीरा को तो दुखिया के बिछुड़ने की ही व्यथा थी।

आखिर को एक दिन माँ बाप को रोते हुए छोड़कर और दुखिया का नाम लेती हुई मीरा इस लोक से चल बसी। यशोदा और विनोद दुःख से व्याकुल हो गए, रोते २ यशोदा की आँखें सूज गईं। विनोद ने अपनी सारी सम्पत्ति अछूतों के लिए खर्च कर डाली। वे कहते, हमारी मीरा हमें शिक्षा दे गई है, हम देश सुधार का व्याख्यान देते हैं पर काम वैसा नहीं करते। हमारी एक सन्तान के बदले ये सारे अछूत ही हमारी सन्तान हैं।" उन्होंने अछूतों के लिए एक आश्रम बनवा दिया जिसका नाम मीरा आश्रम रखा गया। विनोद दुखिया को ले आए। वह गङ्गा के किनारे एक मकान बनाकर यशोदा और विनोद के साथ रहने लगी। वह चर्खा चलाकर अपना निर्वाह करती। विनोद और यशोदा का सारा समय अछूतों की आह दूर करने में ही व्यतीत होता था। उन्होंने एक बड़ा भारी स्कूल खोला जहां अछूतों को सब तरह की शिक्षा दी जाती थी। उनके अज्ञान रूपी अन्धकार में ज्ञान की रोशनी पहुँचाई गई। वे पृथ्वी में नई रोशनी देख पाए उनका दिल आनन्द से भर गया। अन्धेरी रात में भटकते हुए पथिक जिस तरह रोशनी की चमक देखकर उसी ओर शीघ्रता से बढने लगते हैं उसी तरह वे अछूत भी अज्ञान-रूपी अन्धकार को छोड़कर ज्ञान की रोशनी की ओर शीघ्रता से अग्रसर होने लगे। सब हरिजन विनोद बाबू को बहुत ही मानने लगे। पर वे कहते हैं, "भाई तुम लोग मुझे क्यों इतना बढा रहे हो ? मैं तो अपनी सन्तानों का दुख दूर कर रहा हूं। यदि अपने जीवन में मैं तुम्हारी कुछ सहायता कर सका तो अपने को धन्य समझूंगा।" दुखिया अपना जीवन विनोद और यशोदा की सेवा में बीताती।

अब वे विनोद बाबू भी नहीं हैं और न उनकी दुखिया ही है पर उनकी कीर्ति अछूतों के लिए अमर हो गई है।

वैद्यों के काम की बात

सर्प विष पर अचूक जड़ी।

मुझे इन्हीं दिनों गांव बडोपल (बीकानेर) जाने का अवसर मिला। वहां चौ०साजनराम भादू से ज्ञात हुआ कि सर्प काटने पर पीलवानी की — जड़ को पानी में घोट कर पिलाने से कै और दस्त के द्वारा सर्प विष शर्तिया उतर जाता है। वहां एक मुसलमान सज्जन भी बहुत पहिले से नागदौन के नाम से इसी का प्रयोग करते हैं। बागड़ (मरु) प्रान्त में जन्डी (शमी) पर चढ़ने वाली बेल है। इसे काट कर सभी - ऊँटों को चराते हैं। कड़वी, मीठी इसके दो भेद हैं। यह चौधरीजी की प्रदत्त जड़ साहित्य सदन के संग्रहालय में सुरक्षित है जिसे सभी - देख सकते हैं। वैद्य महानुभावों से अनुरोध है कि इस अनुभूत जड़ी की परीक्षा करें कि कहां तक नाग दौन से मेल रखती है।

—स्वामी केशवानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलिदान

[मा० गुलाबसिंह 'कार्तिकेय']

बम्बई से लन्दन जाने वाला यात्री-जहाज अपने पूरे वेग से समुद्र पार कर रहा था। गोपाल, जो अपने माता-पिता का इकलौता बेटा था, पिता के पास बैठा हुआ समुद्र की शोभा देख रहा था गोपाल के मामा दूसरे कमरे में बैठे गप-शप लड़ा रहे थे जहाज के तीनों दर्जे यात्रियों से ठसा-ठस भरे थे यदि उस समय मर्दुमशुमारी की जाती तो उसमें एक हजार से कम यात्री न निकलते।

'मामा किस कमरे में बैठे हैं पिताजी?' अष्ट-वर्षीय बालक गोपाल ने पूछा।

पाञ्चवें कमरे में। क्यों बेटा! क्या मामा के पास जाओगे?' गोपाल के सिर पर हाथ फेरते हुए पिता ने पूछा।

'हाँ पिता जी! कमरा बदलते समय मामा कह गए हैं—गोपाल! यदि तुम्हारा मन वहाँ न लगे तो मेरे कमरे में आ जाना' गोपाल ने कहा।

'नहीं बेटा! थोड़ी देर बाद तुम्हारे मामा यहीं आयेंगे, तब उन्हीं के साथ चला जाना' गोपाल के गुलाबी गालों पर हाथ फेरते हुए माँ ने कहा।

'माँ जी! अब मेरी तबियत यहाँ नहीं लगती, मैं वहीं जाऊंगा!' चञ्चलतापूर्ण बाल-हठ से गोपाल ने कहा।

'जाओ बेटा! वहाँ कोई हउआ तो बैठा ही नहीं है, जो तुम्हें निगल जायगा फिर पाञ्चवाँ कमरा कौन बहुत दूर है?' गोपाल के पिता ने कहा।

पर बेटा! याद रखना—यहाँ-वहाँ मत घूमना सीधे मामा के पास जाना और जब वहाँ भी मन न लगे तो लौटकर यहीं आ जाना, जहाज का मामला है।'

माँ की आशाओं पर पानी फेरता हुआ गोपाल आगे बढ़ गया।

२

जहाज द्रुत-वेग से दौड़ रहा था। समुद्र, झरोखों से अपनी अपूर्वछटा दिखा रहा था। इतने बड़े जहाज में अनेकों कमरे बने थे। मध्य में जहाज के कप्तान का कमरा और मांझियों का अड्डा था जहाज का एञ्जिन जोर-जोर से 'भक-भक' की आवाज करता जा रहा था। एक कमरे की बातचीत, कमरे वालों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ही मुश्किल से सुनाई देती थी। फिर दूसरे कमरे वालों की बातचीत तो सुन सकना कोसों दूर की बात थी।

मामा के पास जाने वाला गोपाल, जहाज की बनावट और समुद्र की शोभा में मामा को भूल गया। यहाँ-वहां जहाज की सैर करने लगा। पहिले से दूसरे, दूसरे से तीसरे, चौथे आदि कई कमरों को पार करता हुआ, वह जहाज के अन्तरीप पर पहुँच गया। वहाँ पहुंच कर गोपाल एक मिनट के लिए रुक सा गया और आँखें फाड़ फाड़ कर समुद्र की उठती हुई लहरों की छटा देखने लगा। अचानक उसकी दृष्टि अन्तरीप के एक नीचे वाले कमरे पर पड़ी। वह देखता क्या है, कि एक छोटे से छेद से धरातल के क्षेत्रफल में डेढ़ इञ्च पानी भर गया है।

कमरे को देखकर गोपाल ने अनुमान लगाया, कि किसी समय यह कमरा जहाज का माल गोदाम रहा होगा, कमजोर हो जाने से अब यह खाली कर दिया गया है। जल्दी से गोपाल उस कमरे में उतर पड़ा और छेद को बन्द करने की तजवीज करने लगा उसने यहाँ-वहाँ ऐसी चीज की तलाश की जिससे छेद बन्द कर सके, पर वह ऐसा कोई भी साधन न जुटा सका साथ ही उसका ध्यान उस छेद से होने वाले भयङ्कर परिणाम की ओर गया पर क्या करे, कोई सामान तो था ही नहीं। इस समय उसकी आँखों के आगे हालेण्ड के वीर बालक की घटना झूमने लगी। उसने कहा – कोई सामान नहीं है तो क्या हुआ? हालेण्ड के उस वीर बालक ने भी तो अपनी अंगुली बन्धान में लगा रखी थी– फिर मैं भी अपनी अंगुली इस छेद में क्यों न लगा दूं? ऐसा सोच बालक ने अपनी अंगुली उस छेद में लगा दी।

[३]

छेद में अङ्गुली लगते ही छेद और भी बड़ा हो गया काष्ट का फर्श सड़ गल गया था। तिस पर पानी की मार से और भी कमजोर हो गया था। छेद के बड़ा होते ही पानी की धार बह निकली। कमरे के क्षेत्रफल में तीन-चार इंच पानी चढ़ गया। कुछ न सोच कर गोपाल ने अपने पैर का पञ्जा ताकत से छेद पर जमाया, पर अभाग्य से पैर के नीचे की सतह धंस गई और गोपाल की कमर तक पैर का हिस्सा छेद के नीचे चला गया।

फिर क्या था, पानी का प्रबल-प्रवाह छूट गया और तेजी से जहाज में भरने लगा। गोपाल घबड़ा गया अब क्या किया जाय? यदि जहाज के कर्मचारियों को खबर देता हूँ, तो न जाने वे कब तक यहाँ पहुंचते हैं। और यदि वे बालक की बातों पर विश्वास न भी करें तो क्या चारा है। तब तक पानी भर जायगा और जहाज डूब जायगा। लाखों का नुकसान होगा, हजारों की जान जायगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस छेद से होने वाले भयङ्कर परिणाम की सोच में गोपाल कुछ क्षण के लिए निस्तब्ध सा हो गया। फिर जोर २ से चिल्लाया — "दौड़ो! दौड़ो!! जहाज डूबा। इसके तल में छेद हो गया। पानी तेजी से भर रहा है"

वह खूब चिल्लाया और गला फाड़ २ कर चिल्लाया। पर वहाँ सुनता कौन था? जब एक कमरे की बात, मुश्किल से पास के कमरे वाला ही सुन सकता है। तब जहाज के अन्तिम कमरे की चिल्लाहट और वह भी निरे बालक की कैसे सुन पड़ती?

मजबूरन गोपाल को सोचना पड़ा कि यहाँ से निकल भागूं और लोगों को सचेत कर माझियों को खबर दूं। लेकिन उसका इस तरह सोचना उसे धिक्कारने लगा 'यहाँ से निकल जाऊं? वहाँ जाने और वहाँ से आने तक शायद जहाज भर जायगा। पानी का वेग तेज होता जा रहा है, खाली जगह पा जाय तो यह और भी जल्दी दौड़ता है। और यदि मांझी आ भी जायंगे तो क्या होगा? उनके पास समुद्र सोख बाण तो है ही नहीं जिससे पानी रोक देंगे? बाद में शायद पानी की बाहुल्यता से यथार्थ छेद भी न मिल सके? तब क्या करूं? मर जाऊं?— हाँ मैं केवल अपनी जान बचाने के लिए लाखों की जानों की आहुति हर्गिज न दूंगा? सेवा के सच्चे भावों ने गोपाल को पीछे न हटने दिया।

पैर धंस जाने से छेद में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। अन्त में गोपाल को अपनी छाती तक का हिस्सा छेद में डाल देना पड़ा। दोनों हाथों से दोनों ओर के फर्श का सहारा ले, वह अचल खड़ा रहा। इतने पर भी पानी का आना बन्द न हुआ पूर्ववत 'झर-झर' बहता ही गया कुछ समय बाद उसकी ठुड्डी तक पानी भर आया। गोपाल बिलख २ कर रोने लगा।

··· 'बेटा! यदि वहां भी तुम्हारा मन न लगे तो लौटकर यहीं आ जाना यहाँ वहाँ मत घूमना, जहाज का मामला है।'— माँ के ये शब्द उसे स्मरण आने लगे। पिता बुलाते होंगे? मामा खोजते होंगे? — उन्हें क्या पता कि गोपाल 'वहाँ' चला गया?—आदि बातें सोचते हुए उसके आँसुओं की धार पानी में मिल गई यह क्यों गोपाल? क्या इसी का नाम सेवा है? गोपाल की आत्मा ने उसे डाँटा।

सेवा?—कहते २ गोपाल का स्वर बन्द हो गया। पानी मुंह की सीमा को पार कर गया। गोपाल छटपटाने लगा और खूब छटपटाया पर छेद के भीतर ही पानी की बाढ़ गोपाल के सिर तक गई और गोपाल की पवित्र आत्मा उन वीर सेवियों में मिल गई जो स्वर्ग में उसके लिए लालायित थे।

पूर्ण-वेग से जाता हुआ जहाज धीरे २ स्थिर हो गया। अदन बन्दरगाह सामने आया। नियमानुसार यात्रियों को तीन घण्टे

(शेष पृष्ठ ४२ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्यता ?

[श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी]

'दीपक' के बाल-पाठकों को भी यह मालूम होगा कि आज दुनियां के किसी हिस्से में बड़ी भयङ्कर लड़ाई हो रही है। इस लड़ाई को होते हुए पूरा साल होगया। अब दूसरे साल में इसने पग रखा है।

जब किसी गाँव में एक छोटी सी अग्निकांड की घटना घट जाती है तो गाँव के लोगों की कितनी तबाही होती है और कितनी मुसीबत में उन लोगों को अपनी जिंदगी व्यतीत करनी पड़ती है, इसकी कल्पना कीजिये और फिर इस प्रलयङ्कारी लड़ाई की, जहाँ दिन-रात पानी की तरह बम्ब के गोले और मशीनगनों की गोलियां बरस रही हैं. और तीन-तीन सौ गज तक की ऊँचाई तक आग की लपटें प्रज्वलित हो रही हैं। मालूम होता है कि ज्वालामुखी फट पड़ा हो।

ज़रा और सोचिये जब हम एक आदमी के शरीर को आग की लपटों से मामूली सा ही झुलसा हुआ या जला हुआ देखते हैं तो हमें कितना रोमांच हो आता है, और उस मनुष्य के प्रति हमारी कितनी सहानुभूति हो जाती है ? उस झुलसे हुए मनुष्य को भी कितनी असह्य पीड़ा होती है। किंतु आज सौ-पचास नहीं हजारों व्यक्ति प्रति दिन जिंदा भूने जा रहे हैं; और भूनने वाले रञ्ज-अफसोस की अपेक्षा खुशियाँ मनाते हैं। इन आग की लपटों, बमों, मशीनगनों आदि का शिकार होने वालों में बड़ी सँख्या मासूम बच्चों व स्त्रियों की है।

जब हम स्कूल में अपने किसी सहपाठी को हल्की सी चोट लगने पर सहानुभूति पर सहानुभूति दिखाते हैं, तब क्यों नहीं दुनियां के भले आदमी उन बच्चों पर, इस युद्ध में कीड़े-मकौड़ों की तरह हजारों की तादाद में मरने वाले बच्चों पर, दया दिखाते हैं ? यूरोप में आज सुकोमल बच्चों का कुछ मूल्य नहीं रह गया है। जो कल वहाँ के अच्छे नागरिक बनने वाले थे वे मौत के घाट उतारे जा रहे हैं। जो बच रहे हैं वे भी अपनी माताओं से अलग होकर यहाँ से वहाँ मारे-मारे फिर रहे हैं। उन बेचारों की जिंदगी बड़ी मुसीबत में फँसी हुई है। अपनी प्यारी मातृभूमि से निकाल कर अन्य मुल्कों में भेजा जा रहा है।

उन बच्चों के माता पिता और राजा को क्या दया नहीं आती ? उन भोलेभाले बच्चों ने क्या पाप किया है ? युद्ध के सञ्चालक उनके सुकोमल शरीर और 'तुतली' बोली के खातिर तो लड़ाई बन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय नोट

छठे वर्ष का प्रथम अङ्क—

'दीपक' अपने पाञ्च वर्ष पूरे कर चुका है। यह उसके छठे वर्ष का प्रथम अङ्क है। कहने को पाञ्च वर्ष का समय बहुत ही छोटा है। पाञ्च वर्ष के पूर्व जिस प्रकार एक बालक को सम्भालना किसी विशेष सावधानी का सा काम होता है, उससे भी बढ़कर यह जिम्मेवारी का काम था। किसी नये काम को प्रारम्भ करने के पूर्व जो-जो सरलता और शुभाशायें दीखती हैं वे सभी जटिलता और निराशाओं का रूप बनकर कार्यकर्ताओं को डराती और धमकाती रहती हैं। हमें याद है कि जब 'दीपक' का प्रकाशन प्रारम्भ किया था तब उसका क्या और कैसा उपयोग होगा। क्योंकि हिन्दी की पत्र-पत्रिकायें पञ्जाब और उसके बाहर निकलती हैं और पञ्जाब में तो विशेष कर बहुत ही थोड़े समय में उनकी मृत्यु हो जाती है। यह सब समझते हुए भी हमें भविष्य उज्ज्वल दिख रहा था, वह इसलिए कि हमारा प्रवेश गाँवों में था और हम समझ रहे थे कि हमारे ग्रामवासी पढ और समझ सकते हैं। हम सात सौ के लगभग अपने गाँवों में ग्राहक समझ रहे थे और कुछ प्रतियें पञ्जाब के पुस्तकालयों में लग सकेंगी।

उक्त ग्राम-निवासियों और पुस्तकालयों की सँख्या की जो आशा थी उनसे हमें निराश होना पड़ा। ग्रामवासियों से इसलिए निराश होना पड़ा कि वे नियमित रूप से किसी पत्र-पत्रिका के पढ़ने और उसके ग्राहक बनने के अभ्यासी नहीं हैं। इसी प्रकार पञ्जाब में हिन्दी पत्रों का प्रवेश पुस्तकालयों में नहीं के बराबर है। हमारी तरह उन पुस्तकालयों में लोगों का हिन्दी प्रकाशन कदाचित ही आता हो। हिन्दी क्षेत्र के लिए पञ्जाब की आर्यसमाज और सनातनधर्म सभाएँ आदि और उनकी भिन्न २ सँस्थायें भी हिन्दी पत्रों के लिए हमारी सम्मति में उपयुक्त क्षेत्र नहीं हो सकीं। यद्यपि नागरी वर्णमाला का प्रचार और प्रसार उनका और हमारा एक उद्देश्य था। गांवों और सभा-सँस्थाओं से निराश हो पत्र की प्रवृत्ति स्कूल और पाठशालाओं की तरफ की और बड़े २ धुरन्धर विद्वानों से पत्र की समालोचना हुई। और तैसे ही बहुत से पत्रों ने उसकी प्रशँसा और समालोचना की। यू० पी० सी० पी०, बिहार, उड़ीसा, बम्बई और पञ्जाब की सरकार तक ने उसे अपने स्कूलों पुस्तकालयों में स्थान दिया। कोटा-बड़ौदा और बीकानेर राज्यों ने भी उसे आदर की दृष्टि से अपने शिक्षा विभागों में स्थान दिया। पत्र में विज्ञापनों के लिए भी यत्न नहीं था और बीच में तो विज्ञापन नाम के लिए भी नहीं थे। अबोहर हमारे विचारानुसार तो अच्छा स्थान था परन्तु साधारण रूप से वह लाहौर, दिल्ली आदि स्थानों और उनके उपयुक्त साधनों को कब पहुँच सकता है जहां सभी प्रेस सम्बन्धी साधन—सुगम और सुलभ हों। यदि 'दीपक' का अपना प्रेस न होता, तो, यह कभी का और पत्रों की तरह अदृश्य हो जाता। उसके सञ्चालन में जहां उसके उत्साही कार्यकर्ताओं का त्याग और अतुल्य परिश्रम रहा है वहां प्रेस की आय भी इसके जीवन दान में पूरा २ साथ देती रही है। बहुत से दूर समीप के उत्साही हिन्दी प्रेमियों ने भी इसे रुपयों का सहारा दे पाला-पोसा है। इतने रुपए और परिश्रम के अनन्तर भी अभी हम वहीं बैठे हैं और अब रुपए की सहायता से चलाना असम्भव जान पड़ता है। यद्यपि परिश्रम हमारा अपना है फिर, भी कागज स्याही आदि प्रेस के सामान और डाक आदि के लिए रुपयों की आवश्यकता बनी ही रहेगी। विशेष कर युद्ध के कारण तो यह साधन और भी महँगे हो गए हैं। ऐसी अवस्था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में दानियों का दान कहां तक साथ देगा, यह विचारने की बात है।

साहित्य सदन, हिन्दी प्रचार और प्रसार के उद्देश्य से बनी हुई सँस्था है। इसने अपने पिछले १५ वर्षों में कोई ७० हजार रुपया इस काम और प्रचार में व्यय किया है। 'दीपक' उसी एकमात्र पञ्जाब की प्रगतिशील सँस्था का मुख्य पत्र है। इसका धन जनता का धन है। इसकी गति जनता की गति है। इसका गौरव पञ्जाब का गौरव है। 'हिन्दुस्तान' के यशस्वी सम्पादक के शब्दों में "साहित्य सदन एक साहित्यक तीर्थ है," यह कहां तक सत्य है इसको उसके देखने और लिखने वाले ही अनुभव कर सकते हैं। इस छठे बर्ष के प्रथम अङ्क को लेकर पञ्जाब के हिन्दी प्रेमियों से निवेदन करते हैं कि वे इसके ग्राहक बनकर हमारे उत्साह को बढावें जिससे हम उसे और भी सुन्दर बनाने की कोशिश करें।

[पृष्ट ४७ का शेष पढ़िये]

का विश्राम दिया गया यात्रीगण अपने २ भोजनों की टोह में निकले। गोपाल के मामा गोपाल के पिता के पास पहुंचे। ......गोपाल कहाँ है भैया? - गोपाल की भूखी माँ ने पूछा।

मामा के पैर तले की मिट्टी खिसक गई, वे आंखें फाड़ फाड़ कर चारों ओर देखने लगे। क्या गोपाल तुम्हारे पास नहीं गया है?— घबड़ाकर गोपाल के पिता ने पूछा। मामा का शरीर सुन्न हो गया, काटो तो खून नहीं। वे उलटे पैर अपने कमरे की ओर दौड़े। माता-पिता भी पागलों की तरह उनके पीछे भागे। कमरा नम्बर एक-दो तीन सब खाली। पूरे जहाज की छान-बीन की गई, पर सब निराशा ही ने साथ दिया। माता की करुण चीत्कार से सारा जहाज गूंज उठा। कर्मचारियों की मदद से जहाज खाली किया गया। प्रत्येक कमरे की बारी २ से खोज की गई, पर गोपाल कहीं भी न मिला।

मनुष्य-गण पुराने माल गोदाम के कमरे में भी जाने से न चूके। देखकर पूरी भीड़ उसी कमरे में जुट गई क्योंकि उसके क्षेत्रफल में पाँच फिट पानी हो गया था और भरता ही जाता था। सबकी सहायता से कमरे का पानी खाली किया गया। ओफ! जहाज के अन्तरीप में एक लाश निकली। 'मेरे लाल! मेरे कन्हैया!! कहती हुई माँ पछाड़ खाकर पड़ी। 'गोपाल! मेरे बाल गोपाल!!' कहते हुए पिता ने लाश पर सिर पटक दिया। 'क्या यही,मेरा कमरा है गोपाल? कहते २ मामा बेहोश हो गए। गोपाल के सच्चे "बलिदान" पर सब जहाजियों ने अश्रु वर्षा की। सब के मुंह से एक साथ बृहत ध्वनि निकली—

"इसने अपनी जान दी,दूसरों की जान बचाने के लिए।" धन्य है भारत देश और, उसके ऐसे वीर-सपूत।

—०—

[शेष पृष्ट ४९ का]

से भविष्य की दुनियां के नये सांचे में हमारी जिन्दगी ढलने वाली है। तब हम लोग क्यों न अभी से उस शान्ति की खोज करें, जिससे दुनियां में अमन चैन हो और पशुता की लीला बन्द हो सके।

—०—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५० वर्ष की अनुभूत औषधें

सुधासिंधु

कफ, खांसी, दमा, हैजा, शूल, सँग्रहणी, अतिसार, पेट दर्द आदि रोगों की बिना अनुपान की दवा की० ॥)

दद्गुगजकेसरी

हर प्रकार के दाद को बिना जलन और कष्ट के नाश करने वाली एक मात्र दवा। की० ।) डा० ख० १ से २ तक ॥-)

सुख संचारक कम्पनी, लिमिटेड, मथुरा

'दीपक प्रेस' अबोहर

सुन्दर, शुद्ध और बढ़िया छपाई के लिए इलाके भर में प्रसिद्ध है। एक बार आजमाइये।

तानसेन के गाने

में क्या जादू था? यह जानना चाहें तो मासिक पत्र 'सङ्गीत' मँगाइए। २०० पृष्ट के विशेषाँक (ताल अङ्क) सहित वार्षिक मूल्य २।) है। नमूना मुफ़्त मँगाकर देखिये।

मैनेजर 'संगीत' हाथरस यू० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
REGD No. L. 3700

No. 1147 Dated 14-9-40

From,

The Inspector of Arya Schools,
Punjab, Lahore.

To,

All the Schools affiliated with the Sabha.

Dear Sir,

This is just to draw your attention to the Hindi monthly magazine named "Deepak" Which has recently been approved by the D.P.I. for use in High classes of Schools in the Punjab. The magazine is free from all kinds of obscene matters and undesirable advertisements. It contains a variety of subjects and is quite suitable for School children. I have great pleasure in recommending it for being subscribed for your School Library.

Yours faithfully.
Sd/- BRIJ LAL,
Inspector of Arya Schools, Punjab.

मुद्रक एवं प्रकाशक:—श्री ... श्रीगोहर (पञ्जाब) ।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यू०पी०,सी०पी,बिहार,बम्बई,उड़ीसा,सिंध,कोटा,बड़ौदा व बीकानेर राज्यों के शिक्षाविभागों द्वारा स्कूलों के लिए स्वीकृत।

2.12.40
पुस्तकालय

दीपक

मार्गशीर्ष १९९७] साहित्य सदन, अबोहर [दिसम्बर १९४०

सम्पादक— तेगराम

अबोहर का साहित्य सदन

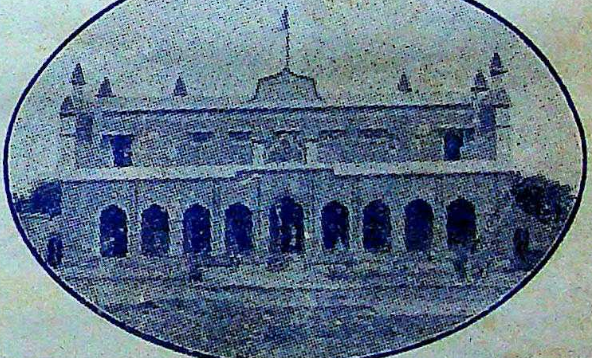

सचमुच अबोहर का साहित्य-सदन एक अद्वितीय संस्कृति-केन्द्र है, जिसको 'रेगिस्तान का नन्दनवन' नाम दिया जाय, तो तनिक भी अत्युक्ति नहीं होगी। * * * *

लेकिन मेरे मन इस संस्था की सच्ची सुगन्ध उसके 'चलते-पुस्तकालय' में है। इस पुस्तकालय के द्वारा वे आस पास के गांवों में और साधारण लोगों के घरों में जो प्रवेश पा चुके हैं और वहाँ इस संस्था ने जो जीवन-क्रान्ति की है, उसका हिसाब हम कभी लगा ही नहीं सकते। इस संस्था का स्थायी और ठोस कार्य यही है।

—काका कालेलकर

साहित्य सदन, अबोहर
स्था० १९८२

वार्षिक मूल्य २॥)

एक अङ्क का ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्साचंद्रोदय

के लेखक की ४५ साल की सुपरीक्षित दवाएँ !

खून खराबी के रोगों पर

४० दिन की दवाएँ ।

वातरक्त, कोढ़, फोड़े, फुन्सी, खाज, खुजली, सड़ा हुआ शरीर नीचे की दवाओं से अवश्यमेव आराम होगा—

(१) अर्क खून सफा ५ बोतल	....	...	५)
(२) कृष्ण विजय तेल १२० तोले	....	...	६)
			११)
		पैकिंग चार्ज	१)

५) पेशगी भेजें । पास के रेलवे स्टेशन का नाम और अपना पता साफ लिखें ।

घर बैठे पचास रुपया महीना ।

नौ रुपये की पूंजी और शरीर की मामूली मिहनत से ५०) रुपया माहवारी कैसे कमाया जा सकता है ? एक आना का टिकट भेजकर हम से पूछिये ।

पता—हरिदास एण्ड कम्पनी, मथुरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

{ दीपक—वर्ष ६, संख्या २, दिसम्बर १९४० ई० }

१	कायरता और अहिंसा	—संकलन	१
२	गांधी जी के कुछ पत्र	सं० काशीनाथ त्रिवेदी	२
३	हरिजन बस्ती (कविता)	स्व० पं० रामलग्न त्रिपाठी	६
४	स्वतन्त्रता के सिद्धान्त	श्री रामावतार विद्याभास्कर	७
५	साम्राज्यों का निर्माण	,, भगवानदास केला	१०
६	मुझे वहां जाना अच्छा नहीं लगता !	,, स्व० गिजुभाई	१३
७	धर्म शिक्षा	,, आचार्य हरभाई त्रिवेदी	१४
८	वीर-विदा (कविता)	,, 'विकल'	१८
९	महाराणा प्रताप (कविता)	,, रामकुमार 'स्नातक'	१९
१०	राजा महेन्द्र प्रताप	,, ठा० देशराज	२१
११	क्षयरोग से बच्चों का बचाव	,, शुकदेव नारायण	२७
१२	बड़ोपल में दीवाली पर नशा आदि छोड़ने की प्रतिज्ञा		३०
१३	खादी (कविता)	श्री अम्बिकाप्रसाद उपाध्याय	३१
१४	उस दिन की संध्या	,, शुकदेव नारायण	३२
१५	वह बच्चा है, जानवर नहीं !	,, दयाशंकर मिश्र	३३
१६	मैं मां को नहीं सताऊंगा (कविता)	,, अक्षय कांकरिया	३७
१७	बलधाम बनो (कविता)	,, 'अंशमाली'	३७
१८	सदाचार (कविता)	,, रमेशचन्द्र	३८
१९	सम्पादकीय नोट [विवाह की तबाही का एक और नमूना : वनस्पती घी विरोधी आन्दोलन		३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दीपक' के नियम

१—'दीपक' हर अंग्रेज़ी महीने के पहले सप्ताह में प्रकाशित होता है।

२—'दीपक' का वार्षिक मूल्य डाक व्यय व विशेषांक सहित केवल २॥) है। एक प्रति ४ आने, विदेश से ४)।

३—'दीपक' में प्रकाशनार्थ लिखे जाने वाले लेख अधूरे न हों, पृष्ठ के एक ओर ही संशोधन के लिये इधर उधर जगह छोड़ कर सफाई से लिखे हों, विस्तार में चार पृष्ठ से अधिक न हों। भाषा उनकी सरल व शैली रोचक हो जिससे साधारण योग्यता वाले व्यक्ति भी जिनके हितार्थ 'दीपक' प्रकाशित हुआ है, उन्हें पढ़ व समझ सकें।

४—'दीपक' का मुख्य उद्देश **ग्राम-सुधार, समाज-उत्थान, शिक्षा व राष्ट्र-भाषा-प्रचार** द्वारा जनता-जनार्दनमें जीवन-जागृति पैदा करना है। अतः धार्मिक ईर्ष्या, साम्प्रदायिक विद्वेष पूर्ण उपरोक्त उद्देश्य के विपरीत कोई लेख न छप सकेगा।

५—लेख घटाने-बढाने, संशोधन करने तथा प्रकाशित करने या न करने का अधिकार संपादक को होगा।

६—'दीपक' के ग्राहकों को पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर साफ अक्षरों में लिखना चाहिये, अन्यथा जवाब देर से मिलेगा १ मास से कम समयके लिये पता बदलवाने के लिये डाकखानेसे प्रबंध करें।

७—अस्वीकृत लेख डाक खर्च भेजने पर ही लौटाये जा सकेंगे अन्यथा नहीं।

८—जिन सज्जनों को किसी मास का 'दीपक' न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछ ताछ करके बाद में हमारे पास लिखना चाहिये।

८—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें और बदले के पत्र, सम्पादक, 'दीपक' साहित्य सदन, अबोहर के पते से और मूल्य तथा प्रबन्ध विषयक पत्र मैनेजर, 'दीपक'के पतेसे भेजने चाहिएं।

स्तंभ—सूची

१ जीवनन-चर्चा
२ पुस्तकालय
३ नवीन-शिक्षा
४ राष्ट्र-भाषा
५ हमारे गाँव
६ देहाती-साहित्य
७ खेती-बाड़ी
८ उद्यग-धंधे
९ पशु-पालन
१० स्वास्थ्य-साधना
११ हमारा आहार
१२ महिला-मंडल
१३ बाल-मंदिर
१४ प्रकृति और विज्ञान
१५ सामयिक चर्चा
१६ फुलवाड़ी
१७ सम्पादकीय नोट
१८ संसार-चक्र

कृपालु लेखक-लेखिकाओं से नम्र निवेदन है कि वे 'दीपक' के लिये कुछ लिखने से पहिले एक बार हमारे स्तंभों की सूची देख लें। इन स्तंभों के अतिरिक्त भाव-पूर्ण किन्तु सात्विक कविता और कहानियों के लिये भी 'दीपक' के कुछ पृष्ठ 'रिज़र्व' हैं सरल भाषा में लिखे गये व्यवहारिक लेख 'दीपक' के श्रद्धापात्र होंगे

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप बेकार क्यों हैं ?

यदि आप (१) अमेरिका के बेकार लोगों की भांति कलम-दवात के सहारे केवल डाक की सहायता से बिना पूंजी रुपया कमाना चाहते हैं (२) योरोप की उन फर्मों के पते जो नई-नई वस्तुओं के नमूने मुफ़ भेजती रहती हैं (३) अमेरिका की उस फ़र्म का पता जो केवल पत्र लिखने पर सँसार भर की प्रत्येक चीज का आपको पता बता देगी (४) ५०) से ५००) की पूञ्जी तक के कारखाने लगाने का पूरा विवरण जिनसे ६०) से ३००) मासिक तक कमाया जा सकता है (५) इङ्गलैण्ड व अमेरिका की ताज़ा मालूमात और घर बैठे एजेन्सी लेने के ढङ्ग और पते (६) स्वदेशी चीज़ों से विलायती वस्तुएँ बनाना, ४००) तोला मूल्य की बताई जाने वाली "कीन सीन" को अपने देश में पैदा करना (७) भारत के कच्चे माल से रुपया कमाना चाहते हों तो इस पुस्तक को अवश्य मंगाकर पढ़ें। इसके अतिरिक्त इसमें सैकड़ों ऐसी दस्तकारियाँ लिखी हैं जो आज तक सुनने में नहीं आईं और उनसे साधारण पूंजी वाला आदमी दो-तीन रुपया रोज घर बैठे कमा सकता है, २५०) पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य १।) रु०, पोस्टेज ।=)

१०० गुणा नफे का व्यापार

सँसार में सबसे लाभदायक व्यापार पेटेण्ट औषधियों का हैं। इससे सौ गुना नफ़ा कमाया जा सकता है। एक पैसा लागत की दवा के दो-दो रुपये मिलते देखे हैं। अमृतधारा और सुधासिन्धु के मालिकों ने एक पेटेण्ट दवा के नुस्खे से लाखों रुपया कमाया है। विलायती फर्में एक एक पेटेण्ट दवा से करोड़ों रुपया कमा रही हैं। यदि उनकी तरह आप भी भारतवर्ष, जर्मनी, इंगलैंड, अमेरिका की प्रसिद्ध और सर्वप्रिय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये की बिकने वाली पेटेण्ट औषधियों के नुस्खे विना किसी कष्ट के घर बैठे सीख कर साधारण पूंजी से प्रायः सभी प्रचलित पेटेण्ट औषधियों को स्वयं तैयार करके विज्ञापन द्वारा मुक़ाबिले में कम कीमत में बेचकर सैकड़ों रुपये मासिक स्थायी आमदनी पैदा करना चाहते हैं, तो आज ही 'पेटेण्ट औषधियाँ और भारतवर्ष' नामक पुस्तक की एक प्रति मंगाकर कारोबार शुरू करदें। सम्भव है, फिर यह पुस्तक किसी मूल्य पर न मिल सके मू० ॥), पो० ।-)

पता:—रसायन फर्मेसी, (दी) संगरिया, (बीकानेर)

चिकित्सा-चन्द्रोदय सात भाग के लेखक--

बा० हरिदास जी वैद्य

धातु रोग, प्रमेह, नपुंसकत्व, शीघ्रपतन, ८० रोग, बवासीर और खून-खराबी के रोग आराम करने में सिद्धहस्त हैं। आपने ४५ साल में लाखों रोगी चंगे करके ही चिकित्साचन्द्रोदय लिखी है, जो बिना गुरु आयुर्वेदाचार्य बनाती है। कीमत सात भाग की ३५॥) पैकिंग चार्ज ॥।) बारह आने। अगर आपको कोई रोग हो आप फौरन पत्र लिखिये और आठ आने फीस भेजिये।

पता—हरिदास एण्ड कम्पनी, मथुरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१-"अफीम के मरीजो"

मिलने का हमारा पता

अपने दुशमन अफीम से बचो

हमने आपको बचाने के लिये ऐसी दवा तैयार की है जिसको खा कर अफीम की दिल में नहीं आती और सात दिन में बिना किसी दुःख के अफीम छूट जाती है। अब तक हमारे पास बड़े-बड़े रईस अमीर दो हजार के लगभग अफीम से छुटकारा पा चुके हैं, इस दवा की कई एक ऐसेम्बली के मेम्बर और बड़े-बड़े महानुभावों ने बड़ी तारीफ की है। इसलिए आप अफीम छोड़ कर अपने धन और शरीर की रक्षा करें।

अफीम छुड़ाने की फीस, खाता हो उससे दुगने रुपये। जो भाई यहाँ न आ सके वह घर बैठे ही दवाई मंगा सकता है।

२-संग्रहणी का इलाज

इस बेमारी में दस्त लगते हैं। वह पुराणे दस्त सँग्रहणी कहलाते हैं। शरीर प्रतिदिन कमजोर होता जाता है। खाया पीया दस्तों के रास्ते निकल जाता है। अन्त में दस्तों से कमजोर होकर मर जाता है। हमारे यहां शर्तिया इलाज किया जाता है। फीस बेमारी के मुताबिक है।

पं० रामदयाल रामगोपाल वैद्य

आयुर्वेद विशारद,

मण्डी डबवाली, [जि० हिसार]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Approved for use in Schools in Punjab U. P., C. P., Bihar, Bombay, Orissa, Sindh, Kotah, Baroda & Bikaner States.

दीपक

[हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग की सम्पत्ति तथा पञ्जाब में राष्ट्रभाषा प्रचार करने वाली प्रमुख सँस्था—
साहित्य सदन, अबोहर का मुखपत्र]

सत्यम् :: शिवम् :: सुन्दरम्

सम्पादक—तेगराम

मार्गशीर्ष १९९७ | वर्ष ६, सँख्या २ | पूर्ण सँख्या ६२ | दिसम्बर १९४०

कायरता और अहिंसा

कायरता और अहिंसा एक वस्तु नहीं है। शौर्य की आत्यंतिकता का ही दूसरा नाम अहिंसा है। क्षमा बलवान ही कर सकता है, इसलिए अत्यन्त शूर बनो। अत्यन्त शूर बनने के लिए जिन गुणों की जरूरत है उनकी वृद्धि करो, और शूर बनकर क्षमा करो। यदि इतना कर पाओ और ईश्वर में श्रद्धा है, तो निर्भय विचरो।

* * * *

शौर्य की परमावधि का दूसरा नाम अहिंसा है। कायरता का नाम अहिंसा हर्गिज नहीं है। सम्पूर्ण निर्भयता में ही अहिंसा संभवित हो सकती है। और जो अत्यन्त शूर है, वही अत्यन्त निर्भय हो सकता है। असावधानी और अभय, ये अलग-अलग चीजें हैं। जिसे प्रभाव के कारण या नशे में भय का ज्ञान ही नहीं, वह निर्भय क्या होगा? मगर जिसके सामने भय उपस्थित है पर निर्भय है, वही परम शूर है, वही अहिंसावादी है।

—'बापू' से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गांधीजी के कुछ पत्र

[नीचे 'यरवदा मन्दिर' से भेजे हुए पूज्य गांधीजी के कुछ पत्र दिये जाते हैं। ये पत्र सन् ३०-३२ के आन्दोलन के दिनों में कुछ आश्रमवासी भाई-बहिनों के नाम समय-समय पर लिखे गये थे। व्यक्तिगत होते हुए भी इन पत्रों में सूत्ररूप से सार्वजनिक महत्त्व रखने वाली बातें भी प्राय: सर्वत्र पाई जाती हैं। आशा है 'दीपक' के पाठक इन पत्रों में अपने मतलब की अनेक बातें पा सकेंगे। —काशीनाथ त्रिवेदी]

(१)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला। ···बहन भले आई। तुम कठिनाइयों में से ठीक अपना रास्ता पार कर रहे हो। जीवन इसी तरह बनता है।

अनासक्तियोग के तुम्हारे अनुवाद को कलकत्ता वाले से मिला चुका। कलकत्ते वाला चढ़ जाता है। इसलिए मेरी सलाह है कि अब दूसरी आवृत्ति तुम्हारे अनुवाद की न छपाओ। हमारे मन सब अच्छी और एक हेतु वाली सँस्थायें एक ही हैं। इसलिए ऐसी सँस्थाओं में इस प्रकार की स्पर्धा होनी ही न चाहिए। मैं देखता हूं कि तुम्हारे अनुवाद में तुमने जो भूलें सुधारी हैं, उनके सिवा भी, कुछ भूलें रह गई हैं। कोई भी काय ऐसी उतावली में न करना चाहिए। लेकिन जो हो चुका, उसका दु:ख न मानना। तुमने तो शुभ हेतु से शीघ्र काम पूरा करने का प्रयत्न किया। उस प्रयत्न में ही सब कुछ था। अनुवाद करते समय तुम्हें खुद को जो आध्यात्मिक लाभ मिला, वह क्या निरर्थक जायगा।

२९-६-३०

(२)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला है। भले दिल खोलकर लिखा। जिस दोष का तुमने दर्शन कराया है, उससे मैंने बहुत थोड़ों को मुक्त जाना है। हमारा वातावरण इतना निबल है कि बहुतेरे नौजवान बच ही नहीं सकते। लेकिन अब भूतकाल का पश्चाताप न करके वर्तमान को बराबर सम्भालना। इस प्रयत्न में थोड़ी भी न्यूनता न आने देना।

··· को डाक्टर को अवश्य दिखाना। वह स्त्री-डाक्टर भले परीक्षा करे। मेरे पत्र की जरूरत नहीं। यहाँ से भेजना उचित नहीं। जरूरत मालूम पड़े तो·······की चिट्ठी ले लेना, काफी होगी। वह स्त्री भली है।

गीता जी के सम्बन्ध में समझा। कलकत्ते वाला अनुवाद पढ़जाने की कोशिश करूँगा। ··· के नाम पत्र आज इसी के साथ भेजा है। वह देखना। विनोबा को बताया, यह अच्छा ही किया।

११-७-३०

(३)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे पिछले पत्र में मैंने प्रार्थना का विषय छेड़ा है। उससे तुम्हारे पत्र का कुछ जवाब तो मिल ही जायगा। मूर्ति पूजा के सम्बन्ध में मेरी राय यह है कि जो अपने पास मूर्ति रक्खें, उन्हें हम मना नहीं करते, पर सामाजिक प्रार्थना में उसे स्थान नहीं दिया जा सकता।

··· को डाक्टर को दिखाने की सूचना मैंने की है। यहाँ बैठा-बैठा मैं आसानी से रहनुमाई नहीं कर सकूंगा। हिन्दी अनुवाद को तो देख ही नहीं सकता।

२७-७-३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें आश्रम छोड़ने की आवश्यकता नहीं हो सकती। लेकिन यज्ञ का महत्त्व और रोजनामचे की आवश्यकता को तुम पहचान न सके? ऐसे समय में ही नियमन (डिसिप्लिन) हमारे लिए कल्पद्रुम बन जाता है। सब लोग सदा सब चीजों की एक समान कीमत नहीं कूत सकते। इसलिए सीधा मार्ग यह है कि जिस सँस्था में रहें, उसके नियमों का सम्पूर्ण पालन आँख मूंद कर करते चलें। रोजनामचे में भले वही बात रोज-रोज दुहरानी पड़े। यह उसकी महत्ता है—यदि वह शुद्ध होतो। जिस पुरुष का जीवन सूर्यमण्डल की तरह नियमित चलता है, वह यदि सच्चे तौर पर रोज़नामचा लिख सके तो धन्य है। इसलिए मेरी सलाह है कि भाई······जैसा कहें, पूर्ण श्रद्धा से वही करना। मेरा उनके निर्णयों पर बहुत विश्वास है।

१०–८–३०

(५)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला। ··· और ···के लिए डाक्टर ने जो दवा दी है, उसे आजमाने के बाद मुझे लिखना कि क्या हाल है। यदि ······ने लड़ाई में शामिल होने की प्रतिज्ञा की हो, तो मैं मानता हूं कि वह घर कदापि नहीं जा सकती। लेकिन तुम पिताजी को लिख चुके हो। इसलिए अब तुम्हारी दोनों की अन्तरात्मा जो कहे वही करना।

२३–८–३०

(६)

चि०···,

मानसिक स्थिति का बहुत विचार न किया करो। अपने नियत कर्म में तन्मय रहकर प्रफुल्लित रहो। विकारी विचारों के आने पर सद् विचारों से उन्हें रोको और शांत रहो। अपने निश्चयों पर दृढ़ रहने से आत्मविश्वास अपने आप आता है।

८–९–३०

(७)

चि०···,

तुम्हारे दोनों पत्र मिले। ··· की प्रगति बहुत अच्छी हुई है।

खद्दर के बारे में स्वावलम्बन-पद्धति ग्रहण करने का निश्चय ठीक किया। स्वप्नदोष का निवारण अल्पाहार और शारीरिक व मानसिक उद्यम है। जो शारीरिक कार्य किया जाय, उसी में मन को रोक लेने से दो गुना लाभ होता है; कार्य ज़्यादा अच्छा होता है और मनोविकार वैसे ही शान्त हो जाते हैं।

२७–९–३०

(८)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला। मित्रों के देहान्त से व्यग्रचित्त बनाने का जरा भी कारण नहीं। बिना मौत के कोई मरता नहीं। अकाल-मृत्यु मिथ्या भ्रम है। एक दिन की सांस लेकर मरने वाला बालक भी अकाल मृत्यु को प्राप्त नहीं होता। उसकी मौत का अर्थ यह है कि उस देह के उसके कर्म पूरे हो चुके हैं। हमें मृत्यु का दुःख केवल अज्ञान और स्वार्थ के कारण होता है। आत्मा के धर्मों का अज्ञान और हम खुद मरना नहीं चाहते, इसलिए मित्रादि की मृत्यु हमें आकुल बनाती है। हां, विधवाओं के प्रति हमारा धर्म है। यदि वे आवें, और नियमों का पालन कर सकें, तो मेरी दृष्टि में तो उन्हें रखने में कोई अड़चन नहीं हो सकती। लेकिन जिम्मेदारी ···और ··· के सिर है, इसलिए उनके साथ चर्चा कर लेना। मेरा यह पत्र उन्हें पढ़ा देना।

··· की स्थिति कठिन है, परन्तु कसौटी ठीक हो जायेगी। उसकी दृढ़ता की भी परीक्षा हो रहेगी। मैं पत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखता हूँ। कुमाराप्य के व्याख्यान का हिन्दी अनुवाद मिल गया है। महावीरप्रसाद के उत्साह का क्या कहना है ? गीता के तीसरे सँस्करण की तैयारी आज ही से कर रहे हैं।

तुम्हारी मानसिक ग्लानि अब दूर होनी चाहिए। कमजोर विचार, विकार वगैरा आवें तो उन्हें ध्यान में रखकर दूर करते रहना चाहिए। उन्हीं की चिन्ता में लगे रहना ठीक नहीं। मन के साथ यह चर्चा भी न करनी चाहिए कि (ये विचार) क्यों आये ? पर मन को सद्-विचारों में ही रोक रखना चाहिए। और इसका सुवर्ण उपाय यह है कि जो बाह्य काम करें, उसी में मन को पिरोदें; जिससे मन को अन्यत्र भटकने का मौका ही न मिले।

१२–९–३०

(९)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला। पहले वाला भी मिला था। ···को अलग लिखा ही है। बनारसीदास को लिखता हूं। मुझे ठीक खबर दी। बहन ···को अब पूरा आराम होगा। उसे कटि-स्नान और गुह्येन्द्रियघर्षण स्नान की आवश्यकता है। दोनों के वर्णन क्यूनेकी पुस्तक से देख लेना। गुह्येन्द्रियघर्षण स्नान से स्त्रियों को जल्दी और बहुत लाभ होता है। स्त्रियों का ऐसा अनुभव है। क्यूने तो बहुत स्तुति करता ही है।

मृत्युभोज के सम्बन्ध में ठीक सफलता मिली मालूम होती है। यदि शुद्ध लोग सतत प्रयत्न करें, तो देर में या जल्दी सफलता मिलती ही है। ···को घर भेजने से जो तकलीफें उठानी पड़ती हैं, सो तो पहले ही से समझ रखना चाहिए था। हमारा सँसार ही इस समय ऐसा बन गया है। युग बदल रहा है, ऐसे समय पुराने युग वालों को नये युग की बहुतेरी बातें अनुचित मालूम होंगी ही। यदि नवयुग उनके रोष को सहले और सहते हुए भी अपना निश्चित काम किया करे, तो बिना अधिक कोलाहल के नया युग प्रचलित हो जाय।

१९–१०–३०

(१०)

चि०···,

···का पत्र कैसे रह गया, कुछ समझ नहीं पड़ता। शायद यह हो सकता है कि लिखने का विचार किया हो, और बाद में यह मान लिया हो कि लिख लिया, लेकिन वस्तुतः लिखा न गया हो। ···को पत्र लिखना बाकी है, यह भी याद तो नहीं। लेकिन लिखता हूँ। ···को आज भी लिखता हूँ।

जिसे आत्मा का सच्चा खयाल हो चुका है, उसे तो प्रतीत भी न होना चाहिए कि वह कर्म करते हुए भी इस बात को नहीं मानता कि कोई दूसरा उसका अफसर है। गुलामी में बिका हुआ आदमी सब-कुछ करते हुए भी अपने सिर किसी प्रकार की जिम्मेदारी महसूस नहीं करता। यदि हमें इस बात का साक्षात्कार हो जाय, तो हम फूल की तरह हलके होकर रहें। नथमल जी को मेरी ओर से आश्वासन लिखना। जहां सबको देर में या जल्दी जाना है, वहाँ जाने की क्रिया को मृत्यु के बदले कोई और नाम देने की इच्छा हो जाती है। सब जेल वासियों को मेरे आशीर्वाद भेजना।

२६–१०–३२

(११)

चि०···,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि ···स्नानोपचार करती हो, तो उसका परिणाम लिखना। हमारे पास क्यूने की दो पुस्तकें थीं। मेरा खयाल है कि उसका गुजराती अनुवाद भी है। ·· को घर का अनुभव ठीक ही मिला और अब अनायास वापिस आ रही है, यह भी ठीक ही है। रुक्मिणी की आत्महत्या करुणाजनक है। पति का नाम ठाम मिले, तो ढूंढना। मेरा विश्वास है कि इस आत्महत्या की तह में दूसरा भी कोई कारण होना चाहिए। किसी ने इस सम्बन्ध की विशेष जाँच की है ? स्त्री-समाज ने इसकी चर्चा नहीं की ? गोधरे के आसपास की घटना है, इसलिए शायद मामा (फड़के) कुछ जानते हों। यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह घटना सच्ची हो, तो ऐसी है कि इसका अच्छी तरह ऊहापोह होना चाहिए। अवकाश मिले, तो अधिक जाँच करना, और परिणाम लिखना। असल पत्र-लेखक कौन है? काशी का अखबार नहीं भेज सकते। लेकिन क्या लिखा होगा, सो कौन समझने की बात है।

२-११-३०

(१२)

चि०…,

तुम्हारा पत्र मिला। अजमेर के जेल वासियों की खबर की जरूरत थी, सो मिली। देखता हूँ, सब समय का अच्छा उपयोग कर रहे हैं। सब कैदियों और बहिनों को आशीर्वाद पहुँचाना। मेरी राय है कि अगर मनोरमा आश्रम के नियमों का पालन करे, और दूसरी जगह भरण-पोषण न हो सके, तो आश्रम के खर्च पर रह सकती है। आश्रम की अनिश्चित स्थिति से जरा भी घबराने की जरूरत नहीं। हां, साधारणतया इन दिनों नये आदमियों को भरती नहीं किया जा सकता। लेकिन मनोरमा जैसी विधवा अनिश्चितता को जानते हुए भी आने का जोखम उठाने को तैयार हो, तो उसे आने की छूट होनी चाहिए। निर्णय तो…और…बहन करेंगी। आवश्यकता पड़ने पर उन दोनों को यह पढ़ा देना।

…भले गई। लेकिन यह आवश्यक है कि वह सावधानी से रहे। कटिस्नान की सुविधा मिलने की तो वहां कम ही सम्भावना है। …का पिता के घर जाना आवश्यक था।

१०-११-३०

(१३)

चि०…,

माता जी आश्रम के नजदीक रहेंगी, तो तुम निश्चित भाव से उनकी सेवा भी कर सकोगे।

किसी का किसी के साथ ब्याह होने की आवश्यकता नहीं। लेकिन कोई हिन्दू स्त्री अच्छे और उचित कारणों से मुसलमान के साथ ब्याह करने का इरादा करे, तो मैं यह न मानूंगा कि वह वैसा करके पाप करती है। अस्पृश्य का तो सवाल ही क्या है? वह अ-हिन्दू नहीं। विवाह का वर्ण के साथ अनिवार्य सम्बन्ध नहीं है। स्त्री-पुरुष की विषय-वासना को मर्यादित करने के लिए विवाह एक सर्वसामान्य धार्मिक व्यवस्था है। इसे ध्यान में रखकर चुनाव के क्षेत्र को हमेशा मर्यादित रखना उचित है। मेरे ख्याल से इसमें सब बातों का उत्तर आ जाता है।

२२-११-३०

(१४)

चि०…,

तुम्हारा पत्र मिला। माताजी न आवें और …उनकी सेवा न रह सके तो मैं सिर्फ एक ही दूसरा मार्ग देखता हूँ। या तो तुम्हें उनके पास जाना होगा, या उनकी सेवा केलिए किसी नौकर का प्रबन्ध करना होगा। इनमें धर्म क्या है, यह तो तुम्हारी अन्तरात्मा बता सकती है। तीसरे आदमी से (यह बात) पूछी नहीं जाती। वह धर्म का निर्णय करे, तो अनुचित होगा। यह प्रश्न इतना सूक्ष्म है कि दूसरा कोई इसे हल नहीं कर सकता। उस स्त्री के सम्बन्ध में, जिसने आत्म-हत्या की है, कुछ विशेष जान सके हो क्या?

२५-११-३०

(१५)

चि०…,

तुम्हारे दोनों पत्र मिले हैं। माता जी वगैरा आ गए यह अच्छा हुआ। …की सम्मति से माता जी के साथ खाने का प्रबन्ध किया हो तो मैं उसमें कोई हर्ज नहीं समझता। उसमें दोष तो है ही। माता जी को समझा देना चाहिए कि तुम दोनों का जीवन कुटुम्ब के जीवन से जुदा है। इसमें आर्थिक प्रश्न रहा है, वह थोड़ी कठिनाई पैदा करता है सही—लेकिन मैंने तो यहां आदर्श की बात लिखी है। हम हमेशा आदर्श तक पहुँच नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते, और कभी-कभी तो आदर्श के खातिर ही हमें अपने व्यवहार को हल्का या घटिया बनाना पड़ता है। इसलिए मेरे इस कथन का यह अर्थ न लगाना कि अब सँयुक्त रसोई घर में जीमने जाने की आवश्यकता है। पिता जी के साथ के सम्बन्ध में कड़ेपन की आवश्यकता है। उनको तो स्पष्ट से स्पष्ट भाषा में समझा देना चाहिए कि वे उनसे नौकरी वगैरा करने और उसके द्वारा धन कमाने की आशा को छोड़दें। इसी में उनकी सेवा है। जब तक वे थोड़ी भी आशा रखेंगे, तब तक लालसा बनी रहेगी और मन भटकता रहेगा। जब आशा छोड़ेंगे, तब लालसा भी छूट जायेगी, मन भटकाना भी छोड़देंगे। यह बात मनुष्य-जाति के स्वभाव में रही हुई है। जब आशा बिलकुल मिट जाती है, तब निराशा एक प्रकार का आश्वासन देती है। यहां बहुतेरे कैदी आजन्म कैदी की सजा वाले हैं। उन्हें छूटने की आशा नहीं है, इसलिए सारा दिन किलोल किया करते हैं। मेरे समान अनिश्चित स्थिति वाले दुखी रहते होंगे—उन्हें यह आशा लगी रहती है कि आज छूटेंगे या कल छूटेंगे—इसलिए पिता जी के साथ के सम्बन्ध में जो दुःख है, वह तुम्हारे अपने मन का है। यदि धर्म स्पष्ट सूझ गया हो, तो पिता जी के सन्ताप का विचार तक न आना चाहिए। पिता जी के कर्ज के लिए मित्रवर्ग से उधार लेकर उन्हें राहत पहुंचाने की नीति पसन्द करने लायक तो कभी नहीं है। मित्रों से इस प्रकार का व्यक्तिगत लाभ न उठाना अच्छा है—लेकिन यहां फिर मैं कोरमकोर आदर्श की बात कर रहाहूं। ··· वगैरा के साथ निकट का सम्बन्ध हो, और रुपये उधार लेने की आवश्यकता हो, तो शायद लेने में भलाई हो। इस सारी समस्या का अनासक्तिरूपी रामबाण चाबी से हल करना।

४-१२-३०

हरिजन-बस्ती

[स्व० पं० रामलग्न त्रिपाठी]

अत्यन्त दीन यह नगर हमारा।
दुःखाग्नि-दग्ध विनती कर रहा है॥
अत्यल्प-शक्ति मम हाय ! नहीं जहां है।
कर्त्तव्य क्या न आपका कुछ भी यहाँ है॥१॥

दुखड़ों की भरमार जहां सुख-साज नहीं है।
किसको गोरस भात पिसान अनाज कहीं है॥
चिथड़ा भी भरपूर किसी के पास नहीं है।
कुनबे भर में कौन अधीर उदास नहीं है॥२॥

दिन में भूनी मोठ मसूर चबा लेते हैं।
दो दो सूखे रोट रात को खा लेते हैं॥
छोले दलिया दाल उदर में भर लेते हैं।
गाजर मूली प्याज कलेवा कर लेते हैं॥३॥

गलियों में दुर्गन्ध घने मल मूत्र पड़े हैं।
बरतन का क्या काम बड़े घट-खण्ड पड़े हैं॥
खाट कहां छै-सात फटे से टाट पड़े हैं।
चक्की पीसे कौन बिना भिड़ पाट पड़े हैं॥४॥

जाड़े का प्रतियोग न उष्ण-विलास यहां है।
गरमी का प्रतिकार न शीतल-वास यहां है॥
दिया जले किस भांति तेल को दाम नहीं है।
काटें मच्छर डंस यहाँ आराम नहीं है॥५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता के सिद्धान्त

[श्री रामावतार विद्याभास्कर रतनगढ़ बिजनौर यू०पी०]

समाजवासी मनुष्यों की सामाजिक इच्छा ही-- समाज का सच्चा राजा है।

समाज अपने निःस्पृह विद्वानों द्वारा अपनी समाज व्यवस्था बनाता है।

जिस राज-व्यवस्था में समाज की सदिच्छा मिली हुई न हो, उसे पैरों से कुचलना चाहिये।

समाज के हाथों से बनी तथा समाज कल्याण करने वाली व्यवस्था को ही राज-शक्ति कह सकते हैं।

समाज के मनको ऊँचा वीर, स्वाभिमानी तथा अप्रतिष्ठित बनाये रखना ही समाजकल्याण है।

देश के भीतर बाहर के शत्रु को नष्ट करना ही राज शक्ति का काम है।

देशमें से धन बटोरना ही जिस शक्ति का काम हो, उसे 'राजा' नाम पाने का अधिकार नहीं है।

जिस देश में अपनी समाज व्यवस्था नहीं है वह पराधीन है।

जिस भूमि पर जो मनुष्य समाज उत्पन्न हुआ है उस पर उसीका न्यायोचित अधिकार है। उस पर उसी का अधिकार हो तब ही वह मनुष्योचित अवस्था है। यही स्वतंत्रता है।

अपने मनों पर दूसरों का अधिकार अमनुष्योचित अवस्था है यही परतंत्रता है।

परतंत्रता से असहयोग ही स्वतंत्रता है।

परतंत्रता को अपनी ओर से किसी प्रकार की सहायता न देना, और दी जा रही होतो उसे रोक देना ही स्वतंत्रता का जीता जागता रूप है।

पराधीन देशों का यह ईश्वरीय अधिकार है, उनका यह पवित्र कर्तव्य है कि वे प्रत्येक संभव उपाय से अपने अधिकारापहारी को अपने देशसे निकालें और अपनी समाज व्यवस्था को अपने कलयाण की दृष्टि से बनायें।

स्वतंत्र रहना मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार है स्वतंत्र रहना मनुष्य का स्वभाविक कर्तव्य है।

परतंत्रता से लड़कर अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करना ही स्वतंत्रता है

स्वराज्य या स्वतंत्रता एक ही बात है।

स्वराज्य की समस्या मनुष्यता की समस्या है।

रोटी कपड़े का झगड़ा स्वतंत्रता की समस्या नहीं है।

स्वाभिमान का झगड़ा ही स्वतंत्रता की समस्या है।

जिन बातों से मनुष्य मनुष्य बनता है उन्हीं को मनुष्यता कहा जाता है।

सत्य, प्रेम, अहिंसा, न्याय, शान्ति, आदर्श, शुद्ध आचरण, धर्मपरायणता, शूरता-वीरता तथा स्वतंत्रता से युक्त जीवन ही मनुष्यता है।

मनुष्यता को खोना ईश्वर को खोना है। मनुष्यता को खोना नास्तिकता है।

प्रभु की सृष्टि में से नास्तिकता का नष्ट करना ही प्रभु की सच्ची सेवा है।

सेवा से मनुष्य का बड़ा लाभ है। उससे उसका बन्धन कट जाता है।

व्यक्तिगत सुख-सुविधा के मोह में फंसकर आदर्श भुला डालना बन्धन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामाजिक जीवन की सेवा ही मुक्ति है।

सेवा ही मुक्ति का मार्ग है।

मुक्त मनुष्यों का सारा जीवन ही सेवामय होता है।

सेवा टोटे का सौदा नहीं है।

सेवा परम सुखकी अवस्था है।

सेवा मनुष्य का सौभाग्य है।

मनुष्यों को अपनी स्वतंत्रता के लिये, अपने समाज की स्वतन्त्रता की सेवा करनी चाहिये।

मनुष्य को व्यक्तिगत जीवन की सुख-सुविधा को छोड़, मोह त्यागकर मनुष्य जाति के कल्याण की दृष्टिसे अपना कर्तव्य मार्ग बनाना चाहिये।

मनुष्य को दूसरे मनुष्यों के सम्बन्ध में यह सोचना चाहिये कि ईश्वरही अनन्त मनुष्यों के रूप में प्रगट हो कर मनुष्यता का आनन्द लेने के लिये मानव-लीला करता है।

मनुष्यता ही मनुष्य का आराध्य ईश्वर है।

भोग मनुष्यत्व हीनता है।

भोग ईश्वर विरोधी नास्तिकता है।

भोग ने ही व्यक्तिगत स्वछन्दता को जन्म दिया है।

मनुष्य अपने स्वरूप को भूलकर मनुष्यता को छोड़ देता है और व्यक्तिगत जीवन से प्यार करने लगता है।

भोगेच्छा ने मनुष्य का भाईचारा नष्ट कर डाला है।

भोग ने एक ही आदि पुरुष की सन्तानों को लड़ाया है।

त्याग में एकता, समता, सहिष्णुता, दृढता आदि सब मनुष्योचित गुण हैं।

भोग में अनेकता, विषता, असहिष्णुता और अदृढ़ता आदि सब अमनुष्यो चित दुर्गुण हैं।

भोग मनुष्य जाति का ऊपर से मीठा दीखने वाला परम शत्रु है।

त्याग मनुष्य जाति का ऊपर से कठोर दीखने वाला परम हितैषी मित्र है।

मनुष्य के मस्तिष्क ने त्याग से ही अपना कौशल दिखाया है।

मनुष्य जाति ने सदा से त्याग को अपने सिर पर रक्खा है।

त्यागियों के अनुभवों ने ही मनुष्य के मनका हार्दिक संताप मिटाने का मार्ग निकाला है।

दैवी संपति अर्थात् सद्गुण ही मनुष्य जाति का सच्चा उपार्जनीय धन और भव रोग को औषधी है।

भोगी जीवन बिताना मनुष्य का अपने अधिकार से पतित होना है।

मनुष्य को सेवा धर्म अपना कर जीवन-यात्रा करनी चाहिये।

देश में मनुष्यता नाम के दिव्यगुणों का प्रचार ही देश की स्वतंत्रता की सेवा है।

भोगों में फंसने वाले लोगों को अत्याचारी शासकों की इच्छानुसार नाचना पड़ता है।

भोगी लोग पतित, अपमानित, तिरस्कृत पददलित होकर भी श्रीयुक्त जीवन बिताना चाहते हैं।

भोगी स्वाभिमानी परन्तु निधन जीवन से कांपते हैं।

भोगी का आत्मा दास होजाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दासता छुड़ाना ही देश को मुक्त बनाना है।

भोगों का मोह तथा आलस्य का प्रेम छुड़ाने से देश की दासता हटती है।

अपमानित सुखी व निश्चित जीवन से सम्मानित भूखा-नंगा, अनिश्चित जीवन अधिक मूल्यवान और तेजस्वी होता है।

देश का भोग-मोह तथा आलस्य छोड़ना ही संग्राम के लिये उद्यत होजाना है।

भोग-मोह संग्राम न करने देने वाली अवस्था है।

जो देश की संग्राम-विमुखता हटाना चाहें उन्हें देश का भोग-मोह हटाना चाहिये।

भोग-मोह हटते ही देश में कर्तव्य बुद्धि जाग उठती है।

भोग-प्रेम से मनुष्य युद्ध-विमुख होकर पशु शक्ति का चरण-चुम्बक बनजाता है।

भोगी मनुष्य अपना अधिकार बेचकर पेट भरने लगता है।

भोगी अपने अधिकारों का मोल-तोल करता है।

भोगी अपने अधिकारों के लिये शत्रु से समझौता करता है।

भोग में स्थिर जीवन, नीति, स्वाभिमान तथा मनुष्यता का नाम तक नहीं है।

भोगी की नीति बाहर की अनुकूलताओं पर निर्भर होती है।

भोगी का मन चूहे जैसा निर्बल और पद पद पर दबने को उद्यत रहता है।

भोगी मनुष्य निर्बल को मारता और सबल से पिटता है।

भोगी मनुष्य अपनी मनुष्यता का संहार करता रहता है।

भोगी मनुष्य अपने को भोगी पशु बनाता रहता है।

जब तक मनुष्य-समाज अपने को पशु बनाने के धोखे से नहीं बचायेगा तब तक उसे स्वतंत्रता का मुंह नहीं दीखेगा।

स्वतंत्रता आते ही स्वाभिमान-हीन जीवन छीन लेती है।

स्वतंत्रता स्वतंत्रता के क्रान्तिकारी स्वभाव से न घबराने वालों की मुट्ठी में बैठती है।

स्वतंत्रता निर्बलों में प्राण डाल देती है।

स्वतंत्रता कायरों को वीर बनाती है।

स्वतंत्रता पतितों को पुन्यात्मा बनाती है।

स्वतंत्रता विजित को विजेता बनाती है। स्वतंत्रता नीचे झुकी हुई दास आंखों को ऊपर उठवाती है और उन में तेज भर देती है।

स्वतंत्रता भोगी जीवन की सुख सुविधा की उपेक्षा कराती है।

स्वतंत्रता मनुष्य को स्वाभिमान के मद से मस्त कर देती है।

स्वतंत्र मनुष्य स्वाभिमान या मनुष्यता का अपमान नहीं सह सकता।

इन्द्रियों के भोग तथा भोजन-वस्त्रादि के दास मनुष्य, मनुष्यता का अपमान तो सह लेते हैं परन्तु उनसे भोगों की हानि नहीं सही जाती।

आहार, निद्रा आदि की सुविधा ढूंढना मनुष्य की विशेषता नहीं है।

मनुष्य को मनुष्यता की रक्षा करने के धर्म संकटों पर भोगों की सुविधाओं को अनेक बार सहर्ष और सगौरव त्यागना पड़ा है।

—०—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साम्राज्यों का निर्माण

[श्री भगवानदास केला : भारतीयग्रन्थमाला, वृन्दावन]

"राजनीति वैश्या की तरह, अनेक रूप वाली होती है।"

साम्राज्यों का प्रारम्भ—संसार में समय-समयपर अनेक साम्राज्य बने हैं। सबसे प्रथम साम्राज्य कहां और कब बना, यह विषय बहुत विवाद-ग्रस्त है। इसका सर्वमान्य निर्णय नहीं हुआ। प्रायः पाश्चात्य लेखक पुरानी सभ्यताओं को ईसामसीह से छः-सात हजार वर्ष ही पहले की मानते हैं। उनकी दृष्टि भूत काल में बहुत दूर तक नहीं जाती। हां अब वैज्ञानिक अन्वेषणों और पुरातत्व सम्बन्धी खोज के कारण वे लाखों वर्ष पहले की भी बात सोचने को बाध्य हुए हैं। किन्तु भारतवर्ष पहले से ही अपनी सामाजिक या धार्मिक तथा राजनैतिक व्यवस्था का सम्बन्ध अतीत काल से, सृष्टि के आरम्भ से, जोड़ता आया है। यहां अनेक शास्त्रकारों ने अपने-अपने ढङ्ग से स्वायम्भुमनु से लेकर आधुनिक काल तक का कुछ क्रम-बद्ध विवेचन किया है। इस देश का विस्तार ही यहाँ वालों के विशाल दृष्टि कोण का सूचक है। संसार के इतिहास में वह समय कितने महत्व का है, जब इतने बड़े भू-खंड की कल्पना स्थूल रूप से की गयी, और इसको एक नाम 'भारतवर्ष' से सम्बोधित किया जाने लगा।

भरत खंड का विस्तार अति प्राचीन काल में कितना था, कितना भाग पहले स्थल था, और कहां समुद्र था, इस विषय में भू गर्भ वेत्ताओं में मत-भेद हैं। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उनके हिसाब से भरत-खण्ड में छोटे-बड़े कितने ही राज्यों का समावेश होता था।

साम्राज्य-निर्माण और धर्म, चक्रवर्ती राज्य—साम्राज्य जैसी विशाल संस्था किसी एक या दो बातों से ही नहीं बनती, समय-समय पर देश कालानुसार भिन्न-भिन्न बातें उसके निर्माण में सहायक होती हैं। पहले इस बात का विचार करें कि साम्राज्य बनाने में धर्म का क्या भाग रहा है। इसके लिए भारतवर्ष का प्राचीन साहित्य बहुत सहायक है। यहां के शास्त्रों में अश्वमेध और राजसूय यज्ञ, तथा चक्रवर्ती राज्य का विस्तृत वर्णन है। यज्ञ करने वाला राजा यज्ञ से एक वर्ष पूर्व एक सुन्दर और बलवान घोड़ा छोड़ देता था। उसके साथ कुछ सैनिक होते थे। घोड़ा चारों दिशाओं में जहां-तहां घूमता यदि कोई इसे पकड़ लेता तो इसका आशय यह होता था कि वह यज्ञ करने वाले को चुनौती देता है; जब तक वह उसको न जीतले वह यज्ञ करने का अधिकारी नहीं। यदि कोई घोड़े को न पकड़े तो यह समझा जाता था कि कोई व्यक्ति यज्ञ करने वाले की बराबरी का, या उससे अधिक शक्तिशाली होने का, दावा नहीं करता, सब उसकी अधीनता स्वीकार करते हैं। इस प्रकार प्रतिद्वन्द्वियों को विजय करके, अथवा सब की अधीनता सूचित हो जाने पर, यज्ञ किया जाता था; उसमें सब अधीन राजा भाग लेते थे, और यज्ञ करने वाले को उपहार या भेंट देते थे। यज्ञ की समाप्ति पर इसके करने वाले को 'महाराजाधिराज' की उपाधि मिलती थी। इस पराक्रमी राजा को अपने कृत्य के लिये शास्त्रों का आधार प्राप्त था, उनमें लिखा है कि चातुर्मास (वर्षा ऋतु) के अन्त में शूरवीर राजा सेना ले जाकर अन्य देशों को विजय करें, और राजसूय आदि यज्ञ करके चक्रवर्ती बनें।

भारतीय पाठक इस चक्रवर्तित्व को देश की राजनैतिक शक्ति के संगठन के लिए, तथा अन्य राज्य वालों से रक्षा के लिए अत्यावश्यक और अनिवार्य मान सकते हैं। परन्तु एक तटस्थ दर्शक के लिए यह सब क्या है? यों तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्येक पक्ष के समर्थन में कुछ न कुछ तर्क या दलील उपस्थित की जा सकती है परन्तु बाहरी आवरण को हटा कर देखिए, नग्न सत्य क्या है ? किसी राज्य पर, चाहे उसने आपका कुछ बिगाड़ा नहीं, आक्रमण कर देना, स्वयं बड़ा बनने के लिए दूसरों को अपने अधीन करना, उनसे थोड़ा बहुत कर या भेंट लेना—यही तो चक्रवर्ती राजा बनने का कार्य क्रम है। और, अपने राज्य को बढाना तथा दूसरे राज्यों को अपने अधीन करना, यह साम्राज्य-निर्माण की ही तो भावना है।

साम्राज्य निर्माण में धर्म प्रचारकों का भाग—धर्म प्रचारकों ने साम्राज्य-निर्माण में खासा योग दिया है। धर्मोपदेशक अपने राज्य या देश-बन्धुओं की सहायता पाकर अन्य देशों में गये, और वहां क्रमशः लोगों के धार्मिक विचारों में परिवर्तन किया। धीरे-धीरे इन नये विचार वालों की संख्या बढती गयी, यहां तक कि देश में नये धर्म के साथ इनके प्रचारक भी आदर और सम्मान की दृष्टि से देखे जाने लगे, और यहां के निवासियों पर सैनिक विजय न होते हुए भी मानसिक-विजय पूर्ण रूप से हो गयी। इसका यह परिणाम कहीं कहीं यह हुआ कि अन्ततः इस देश के आदमी धर्म-प्रचारकों के देश की शासन पद्धति भी पसन्द करने लगे, और उसे अपने यहां प्रचलित करने के लिए वहां के राजनीतिज्ञों का, अपने शासकों के रूप में भी अभिनन्दन करने लगे। कुछ ऐसे ही क्रम से प्राचीन काल में बौद्ध धर्म प्रचारकों ने लङ्का, श्याम आदि को भारतवर्ष का उपनिवेश बनाया था।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि विदेशी मिशनरी या प्रचारकों के उद्योग से जहां कुछ आदमी नये धर्म को स्वीकार करने वाले हो जाते हैं, वहां उनके कुटिल प्रयत्नों से देश में धार्मिक या साम्प्रदायिक दलबन्दी भी हो जाती है, और नये साम्प्रदाय वालों का अपने देश-बन्धुओं से विरोध होने लगता है। विदेशी धर्मप्रचारक तो यह चाहते ही रहते हैं कि देश में फूट और संघर्ष पैदा हो जाय। इस संघर्ष वृद्धि का कारण बहुधा यह होता है कि पुराने धर्म वाले अपने इन बन्धुओं के प्रति सहिष्णुता का व्यवहार नहीं करते, वे इन्हें धर्म-च्युत और नास्तिक आदि समझ कर तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं, और यह नया दल जोशीला तो होता ही है, साथ में विदेशियों का सहारा और उत्तेजना पाकर और भी उद्दंड और अविनयी हो जाता है। बस, जहां एक बार इन दोनों दलों की आपस में ठनी कि धर्म-प्रचारकों ने नवीन विचार वालों का पक्ष लिया, ये अशान्ति के अत्युक्ति-पूर्ण सम्वाद भेज कर अपने देश वालों की, तथा अपने मतानुयायी अन्य देश वालों की, सहानुभूति प्राप्त कर लेते हैं, और सैनिक शक्ति का प्रदर्शन करा कर इन नये प्रदेशों पर कुछ-न-कुछ राजनैतिक अधिकार प्राप्त कर लेते हैं, और एक अंश में अपने साम्राज्य की नींव डाल देते हैं। जैसा कि डाक्टर वी० शिवराम ने लिखा है, "केवल मिशनरियों के ही कार्य से आस्ट्रेलिया फिजी, दक्षिण और मध्य अफ्रीका सीरालोयन वर्मा और गायना आदि महत्वपूर्ण उपनिवेशों में ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ जमी। इन तमाम भू-भागों में व्यापारिक या राजनैतिक नियन्त्रण होने से बहुत पहले मिशनरियों के अड्डे बन गये"

आवश्यकता-पूर्ति—बहुधा जिन देशों में जीवन निर्वाह की सुविधाएँ नहीं होतीं, या जहां के निवासियों की आवश्यकताएँ इतनी बढ जाती हैं कि वहां पूरी नहीं हो पाती, उन देशों के आदमी बाहर निकल पड़ते हैं, तरह-तरह की मुसीबतें सह कर, नयी नयी पृथ्वी की खोज करते हैं जहां-कहीं अनुकूल या उपजाऊ भूमि पाते हैं, वहां बसने का प्रयत्न करते हैं। इसमें वहां के असली निवासियों से युद्ध ठनता है। यदि वे निर्बल होते हैं तो ये उन्हें जल्दी ही बस में कर लेते हैं, कुछ को मार-पीट कर शेष पर अपनी प्रभुता स्थापित करते हैं। और यदि, नये भू-भागों के आदमी बलवान होते हैं तो उनसे मित्रता का सम्बन्ध करते हैं, अथवा यदि आवश्यक जान पड़े तो प्रकट रूप से उनकी अधीनता भी स्वीकार कर लेते हैं। पीछे ज्यों ज्यों उपयुक्त अवसर पाते हैं, ये अपना बल बढाते रहते हैं, और कालान्तर में उसे अपना उपनिवेश बना डालने की फिकर में रहते हैं। पन्द्रहवीं, सोलहवीं शताब्दी में हालैंड, फ्रांस, स्पेन और इंगलैंड आदि के निवासी संसार के विविध भागों में गये, जहां अनुकूलता मिली, वहां ही उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बसने या अपने उपनिवेश स्थापित करने का प्रयत्न किया, इसका मुख्य कारण इनका, अपनी तत्कालीन परिस्थिति से, असन्तुष्ट होना, तथा उनकी भौतिक आवश्यकताओं का अपने देश में पूरा न हो सकना था।

व्यापार — व्यापार से भी साम्राज्य -निर्माण में बड़ी सहायता ली जाती है। साहसी आदमी आर्थिक लाभ के लिये अनेक कष्ट उठा कर विदेशों में जाते हैं, वहां राजा-महाराजाओं से ही नहीं, साधारण सरदारों या दरबारियों के प्रति भी अनुनय विनय और शिष्टाचार दिखा कर, उन्हें चित्ताकर्षक वस्तुओं की भेंट देकर छोटी-छोटी व्यापारिक सुविधाएँ या एकाधिकार प्राप्त करते हैं। ये वहां के अधिकारियों के नाज नखरे उठा कर भी उनकी कृपा-दृष्टि बनाये रखने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार व्यापार के नाते अपने पाँव जमा कर, सैनिक तथा राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने के वास्ते ये अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा करते हैं। जब कभी वहां के विविध अधिकारियों में मनोमालिन्य होता है, अथवा इन व्यापारियों के कूटनैतिक कौशल से फूट हो जाती है, तब इनकी बन आती है, और ये एक का पक्ष लेकर दूसरे पर विजय पाने का भरसक प्रयत्न करते हैं, और पीछे उसकी शक्ति का क्षय हो जाने पर, ये अपने सहयोगी को तो सहज ही अपने अधीन कर लेते हैं;और, इस प्रकार अपनी बढ़ी हुई शक्ति का, क्रमशः दूसरों को पराजित करने में, उपयोग करते हैं।

कभी कभी ये विदेशी व्यापारी अपने व्यापार का विस्तार करके देश को आर्थिक दृष्टि से अपने अधीन करते जाते हैं। देशी व्यापारी मुंह ताकते रह जाते हैं, सब बाजार और मण्डियां इनके हाथ से निकल जाती हैं। यदि संयोग से वह देश विदेशी व्यापारियों की चालों को समझ कर इनके चंगुल से मुक्त होने का प्रयत्न करता है तो ये अपने हितों की रक्षा की दुहाई देकर उससे युद्ध ठान देते हैं। इसमें इन्हें अपने मातृ देश का सहारा मिलता है विदेशी व्यापारियों के सामने एक मात्र लक्ष्य धनोपार्जन करना रहता है, और वे देश के निवासियों में मादक पदार्थ तथा विलासिता की वस्तुओं का प्रचार करने में कुछ भी संकोच नहीं करते। व्यापार की रक्षा के नाम पर तोप-बन्दूक आदि युद्ध-सामग्री का प्रदर्शन ही नहीं, प्रत्यक्ष उपयोग किया जाता है। इस प्रकार व्यापार, राज्य विस्तार का, साम्राज्य-निर्माण एवं वृद्धि का, साधन होता है। भारतवर्ष में ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा बंगाल, बिहार, उड़ीसा और पीछे अवध आदि का अधिकृत किया जाना, तथा चीन में पाश्चात्य राज्यों का क्रमशः प्रवेश इसी ढङ्ग से हुआ है।

व्यापार का साम्राज्य-निर्माण में ऐसा महत्व है कि बहुत-से साम्राज्य-सूत्रधार उपजाऊ देशों को अपने शासनाधीन रखने का मुख्य लाभ यही मानते हैं, कि वहां उनका व्यापार सम्बन्धी प्रभुत्व रहे, व्यपार से होने वाले लाभ के वे एक मात्र अधिकारी हों, तथा कोई दूसरा उसमें भागीदार या प्रतिद्वन्दी न हो।

महाजनी महाजनी अर्थात् रुपया उधार देने से भी साम्राज्य-निर्माण का मार्ग प्रशस्त होता है। अमरीका के भूत पूर्व राष्ट्रपति श्री वुडरो विलसन के इस कथन में बहुत सचाई है कि 'पूंजी की चालें विजय की चालें हैं। राज-तृष्णा वालों से जो देश कुछ उधार ले लेता है, उसे सदैव उनसे दबना पड़ता है। वह उन्हें व्यापारिक ही नहीं कालान्तर में पुलिस और फौज रखने की भी, सुविधाएँ प्रदान करने को बाध्य होता है। ऋण देने वाले उस समय की प्रतीक्षा करते रहते हैं जब ऋण (और सूद) की रकम काफी बढ जाय, और वे जमानत के रूप में उस देश का कोई भू-भाग ले सकें। वे समय-समय पर उसे ऐसे प्रलोभन देते रहते हैं कि सड़कें, नदी, रेल, तार टेलीफोन आदि बनाने अथवा सुप्रबन्ध करने आदि के लिये अधिकाधिक रुपया उधार लें। इन कामों के लिये वे अपने भाई-बन्धुओं की सेवाएँ भी प्रदान करते हैं। यदि इसमें उन्हें सफलता मिल जाती है, तो एक बड़ी मंजिल तय हुई समझिए, आगे का मार्ग और सरल हो जाता है।

महाजन से एक बार बड़ी रकम या कई बार छोटी २ रकमें उधार लेने वाला मजदूर या किसान, बहुधा चिरकाल तक उसका दासानुदास हो जाता है। कई बार ऐसा भी देखा जाता है, कि उस रुपये के केवल सूद को अदा करने के लिये ही वह अपना एक लड़का उसके वहाँ नौकर रख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देता है। फिर अनेक प्रयत्न करने पर भी उसे मुक्ति-पत्र नहीं मिलता। यह बात व्यक्तियों की है। और ऐसी ही बात बड़े पैमाने पर, देशों की है। इसके उदाहरणों की इतिहास में कमी नहीं। ईरान, चीन, मिश्र आदि में अङ्गरेजों का हस्तक्षेप इसी प्रकार हुआ। अभी हाल (सन् १९४० ई०) की बात है, इङ्गलैंड ने अपने कुछ द्वीप संयुक्तराज्य अमरीका के पास रहन रख कर उससे लड़ाई के लिए विध्वंसक जहाज आदि लिये हैं। इन टापुओं का प्रबन्ध निर्धारित अवधि तक अमरीका के आधीन रहेगा।

सभ्यता—साम्राज्य-निर्माता अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अन्यान्य बातों में सभ्यता-प्रचार का भी आश्रय लेते हुए पाये जाते हैं। ये 'अवनत' या 'असभ्य' देशों में जाकर वहां के लोगों को उनकी रीति-भाँति या रहन-सहन आदि के दोष खूब बढा चढा कर, परन्तु आकर्षक ढङ्ग से दिखाते हैं, और उनके सामने अपने ऊँचे दर्जे के रहन-सहन का उदाहरण उपस्थित करते हैं, तथा उनमें ऐसी आवश्यकताओं की मांग बढा देते हैं जिनकी पूर्ति के लिये उन्हें इन विदेशियों का आश्रय तकना पड़े। इस प्रकार, ये अपना आर्थिक लाभ उठाते हैं। परन्तु इससे बढ कर उनका यह प्रयत्न होता है कि किसी प्रकार नवयुवक उनसे शिक्षा पाने लग जायें। वे बहुत मनोरंजक और आकर्षक ढङ्ग से, नाम-मात्र के व्यय से अथवा निश्शुल्क ही नवयुवकों की शिक्षा की व्यवस्था करते हैं। भावी नागरिकों की शिक्षा को अपने हाथ में कर लेने से वे एक प्रकार से अपने राज्य की नींव दृढ कर लेते हैं और उसे गुप्त रूप से स्थायी बनाने में सहायक होते हैं। इस बात को ध्यान में रखने से ही हम भारत सरकार के सौ वर्ष पहले के कानूनी सलाहकार मेकाले के निम्नलिखित शब्दों का वास्तविक महत्त्व समझ सकते हैं। उसने भारत में अंगरेजी शिक्षा प्रचलित करने का समर्थन करते हुए कहा था, "हमें अपनी सारी शक्ति लगा कर ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि हम भारतवासियों की एक ऐसी सेना तैयार कर सकें जिसके आदमी हमारे और हमारी लाखों प्रजा के बीच दुभाषिये का काम कर सकें; जो रक्त और रंग में तो भारतीय ही रहें परन्तु रुचि, विचार, भाषा और भावों में पूरे अंगरेज हों।' इस प्रकार किसी देश में रक्त और रंग में स्वदेशी, और, रुचि विचार, भाषा और भावों में विदेशी, आदमियों की संख्या बढाना साम्राज्यवादी सभ्यता-प्रचारकों का खास काम होता है।*

---

* लेखक की "साम्राज्य, और उनका पतन" नामक नयी पुस्तक से जो शीघ्र प्रकाशित होने वाली है।

मुझे वहाँ जाना अच्छा नहीं लगता!

मैं वहाँ जाता हूँ, तो आँगन में ही मैला पड़ा मिलता है। बच्चे वहीं टट्टी फिरते हैं। हजारों मक्खियाँ भिनभिनाती रहती हैं। जब भंगी आता है तभी सब साफ करता है। माता साफ करे तो उसे नहाना पड़ता है, और पिताजी तो साफ कर ही नहीं सकते। आँगन में ही ईख के छिलके, कागज के टुकड़े ईंटों व खपरों के टुकड़े और कपड़ों की चिन्दियाँ आदि कूड़ा करकट पड़ा रहता है। किन्तु जहाँ मैले का खयाल नहीं, वहाँ कूड़े करकट का खयाल कौन करने लगे? घर में जाता हूँ, तो किवाड़ के पास ही जूते इधर उधर पड़े मिलते हैं। दो चार जूते तो उलटे सीधे भी पड़े होते हैं। इन जूतों पर धूल चढ़ी हो, मैले हों तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। इन सबको साफ रखने की किसी को फुरसत हो तब न?

आँगन में देखता हूँ, तो बच्चों के कपड़े इधर-उधर बिखरे पड़े पाता हूँ। किसी का रूमाल, किसी के खिलौने, किसी का कुछ और किसी का कुछ, जहाँ तहाँ पड़ा हुआ देखता हूँ। और यह सब कितनी खराब हालत में? किसी को हाथ में लेने की इच्छा तक नहीं होती; किताबों के कवर फटे हुए, कपड़े मैले कुचैले, खिलौने पुराने और टूटे हुए, मोटर बिलकुल टूटी फूटी, और रबर की चिड़िया का पेट फटा हुआ! जहाँ ऐसे कई टूटे फूटे खिलौने तितर बितर पड़े हों, वहाँ जाना मुझे अच्छा नहीं लगता। —स्व० गिजुभाई ('हिंदी शिक्षण पत्रिका)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म शिक्षा

[श्री आचार्य हरभाई त्रिवेदी, भावनगर]

प्रश्न—धर्माचार्य द्वारा शिक्षण-सँस्था के सञ्चालन के विषय में आपका क्या विचार है ?

उत्तर—प्राचीन समय में शिक्षण सँस्थाओं की व्यवस्था प्रायः धर्माचार्य ही करते थे। धर्माचार्य अपने आश्रमों को ही शिक्षण-सँस्थाएं बना लेते थे। शिक्षा प्राप्ति के इच्छुक राजा या रङ्क सभी के लड़कों को उनके आश्रमों में स्थान मिलता था। उस समय शिक्षाक्षेत्र में गुरु-पद्धति की प्रधानता थी। विद्योपार्जन के लिए गुरुकुल में रहना आवश्यक समझा जाता था। विद्याप्राप्ति के लिए आया हुआ जिज्ञासु बालक, सहज स्वभाव से गुरु के चरणों में बैठता था। गुरु अपने समस्त विद्या-धन को निसङ्कोच हो उसके समक्ष उपस्थित करता था। शिक्षा के सभी नवीन तत्व गुरु के अपने व्यक्तित्व में से ही प्रस्फुटित होते थे। शिक्षण विषयक पेचीदे प्रश्न उस समय बहुत कम उत्पन्न होते थे। मन्द बुद्धि तथा तीव्र बुद्धि दोनों प्रकार के बालकों को गुरु समान भाव से प्रेम पूर्वक पढ़ाता था। और उनकी सभी प्रकार की कठिनाइयों को दूर करने में समर्थ होता था। विद्यार्थी विनम्र भाव से गुरु के समीप बैठ कर श्रद्धापूर्वक अपनी उलझनों को, गुरु के निर्णय के अनुसार, सुलझाता था। उसका व्यक्तित्व गुरु के व्यक्तित्व में विलीन हो जाता था। गुरु भी उसको पराया नहीं वरन् अपने ही पुत्र के समान समझता था। गुरु-शिष्य का पारस्परिक प्रेम पूर्ण एवं विश्वास पूर्ण सम्बन्ध ही उस समय का शिक्षा-शास्त्र समझा जाता था। बहुश्रुत एवं बहुविद्या विशारद-गुरु भिन्न-भिन्न प्रकार के अनेक विद्यार्थियों को पढ़ा सकता था। उस युग में शिक्षा कार्य ही गुरु का जीवन ध्येय बना हुआ था। उस समय का गुरु अनेक विषयों में निष्णात होते हुए भी वेतनभोगी नौकर नहीं होता था।

अध्ययन-अध्यापन उस समय के गुरुओं का जीवन व्यवसाय एवं धर्म-कृत्य होता था। जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिए, गुरु अध्ययन-कार्य को सब से अधिक महत्व देता था। आजीवन-विद्याभ्यासी-गुरु अपने विद्यार्थी के अन्तर में बड़ी सरलता से ज्ञान-दीप प्रदीप्त कर सकता था। उस समय व्यक्तिगत तथा समष्टिगत जीवन इतना बहुरङ्गी और जटिल नहीं था। गुरु शिष्य के प्रेमपूर्ण सम्बन्ध के कारण उस समय शिक्षा-कार्य बड़ा सुगम बना हुआ था।

किन्तु वह गुरुयुग आज नहीं है। आज न तो उस समय जैसी सुगमता है, न प्रभुता है, और न उस समय जैसे मनुष्य ही आज दृष्टिगोचर होते हैं। शिक्षा कार्य तो आज एक प्रकार का व्यापार सा बना हुआ है जिसमें बहुश्रुतता तथा प्रकांड पाण्डित्य का सर्वथा अभाव है। आधुनिक युग विशेषज्ञों का युग है और साथ ही आज के गुरु वेतनभोगी होते हैं।

आधुनिक शिक्षण-सँस्थाओं को भले ही हम धर्माचार्यों के आधीन करदें, किन्तु उनका पद और प्रतिष्ठा आज वह नहीं है जो पहिले थी। आधुनिक युग धर्माचार्यों की सर्वग्राही शक्ति को स्वीकार नहीं करता। इसके सिवा हमें स्पष्ट तौर पर यह भी स्वीकार करना होगा कि आज के धर्माचार्य शिक्षा के विशाल कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न करने में असमर्थ हैं। इसके अनेक कारण हो सकते हैं; किन्तु, सबसे प्रबल कारण, जो शिक्षा-कार्य में भारी रोड़ा अटका सकता है वह उनका 'पन्थाग्रह' है। आज के धर्माचार्य पण्डित हो सकते हैं और उनमें कुछेक बहुश्रुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी हो सकते हैं; परन्तु विशेषत: वे पन्थाग्राही ही होते हैं। शिक्षा के पुनीत कार्य के लिए सब से अधिक आवश्यकता है धार्मिक उदारता की। यथार्थ शिक्षा के मार्ग में धर्म पन्थों का आग्रह भारी अड़चन डालता है। स्वानुभव के मार्ग पर चलने के बाद, विचार परिपक्व हो जाने पर प्रौढावस्था में यदि मनुष्य अपने जीवन के लिए उपयोगी किसी भी पन्थ को स्वीकार करके उसका आग्रह करता है, तो इसमें कोई बुराई नहीं है। परन्तु शिक्षा के पुनीत कार्य में उस आग्रह की पुट आते ही वह कलुषित हो जाता है। 'पन्थाग्रह' रहित धर्माचार्य आज मिलने मुश्किल हैं। इसलिए शिक्षा शास्त्री शिक्षण-सँस्थाओं को धर्माचार्यों के हाथ में देते हुए डरते हैं। धर्माचार्यों में जितनी ज्ञान की विपुलता होती है उतनी ही मत-सहिष्णुता की प्रचुरता हो, तो शिक्षण सँस्थाओं को उनके हाथ में देना श्रेयस्कर हो सकता है। शिक्षण सँस्थाओं को यदि धर्माचार्यों के हाथ में देना ही हो, तो हमें धर्म की अत्यन्त व्यापक कल्पना करनी चाहिए। धर्म किसी पन्थ में बन्धी हुई वस्तु नहीं है। मुक्ति के लिए उद्योगशील आत्मा को जो मार्ग अधिक उपकारक एवं रुचिकर प्रतीत होता है, उसी मार्ग का वह अनुसरण करती है। ऐसा करने से जिन वृत्तियों का उदय होता है, उन सब वृत्तियों को धार्मिक कह सकते हैं। ऐसे व्यापक धर्म का जो अनुसरण करता है, वही सच्चा धार्मिक है। आज के धर्माचार्य इस विचार को दृढता के साथ अपने मन में स्थान दें तो धर्म में महान् एवं महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो सकता है। जिस प्रकार शिक्षा जीवन-व्यापी वस्तु है, उसी प्रकार धर्म जीवन को मापने का एक सर्वव्यापी तत्व है। जीवनोद्देश्य की सिद्धि के लिए मनुष्य को जिन साधनों की आवश्यकता होती है, उन साधनों को वह धार्मिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त कर सकता है। अत: धर्म रहित शिक्षा, शिक्षा नहीं है, और जो धर्म शिक्षा के तत्वों की उपेक्षा करता है वह धर्म नहीं है। इसलिए धर्माचार्यों में इस प्रकार की विचार-शुद्धि का प्रादुर्भाव होना अत्यावश्यक है। आज के धर्माचार्य पन्थों की दलदल से बाहर निकल कर जीवन-शास्त्र के अनुसार शिक्षा-सँस्थाओं का सञ्चालन करें तो बड़े सौभाग्य की बात होगी।

प्र०—क्या प्रातः और सायङ्काल विद्यार्थी से धार्मिक क्रिया करवाना आवश्यक है?

उ०—इस सवाल को धार्मिक क्रिया-कांड का सवाल मान सकते हैं। यदि इस बात को समझ लिया जाए कि धर्म अन्तर में से पैदा होने वाली वस्तु है जो बाहर से लादी नहीं जा सकती, तो ऐसे सवालों का निर्णय बड़ी आसानी से किया जा सकता है। मनुष्य के अन्तर में से विकसित धार्मिक वृत्ति किसी न किसी स्थूल रूप में प्रकट होना चाहती है। और आज के पेचीदा मानव-जीवन में इस वृत्ति का व्यवस्थित रूप से प्रकट होना किसी भी तरह आपत्तिजनक नहीं है। इसलिए धार्मिक सँस्थाओं में सामूहिक प्रार्थना का आयोजन करने में कोई हानि नहीं है। किन्तु यह याद रखना चाहिए कि सभी प्रार्थनाओं और सभी क्रिया-कांडों से धार्मिक वृत्ति का उदय नहीं होता। यह कहना ध्रुव सत्य है कि आज का समस्त क्रिया-कांड जड़ रूप बना हुआ है। यह ठीक है कि मानव-जीवन में धार्मिक वृत्ति उत्पन्न होने के बाद उसका किसी भी रूप में प्रकट होना वन्दनीय है। इसीलिए जिन-जिन महापुरुषों के जीवन में धर्म का उदय हुआ है उस धर्म को व्यक्त करने वाले स्थूल रूपों की सदा पूजा की गई है।

यह सही है कि कोई भी धर्मावतारों के तपोमय जीवन का अनादर नहीं करता। किन्तु इससे यह नतीजा निकाल लेना, कि प्रत्येक बालक में छिपी हुई धर्म वृत्ति उसी प्रकार की अभिव्यक्ति की इच्छुक होगी, यथार्थ नहीं है। और यह मान लेना तो केवल भ्रम ही होगा कि धर्म के स्थूल रूप को बालक के नित्य के व्यवहारिक जीवन में जबरदस्ती स्थान देने से उसमें धर्म वृत्ति का अवश्य विकास होगा। कार्य-कारण की तार्किक दृष्टि से विचार करने पर हम सहज ही में समझ सकेंगे कि एक ही कार्य के अनेक कारण हो सकते हैं। यह विचार शैली के कारण से कार्य की उत्पत्ति होती है इसलिए कार्य करना चाहिए, कारण तो स्वत: उपस्थित हो जाएगा बिलकुल तर्क विरुद्ध है। आधुनिक युग में धर्म जैसे सूक्ष्म विषय के सम्बन्ध में तर्क विरोधी वस्तु को स्वीकार करना सम्भव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है।

धार्मिक क्रिया धर्म-वृत्ति का परिणाम है। इसलिए इस वृत्ति के विकसित होने से पहिले ही इसके परिणामों को ऊपर से बालक पर लादने से कुछ लाभ न होगा। यदि सब सँस्थाएं इस सत्य को समझलें तो आज जिस प्रकार धार्मिक-क्रियाओं के लिए आग्रह किया जाता है वह एक दम बन्द हो जाय। वस्तुतः यदि बालकों को धार्मिक बनाना हो, तो सभी सँस्थाओं को ऐसे साधन जुटाने चाहिएं कि जिनसे उनकी धार्मिक प्रवृत्ति जाग्रत हो। इस प्रवृत्ति के जाग्रत हो जाने पर इसके विकास को फिर कोई भी शक्ति रोक नहीं सकती। प्रत्येक प्रकार की धार्मिक क्रियाओं पर विचार करने से पता लग जायगा कि छोटे बालकों से कभी भी उनका अनिवार्य रूप से करवाना धर्म का मजाक करने के समान है। जिस बालक को पाप-पुण्य का ठीक-ठीक खयाल भी नहीं है, जिस बालक ने पश्चाताप के तत्त्व को समझा तक नहीं है, उस बालक से सदा यह पढवाना कि 'हे प्रभु! तू हमारे पापों को क्षमा कर' तोते से रामराम रटवाने के समान ही समझा जावेगा। हम वयस्क लोगों में बड़ा दोष यह है कि हम इस बात को भूल जाते हैं कि जो काम हमारे लिए दोषपूर्ण या अनीति पूर्ण है, वही काम छोटे बालक के लिए निर्दोष होता है।

प्राथमिक दशा में से गुजरता हुआ, और नीति-अनीति, धर्म-अधर्म की लेशमात्र भी विचार अपने मनमें न रखता हुआ बालक जिन कामों को करता है, उन्हें हम अनीति पूर्ण या अधर्म पूर्ण कहते हैं। यह कोई नहीं कह सकता कि सँसार के कालुष्य से अलिप्त बालक संकुचित स्वार्थ वृत्ति से प्रेरित होकर या दूसरों को हानि पहुँचाने के खयाल से ऐसे काम करता है। हम वयस्क लोग बालकों के मन में नीति-अनीति, धर्म-अधर्म के मिथ्या विचार ठूंसते रहते हैं; और उसके निर्दोष आचरण पर अनैतिकता-अधार्मिकता की छाप लगाते हैं। इसलिए ऐसे अपराधों का प्रायश्चित तो हमें करना चाहिए न कि बालक को। इस प्रकार की सच्ची धर्म भावना का उदय हो जाने पर धार्मिक क्रियाओं की आवश्यकता या अनावश्यकता का सवाल ही हमारे सामने उपस्थित नहीं होगा। इस विचारशैली के अपनाये जाने पर किसी प्रकार की धार्मिक क्रिया को विशेषरूप से बालक से करवाना अनिवार्य नहीं समझा जाएगा। नीति, धर्म का द्वार है। धर्म-मन्दिर में प्रवेश करने के लिए द्वार खोलने की ताली पहले बालकों को देनी चाहिए। इसलिए अनिवार्य रूप से धार्मिक क्रियाएं बालक पर लादने की बजाय उसे उच्च नीतिमय वातावरण में रखा जाय, तो धर्म-मन्दिर के द्वार एक न एक दिन स्वतः उस पर खुल जाएंगे।

किसी भी उदार धार्मिक सँस्था को अपने धर्म प्रचार का आग्रह शोभा नहीं देता। जिस धर्म को हम मानते हैं उस धर्म का सत्य मनुष्य मात्र को एक समान आलोकित करता है। धर्म किसी एक मनुष्य या समूह द्वारा निश्चय पूर्वक गढी हुई जड़ वस्तु नहीं है। यह तो मनुष्य की आत्मा में निहित एक गम्भीरतम रहस्य है। जब यह प्रकट होता है, तब सबको एक समान आकर्षित करता है। इसलिए धार्मिक सँस्थाओं में ऐसा वातावरण पैदा करना चाहिए कि जो धर्म के गूढ रहस्यों को तो प्रकट कर सके, किन्तु उसमें मिशनरी जैसा जोश न हों। इसलिये धार्मिक सँस्थाओं को बाह्य क्रियाओं द्वारा किसी को बौद्ध, जैन, ब्राह्मण या ईसाई बनाने की भावना विचार पूर्वक तर्क कर देनी चाहिए।

प्र०—प्रचलित धार्मिक क्रियाओं में किस प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता है?

उ०—इस प्रश्न का मतलब तो यही मालूम होता है कि आज जिस रीति से क्रियाएं की जाती हैं उनमें फेर-फार करने की आवश्यकता है या नहीं। यह मान लेने पर भी कि धार्मिक क्रियाओं का निर्माण उदारतापूर्ण किया गया है और उनका करना अनिवार्य नहीं है, तो भी क्रियाओं के रङ्गरूप और भाषा पर विचार करना शेष रह जाता है। आज की धार्मिक क्रियाओं की तह में यह धारणा पाई जाती है कि क्रियाएं अमुक स्थान में, अमुक रीति और अमुक साधनों से तथा अमुक वस्त्र पहन कर की जानी चाहिए। वातावरण बनाने के लिए हम इस बात को स्वीकार कर सकते हैं, क्योंकि जिसे धार्मिक क्रियाएं करनी हैं उसके लिए शुद्ध वातावरण और शुद्ध साधनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की आवश्यकता तो रहती ही है। किन्तु जिस जड़ता से हमने वातावरण और साधनों को पकड़ रखा है वह तो वांछनीय नहीं है। स्थान, रीति और साधनों के सम्बन्ध में तो व्यक्तिगत स्वतन्त्रता होनी चाहिए। व्यक्ति अपनी आवश्यकता के अनुसार उनका प्रबन्ध कर सकता है। जो स्थान और साधन एक के लिए अनुकूल हों, वे दूसरों के लिए अनुकूल नहीं भी हो सकते। आज इन क्रियाओं के विरुद्ध जो उपद्रव दृष्टिगोचर होता है उसका एक बड़ा कारण स्थान और साधनों की जड़ता है। धर्म-क्रियाओं को यदि हम शुद्ध स्वरूप में समाज में प्रविष्ट करना चाहते हैं तो स्थान, समय और साधनों की जड़ता को शीघ्रातिशीघ्र निकाल देना चाहिए।

ज्ञान, भक्ति और कर्म इन तीन मार्गों से मनुष्य अपनी धार्मिक वृत्तियों को उदय कर सकता है। आज इन तीनों प्रकार के स्वरूपों और साधनों की जांच करने बैठें, तो पता चलेगा कि मानव-स्वभाव के कारण इनमें भी भिन्न भिन्न स्थिति पाई जाती है। कोई ज्ञान की एक ही शाखा द्वारा अपनी धार्मिक वृत्ति का विकास सिद्ध करता है तो कोई ज्ञान की अनेक शाखों की सहायता से अपनी धर्म-वृत्ति के विकास के लिए प्रयत्नशील है। ज्ञान-मार्ग में साधन भेद भी उतना ही विविध होता है। भक्ति-मार्ग का भी यही हाल है। कोई ऐकान्तिक भक्ति मानता है तो कोई सामूदायिक भक्ति के रूप में अपनी धार्मिक वृत्ति को पोषित करना चाहता है। इसी प्रकार क्रिया कांड के भी अनेक रूप हैं। किसी को क्रिया-कांड का कोई स्वरूप अनुकूल प्रतीत होता है तो किसी को उसका वही स्वरूप विभिन्न साधनों के साथ पसन्द आता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्येक मनुष्य अपने अपने स्वभाव के अनुसार अपनी आत्मा की क्षुधा तृप्ति के लिए, विविध मार्गों का अनुसरण करता है। इसलिए प्रत्येक बालक की धर्म-वृत्ति का उदय उसके स्वाभाविक साधनों के अनुसार ही होने देना चाहिए। धार्मिक क्रियाओं के स्वरूप में इतना परिवर्तन आवश्यक है।

इसके अलावा एक और महत्वपूर्ण परिवर्तन की जरूरत है और वह यह कि तमाम धार्मिक क्रियाएं मातृ-भाषा में होनी चाहिएं। सामान्यतः आज तो सभी धार्मिक क्रियाएं मृत-भाषाओं (Dead languages) द्वारा की जाती हैं। क्लिष्ट भाषा और दुर्बोधतत्व के कारण ऐसी क्रियाएं बालकों के लिए निरर्थक सिद्ध होती हैं। प्रारम्भ में ऐसी क्रियाएं स्वेच्छापूर्वक की जाने पर भी कुछ समय के बाद वे नीरस लगने लगती हैं; और उनके आग्रहपूर्वक कराये जाने पर तो बालक उनके विरुद्ध विद्रोह करने लगता है। यदि हम इस स्थिति को मिटाना चाहते हैं, तो सब धार्मिक क्रियाओं का माध्यम विद्यार्थी की मातृ-भाषा होना चाहिए। धार्मिक क्रियाओं के सब मन्त्र, उनके संकल्प, और कण्ठस्थ करने वाले श्लोक आदि विद्यार्थी की मातृभाषा में होने चाहिएं। जिस संस्था में नियमित रूप से प्रार्थना कराई जाती हो, उसे भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

प्र०—क्या दर्शन, पूजन, आरती आदि को विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य करना हानिकारक है?

उ०—पूजन और आरती क्रिया-कांड का एक अङ्ग है और दर्शन को भक्तिमार्ग में शामिल किया जा सकता है। विद्यार्थी को धार्मिक बनाने के लिए बाह्य प्रयत्न बिलकुल निरर्थक हैं और जब इन प्रयत्नों को ऊपर से लादा जाता है, तब तो उनका परिणाम उलटा ही निकलता है। मनुष्य अपने इष्ट-व्यक्ति की ही आरती या पूजन कर सकता है। ऐसा इष्ट-व्यक्ति मनुष्य के रूप में, किसी स्थूल वस्तु के रूप में, किसी सूक्ष्मतम अणु के रूप में अथवा केवल भावना के रूप में हो सकता है। किसका पूजन और किसकी आरती की जावे, इसका निर्णय कोई मनुष्य दूसरे के लिए नहीं कर सकता। जो मनुष्य स्वभाव से ही कर्मकांड का विरोधी होता है, उसके लिए तो पूजन और आरती व्यर्थ ही होते हैं। अतः क्रिया-कांड को अनिवार्य करके बालक की आत्मा को मौलिक एवं यथार्थ रूप से विकसित होने का मौका देने की बजाय हम शुरु से ही उसका अपमान करते हैं। इससे बालक का सच्चा धार्मिक स्वभाव प्रकट नहीं होता; बल्कि उलटा वह तो अपने ही मूल स्वभाव का विरोध करने लगता है। अपनी धार्मिक वृत्तियों का विरोध करने के साथ ही वह दूसरों की अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धार्मिक वृत्तियों का भी विरोध करने लगता है। बाल्या-वस्था से ही स्वभावतः क्रियाकांड प्रिय आत्मा को भी यदि अनिवार्य रूप से क्रिया-कांड करने के लिए बाध्य किया जाए, तो वह भी अपने स्वभाव का विरोध करती है। इतना ही नहीं, बल्कि ज्ञान एवं भक्ति द्वारा प्रगट हुई इतर धार्मिक वृत्तियों का भी विरोध करने लगती है। दर्शन, भक्ति वृत्ति का प्रकाश है। उसे भी यदि अनिवार्य कर दिया जावे, तो उसका परिणाम भी आरती-पूजन जैसा अनिष्टकर होगा। बाल्यावस्था से ही भक्ति-प्रिय आत्मा को यदि स्वाभाविक रूप से विकसित होने देने की वजाय भक्ति के लिए विवश किया जाए, तो वह भी भविष्य में अपनी और दूसरों की स्वाभाविक वृत्तियों का विरोध करेगी। समाज में मूर्ति-दर्शन और मूर्ति-पूजा के खिलाफ आज जो विद्रोह उठ रहा है उसका एक मूल कारण क्रियाकांड की अनिवार्यता ही है। यही कारण है कि आज हम कितने ही युवकों को दर्शन, पूजन और आरती का विरोध करते ही नहीं देखते बल्कि आरती-पूजन करने वालों का मजाक उड़ाते भी देखते हैं। इन विरोधी युवकों की इस प्रवृत्ति की जांच करने पर पता चलेगा कि बहुधा वे ऐसे कुटुम्बियों के अंश हैं जो दर्शन पूजन और आरती में दृढ विश्वास रखते हैं। नियमित रूप से और अखण्ड श्रद्धा से दर्शन, पूजन और आरती करने वाले वृद्ध माता-पिता अपने बालकों को दर्शन, पूजन का विरोध करते हुए देख कर बड़े दुःखी होते हैं क्योंकि इन बेचारों को इस विचित्रता का कोई ज्ञान ही नहीं होता। किन्तु मनोवैज्ञानिकों का, जिन्होंने इस बात की खोज की है, कहना है कि यह विद्रोह उन पर बालपन में जबरन लादे हुए कर्तव्य के विरुद्ध विद्रोह है, अतः भावी धर्म-द्रोहियों को निर्मूल करना हो और सच्चे धर्मपरायण मनुष्य पैदा करने हों तो संस्थाओं को अनिवार्य रूप से धार्मिक क्रिया करवाना बन्द कर देना चाहिए।

वीर-विदा

[र०—श्री विकल]

पड़ा है देश पर सङ्कट मिटाने वीरवर जाओ।
दुखी माता है बन्धन में छुड़ाने वीरवर जाओ॥
हमारा ध्येय आजादी है, हम लेकर ही छोड़ेंगे।
खुशी से खाक में बिस्तर लगाने वीरवर जाओ॥
गले में तौक हाथों हथकड़ी बेड़ी हो पैरों में।
इस झङ्कार पर शुभ गान गाने वीरवर जाओ॥
बढ़ाया है जो पग आगे उसे पीछे नहीं रखना।
जहाँ गोली चलें सीना बढ़ाये वीरवर जाओ॥
जिसे वह जेल समझे हैं उसे हम खेल समझे हैं।
है मन्दिर कृष्ण का मस्तक झुकाने वीरवर जाओ॥
अहिंसा है हमारा धर्म हिंसा से नहीं मतलब।
यही एक पाठ दुनिया को पढ़ाने वीरवर जाओ॥
विकल हो जाओ ऐसे प्रेम में भारत के हो जाओ।
वतन पर हंसते हंसते सर चढ़ाने वीरवर जाओ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराणा प्रताप

[र०—श्री रामकुमार "स्नातक" हिन्दी प्रभाकर]

हे राणा प्रताप! मैं तेरी कैसे लिखूं कहानी?
समझ सकेगी कैसे उसको यह दुनियाँ दीवानी॥
बिना जौहरी किसने हीरे की कीमत पहचानी।
हम कायर क्या जान सकेंगे, शेरों की कुर्बानी॥१॥

चौड़ा मस्तक, लाल आँख अरु वज्र सरीखी छाती।
देख, तेरी तसवीर आज भी दुश्मन को दहलाती॥
देख तेरे चेहरे की लाली सूरज भी शरमाता।
कर मुकाबला हार गया तब पश्चिम में छिप जाता॥२॥

महलों को तूने था वारा, जङ्गल के सूने कोनो पर।
सौने के प्याले वार दिए पत्तों के छोटे दौनों पर॥
था पकवानों को वार दिया घासों की सूखी रोटी पर।
कुटिया थी एक बनाली तूने अर्बलिगिरि की चोटी पर॥३॥

महलों की शाही शान छोड़, दौलत को तूने शरमाया।
सच्ची इज्जत से दुनियावी इज्जत को तूने शरमाया॥
झरनों का पानी पी करके अमृत को तूने शरमाया।
जंगल की झाड़ी में रहकर जन्नत को तूने शरमाया॥४॥

है त्रिशूल शङ्कर का न्यौछावर तेरे उस भाले पर।
बाडीगार्ड सैंकड़ों न्यौछावर चेतक रखवाले पर॥
किसने झूम झूम कर रण में दुश्मन की फौजें डाटी।
जाकर पूछो बोल उठेगी अब भी वह हल्दी घाटी॥५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जङ्गल के भीलों ने सीखा तुम से देश हेतु लड़ना।
भामाशाह जैन ने सीखा था आदर्श त्याग करना॥
पृथ्वीराज कवि ने सीखा तुम से ही कविता करना।
और जहाँ ने सीख लिया आजादी पर कैसे मरना॥६॥

नाच उठी दुनिया अरु काँपे बड़े बड़े ये अभिमानी।
नाच उठी जब तेरे हाथों में वह तेज भवानी॥
जिसने पिया घाट से उतरा छोड़ चला जिंदगानी।
कौन पचा सकता था तेरी तलवारों का पानी॥७॥

चारों तरफ निराशा थी जब दिखती कहीं न उजियाली।
मानसिंह जैसों ने फोड़ी आजादी की जब प्याली॥
हाय! अन्धेरा घोर अमावस्या जग में छाई काली।
तब भी उस मेवाड़ देश में खिली हुई थी दीवाली॥८॥

नहीं दुश्मनों से नफरत थी लगती बुरी गुलामी थी।
दुश्मन से भी अदब प्राप्त कर भिजती तुझे सलामी थी॥
एक लुत्फ राणा प्रताप तेरे सुन्दर जीने में था।
वीर चित्र तेरा चित्रित उस अकबर के सीने में था॥९॥

जब तक सूरज चांद जगत में और चराचर प्राणी हैं।
जब तक है आकाश और जब तक सागर का पानी है॥
जब तक जिन्दा इस दुनिया में कोई हिन्दुस्तानी है।
अमर तुम्हारी हे राणा! तब तक जग में कुर्बानी है॥१०॥

हे प्रताप! अपने प्रताप का जादू हममें भर देना।
पिला वीर रस आजादी का दीवाना सा कर देना॥
सभी जाति से प्रेम रखें पर जुल्म नहीं हम कभी सहें।
मिलकर सब हम हिन्दुस्तानी "भारत की जय" नित्य कहें॥११॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा महेन्द्रप्रताप

[श्री ठा०—देशराज जी]

ब्रज के प्रसिद्ध इतिहास लेखक स्व० पं० नन्दकुमार जी ने राजा महेन्द्र प्रताप के वँश परिचय में ये पँक्तियां लिखी हैं "राजा महेन्द्रप्रताप उस इतिहास प्रसिद्ध जाट जाति के हैं। जिसने अनेक अवसरों पर अपने भुजबल का परिचय देकर ख्याति प्राप्त की है।......जिस जाट जाति के विषय में अब भी यह कहावत प्रचलित है—'आठ फिरङ्गी नौ गोरा। लड़ें जाट के दो छोरा'। उसी जाट जाति को राजा महेन्द्रप्रताप को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।"

जिस समय भरतपुर राज्य की स्थापना महाराजा सूर्यमल्ल जी कर रहे थे, ठीक उन्हीं दिनों ठेनुआं गोत के दो मरदाने भाई अलीगढ जिले में एक जाट राज्य कायम करने में सफल हुए थे। इन दोनों वीर भाइयों के नाम नन्दराम और भगवन्तसिंह थे। इन्होंने जमना पार के कुल इलाके पर अपना राज्य कायम कर लिया था। इस राज्य में हाथरस, मेंडू, सासनी, जावरा, टप्पल और सादाबाद के कुल इलाके थे। लगभग बीस लाख की आमदनी के भूभाग पर इनका आधिपत्य था। मथुरा मेमायर के लेखक श्री ग्राउस साहब ने लिखा है कि वे अपने को किसी का मातहत नहीं मानते थे अर्थात् स्वतन्त्र राजा थे।

लसवारी युद्ध में अँग्रेजों द्वारा मराठों की हार होने पर जिस प्रकार मलहार राव होलकर की भरतपुर नरेश ने रक्षा की थी, उसी प्रकार इन ठेनुआं वीरों ने कुछ अंग्रेज द्रोही लोगों को शरण दी थी। अँग्रेज जनरल मार्शल के आधीन एक बड़ी सेना ने मुरसान पर धावा किया। अचानक धावे में मुरसान अँग्रेजों के हाथ लग गया, किंतु सासनी में चार महीने तक मुकाबला किया गया। हाथरस में रणचंडी का जो भयानक ताण्डव हुआ वह वर्णनातीत है। अगर हाथरस के बारूद खाने में आग न लग जाती तो अँगरेजों के दांत खट्टे हो जाते। हार जाने पर भी वीर दयाराम ने आत्म-समर्पण नहीं किया। वे अपने शिकारी घोड़े पर किला छोड़कर राजपूताने की ओर सहायता प्राप्त करने के उद्देश्य से निकल पड़े। आगे २ दयाराम थे और पीछे २ अँग्रेजी लश्कर। खेद है कि राजपूताने के किसी राजा से उन्हें मदद न मिली। अँग्रेज सेना ने उनके किले को तहस-नहस कर दिया और उनका राज्य जब्त कर लिया गया। अन्त में विवश होकर दयाराम जी को अंग्रेजों से पुनः लड़ने का इरादा छोड़ देना पड़ा और अलीगढ में अपने नाम की छावनी बनाकर रहने लगे। अँग्रेजों ने दो हजार मासिक उनकी पेन्शन बांध दी। यह घटना सन १८१७ ई० अर्थात् सम्वत १८७४ विः की है।

सम्वत १८९८ विः में दयाराम जी का देहान्त हो गया। उनके पीछे उनके बेटे गोविन्दसिंह जी रही सही रियासत के मालिक हुए। गदर के बाद अँग्रेजों ने क्षतिपूर्ति में राजा गोविन्दसिंह जी को बुलन्दशहर और मथुरा जिले में कुछ गाँव जागीर में दिए क्योंकि विद्रोहियों ने राजा गोविन्दसिंह जी का बहुत नुकसान किया था। कारण कि वे राजा साहब को अपने साथ मिलाने में असमर्थ हुए थे। सम्वत १९१८ विः में राजा गोविन्दसिंह जी का स्वर्गवास हो गया और उसके दत्तक पुत्र हरनारायणसिंह जी गद्दी के हकदार हुए। उन्होंने अपने अन्तिम दिनों में निःसन्तान होने के कारण मुरसान के राजा घनश्यामसिंहजी जो कि आपके भाई ही थे, के पुत्र कुँवर महेन्द्रप्रताप जी को गोद लिया। जो आगे चलकर हाथरस इस्टेट के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालिक हुए।

राजा महेन्द्रप्रतापजी, जिनके नामी नाम से आज सारा सँसार परिचित है, का जन्म सम्वत १९४३ विक्रमी में अगहन सुदी पञ्चमी को हुआ था। ढाई वर्ष की अवस्था में आप गोद लिये गये थे। जब आप नौ ही वर्ष के थे कि आपके पालक पिता राजा हरिनारायणसिंह जी का देहान्त हो गया।

राजा हरिनारायणसिंह जी ने वृन्दावन में अपने रहने के लिए महल बनवा लिए थे। अतः राजा महेन्द्रप्रताप जी का बचपन भी वृन्दावन में ही बीता था। उन्हें आरम्भिक शिक्षा तो घर पर ही दी गई किन्तु अलीगढ हाई स्कूल से आपने मैट्रिक पास किया और फिर मुहम्मडन कालेज अलीगढ में ही आगे पढना आरम्भ कर दिया।

जब राजा महेन्द्रप्रताप जी बी० ए० में पढ रहे थे अलीगढ में एक घटना ऐसी हुई जिसमें भारतियों की पराधीन हालत का घोर अपमान झलकता था। एक पुलिस कांस्टेबिल और कालेज के विद्यार्थी में कहा सुनी हो गई। पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट के आदेशानुसार कालेज के अँग्रेज प्रिन्सिपल ने विद्यार्थी को तीन महीने के लिए कालेज से अलग कर दिया और उससे पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट के पास जाकर माफी मांगने की ताकीद की। इस आज्ञा के विरोध में लड़कों ने एक सभा की। इस सभा में जाकर प्रिन्सिपल ने और भी चोट पहुँचाने वाली बातें कहीं। इससे क्षुब्ध होकर कुछ विद्यार्थियों ने हड़ताल करदी। राजा साहब ने भी हड़ताल में सहयोग दिया और फिर कभी वे उस कालेज में पढने नहीं गए।

सम्वत १९५९ विक्रमी में जब कि राजा साहब १६ वर्ष के थे महाराजा जीन्द की राजकुमारी के साथ आपकी शादी हो गई।

लगभग २१ वर्ष की अवस्था में उन्होंने प्रथम यूरोप यात्रा की। इस यात्रा में वे रानी साहिबा को भी साथ ले गए। इस यात्रा का राजा साहब पर बड़ा गहरा असर पड़ा, उन्होंने भारत की हीन दशा का जब यूरोप से मिलान किया तो उनका हृदय रो पड़ा। वहां जितने दिन वे रहे शिल्प, उद्योग और वैज्ञानिक सँस्थाओं के देखने और तत्सम्बन्धी जानकारी में लगे रहे। वहां से वे अपने देश की सेवा करने का बहुत कुछ इरादा करके लौटे।

स्वदेश आने पर उन्होंने नैनीताल में एक कोठी खरीदी और वहां गर्मी के दिनों में रहने लगे। महात्मा बुद्ध ने एक मृतक को देखा, उसी समय उन्हें सँसार से विरक्ति हो गई। उनसे पहिले लाखों राजकुमारों ने मुरदे देखे होंगे और अब तक देखते आ रहे हैं, किसी को विरक्ति नहीं हुई। वास्तव में कुछ ही विभूतियां होती हैं जिन पर सँसार की नित नैमितिक घटनायें गहरा असर कर जाती हैं, वरना बाकी के मनुष्य सब तेली के बैल ही होते हैं। राजा महेन्द्रप्रताप ने नैनीताल में देखा कि गरीबों को उस सड़क पर चलने नहीं दिया जाता है जिस पर कि राजा-रईसों की मोटर और घोड़ा गाड़ियों का आवागमन होता है, अथवा मेम और साहब जिन पर सुबह शाम गलबाही डाले हुए टहलने निकलते हैं। राजा साहब को इस विषमता से बड़ा दुःख हुआ रात भर उनके दिमाग में ये ही बातें चक्कर काटती रहीं। कभी नैनादेवी का वह काल उनके सामने मूर्त्तमान होकर आ खड़ा होता जब हिन्दुस्तान आजाद रहा होगा और नैनीताल में यहां की अधीश्वरी नैनादेवी का दरबार लगता होगा जिसके स्वच्छन्द वायुमण्डल में पली हुई उनकी सहेलियां हँसते चेहरों से अपनी अधीश्वरी का चमर करती होंगी। कभी उन्हें सामने के सुरम्य सरोवर में सूर्य चन्द्र आकर क्रीड़ा करते दिखाई देते। गर्ज यह कि उनकी सारी रात भारत के विगत गौरव के निर्देशक स्वप्नों को देखने में गुजरी। सवेरे उठे और स्वप्न टूटा तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ और गत रात्रि के स्वप्नों का वर्णन करते हुए उन्होंने अन्त में इन पंक्तियों में अपनी मनो-व्यथा और हृदयोद्गारों को प्रकट किया। मैं कहां था? कहां आ गया? देवताओं का सङ्ग छूटा मनुष्यों में आ गया और मनुष्य भी कैसे? रुपए के नशे में चूर, बल पाकर अन्धे और मतवाले। यहां तो फिर अपने गरीब भाइयों को अमीरों की सड़क से हटाये जाते देखूँगा। पुलिस वालों को रास्ते पर हट २ करते पाऊँगा। अरे, अमीर भाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या जमीन तेरे दादा की मौरूसी है ? जो तू गरीब भाई को रास्ते से हटाता है। अपने लिए एक और गरीब के लिए दूसरा मार्ग बताता है। याद रहे तू और गरीब इस जहान में एक ही मार्ग से निकले हैं, मरकर एक ही मार्ग पर तुम सब जाओगे! घोर अन्धेर ! यह बात कब तक चलेगी ?" इन पंक्तियों से पता चलता है कि राजा साहब के दिल पर नैनीताल की घटना का कितना गहरा असर पड़ा।

सन १९०९ ई० के मई महीने में आपने देश के अनेकों प्रतिष्ठित पुरुषों और मित्रों को निमन्त्रित किया कि हमारे पुत्र हुआ है, २४ मई को उसका नामकरण संस्कार होगा। पण्डित मदनमोहन मालवीय जी भी पधारे। आपने सबके सामने वृन्दावन में एक औद्योगिक विद्यालय खोलने की स्कीम रखी। पं० मालवीय जी ने कहा—'राजा साहब ! आप पहिले अपने पुत्र के नामकरण के समारोह को सम्पन्न होने दीजिए, तब इस स्कीम पर विचार होगा।' राजा साहब ने हँसते हुए कहा,—'भगवन्, इस समय तो विद्यालय का ही जन्म अपने घर हुआ है। आप इसी का नाम रखिए।' पं० मदनमोहन मालवीय जी और दूसरे उपस्थित जन—सभी राजा साहब के इस वचन पर मुग्ध हो गए। राजा साहब ने अपने राज्य की समस्त आमदनी को विद्यालय के खर्च के लिए दान कर देने के लिए इच्छा प्रकट की ? किन्तु उपस्थित जन राजी न हुए और आधे राज्य का संकल्प राजा साहब से करा लिया गया। राजा महेन्द्रप्रताप तुम्हें धन्य है ," तुम्हारी उस जननी को धन्य है जिसने इस स्वार्थी युग में तुम सा हरिश्चन्द्र पैदा किया। तुम हरिश्चन्द्र से भी आगे बढ गए। हरिश्चन्द्र ने वचन में बन्ध जाने के कारण राज-पाट छोड़ा था। तुमने उसे स्वेच्छा से दान कर दिया। यही नहीं अपनी सेवायें भी विद्यालय को दे दीं। सेक्रेटरी और मैनेजर के पदों पर काम करके आपने शरीर से भी उसकी सेवा की। इतना बड़ा त्याग राजा साहब ने किस लिए किया ?-यह उनके प्रेम-महाविद्यालय के मन्तव्यों के पढने से ही मालूम होता है। उनके मन्तव्य हैं—(१) एकता (२) समता (३) भातृ भाव ४) देश प्रेम (५) स्वाधीनता।

इस विद्यालय के लिए राजा साहब ने अपने राज महलों का भी आधा भाग दे दिया।

इतना करके ही राजा साहब को संतोष हो गया हो सो बात नहीं। आपने भारतीय जनता में जागृति पैदा करने और आपस में प्रेम-भाव फैलाने के लिए सन् १९१२ ई० में 'प्रेम' नामक एक समाचार पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इसके अलावा विद्यालय के अन्तर्गत एक प्रेम क्लब की स्थापना की जिसका उद्देश्य गरीब विद्यार्थियों की सहायता, उत्तम पुस्तकों द्वारा ज्ञान-वृद्धि, मनोविलास, खेल-कूद और नाट्य को प्रोत्साहन देना था।

देश के नौ जवानों को शिक्षित बनाने की उन्हें हर दम धुन लगी रहती थी। सन १९१० ई० में जब प्रयाग प्रदर्शिनी हुई तो वहां आपने एक शिक्षा कांफ्रेंस का आयोजन किया और उसे झालरा पाटन के महाराज भवानीसिंह जी के सभापतित्व में शिक्षा सम्बन्धी पहलुओं पर काफी विचार विनिमय किया। इस कांफ्रेंस में प्रेम-महाविद्यालय के समस्त विद्यार्थियों को अपने खर्चे से आप एक सी पोशाक में प्रयाग ले गए थे और स्वयँ भी विद्यार्थी जैसी पोशाक पहन कर गए थे। शिक्षा के सम्बन्ध में राजा साहब के कैसे विचार थे, यह हम उन्हीं के एक लेख से यहाँ पेश करते हैं—"अपनी तन्दुरुस्ती कायम रखो और अपने भाव को शिक्षित करो। पढो लिखो, दुनिया को देखो और उसे अपने अनुभव से कुछ बहतर बनाने की कोशिश करो। शिक्षा की अथवा शिक्षा द्वारा धर्म सेवा की कोई सीमा नहीं है। जब तक इन्द्रियां काम करती हैं, शिक्षा प्राप्त होती है और धर्म की सेवा भी की जा सकती है। अगर स्वास्थ्य की दशा में दिमाग काम करता है तो शिक्षा के अनुसार ही दिमाग सफलता प्राप्त कर सकता है। दिमाग के लिए शिक्षा भोजन है। शिक्षा दिमाग को बनाती है, बिना शिक्षा के दिमाग को खाली ढोल कहा जाता है। धर्म अथवा संसार की सब उन्नति मनुष्य की उन्नति पर निर्भर है। और मनुष्य की उन्नति का हिसाब शिक्षा के अनुसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाया जाता है। शिक्षा जितनी विस्तृत होगी उन्नति उतनी अधिक होगी, जिस कदर अज्ञान होगा उसी कदर अवस्था गिरी हुई होगी। इसलिए बिना भेद-भाव के मनुष्य को सभी विद्यायें सीखनी चाहियें। तुम्हें चाहिए कि किसी भी मनुष्य को नई अथवा पुरानी किसी भी प्रकार की शिक्षा से लाभ उठाने से मत रोको।'

राजा महेन्द्रप्रताप में वे चिन्ह हैं जो विशिष्ट पुरुषों में हुआ करते हैं। विशिष्ट पुरुष एक ओर जहां बड़ी २ समस्याओं के सुलझाने में अपनी प्रतिभा का अद्भुत परिचय देते हैं, वहां वे सर्वसाधारण के जैसे मनोरञ्जन को भी नहीं छोड़ते। राजा साहब भी ऐसे ही महा पुरुष हैं। व्रज में लड़कों में एक खेल होता है 'चील-झपट्टा' इसमें एक लड़के को केन्द्र में नङ्गा सिर करके बिठा दिया जाता है। एक दूसरा लड़का उसे रस्सी का एक छोर पकड़ा कर और दूसरा छोर स्वयँ पकड़ कर उसकी अन्य लड़कों से जो चारों ओर से उस पर झपटा मारने को दौड़ते हैं, रक्षा करता है। मारने आने वाले को रक्षक लड़का छू ले तो वह छुआ हुआ केन्द्र में बैठ जाता है और केन्द्र वाला रक्षक बन जाता है। रक्षक को रस्सी का एक छोर इसलिए पकड़ाया जाता है कि वह उसकी लम्बाई से ज्यादा आगे न बढ़े। वरना तो वह अपने दुश्मन लड़के को रौंद २ कर मार डालेगा।" राजा साहब ने एक बार विद्यालय के सब लड़कों को जङ्गल में ले जाकर यह खेल खिलाया और स्वयँ भी खेल में शामिल हुए। कितना उदार है उनका हृदय! भगवान् राम जिस प्रकार अपने को राजा न मानकर सर्वसाधारण में मिलते जुलते थे और मनोरञ्जन करते थे, वे ही बातें राजा महेन्द्रप्रताप में हैं। यदि भारतवर्ष में ऐसे राजा हों तो क्या उनके खिलाफ कभी कोई आवाज उठ सकती है?

वृंदावन से बाहर पूर्व की ओर राजा साहब का एक सुन्दर बाग था जिसमें कभी कभी वे घूमने के लिए जाते थे। राजा-रईसों के लिए बाग कितना जरूरी है, इसे सब कोई जानते हैं। किन्तु जब गुरुकुल वृन्दावन के लिए उसे भी मांगने के लिए सँयुक्तप्रांत की आर्य प्रतिनिधि सभा के भूत-प्रधान और प्रमुख नेता कुंवर हुकमसिंह जी पहुँचे तो वह भी आपने दान कर दिया।

सन १९११ ई० में राजा साहब ने दूसरी विलायत यात्रा की तैयारी की। जाते समय आपने कुं० हुकमसिंहजी को प्रेम-महाविद्यालय का जनरल मैनेजर मुकर्रिर किया और बाबू नारायणदास जी को सेक्रेटरी। इस दूसरी विलायत यात्रा में भी राजा साहब ने अनेकों शिक्षण और औद्योगिक सँस्थाओं को देखा और बहुत सी बातें सीखीं। इस यात्रा से जब आप लौटे तो मथुरा और वृन्दावन के नागरिकों ने आपको एक स्वागत सभा द्वारा मान पत्र भेंट किया।

इस यात्रा से लौटने पर राजा साहब की तबियत खराब रहने लगी। चिकित्सकों ने बताया कि राजा साहब को तपेदिक है। आपके स्वास्थ्य के लिए वैष्णव लोगों ने हरि-कीर्तन किया, आर्यसमाजियों ने यज्ञ हवन किया और मुसलमानों ने मस्जिद में खुदावन्द करीम से दुआ मांगी। जनता की सच्चे हृदय से मांगी हुई दुआ खाली नहीं गई, राजा साहब पूर्ण स्वस्थ हो गए।

स्वस्थ होने पर राजा साहब हिन्दू-विश्वविद्यालय काशी के उस डेपूटेशन में शामिल होकर अनेकों स्थानों पर गये जो आर्थिक सहायता के लिए दौरे पर निकला था। राजा साहब ने स्वयम् भी इस कार्य के लिए एक हजार रुपया दिया।

संवत १९७० के सावन महीने में अर्थात् सन् १९१३ ई० में आपके घर पुत्र का जन्म हुआ। जिसका नाम आपने 'प्रेमप्रताप' रक्खा।

संवत १९७१ वि० में, जब कि आप देहरादून में रह रहे थे, वहां अछूतों की उन्नति के लिए प्रयत्न करने लगे। उन्हें आप स्वच्छ रहने, विद्या हासिल करने और भय को छोड़ देने की शिक्षा देते थे। अछूत भी आपको अपने महान् हितैषी मानते थे और आप में परम श्रद्धा रखते थे। एक दिन एक ग्राम के टमटा (चमार जैसी) जाति के कुछ अछूत आपको अपने गांव ले चलने को आये। राजा साहब बड़ी प्रसन्नता से उनके साथ हो लिये और उनके वहाँ ही भोजन भी कर लिया। इसके बाद आपने 'शुद्धि शीर्षक' एक लेख लिखा जिसके आवश्यक अंग यह हैं:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"...हमने कई शुद्धि करने वालों से सुना है कि चमार का चमड़े का काम बुरा। भाई! काम कोई बुरा नहीं। क्या कोई चमड़े को फैंक देना उचित समझेगा? यदि नहीं, तो फिर कोई न कोई तो चमड़े का काम करेगा ही। इसी प्रकार पाखाना उठाना हमारा, आपका धर्म है। इसको भी बुरा काम कह घृणा नहीं कर सकते। हमारे बड़े-बड़े पण्डितों को भी दिन में दो दफा पाखाना साफ करना पड़ता है। धन्धा कोई भी बुरा नहीं है, बुरा तो झूठ बोलना, अपने लाभ के लिए दूसरों को सताना ही है। परमात्मा ने सभी को समान बनाया है। सभी के दो हाथ हैं, दो पैर हैं। सभी के दो आँखें, दो कान हैं। न तो उसने अछूत जाति को कानी और न ऊँची कही जाने वाली जातियों को तीन आँख वाली बनाया है। ...इसलिये ज्ञानवान् पुरुषों की सेवा में हमारी प्रार्थना है कि सब मनुष्यों को उनके अधिकारों की बात बताइये। मनुष्य मात्र से प्रेम करने की जरूरत समझाइये। घृणा करना छोड़ें, ऊँच नीच के भेदभावों को भूलें। बगैर किसी खयाल के सबके साथ खावें-पीवें और किसी को अपने से नीचा न समझें।

हमने तो इसी सिद्धान्त को प्रत्यक्ष रूप से सिद्ध करने के लिए अब के अलमोड़े में टमटों के घर जा भोजन किया। लोगों ने हमें अनेक प्रकार से समझाया था कि टमटों को कोई फर्श पर नहीं आने देता, इनको पहाड़ में देश के चमारों के सदृश समझा जाता है। इन्हें अभी किसी समाज ने नहीं लिया है और न इनकी शुद्धि ही हुई है। पर हमको इससे क्या प्रयोजन? हम तो मानते हैं कि मनुष्य देहधारी सब शुद्ध हैं। सभी समान हैं। कोई माने या न माने, साथ दे या न दे, हम जैसा कहते हैं, करने को तैयार हैं। हम सहर्ष उनके घर गये और भोजन किया। जिससे हमें बड़ा ही आनन्द हुआ। दुःख हुआ तो केवल यह जानकर कि यह भी अपने से छोटी २ जातियां मानते हैं, भङ्गी को अपने से नीचा समझते हैं।"

इसके बाद आगरे में राजा साहब ने एक भङ्गी के यहां भी भोजन किया। इससे बड़ी खलबली मच गई, किन्तु उन्होंने, जिसे वे सत्य मानते हैं उसे करने के लिए लोक दबाव से कभी मुंह नहीं मोड़ा। इसके बाद वृन्दाबन में उन्होंने एक अछूत सभा की और निरन्तर अछूतोद्धार के लिए उस समय तक कोशिश करते रहे जब तक कि वे भारत में रहे।

इन्हीं दिनों दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी गोरों के अत्याचार के विरुद्ध सत्याग्रह चला रहे थे। श्री गोखले भारत से धन इकट्ठा करके उनके पास सहायतार्थ भेज रहे थे। राजा साहब ने भी गांधी जी के कार्य के लिए एक हजार रुपया श्री गोखले जी को दान दिया।

इसी वर्ष राजा साहब ने देहरादून से 'निर्बल सेवक' का प्रकाशन आरम्भ किया, जिसमें वे गरीबों के दुख और सरकारी कर्मचारियों की ज्यादतियों पर प्रकाश डाला करते थे। उनके हृदय में दीन-दुखियों और पीड़ितों के लिए कितना दर्द भरा हुआ था और उनके कैसे खयाल थे, वे उनके 'गरीब के रोने' नामक लेख से मालूम हो जाते हैं, जिसके कुछ अंश इस प्रकार हैं:—

"आज समाज में चारों ओर घोर अन्याय और अत्याचार हो रहा है। कहीं जमींदार काश्तकार का दम घोट रहा है, तो कहीं साहूकार निर्बल को लूट रहा है। वकील सभी को फँसाता है। पुलिस निर्धन को सताती है, स्त्रियों को पर्दे में सड़ाया जाता है। नाथ! इन सबको सुमति दो, प्रेम करने की भावना पैदा करो। निर्बलों को आत्मविश्वास और बल दो।"

सन् १९१४ ई० में यूरोप में युद्ध आरम्भ हो गया। राजा साहब की इस युद्ध को देखने की प्रबल इच्छा हुई और आप उसी साल सर्दियों में योरोप के लिए रवाना हो गये। वे जेनोवा में जाकर अपने एक पादरी मित्र के यहां जाकर ठहरे। कुछ दिन के बाद राजा साहब बार्सेल में चले गये। इसके बाद राजा साहब का कोई पता न रहा। यहाँ से उनके नाम जो पत्र और मनीआर्डर जाते थे, सब वापिस आने लगे। इससे ब्रजवासियों में बड़ी चिन्ता फैली। तब कुँवर हुकमसिंह जी रईस आँगई ने विवश होकर यूरोप के पत्रों में इस आशय का विज्ञापन छपवाया कि जो राजा साहब का पता बतायेगा उसे इनाम दिया जायगा। इस विज्ञापन को पढकर उसी पादरी ने कुँवर साहब को लिखा कि राजा साहब के पते के लिए मैं भी बड़ा उत्सुक हूँ। उनके दर्शनों की बड़ी लालसा रहती है। वे इतने मिलनसार हैं कि कभी भी उनसे अलग होने को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी नहीं चाहता है। अगर पता लगा तो मैं आपको भी सूचित करूँगा।

इसके बाद सन् १९१६ ई० में भारत सरकार ने उनकी जमीन-जायदाद अपनी निगरानी में लेली और इस किस्म का प्रबन्ध कर दिया कि यहां से एक भी पैसा उनके पास न जा सके। सरकार की इस कार्यवाही पर सूबे और बड़े लाट की कौंसिलों में जवाब हुए जिनके उत्तर में सरकार ने बताया—"राजा साहब महेन्द्रप्रताप यहां से सन् १९१५ के आरम्भ में योरोप गये और मई सन् १९१६ ई० में सरकार को पता चला कि वे बागी हो गये हैं और दुश्मन को मदद दे रहे हैं। इसके बाद उसी साल वे मध्य एशिया के अनेक शासकों के पास आये और सन् १९१७ तक घूमे। तब से अब तक वे जर्मनी में ही ज्यादातर रहते हैं। उनकी रानी साहिबा को २००) और बच्चों को ४००) माहिक सरकार उनकी जागीर में से खर्च के लिए देती है। उनके लड़के के बालिग होने पर उनको रियासत वापिस करदी जावेगी।"

एक कलक्टर ने तो कुंवर हुक्मसिंह जी से यहाँ तक कहा था कि तुम्हारे राजा साहब के लड़ाई के वक्त के फोटू भी मौजूद हैं। उन्होंने जर्मन सेनाओं की कमान की है।

जर्मन युद्ध के बाद राजा साहब चीन, जापान, रूस आदि सभी मुलकों में घूमते रहे। अन्त में आपने अमीर अमानुल्ला के समय में अफगानिस्तान की नागरिकता हासिल करली और वहीं रहने लगे। अफवाह है कि वे अमीर के साथ भारतवर्ष भी आए थे, किन्तु इस खबर पर विश्वास नहीं होता है। अमीर अमानुल्ला के विरुद्ध जब अफगानिस्तान में विद्रोह करा दिया और बचा सक्का व नादिरशाह का जमाना आया तो राजा साहब काबुल को छोड़ गये। तब से उन्होंने अपना ज्यादातर समय चीन और जापान में गुजारा है।

अब से लगभग १५ वर्ष पहले उन्होंने 'प्रेम धर्म' नाम की एक पुस्तक लिखी थी। उसके अनुसार आपने 'सँसार सङ्घ' नाम की सँस्था कायम की है और इसी नाम का एक पत्र भी निकालते हैं। भारत आने की उनकी प्रबल इच्छा है। भारतीय जनता भी उनके दर्शनों के लिए अत्यन्त उत्सुक है।

राजा साहब वास्तव में एक विभूति हैं। महात्मा गांधी का जिस प्रकार 'अहिंसा' जीवन-व्रत है, उसी भांति राजा साहब का 'प्रेम' जीवन-व्रत है। वे भी गाँधी जी की भांति विश्व-बन्धुत्व के उपासक हैं। समाज में वे समता चाहते हैं। कई अंशों में उनके और गांधी जी के बीच में कोई अन्तर नहीं है। यदि उन्होंने भारत में ही रहकर अपने विचारों का प्रचार किया होता और यहीं बैठकर भारतियों की सेवा की होती तो कौन कह सकता है कि वे भारत में सर्वाग्रणीय नेता न होते।

कई अंशों में हमें तो वे भगवान कृष्ण के अधिक नजदीक दिखाई देते हैं। भगवान् कृष्ण भी सङ्घवादी थे। वे भी उस समय के समाज में, राजनीति में और मानवता में एक क्रांतिकारी परिवर्तन करना चाहते थे और राजा महेन्द्रप्रताप भी। दोनों ब्रज में पैदा हुए। दोनों ही के जन्म पराधीन सरदारों के घर में हुए। दोनों को ही बाहर के साम्राज्यवादी शासकों के कोप के कारण ब्रज छोड़ना पड़ा। दोनों ने ही दूसरे स्थानों पर जाकर सङ्घ बनाये। एक ने पांडवों को बिना हथियार पकड़े सहायता दी। दूसरे ने जर्मन को अपने शरीर मात्र से। एक अपनी सफलता से ईश्वर के अवतार के पद पर प्रतिष्ठित हुए, दूसरे अपनी असफलताओं के कारण खानाबदोश का जीवन बिता रहे हैं।

हम उनके उसूलों और उन कार्यों के सम्बन्ध में उससे अधिक कुछ भी नहीं जानते जो सरकार द्वारा समय समय पर प्रकट किये गये हैं। न हमें उनके जानने की कोई जरूरत ही है क्योंकि भारत जब भी स्वतन्त्र होगा अपने ही बल से होगा। बाहरी ताकतों द्वारा अँग्रेजी राज्य के हट जाने पर भी हम स्वतन्त्र हो जायेंगे, इसमें हमारा तनिक भी विश्वास नहीं है। किन्तु राजा साहब का राजा हरिश्चन्द्र जैसा त्याग, ऋषि दयानन्द जैसी अपने सिद्धांतों के प्रति दृढ़ता और महात्मा गांधी जैसा सब जातियों और मजहबों के आदमियों के प्रति प्रेम और कष्ट सहन की अटूट साहसिकता-- ऐसे गुण हैं जो उनके चरणों की रज माथे पर चढ़ाने के लिए हमारे दिलों में प्रेरणा पैदा करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षयरोग से बच्चों का बचाव

[श्री शुकदेवनारायण]

[गतांक से आगे]

हिन्दुस्तान को क्षय-रोग से बचाने की एक और बड़ी सुविधा प्राप्त है। यहां के गायों के दूध में क्षय-रोग के कीटाणु प्रायः नहीं होते। यूरोप में गायों को अधिक सँख्या में क्षय रोग होता है, और उनके दूध से वहां के लोगों में क्षय-रोग का प्रचार होता है। पर यहां की गायें इस रोग से मुक्त होती हैं। बच्चों को काफी मात्रा में दूध मिलना चाहिए। शरीर के पोषण के लिए दूध का महत्वपूर्ण स्थान है। क्षय-रोग से बचने का तीसरा साधन है भोजन।

हमारे भोजन में विटामिन (Vitamin) की पूर्णता होनी चाहिए। अभी तक सात प्रकार के विटामिनों का पता लगा है। भोजन में विटामिन की कमी से बच्चों को ममरखा (Ricbets) होता है तथा फेफड़े और गले का क्षय होता है। गले के क्षय का मतलब है कि खून में क्षय के कीटाणुओं ने प्रवेश किया है। यह क्षय विटामिन 'ए' (Vitamin 'A' , की कमी से होता है। दूध, घी, अण्डा, फल तथा हरी सब्जी के प्रयोग से इस विटामिन का अभाव दूर होता है। यह विटामिन बड़ी देर तक खुले बर्तन में चीजों को पकाने से नष्ट हो जाता है। विटामिन 'बी' की कमी से पेट की गड़बड़ी होती है। आंत का क्षय इसी के अभाव से होता है। जितने प्रकार के 'बी' विटामिन हैं वे सब कब्जियत को दूर करते हैं और स्वास्थ्य को ठीक रखते हैं। हरी सब्जियां, आलू, गाजर, सूखे खजूर, अण्डे का पीलांश (yolk) फल, बकरे की कलेजी (Livor), बादाम, चोकरदार आटा, अखरोट, छिमियों आदि में मिलता है, इन दो ढङ्ग के विटामिनों का सार बच्चों के प्रत्येक दिन के भोजन में देना जरूरी है। विटामिन 'बी' जल में जल्दी घुल जाता है। इसलिए उबालते वक्त अधिक पानी दे दिया गया तो यह जल के साथ बाहर हो जाता है। इस कारण जिन सामानों में यह पाया जाता है उन्हें भाप पर सेकना चाहिए उबालना नहीं। विटामिन 'सी' हरी सब्जियों, पका फल, आलू, अरवी की डण्डी (Rhutarb), नारँगी, कागजी नींबू, खीरा, पपीता, तथा हरी सलाद, प्याज, लहसुन, सरसों, लेटुस, बन्द कोबी, टोमाटो में पाया जाता है। सुखाने और गर्म करने से यह नष्ट हो जाता है। चना, बादाम, मूंगफली के अङ्कुर में भी यह पाया जाता है। पर अङ्कुरित होने से पहले नहीं। यह विटामिन शरीर को पुष्ट तथा खून को शुद्ध रखता है। चर्म रोग और इधर उधर गिल्टियां निकलना, स्नाविक दुर्बलता इसके प्रयोग से नहीं होती। विटामिन 'डी' शरीर में कैलसियम (Calcium) को पचाता है और हड्डियों को मजबूत बनाता है। कैलसियम की कमी से बच्चों को हड्डी का क्षय हो जाता है। यह विटामिन सूर्य की रश्मि, काडलिवर आयल में मिलता है। भोजन को कुछ देर सूर्य की रश्मि में रखने से यह भोजन में मिल जाता है। यह भोजन बच्चों के लिए बहुत लाभदायक है। विटामिन 'ई' (Vitamin 'E') का मुख्य काम लोहा को शरीर में पचाना है। हमारे शरीर में भोजन के साथ २ लोहा भी जाता है। यह विटामिन शरीर के पीलेपन और खून के पतलेपन को दूर करता है। यह विटामिन कुछ फलों के तेल, सब्जी तथा केले में पाया जाता है। विटामिन 'एफ'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Vitamin 'F') बेरी-बेरी को दूर करता है। यह गर्म करने से शीघ्र नष्ट हो जाता है। यह मटर, केले तथा अन्य कई फलों में पाया जाता है। विटामिन 'जी' (Vitamin 'G') की कमी से शरीर दुर्बल होता है, आंख, कान, नाक, मुँह के कई प्रकार के रोग पैदा होते हैं। पहले कहा जा चुका है कि क्षय दुर्बलता का रोग है और विटामिनों की कमी से शरीर दुर्बल होता है। इस कारण इस ढङ्ग का भोजन जिसमें विटामिनों का अभाव न हो, बच्चों को देना चाहिए। ये विटामिन क्षय-रोग से ही नहीं अन्य रोगों से भी शरीर की रक्षा करते हैं। विटामिनों के अतिरिक्त चर्बी शरीर में गर्मी तथा स्फूर्ति पैदा करती है। प्रोटीन अवयवों को बनाने और शरीर को पुष्ट करने के काम में आती है। इस कारण बच्चों को प्रोटीन की भी जरूरत है। कारबोहाईड्रेट भी चर्बी ही का काम करता है। यह चावल में पाया जाता है। चर्बी, कार्बोहाइड्रेट तथा प्रोटीन हमें उन सामानों से भी प्राप्त होते हैं जिनसे हमें विटामिन प्राप्त होते हैं। इसलिए इनके लिए विशेष खाद्य वस्तु ढूँढने की जरूरत नहीं है। हरी सब्जियों का महत्व भोजन में अधिक है। उनके अन्दर के विटामिन क्षय के कीटाणुओं को भी मारते हैं। हर मौसम में बच्चों को कुछ न कुछ हरे फल और हरी सब्जी का प्रयोग कराना चाहिए। हरी सब्जियां इतनी अधिक फायदे मन्द हैं कि उन पर निर्भर रहने वाले प्राणियों का तेल तथा मांस क्षय रोग के रोगियों के लिए फायदे मन्द सिद्ध हो चुका है। सेवार (Algae) तथा अन्य हरे घास खाकर काड तथा हालीपुट मछलियां रहती हैं। काड लीवर तथा हालीपुट लीवर आयल क्षय रोग के रोगियों के लिए फायदे मन्द माना गया है।

क्षय-रोग से बचने का दूसरा उपाय है बच्चों को रोगियों के सँसर्ग से बचाना। अगर घर के किसी व्यक्ति को क्षय रोग हो जाए तो बच्चों को उससे दूर रखना चाहिए। बच्चों को मैली जमीन पर न रखना चाहिए। गाँव में बच्चे के सोने के लिए जो घर होता है उसे लोग बन्द रखते हैं। वे नहीं जानते कि हवा को बन्द कर अपने बच्चों को क्षय काल के गाल में डाल रहे हैं। बच्चे बहुधा झाड़ू-बुहारन होते वक्त बुहारने वाले के साथ घूमते हैं, यह ठीक नहीं। बुहारते वक्त बच्चों को बहुत दूर रखना चाहिए और जब बुहारने पर गर्द शान्त होकर बैठ जाए तो उस स्थान पर आने देना चाहिए। बुहारने से गर्द अधिक उड़ने लगती है और उसके साथ अनेक कीटाणु भी उड़ते हैं। ये कीटाणु आसानी से बच्चों के शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं। बहुधा बच्चों की आदत बुहारन से खेलने की होती है। इस आदत को तुरन्त ही बन्द करना चाहिए। गन्दगी दूर फेंकी जाए और वहां तक बच्चों को पहुँचने न दिया जाय। लोगों में गन्दी आदत होती है कि वे फेरी वाले से सामान खरीद कर बच्चों को खिलाते हैं। इसे बन्द करना बहुत जरूरी है; क्योंकि फेरी वाले अनेक स्थानों में घूमते हैं। अनेक आदमी उनकी चीजों को छूते हैं। न जाने किनके हाथ में किस ढङ्ग के कीटाणु सटे हों। दूसरे, काफी धूल तथा मक्खियां फेरी वाले के सामानों पर बैठती रहती हैं। ये मक्खियां गन्दगी फैलाने में एक ही हैं। फिर वे सामान शरीर के लिए उपयोगी तत्वों से बने नहीं होते। उनमें विटामिन आदि का अभाव होता है। इस कारण फेरी वालों के सामान बच्चों के लिए बहुत हानिकारक हैं। फेरी वाले ही नहीं, बाजार के सामानों को भी बच्चों को न खाने देना चाहिए। वहां की पूरी मिठाई आदि अशुद्ध सामानों से तैयार की जाती है। इस कारण जब तक कोई प्रमाणिक दुकान न हो तब तक वहां से सामान लेना बड़ी भूल है।

बच्चों को चुम्बन तथा थूक से बचाना जरूरी है। लोगों में बच्चों को चूमने की आदत होती है। इन चूमने वालों में किसके शरीर में क्षय रोग के कीटाणु हैं और किसमें नहीं, यह कहना कठिन है। बिहार के एक प्रसिद्ध डाक्टर का कथन है कि शायद ही एक प्रतिशत मनुष्य इसके कीटाणुओं से बचे होंगे। ऐसी दशा में चुम्बन कर हम प्रत्यक्ष रूप से बच्चों में क्षय रोग के कीटाणुओं का प्रवेश कराते हैं। चुम्बन पर नियन्त्रण रखना चाहिए। कभी-कभी इसमें कठिनाई भी होती है। इस कारण चुम्बन लेने के बाद बच्चे के गाल को साफ पानी से धोकर पोंछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना चाहिए। हमारे यहां के लोग बच्चों के गाल पर चुम्बन लेते हैं। इसमें वे बच्चों के साथ कुछ मेहरबानी करते हैं, पर जहां बच्चों के ओष्ठ पर चुम्बन लिया जाता है वहाँ बड़ी गलती होती है। ओष्ठ पर चुम्बन लेने से कीटाणु शीघ्र मुंह में चले जाते हैं। इस कारण ओष्ठ पर चुम्बन तो कभी भी न लेना चाहिए।

क्षयरोग से आज हिन्दुस्तान के लाखों बच्चे मरते हैं। लेकिन अभी तक इनकी मृत्यु का कोई आंकड़ा नहीं है। आंकड़ों के लिए मैं एक हेल्थ आफिसर (Health officer Derbhanga, Behar)से मिला था। उन्होंने कहा—"क्षय रोग से मृतकों की जो सँख्या मिलेगी वह बिलकुल नाकाफी और सँदिग्ध है। कारण यह है कि गांव में क्षय-रोग की सूचना नहीं दी गई है। फिर इसमें बच्चों के रोग का रूप बड़ा विचित्र होता है। वहां बिना अच्छी परीक्षा के मालूम नहीं होता। गाँव के चौकीदार तथा अन्य लोग यहाँ तक कि बहुत से डाक्टर इसे नहीं समझते। यही कारण है कि इस रोग से बच्चों की कितनी मृत्यु होती है, इसका आंकड़ा है ही नहीं।" पूसा के एक प्रसिद्ध डाक्टर तथा क्षय रोग के विशेषज्ञ डाक्टर जे. एन्. मिश्र ने स्वास्थ्य-विभाग के अधिकारियों से आंकड़ा मांगा था। उन्हें भी निराश होना पड़ा। हम उनके उत्तर को उन्हीं के शब्दों में उद्धृत करते हैं:—

"In response to my enquiry the Inspector General of Civil Hospitals of Behar and Orissa in his memo No. 2560/H.-238-35 dated Patna the 25th February 1935, while quoting the figure of patients treated in the Provincial Hospitals and Dispensaries for Tuberculosis of the lungs gave a clear statement regarding the want of availability of seperate figures for females and children who might have been treated for the disease in the province.

The Minister incharge of health and sanitation with the Government of India forwarded my letter to the Public Health Commissioner with the Government. The latter in his letter No. 308/1387 dated New Delhi the 2nd March 1935, while stating that the detailed information regarding the incidence of Tuberculosis was not available." इस तरह का अध्ययन का अभाव अत्यन्त खेदजनक तथा सांघातिक है।

योरोप क्षय-रोग के अनुकूल है। वह बड़ा ठण्डा देश है। हमारे यहां की तरह वहां सूर्य रोज नहीं निकलता। वहां के जानवरों को खास कर गाय को इस कारण क्षय होता है। उन्हें हमारे यहां इतनी हरी सब्जियां हर मौसम में नहीं मिलती। इसे वे दूसरे देशों से मंगाते हैं। लोगों के शरीर में सूर्य-किरण नहीं लगती। ठण्डा देश होने के कारण वहां के लोग खुली हवा का उपयोग नहीं कर सकते। फिर भी उन लोगों ने क्षयरोग से लड़ाई ली और इसमें उन्हें सफलता मिली।

इङ्गलैंड और अमेरिका आदि देशों ने क्षय-रोग से बच्चों को बचाने के लिए अनेक उपाय किए। क्षय रोग को हटाने के लिए वहां की सरकारों ने क्षय-रोग के खास अस्पताल सेनोटोरियम और दवाखाने बनाये जिससे गाँव-गाँव के लोग वहां आकर अपनी चिकित्सा करा सकें। कानून बनाया जिससे लोग सड़कों पर थूकना बन्द करदें। सड़कों पर थूक जलाने के घर बनाये गए और लोग थूकने की शीशी (Spi Hoons) का व्यवहार करने लगे। बार बार गाँवों और शहरों में क्षय और उसके भेदों की सूचना दी गई। बहुत सी पुस्तिकायें बाँटी गयीं। इन सबसे लोग इस रोग से जानकार होने लगे और अस्पतालों में रोगियों को ठीक समय पर जँचाने लगे। क्षय-रोग से बचने की दवा भी बांटी गई। बच्चों के लिए नरसरियों और स्कूलों में खुली हवा का प्रबन्ध किया गया। बहुत सी जनता की सँस्थाएं बच्चों को शहर की ठसाठस आबादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से हटाकर देहातों में खुली हवा सेवन के हेतु ले जाने लगीं। इङ्गलैण्ड के फ्रेश-एअर एशोसिएशन (Fresh Air Association) का उद्देश्य यही है। वहाँ की सरकारों ने बच्चों को स्कूल में पौष्टिक जलपान देने का प्रबन्ध किया। वहां सामूहिक सफाई का नियम रखा गया, जिससे लोग बिना स्वास्थ्य की दृष्टि रखे मकान नहीं बना सकते। इसके अलावा उन देशों में व्यक्तिगत सफाई पर लोगों का ध्यान खींचा गया। कपड़ा साफ पहनना, बिस्तर साफ रखना, धूप दिखाना आदि साधनों के कारण क्षय-दैत्य से वहाँ के बच्चों की ही नहीं नवयुवकों की भी रक्षा हो रही है।

भारतवर्ष में क्षय-रोग फैल रहा है। यद्यपि यह देश इस रोग के प्रतिकूल है। इस रोग के फैलने का मुख्य कारण ये हैं—अशिक्षा और गरीबी।

अशिक्षा के कारण जनता में क्षय-रोग की ठीक ठीक जानकारी नहीं है। वे क्षय के बहुत से भेदों को बुखार ही समझते हैं। फिर सरकार का ऐसा प्रबन्ध भी नहीं है कि वे इसकी जानकारी प्राप्त कर सकें। रहन-सहन और खान-पान में गन्दगी का कारण अशिक्षा और बहुत कुछ गरीबी है। गरीबी के कारण लोग न तो अच्छा खाना खा सकते हैं, न अच्छे घर में रह सकते हैं और न साफ वस्त्र पहन सकते हैं और जो ऐसा कर भी सकते हैं वे अशिक्षा के कारण इसकी उपयोगिता नहीं समझते। अस्पताल आदि की अभी काफी कमी है। स्कूल आदि के बालक आज-कल व्यायाम से बहुत दूर रहते हैं। उनमें विलास की मात्रा बढ गई है। यही सब कारण हैं कि भारत में, जहां क्षय-रोग होना ही नहीं चाहिए, वहां यह जोरों पर है।

प्रसन्नता का विषय है कि अब लोग इसकी ओर ध्यान दे रहे हैं। लेडी लिनलिथगो फण्ड क्षय के निवारणार्थ एकत्र किया जा रहा है। इन सब कामों में जनता को सहयोग देना चाहिए। सरकार तथा जन-सेवक संस्थाओं को इस रोग के सम्बन्ध में बहुत सी पुस्तिकायें छपवाकर बंटवानी चाहियें। जनता में जागृति होने से इस रोग से बचना असम्भव नहीं है।

बड़ोपल में दीवाली पर नशा आदि छोड़ने की प्रतिज्ञा

'दीपक' सम्पादक श्री तेगराम अपने एक साथी के साथ थली के गांवों से वापिस लौटते हुए दिवाली के मौके पर बडोपल गांव में आये। आपने गांव वालों को दिवाली के त्यौहार का महत्व बतलाया तथा समझाया कि मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र ने रावण पर विजय पाकर संसार से अत्याचार अनित और बुराइयों को मिटाकर राम-राज्य स्थापित किया। उसी की खुशी में दीवाली का उत्सव मनाया जाता है। अतः सच्चे अर्थों में दिवाली मनाने का यही मार्ग है कि हम भी इस शुभ दिन अपने अन्दर से बुराई दूर करने का संकल्प करें। गाँव वालों पर इन विचारों का बड़ा असर पड़ा। अतः दीवाली के अगले दिन राम राम के शुभ अवसर पर जब गाँव भर के लोग एक दूसरे से राम २ करने के लिये इकट्ठे हुए तो नीचे लिखे लोगों ने सूर्य भगवान, जल, वेद मन्त्रों व सब पंचों की साक्षी देकर नीचे लिखी बुराइयाँ छोड़ने का संकल्प किया:—

(१)—चौ० रामप्रताप भादू—औसर पर मृतक भोज के रूप में बनाया भोजन न करना। (२)—चौ० देवाराम भादू—भविष्य में शराब व मांस का सेवन न करना (३)—चौ: धौंकलराम भादू—तहमद व दोहरी धोती व हुक्का छोड़ना (४—चौ० मोटाराम भादू—शराब, माँस, तमाखू का सेवन न करना तथा मृतक भोजन न खाना (५)—चौ: मोटाराम का पुत्र बीरबल—तमाखू, शराब, माँस का सेवन न करना व तहमद न पहनना। (६—चौ० मोटाराम का पुत्र मनीराम—तमाखू व माँस का सेवन न करना, मृतक भोज न खाना (७)—चौ० चेतराम भादू—माँस व मृतक भोज न खाना। (८)—चौ० रामजीलाल सिहाग—शराब मांस व तमाखू का सेवन न करना। (९)—चौ० साजनराम भादू शराब व मांस का सेवन न करना व मृतक भोज न खाना। (१०—चौ० भागीरथ जी भादू—मांस न खाना। (११)—चौ० जेठाराम भादू शराब मांस व हुक्के का सेवन न करना। (१२) चौ० रामप्रताप की माताजी—मृतक भोज न खाना। (१३)—चौ० रतीराम भादू की माता जी—मृतक भोज न खाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता

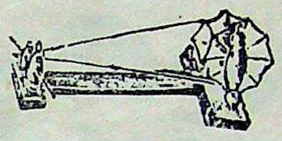

खादी !

र०—अम्बिकाप्रसाद उपाध्याय

खादी ! तुझ में भरा हुआ है, नवजीवन का वह सन्देश ।
अपना कर जिसको होवेगा, पूर्ण समुन्नत भारत देश ॥
तेरे एक एक धागे में, छिपा किसानों का अनुराग ।
दलितों का श्रमपूर्ण आत्मबल, श्रीमन्तों का वैभव त्याग ॥१॥

अहा ! तुझे धारण करते ही, होता क्या ही चित्त प्रसन्न ।
स्वावलम्ब स्वातन्त्र्य भावना, करती है तू सद्योत्पन्न ॥
शुभ्रचन्द्र सी ज्योति हृदय में, फैलाती है विमल प्रकाश ।
जिससे हो जाता मानव के, दुर्बलता तम का द्रुत नाश ॥२॥

तेरा ही अवलम्ब ग्रहण कर, हो सकते हैं हम सम्पन्न ।
ढक कर तन निरीह जनता को, देगी तू ही समुचित अन्न ॥
वीर जवाहर के शब्दों में, तू आजादी का बाना ।
ग्रामोन्नति का साधन तुझको, गाँधी जी ने है माना ॥३॥

प्रभु से है करबद्ध प्रार्थना, करें हमें बल बुद्धि प्रदान ।
तुझे दे सकें जिससे अपने, जीवन में हम उच्च स्थान ॥
सेवा कर मानव-समाज की, मिटा सकें आदत खोटी ।
दलित क्षुधित जनता को देवें, हम तेरे द्वारा रोटी ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस दिन की संध्या

[श्री शुकदेवनारायण]

उस दिन की सँध्या काशी के घाटों पर गुलाल छिड़क रही थी। पण्डित जी सप्तम स्वर में महाकवि राधेश्याम की रामायण गा श्रोताओं को मुग्ध कर रहे थे। उधर ज्योतिषी जी के पास कितने ही हाथ फैलाए, आशा-निराशा, मिलनविरह की पोटली बांधे सर झुकाए, बड़े ही ध्यान से अपने भविष्य का भोग सुन रहे थे। सीढियों पर करीने से दूकानें सजी थीं – 'आइए बाबू चटपटी वाले तरावट माल—गोल गप्पे हैं जी' का कर्णकटु स्वर और सामग्रियों की सोंधी सुगन्ध चारों ओर फैल रही थी। पास ही चुनार की बनी सुन्दर वस्तुएँ हर एक गुजरने वाले को खरीदने के लिए आमँत्रित कर रही थीं। दूसरे बाजू एक महात्मा अपने वचनामृत से कितने ही लोगों को तृप्त कर रहे थे। कहीं सीता वनवास की कथा सुन कितनी ही नारियों की आंखें बूँदें टपका रही थीं और कहीं मसखरे की मसखरी से लोग हँसते २ बेहाल थे। सीढियों के नीचे गङ्गा में तरह तरह की नावें, यौवन और धन के मद से इतराती गङ्गा के वक्ष पर दौड़ रही थीं। उनसे सुन्दर-सुन्दर गाने की आवाज निकल रही थी। किसी पर भांग की रगड़ की होड़ थी तो किसी पर चुप्पी और शांति का राज था। ऐसी थी चहल-पहल दसाश्वमेध घाट पर।

उससे कुछ दक्षिण की ओर एक बड़ा सा जमघट था! पर भीड़ में थे बङ्गाली नर और नारी। वहाँ एक बड़े हौज में दुर्गन्धमय सड़ा पानी था, और फल-प्राप्ति की आशा से कितने ही उसे उठा-उठा कर सर और जीभ से स्पर्श कर रहे थे। नीचे गङ्गा की नन्हीं-नन्हीं लहरियां भू सुर मानवों को यह जघन्यकृत बधा देने का असफल प्रयत्न कर रहीं थीं।

उसी सँध्या को पड़ा था उन दोनों स्थानों के बीच जान्हवी के पुनीत तट पर एक साढ़े तीन हाथ का मल-मूत्र और चिथड़ों में लिपटा, उन हजारों जल कण में विचरने वालों का भाई। उसके मुँह से ओफ! निकली थी, कपड़ों में मल था और शरीर पर मक्खियां भिनक रहीं थीं।

सुरसरी अपना आञ्चल फैला कर, उस मानव कलङ्क को छिपा लेना चाहती थी, पर उसके वक्ष स्थल पर जिनका विहार हो रहा था, उनके डर से असमर्थ थी। काम के आतुर उसकी ओर देखकर रास्ता लेते थे, दर्शक उसको देखकर आंख फेर लेते थे और सहृदय देखकर बुड़बुड़ाते—"कितनी बुरी मौत हुई है।"

नजर उस पर पड़ती थी सबकी। मानवता वहां पर उपेक्षित थी। पतितपावनी भी उस कलंक को धोने में असमर्थ थी। और उस दिन की सन्ध्या काशी के घाटों पर गुलाल छिड़क रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

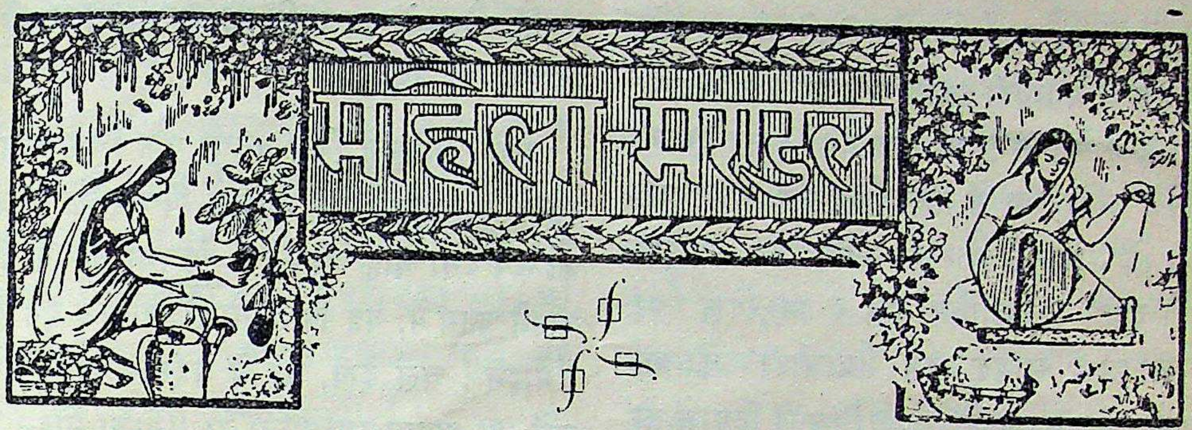

"वह बच्चा है, जानवर नहीं!"

[श्री दयाशंकर मिश्र]

विश्वास और श्रद्धा युग में मानव ने अपनी दिव्य दृष्टि से तथा आध्यात्मिक शक्ति से भूतल, आकाश और पाताल स्थित प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष, चर-अचर अनेक विषयों पर पहाड़ों की कन्दराओं में बैठ-बैठ कर विचार किया, फिर बड़े-बड़े ग्रन्थों व शास्त्रों की रचना की।

वर्तमान युग में, जिसे हम विज्ञान-युग कह सकते हैं, प्रत्येक चीज को वैज्ञानिक दृष्टि से देखने का शौक चल पड़ा है। आज इसी दृष्टि-विन्दु से प्रत्येक आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक समस्या सुलझाई जा रही है; लेकिन कितने तत्वज्ञानी, दार्शनिक, वैज्ञानिक और राजनीतिज्ञ माँ-बाप ऐसे हैं जिन्होंने राष्ट्र के सच्चे उत्तराधिकारी, जगत-नियन्ता को महान् और सुन्दरतम कला-वृत्ति बच्चे की अपमान और दुत्कार भरी जिन्दगी के बारे में सोचा, समझा और लिखा हो? उसके सर्वाङ्गीण विकास के लिये कोई योजना बनाई हो?

हो सकता है कि इस सत्याग्रही और हड़ताली युग में बच्चे को समझने, उसकी सुख-सुविधा का खयाल रखने का समय, राष्ट्र और उसके कर्णाधारों को न हो, लेकिन इसके साथ ही हमें इस कटु सत्य पर भी एक बार विचार करना पड़ेगा कि जिस शक्ति और राजनैतिक अधिकार 'आजादी' के लिये देश के लाखों देश-भक्त, उन्मत्त नौजवान प्राणों को हथेली पर लिये घूम रहे हैं, उस 'आजादी' के कायम रखने की ताकत इन मुर्झाये, निस्तेज बच्चों में होगी भी कि जिन्हें घर और पाठशाला की चहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीवार में बन्द रहना पड़ा हो? जिन्हें माँ-बाप और शिक्षक के मताग्रही दबाव और उनके जबरदस्त व्यक्तित्व में पिसना और आपसी कलह द्वेष के विषैले वातावरण में तिल तिल कर मरना पड़ रहा हो? जिनके चीत्कार और रोज की दुख भरी छोटी २ कहानियाँ सुन २ कर दिल रो उठता हो? शायद हम 'आजादी' का वह महल खड़ा करने जा रहे हैं जिसकी दिवालें तो मजबूत चिकने अमूल्य पत्थरों से बनी हों और जिसकी आधार-शिला रेत के टीले पर टिकी हो?

मैं अपनी बातको अधिक स्पष्ट करने के लिये तत्सम्बन्धी कुछ तथ्य आपके सामने रख रहा हूं जिनके आधार पर हम स्पष्ट देख सकेंगे कि अपने राष्ट्र की इस मजबूत दिवाल के नीचे वह रेत का टीला कहाँ है? सब से पहले हम समाज की नींव-राष्ट्र के उत्तराधिकारी घर में बच्चे का क्या स्थान है? इस पर विचार करेंगे।

स्वातन्त्र्य मानव-जीवन का प्राण और बाल-विकास की आत्मा है, किन्तु हमारे घरों, स्कूलों, में अन्दर बाहर सभी जगह 'अरे ऐसा मतकर हरामजादे! अरी धीङ्गड़ी वहाँ मत जा!" 'आदि २ तरीकों से उसी आत्मा 'आजादी' को कुचला जारहा है! आज बच्चे का प्रत्येक कार्य हमारी 'हाँ, नाँ, हमारी रुचि अरुचि पर निर्भर होता है। इस प्रकार हम बड़े, दिन रात अपने निषेधों से बच्चे में रहने वाली स्वयं-स्फूर्ति और स्वेच्छा प्रवृति को अपनी नासमझी से नष्ट कर रहे हैं।

रंगीन पेन्सिल लिये बच्चा एक चित्र बना रहा है वह अपने एक मौलिक विचार को चित्र का रूप देना चाह रहा है। कितना तन्मय है अपने काम में, वह कि पिताजी आवाज देते हैं "मोहन! चल देख, तेरे ये मेहमान आये हैं; इन्हें वह अपना नया गाना तो सुनाजा मोहन! मोहन!!" मोहन नहीं सुनता। उसकी आँखें, कान, हाथ- सारी कर्मेन्द्रियाँ व ज्ञानेन्द्रियाँ चित्र पर केन्द्रित हैं। वह अपने चित्र को सुन्दर से सुन्दर बनाने में डूब गया है। पिता जी का बेंत मोहन की नंगी पीठ पर पड़ता है 'साड़... साड़....'। उसकी सारी विचार धारा, सारी कल्पना आँसू बन बन कर उस अधूरे चित्र पर फैल जाती है।

\+ + +

बरसाती रात में बादल के टुकड़ों के साथ चन्द्रमा की खिलवाड़ को वह चारपाई पर लेटे लेटे देखना चाहता है माँ बाप को इस तरह अधिक रात तक जगना पसन्द नहीं। आँखें जबरदस्ती बन्द कर लेने को मजबूर कर दिया जाता है वह बच्चा।

\+ + +

आकाश में बरसाती सप्तरंगी धनुष उगा है, स्कूल की दीवालों से घिरी कक्षा से बच्चा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुंह निकाल २ कर उसे जी भर कर देखना चाहता है, किंतु कल प्रकृति-विज्ञान की परीक्षा है,पाठ्य-पुस्तक की पढाई रटा २ कर उसके दिमाग में भरना है। दूसरी बात यह कि कक्षा का अनुशासन इस प्रकार भंग नहीं किया जा सकता। अध्यापकजी का वज्र-हस्त धनुष को देखने में तन्मय बच्चे के मुलायम गाल पर पड़ता है, बेचारा चीख उठता है।

\+ \+ \+

"माँ, स्कूल को देर हो रही है। मेरा कुर्ता कहाँ है ?" "ठहर अभी देती हूं, दूध को कढाई अंगीठी से उतार लूं" नहीं माँ, देर होने पर मास्टर साहब पीटेंगे, दे दे माँ!" जल्दी में हाथ से कढाई गिर पड़ी। सारा दोष बच्चे के सिर पर थोप कर पास में पड़ी झाड़ू से मार२ कर झाड़ दिया गया वह सर का दोष।

अब जरा यह देखना है कि हम सब से बड़े शुभ चिन्तक माँ बाप अपने नन्हे २ बच्चों के लिये घर में कितनी सुविधाओं का ध्यान रखते हैं:—

मकान बन रहा है, पिताजी मकान का नकशा बनाते हैं। यह कौने की कोठरी माँ के लिये,यह छत का कमरा मेरा,बाहर गाय का स्थान, यह चपरासी की कोठरी, यह मोटर घर लेकिन घर के प्रकाश उस बच्चे का स्थान ?।

बेचारा तरह-तरह की मिट्टी, सीप, घोंघे, टूटे खिलौने, चमकीले काँच के टुकड़े, रंग-बिरंगे कागज इकट्ठे करता है, लेकिन रक्खे कहाँ ? घर में उसका अपना कोई स्थान नहीं। पिताजी के कमरे में छिपा कर रखता है, झाड़ू लगाने वाला नौकर बच्चे का वह सारा खजाना उठा कर फैंक देता है। माँ के कमरे में रखता है, माँ उसे कचरा समझकर बाहर फिकवा देती है। बच्चा कहाँ जाय ? किससे जाकर कहे अपने दिल की बात कि ये सारी चीजें उसने बड़े परिश्रम से इकट्ठी की हैं और उन चमकीली टूटी फूटी चीजों की कीमत उसकी आखों में बहुत है ? प्रति दिन इस प्रकार उसकी चीजें इधर से उधर फैंक कर उसका नन्हा नाजुक दिल दुखाया जाता है।

\+ \+ \+

दिवालों में खूंटी लगाई गई, अलमारी बनाई गई, पानी रखने के लिये घड़ों का स्थान बनाया गया, लेकिन इसका ध्यान किसने रक्खा था कि इस घर में एक छोटा सा प्राणी भी रहता है जिसके हाथ वहाँ इतनी ऊंचाई पर नहीं पहुंचेंगे उसे भी कपड़े टांगना है, पानी भी पीना है।

माँ काम में लग रही है। टट्टीघर या स्नानघर में है। बच्चा खेल कर आया है, प्यास की बजह से जीभ तालू में लग रही है। क्या करे ? किससे कहे कि मैं भी एक प्राणी हूँ, मेरे लिये भी कोई एक छोटी तिपाई पर घड़ा होना चाहिये ताकि जब चाहूँ पानी पी लिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करूं । कभी उस ठण्डे पानी से भरे घड़े को देखता है, कभी स्नान घर के बन्द किवाड़ों को देखता है वह बेचारा प्यासा माँ-बाप का दुलारा बच्चा ।

\+ \+ \+

इस प्रकार, हम बड़ों के बीच इन छोटे बच्चों को कैसी २ कठिनाइयों से होकर गुजरना पड़ रहा है, यह सहज ही में समझा जा सकता है। किन्तु समझा जाना जितना सहज है वैसा समझने के बाद उनकी सुख-सुविधा अथवा उनके सर्वतोन्मुखी विकास के लिये कुछ करना कठिन साबित होगा, क्योंकि उनके लिये कुछ करने में हम पर जोर पड़ेगा । युगों से बच्चों के प्रति बनी हुई हमारी धारणाओं व हमारे दृष्टि कोण को बदलना पड़ेगा । अपने सद्भाव, अपनी रुचि पर बच्चों के भले के लिये काबू करना पड़ेगा । मकान, स्कूल, शिक्षणालय, यहाँ तक कि हमें अपने जीवन-क्रम का नकशा ही बदल लेना पड़ेगा ।

हम बड़ों की यह मान्यता कि बच्चा छोटा है, उसकी समझ कच्ची है, उसे इसी प्रकार हमारी 'हाँ' 'ना' पर नाचना पड़ेगा, उसकी घर में वर्तमान स्थिति ही ठीक है, इस आगे बढ़ते राष्ट्र के लिये एक घातक मान्यता सिद्ध होगी ।

यदि हम चाहते हैं कि हमारे देश का भविष्य उज्ज्वल हो, यदि हम चाहते हैं कि राष्ट्र के आशा-कुसुम, देश के सच्चे उत्तराधिकारी ये बच्चे इतने शक्तिशाली और मजबूत हों जो आई हुई 'आजादी' को कायम रख सकें, तो हमें इन नन्हे बच्चों में सम्पूर्ण मनुष्य की कल्पना करनी होगी और इसी दृष्टि विन्दु से उनकी सुख सुविधा का ध्यान रखना पड़ेगा ! हमें उस को घूमने फिरने, निज की क्रिया द्वारा अपने स्नायु पर काबू पाने, अपनी बल-बुद्धि का स्वयं उपयोग करने की स्वतन्त्रता देनी होगी, कुछ काम उनके कन्धों पर, उनकी जिम्मेवारी पर छोड़ कर उन्हें मौका देना होगा ताकि वे अपने आने वाले जीवन संघर्ष के लिये कुछ तय्यारी कर सकें । इस प्रकार हमें बच्चे को घर में उचित स्थान देकर अपने निषेधों की जंजीर से मुक्त कर के अपने मताग्रह के पत्थर को उनके नन्हे २ दिलों से उठा कर बच्चे के स्वतंत्र विकास की रक्षा करनी पड़ेगी ! उसे अपमानित, करते दुत्कारते समय ध्यान रखना होगा कि " वह बच्चा है, जानवर नहीं !

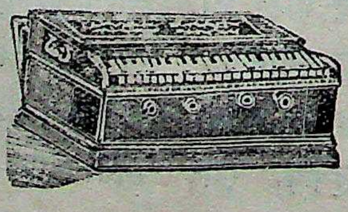

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं माँ को नहीं सताऊँगा

[र० – अक्षय कांकरिया]

मैं मां को नहीं सताऊंगा।

वह मुझ से करती बहुत प्यार,
वह जग में मुझको एक अधार।
मैं मां का प्यार बढाऊंगा,
मैं माँ को नहीं सताऊंगा।

वह अच्छी २ चीजें देती,
मेरे कारण दुःख सह लेती।
मैं मां के ही गुण गाऊंगा,
मैं माँ को नहीं सताऊंगा॥

माँ कहते ही मुंह भर जाता,
मानो मुख में लड्डू आता।
मैं माँ को सुख पहुंचाऊंगा,
मैं माँ को नहीं सताऊंगा॥

बलधाम बनो

[र०—"अंशुमाली"]

शिशुओ! जग में बलधाम बनो।

अपने तन को मजबूत करो,
दिल-चाव भरो, करतूत करो।
गुणवान बनो लिख के पढ़ के,
हंस के पथ पार करो बढ़ के।
करके सद् काम ललाम बनो,
शिशुओ! जग में बलधाम बनो॥

अरि को लख के न हटो मग से,
कुचलो न गरीबों को पग से।
बिगड़ो मत नेह करो सबसे।
जननी-हित कष्ट सहो अब से।
दुनिया भरके, अभिराम बनो,
शिशुओ! जग में बलधाम बनो॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदाचार

जो सदाचारी जगत में जन्म उनका धन्य है।
नाम उनका धन्य है अरु काम उनका धन्य है॥
सँसार में आकर जिन्होंने हित किया सँसार का।
पा सका है प्रेम वह ही ईश करुणागार का॥१॥

खोदिया आचार जिसने दुष्ट नर वह नीच है।
रत्न खोकर मुट्ठियों में भर रहा वह कीच है॥
विद्वान हो, धनवान हो, बलवान चाहे हो बड़ा।
चरित्र निर्मल है नहीं, तो बिष भरा कञ्चन घड़ा॥२॥

पहिने हुए हो हार रत्नों का नहीं सम्मान है।
रेशमी पोशाक का भी जगत् में नहीं मान है॥
चाहे गधे के कण्ठ में, मोती लड़ी लटकी रहे।
किन्तु क्या वह गाय की पदवी कभी जग में लहे॥३॥

विद्यार्थियो! तुमको अगर हो उच्चपद की कामना।
तो बात मेरी बालको! जग में सदा तुम मानना॥
भूखे मरो या दुख मिले मत छोड़ना आचार को।
कहता 'रमेश' तुम्हें यही करदो सुखी सँसार को॥४॥

र०—रमेशकुमार जैन कक्षा ७, नरकाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय नोट

विवाह की तबाही का एक और नमूना—

पिछली गर्मियों में सरदारपुरे में एक विवाह का, जिसमें हजारों आदमी शामिल हुए और अपार धन, समय व शक्ति का व्यर्थ नाश हुआ, चित्र 'दीपक' की इन पंक्तियों में खींचा गया था। अब ऐसा ही एक और तबाहीपूर्ण विवाह इस इलाके में हुआ है। खुईखेड़े के श्री दूल्हाराम जेलदार के पोते का विवाह अबोहर के श्री ख्यालीराम की पुत्री से कार्तिक शुदी एकादशी को हुआ। बरात में अढाई सौ से अधिक आदमी आए जिनमें ५० के लगभग मिरासी ही बताए जाते हैं जो कि बिलकुल व्यर्थ और अनावश्यक थे। बरात तीन दिन तक ठहरी और सैंकड़ों देहातियों ने, दोनों फसलों के मौके पर अत्यधिक काम के दिनों में, अपना अमूल्य समय, शहर की सड़कों पर इधर-उधर निकम्मे डोलने, सजावट व ऐयाशी की निरर्थक चीजें खरीद कर फिजूलखर्ची करने और शराब पी-पी कर हुल्लड़ मचाते हुए अशिष्टता फैलाने में बिताया। आज जब कि संसार भयङ्कर खतरे से गुजर रहा है, यूरोप में प्रलयङ्कारी युद्ध छिड़ा है, देश में भी भारी बेचैनी व अशांति है; ऐसे नाजुक समय में, क्या सरकारी और क्या गैर सरकारी कोई भी समझदार आदमी ऐसा राग-रङ्ग व फिजूलखर्ची पसन्द नहीं करेगा। अतः जेलदार जैसे धार्मिक वृत्ति के सादगी-पसन्द आदमी के लिए इस समय इस प्रकार की फिजूलखर्ची करना उचित न था। जहाँ तक हमें पता है, दूल्हाराम जी शराब, मांस आदि सभी दुर्व्यसनों से बचे हैं, किन्तु उनकी बरात वालों ने धर्मशाला जैसे पवित्र स्थान पर, जहां बरात ठहरी थी, अत्यधिक शराब पी गन्दा बकने, असभ्यतापूर्ण व्यवहार करने व बदमगजी फैलाने का जो घृणित कार्य किया वह जेलदार जैसे धर्मपरायण व्यक्तियों को शोभा नहीं देता, उनके नाम को बट्टा लगाता है। उन्हें पहले से ही ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए था कि बरात में उनके कहने के अनुसार चलने वाले, दुर्व्यसनों से रहित शुद्ध आचरण वाले ऐसे आदमी आते जो इस प्रकार वहशीपन दिखाकर शहर में जेलदार जी की बदनामी न करवाते। सुना है कि कन्या पक्ष वाले उनकी बराबरी के न थे तथा उन्होंने थोड़ी बरात लाने की भी प्रार्थना की थी। अतः दूल्हाराम जी को चाहिए था कि अपने सगे की भलाई व सुविधा को ध्यान में रखकर उनके कहे से भी कम बरात लाकर अपने सगे के हृदय को जीतते, उन पर सदा के लिये अपनी भलमानसाहत की छाप डालते। इसीमें जेलदार जी का बड़प्पन था, सज्जनता थी। किन्तु इसके विपरीत उन्होंने अत्यधिक बरात ला व अन्य प्रकार से अधिक खर्च कराकर कन्या पक्ष वालों को यह महसूस करने के लिए मजबूर कर दिया कि दूल्हाराम जी हमारे हितैषी नहीं, हमारे हित की अपेक्षा हमारा नुकसान ही उन्हें प्रिय है। इस प्रकार, जो विवाह दो कुटुम्बों में सच्चा प्रेम पैदा करने, अटूट सम्बन्ध स्थापित करने के लिए किया जाता है, उसी पर एक-दूसरे को नुकसान पहुँचाने, नीचा दिखाने वाले उपरोक्त कार्य करने से उनमें मन-मुटाव व द्वेष के भाव पैदा हो जाते हैं और सुख-शांति के लिए किया गया वह विवाह दुःख व क्लेश का कारण बनता है। विद्या प्रचार में पिछड़े हुए देश की हीनावस्था को देखते हुए धनियों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए कि विवाहादि सामाजिक कुरीतियों पर व्यर्थ रुपया खर्च न करके, देश के बच्चों की शिक्षा के लिए अपने रुपये का सदुपयोग करें। अँग्रेजों का उदाहरण हमारे सामने है। वे अपने बच्चों की शादी पर पाई भी खर्च न करके उनको शिक्षित बनाने में अधिक से अधिक रुपया खर्च करते हैं। तभी वह देश आज पूर्ण शिक्षित, समृद्ध और सब प्रकार से उन्नत है।

बनास्पती घी विरोधी आन्दोलन

पिछले कुछ दिनों से बनास्पती घी का इतना प्रचार बढ गया है कि शहर या मण्डियों से दूर के छोटे २ गांवों में भी देहाती तक को सिवाय अपने घर तैयार किए शुद्ध घी के अन्य किसी देहाती के यहां शुद्ध देशी घी मिलने का विश्वास नहीं रहा है, और शहरों में तो शुद्ध घी मिलना अब असम्भव सा हो गया है। पशुओं के शुद्ध घी में मिले बनास्पती घी को खाने से स्वास्थ्य को कितनी हानि होती है, इसकी खपत से शुद्ध घी व उसको पैदा करने वाले पशुओं की उत्पत्ति व उनके रखने में कितनी रुकावट पड़ती है आदि बातों पर विचार न करके गरीब देहाती लालच में अन्धे होकर मिलावटी घी तैयार करने जैसा जघन्य पाप करते हैं। यद्यपि सरकार का ध्यान इस ओर गया है तथा उसने मिलावटी घी की खपत को रोकने का प्रयत्न भी किया है। परन्तु बनास्पती घी तैयार करने वाले कारखानों के जबरदस्त प्रचार व लोगों की स्वार्थ-वृत्ति के कारण इसका प्रचार घटने की अपेक्षा दिनों दिन बढ ही रहा है। अबोहर के समीप के प्रदेश, हरियाना व बागड़ प्रान्त में, जो कि उत्तम घी के लिए प्रसिद्ध था तथा दिसावर में जहां का हजारों मन घी सालाना जाता था, अब मिलावटी घी का ही दौर दौरा है। बीकानेर राज्य में, जहां बनास्पती घी पर सख्त रुकावट है, थली के सुदूर स्थानों तक में घी में मिलावट का यह रोग पहुँच गया है। धूर्त लोग राज्य कर्मचारियों की आंखों में धूल झोंक कर अथवा स्वार्थी कर्मचारियों से मिलकर बीकानेर राज्य में बनास्पति घी की खपतकर रहे हैं। राज्य को इसकी रुकावट के लिए और अधिक सख्ती से काम लेना चाहिए, तभी शुद्ध घी पैदा करने वाले देहातियों की रक्षा हो सकेगी।

यह हर्ष की बात है कि हरियाना प्रांत में 'बनास्पती घी विरोधी आन्दोलन' आरम्भ हो गया है। गांव-गांव में पञ्चायतें व कान्फ्रेंसें करके तथा देहातियों को इसकी हानि बताकर इसे गांवों में न जाने देने की कोशिशें की जा रही हैं। बनास्पती घी विरोधी ऐसी ही एक कान्फ्रेंस हिसार, रोहतक, करनाल, जीन्द व पटियाला के लोगों की ओर से १३ नवम्बर को हरियाना प्रान्त के प्रसिद्ध तीर्थ स्थान रामराय में हुई जिसमें बनास्पती घी के बढते प्रचार को रोकने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुए, उनमें से मुख्य इस प्रकार है:—'पशु का शुद्ध घी कृषक की आय का एक बड़ा जरिया है। इससे पशु रखने और नसल बढाने का भी लाभ है। बनास्पती घी की बढती खपत से शुद्ध घी पैदा करने वाले को नुकसान पहुँच रहा है। अगर इस पर रुकावट न की गई तो कृषक को पशु के जरिये जो आमदनी होती है वह उससे महरूम रह जावेगा, उसके लिए पशु रखना फायदे मन्द न होकर एक बोझ होगा, पशु बरबाद हो जायेंगे जिससे कृषक और पशु रखने वाले को असह्य हानि होगी। कृषक को इस असह्य हानि से बचाने के लिए यह कान्फ्रेंस गवर्नमैन्ट हिन्द से यह मांग करती है कि देश के लोगों, विशेषतः कृषकों के लाभ को दृष्टि में रखते हुए बनास्पती घी का बनाना कतई बन्द करदे, या शुद्ध घी के उद्योग को बचाने के लिए बनास्पती घी के कारखानों पर खास ड्यूटी या महसूल लगादे जिससे कि बनास्पती घी शुद्ध घी से सस्ता न बिक सके।" इस प्रकार की कान्फ्रेंसें स्थान २ पर होकर उनमें उपरोक्त प्रस्ताव पास होने चाहियें। इस इलाके के लोगों को भी, हरियाना प्रान्त द्वारा आरम्भ किये गये इस बनास्पती घी विरोधी आन्दोलन को सफल बनाने के लिए अपने यहां जोरदार प्रचार करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५० वर्ष की अनुभूत औषधें

सुधासिंधु

कफ, खांसी, दमा, हैजा, शूल, सँग्रहणी, अतिसार, पेट दर्द आदि रोगों की बिना अनुपान की दवा की० ॥)

दद्रुगजकेसरी

हर प्रकार के दाद को बिना जलन और कष्ट के नाश करने वाली एक मात्र दवा। की० ।) डा० ख० १ से २ तक ॥-)

सुख संचारक कम्पनी, लिमिटेड, मथुरा

'दीपक प्रेस' अबोहर

सुन्दर, शुद्ध और बढ़िया छपाई के लिए इलाके भर में प्रसिद्ध है। एक बार आजमाइये।

वातगज केसरी अर्क १)

नारायण तेल १ पाव १)

वात रोगों के लिए ये दो लाजवाब दवाएं हैं। अर्क ३-४ बोतल मंगावें। अपने पास के स्टेशन का नाम लिखें और आधा रुपया पेशगी भेजें।

पता—हरिदास एण्ड कम्पनी, मथुरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REGD No. L. 3700

21 AUG 1965

ग्रामसुधार नाटक मू० ॥=)

हिन्दी का सुप्रसिद्ध दैनिक पत्र "हिंदुस्तान", नई देहली लिखता है:—

"साहित्य सदन अबोहर द्वारा प्रकाशित इस नाटक में ग्रामीण जीवन का सजीव चित्र खींचा गया है और यह भी दर्शाया गया है कि यदि शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि की उन्नति और ग्राम-उद्योग-धन्धों की ओर ध्यान दिया जावे तो ग्रामों का जीवन स्वर्गीय बन सकता है। जब तक ये सुधार नहीं हो पाते, गाँवों में परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, कलह, फूट से ग्राम नरक बने रहेंगे। साहित्य सदन का उद्देश्य सत्साहित्य और नागरी लिपि का प्रचार करना है। इन दोनों दिशाओं में ही उसका प्रयत्न सराहनीय है।"

"हिन्दुस्तान" १७–११–४०

साहित्य सदन पर सम्मति

It is a great pleasure to find such an institution in a place like Abohar. It is unique and is a great credit to its founder. I wish it success.

P. C. Dutta Major I. M. S.
Civil Sergeon, Ferozepure.

14-11-40

हिन्दी अनुवाद

अबोहर जैसे स्थान में ऐसी सँस्था देखकर बडी प्रसन्नता होती है। यह एक बेजोड़ चीज है जिसके लिए इसके सँस्थापक प्रशंसा के पात्र हैं। मैं इसकी सफलता चाहता हूँ।

पी. सी. दत्त मेजर आई. एम. एस.
सिविल सर्जन, फीरोजपुर

मुद्रक एवं प्रकाशक—श्री कुलभूषण, दीपक प्रेस, साहित्य सदन, अबोहर (पञ्जाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar